राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक
जे. के. बंसल R.A.S.
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थांक 197

खेमकवि विरचित

हमीरायण

सम्पादक
डॉ. ब्रजमोहन जावलिया

प्रकाशक
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur

1999

मूल्य - 205.00

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक
जे. के. बंसल R.A.S.
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थांक 197

खेमकवि विरचित

हमीरायण

सम्पादक
डॉ. ब्रजमोहन जावलिया

प्रकाशक
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur

1999

मूल्य - 205.00

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यत: अखिल भारतीय तथा विशेषत: राजस्थानप्रदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्टग्रन्थावली

सम्पादक

डॉ. ब्रजमोहन जावलिया

ग्रन्थाङ्क 197

खेमकवि विरचित

हमीरायण

प्रकाशक

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

प्रथमावृत्ति—500 मूल्य - 205.00

निदेशकीय

राजस्थान के चौहानवंशीय क्षत्रियों के राजनैतिक इतिहास को संजोने वाले सुरजनचरित महाकाव्य, पृथ्वीराजविजय महाकाव्य, शत्रुशल्य चरित महाकाव्य, हमीरमहाकाव्य जैसे संस्कृत काव्यों के साथ-साथ राजस्थानी में लिखे गये हमीररासो, छत्रसालरासो या हमीरायण जैसे काव्यों का इतिहास के स्रोत के रूप में जैसा अध्ययन होना चाहिये था, वैसा अब तक नहीं हो सका है। इस दृष्टि से खेमकृत हमीरायण का महत्व स्वतः ही बढ़ जाता है।

रणथम्भौर के प्रसिद्ध दुर्धर्ष योद्धा हम्मीरदेव चौहान और अलाउद्दीन खिलजी के बीच हुए रोमांचकारी संघर्ष की कथाऐं कभी किसी कवि की सर्जना में गूंथी गई, तो कहीं पर रणथम्भौर के आसमन्त में रहने वाले राष्ट्र-भक्त जनों ने स्वतः स्फूर्त होने वाली मौखिक काव्य परम्परा में उसे सुरक्षित किया। युद्ध में मरने वाले को होने वाली स्वर्गप्राप्ति के मूल में वही वैदिक देवयु बनने की कामना निहित है। जन-जन की इन गाथाओं के गायकों ने हम्मीर के देवस्वरूप को देखा है। हम्मीरायण को समझने के लिए इस भावना को समझना आवश्यक है। यह काव्य ऐतिहासिक है या नहीं या हमीर के इतिहास तक पहुंचने में कितनी सहायता करता है, यह गहन शोध का विषय हो सकता है; परन्तु शरणागत की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व गँवाकर सामान्य जनता की दृष्टि में देवतुल्य समझे गये हमीर के यशवर्णन के लिये हमीरायण जैसे गाथा काव्य की रचना न हुई होती, तो वह बड़ा आश्चर्य होता।

हमीर के यशवर्णन को मुख्य विषय वस्तु बनाते हुए पुराणों की तरह उसे अनेक उपकथाओं एवं अन्तर्कथाओं, अतिमानवीय तथा यत्रतत्र चमत्कारजन्य घटनाओं के वर्णन से आच्छादित-सा कर दिया लगता है। कभी-कभी पाठक को यह भी लगेगा कि कवि मूल से भटक तो नहीं गया है, परन्तु गाथा काव्य की ये अपनी विशेषतायें हैं। इस प्रकार लोक-रूढ़ियों एवम् विश्वासों के बीच गूंथे हुये हम्मीर के इतिहास को हमीरायण प्रस्तुत करता है। मुझे विश्वास है कि इतिहास एवं लोक-परम्पराओं के अध्ययन हेतु यह ग्रन्थ उपयोगी सिद्ध होगा।

जे. के. बंसल
निदेशक

अनुक्रमणिका

(1)	प्रस्तावना	1-75
(2)	सांभर एवं रणथम्भोर री राजवंशावली	76-77
(3)	मूलपाठ	1-239
(4)	अनुवाद	1-205
(5)	परिशिष्ट 1	206-243
(6)	परिशिष्ट 2-8	244-285

अनुक्रमणिका

क्रम संख्या	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
1.	राजस्थान के ऐतिहासिक चरित्र काव्यों का ब्यौरा	1 to 6
2.	मरुमंडल का परमार इतिहास : उसकी समस्या	7 to 12
3.	'वीठू सूजा कृत छंद राउ जैतसी रौ' के ऐतिहासिक संदर्भो पर विचार	13 to 21
4.	जैसलमेर के राव केल्हण और रावल जैतसी का इतिवृत्त	22 to 25
5.	कान्हड़दे प्रबन्ध में सैनिक पराजय के समाधान का मूल्यांकन	26 to 29
6.	महाराजा गजसिंघजी रो छंद एक समालोचनात्मक अध्ययन	30 to 36
7.	गजगुण रूपक बन्ध में वर्णित ऐतिहासिक घटनाक्रम	37 to 42
8.	जसवंत उद्योत	43 to 50
9.	कवि कुंभकर्ण कृत रतनरासो और उनका ऐतिहासिक महत्व	51 to 57
10.	कवि काशी छंगाणी कृत छत्रपता रासो	58 to 62
11.	राठौड़ रतनसिंह री वेलि : इतिहास का स्रोत	63 to 65
12.	'राजरूपक' की ऐतिहासिकता	66 to 73
13.	सूरजप्रकाश और राजरूपक का ऐतिहासिक तुलनात्मक विवेचन	74 to 78
14.	डिंगल का ऐतिहासिक काव्य 'सूरज प्रकाश'	79 to 85
15.	मानजसोमंडण : बांकीदास आसिया	86 to 88
16..	ठा. खुशालसिंह चांपावत की भूमिका	89 to 101
17.	बलवद्विलास : एक अध्ययन	102 to 111
18.	'ऊदावत रूपसिंघ री झमाल' एक अनुशीलन	112 to 115
19.	सोढा जाति का संक्षिप्त इतिहास	116 to 120
20.	सुजान चरित्र	121 to 130
21.	लछिमगढ़ रासा में ऐतिहासिक तथ्य	131 to 135
22.	प्रतापरासो : इतिहास एवं संस्कृति	136 to 147
23.	विनयसिंह विजय संग्रामवर्णन : एक ऐतिहासिक विवेचन	148 to 155
24.	शंकर रावकृत भीमविलास की ऐतिहासिकता	156 to 167
25.	मेवाती काव्य में राजनैतिक इतिहास	168 to 174

क्रम संख्या	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
26.	'हमीरायण' काव्य का राजनैतिक दृष्टि से विवेचन	175 to 182
27.	घेला खिड़िया कृत बियाखरी दूदा हाडा री	183 to 189
28.	डिंगल का ऐतिहासिक काव्य : जवानरासो	190 to 195
29.	जयपुर के कच्छवाह शासकों का इतिहास	196 to 199
30.	केसरीसिंह समर का ऐतिहासिक विवेचन	200 to 204
31.	क्यामंखां रासो की ऐतिहासिकता	205 to 213
32.	क्यामखां रासो इतिहास, शासन एवं सास्कृतिक चिन्तन का दस्तावेज	214 to 226
33.	हल्दीघाटी युद्ध के संदर्भ में मानचरित्र रासो	227 to 232
34.	कुंवरजी श्री संग्रामसिंह जी शक्तावत री दवावैत	233 to 236
35.	सगतरासो का ऐतिहासिक महत्व	237 to 244
36.	राजविलास का ऐतिहासिक महत्व	245 to 249
37.	'राजप्रकाश' का ऐतिहासिक महत्व	250 to 252
38.	'जगविलास का ऐतिहासिक महत्व'	253 to 255
39.	महावजसप्रकास का आलोचनात्मक अध्ययन	256 to 264
40.	सज्जन यश वर्णन	265 to 267
41.	किसनावतवंशप्रकाश की ऐतिहासिकता	268 to 273
42.	'उदय-प्रकाश' का ऐतिहासिक महत्व	274 to 282
43.	हरि पिंगल प्रबन्ध में इतिहास	283 to 288
44.	कवि नरसिंह मेव कृत हसन खां की कथा	289 to 292
45.	गोरा बादल पद्मिणी चउपई : ऐतिहासिक अन्वेषण	293 to 303

प्रस्तावना

खेम भाट विरचित "हम्मीरायण" एक ऐतिहासिक काव्य है। ऐतिहासिक काव्य प्रणयन की परम्परा हमारे देश में बहुत पहले रही है। संस्कृत साहित्य में "हर्षचरित, पद्मगुप्तरचित नवसाहसांकचरित, विल्हणकृत विक्रमांकदेवचरित, जोनराज द्वारा रचित पृथ्वीराजविजय और नयचन्द्र सूरि के हम्मीरमहाकाव्य" ऐसे ही काव्य हैं, जिनमें देश के महापुरुषों के ऐतिहासिक विवरण प्राप्त होते हैं। राजस्थान में भी ऐतिहासिक काव्य-प्रणयन की परंपरा रही है। पद्मनाभकृत कान्हड़देप्रबंध, वीरभाणकृत राजरूपक, करणीदान कवियाकृत सूरजप्रकाश, सूर्यमलमिश्रणकृत वंशभास्कर, मान जती विरचित राजविलास, खिडिया जगाकृत वचनिका राव रतनसिंघरी, गाडण शिवदासकृत अचलदास खीची री वचनिका, कुम्भकर्णसांदूकृत 'रतनरासो, कवि जानकृत क्यामखाँरासो, किसनाआढाकृत भीमविलास, दयालदासकृत राणारासो, गिरधर आसियाकृत सगतरासो' ऐसे ही राजस्थान में विरचित, राजस्थानी भाषा [डिंगळ और पिंगळ] में विरचित ऐतिहासिक काव्य हैं। चौहान क्षत्रिय कुल के वंशावतंस हम्मीर चौहान के चरित्र का गुणगान गाने के लिए भी अनेक ऐसे काव्य ग्रन्थों की रचना की गयी थी जिसमें भाण्डउ व्यास विरचित हम्मीरायण, अमृतकलशकृत हम्मीर प्रबन्ध, महेशकृत हम्मीररासो, जोधराजकृत हम्मीररासो, ग्वाल कवि रचित हम्मीरहठ, चन्द्रशेखर रचित हम्मीरहठ काव्य प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत काव्य खेम कृत हम्मीरायण भी इसी परम्परा का ऐतिहासिक वीर काव्य है।

इस ग्रन्थ में रणथंभोर के राव हम्मीर के चरित्र की गाथा है, जैसा कि इसके नाम 'हम्मीरायण' से ही स्पष्ट है। इस ग्रन्थ का नामकरण 'रामायण' के आधार पर रखा गया प्रतीत होता है, जिसका अर्थ है हम्मीर के चरित्र का अयन अर्थात् शास्त्र। भाण्डउ व्यास ने भी अपने द्वारा विरचित हम्मीर के चरित्र विषयक काव्य का शीर्षक 'हम्मीरायण ही दिया था, जिसकी रचना उसने संवत् १५३८ विक्रमी में की थी। भाण्डउ ने जिस प्रकार अपने ग्रन्थ हम्मीरायण का एक अवर नाम 'हमीरचउपई' दिया है (छंद सं. ४) उसी तरह खेम ने भी स्वरचित 'हम्मीरायण' काव्य का अपर नाम सरस्वती वंदना में 'रासौ' दिया है—यथा 'तुम परसाद रासौ चउं, देहि सुमति मोहि माय' (छंद सं. १२). रासौ शब्द की व्युत्पत्ति और व्याख्या साहित्य के मनीषियों ने अनेक रूपों में की है—पर जहां तक राजस्थान के रासौ काव्यों का प्रश्न है,

उनके अभिधान में एक ही ध्वनि निकलती है, और वह है सरस नवरस संपृक्तचरित-काव्य। इस प्रकार रामायण की भांति हम्मीरायण में निहित भाव 'हम्मीर के चरित्र का शास्त्र 'हम्मीरस्यचरितान्वितं अयनं शास्त्रम्' या काव्य के समान ही हम्मीररासौ में हम्मीर के साहसिक चरितयुक्त रसमय काव्य। अयन शब्द का भी एक अर्थ शास्त्र है—यथा 'ज्योतिषामयनं नेत्रं निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते' (इति ज्योतिष्तत्वं)।

काव्य का प्रणेता

हम्मीरायण काव्य में इसके प्रणेता ने कहीं भी स्पष्ट रूप से न तो अपना नामोल्लेख किया है, और न कहीं अपना या अपने वंश का परिचय ही दिया है, पर यत्र तत्र दोहों, चौपाइयों, कवित्तों में निर्दिष्ट 'खेम भाट' के नाम से संकेत मिलता है कि उसी ने इस काव्य की रचना की होगी। ये स्थल निम्नांकित हैं—

१. रणथंभोर दुर्ग में हम्मीर के बाग और प्रासादों के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वह उनके रूप सौन्दर्य का वर्णन कहां तक करे, आप उसका साररूप वर्णन सुनें। (वरने कवि रूप कहां लगते, इति खेम कहे सुनि सार जिते ।। छंद सं. ४४२)।

२. चौपाई सं ८७४ में अलुखान (उलुगखान) के द्वारा रणथंभोर पर आक्रमण के लिये मलारणा में लगाये गये शिविर पर महिमाशाह के घात लगा कर किये गये हमले और विजय के उपलक्ष में वर्णन और छंद सं. ८७६ (कवित्त) में उसके द्वारा की गई प्रशास्ति में खेम का उल्लेख ही नहीं, उसका हमीर के समकालीन होना और हम्मीर की सेवा में नियुक्त होना भी सिद्ध होता है। यथा

"जीं सकल वस्त अंवेरि कै लीन्ही, सो सब गढ चलती कीन्ही।
जो जाय राजा की नजरि गुदारचो, जदि राजा नें भाट पचारचो ।।
कहो महिमाँसाहि किसो रजपूत, जीं प्राक्रम्य कीन्हा अद्‌भूत।
राजा अति ही राजी हुवो, जहंठे खेम हंकाल्यो जूवो ।।" ८७४

छंद सं. ८७६ में इस अवसर पर खेम के द्वारा कवित्त पढने का उल्लेख है—यथा

वौह चाचारि हींदू तुरक, किवतज खेम भनि। ८७६

छंद सं. १०६३ (भुजंगी) में वह कहता है कि उसने रणथंभोर दुर्ग के सामने की पहाड़ी पर अलाउद्दीन के द्वारा बुर्ज बनवाकर उस पर तोप लग-

वाने और दुर्ग पर किये गये आक्रमण का जैसा अपनी आँखों से देखा है वैसा वर्णन किया है। 'बरणी कवि आँखिन देखी तिसी'

छंद सं. ११३३, १३३४ के अतिरिक्त चरण में उसके द्वारा हम्मीर के साथ संवाद और छंद सं. ११३५ से ११३९ तक राजा की अनुमति से अलाउद्दीन के साथ संवाद कर अलाउद्दीन के घेरे को उठवाने में सहयोग देता दिखाई देता है। इन छंदों में स्पष्टत उसका नाम 'खेम भाट' कहा गया है।

छंद सं. १२५७ में हम्मीर के द्वारा प्राणोत्सर्गसूचक कवित्त में पुनः अपने नाम की छाप छोड़कर दुर्ग में अपनी उपस्थिति की सूचना देता है। छंद सं. १:४४ में वह अंतिम युद्ध में खेत रहे वीर सैनिकों की सूची में अपने पुत्र पूरा का नाम भी सम्मिलित करता है और छंद सं. १३४६ में दुर्ग पर अलाउद्दीन का अधिकार हो जाने पर दिये गये कवित्त में खेम जैत्र सुत हम्मीर को युगों युगों तक अमर रहने का आशीर्वाद देता है। "तौ जैत सुतनं जुग जुग अमर कहै खेम जस निर्मल पढचो।"

उपर्युक्त उल्लेखों से तो स्पष्टतः यही प्रतीत होता है कि यह रचना खेम भाट के द्वारा ही रचित है और वह हम्मीर का समसामयिक ही नहीं, उसकी राजसभा का सम्मान्य सदस्य और राज कवि तथा दूत भी है। फिर भी कुछ बातें ऐसी हैं जो उपर्युक्त निर्णय में बाधक हो सकती हैं। वे हैं काव्य की भाषा, काव्य में जायसी के पद्मावत के पदों का सामान्यरूपान्तर सहित प्रयोग, युद्ध में अग्न्यास्त्रों का प्रयोग आदि—

खेम कृत हम्मीरायण की पूर्ण प्रति संवत् १७८४ की, जिसके आधार पर राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान की जयपुर शाखा में विद्याभूषण हरि नारायण जी पुरोहित के संग्रह की प्रति तय्यार कराई गई थी, पं. गोपाल नारायणजी बहुरा के संग्रह में उपलब्ध है। इस प्रति के छंद सं. १३७३ से स्पष्ट है कि यह प्रतिलिपि किसी प्राचीन प्रतिलिपि से तय्यार कराई गई थी। वह प्रति हमें उपलब्ध नहीं हुई है। छन्द इस प्रकार है—

जैसी देखी तैसी लिखी, सुरताँ लीज्यो जोय।
चूक विचूक जु माफ करि, आगे पीछे होय।। १३७३

ऐसी स्थिति में ग्रंथ की रचना १७८४ वि. से बहुत पूर्व हो गई थी, यह सिद्ध होता है।

इसी काव्य से बिखर कर अलग हुए अथवा चुन चुन कर अलग सं. १७०६ वि. से संकलित किये गये 'खेम भाट द्वारा रचित हमीरदे रा कवित्त

"शीर्षक से कतिपय कवित्त सादूळ राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट वीकानेर द्वारा प्रकाशित और श्री भँवरलाल नाहटा द्वारा सम्पादित 'भाण्डउ व्यास कृत हम्मीरायण के परिशिष्ट संख्या ४ में पृष्ठ संख्या ६० से ६६ पर छपे हैं। इससे भी यह स्पष्ट हो जाता है कि खेम सं. १७०६ वि. से भी वहुत पहले कभी हुआ है। सं. १७०६ में ये कवित्त रणथंभोर की तलहटी में किसी भाट ग्यासा लखावत के बेटे सुखानंद से लिखवाये गये थे। इन कवित्तों के प्रारम्भ में ही वात शीर्षक गद्य भाग में हमीदे को जैतसीयोत और जैतसी को उदैसीयोत लिखा गया है। इससे स्पष्ट है कि या तो ये कवित्त स्मरण शक्ति के आधार पर संकलित किये गये थे, या किसी ऐसी प्रति के आधार पर लिखे गये थे जो मूल की परम्परा से दूर की प्रति रही होगी। ऐसी स्थिति तब पैदा होती है जब मूल रचना को वहुत समय बीत गया हो।

खेम ने अपने या अपने परिवार के विषय में काव्य में कोई ऐसा सूत्र नहीं छोड़ा है, जिसके आधार पर हम उसके व्यक्तित्व और कृतित्व पर कोई विशेष प्रकाश डाल सके, या उसके परिवार के विषय में कुछ जानकारी जुटा सकें। हमें भाटों की (ब्रह्मभट्टों) की परम्परा में पृथ्वीराजरासौ के रचयिता चन्दवरदायी के वंश में उससे छः पीढी नीचे खेम का नाम मिलता है। महामहोपाध्याय पं. हरिप्रसाद शास्त्री ने जरनल आफ ऐशियाटिक सोसायटी बंगाल♣ में नैनूराम भाट से प्राप्त चन्दवरदायी की वंशावली प्रकाशित कराई थी—उसमें सातवीं पीढी में बुद्धचंद्र के पुत्र खेम का नाम मिलता है। साहित्यलहरी में भी खेम को चन्दवरदायी की सातवीं पीढी में सूरचंद के भतीजे के रूप में बताया गया है।❦ भविष्य पुराण में भी चन्दवरदायी की वंशावली में सातवीं पीढी पर खेम का नाम मिलता है।◉ वंशावली का क्रम निम्न प्रकार है—चन्दवरदायी > जल्हचन्द > सीताचन्द > वीरचन्द हरिचन्द > रामचन्द > बुद्धचन्द > खेमचन्द

चन्दवरदायी की मृत्यु संवत् १२४९ वि में हुई कही जाती है। यदि एक पीढ़ी का काल मान्य पद्धति के अनुसार हम २० वर्ष मानें तो १२४९+२०×६=१३६९ संवत् खेम का समय आता है। यह समय हम्मीर की मृत्यु और रणथम्भोर भंग के ११ वर्ष वाद का है। अतः काव्य में उल्लिखित खेम का कथन सत्य ही प्रतिभासित होता है।

♣ पृथ्वीराजरासो का विवेचन—पृष्ठ ३३९—३४१

❦ वही—पृष्ठ ३४२

◉ भविष्यपुराण—प्रतिसर्ग पर्व—अध्याय २२, श्लोक ३० वाँ (द्वारा पृथ्वीराजरासो का विवेचन, पृष्ठ ३४२

साहित्यलहरी और भविष्यपुराण की वंशावली को भी मान लेने में कोई कठिनाई दिखाई नहीं देती पर साहित्यलहरी के रचयिता प्रसिद्ध कृष्ण भक्त सूरदास हैं तो खेम को हम्मीर का समकालीन सिद्ध नहीं कर सकेंगे। सूरदास का काल संवत् १४८३ है। चन्दवरदायी से ७ पीढ़ी के अन्तर में ४२ वर्ष से भी अधिक प्रति पीढ़ी का अन्तर आता है। यही समीचीन नहीं लगता।

नैनूराम के अनुसार जन्ह के पौत्र सीताचन्द के पुत्र वीरचन्द ने हम्मीर-रासो लिखा था* यह भी उचित नहीं लगता, क्योंकि वीरचन्द का काल हम्मीर से दो पीढ़ी पूर्व निश्चित होता है। नैनूराम का संकेत संवत् = खेम की ओर ही रहा होगा।

इन वंशावलियों पर विचार करने पर भी खेम हमें हम्मीर का समकालीन ही लगता है। रचना उसने रणथम्भोर भंग के कई वर्षों बाद की होगी।

काव्य की भाषा पर जब हम दृष्टि डालते हैं, तो पूर्वी नागर चाल की आज की भाषा (बोली) से उसमें कोई विशेष अन्तर नहीं दिखाई देता। संवत् १७०६ से आज ३५० वर्ष बाद भी भाषा में कोई विशेष अन्तर यदि नहीं आया है, तो कैसे मान लें कि उससे ३०० वर्ष पूर्व की हम्मीर के समय की और उक्त संवत् १७०६ के समय की भाषा में भी कोई विशेष अन्तर रहा होगा। स्पष्ट है, लोक भाषाओं या बोलियों में अन्तर धीमी गति से होता है और शिष्ट भाषा या साहित्यिक भाषाओं में राजनीतिक परिस्थितियों या अन्य कारणों से बहुत जल्दी अन्तर आने लगता है।

जायसी के पदों का परिवर्तित रूप भी यह दर्शाता प्रतीत होता है कि कहीं स्वयं कवि ने ही तो इन पदों की छाया को अपने ग्रंथ में सम्मिलित न कर लिया हो। खेम अपनी जन-भाषा का सफल कवि है—उसको दूसरों की रचना चुराकर अपने काव्य में सम्मिलित करने की आवश्यकता नहीं थी। जिस किसी ने भी इन पदों को काव्य में ठूंसा है—वह इसमें सफल नहीं हो सका है। भाषा में परिवर्तन का प्रयत्न करते हुए भी वह खेम की भाषा से मेल नहीं बैठा सका। काव्य में नखशिखवर्णन के अभाव की पूर्ति उसने अवश्य कर दी है, पर ये पद एक कारी के रूप में स्पष्ट दिखाई देते हैं और काव्य के महत्त्व को कम करते हैं। प्रस्तुत काव्य के फारसी अनुवाद 'तारीखे किला रणथंभोर' की तीसरी दास्तान (कथा) की दूसरी फसल (खण्ड) में देवल के नखशिख

---

*राजस्थान में राजस्थानी साहित्य की खोज—पण्डित हरप्रसाद शास्त्री अनु. प. गोपाल नारायण बहुरा, राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर

वर्णन को अनुवादक ने संक्षिप्त कर दिया है, अथवा उसको प्राप्त प्रति में ये पद नहीं रहे होंगे।

जहाँ तक आग्नेयास्त्रों के उल्लेखों का प्रश्न है—भारत में बारूद और बारूदी आग्नेयास्त्रों का प्रयोग होता रहा है, सीमित मात्रा में ही सही। कान्हड़देप्रबन्ध, भाण्डउ व्यास कृत हम्मीरायण में आग्नेयास्त्रों के प्रयोग के उल्लेख हैं।

हम्मीर महाकाव्य—नयचन्द्र सूरि रचनाकाल संवत् १४२५ के लगभग में दुर्ग पर तोपों की स्थापना का विवरण मिलता है। उसमें भैरवयंत्रादिक यन्त्रों और राल और ज्वलनशील पदार्थों के भी युद्ध में प्रयोग का विवरण उपलब्ध है।*

बरनी ने लिखा है कि शाही सेना प्रक्षेपास्त्रों के माध्यम से दुर्ग पर अग्नि वर्षा कर रही थी और उधर दुर्ग के ऊपर से फेंके जाने वाले प्रक्षेपास्त्रों की चपेट में आकर असंख्य सैनिक अपनी जान गंवा बैठे।** नुसरतखाँ की मृत्यु भी दोनों ओर के गोलों के टकराकर खण्ड-खण्ड हुए टुकड़ों से हुई कही गई है।

यही नहीं, बाबर द्वारा भारत में आग्नेयास्त्रों के प्रयोग के और भी उदाहरण मिलते हैं। मआतीर-ए-महमूदी में महाराणा कुम्भा द्वारा पाल्हण खीची के सहायतार्थ भेजी गई अष्टघाती-कमान से साल्टपीटर की सहायता से दस-दस सेर वजन के गोले फेंके जाने और युद्ध में नेफ्ता के प्रयोग का विवरण दिया गया है।***

डब्ल्यू. डब्ल्यू. ग्रीनर ने अपनी पुस्तक **'The Gun and its Development in India with notes on Shooting'** में सिकन्दर के आक्रमण के समय भी भारतवासियों द्वारा तोपों के निर्माण और उनमें बारूद के प्रयोग का उल्लेख किया है।**** ऐसी स्थिति में रणथम्भोर के युद्ध में आग्नेयास्त्रों के प्रयोग पर किसी प्रकार की कोई शंका नहीं होनी चाहिए।

हम्मीरायण में प्राप्त हम्मीर के जीवन से संबंधित कतिपय विसंगतियों के कारण भी खेम कवि को हम्मीर के समकालीन होने में बाधा मान सकते हैं पर

---

*हम्मीर महाकाव्यम्—सर्ग ११—श्लोक ७०-७३, ८०

**बरनी, तारीख-ए-फिरोजशाही, रिज्वी कृत अनुवाद, खिलजी कालीन भारत, पृ. ५९-६५

***मआतीर-ए-महमूदी—पृ. १३४-१६९

****The Gun and its Development with notes on shooting by. W. W. Greener—P. 12.

हमें उन परिस्थितियों पर भी विचार करना चाहिए जिनसे गुजरते हुए साधन-हीन होकर कवि ने इस काव्य की रचना की होगी। रणथम्भोर दुर्ग में अपना सब कुछ गंवा कर २०-२५ वर्ष बाद ही कवि कुछ संयत और व्यवस्थित हो पाया होगा और अपनी भूली-बिसरी यादों और इधर-उधर जुगाड़ कर प्राप्त की गई सामग्री के आधार पर कवि ने इस काव्य के लेखन में अपनी प्रतिभा का प्रयोग किया होगा। ऐसी स्थिति में कतिपय विसंगतियों का आ जाना स्वाभाविक है। ऐसी ही विसंगतियों में राजाओं के राज्यकाल और घटनाओं की तिथियों के अंकन में पाई जाने वाली अशुद्धियाँ हैं जिन्हें शोध विद्वानों ने ठीक किया भी है और आगे भी इसकी गुञ्जाइश है। डॉ दशरथ शर्मा द्वारा किया गया इस विषयक प्रयास स्तुत्य है। काल विषयक संशोधन में उनके ग्रन्थ सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हो सकते हैं।

कवि के काल निर्धारण में राजशेखर सूरिकृतप्रबन्ध कोष के अन्त में दी गई वंशावली सहायक है। यह वंशावली सन्, संवतों और तिथियों को छोड़-कर खेम कवि के ही काव्य से ग्रहण कर लिखी गई है। इसमें सन्देह नहीं है। उसने नरेशों के सामने जो उपलब्धियों की सूचक टिप्पणियाँ दी हैं, वे भी हम्मी-रायण में दी गई घटनाओं का संक्षिप्त टिप्पणात्मक रूप है। प्रबन्ध कोष की रचना संवत् १४०५ में हुई थी। अत: खेम का समय उससे कुछ पूर्व ही संवत् १३५८ और १४०५ के मध्य में मानना पड़ेगा।

अग्नि तत्त्व से आपादशीर्ष परिपूर्ण सूर्यवंशावतंश महाराजाधिराज हम्मीरदेव के दृढ निश्चयी, शरणागतवत्सल, शत्रुसंहारक स्वभाव और सरल सदाचारी जीवन वृत्त को आधार बना कर संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, राजस्थानी, फारसी, उर्दू में अनेक काव्यों, ग्रन्थों का प्रणयन किया गया है। यथा—

१ नयचन्द्र सूरि कृत—हम्मीरमहाकाव्य।
२ भाण्डउ व्यास प्रणीत हम्मीरायण।
३ अमृत कलश रचित हम्मीरप्रबंध
४ महेश कवि कृत हम्मीररासो
५ जोधराज कृत हम्मीररासो
६ चन्द्रशेखर कृत हम्मीरहठ
७ खेमभाट रचित हम्मीरायण
८ वार्ता हमीर हठाळे री (गद्य पद्य मिश्रित काव्य)
९ हीराणंद कायस्थ कृत फारसी अनुवाद "तारीख—ए—किला रण थम्भोर" खेम कृत हम्मीरायण का अनुवाद

उक्त ग्रंथ के हिन्दी और उर्दू अनुवाद भी अब उपलब्ध हैं, इनके अतिरिक्त 'वार्ता' नाम से भी हिन्दी और राजस्थानी में गद्यपद्य मिश्रित काव्य उपलब्ध हैं।

हरिवम्भ कृत प्राकृत पैंगलम्, पंडित विद्यापतिठाकुरप्रणीत पुरुष परीक्षा तथा शार्ङ्गधर कृत शार्ङ्गधर पद्धति में, तथा मुस्लिम तवारीखों में हम्मीर के जीवन से संबंधित पर्याप्त जानकारी मिल जाती है।

हम्मीरायण का प्रारम्भ खेम सर्वप्रथम गुरु के चरणों में प्रणाम करके करता है। वह अपने अज्ञातगुरु से अक्षर ज्ञान का आशीर्वाद मांगता है। तदुपरान्त बल और बुद्धि के वर्द्धक विघ्नविनाशकगौरीपुत्र गणेश, अपनी अपार शक्ति के बल पर सृष्टि की रचना और तप के कारक मायाधारी विश्व व्यापक चतुर्भुज विष्णु, हंसारूढा निराकार आद्या शक्ति सरस्वती हरसिद्धि की गुणगान सहित स्तुति करके पृथ्वीराज चौहान के तपस्वी वंशधर जैत्रसिंह चहुवान के पुत्र हम्मीर की, राजा महाराजाओं के शौर्य को प्रेरणा देने वाली कीर्ति को स्थायी रूप देने वाली, कथा के निर्विघ्न समापन की प्रार्थना करता है। वह हम्मीरायण शीर्षक रासौ काव्य के गायन (रचना) के लिये इन सभी देवताओं की कृपा का आकाँक्षी है।

हम्मीर के द्वारा रणथंभोर में लड़ी गई लड़ाइयों की समता वह उज्जयिनी में शालीवाहन द्वारा किये गये शाका (धर्मयुद्ध) से करता है। हम्मीर चौहान के द्वारा धारण किये गये हठ (सत्याग्रह) को वह रावण की टेक, सत्यव्रती हरिश्चन्द्र की सत्यवादिता और अर्जुन की धनुर्विद्या में एकाग्रता और अचलता से भिन्न नहीं मानता। अंत में वह अपने इष्ट परम पिता से यही निवेदन करता है कि वह एक मानव की जीवनकथा का प्रणयन कर रहा है, अतः ऐसे समय में उसे वर्णन में अतिशयोक्ति या न्यूनता के दोषारोषण से मुक्त रखने की कृपा करें।

खेम ने कथा प्रणयन में यथासंभव संतुलन रखा है। दोनों ही पक्षों के विजयों, पराजयों का उसने सम्यक् वर्णन किया है। वीरों के शौर्य की प्रशंसा में भी वह निष्पक्ष दिखाई देता है।

खेम ने संपूर्ण काव्य को दस अध्यायों में विभाजित कर इसको महाकाव्य का रूप देने का प्रयास किया है। सं. १७८४ की प्रति में छंदों का क्रम बहुत अधिक अव्यवस्थित है। ऐसा संभवतः काव्य में कतिपय प्रक्षिप्त प्रसंगों को समय समय पर जोड़ देने के कारण हुआ है। पं. हरिनारायणजी पुरोहित द्वारा तय्यार करवाई गई प्रतिलिपि में लेखक ने उन्हें व्यवस्थित क्रम में रख

कर क्रम संख्या लगाई है। यत्र तत्र पद अपूर्ण या त्रुटित हैं, पर उनसे, एक स्थान को छोड़कर कहीं भी कथा भंग नहीं होती।

कवि ने रचना का उद्देश्य तो ग्रन्थारम्भ से ही मंगलाचरण में अपने इष्ट देवताओं से आशीर्वाद की याचना करते समय ही कर दिया है। फिर भी उसने काव्य के अन्त में हम्मीरायण ग्रन्थ की उपयोगिता का दर्शन कराते हुए इसे राजा और रंक के लिए समान रूप से सुरुचिकर कहा है। उसके अनुसार इसका स्वाध्याय करने से मन में धैर्य का और तन में शौर्य का संचार होता है। उसने इसमें स्त्रियों के शीलव्रत और सतीत्व का वर्णन किया है तो साथ ही साथ क्षात्रधर्म की चर्चा की है।

उसने श्रोता और पाठक में मन उमंग, उत्सव और शान्ति की प्राप्ति के लिये काव्य में आवश्यक समझकर शृंगार रस की सामग्री भी प्रस्तुत की है। वह चाहता है कि उसके श्रद्धेय स्वामी हम्मीर की कीर्त्ति सदा स्थायी रहे और उसके इस चरित काव्य से भावी राजा महाराजा अपनी मातृभूमि, अपनी जाति, अपने कुल और मान-सम्मान की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बलि देने हेतु प्रेरणा ग्रहण करें।

काव्य रूप —

महाकाव्यों के निर्धारित तत्त्वों की दृष्टि से इसमें सभी तत्त्व समाविष्ट हैं। महाकाव्य नैतिक, धार्मिक अथवा राष्ट्रीय मूल्यों के प्रतिष्ठान के महद्-उद्देश्य से अनुप्राणित काव्य होता है। हम्मीरायण इन तीनों ही तत्त्वों से समाविष्ट काव्य है। शरणागत की रक्षा करना क्षत्रिय का परमधर्म माना जाता है। हम्मीरायण में इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु अपने और अपने कुल के सर्वनाश को दिया गया निमन्त्रण अपने आपमें एक विशिष्ट तथ्य है। हम्मीरायण में आदर्श की स्थापना, गम्भीर जीवनदर्शन और उत्कृष्ट विचार वैभव की सुन्दर योजना है। इसमें हम्मीर की त्याग पूर्ण वृत्ति और मर्यादा पालन का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया गया है जिनके कारण वह लोकमानस में श्रद्धा का पात्र बन सका।

हम्मीरायण का नायक अपने अदम्य साहस, अपरिमित उत्साह और चारित्रिक गुणों के कारण संघर्षरत रहता है। अपने जीवन के आदर्शों की रक्षा के लिये सभी कष्टों, कठिनाईयों का सामना डटकर करता रहता है। इस काव्य का कथानक पूरी तरह सुसंगठित, सुशृंखलित, सर्गबद्ध और कलात्मक है, और वृहद् आकार ग्रहण किये हुए काव्य-सौष्ठव से भरा पूरा है। इसमें हम्मीर के पूर्वजों के संक्षिप्त वर्णन के साथ-साथ उसके स्वयं के जीवन का बाल्य।वस्था से जीवनान्त तक का चरित वर्णन है।

काव्यात्मक रुढियों से समाविष्ट दशअध्याययुक्त इस काव्य की कथा श्रृंखलाबद्ध है। इसमें कहीं शिथिलता दृष्टिगोचर नहीं होती। इसके नायक हम्मीर में वे सभी विशेषताएँ पाई जाती है, जो धीरोदात नायक में होनी चाहिये।

काव्य की शैली जानपदीय भाषा से अनुप्राणित हैं, फिर भी शब्द संयोजन में कहीं कोई रुकावट नहीं दिखाई देती।

काव्य की मूल कथा, शरणागत महिमाशाह को आश्रय देकर आजन्म उसकी रक्षा प्रयत्नों से संपृक्त हैं। हमीर ने यह भार अपने ऊपर लिया है और उसका निर्वाह अपने कुल की, अपने राज्य की और स्वयं की बलि देकर करता है। वही इस कथा का फलभोक्ता है।

कवि ने कई एक काल्पनिक प्रासंगिक कथाओं की सृष्टि करके काव्य में समाविष्ट की है। त्रीस से अधिक ऐसी कथाओं की सृष्टि करके कवि ने काव्य के नायक को उदात्तरूप देनें का प्रयास किया है। कई एक कथाएँ अति विस्तृत हैं, फिर भी मूल कथा के साथ दक्षतापूर्वक इनका संयोजन करके उसने कथा को प्रौढता प्रदान की है। इन कथाओं के माध्यम से कवि ने उस समय की सामाजिक स्थिति और स्वयं नायक के उस समाज में स्थान को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

हम्मीरायण के पात्र सात्विक, राजसिक और तामसिक तीनों ही प्रकार की प्रवृतियों से प्रेरित हैं। राजस वृति के पात्रों में हम्मीर, महिमाशाह, जाजा, वीरम आदि पात्र हैं। देवलदे सात्विक वृत्ति की और अलाउद्दीन तामसिक वृत्ति से युक्त पात्र हैं। उसने अपने उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये तन्त्रमंत्र के साधक, दौत्यकर्म में दक्ष, खेम, मोल्हण, पुहिमराव खत्री, कुट्टिनीकर्मरत दूतियों तथा देश और स्वामी के साथ कृतघ्नता का व्यवहार करने वाले स्यौंपाल, ख्योंपाल, गंगेलवाल जैसे वणिक पुत्रों को भी स्थान दिया है।

छन्द —

प्रस्तुत ग्रन्थ में कवि ने दोहा, चौपाई, लघुचौपई, सोरठा, छप्पय, त्रिभंगी, कुण्डलियाँ, नीसाणी, रसावळा, दौदिक, सवैया (मनहरण), त्रोटक, भुजंगी, नाराच, अर्द्धनाराच, मोतीदाम, अरिल्ल और नराजलघुविराज प्रभृति विभिन्न प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है। इन छन्दों के विधान में कवि की अपनी मौलिक प्रतिभा के स्पष्ट दर्शन होते हैं। कवि ने शास्त्रों द्वारा प्रतिपादित छन्दशास्त्रीय लक्षणों से स्वयं को सर्वथा मुक्त रखा है। जायसी कृत रचनाओं में जिस प्रकार अनिवार्य रूप से १६ मात्राओं वाली चौपाई

और २३ मात्राओं वाले दोहे के आदर्श का अभाव है, उसी प्रकार प्रस्तुत काव्य हम्मीरायण में भी मात्राएँ न्यूनाधिक प्राप्त होती हैं। अधिकांश में अर्थ को स्पष्ट करने की दृष्टि से ही चरणों में एक अक्षर या दो शब्द अतिरिक्त दे देने से मात्राएँ बढ़ी हैं। शास्त्रीयदृष्टि से नियमबद्ध नहीं होने पर भी ये त्रुटित नहीं है। छन्दों की लय या यतिनिर्वाह में कहीं कोई व्यवधान दृष्टिगोचर नहीं होता। लय की दृष्टि से ये छन्द खरे उतरते हैं। काव्य पाठ में अथवा श्रवण में छन्दों की गति कहीं नहीं टूटती। कवि ने गणों का भी प्रयोग यथा-स्थान आवश्यकतानुसार करके काव्य में सरसता लाने का प्रयास किया है। काव्य में छन्दों के साथ साथ भाषा का प्रयोग भी कवि ने वर्णनों को ध्यान में रखकर किया है। यह कवि की अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचायक है। ऐसा प्रतीत होता है, मानो स्वयं इन छन्दों का जनक है और उसने अपनी प्रतिभा के अनुसार नये छन्दों की रचना की है।

छन्दशास्त्रीय नियमों का पालन नहीं होते हुए भी काव्य में लय और अबाध गति प्रवाह से ऐसा प्रतीत होता है मानो कवि ने लोक काव्यों की शैली पर जन सामान्य के द्वारा सहज ही में ग्रहण किये जाने वाली लोक भाषा का आश्रय लेकर छन्दों में नवीन प्रयोग किया है। छन्दों के नाम मात्र उसने शास्त्र सम्मत दिये हैं। छन्दगत नियमों से विहीन होते हुए भी हम्मीरायण ने एक मनोहर गेय काव्य का रूप ले लिया है।

अलंकार और भावोत्कर्ष—

अपनी भावाभिव्यक्ति को आकर्षक और प्रभावपूर्ण बनाने के लिये कवि को अलंकारों का आश्रय लेना पड़ता है। अलंकारों के प्रयोग से भाषा के सौन्दर्य की श्रीवृद्धि होती है और साथ ही रस भाव आदि में भी उत्तेजना जागृत होती है। अलंकार वाणी की सजावट और भाव की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार हैं और भाषा की पुष्टि और राग की परिपूर्णता के लिये आवश्यक उपादान हैं, वाणी के आचारव्यवहार, रीति, नीति हैं।

हम्मीरायण में सर्वत्र अलंकारों का सुन्दर रूप में समावेश हुआ है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये कवि ने काव्य में सरसता की सृष्टि और भावों में पूर्णता का समावेश कर पाठक-वृंद के मन पर प्रभाव डालने के लिये अपनी सूझबूझ से विशेषणों का प्रयोग किया है। जब वह उल्लसित होकर अभि-व्यंजना करने बैठता है तब मानो उपमानों की वर्षा होने लगती है। हम्मी-रायण काव्य में हुई संश्लिष्ट अलंकारों की रमणीय अभिव्यंजना के दर्शन छंद सं. १२७० में पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार के साथ आये छेकानुप्रास, छन्द सं. १२७३, १३१४, १३१५, १३२३ में वृत्यनुप्रास, ३३८ और १२८१ में पुन-

रुक्ति प्रकाश होते हैं। कवि ने काव्य में कहीं भी अलंकारों को बलात् ठूंसने का प्रयास नहीं किया है। उनके प्रयोग में स्वाभाविक गति के दर्शन होते हैं।

कहीं-कहीं तो कवि सामूहिक रूप से अनेक अलंकारों का एक साथ प्रयोग करता सा प्रतीत होता है। एक ही वस्तु के लिये अनेक उपमानों का प्रयोग करते हुए भी वह स्वयं को संतुष्ट करता हुआ प्रतीत नहीं होता है। छंद सं. ५६६, ६१२, ६०६, ६०९, ६११, ६१५ में रणथम्भोर की कमनीय कामिनियों के सरस शब्दों में सौन्दर्य का वर्णन करते हुए वह एक साथ अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, यमक, अतिशयोक्ति आदि के प्रयोग द्वारा वर्णन को आकर्षक बनाता दिखाई देता है। छंद सं. ३५९, ६०८, ६१४, ६२० में उत्प्रेक्षा अलंकार, १०६१ में रूपक, १३४४ में सांगरूपक के प्रभावशाली प्रयोग दृष्टव्य हैं।

छन्द सं. ८१९ और ८२० में अलाउद्दीन के शौर्य का वर्णन करते समय कवि ने दृष्टान्त अलंकार का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है। छन्द सं. ६२१ में प्रतीप, छंद सं. ११ में स्वाभावोक्ति के साथ यमक, सं. १२ में स्वाभावोक्ति संयुक्त पुनरुक्ति, सं. ६१५, ८४१ में सन्देह, सं. ६०७ में अतिशयोक्ति अलंकारों की छटा देखी जा सकती है।

काव्य में आये उपमान यत्र तत्र जायसी के पद्मावत से समता करते भी दिखाई देते हैं। वे बलात् थोपे गये से नहीं लगते, स्वाभाविकरूप में प्रयुक्त ये उपमान पाठकों को रुचिकर ही प्रतीत होते हैं। कवि ने अपनी अनूठी उपमाओं के द्वारा काव्य के सौन्दर्य में अभिवृद्धि की है।

रसनिष्पत्ति—

खेम कविप्रणीत हम्मीरायण मूलतः वीररस प्रधान सरस और मनोहारी काव्य कृति है। कवि ने इसमें वीर रस के सहयोगी रौद्र, वीभत्स, भयानक आदि का भी यथास्थान परिपाक किया है। काव्य में वीररस के मित्र शृंगार को भी स्थान अवश्य दिया है, पर नगण्य सा ही है। इससे यही आभास मिलता है कि वह शृंगार की वासनात्मक प्रवृत्ति से विहीन व्यक्तित्व वाला कवि था।

हम्मीरायण काव्य का नायक हम्मीर है और प्रतिनायक है अलाउद्दीन। ये परस्पर आश्रय और आलंबन बनते हैं। इनकी युद्ध चेष्टाएँ भी एक दूसरे के लिये उद्दीपन और क्रियाव्यापार बनती हैं। अद्भुत रस की संयोजना करते हुए कवि ने पर्याप्त अवकाश प्रस्तुत करते हुए काव्य के पात्रों के रक्षा हेतु क्रिया व्यापार का सुन्दर चित्रण किया है। अद्भुत रस का मनमोहक हृदया-

कर्षी उदाहरण पैगम्बर और देवी में परस्पर युद्ध और सैन्यवाहिनी के संहार में देखा जा सकता है।

कवि की रुचि स्पष्टतः वीर-रस में विशेष रही है। संपूर्ण काव्य में वीर रस से पूर्ण वर्णनों का आनन्द पाठक ले सकते हैं। वीरों के क्रिया व्यापार आदि का सरस वर्णन प्रस्तुत करते हुए कवि ने वीर रस की निष्पति में प्रबल रूप से सहायक वैसी ही ध्वन्यात्मक शब्द संयुक्त भाषा का आश्रय लिया है।

काव्य में कवि ने वीररस का साँगोपांग और प्रभावोत्पादक वर्णन किया है। मातृभूमि की रक्षा और शरणागतवत्सलता और प्रजापालन क्षत्रिय का परम धर्म माना गया है। हम्मीरायण काव्य का नायक एव उसके सहचर क्षत्रिय इन्हीं बातों का प्रण लेकर चलने वाले हैं। रणभूमि में अपना जौहर दिखाते हुए प्राण न्यौछावर करने वाले उसके योद्धा युद्ध नीति का पूर्णतः पालन करने वाले हैं। हम्मीरायण में इस रस से परिपूर्ण उत्कृष्ट वर्णनों का प्राधान्य हैं। छन्द सं. ४६२ में हम्मीर के काका महाराज बांकड़ा और मांडू के मन्मथ शासक (कोई परमार अथवा मुसलमान शासक) के मध्य हुए भयंकर संगर के वर्णन में उभयपक्षीय सेनाओं के आलंबन, आश्रय संबंध, अस्त्र शस्त्रादि की अनुभावगत चेष्टाओं, संचालन में युद्ध व्यापार, और सेना के विभिन्न अंगों के मध्य टकराव और संहार में वीरों के कायिक अनुभाव निहित हैं जिनका स्थायीभाव उत्साह है और रस है वीरत्व का।

उक्त पद सं. ४६२ में वीररस के अंगी रस भी साथ साथ उपस्थित हैं। वर्णन में आश्रयगत चेष्टाओं के साथ, शृंगार, वीभत्स आदि रसों की झलक भी दिखाई गई है। इस दृष्टि से छंद संख्या ८६८, १०५२, १३२४ आदि भी द्रष्टव्य हैं।

कवि ने वीर के साथ शृंगार रस का समन्वय करके काव्य में नवीनता लाने का प्रयास किया हैं। छंद सं. १०५४, उसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं। कवि ने इस प्रकार के वर्णन द्वारा काव्य की रोचकता में वृद्धि की है।

खेम ने हम्मीरायण काव्य में अद्भुत रस की अत्यन्त सुन्दर संयोजना की है। जहां अन्य रसों के साथ इसका संयोजन किया गया है, वहीं इसके स्वतंत्र प्रयोग की भी कमी नहीं है। छंद सं. २०४, २३४ इसके सर्वोत्तम, सरस और प्रभाव पूर्ण उदाहरण कहे जा सकते हैं। इसी प्रकार छंद सं. १६६, ८३२, ८३३, ८:४, ६२६, ९२६ में रौद्र रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। छंद सं. ६०६, ६७७में भयानक रस के स्वतंत्र संयोजन की छटा देखने योग्य है। इनमें शृंगार के मध्य में भयानक रस का संपुट देकर वर्णन को अधिक सशक्त बना दिया गया है। भयानक के साथ साथ रौद्र रस के समन्वय ने भी वर्णन में

विशेषता का संचार किया है। कवि ने यहां एक ही छन्द सं. ६७७ में शृंगार रौद्र के साथ हास्य इन तीन रसों का भयानक रस के साथ गुम्फन कर, स्वयं में निहित कुशल काव्य शक्ति का उदाहरण प्रस्तुत किया है।

युद्धोपरान्त रणस्थल के दर्शन से मन में जुगुप्सा और ग्लानि का संचार करा देने वाले वीभत्स रस से परिपूर्ण वर्णन को स्थान देने से भी कवि नहीं चूका है। सांगरूपक के संयोजन से युक्त छन्द सं. १२४४ इसका सुन्द नमूना है।

काव्य में शृंगार रस के समावेश से प्राय विरक्त सा दिखाई देने पर भी जो कुछ भी थोड़ी वहुत झलक शृंगार की इसमें दिखाई देती है, वह अन्य वर्णनों से किसी प्रकार हीन नहीं कही जा सकती। छंद सं. ४९५ और ५०० में तपस्वी की तपस्याभँग विषयक वर्णन और छंद सं. ६५६ से ६६० में महिमाशाह और बेगम के रतिमन्दिर विषयक वर्णन ही ऐसे वर्णन हैं जिनको कवि ने शृंगार के उद्दीपन के रूप में प्रस्तुत किया है फिर भी इनसे आलंबन में विरक्ति के भाव जाग्रत होते हैं। कवि यदि चाहता तो इन प्रसंगों को ही आधार बना कर शृंगार की विस्तृत सृष्टि कर सकता था पर वह ऐसा नहीं कर सका। इसका कारण स्वयं कवि की उच्चतम नैतिक भावना रही हो अथवा काव्य सृजन में उसकी मजबूरी। दोनों में से किसी एक की उपस्थिति के कारण ही काव्य में शृंगार रस को उचित स्थान नहीं मिल पाया है। कवि ने इन दोनों ही प्रसंगों में पात्रों के मुख से स्वामिधर्म और नैतिकता पूर्ण संवादों के द्वारा अपनी स्वयं की नैतिक, शुद्धाच·ण युक्त पवित्र भावनाओं को प्रदर्शित किया है।

सारतत्त्व यह है कि कवि ने एक उत्कृष्ट काव्य के प्रणयन में आवश्यक प्राय: सभी रसों का सरस, सुन्दर, मनहर समायोजन किया है। पाठक इनका आस्वादन करता हुआ उनमें ही आनन्दमग्न हो जाता है।

काव्य की भाषा—

प्रस्तुत काव्य की भाषा मध्यकालीन पूर्वी राजस्थानी है, जिसका वर्तमान नाम ढूंढाड़ी है। काव्य में आये व्याकरणिक रूपों के आधार पर हम इस भाषा को दक्षिण पूर्वी ढूढाड़ और उत्तरी हाड़ौती अंचल के संधिस्थल पर स्थित लगभग ८०० गांवों के व्यापक क्षेत्र नागरचाळ में बोली जाने वाली जानपदीय भाषा का ही शिष्ट रूप कह सकते हैं।

काव्य में अनेक स्थल ऐसे हैं जिनमें वर्तमान कालिक क्रिया "छै" का प्रयोग किया गया है। यह ढूंढाड़ी और उतर पश्चिमी राजस्थानी की विशे-

घता है। राजस्थान के दक्षिणी भूभाग बागड़ में भी इसका प्रयोग होता है, पर व्याकरण के अन्य रूपों यथा सर्वनाम, अव्यय, कारक आदि के साथ क्रिया रूपों पर विचार करने पर यह नागरचाळ की भाषा ही सिद्ध होती है और कवि भी इसी प्रदेश का बासिन्दा प्रमाणित होता है।

कवि की यह भाषा आधुनिक ढूंढाड़ी से भी अति निकट का सम्बन्ध स्थापित करती प्रतीत होती है अत: मेरे कतिपय मित्र इसके रचनाकाल के विषय में सन्देह व्यक्त करते हैं। पर ग्रन्थ में दिये गये प्रतिलिपिकाल और उसके खण्डित अंशों के पुष्पिका लेखों में प्राप्त प्रतिकाल के आधार पर कहा जा सकता है कि ग्रन्थ की भाषा पूर्व मध्यकाल की है। प्राचीनतम अंश का प्रतिलिपि काल सं १७०६ मिलता है। ऐसी स्थिति में हम इस काव्य का रचना काल उससे भी १००-२०० वर्ष पूर्व स्थिर कर सकते हैं।

काव्य में मध्यकालीन पूर्वी राजस्थानी लोक भाषा का ही विशेष प्रयोग किया गया है। जहँठै, खिदाय, पंगधोक, जींयो, जीमचूंठ, पाणी, चलु कराई कांसो, परवळि जैसे शब्द ठेठ जनभाषा के शब्द हैं जिनका प्रयोग ढूंढाड़ और उसके आसपास के प्रदेश में धड़ल्ले से होता है। काव्य में तत्सम शब्दों के प्रचुर प्रयोग से उसकी संस्कृत साहित्य में अभिरुचि का पता चलता है तो विदेशी अरबी और फारसी भाषा की शब्दावली का प्रयोग उसकी इन भाषाओं में गति का भी परिचायक हैं। उसने तद्भव और देशज शब्दों का प्रयोग प्रभूत मात्रा में किया है।

तत्सम शब्द प्रयोग के कतिपय नमूने प्रस्तुत हैं—अलि, अनंत, अंग, अरि, कुम्भ, काल, कपोत, कर, कुटुम्ब, द्वादशी, दिन, द्रव्य, परमहंस, पाखंड, पदार्थ, पंच, पात्र, प्रमाण विद्या, हेम श्रवर्ण, स्नानादि। इसी प्रकार विदेशी शब्दों के समुचित उदाहरण भी कम नहीं हैं। आलम, ईलाज, इतवारी, श्रमानत, कचैहड़ी, करामात, कौल, गनीम, तमाशा, तौबरों, ताकीद, तकसीराना, दरबार, दीदार, नानत (लानत), नजीक, नफा, परेशानी, मुलक, मुमारख, मजाल, मुलक, माफक, मुचलका, वजीर, रबत, ल्हसकर, हकीकत ऐसे ही कतिपय शब्द हैं। तद्भव और देशज शब्दों से तो काव्य पूरा भरा हुआ हैं।

काव्य में कहावतों ओर मुहावरों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। कतिपय स्थल तो ऐसे हैं जिनमें अबाध रूप में कवि इनका प्रयोग करता चलता है।

कवि ने हम्मीरायण काव्य में मिश्रित शैली का प्रयोग किया है। काव्य में कहीं संवाद शैली अपनाई गयी है, तो कहीं वर्णनात्मक और कहीं कहीं नाम

परिगणन शैली से ही वर्णन को सुन्दर बनाने का प्रयास किया गया है। छंद सं. ११३४, ११३७, ११३८ में सवाद शैली का प्रयोग द्रष्टव्य है।

कवि सर्वत्र भाषा प्रयोग में प्रसंगानुकुल परिवर्नन करता चलता है। वह ओज, प्रसाद और माधुर्य के गुण सर्वत्र अपनाता है। संगर के अवसर पर तोपों और बन्दूकों से होने वाली विस्फोटक ध्वनि का रसानंद प्राप्त कराने हेतु वह राजस्थानी काव्य परम्परा के अनुसार 'ट' कार बहुल पुरुष शब्दावली प्रयोग में लाता है तो तलवारी की खणखणाहठ और उनके प्रहार से कट कटकर पड़ती लोथों, टूटती अस्थियों से उत्पन्न ध्वनि को क्वचित मृदु ध्वन्याक्षर संयुक्त परुष अक्षरों से निर्मित शब्दों से प्रकट करता है। भड़ाकि, धड़ाकि में बिस्फोटक ध्वनि, भ्रणाट (भरणाट) जैसे शब्दों में तीरों की क्षिप्रगति सूचक ध्वनि और झड़ाझड़ी, दड़ादड़ी में करवालों के सतत् प्रहार, कड़ाकि और दड़ाकि जैसे शब्दों में हड्डियों के टूटने और गिर पड़ने की ध्वनि स्वत: युद्ध के विभत्स दृश्यों को पाठकों के सम्मुख ला खड़ा करते हैं।

श्रृंगार रसपूर्ण कमनीय वर्णनों में कवि सर्वत्र कोमलकान्त पदावली के प्रयोग से पाठक को आनन्दविभोर कर देता है। छंद सं. ८४६, ८४७ में ऐसो पदावली के दर्शन सुलभ हैं। यत्र तत्र शब्द प्रयोगों में अश्लीलत्व दोष या यावनी संस्कृति से प्रभावित भाषा के भी दीदार हो जाते हैं। छंद सं. १०८१ में 'रंडी' १०८७ में 'लंडी' जैसे शब्द उदाहरण रूप में प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

वर्णन योजना—

हम्मीरायण के कथानक में कवि ने कथानक की एकरसता से ऊब जाने वाले पाठकवृंद को विश्राम देने हेतु यत्र तत्र वर्णनों को कथानक के मध्य स्थान दिया है। इनसे काव्य में सरसता और रमणीयता का समावेश हुआ है ऐसे वर्णनों में रीति-रिवाज, वेशभूषा, नगरादि की भव्यता, भोजन, राजसभा, सैन्यवाहिनी, युद्ध, ऋतु और प्रकृति, पनघट और ताल नखशिख आदि के विस्तृत और मनोहारी वर्णन प्रमुख हैं, जिनसे काव्य की सरसता में वृद्धि हुई है।

हम्मीर के द्वारा रणथम्भोर का शासनतन्त्र संभालते समय नगर की शोभा का वर्णन करते हुए कवि दुकानों में ठाठ से बैठे व्यापारी वर्ग, अति उत्तुंग हेम कलश से सुशोभित मनोहारी अट्टालिकाओं, उनमें टंगे चित्र और जरी-पीताम्बरी वसनों, नगर में यत्र तत्र जुड़ते संगीत समारोहों और नाट्य-कला निपुण नट और नटणियों के कौतुक के दृश्य पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करता है (छंद ४४८) तो कहीं जप, तप, धर्म के नियमों में बंधे, अहिंसाव्रत

धारक सीधेसादे नगरवासियों, भवन, ताल, गढ, कोट आदि के निर्माण के अवसर पर दी जाने वाली पशु और मानवों की बलि, देवताओं की प्रसन्नता के लिये दारू की धार छोड़ने, विशिष्ट शक्तिसंपन्न व्यक्तियों के चमत्कारों में अंधविश्वास, शाकुनादि में विश्वास, कार्यरम्भ में मुहूर्त पृच्छाविषयक विवरण में भी काव्य में यत्र तत्र देखने को मिलते हैं । १२७

जन साधान्य के रहन-सहन, भोजन, शृंगार के वर्णनों को पढते समय कवि की बहुविज्ञता की जानकारी भी हमें मिलती है ।

कवि जब वस्त्रों का वर्णन करने बैठता है तो वह उनके अनेक प्रकार पाठक के सामने रख कर उस काल की समृद्धि की ओर उसका ध्यान आर्कषित करता है । वस्त्रादिक का वर्णन प्रस्तुत करते समय वह उस काल में प्रचलित लहंगा, साड़ी, लूंगी, सालू, चूनड़, पोमचा के साथ विभिन्न प्रकार के हरे, लाल, श्वेत, पीले, काले मूंगियां, आदि रंगों में रंगे वस्त्रों और तनसुख, मलमल, महमूदी, तासा, बाफता, कचिया, टूक अघोतर, कायमखानी आसाव-री और जरीदार वस्त्रों की हमें जानकारी देता हैं ।

इसी प्रकार आमिष, निरामिष व्यंजनों का वर्णन करने समय भी वह भोज्यसामग्री के अभिधानों की झड़ी लगा देता है । जब वह निरामिष खाद्यों की सूची प्रस्तुत करता है तो उसमें पीसे हुए माँस के घृतप्लावित सूले मसाला देकर घी की धार दिये गये सादा सूलों, मांस को कांट कर बनाये गये दहीमिश्रित या कोरे चक्र, मसाला मिलाकर बनाये गये श्वेत या पीत रंग के पीसे हुए मांस से बनाई गई पकौड़ी आदि का वर्णन करता है, उसी प्रकार शाकाहारी व्यंजनों में बेसण से तय्यार किये गये छत्तीसों प्रकार के तेवण, (व्यंजन) दही में डाले गये कांजी बडे, चावल-मूंग, मसूर, कढी, उड़द, मूंग, चौलों से निर्मित बड़ी, घी में तले गये कुलथ और चणे, हल्दी डाली गई मूंगों की पहत मुक्त घी प्लावित रोटी, बाटी, मांडा रोटी, चणा के डीरे, बैंगण, मेथी, बथुआ, सोया, पालक, सरसों के मुलायम पत्तों, डांडी चौलाई, राय चौलाई, बंगा तोरई, करेला, चंचीड़ा, टींडसी, कोहला, मुरेला किंदूरी, परवल, पान पतोड़ा, अरबी, सूरण ककोड़े आदि से पकाई गई साग तरकारियों की लंबी सूची प्रस्तुत करता है । उनके अतिरिक्त भी वह भरा बैंगन के भड़ीते, अगीथा (अगस्त्य) की फली, बालोल, कचनार की कलियों से बनाई सब्जियों, आम (केरी), नींबू, अदरख, हल्दी और आंवले के अथाणों (लौंजी या अचार), सूरण (जमीकंद, बांस के पत्र, पीपल के अचार के साथ कैर खटाई युक्त आवल पाण्यो (अम्ल जल) सादे और वस्त्र में बाँध कर पानी निथरे दही और जिसमें सुगंध युक्त द्रव्यों की धुंगार दी गई हो कि नाम परि-गणना की गई मिष्ठान्नों में शर्करा मिश्र खीर, सीरा (हलुवा) जिसमें घृत की

पांच धाराएं दी जाती हैं, लड्डू, गुंझा, मोहनभोग, डोंयटा, खाजा, दूध में डाले गये पतासे और पूरी, कचौरी, लूचा पूरी, खीच, खिचड़ी, पापड़ बड़ी, तली हुई चणे की पापड़ी जैसे राजस्थानी में बनने वाले पक्वान्नों की सूची प्रस्तुत कर अपनी बहुज्ञता का परिचय देता है। (२९६-२९७)

रणथंभोर दुर्ग, उसके आकाश को छूते परकोटे, घाटियों, सरोवरों, दुर्ग के द्वारों, दुर्ग में निवास करने वाली विभिन्न जातियों की जनता और दुर्ग के परित की भौगालिक स्थिति का कवि ने सुंदर वर्णन किया है (८४२-८४४)

राजसभा का वर्णन करते हुए कवि स्वर्णपत्रों से मढी दीवारों, और कोर कर गढे गये स्वर्ण स्तम्भ और स्वर्ण निर्मित पटादिक की शोभा का वर्णन करता है। वह घटाकार घड़ कर लगाये गये रत्नजडित स्वर्णकलश युक्त सप्त खंडात्मक धवल प्रासाद और उसमें उपस्थित होने वाले राजाओं के समान सामन्तों की श्री का भी दर्शन कराता है। ८५०

राजसभा में रागरंगरत सामन्तों, सभासदों के भी बहुमूल्य वस्त्राभूषणों से सुसज्जित, नृत्यरत पातुरी (नृत्यांगना) के हावभाव, स्वर-संधान का उल्लेख करने में भी कवि ने चूक नहीं की (१०७३) तो सभा में विचारणीय विषयों पर होने वाली चर्चाओं और निर्णय से संबंधित वर्णन कवि के राज सभा के ज्ञान का परिचय देता है। (११९८)

काव्य में खेम ने सेना और युद्ध व्यवस्था का वर्णन किया है। हम्मीर की सेना का वह इतना विवरण नहीं देता जितना अलाउद्दीन की सेना के विस्तार और संस्था का देता है। वह चारों दिशाओं में फैले सैनिकों की संख्या में नौ लाख घुडसवार, दो हजार हाथी, एक हजार बंदूकों या तोपों, लाखों धनुर्धारी योद्धाओं और अगणित पदाति सैनिकों का वर्णन मोल्हन के मुख से करता है।

हम्मीरायण एक वीर काव्य है—अतः कवि ने सम्पूर्ण काव्य अन्य रसों का आस्वादन कराते हुए युद्ध के दृश्यों के सांगोपांग वर्णन प्रस्तुत किये हैं। उसके युद्ध वर्णन इतने सजीव और ध्वन्यात्मक हैं कि श्रोता या पाठक की आंखों के समक्ष रणस्थल के सजीव चित्रण प्रस्तुत हो जाते है।

महाकाव्यों की परम्परा का पालन करते हुए खेम ने प्रकृतिवर्णन के लिये भी उपयुक्त स्थलों का चयन किया है। इस वर्णन में उसने अपनी अनूठी प्रतिभा का परिचय दिया है। उसने नाम परिगणन शैली का भी सहारा ग्रहण किया है—पर इस बात का ध्यान अवश्य रखा है कि वह पाठक को अरुचिकर

न लगे। वह हम्मीर के विराट् उद्यानों के वर्णन में विभिन्न प्रकार के फलदायी वृक्षों, वल्लरियों, पुष्पों से लदे पादपों, उद्यान में विचरण करते पक्षियों के कलख को अति ही सरस शब्दावली में प्रस्तुत करता है। ऐसा प्रतीत होता है उसे वृक्षविज्ञान का पूर्ण ज्ञान है।

ताल तलैयों और पनघट पर पानी भरती, बतियाती नगर वधुओं के हास परिहास का भी बड़ा मनोहारी चित्रण खेम ने प्रस्तुत किया है। यह वर्णन अति सूक्ष्म पर सरस और मनहर है।

वीररस के लिये शृंगार रस का सहयोग आवश्यक माना गया है। उसी आवश्यकता की पूर्त्ति के लिये खेम ने—तीज के पर्व के बहाने देवलदे और नगर की नारियों के मेले का आयोजन कराया है। उसने इस मेले के माध्यम से देवलदे और नगर की नारियों के रूप सौन्दर्य के वर्णन का अवसर प्राप्त कर इस महाकाव्य में इस कमी को पूरा करने का प्रयास किया है। रही सही कमी की पूर्त्ति किसी ने जायसी के पद्मावत में वर्णित नखशिख वर्णन को काव्य में सम्मिलित कर पूरा किया है। इस प्रक्षेपण से काव्य में चार चांद ही लगे हैं। उसने जायसी के कडवकों का चौपइयों में परिवर्तन मात्र किया है।

चाहमान वंश का उद्भव —

खेम ने चौहान वंश के आदि पुरुष मान के नाम का उल्लेख करते हुए उसे चाहमान कहा है। इसका तात्पर्य यही है कि मान स्वयं चाहमान वंश का था। अत: चाहमान इस वंश का आदि जनक रहा होगा। चाहमान के प्रादुर्भाव से संबंधित अनेक मत प्रचलित हैं। कोई उसकी आबू में अग्निकुंड से उत्पत्ति होना मानते हैं, तो कोई सूर्य, चन्द्र या इन्द्र से कोई विद्वान् चौहानों को तक्षक वंशी कहते हैं। आधुनिक विद्वानों में यह विचार का मुख्य बिन्दु रहा है और एक दूसरे का उन्होने खँडन मंडन भी किया है। राजस्थान की ख्यातों और भाटों की बहियों के अनुसार चाहमान, परमार, चालुक्य, प्रतिहार आदि क्षत्रिय वंशों के आदि पुरुषों की यज्ञकुंड से उत्पत्ति को लेकर सबसे अधिक विवाद रहा है। यह सच हैं कि इस प्रकार से किसी प्राणी की उत्पत्ति सृष्टि विज्ञान के विरुद्ध है। पर इस प्रकार की मान्यता के पीछे क्या रहस्य है, और उसका इतिहास कितना पुराना है, इस पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

चाहमान और अन्य तीन राजवंशों के समान ही डोडिया राजवंश के आदि पुरुष दीपांग के जन्म के विषय में भी ऐसी ही मान्यता स्थापित की हुई मिलती है। दीपांग का जन्म भाटों की बहियों में केलि के डोडे से बताया गया है। जब हम ऐसी परम्पराओं के प्राचीन इतिहास का अध्ययन करते हैं तो हमें

तैत्तिरीय संहिता,[1] शतपथब्राह्मण,[2] महाभारत, भागवतादि[3] प्राचीन वाङ्मय में ऐसे अनेक उदाहरण मिल जायेंगे, जिनका मिलान भाटों की इस मान्यता से होता है। वास्तविकता यह है कि भाटों ने इन्हीं ग्रन्थों के अनुकरण पर इन प्रसंगों की उद्भावना की है। उपर्युक्त ग्रंथों में विभिन्न स्थलों पर ब्रह्मा द्वारा इन्द्रवध के संकल्प से अन्वाहार्य पचन के द्वारा वृत्त की उत्पत्ति, महाभारत--वन पर्व,[4] और शान्ति पर्व[5] में वर्णित इन्द्रभुजा स्तंभन आख्यान में इन्द्रवध के लिये महर्षि च्यवन के द्वारा 'मद' नाम की कृत्या को जन्म देने आदि पर्व[6] में आचार्य द्रोण से प्रतिशोध लेने के लिये समर्थ पुत्र की कामना के साथ याज के द्वारा संस्कृत हवि में आहूत कर अग्नि तत्व संपूर्ण वस्त्रालंकरों से सज्जित मुकुट और कवचधारी, धनुष बाण और खड्ग धारण किये सिंहनाद करते तरुण धष्टधुम्न और द्रौपदी के अवतरण के प्रसंग ही भाटों की कथाओं के आधार हैं। प्रस्तुत काव्य खेम कृत हमीरायण में भी अग्निकुंड से उत्पन्न विकराल रूप वाले देवता गोरळ का प्रसंग उपलब्ध है। इन ग्रन्थों में किसी महायोद्धा के जन्म के विषय में उनके और उनके वंशजों अग्नि तत्व की विद्यमानता का संकेत देना भर होता है। इनका अभिधार्थ लेकर आलोचना करना उचित नहीं है। कवि खेम ने अपने काव्य में इस कुल की उत्पत्ति विषयक मान्यता पर एक शब्द भी नहीं लिखा है।

काव्य में निहित ऐतिहासिक तत्त्व और उनकी समालोचना—

खेम कृत हम्मीरायण के प्रथम अध्याय में रणथम्भोर के शासक राव हम्मीर के पूर्वजों की परम्परा में आदि पुरुष के रूप में मान का नाम दिया गया है। मान के नाम के उपरान्त विशेषण रूप में दिया गया चाहमान शब्द उसके स्वयं के विरुद या जाति का सूचक हो सकता है। यदि इसे विरुद का सूचक शब्द माने तो वह इस वंश का प्रथम पुरुष सिद्ध होता है। पृथ्वीराज रासो के कतिपय संस्करणों में जिस मानिकराय चाहुवान वीर को ब्रह्मा के यज्ञ से उत्पन्न कहा गया है, उसी की ओर यहां भी संकेत माना जा सकता है। यदि इसे जाति या कुल का सूचक मानते हैं तो आदि पुरुष चाहमान नाम का

---

१ तैत्तरीय सहिता २, ४, १२ २
२ शतपथ ब्राह्मण १-६-३७-१५; १,६,४ १-२१
३ भागवत – ६ ९
४ महाभारत--वनपर्व१२१ १५—२५, १२५ १ - ११
५ —वही—शान्तिपर्व २४२. २४,
६ महाभारत आदि पर्व—१६६ ३६—५०

कोई ओर ही वीर पुरुष सिद्ध होता है, जिसके नाम पर इस वंशशाखा का नाम पड़ा जिसकी उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में अनेक मत प्रचलित हैं[1]।

मान का अस्तित्व किस युग में था, इस विषय में काव्य में कोई उल्लेख नहीं है, पर मान के क्रम में पांचवीं पीढी में हुए वासुदेव का समय सं. ६०६ वि. दिया गया है। ऐसी स्थिति में एक पीढी की बीस से पच्चीस वर्ष की अवधि मान कर गणना करने पर सौ या सवासौ वर्ष पूर्व सं. ४७५ से ५०० तक उसका समय मान सकते हैं। मान के वंश क्रम में क्रमशः नंद आनंद, वच्छ, (वत्स), श्री वच्छ (श्री वत्स) के नाम दिये गये हैं जिनका काल भी सं.५०० और ६०६ के मध्य निश्चित किया जा सकता है।

श्री वत्स के पुत्र के रूप में वासुदेव का नाम दिया गया है। बीजोलियां से प्राप्त सं. १२२६ वि. के शिलालेख में (विष्णु) वासुदेव को वत्सगोत्रीय विप्र कहा गया है।[2] क्यामखांरासो में जान कवि चौहान वंश में उत्पन्न स्वयं को जामदग्न्य गोत्र में उत्पन्न वत्स का वंशज कहता है।[3] सूंधा के शिलालेख में जालोर के चौहानों को और अचलेश्वर (आबू) के शिलाभिलेख में भी चन्द्रावती के चौहान राजवंश को वत्सगोत्रीय कहा गया है।[4] प्रस्तुत काव्य हम्मीरायण (खेम) में वासुदेव के पिता का नाम श्री वत्स और दादा का नाम वत्स ही संभवतः इस वंश को वत्सगोत्रीय कहे जाने के कारण रहे होंगे। जान कवि के कथन में इस वास्तविकता का पता चलता है। वह इस वंश को जमदग्नि गोत्र वताता है और वत्स को उस गोत्र में उत्पन्न पुरुष विशेष, जिसके ये चौहान वंशज हैं।

श्री वत्स के पुत्र वासुदेव के द्वारा श्री स्थलमें राज्यस्थापन की तिथि प्रस्तुत काव्य में सं. ६०६ दी गई है। राजशेखर कृत प्रबंधकोष के अन्त में दी गई वंशावली में यह तिथि सं. ७०८ है।[5] खेम कृत हम्मीरायण और प्रबंध कोष की वंशावलियां एक दो नामों में अंतर के अतिरिक्त प्रायः समान हैं। खेम ने इस वंश के सभी शासकों के नाम के साथ उनके सिंहासन आरूढ होने की तिथि, मास और वर्ष का उल्लेख किया है और साथ ही उनके शासन काल

---

१ इस विषय में डॉ. दशरथ शर्मा द्वारा लिखी गई पुस्तक 'अर्ली चौहान डाइनेस्टीज का प्रथम अध्याय—पृ. १-१० द्रष्टव्य हैं।
२ श्लोक सं. १०-११
३ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—डॉ. दशरथ शर्मा पृ. १०.
क्यामखां रासा—छंद सं. ४५-५०
४ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—डॉ. दशरथ शर्मा—पृ. १०
५ प्रबंधकोष—राजशेखर (वि. १४०५)

की अवधि भी वर्ष, मास और दिनों में गिनाई है। प्रवंधकोष में वासुदेव के राज्याभिषेक की तिथि के अतिरिक्त अन्य शासकों की तिथियां नहीं दी है।

वासुदेव ने अपने राज्यकाल में अपने वंश की कीर्त्ति में वृद्धि की। आशा देवी के वरदान से उसको चार स्वर्ण कलश और एक सौ पांच घोड़े मिले। उसने श्रीस्थल में राज्य स्थापित कर फाल्गुन वदि चतुर्दशी (शिवरात्री) को अपना अभिषेक कराया और सं. ६२१ तक शासन किया। श्रीस्थल की सही स्थिति की जानकारी नहीं मिली। संभव है सांभर को ही श्री स्थल कहा गया हो, जहां की आशादेवी का वरदान वासुदेव को मिला था। बीजोलियां शिला लेख में इस वंश के पूर्व पुरुषों को अहिच्छत्रपुर का विप्र कहा है।[1] पृथ्वी राजविजय महाकाव्य में वासुदेव का राजस्थान सांभर से थोड़ा पूर्व में हट कर कहा गया है। हर्ष के शिलालेख में अनन्त प्रदेश को इनका मूल स्थान वताया है[2]। यह संभव है कि श्रीस्थल सांभर के समीप स्थित अन्य नगर रहा हो, जैसा कि पृथ्वीराज विजय में कहा गया है और यह प्रदेश अनन्त गोचर प्रदेश के अन्तर्गत रहा हो।

खेम के अनुसार वासुदेव ने सांभर में नमक का उत्पादन कराना प्रारंभ किया। पृथ्वीराजविजय के अनुसार वासुदेव को सांभर झील की प्राप्ति उसके मित्र विद्याधर से हुई।[3] बीजोलियां शिलालेख में 'शाकंभराजनि जनीव ततोपि विष्णोः' पदांश से सांभर झील का उदय ही विष्णु (वासुदेव) से हुआ, कहा है।[4] तात्पर्य इन सबका यही है कि सांभरहृद पर वासुदेव का अधिकार था और उसने ही सर्वप्रथम वहां लवण उद्योग स्थापित किया होगा। हम्मीर महाकाव्य के अनुसार वप्पराज (वप्पय) राज ने सांभर[5] झील से सर्वप्रथम नमक का उत्पादन करना प्रारम्भ किया था।

डॉ. डी. आर भंडारकरने 'सफ व सुतेह स्री वहमन मुल्तान मल्का' लेख युक्त मुद्रा के वासुदेव वहमन को वासुदेव चाहमान मानकर वासुदेव का काल सन् ६२७ (सं. ६८४) माना था। डॉ. दशरथ शर्मा ने उसका खंडन किया।[6] अल्लाड़नाथ कृत निर्णय सागर ग्रंथ की प्रतियों में भी सर्वत्र एक

---

१ जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल-जिल्द ५५-खंड १-पृ.४१
२ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज--डॉ. दशरथ शर्मा पृ. २७
३ पृथ्वीराजविजय महाकाव्यम्-जोनराज, चतुर्थ सर्ग (१६६७ ई.) रा.प्र.जो.
४ बीजोलियां शिलालेख--श्लोक सं. ११
५ हम्मीर महाकाव्य--नयचन्द्र सूरि. १/८०-८१
६ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज--डॉ. दशरथ शर्मा--पृ. ८

चक्रापुरी के राजकुमार सूर्यदेव को वाहुवाण वंश का कहा है, जबकि वह चौहान था। अत: संभव है सिक्के पर अंकित लेख में चहमन शब्द रहा हो और उसे वहमन पढा गया हो।[1] डॉ. भंडारकर द्वारा कल्पित सन् विचारणीय है।

हम्मीरायण में खेम ने वासुदेव के बाद सं. ६३१ की चैत्र कृष्णा चतुर्थी को उसके पुत्र सांवरतसिंह का अभिषेक हुआ। उसने श्रीथल में पाँच वर्ष तक राज किया। प्रबंधकोष, बीजोलियां शिलालेख, पृथ्वीराज विजयमहाकाव्य में भी वासुदेव के उपरान्त सामन्त का नामोल्लेख किया गया है, जबकि हम्मीरमहाकाव्य में सामन्त का नामोल्लेख वासुदेव से छठी पीढी में जयराज के बाद दिया है। बीजोलियां शिलालेख में सामन्त को अहिच्छत्रपुर का वत्सगोत्रीय ब्राह्मण बताया है। नागभट्ट द्वितीय के सं. ८७२ के तथा विग्रहराज द्वि. के सं. १०३० के शिलालेखों के आधार पर सामन्त का समय वि. सं. ७२५ के लगभग निश्चित किया गया है।[2] ऐसा हम्मीर महाकाव्य में सामन्त के विषय में बताई गई स्थिति के आधार पर किया गया है, जो उचित नहीं है। खेमकृत हम्मीरायण तथा प्रबंधकोष के अनुसार सामन्त का समय सातवीं शती विक्रमी के द्वितीय पाद में (इ. सन् के छठी शताब्दी के अंतिम चरण) में होना चाहिए। बीजोलियां शिलाभिलेख और पृथ्वीराजविजय से भी इसका समर्थन होता है।

सामन्त के उपरान्त उसका पुत्र नरघोष सं. ६:५ वि. में अभिषिक्त हुआ और बाईस वर्ष तक शासक रहा। अन्य अभिलेख इस विषय में मौन हैं। प्रबंध कोष में भी नरघोष का नाम नहीं दिया गया है, यह आश्चर्य है। संभव है नरघोष के तुरन्त बाद नरदेव के नामोल्लेख के कारण दोनों नामों में समानता देख कर भ्रमवश नाम छोड़ दिया गया हो। बीजोलियां शिलालेख में सामन्तसिंह के उपरान्त पूर्णतल्ल के नाम का उल्लेख हुआ है। डॉ. भण्डारकर और श्री अक्षयकीर्ति व्यास ने पूर्ण तल्ल सामन्त को उत्तराधिकारी शासक माना है, पर डॉ. दशरथ शर्मा के अनुसार पूर्णतल्ल व्यक्ति का नाम न होकर स्थान का नाम है। उनके अनुसार जोधपुर राज्य में स्थित पुणतला गांव ही पूर्णतल्ल है,[3] जहां का नरदेव शासक था। डॉ. शर्मा की मान्यता उचित नहीं लगती। वास्तव में पूर्णतल्ल शब्द नरघोष का ही पर्याय है। बीजोलियां शिलालेख में नरदेव के नाम से समानता होने के कारण संभवत: यह नाम बदला गया है। पूर्णतल्ल शब्द पूर्ण और तल्ल शब्दों के योग से बना है। पूर्ण से तात्पर्य है

---

१ विश्वंभरा पत्रिका, बीकानेर
२ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—डॉ. दशरथ शर्मा— पृ. २७
३ ,, ,, , पृ. २८

घोष (पूर्णघोष) और तल्ल शब्द तल्ली के पुल्लिंग रूप में प्रयुक्त हुआ है। तल्ली का अर्थ है युवा नारी अत: तल्ल का अर्थ नर किया गया है। तत्पश्चात् इनका स्थान परिवर्तन करके नरघोष के स्थान पर रखा गया है। यह कल्पना अटपटी जरूर लगती है, पर हुआ ऐसा ही होगा।

नरघोष के उपरान्त नरदेव सं. ६५७ विक्रमी में गद्दी पर बैठा। हम्मीर महाकाव्य में वासुदेव के क्रम में सामन्त और नरघोष का नाम नहीं होने से सीधा नरदेव का नाम दिया गया है। बीजोलियाँ शिखालेख में पूर्णतल्ल (नरघोष) के बाद नरदेव का नाम आया है। इसमें नरदेव के लिये 'नृप' शब्द प्रयुक्त हुआ है।[1] सुरजनचरित में भी सामन्त के उपरान्त नरदेव के नाम का उल्लेख हुआ है। जैसा कि पूर्व में लिखा गया है कि डा. दशरथ शर्मा पूर्णतल्ल से पुणतला स्थान का अर्थ ग्रहण कर नृप (नरदेव) को वहां का शासक बताते हैं।

खेम के अनुसार नरदेव के उपरान्त उसका पुत्र अजैदेव सं. ६६९ में अभिषिक्त हुआ। उसने अजमेर नगर की स्थापना करके अपनी राजधानी वहां स्थानान्तरित कर ली। प्रबन्धकोष की वंशावली में भी अजराज को 'अजमेरूदुर्ग कारापक' कहा है। बीजोलियां शिलालेख और पृथ्वीराजविजय काव्य में भी नरदेव के उत्तराधिकारी का नाम अजैदेव और जयराज दिया गया है। जयराज अजयदेव का ही अन्य रूप है। पर हम्मीर महाकाव्य में नरदेव के उपरान्त चन्द्रराज और जयपाल चक्री के नाम देकर उनके बाद जयराज का नाम दिया है। यह सम्भव है कि जयपाल चक्री और जयराज एक ही व्यक्ति के नाम हो। फिर भी चन्द्रराज का नाम तो विचारणीय रहेगा ही। डा. दशरथ शर्मा ने जयराज (अजैदेव) को सामन्त का पुत्र और नरदेव का भाई मानकर चन्द्रराज को इन दोनों के पौत्र के रूप में मान्यता दी है।[2]

हम्मीरायण (खेम) के अनुसार अजयदेव के बाद उसका पुत्र विहगराज सं. ६९८ में गद्दी पर बैठा। वह अजमेर और श्रीथल दोनों ही स्थानों पर रहता था। प्रवन्धकोष, बीजोलियां शिलालेख और पृथ्वीराजविजय महाकाव्य से भी इसकी पुष्टि होती है। हम्मीरमहाकाव्य में जयराज के क्रम में सामन्तसिंह, गूयक और नन्दन के नामों का उल्लेख हुआ है और इसी क्रम में विग्रहराज या विग्रहनृप के समानान्तर वप्रराज के नाम का उल्लेख किया है।[3]

---

१ बीजोलिया शिलालेख में पर्याय नाम देने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। उसमें वासुदेव के लिये विष्णु, नरघोष के लिये पूर्णतल्ल और उसी प्रकार नरदेव के स्थान पर नृप शब्द का प्रयोग दृष्टव्य है।

२ हम्मीरमहाकाव्य—ऐतिह्य सामग्री-डॉ. दशरथ शर्मा-पृ. २४ (रा. प्रा. वि. प्र. जोधपुर)

३ हम्मीरमहाकाव्य १/७२।

सामन्त के विषय में पूर्व में ही विचार करते हुए उसे वासुदेव के पुत्र के रूप में स्वीकार किया गया है। गूयक ओर नन्दन के नाम भी हम्मीरमहाकाव्य में स्थान च्युत लगते हैं। यही स्थिति वप्रराज की भी है।

हम्मीरायण (खेम) और प्रबंधकोष वंशावली में विहगदेव या विग्रहराज के उपरान्त विजैदेव सं. ७१९ में शासक बना। हम्मीरायण के अनुसार वह विहगराज का पुत्र था। उसके अधिकार में श्रीथल और अजमेर के अतिरिक्त गायण, भरडौज और नरहर दुर्ग भी थे। उसको उसकी रानी विजयादे ने विष देकर मार डाला। अन्य किसी भी काव्य या शिलालेख में उसके नाम का उल्लेख नहीं है।

विजैदेव के पाट पर सं. सात सौ सत्ताईस में चण्डराज बैठा। प्रबंधकोष, बीजोलियां शिलालेख और पृथ्वीराजविजय काव्य में भी चन्द्रराज का नाम है, पर बीजोलियाँ शिलालेख में तथा पृथ्वीराजविजय में विजयराज का नामोल्लेख नहीं होने से वह सीधा विग्रहनृप और विग्रहराज के बाद दिया गया मिलता है। हम्मीरमहाकाव्य में नरदेव के बाद आये चन्द्रराज नाम को डा. दशरथ शर्मा ने कई पीढी नीचे उतार कर इसी काव्य में जयराज के पौत्र के रूप में ठीक स्थान पर स्थापित किया है।[1] खेम के अनुसार वह आखेट के समय शेर के साथ लड़ते हुए मारा गया।

खेम के अनुसार चण्डराज (चन्द्रराज) के पाट पर सं. ७४७ में गोविन्दराज बैठा। प्रबंधकोष वंशावली में उसे 'सुरत्राण वेगवारिस' को जीतने वाला कहा है। बीजोलियां शिलालेख और पृथ्वीराजविजय में उसके नाम क्रमशः गोपेन्द्र और गोपेन्द्रक मिलते हैं। हम्मीरमहाकाव्य में वप्रराज के उपरान्त सीधा हरिराज का नाम दिया गया है। अन्य काव्यों में मिलने वाले पांच शासकों के नाम उसमें नहीं है। इसमें सामन्त के उपरांत जिस गूयक का नाम आया है, सम्भव है वह गोविन्दराज या गोपेन्द्र ही हो। डॉ. दशरथ शर्मा भी यही मानते हैं पर एक स्थान पर वे उसे दुर्लभराज प्रथम का पिता कहते हैं और दो पृष्ठ आगे ही उसे दुर्लभराज का उत्तराधिकारी घोषित करते हैं।[2]

खेम के अनुसार गोविन्दराज की मृत्यु उसकी धाय बडारण के साथ प्रेम-प्रसंग के कारण हुई। हर्षनाथ शिलालेख के अनुसार वह नागभट्ट (द्वि.) की

---

१ हम्मीर महाकाव्य ऐतिह्य सामग्री पृ. २४।
२ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, डॉ. दशरथ शर्मा पृ. २८ एवं ३०।

राजसभा का ख्यातिलब्ध योद्धा था।[1] नागभट का काल ८७२ वि. के परित था। हर्षनाथ का मंदिर भी संभवत उसी ने बनवाया था।[2] खेमकृत हम्मीरायण में दिये काल से इसमें १२५ वर्षों का अंतर है अतः हो सकता है दुर्लभराज द्वितीय का पुत्र गुयक, जिसका अपर नाम गूदलेव, गंडु, गुंडदेव और गोविन्दराज मिलते हैं, ही हर्षनाथ शिलालेख का गोविन्दराज हो, जिसका समय खेम सं. ९३२ से ६५० बताता है।

गोविन्दराज के उपरान्त उसका पुत्र दुर्लभदेव (दुर्लभराज) सं. ७७६ वि. में गद्दीपर बैठा। उसके अधिकार में पांच दुर्ग, और पांच हाथियों के साथ ४५०० अश्व थे। हम्मीरमहाकाव्य को छोड़कर प्रबंधकोषवंशावली, बीजोलियां शिलालेख और पृथ्वीराज विजयमहाकाव्य में भी गोविन्दराज, गोपेन्द्र या गोपेन्द्रक के उत्तराधिकारी के रूप में दुर्लभराज का नाम मिलता है। पृथ्वीराजविजय के अनुसार उसने गंगानदी और समुद्र में अपनी तलवार का प्रक्षालन कर गौड देश पर अधिकार किया।[3] यह उल्लेख भी गोविन्दराज द्वितीय से संबंधित हो सकता है।

दुर्लभदेव के बाद उसका पुत्र वच्छराजदेव सं. ८०७ में राज्य का अधिकारी बना। पर पांच मास तक राज करके ही वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। प्रबंधकोषवंशावली में भी उसका नाम है, पर अन्य काव्यों या शिलालेखों में उसका नाम नहीं मिलता।

वत्सराज के उपरान्त सं. ८१२ में हरसहदेव सिंहासन पर बैठा। उसके अधिकार में आठ दुर्ग थे और सेना में दस मदमस्त हाथी और ७५०० घोड़े थे। उसने सुल्तान सहाबुद्दीन को युद्ध में पराजित कर 'अरिमर्दन' को उपाधि धारण की। प्रबंधकोषवंशावली में हरसहदेव का नाम नहीं है। हम्मीरमहाकाव्य में हरिराज नाम दिया है और उसको शकाधिराज को जीत कर मुग्धपुरी पर अधिकार करने वाला बताया है।[4]

हरिराज के नाम के बाद हम्मीरमहाकाव्य में सिंहराज का नामोल्लेख हुआ है। संभव है खेमकृत हम्मीरायण का हरसहदेव ही रहा हो जिसे नयनचन्द्र ने हरिराज और सिंहराज नाम के दो व्यक्ति मान लिया हो। प्रबंधकोष

१, हर्ष का शिलालेख श्लोक सं. १३

२. हर्ष का शिलालेख श्लोक सं. १३

३ पृथ्वीराज विजय-पंचम सर्ग श्लोक सं. २०

४ हमीर महाकाव्य-पंचम सर्ग-श्लोक-८२

वंशावली में भी सिंहराज ही नाम मिलता है। उसे जेठाणा के युद्ध में हेजिम दीन नाम के सुल्तान पर विजय प्राप्त करने वाला कहा है।

हम्मीरमहाकाव्य में वप्रराज के पुत्र के रूप में आये हरिराज के नाम को डॉ. दशरथ शर्मा कल्पित नाम मानते हैं।[1] यह उचित भी है, क्योंकि नयचन्द्र ने वंशानुक्रम में भयंकर भूलें की हैं। वप्रराज का नाम भी अपने उचित स्थान पर नहीं दिया गया है। (वप्रराज का उल्लेख आगे के पृष्ठों में देखें)

अतः खेम कृत हम्मीरायण का वत्सराज का पुत्र हरसहदेव ही प्रबंध कोष का सिंहराज और हम्मीरमहाकाव्य का हरिराज—सिंहराज प्रतीत होता है। उसमें सिंहराज को कर्णाटलाट, चोल, गुर्जरादि के त्रस्त करने वाला और शकपति हेतिम को मार कर चार हाथी जीतने वाला कहा है। इन तीनों ही अभिलेखों में प्रतिपक्षी शत्रु सुल्तानों के नामों में अवश्य अन्तर है पर उपलब्धि एक सी दिखाई गई है। खेम ने हरसहदेव की मृत्यु का कारण शरीर का असंख्य घावों से विद्या जाना बताया है।

सिंहराज के बाद नयचन्द्रसूरि ने भीम के नाम का भी उल्लेख किया है, जिसे वह भतीजा या उत्तराधिकारी कहते हैं। डॉ. दशरथ शर्मा इसका विरोध करते हुए विग्रहराज को सिंहराज का उत्तराधिकारी मानते हैं।

खेम (हम्मीरायणमें) हरसहदेव के उपरान्त सं. ८२७ में दुजनधनदेव का नाम उसके उत्तराधिकारी और पुत्र के रूप में देता है। उसके अधिकार में बयाना, बौंळी, ऊटगर, भटनेर आदि आठ दुर्ग और सेना में पन्द्रह हजार आठ सौ अठ्यासी घोड़े और चौबीस हाथी थे। उसने शाहनुरुद्दीन को युद्ध में पराजित कर बारहसौ घोड़े और १६ हाथी जीत कर अपनी सेना में सम्मिलित किये और सुल्तान गहन की उपाधि प्राप्त की। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उसने सुल्तान को बंदी भी बनाया होगा। प्रबंध कोष वंशावली में उसका नाम दुर्योधन दिया गया है और उसको सुरत्राण निसारदीन को जीतने वाला बताया है। यहां इन दोनों ही काव्यों की वंशावलियों में विजित सुल्तानों के नामों में अन्तर है। खेमकृत हम्मीरायण में दुजनधनदेव के राज्यकाल की अवधि पाँच वर्ष दी गई है[2] जबकि उसके

---

१ हम्मीर महाकाव्य ऐतिह्य सामग्री पृ-२४

२. दुजनघनदेव के पुत्र विजयपाल का राज्यारोहण काल ८७८ वि.दिया है, अतः दुजनघनदेव की राज्य कालावधि पाँच वर्ष सात मास के स्थान पर पचास वर्ष सात मास होनी चाहिए।

पुत्र का सिंहासनासीन होने का वर्ष सं. ८७८ दिया गया है। अतः स्पष्ट है कि प्रतिलिपिक द्वारा प्रमादवर्ष यह अशुद्धि हुई है। पाँच वर्ष के स्थान पर यहाँ 'पचास वर्ष' होना चाहिए। दुजनधनदेव (दुर्योधन) के नाम का उल्लेख अन्य किसी भी स्रोत से उपलब्ध नहीं होता।[1]

दुजनधनदेव के वाद उसका पुत्र विजयपाल सं. ८७८ में शासक बना। उसने चंबल नदी को पारकर के धारा नगरी के राजा भोज को पराजित किया और सात वर्ष नौ मास तक राज्य करके ८८५ वि. में सांभर में मरा। उसका नाम भी अन्य काव्यों में नहीं मिलता है। उसके उपरान्त खेम ने वापलदेव को शासक बताया है जो प्रबंधकोष, बीजोलियाँ शिलालेख और पृथ्वीराजविजय काव्य में वप्पयराज के नाम से उल्लिखित है।[2]

---

१. प्रतिलिपि में विजयपाल की राज्यकालावधि से सबंधित पाठ है—"ते सराह व्रष तपि मास नौ" और इसी प्रकार विजयपाल के पुत्र वापलदेव सिंहासवासीन होने की तिथि ६२५ आषाढ वदि अमावस्या दी गई है। इनमें लिपिकर्ता का प्रमाद स्पष्ट दिखाई देता है। सराह को शुद्ध कर 'सातह' मान लेने पर सं ८७८ में जोड़ने पर ८८५ संवत निकलेगा अतः ८२५ के स्थान पर भी ८८५ शुद्ध पाठ मानना चाहिए। इन परिवर्तनों से आगे की काल गणना ठीक बैठती है।

२. यहाँ बीजोलियाँ शिलामिलेख में गोपेन्द्र के पुत्र दुर्लभराज के और वप्पराय के बीच आये नामों गूर्वक, शशि नृप, गवाक और चन्दन के नामों पर आवश्यक है. जिनका उल्लेख अन्य किसी काव्य में नहीं मिलता हमीर महाकाव्य में अवश्य नरदेव के वंशक्रम में चन्द्रराज, गूयक और नन्दन नाम इनसे मिलते जुलते उपलब्ध हैं। नयचन्द्रसूरि ने संभव है बीजोलियाँ के शिलालेख से ही ये नाम प्राप्त किये हैं और उनको स्थान भ्रष्ट कर अन्यत्र लिख दिया है। इन नामों के साथ आये अन्य नाम सामन्त और और जयराज को हमने पूर्व में ही उनके स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया है। उसी प्रकार चन्द्रराज (शशिपृप) को भी विजैदेव या विजयराज के पुत्र चण्डराज (चन्द्रराज) के रूप में व्यवस्थित कर स्थापित किया है।

डॉ दशरथ शर्मा ने गुवाक(द्वि) को गोविन्द या गोपेन्द्र मानकर, गुवाक के उपरान्त आये नाम नन्दन का शुद्ध स्वरूप चन्दन माना है। उन्होंने गुवाक अथवा गोविन्द को दुर्लभराज (प्रथम) का पिता कहा है। वास्तव में वह दुर्लभराज का पुत्र था, जैसा कि सभी काव्यों में बताया गया है। अतः डॉ शर्माजी की यह संभावना उचित नहीं लगती। दुर्लभराज द्वितीय के पुत्र का नाम अवश्य इन काव्यों में गदलेव, गण्डू, श्री गुंददेव, गूंदू और गोविन्दराज मिलते हैं – अतः डॉ शर्माजी की संभावना की संगति इन नामों के साथ बैठाई जा सकती है। नन्दन या चन्दन को उन्होने गुवाक (द्वितीय) या 'पुत्र माना है'

हर्ष शिलालेख में भी गुवाक के पुत्र चन्दन का उल्लेख मिलता है। डॉ. शर्मा ने उसकी उपलब्धियों का भी उल्लेख किया है। इनके लिये डॉ. शर्माजी की पुस्तक 'अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—पृष्ठ सं. 30-31 दृष्टव्य है।

बापलदेव सं. ८८५ में अभिषिक्त हुआ। उसके अधीन पचास दुर्ग, तीस हाथी और एक लाख बीस हजार अश्वारोही सैनिक थे। खेम लिखता है कि उसको आशादेवी के आशीर्वाद से चौसठ मायावी घोड़े भी प्राप्त हुए। उसने धार पर आक्रमण कर राजा भोज के चौसठ प्रधानों को बंदी बनाया और सांभर ले आया। उसने सांभर झील को बांधा और परकोटे का निर्माण कराया। अतः उससे भयभीत होकर उसके सभी शत्रुओं ने उसके सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया।

प्रबंधकोष की वंशावली के अनुसार बापलदेव का नाम वप्पयराज है। वप्पयराज को शाकंभरी देवी की कृपा से स्वर्णादि के भंडार प्राप्त हुये। उसने सत्ताईस वर्ष सं. ९११ वि. पर्यन्त शासन किया। बीजोलियाँ शिलालेख में भी उसका वप्पयराज नाम दिया गया है जबकि पृथ्वीराज विजय वाक्पतिराज के रूप में उल्लेख करता है। हम्मीरमहाकाव्य में नन्दन और हरिराज के मध्य में आया नाम वप्रराज प्रस्तुत काव्य में वप्पयराज या वाक्पति हो सकता है। वप्रराज को नयचन्द्रसूरि ने शस्त्रास्त्र निपुण, परमप्रतापी, युद्धजेता, परमदानी और शिवभक्त के रूप में प्रस्तुत किया है। उसने शाकंभरी को प्रसन्न करके रूमादेवी (?) को प्रकट किया था।[1] पृथ्वीराजविजय काव्य में उसके एकसौ अस्सी युद्धों में भाग लेने का उल्लेख है। डॉ. दशरथ शर्मा इसे अतिशयोक्ति मानते हुए भी तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कतिपय युद्धों को असंभव भी नहीं मानते। हर्ष के शिलालेख में उसके प्रान्तीय तन्त्रपाल, जिसका नाम क्षमापाल के प्रबल आक्रमण को भी वाक्पतिराज के द्वारा अपनी दक्ष घुड़सवार सेना द्वारा रोके जाकर पराजित करने की जानकारी दी गई है।[2] वाक्पति ने पुष्कर में शिव मंदिर का निर्माण भी कराया था। पुष्कर से प्राप्त एक तिथिरहित शिलालेख की लिपि के आधार पर उसे दशवीं शताब्दी ई. में विद्यमान बताया गया है।[3]

बीजोलियाँ शिलालेख में वप्पयराज के साथ विंध्यनृपतिः शब्द का प्रयोग किया गया है।[4] श्री कविराजा श्यामलदास ने इसके आधार पर वप्पयराज को विंध्य का शासक कहा है।[5] विंध्यराज के नाम का उल्लेख अन्य किसी स्रोत से उपलब्ध नहीं होता। डॉ. एच. सी. राय ने सुझाव दिया

---

१. हम्मीर महाकाव्य सर्ग प्रथम, श्लोक ७२-८१.

२. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, डॉ. दशरथ शर्मा पृ. ३२

३. —वही— पृ ३३

४. बीजोलिया शिलालेख - श्लोक १३

५. जर्नल ऑफ बंगाल एशियाटिक सोसायटी— परिशिष्ट—१ (अंग्रेजी)

था कि विंध्यराज को वाक्पति से समीकृत मान लेना चाहिए। द्विवचनात्मक प्रयोग के कारण डॉ. दशरथ शर्मा ने इसको अस्वीकार करते हुए उन्होंने उसे सिंहराज का बडा भाई होने की संभावना व्यक्त की है, जिसका उल्लेख इस शिलालेख में विंध्यनृपति के बाद हुआ है।[1] संभवतः वह अधिक समय तक शासन नहीं कर पाया।

बीजोलियाँ शिलालेख में विंध्यनृपति के उपरान्त सिंहराज और विग्रहराज के नाम हैं। डॉ. दशरथ शर्मा ने सिंहराज के अनुरूप ही विग्रहराज को भी उनका भाई होने की संभावना व्यक्त की है।[2] विग्रहराज के नाम का उल्लेख हम्मीरमहाकाव्य और पृथ्वीराजविजय काव्य में भी मिलता है। खेमकृत हम्मीरायण में यह नाम नहीं है। अतः छूट गया लगता है।

सिंहराज ने तोमरसरदार सलवण को युद्ध में मारा और उसके सहयोगियों में से कई एक को पकड़ कर कारागार में डाल दिया, अथवा पलायन के लिये बाध्य किया। सिंहराज के दादा चन्दन ने भी सलवण के पूर्वज रुदतुमर को परास्त किया था।[3] थांवला शिलालेख के अनुसार श्री विश्वेश्वरनाथ रेऊ ने सिंहराज को वाक्पतिराज का पुत्र बताया है, जबकि हर्ष के सं. १०३० के शिलालेख में उसे विग्रहराज (द्वि.) का पुत्र कहा गया है।[4] इस शिलालेख के अनुसार उसकी स्थिति संभवतः अत्यन्त कष्टप्रद रही।

विग्रहराज (द्वि.) हर्ष के शिलालेख सं. १०३० वि. के अनुसार सिंहराज का पुत्र था। उसे शाकंभरी के शासकों में सर्वाधिक शक्तिशाली शासक कहा गया है।[5] प्रबंधकोष गत वंशावली में उसका नाम नहीं है। हम्मीर महाकाव्य में उसको वप्रराज का पुत्र कहा है। यही स्थिति पृथ्वीराज महाकाव्य की भी है। एक मात्र बीजोलियां शिलालेख हर्ष के शिलालेख का समर्थन करता सा लगता है। जयानक ने पृथ्वीराजविजय महाकाव्य में विग्रहराज के हाथों मूलराज (सोलंकी) की पराजय का उल्लेख किया है। उसके अनुसार मूलराज विग्रहराज से भयभीत होकर आत्मरक्षा हेतु कन्था दुर्ग में जा छिपा था और विग्रहराज (वत्सराज) भृगुकच्छ में आशापुरा देवी के मंदिर का निर्माण कर लौट आया।

---

१. डॉ दशरथ शर्मा अर्ली चौहान डाइनेस्टीज-पृ. ३३
२. हर्ष शिलालेख गद्यभाग, अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृ. ३३
३. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ३३
४. —वही— पृष्ठ ३४
५. हर्ष शिलालेख—श्लोक स १४

(पृ. ५०-५:)[1] नयचन्द्रसूरि के अनुसार विग्रहराज ने मूलराज को युद्ध में मार डाला और गुजरात प्रदेश को जर्जर कर दिया।[2] प्रबंध चिन्तामणि के अनुसार सपादलक्ष और तिलंगसम्राट् के एक साथ दोनों ओर से आक्रमण से घबराकर मूलराज ने स्वयं को कंथा दुर्ग में सुरक्षित कर लिया था, पर जब मूलराज ने तिलग सम्राट को पराजित कर दिया तो सपादलक्ष का शासक समाचार सुनकर भाग गया[3] हम्मीर महाकाव्य के कथन में सत्य का अंशमात्र भी नहीं है। तारीख-ए-फरिश्ता के अनुसार सं. १०५० में विग्रहराज ने सुबुक्तगीन के विरुद्ध सेना भेजकर युद्ध किया था पर डॉ. दशरथ शर्मा उस वर्ष में अजमेर पर चौहानों का शासन नहीं मान कर उक्त अभियान का खंडन करते हैं।[4]

खेमकृत हम्मीरायण के अनुसार बापलदेव (वाक्पतिराज) के बाद उसका पुत्र दुलंभदेव (दुर्लभदेव) सं ९११ के सावण वदि ६ को गद्दी पर बैठा। उसने चित्तौड़ को पार करके बरड़ी और कुडीछराव को पराजित किया। वह इस युद्ध में सं. ६३२ वि. में मारा गया। बरडी या बरड़ बाड़ की सीमा से, बीजोलियां के पास, मिलता हुआ प्रदेश है, पर यह चित्तौड के पार नहीं है। अजमेर सांभर से प्रयाण करते समय चित्तौड़ जाने की आवश्यकता नहीं होती। कुडीछ का भी पता नहीं है। यह संभव है कि उसने चित्तौड़ पर आक्रमण किया हो और उसके आस पास ही कहीं उसकी मृत्यु हुई होगी।

हर्ष के शिलालेख में दुर्लभराज को विग्रहराज का आज्ञाकारी प्रिय भाई कहा है।[5] राष्ट्रकूट धवल के सं. १०५३ के शिलालेख के अनुसार उसने महेन्द्र पर आक्रमण कर विजय प्राप्त की थी। कीलहार्न ने महेन्द्र की नाडोल के महेन्द्र चौहान के रूप में पहचान की थी। डॉ. दशरथ शर्मा ने भी इसका समर्थन किया है। किनसरिया शिलालेख के अनुसार उसके आदेश दुर्लभ थे, अतः दुर्लंघ्य-मेरू के नाम से प्रसिद्ध था।[6] हम्मीर महाकाव्य में उसके नाम का उल्लेख नहीं है, जबकि प्रबन्धकोष वंशावली, बीजोलियाँ शिलालेख और पृथ्वीराजविजय महाकाव्य में उसका उल्लेख है।

---

१. पृथ्वीराज विजय पंचम सर्ग-श्लोक ५०-५३
२. हम्मीर महाकाव्य द्वितीय सर्ग-श्लोक सं ९
३. प्रबन्ध चिन्तामणि मेरूतुंग पृ १५-१६
४. अर्ली चोहान डाइनेस्टीज डा. दशरथ शर्मा पृ ३७
५. हर्ष का शिलालेख श्लोक सं. २६
६. अर्ली चोहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ३८

खेमकृत हम्मीरायण में दुर्लभदेव के बाद गदलेव का उल्लेख है, जो कार्तिक वदि प्रतिपदा सं. ६३२ में सिंहासन पर बैठा। उसके अधीन ४१ दुर्ग थे और सेना में २० हाथी और ५१,००० घुड़सवार थे। उसने गजनी के सुलतान को बंदी बनाया। युद्ध में घायल होने से उसकी मृत्यु हुई। प्रवंधकोश वंशावली में उसका गण्डू नाम दिया गया है और उसको 'महमूद सुरत्राण जेता' बताकर खेम के कथन की पुष्टि की है।[१]

पृथ्वीराजविजय में भी गजनी के सुलतान महमूद का समकालीन मानते हुए गोविन्दराज को 'वैरिघरट्ट' विरुद से विभूषित बताया है।[२] बिजोलिया शिलालेख का गुन्दु यही गण्डू या गदलेव ही है। हम्मीरमहाकाव्य में गुन्ददेव को मदमोहादि विकारों को जीतने वाला राजनीतिज्ञ प्रजावत्सल, प्रतापी शासक के रुप में प्रस्तुत किया गया है।[३]

तारीखे फिरोजशाही (I/६९) के अनुसार सोमनाथ के मन्दिर को लूटने आये गजनी के सुलतान महमूद को अजमेर के शासक की विशाल-वाहिनी के द्वारा मार्ग को अवरुद्ध कर लेने के कारण सिंध के मार्ग से होकर लौटना पड़ा। डॉ. दशरथ शर्मा के अनुसार उस समय अजमेर का अस्तित्व तक नहीं था अतः अजमेर का अर्थ यहां शाकंभरी ही लेना चाहिए।[४]

गदलेव के बाद खेम के अनुसार भुवपाल ने पोषवदी तृतीया सं. ६५० को शासन संभाला। उसने गुजरात पर आक्रमण करके उसे जीत लिया और आगे बढ़कर देवराज सोलंकी से युद्ध किया और वहीं मृत्यु को प्राप्त हो गया। प्रवंधकोष वंशावली में उसका नाम वालपदेव मिलता है और हम्मीरमहाकाव्य में वल्लभराज (२/१६)—बीजोलिया शिलालेख और पृथ्वीराज विजय महाकाव्य (५५-६०) में वाक्पति नाम दिया गया है। सुरजन चरित में भी उसका नाम वल्लभ दिया गया है। पृथ्वीराजविजय में उसके द्वारा आघाट(मेवाड़) के शासक अंबिकाप्रसाद के युद्ध में वध किये जाने की जानकारी मिलती है। सुरजनचरित में उसको मालवा के राजा भोज और चेदी के शासक को पराजित करने का श्रेय दिया गया है।[५] डॉ. दशरथ शर्मा नको विश्वस्त नहीं मानते।[६] खेम भुवपाल की रानी का नाम वाल्हादे कहता है और नयचन्द्रसूरि लीलावती। ये नाम कल्पित हैं।

---

१. प्रबंधकोष— अंतिम पृष्ठ सं १३३
२. पृथ्वीराज विजय—पंचम सर्ग श्लोक ५८
३. हम्मीर महा काव्य—द्वितीय सार्ग श्लोक १०
४. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज –पृ. ३९
५. सुर्जन चरित सार्ग १
६. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृ. ३९

भुवपाल के बाद उसका पुत्र विजहड़देव सं. ९६९ में अभिषिक्त किया गया। उसकी विजहड़दे और संकरादे नाम की दो रानियाँ थी। विजहड़देव ने गुजरात पर विजय प्राप्त की और उससे आगे आगे तक अगला अभियान जारी रखा। पर उसकी द्वितीय रानी शंकरादे ने उसको विष देकर मार डाला। प्रबंधकोशवंशावली में उसका नाम विजयराज है और हम्मीरमहाकाव्य में राम तथा बीजोलियाँ शिलालेख में और पृथ्वीराजविजय काव्य में वीर्यराम नाम दिया गया है। पृथ्वीराजविजय में उसको वाक्पतिराज का पुत्र कहा गया है[1] और बिजोलियां शिलालेख में वाक्पति का अनुज।[2] हम्मीर महाकाव्य में नयचन्द्रसूरि उसको क्षत्रियों में सिरमौर शत्रु पक्ष के लिये क्रूर शासक के रूप में प्रस्तुत करता है।[3] पृथ्वीराजविजय के अनुसार अवन्ति के राजा भोज के साथ में युद्ध करते हुए वह मारा गया।[4] सुरजनचरित के अनुसार यह युद्ध वीर्यराम के क्षेत्र में हुआ। परमारों ने संभवतः सांभर पर भी अधिकार कर लिया।[5]

विजहड़दे के बाद उसका पुत्र राजदेव सं. ९८४ में सिंहासनारूढ हुआ। उसके पास ५० दुर्ग और सेना में साठ हाथी तथा ९१,००० घुड़सवार थे। गजनी के सुल्तान पर विजय प्राप्त कर उसने ५००० घोड़े छीन लिये। बाईस वर्ष ७ मास तक राज्य करने के बाद किसी ने उसको विष देकर मार डाला। प्रबंधकोष, हम्मीरमहाकाव्य, बीजोलियाँ शिलालेख और पृथ्वीराज रासौ में उसका नाम चामुण्डराजदेव मिलता है। प्रबंधकोषवंशावली उसको 'सुरत्राण भड्कता' कह कर उपयुक्त खेमकृत हम्मीरायण के कथन की संपुष्टि कर रही है। हम्मीरमहाकाव्य में उक्त सुरत्राण का नाम 'हेजमदीन' बताया गया है, जिसे चामुण्डराज ने मृत्यु के मुख में धकेल दिया। पृथ्वीराज विजयकाव्य में जौनराज चामुण्डराज का वीर्यराम के भाई के रूप में उल्लेख करता है।[6] सूण्डा शिलाभिलेख के अनुसार उसने नाडोल के शासक अणहिल्ल चौहान की सहायता से परमारों को पराजित करके सांभर पर पुनः अधिकार करने में सफलता प्राप्त की।[7]

---

१. पृथ्वीराजविजय पंचम सर्ग श्लोक ५८
२ बीजोलियाँ शिलालेख – श्लोक सं. १३
३. हम्मीरमहाकाव्य — सर्ग २ श्लोक २१
४. पृथ्वीराजविजय—सर्ग ५, श्लोक ६६
५. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ४० पाट टिप्पण १६
६. हम्मीरमहाकाव्य २/२४
७. पृथ्वीराजविजय पंचम सर्ग श्लोक ६८

चामुण्डराज के क्रम में हम्मीरकाव्य में दुर्लभराज का और बीजोलियाँ शिलालेख में सिंहट का नामोल्लेख हुआ है। और इनके उपरान्त इनमें दु:शल कानाम आता है। प्रबंधकोषवंशावली में दुर्लभराज या सिंहट का नाम नहीं है, पर उक्त दोनों अभिलेखों में आये दु:शल नाम के समानान्तर दूसलदेव का नाम दिया है। डॉ. दशरथजी ने बीजोलियाँ शिलालेख में प्राप्त युग्म नाम 'सिंहटो दुसल:' का अर्थ दूसल जो सिंहट के नाम से भी जाना जाता है कि संभावना की ओर विद्वानों का ध्यान आर्कषित किया है पर उसके साथ ही वे सिंहट को दूसल का बड़ा भाई होने की संभावना भी व्यक्त करते हैं।[1] वे दूसल और दुर्लभराज को भी एक ही व्यक्ति मानते प्रतीत होते हैं। खेमकृत हम्मीरायण और पृथ्वीराजविजयकाव्य में सिंहट, दुर्लभराम और दूसल तीनों के ही नाम उपलब्ध नहीं हैं।

पृथ्वीराज विजय काव्य के अनुसार दुर्लभराज की मृत्यु मातंगों के साथ युद्ध में हुई थी।[2] उसने मुसलमानों के लिये मातंग शब्द का प्रयोग किया है। प्रबंधकोशवंशावली में लिखा है कि दूसल ने गूर्जराधिपति को बंदी बनाया और अजमेर लाकर उससे छाछ बिकवाई।[3] छाछ बिकवाने का उल्लेख मात्र कवि के मस्तिष्क की काल्पनिक उपज प्रतीत होती है जो उसने गूर्जराधिपति को गूर्जर मान कर की है। खेम कृत हम्मीरायण में दूसल का नाम नहीं है। उसमें कर्ण गुजारा को बन्दी बनाकर अजमेर लाने और उससे दण्ड प्राप्त कर मुक्त करने का श्रेय राजहुव (चामुण्डराज) के पुत्र वीसलदेव को दिया है। हम्मीरकाव्य के अनुसार दूसलदेव ने गुजरात के शासक कर्णदेव को युद्ध में मार डाला।[4] पर यह सभी ठीक नहीं लगता। उक्त विवरणों से दूसल और वीसलदेव के एक ही व्यक्ति होने की सम्भावना प्रतीत होती है।

वीसलदेव को खेमकृत हम्मीरायण में राजदेव (चामुण्डराज) के बाद सं. १००६ में सिंहासनारूढ होते वर्णित किया है। इसमें दुर्लभराज, सिंहट या दूसल के नामों में से किसी का उल्लेख नहीं है। वीसलदेव अपने समय का एक अत्यन्त प्रभावशाली शासक था। उसके अधिकार में ५० दुर्ग, ५३ हाथी और एक लाख अश्व कहे गये हैं। जैसाकि ऊपर बताया गया है, उसने गुजरात के कर्णगुजारा (गुर्जराधिपति) को बन्दी बनाकर दण्ड लिया और फिर मुक्त कर

---

१. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज – पृष्ठ ४०
२. – वही – पृष्ठ ४०
३. पृथ्वीराजविजय महाकाव्य—पंचम सर्ग, श्लोक ७०
४. प्रबन्धकोष – पृ. १३३ (वंशावली)
५. हम्मीरमहाकाव्य -- द्वितीय सर्ग श्लोक सं ३१

दिया था। खेम ने उसको अरिगंजण के विरुद से विभूषित किया है। हम्मीर महाकाव्य उसको सहावदीन को युद्ध में मारने का श्रेय देता है और मालवा श्रीहीन करने का[1]। सुरजनचरित काव्य भी हम्मीरायण की पुष्टि करता है। पृथ्वीराजविजय काव्य में भी कर्ण को मारने का उल्लेख है, पर इसका श्रेय वह मालवा के राजा उदयादित्य को देता है। उसने विग्रहराज (वीसलदेव) के द्वारा दिये गये सारंग नाम के घोड़े पर बैठकर यह सफलता प्राप्त की।[2] डॉ. दशरथ शर्मा इस घटना का वर्ष सं. ११५० वि निश्चित करते हैं।[3]

प्रबन्धकोष में वीसलदेव को स्त्रीलंपट कहा है। लिखा है कि उसने किसी सती साध्वी ब्राह्मण स्त्री से बलात्कार किया अतः उसके शाप से दुष्ट व्रण के कारण उसकी मृत्यु हुई। हम्मीरमहाकाव्य में उसका नाम विश्वल है, बिजोलियाँ शिलालेख में वीसल और पृथ्वीराजविजय महाकाव्य में विग्रह राज। खेम कृत हम्मीरायण में स्त्रीलंपटता का आरोप उसके पुत्र सोमदेव पर लगाया गया है, जिसका उल्लेख किसी अन्य स्रोत से उपलब्ध नहीं होता।[4]

वीसलदेव के बाद उसका पुत्र सोमदेव वैशाख सुदी १० सं. १०२१ को सिंहासनारूढ हुआ। वह प्राय: खंडार दुर्ग में ही रहता था। खेम के अनुसार वह स्त्रीलंपट था। ब्राह्मणी के साथ अनाचार के कारण ब्राह्मणी ने उसको शाप दिया। उसीसे उसकी मृत्यु हुई। किसी भी अन्य अभिलेख में उसके नाम का उल्लेख न होने का यह कारण हो सकता है। यह सम्भव है कि उसका दोष वीसलदेव के सिर मंढ दिया होगा।

खेम ने हम्मीरायण में सोमदेव के बाद उसके पुत्र राजदेव को अभिषिक्त होना बताया है। लिखा है कि उसने अपने साठ हाथियों और एक लाख दस हजार घुड़सवार की सहायता से घग्घर नदी पार करके साहबदीन पर युद्ध में विजय प्राप्त की। इस विजय में तीन हजार घोड़े और दस हाथी जीत कर अपनी राजधानी लौटा। इस युद्ध में उसको असंख्य घाव लगे। उसने अनेक

---

१. हम्मीरमहाकाव्य—द्वितीय सर्ग श्लोक सं ३७

२. पृथ्वीराजविजय सर्ग ५, श्लोक ७७-७८

३. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ४२

४. पृथ्वीराज रासो में और बगड़ावत गाथा के कतिपय संस्करणों में भी वीसलदेव पर स्त्रीलंपटता का आरोप लगा हुआ मिलता है। देवचरित काव्य में पृथ्वीराज तृतीय के भाई हरिराज पर ऐसा ही आरोप है जिसको देख लेने मात्र से ही लीला सेवड़ी को दृष्टिगर्भ रह गया था। बगड़ावत गूर्जर उसी की सन्तान कहे गये हैं।

उपचार करवाये पर कोई लाभ नहीं हुआ। ५० वर्ष और तीस मास तक राज्य करने के उपरान्त सं. १०८६ वि. में उसकी मृत्यु हो गई। प्रबन्धकोश में राजदेव के समानान्तर वृहत् पृथ्वीराज का नाम है और उसको 'बगुलीशाह सुरत्राण भुजमर्दी' की संज्ञा देकर उसके द्वारा किसी बगुलीशाह नाम के सुल्तान को पराजित करने की सूचना दी है। हम्मीरमहाकाव्य, बीजोलियाँ शिलालेख और पृथ्वीराजविजय काव्य में भी पृथ्वीराज के नाम का उल्लेख है। तबकाते नासिरी के अनुसार मसूद (द्वितीय) इमाद्उद्दोला (१०७९-१११५) के एक सेनापति ने भारत पर आक्रमण किया था। डॉ. दशरथ शर्मा की मान्यता है कि बगुलीशाह वही अमीर हो सकता है।[1] जीणमाता मन्दिर (शेखावाटी के सभामंडप के सं ११६२ के लेख में तथा हम्मीरमहाकाव्य में उसको अपने समय का स्वतन्त्र और शक्तिशाली शासक बताया गया है।[2] पृथ्वीराजविजय के अनुसार उसने ब्राह्मणों की सम्पत्ति का हरण करने वाले ७०० चालुक्यों को मौत के घाट उतार दिया और सोमनाथ मन्दिर के मार्ग पर स्थान-स्थान पर लंगर खोले।[3] विजयसिंहसूरि कृत उपदेशमाला वृत्ति (११९१ वि.) और चन्द्रसूरिप्रणीत सुव्रतचरित्र (सं. ११९३) के अनुसार उसने रणथम्भोर के जैन मन्दिर पर स्वर्ण कलश चढवाये।[4]

खेम के अनुसार वृहत् पृथ्वीराज की मृत्यु के उपरांत उसके पुत्र अनलदेव ने चैत्रवदि १० संवत् १०८६ को सत्ता संभाली। उसके अधीन ८० दुर्ग, ६० मदमस्त हाथी और एक लाख उन्नीस हजार पांच सौ घोड़े थे। उनतीस वर्ष और तीन मास तक राज करने के उपरांत सिंह के शिकार में घायल हो जाने से उसकी मृत्यु हो गई।

प्रबन्धकोषवंशावली और हम्मीरमहाकाव्य में उसका नाम आल्हणदेव, प्रभावकचरित काव्य में आल्हादन, पृथ्वीराजविजयकाव्य में सल्हण और बीजोलियाँ शिलालेख में जयदेव या अजयदेव नाम मिलते हैं। डॉ शर्मा के अनुसार उसका नाम सल्हण ही रहा होगा। प्रबन्धकोषवंशावली में उसको 'सहाबुद्दीन सुरत्राणजेता कहा है। पृथ्वीराजविजय काव्य में उसके द्वारा गजनी के मातंगों (मुस्लिम आक्रमणकारियों) पर विजय का उल्लेख है।[5] तबकाते नासिरी और तारीख-ए-फरिश्ता के अनुसार गजनी के सुल्तान बहरा-

---

१. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ४३
२. - वही —
३. पृथ्वीराजविजय महाकाव्य सर्ग ५. श्लोक ८१-८२
४. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ४३
५. पृथ्वीराजविजयमहाकाव्य पंचमसर्ग, श्लोक सं ११३ पृ. १२८

मशाह के द्वारा मुहम्मद इब्राहीम को हिन्दुस्तान में अपने विजित प्रदेशों का प्रशासक बनाकर भेजा था। उसने अजयराज के अधीन नागौर दुर्ग पर अधिकार कर लिया। मुहम्मद बहलीम की मृत्यु हो जाने पर सालारहुसैन को उस पद पर नियुक्त किया था। डा. दशरथ शर्मा के अनुसार अजयराज ने इसी मातंग सालारहुसैन को पराजित किया होगा।[1]

बीजोलियाँ शिलालेख में जयदेव (अजयदेव) के द्वारा श्रीमार्ग दुर्ग पर आक्रमण कर चच्चिल, सिंधुल, यशोराजादि वीरों का वध करके प्रधान दण्डनायक सोल्लण को बंदी बनाने का उल्लेख है।[2] पृथ्वीराजविजय में सोल्लण को मालवा का शासक कहा गया है[3] पर डॉ. शर्मा चौहानप्रशस्ति के अनुसार मालवा का शासक नरवर्मा को और सोल्लण को मालवा का दण्डनायक बताते हैं।[4]

डॉ. दशरथ शर्मा ने संभावना व्यक्त की है कि अजमेर (अजयमेरु की स्थापना इसी अजयराजन् ने सं० ११७० में की होगी। उनकी इस संभावना का स्रोत उसी वर्ष जिनरक्षित द्वारा धार में की गई पाल्हपदावली की प्रतिलिपि है[5]। पर प्रस्तुत काव्य के प्रणोता खेम ने अजमेर नगर को बसाने का श्रेय नरदेव के पुत्र अजयदेव को दिया है, जिसका शासन काल उसने सं० ६६९ से ६९८ बताया है। कतिपय मुस्लिम इतिहासकारों ने भी प्रस्तुत अजयराज से पूर्व मुसलमान आक्रमणकारियों द्वारा अजमेर पर किये गये आक्रमणों की सूचना दी है। अतः अभी यह अनुसंधान का विषय है। चौहानप्रशस्ति के अनुसार अजयराज ने अपने पुत्र अर्णोराज को शासन संभलाकर पुष्कर के पास के वन में वानप्रस्थ जीवन बिताना प्रारंभ कर दिया। डॉ. दशरथ शर्मा ने इस घटना का समय सं० ११९० से पूर्व बताया है।[6]

अनलदेव के पाट पर उसका पुत्र मालगदेव (महानलदेव) ? सं ११११ की ज्येष्ठ वद ६ को बैठा। उसने गद्दी पर बैठने के साथ घोड़ों को सुसज्जित किया। उसके अधीन ८० दुर्ग, ५० हाथो और ९१,००० घुड़सवार सैनिक थे। उसने अजमेर के तुर्कों से युद्ध किया और उन पर विजय

---

१. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ४६
२. बीजोलियाँ शिलालेख, श्लोक सं. १५
३. पृथ्वीराजविजय पंचम सर्ग-श्लोक ८४-८५
४. अर्ली चोहान डाइनेस्टीज पृ ४४ पा-टि ४५
५. वही पृ. ४४
६. वही पृ. ४७

प्राप्त कर दो हाथी ५० घोड़े छीन लिये और बाईस वर्ष और तीन मास तक राज्य करके घावों से ग्रस्त होकर प्राण त्यागे। प्रबंधकोषवंशावली में उसका नाम अनलदेव, हम्मीरमहाकाव्य में आनल्लदेव तथा बीजोलियाँ शिलालेख और पृथ्वीराजविजय में अर्णोराज मिलता है। पृथ्वीराज रासो में भी अर्णोराज नाम दिया गया है, अतः खेम द्वारा दिये गये 'मालग' देव नाम पर शंका होती है। यह संभव है कि आनल को ही भ्रमवश या प्रमादवश प्रतिलिपि कर्ता मालग लिख गया हो।

खेम ने उसके द्वारा तुर्कों के साथ युद्ध करने की सूचना दी है। अजमेर संग्रहालय में उपलब्ध अर्णोराज की खण्डप्रशस्ति से भी इस तथ्य की संपुष्टि होती है, जिसमें उसके द्वारा अजमेर में किये गये तुर्कों के के कत्लेआम की जानकारी दी गयी है।[1] गजनी के तुर्क और लाहोर के यामिनी अजयराज के समय नागोर पर अधिकार करके अजमेर में चौहानों से संघर्ष करते आ रहे थे। उन्होंने ही संभवतः अर्णोराज (मालगदेव) के द्वारा राज्यभार संभालते ही अजमेर पर आक्रमण किया होगा। खेम-कृत हम्मीरायण में साखति कर (घोड़े सजाकर) राजभार संभालने और तुर्कों से युद्ध कर विजय पाने की सूचना इसीसे संबंधित हो सकती है। युद्ध का यह स्थान संभवतः वह भूमि रही है, जहाँ आज कल आना सागर है। अर्णोराज ने मुसलमानों के रक्त से भ्रष्ट हुई भूमि के प्रक्षालन हेतु चन्द्रानदी को बांधकर इस तालाब का निर्माण करवाया था।[2]

अर्णोराज की उक्त प्रशस्ति में उसके द्वारा अजमेर में तुर्कों के नरसंहार के अतिरिक्त मालवे के नरवर्मन् को परास्त करने, सिंधु-और सरस्वती पर्यन्त सैनिक अभियान, हरितानक देश पर आक्रमण की जानकारी भी दी गई है।[3] बीजोलियाँ शिलाभिलेख, हेमचन्द्रकृत द्व्याश्रय काव्य से भी उक्त तथ्यों की पुष्टि होती है। उसके अन्य विजयाभियानों पर डा. दशरथ शर्मा ने अपनी पुस्तक अर्ली चौहान डाइनेस्टीज में विस्तृत व्याख्यात्मक विवरण दिया है।[4]

मालगदेव (आनलदेव) के बार उसके पुत्र जगदेव ने गद्दी संभाली। वह पाँच मास तक ही राज कर पाया था कि उसके किसी मित्र ने उसको

---

१. वही पृ. ४७
२. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज— पृ. ४९
३. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—पृ. ४९
४. विस्तृत जानकारी हेतु डा. दशरथ शर्मा द्वारा लिखी-अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पुस्तक देखने योग्य है।

विष देकर मार डाला । हम्मीरकाव्य, प्रभावकचरित्र और सुरजन चरित के अनुसार भी वह अधिक समय तक राज नहीं कर पाया । बीजोलियाँ शिलालेख में तो उसका नाम तक नहीं दिया गया है । पृथ्वीराज विजय के अनुसार उसने अपने पिता अर्णोराज की हत्या कर दी थी, अत: अपने पीछे अपनी बदनामी छोड़ता हुआ वह समाप्त हो गया । वह शाकंभरी के चौहान शासकों में एक मात्र ऐसा शासक था, जिसे स्वर्ग नहीं मिला ।[1] डा. दशरथ शर्मा की मान्यता है कि उसके भाई विग्रहराज ने ही उसका वध किया होगा ।[2]

जगदेव की मृत्यु के बाद सावण वद ११ सं० ११३८ वि. को उसके पुत्र वीसलदेव ने सत्ता संभाली । उसके अधिकार में ४० दुर्ग थे और सेना में ६५ हाथी, अस्सी हजार घुड़सवार सैनिक । इनके वलबूते पर उसने अपने जीवन में अनेक युद्धों में विजय प्राप्त की । अंत में गोपाल नदी को पार करके तुर्कों के साथ युद्ध क·ते हुए वीरगति पाई । प्रबंधकोषवंशावली में उसको 'तुरुष्कजित' कहा है । यह हम्मीरायण की संपुष्टि करता है । गोपाल नदी संभवत: गोमल है ।

हम्मीरमहाकाव्य में उसका नाम विश्वलदेव, बीजोलियां शिलालेख तथा पृथ्वीराजविजय काव्य में विग्रहराज नाम मिलता है । उसके राज्यकाल सं० १२१० वि. से १२२० के अनेक शिलालेख मिलते हैं। वह सं० १२०८ के लगभग सिंहासनारूढ हुआ और सं० १२२३-२४ तक शासन करता रहा ।[3]

अपने पिता का प्रतिशोध लेने के लिये उसने कुमारपाल चालुक्य के साम्राज्य पर आक्रमण कर चित्तौड़ के प्रशासक सज्जन को मारा । नाडोल के कुंतपाल राजा को युद्ध में पराजित किया । पंजाब और राजस्थान में शेखावाटी के उत्तरी भाग के भादानक शासकों पर जय प्राप्त की, दिल्ली और झाँसी के तोमर शासकों को पराजित कर उन पर अधिकार किया ।

---

१. पृथ्वीराज विजय सर्ग ७ श्लोक १३, ७४ ।

२. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृष्ठ ६२

३. विग्रहराज चतुर्थ जिसका नाम बीसलदेव भी मिलता है—उसके सं० १२१० से १२२० वि. तक के ग्यारह शिलालेख मिले है । सबसे पहला शिलालेख अजयमेरु के सरस्वती मंदिर का है जो राजकीय संग्रहालय, अजमेर में सुरक्षित है । अंतिम शिलालेख शिवालीक स्तंभ) में उसके द्वारा पंजाब को छोड़कर, समस्त उत्तरी भारत को विग्रहराज द्वारा गजनी के तुर्कों के आधिपत्य से स्वतंत्र कराने की सूचना है ।

संभवत: गजनी के अमीर खुशरोशाह को पराजित कर पलायन को बाध्य हुआ। पंजाब के अतिरिक्त समस्त उत्तरी भारत को मुसलमानों के शासन से मुक्ति दिलाई।[1] वह संस्कृत का विद्वान्, शिल्पशास्त्र का ज्ञाता और कुशल राजनीतिज्ञ था। अजमेर में सरस्वती मन्दिर और अनेक दुर्ग और ताल उसकी इस दक्षता के प्रमाण हैं।

बीसलदेव की मृत्यु के बाद उसका पुत्र अमरगांगेय सावण वदि २ संवत् ११५७ को सिंहासनारुढ हुआ। उसके अधिकार में चौरासी दुर्ग थे, और सेना में सत्तर हाथी और पन्द्रह हजार घुड़सवार सैनिक थे। उसकी राजधानी जुगुनीपुर (दिल्ली) थी। उसने सुल्तान सहाबुद्दीन से युद्ध किया। छत्तीस वर्ष छ: माह तक राज कर वह रूग्ण होकर मरा।

प्रबंधकोषवंशावली में उसका नाम अपरगांगेय, हम्मीरमहाकाव्य में श्री गंगदेव नाम दिया गया है। खेम ने उसके अधीन चौरासी दुर्ग और सेना में ७० हाथी और एक लाख पन्द्रह हजार घुडसवारों का उल्लेख किया है।

हम्मीर महाकाव्य में वीसलदेव और अपरगांगेय के बीच किसी जयपाल चौहान का नाम और दिया है, और शत्रुओं पर उसके आतंक का उल्लेख किया है।[2] पृथ्वीराजविजय के अनुसार वह कुंवारा ही मर गया। संभवत: उसके सौतेले भाई पृथ्वीराज ने उसको मार डाला।[3] पृथ्वीराज (द्वि.) के सं. १२२५ ज्येष्ठ शुक्ला १३ के शिलालेख में उसके द्वारा शाकंभरी के युद्ध में वहां के शासक को पराजित करने का उल्लेख है। डॉ. दशरथ शर्मा ने इससे यह तात्पर्य निकाला है कि पृथ्वीराज ने अपरगांगेय को पराजित करके मार डाला क्योंकि वह अर्णोराज के ज्येष्ठ पुत्र का पुत्र होने के नाते, सिंहासन का अपहर्ता माना जाता था। खेम ने अमरगांगेय की राजधानी दिल्ली बताई है। अत: अजमेर या सांभर में स्थित किसी अन्य प्रशासक को पृथ्वीराजविजय ने मारा होगा।

अमरगांगेय की मृत्यु के उपरान्त खेम भाट ने उसके पुत्र गजदेव को सावण वदि १४ सं. ११९३ को अभिषिक्त होना कहा है। उसने १५ वर्ष और ६ मास तक राज्य किया। घघ्घर नदी को पार कर सुल्तान शमसुदीन से युद्ध करते समय वह युद्ध क्षेत्र में ही मारा गया। गजदेव के नाम का उल्लेख हमें किसी अन्य स्रोत से उपलब्ध नहीं होता है। यह सम्भव है कि वह नाडोल के

---

१. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज पृ. ६२-७२
२. हम्मीर महाकाव्य—द्वितीय सर्ग श्लोक ६०-६२
३. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज – पृ. ७३ पा.टि. ५१

शासक आल्हण का पुत्र और केल्हण का छोटा भाई रहा हो। रिश्ते से वह पृथ्वीभट्ट का काका होता था। पर वह तो अजमेर या सांभर के राजाओं के क्रम में नहीं आता।

इतिहासकार पृथ्वीभट्ट को जगदेव का पुत्र कहते हैं, जिसको अपने पिता का हत्यारा होने के कारण उसके किसी मित्र ने या विग्रहराज (वीसलदेव) ने मार डाला था। यह सम्भव है कि उक्त जगदेव अमरगांगेय का पुत्र न होकर उक्त गजदेव का पुत्र रहा हो। ऐसी स्थिति में पृथ्वीभट्ट भी जगदेव का पुत्र न होकर गजदेव का पुत्र रहा हो। गजदेव के अत्यल्प सैन्य बल को देखते हुए भी प्रतीत होता है कि वह एक सामान्य सामंत मात्र रहा होगा।

गजदेव के उपरान्त खेम के अनुसार उसका पुत्र प्रिथीदेव अभिषिक्त हुआ। डॉ. दशरथ शर्मा उसको जगदेव का पुत्र कहते हैं। ऐसा संभवत उन्होंने बीजोलियां शिलालेख को आधार मान कर कहा है। इस शिलालेख में पृथ्वीराज को विग्रहराज के बड़े भाई का (नाम न देते हुए) बेटा बताया है। खेम प्रिथीदेव के विषय में मात्र इतनी ही सूचना देता है कि उसके पास पचास अच्छे दुर्ग थे और सेना में ४० हाथी और ५३ हजार घोड़े थे। पंद्रह वर्ष राज्य कर वह बीमारी से मरा। प्रबंधकोषवंशाअली में उसका नाम पान्थड़-देव या पान्थदेव और बीजोलियां शिलालेख में और पृथ्वीराजविजयकाव्य में पृथ्वीराज नाम मिलता है। उसके हाँसी, मेनाल, और घोड़ से सं. १२२४ से १२२६ के चार शिलालेख मिलते हैं।[1] घोड़ के शिलालेख से शाकंभरी के शासक को पराजित करने की जानकारी मिलती है।[2] हाँसी शिलालेख के अनुसार उसने वस्तुपाल से मन:सिद्धकारी हाथी प्राप्त किया। उसने कालका के समीप पंचपुर के शासक को पराजित किया। मुसलमानों के सतत आक्रमणों को रोकने के लिये उसने अपने काका किल्हण (नाडोल के शासक) को हाँसी के दुर्ग को सुदृढ़ कर वहां का प्रशासक नियुक्त किया। पंजाब के सीमान्त पर उसके अधीन और भी दुर्ग थे। उसकी मृत्यु वि. सं. १२२६ के उत्तरार्द्ध में हुई।[3]

उसका कोई पुत्र नहीं होने से मंत्रियों ने उसके पितृव्य सोमेश्वर को जो अर्णोराज का एक मात्र जीवित पुत्र था—को गुजरात से बुलाकर सिंहासन पर बैठाया।[4] उसका अंतिम शिलालेख उसके राज्यकाल के पांचवें वर्ष का सं. १२२६ का मिलता है।

---

१. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज — पृ. ७३
२. उदयपुर राज्य का इतिहास प्रथम भाग श्री गौ ही. ओझा, — पृ.५७-६०-६१
३. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज — पृष्ठ ७४-७५
४. पृथ्वीराज विजय — अष्टमसर्ग — श्लोक ५७

खेम ने प्रिथीदेब (पृथ्वीभट्ट) के वाद 'देवराज को भादवा वदि १० सं. १२२३ का अभिषिक्त होना बताया है और उसके अधीन ८४ दुर्ग तथा उसकी सेना में एक सौ पैंतालीस हाथी और एक लाख पैंतालीस हजार घोड़े होने का उल्लेख किया है। वह लिखता है कि उसने अनेक युद्धों में विजय प्राप्त की और घघ्घर नदी के पार साहबदीन से युद्ध करते हुए मारा गया। उसने १६ वर्ष और आठ मास तक राज्य किया।

ऐसा लगता है कि राजदेव से उसका तात्पर्य पृथ्वीराज से है। उसकी यह प्रवृत्ति प्रारंभ से देखी गई है कि जिन शासकों के नाम का अंतिमांश राज रहा है उसके पूर्वांश का प्रायः उसने लोप किया हैं। चामुंडराज, वृहत् पृथ्वीराज और और आगे भी गोविन्दराज इसके उदाहरण हैं। यहां भी उसकी इस प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। यह भी संभव है उसको इनके वास्तविक नामो का पता न हो। यहां उसने सोमेश्वर के राज्यकाल के साथ पृथ्वीराज के राज्यकाल को भी सम्मिलित कर लिया है, पर विवरण मात्र पृथ्वीराज के राज्यकाल का दिया है। प्रबंधकोष में पृथ्वीराज से पूर्व सोमेश्वरदेव का उल्लेख मिलता हैं, अतः संभावना यही है कि हम्मीरायण के आदर्श पाठ में अवश्य ही सोमेश्वर का भी नाम रहा होगा। जैसा कि पृथ्वीराज द्वितीय के विवरण के अंतिम प्रखंड में सूचित किया गया है पृथ्वीराज द्वितीय के निःसंतान होने से अर्णोराज के पुत्र सोमेश्वर को गुजरात से बुला कर अजमेर गद्दी पर अभिषिक्त किया गया था। वह सं. १२२६ वि. में अजमेर शाकंभरी का शासक बना। उसके १२३४ तक के शिलालेख मिलते हैं। पृथ्वीराजविजयकाव्य के अनुसार वह गुजरात के शासक भीमदेव के हाथों युद्ध में मारा गया।[1]

खेम ने यद्यपि पृथ्वीराज के वंश की कीर्तिगाथा कहने के उद्देश्य से हम्मीरायण की रचना की है, पर उसको पृथ्वीराज के जीवन के विषय में भी विशेष जानकारी नहीं दिखाई देती। घघ्घर के पार साहबदीन के साथ युद्ध और संघर्ष में मृत्यु की घटना को हम सं. १२४९ वि. में मुहम्मद गौरी के साथ हुई लड़ाई मान सकते हैं। सुल्तानों के नामों की अशुद्धि का दोष अकेले खेम पर ही नहीं लगा सकते, नयचन्द्रसूरि आदि कवियों से भी वैसी ही भूलें हुई हैं।

सोमेश्वर के देहावसान की कोई निश्चित तिथि तो नहीं मिलती, पर संभवतः सं. १७३४ में उसका निधन हुआ होगा, क्योंकि उस वर्ष का उसका अंतिम शिलालेख मिलता है और उसी वर्ष से पृथ्वीराज के शिलालेख मिलने लगते हैं।

---

१. पृथ्वीराज रासो—३९ वां समय-(नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण)

पृथ्वीराज का सर्वप्रथम शिलालेख सं. १२३४ वि. का बड़ला ग्राम से मिला है[1] और दूसरा १२३४ का मांडलगढ से । इनसे आभास मिलता है कि पृथ्वीराज का राज्याभिषेक १२३४ वि. में हुआ होगा । प्रबंधकोषग्रंथावली के अनुसार उसका राज्याभिषेक सं. १२३६ में हुआ था । डॉ. दशरथ ओझा की मान्यता है कि उसने अपने राज्य के प्रशासन की वल्गा सं. १२३७ के लगभग संभाली और तत्काल ही उसको अनेक युद्धों में लग जाना पड़ा । सर्वप्रथम चिन्तनीय युद्ध उसको अपने उत्तराधिकार से संबंधित लड़ना पड़ा । विग्रहराज के एक पुत्र अपरगांगेय को पृथ्वीराज द्वितीय ने मार डाला था, पर दूसरा नागराज तब तक भी जीवित था । पृथ्वीराज को अल्पवयस और अनुभवहीन समझ कर उसने पृथ्वीराज के विरुद्ध विद्रोह करके गुड़पुर पर अधिकार कर लिया[2] (पृ. वि-१०) । आइनेअकबरी में उसका नाम नागदेव और डॉ. दशरथ शर्मा के संग्रह की एक वही के आधार पर उसका नाम नागद मन कहा गया है ।[3] इनमें उसका अजमेर के शासक के रूप में उल्लेख है । पृथ्वीराज ने भारी सेना लेकर उस पर आक्रमण किया और गुड़पुर पर अधिकार कर लिया। नागार्जुन भाग गया और उसके परिवार का पृथ्वीराज के सेनापति देवभट के अधीन सैनिकों ने वध कर दिया ।[4] उसने अपने जीवन में अहीरवाटी के भादानको, नरेना, जेजाकमुक्ति, कालिंजर, महोबा, गुजरात नागोर, कन्नौज, आवू, चन्द्रावती आदि के शासकों तथा मुहम्मद गौरी आदि के साथ युद्ध किये[5] और अन्त में सं. १२४९ वि. में मुहम्मद गौरी से युद्ध में पकड़ कर मार डाला गया । उसकी मृत्यु के विषय में अनेक मत प्रचलित हैं ।

खेम के अनुसार देवराज (पृथ्वीराज) के बाद हरसहदेव वैसाख वदि प्रतिपदा सं. १२३९ वि. को सिंहासनारूढ हुआ । उसकी सेना में ४८ हजार घुडसवार सैनिक थे । उसने तेरह वर्ष आठ मास तक राज्य किया और अंत में अपनी समस्त रानियों को मारकर शत्रुओं से युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्ति की ।

हम्मीरमहाकाव्य के अनुसार पृथ्वीराज की युद्ध में मृत्यु हो जाने पर हरिराज ने उसका अंतिम कृतकर्म किया और स्वयं राज्यभार संभाल कर

---

१. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज— पृ. १०७ पर प्रकाशित
२. पृथ्वीराजविजय – सर्ग १० श्लोक स ६,७
३. १. आइने आकबरी पृ. २९८,
   २. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज-पृष्ठ ८२ पा. टि ११
४ पृथ्वीराजविजय सर्ग १२ वां, श्लोक ८-३८
५. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज —पृ. ८३

शत्रुओं से संघर्ष करता रहा।[1] वह गुर्जरनरेश द्वारा भेजी गई कामोद्दीपक नर्तकियों के चित्ताकर्षक नाट्यों के अवलोकन में लीन होकर सेवकों की जीविका देने में कृपणता करने लगा तो वे उसको छोड़ कर जाने लगे। राज्य की ऐसी दशा देखकर शकराज ने दिल्ली से हरिराज के राज्य पर आक्रमण कर दिया। इससे हरिराज की मृत्यु निकट आई जान कर उसके अन्त:पुर की रानियों और स्त्रियों ने शकों के हाथ में पड़ने से भयभीत होकर अग्निप्रवेश कर लिया।[2]

डॉ. दशरथ शर्मा ने इसका अर्थ यह लगा लिया कि हरिराज ने भी रानियों के साथ अग्निप्रवेश कर लिया जब कि काव्य में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है।[3] इसमें तो स्त्रियों के समूह के अग्निप्रवेश की सूचना है। उससे आगे वाले श्लोक में उसके स्वर्गगमन की सूचना अवश्य दी गई है, जिसका अर्थ युद्ध में मरना ही है। उन्होंने संभवत: ताजुल--मआसीर के कथन का आश्रय लेकर हम्मीरकाव्य के जौहर विषयक श्लोक में उसको आरोपित कर दिया है जब कि वे स्वयं तारीखे फिरिश्ता के आधार पर हरिराज के युद्ध में मारे जाने का उल्लेख भी करते हैं।[4] यह घटना संभवत: वैशाख कृष्णा ८ सं. १२५१ को घटी।

खेम ने हरसहदेव (हरिराज) के उपरान्त माघ शुक्ला चौथ सं. १२५१ को उसके पुत्र देवराज का पौळी दुर्ग में राज स्थापित करने का उल्लेख किया है। उसने सांभर को छोड़ दिया। धंधेर खंड के समस्त निवासियों ने उसको पूरा सहयोग दिया। प्रबधकोषवंशावली में भी उसका यही नाम मिलता है, पर वास्तविक नाम गोविन्द राज था। हम्मीर महाकाव्य में उसे पृथ्वीराज का पुत्र कहा है, जिसे उसके दादा ने निष्कासित कर दिया था और वह रणथंभोर में रहने लगा।[5] (४/२१) ताजु-ल-मआसिर के अनुसार भी वह पृथ्वीराज का पुत्र था।[6] पृथ्वीराज के वध के बाद मुसलमानों द्वारा प्रभूत धन उपहार स्वरूप लेकर गोविन्दराज को अजमेर का शासक बना दिया था। हरिराज ने उसके इस कृत्य को उचित नहीं माना अत: गोविन्दराज को युद्ध में पराजित

---

१. हम्मीरमहाकाव्य – तृतीय सर्ग-श्लोक ७४-८२
२. हम्मीरमहाकाव्य – चतुर्थ सर्ग श्लोक १७-१९
३ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—पृ ११६
४. वही पृ. ११६
५. हम्मीरमहाकाव्य—चतुर्थ सर्ग, श्लोक २४
६. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, पृष्ठ ११८, पा. टि. १,

कर उसे बाहर धकेल दिया और स्वयं अजमेर का शासक बन गया।[१] गोविन्द के पृथ्वीराज का पुत्र होने में डॉ. दशरथ शर्मा संदेह व्यक्त करते हैं, क्योंकि वे पृथ्वीराज का जन्म सं. १२२३ में हुआ मानते हैं, और १२५१ वैशाख तक उसकी आयु २७ वर्ष की थी। ऐसी स्थिति में तो वह हरिराज का पुत्र भी नहीं हो सकता।[२]

गोविन्दराज के बाद उसका (भाई) बाल्हदेव कार्तिक वदि एकादशी सं. १२६१ को सिंहासनारूढ हुआ। उसके अधीन पांच दुर्ग थे और मात्र पच्चीस हजार घोड़े। दिल्ली के तुर्कों से संघर्ष कर उसने दो हजार घोड़े छीन लिये और युद्ध करते हुए मारा गया। उसने १६ वर्ष चार मास तक शासन किया। प्रबंधकोषवंशावली के अनुसार असका नाम बाल्हणदेव बाबरिया था। संभवत: उसने भी शपने पिता के समान तुर्कों की अधीनता स्वीकार की हो। मंगलाणा के सं. १२७२ के शिलालेख में गौर और गजनी के स्वामी शम्सुद्दीन के विजयी साम्राज्य के साथ स्वयं को रणथंभोर में शासन करने वाला गढपति कहा है।[३] हम्मीर महकाव्य में उसके दो पुत्रों प्रह्लादन और वाग्भट का उल्लेख है।[४]

हम्मीरमहाकाव्य में वाल्हण की मृत्यु हो जाने पर प्रह्लादन[५] का राज्य भिषेक किया गया। वह आखेट प्रिय और परम दानी शासक था। शेर का शिकार करते समय शेर ने उसके कंधे को दबा कर घायल कर लिया। अनेक उपचार करने पर जब उसके स्वस्थ होये की संभावना नहीं दिखाई दी तो उसने अपने वीरनारायण को राजा बना दिया और वाग्भट को उसका प्रधानामात्य।[६]

खेम प्रह्लादन के नाम का कोई उल्लेख नहीं करता। वाग्भट को भी वह बाल्हणदेव का पुत्र न कह कर वीरनारायण के भाई राजदेव का पुत्र कहता है। उसके अनुसार बाल्हदेव के बाद उसका बेटा वीर-नारायण सं. १२७६ वि. की कार्तिक वदि तेरस को बला (आड़ावला रणथंभोर के निकट कोई स्थान) को राजधानी बनाकर गद्दी पर बैठा। वह बला में गूढा (गुप्त स्थान बना कर रहने लगा। उसने सुल्तान सहाबद्दीन से युद्ध किया और युद्ध

---

१. ताजु-ल-म-आसिर-द्वितीय संस्करण, पृ. २१६
२. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, पृ. ११८ पा. टि. १
३. —वही— पृष्ठ ११९
४. हम्मीरमहाकाव्य - चतुर्थ सर्ग, श्लोक सं. ३७-३८
५. वही श्लोक ४१
६. वही श्लोक ७७-७७

में मारा गया। उसके रनिवास की स्त्रियों ने जौहर किया। उसने सात वर्ष और छः महीने तक शासन किया।

जैसा कि ऊपर बताया गया है हम्मीरायण के अनुसार उसके प्रह्लादन और वाग्भट नाम के दो पुत्र थे। बाल्हण ने अपने पुत्रों को अनुशासित करके प्रह्लादन को राजा बनाया और विद्वता में पूर्ण वाग्भट को प्रधानामात्य। इस काव्य के अनुसार विवाह हेतु आमेर जाते हुए वीरनारायण पर शकराज ने आक्रमण किया। अतः वीरनारायण रणथंभोर लौट आया।[1] पीछा करते हुए भी शकराज को निराशा हाथ लगी। कुछ समय बीतने पर शकराज ने उससे मैत्री करके दिल्ली आने का निमंत्रण दिया और वीरनारायण के शत्रु वक्षःस्थल पुर के राजा विग्रह के विरुद्ध सहायता देने का वचन दिया। वाग्भट को समझाने पर भी उसकी बात न मान कर वह दिल्ली चला गया और अप्रसन्न होकर वाग्भटने मालवा की ओर प्रस्थान कर गया। शकराज ने वीर नारायण को जहर देकर मरवा डाला और रणथंभोर पर अधिकार कर लिया।[2] खेम इस सुल्तान को सहाबदीन नाम देता है। वास्तव में वह दिल्ली का सुल्तान शम्सुद्दीन अल्लमश था। उक्त घटना संवत् १२८३ वि. में घटित हुई।

खेम के अनुसार वीरनारायण के मारे जाने पर रणथंभोर की जनता ने वीरनारायण के भाई राजदेव के बेटे बाहड़देव को मालवा से लाकर उसका राज्याभिषेक किया। उसने पुनः पौली को अपनी राजधानी बना कर शासन करना प्रारम्भ किया। उसके गद्दी पर बैठने की तिथि खेम माह वदि १२ संवत् १२८२ (१२८३) दी है। उसके अधीन पौली, खंडार, मांडू, उदैगिरि, गागरोन और चाचरणी तथा अडीला दुर्ग थे। इनमें से चाचरणी और अडीला को नये सिरे से जीत कर अपने राज्य में सम्मिलित किया। थोड़े समय बाद पौली छोड़ कर आडावला (रणथंभोर) में रहने लगा। दिल्ली के सुल्तान से युद्ध करके उसने अपने पूर्वजों की भूमि सांभर तक के प्रदेश को जीत कर अपने राज्य का विस्तार किया। खेम ने उसकी सेना में पांच हाथी और पच्चीस घोड़े बताये हैं। उसने ३१ वर्ष और एक मास तक शासन किया और अंत में उदर के रोग से ग्रस्त होकर मरा। प्रबंधकोष में उसका विशेषण मालव लेता है।

हम्मीरायण में भी वीरनारायण से रुष्ट होकर वाग्भट के मालवा चले जाने के विवरण के साथ लिखा है कि शकराज के कहने पर मालवा के राजा (नाम नहीं दिया) ने वाग्भट को मारना चाहा, पर स्वयं ही वाग्भट के हाथ से मारा गया और मालवा पर वाग्भट का अधिकार हो गया।

---

१. हम्मीरकाव्य — चतुर्थ सर्ग श्लोक ८२-८३
२. —वही— श्लोक सं. ८५-१०४

दिल्ली के सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु हो जाने पर जलालुद्दीन खिलजी ने शासन संभाला। उचित अवसर देख कर वाग्भट ने रणथंभोर पर आक्रमण किया और उस पर पुनः अधिकार कर लिया और बारह वर्ष तक रणथंभोर पर राज्य किया।[1]

डॉ. दशरथ शर्मा के अनुसार वाग्भट द्वारा मारा गया मालवा का राजा देवपाल रहा होगा, जिसकी मृत्यु सं. १२९२ वि. में हुई।[2] उनके अनुसार इल्तुतमिश की मृत्यु के बाद रुक्नुद्दीन फिरोजशाह तख्त पर बैठ। तभी वाग्भट ने विशाल सेना लेकर रणथंभोर को घेर लिया। रजियामलिक ने कुतुबउद्दीन हुसैन को भेज कर तुर्क सैनिकों को किले से बाहर निकाला।[3]

सं. १३०५ वि. में नासिरुद्दीन ने जो बाद में बल्बन के नाम से सुल्तान बना, को उलुघखान के अधीन विशाल सेना लेकर रणथंभोर पर पुनः आक्रमण किया। इस युद्ध में उसका सहायक बहाउद्दीन ऐबक मारा गया। उलुघखान रणथंभोर के आसपास के गाँवों में लूटमार कर दिल्ली लौट गया। इसी प्रकार सं. १३१० में उलुघखाँ ने एक बार और रणथंभोर पर हमला किया और इस बार भी इधर उधर लूटमार कर लौटा।[4] मुस्लिम इतिहासकार उसको उस काल का सबसे महान हिन्दू राजा मानते हैं।

वाग्भट के बाद उसका पुत्र जैतसिंह संवत् १३१३ की आषाढ वदि ९ मंगलवार के दिन अभिषिक्त किया गया। उसका राज्य पद्मगढ (रणथंभोर) के चारों ओर दूर दूर तक था। उसकी पांच रानियों में से दो पटरानी के पद पर विभूषित थी। अपने १० साथी सहरिया जाति के वीरों के सहयोग से उसने जैतपुर नगर बसा कर सं. १३१४ में अपनी राजधानी स्थानान्तरित की। उसके पास मात्र पंद्रह हजार घुड़सवार सैनिक थे। उसकी उक्त पांच रानियों से उसके बारह पुत्रों का जन्म हुआ।

---

१. हम्मीर महाकाव्य—चतुर्थ सर्ग श्लोक, १०७-१२९
२. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—पृ. ११९ पा. टि ९
३. वही पृ. ११९
४. वही पृ. १२०

वह स्वयं को दिल्ली के सुल्तानों से कम नहीं समझता था । उसके अधि-में बारह दुर्ग थे । उसके साथी सहरिया[1] भील जो कुछ भी लूट कर माल लाते थे, उसमें से आधा जैतसिंह को देते थे । खेम ने उसके बारह पुत्रों के साथ इन सहरिया साथियों के भी काव्य में नाम दिये हैं । जैतसिंह को शिकार का बहुत शौक था । अपना अधिकांश समय वह शिकार में ही बिताता था । उसके सहरिया साथी रौंणा और भूंणा को आखेट के समय पद्मगढ ताल के किनारे पारस मणि प्राप्त हुई । वह उन्होंने राजा को उसका वास्तविक पात्र समझ कर दे दी और राजा जैतसिंह ने उसकी सहायता से बैशाख मास की अक्षय तृतीया गुरुवार संवत् १३११ (१३१४८१५१) को दोपहर के समय पुष्यनक्षत्र में पद्मगढ के जीर्णोद्धार के साथ रणथंभोर दुर्ग की नींव डाली गई । रौंणा और भौंणा के नाम पर दुर्ग का नाम रणथंभोर रखा गया ।

खेम ने पद्मगढ दुर्ग से संबंधित लोक प्रचलित प्राचीन आख्यान काव्य में जोड़ कर कथा को सरस बनाने का प्रयत्न किये हैं । प्रथम कथा में वह इस वन का संबंध राम कथा से जोड़कर इसको ऋषियों की तपस्थली, सीता हरण और लवकुश की जन्मस्थली के रूप में चित्रित करता है ।

द्वितीय कथा में पद्म ऋषि के द्वारा पारसपत्थर की सहायता से पद्मताल के निर्माण और उसके नवमंगल के अवसर परवृहद् यज्ञके आयोजन, पंचतीर्थों, कँवला ऋषि के आश्रम कर्दमालेश्वर, कमोलेश्वर (कृतभोलेश्वर) के उल्लेख के साथ भैंरूसैन राजा की कथा दी है । भैंरूसेन[2] की कथा के माध्यम से पद्मगढ की प्राचीनता और उस पर हुए मुस्लिम पीरों के आक्रमण की किसी ऐतिहासिक घटना की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है ।

---

१. सेरिया या सहरिया जाति को कनल टाड ने भीलों के विशाल परिवार में परि-गणित करते हुए राजपूतों की छत्तीस जातियों में से एक सरी-ग्रस्य या सरवैया राजपूत माना है । ये लोग मालवा और हाडोतों के पहाड़ों से चन्देरी और नटवर से गोहद तक तथा बुंदेलखंड की पहाड़ियों में निवास करते हैं । (पश्चिमी भारत की यात्रा—पं गो. ना. बहुरा) राजस्थान के हाडौती मंडल के बारां जिले की किशनगंज और शाहबाद जिले तथा ग्वालियर संभाग के शिवपुरी, गुना मुरैना और दतिया जिलों में इनकी संख्या बहुत है । सहरिया शब्द की व्युत्पत्ति फारसी शब्द सहर से भी की जाती है, जिसका अर्थ जंगल है । इस जाति के पुरानी तिथि के शिलालेख भी मिलते हैं ।

२. भैरूंसेन की कथा के ऐतिह्य पर देखे ग्रंथ के अंत में दिया परिशिष्ट.

खेम ने रणथंभोर दुर्ग और नगर की स्थापना से संबंधित कुछ ऐसे तथ्यों की जानकारी दी है जो राजस्थान के राजपूत रजवाडों में प्रारम्भ से प्रचलित है। उसके अनुसार जैत्रसिंह ने एक बहुत बड़े यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञ के अवसर परउसने दूर दूर से विद्वान् पंडितों, ज्योतिषियों, कवियों और दार्शनिकों को आमंत्रित कर दुर्ग के निर्माण हेतु नींव रखने का मुहूर्त निकलवाया। उसने दुर्ग के निर्माण की नींव के अवसर पर नांगल (नवमंगलोत्सव) का आयोजन किया। उस अवसर चारणों भाटों और अनेक राजाओं और राजपूत वीरों को रणथंभोर में आकर बसने का निमंत्रण दिया। रणथंभोर में आकर वसने वाले सामंतों को करमुक्तभूमि देने और साथ ही मासिक वेतन देने का आश्वासन दिया। उसे खीच देना कहा गया है। उसने इसी तरह दूर दूर से आकर खेती करने वाले किसानों से कर (हांसल) नहीं लेने का आश्वासन दिया।

दुर्ग के प्राचीन इतिहास की जानकारी प्राप्त करके उसने शिलावटों को दुर्गनिर्माण का काम सौंपा। खोह (घाटी) को बंधवा कर शिवघाटी में शिव पोल और सूरज घाटी में सूरजपोल नाम के द्वार बनवाये। भैंरूसेन राजा के द्वारा बनवाये गये द्वार का नाम भैरू पोल रखा और एक और नये दरवाजे का निर्माण करवा कर उसका नाम जैतपोल रखा। दुर्ग में उसने दो तालाबों का भी निर्माण करवाया।

उसने पत्थरों को भलीभाँति तरशवाकर अपने निवास हेतु महलों का भी निर्माण करवाया। तराशे गये पत्थरों को जोड़ने के लिये लोहे की पाऊ (मेखों) को काम में लिया गया। उसने स्थान-स्थान पर मन्दिरों और मंडपों का भी निर्माण करवाया। जैतपोल की नींव डालते समय आधार कमजोर होने के कारण निर्माण सुचारुरूप से नहीं हो पाता था अत: रींणा की सम्मति के अनुसार नींव को गहरा खुदवा कर निर्माण कार्य चूना और सीसा के द्वारा करवाया गया। इस प्रमुख द्वार के निर्माण के लिये रींणा ने अपना नाम अमर करने के लिए अपने शिर की बलि चढाई। राव ने उसके पुत्रों को प्रभूत धन और सम्मान दिया। उसने तालाबों और नौलखा बाग की योजना बना कर उनके निर्माण का काम अपने वित्तमंत्री जसपाल गंगेलवाल को सौंपा। इनके अतिरिक्त भी अनेक बाग, बगीचों, कुएं-बावड़ियों और छोटे तालाबों का निर्माण भी करवाया। यहां रणथंभोर में आकर बसने वाले विभिन्न व्यवसायों में लगे लोगों की जातियों की लंबी सूची दी है।

खेम ने जैतसिंह के बारह पुत्रों का उल्लेख किया है, जिनके नाम क्रमशः (१) अहलादसिंह, (२) भारथसिह, (३) भींवजी, (४) वसुदेव (५) बलिदेव (६) वीरम, (७) बैरिसाल, (८) विजैपाल (९) कुम्भराज (१०) बील्हण (११) हम्मीर (१२) बच्छराज थे। इन सभी के नाम से उनके द्वारा बसाये

गये गांवों नामों की भी खेम भाट ने सूची दी है। ये गांव हैं—(१) आल्हणपुर, (२) भदलाव, (३) भीरहर, (भींवहर), (४) बाबई, (५) वलिण, (६) बलौंड़णी (७) बरवाड़ा (८) बिचपड़ी (९) कुंभलमेर (१०) बौंळीगढ (११) भूरी पहाड़ी। बच्छराज अपने पिता जैतसिंह के पास ही रहता था।

हम्मीरमहाकाव्य के अनुसार जैत्रसिंह के तीन पुत्र थे—सुरत्राण, हम्मीर और वीरम। हम्मीर का जन्म हीरांदे रानी से हुआ था। (४/१४२, १४८)

जैतसिंह के उक्त पुत्रों में हमीर अधिक चतुर, नीतिज्ञ, पितृभक्त और शूरवीर कुमार था। खेम ने उसके चातुर्य का एक उदाहरण दिया है। कृषक रणथंभोर में आकर खेती करने लगे, तब वहां हिरणों का बाहुल्य हो गया, और वे फसलों को चौपट करने लगे। किसानों ने राजा के पास जाकर अपना दुखड़ा सुनाया। जैतसिंह आखेट प्रिय व्यक्ति था—उसने अनेक हिरणों को मारा भी पर उन हिरणों में त्रिशृंग (तिसींगा) हिरण भी था, जो हिरणों की डार (टोली) का नायक था। उसे जैतसिंह नहीं मार पाया। उसने अपने वड़े बेटे को मारने की आज्ञा दी और उसको जिन्दा पकड़ कर ले आया—पर रास्ते में ही वह मर गया। अहलादसिंह ने बेगारियों को जैतसिंह के पास ले जाने का आदेश दिया और स्वयं अपने महल में चला गया। बेगारियों से हम्मीर ने हिरण ले लिया और राजा को भेंट कर स्वयं ने हिरण को मारने का श्रेय ले लिया और राजा का स्नेह अर्जित कर लिया।

जैतसिंह ने अपने पुत्र हम्मीर को चतुर और कूटनीति सम्पन्न जान कर अपने प्रबल शत्रुओं के संहार का काम उसको सौंप दिया।

जैतसिंह के सबसे प्रबल शत्रुओं में प्रमुख स्वयं उसका साला-यादव राजा था, जो बार बार उसके प्रदेश में लूटमार करता रहता था। जैतसिंह ने सभी उपाय कर लिये पर वह उसको परास्त नहीं कर सका। हम्मीर ने स्वयं को अपने पिता का कोपभाजन पुत्र बता कर अपने मामा का स्नेह प्राप्त कर लिया और अवसर पाकर उसको उसके सभी सहयोगी यादवों सहित प्रीति-भोज का निमंत्रण देकर चतुराई से शराब में विष घोल कर पिलाया और मौत के घाट उतार दिया।

जैतसिंह का दूसरा प्रबल शत्रु स्वयं उसका प्रधान और वित्तमंत्री जसपाल गंगेलवाल था, जिसने अपने पद का दुरुपयोग करते हुए अपार धन-संग्रह कर लिया था और शस्त्रधारी योद्धाओं की एक छोटी सैन्य टुकड़ी भी अपने आवास पर नियुक्त कर अपनी शक्ति बढा ली थी। वह जैतसिंह की भी उपेक्षा करने लगा। हम्मीर ने उससे भी कूटनीतिक मैत्री स्थापित कर ली और उपयुक्त अवसर देखकर उसको मार डाला। उसकी अनिंद्य सुन्दरी पुत्री से

विवाह कर लिया और दो पुत्रों को अपनी सेवा में नियुक्त कर लिया। नयचन्द्रसूरि के अनुसार जैतसिंह ने हम्मीर के साथ राजकन्याओं से विवाह कराये थे।

हम्मीर की सेवाओं से प्रसन्न होकर जैतसिंह ने उसको अपने कामेती (प्रधान) का पद दे दिया। उसके सभी भाईयों की सुख सुविधा का राजा ने अच्छा प्रबंध कर रखा था अतः वे अपने गांवों में ही रहते थे—दुर्ग में आने की उन्होंने कभी आवश्यकता नहीं समझी।

अत्यधिक वृद्ध हो जाने पर अपनी अन्तिम अवस्था समीप जान कर जैतसिंह ने हम्मीर को फाल्गुन वदि २ सं. १३३१वि. गुरुवार को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर राजतिलक कर दिया और रौंणा, भौंणा से मिली पारसमणि भी उसको सौंप दी। हम्मीरमहाकाव्य के अनुसार जैत्रसिंह ने सं. १३३९ की माघ शुक्ला पूर्णिमा को शुभलग्न वृश्चिक में हम्मीर का अभिषेक किया। अभिषेक की तिथि में अन्तर होते हुए भी नयचन्द्र ने जैत्रसिंह के द्वारा अपने जीतेजी हम्मीर के अभिषेक के वर्णन से खेम के वर्णन का समर्थन किया है। प्रबंधकोषवंशावली में हम्मीर के राज्याभिषेक की तिथि सं. १३४२ वि. दी है। इन दोनों तिथियों के बीच की तीन वर्ष की अवधि के अन्तर का समाधान डॉ. दशरथ शर्मा ने सं. १३४२ में जैत्रसिंह की भी आश्रमपत्तन (जम्बुमार्गाश्रम-केशोरायपाटन) की यात्रा के समय पल्ली ग्राम में हुई मृत्यु से जोड़ा है। उनका मानना है कि राज्याभिषेक हो जाने पर भी सम्भवतः हम्मीर ने स्वयं को जैत्रसिंह के जीवित रहने तक राजा घोषित नहीं किया।[1]

खेम ने हम्मीरायण में जैत्रसिंह की किसी और उपलब्धि का उल्लेख नहीं किया है। पर बलवण के शिलालेख (सं. १३४५ वि.) में जैत्रसिंह के द्वारा माण्डू के राजा जयसिंह को प्रतप्त करने, कूर्मप्रदेश (आमेर) के राजा और कर्करालगिरि के पाल नामान्तक राजा को युद्ध में मारने का उल्लेख किया है। साथ ही मालवा के राजा के सैकड़ों वीर योद्धाओं को झंपायथा के घाटे में पराजित कर बन्दी बनाने और रणथंभोर में लाकर दास बनाने की जानकारी दी है।[2]

उक्त शिलालेख में उल्लिखित मांडू का राजा जयसिंह, महाराजकुमार शाखा के उदयवर्मा के अनुज देवपाल का पुत्र था। उसकी मृत्यु सं. १३१४ वि. में हुई, जिस वर्ष जैत्रसिंह अभिषिक्त हुआ। इससे यही अर्थ निकलता है

१. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज—पृ. १२२
२. —वही— पृ. १२१

कि वाग्भट के समय से ही रणथंभोर पर हो रहे परमारों के आक्रमण में जैत्र-सिंह ने राज संभालते ही सं. १३१४ में उसका वध किया होगा।[1]

झंपायथा के घाटे में मालवा के वीर योद्धाओं को बंदी बनाने की घटना का सम्बन्ध उक्त जयसिंह के साथ हुए युद्ध से प्रतीत नहीं होता। यदि उस घटना से संबद्ध होता तो इन दोनों के मध्य कूर्मराज और कर्कराल के राजाओं के वध के प्रसंग बीच में नहीं दिये जाते। यह सम्भव है कि ये वीर उक्त जय-सिंह के छोटे जयवर्मा (द्वितीय) अथवा अर्जुनदेव के रहे हो। डॉ. दशरथशर्मा ने उपर्युक्त जयसिंह से तात्पर्य जयवर्मा (द्वितीय) से ही लिया है, जिसका सं. १३२६ वि. का शिलाभिलेख मिला है। झंपाइथा की विजय की घटना को वे कुछ वर्ष बाद हुई मानते हैं।[2]

कूर्मप्रदेश का राजा उनकी सम्मति में आम्रपुरी (आमेर) के उस कछ-वाहा राजा का भाई रहा होगा, जिसकी पुत्री से जैत्रसिंह के चचेरे भाई वीर-नारायण का विवाह होने वाला था। यहाँ डॉ. दशरथ के द्वारा वीरनारायण को जैत्रसिंह का चचेरा भाई कहना विचारणीय है।[3]

कर्कालगिरि का राजा सम्भवतः स्वयं जैत्रसिंह का साला ही रहा होगा, जिसका कुमार हम्मीर ने अपने पिता जैतसिंह की आज्ञा से समस्त यादव बंधुओं सहित प्रीतिभोज में विष देकर वध कर डाला था। कर्कालगिरि की पहचान कंकराळा से हो सकती है जो सवाई माधोपुर जिले में बामणवास तहसील की पंचायत समिति का प्रमुख स्थान है। यह भी संभव है कि करोली ही कंकराळा रहा हो जहां के यादव राजाओं के अन्त में 'पाल' शब्द लगाया जाता है। हम्मीरकाव्य में हम्मीर की व्यापकविजय यात्रा में भी उसके द्वारा 'ककराळ' नामक नगर को ध्वस्त करते समय त्रिभुवनाद्रि के राजा द्वारा विपुल उपहार के साथ हम्मीर की शरण में आने का उल्लेख हैं।[4]

हम्मीर को अपने राज्याभिषिक्त होने के प्रारम्भ में सं. १३१६ में नासिरुद्दीन द्वारा भेजे गये मालिक उन्नवाब के साथ भी लड़ाई करनी पड़ी।[5] तबकाते नासिरी में इसके परिणाम के विषय में कुछ भी नहीं, अतः इसका

---

१. जयसिंह (द्वि.) जयतुगीदेव)—का शिलालेख सं. १३१४ का (कोटाराज के) 'अद्रू' गांव से मिला है।

२. अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, पृ. १२१; राजाभोज, विश्वेश्वरनाथ रेऊ पृ. ३३२

३. „ वही „ पृ. १२१

४. हम्मीर महाकाव्य—नवम सर्ग श्लोक ४७

५. तबका-ए नासिरी, ।/७१३

अर्थ यही निकलता है कि मलिक उन्नवात्र को पराजित होकर लौटना पड़ा हो।[1]

जैत्रसिंह की मृत्यु के बाद उसका पुत्र हम्मीर रणथंभोर का शासक बना। खेम हम्मीर के चरित्र के विषय में उसकी कुमारावस्था के समय से जानकारी देने लगता है। उसके अनुसार हम्मीर का जन्म उसके पिता और रणथंभोर राज्य के लिये शुभ और अभ्युदय का सूचक था। उसके जन्म के दिन जैत्रसिंह को पारसमणि की प्राप्ति हुई।

खेम के अनुसार वह अत्यन्त चतुर राजनीतिनिपुण और दुराग्रही था। तिसिंगा हिरण के शिकार के प्रसंग में उसके चातुर्य, अपने मामा और जसपाल गंगेलवाल के वध में उसकी कुटिलवृत्ति के दर्शन होते हैं, जो उसकी महत्वकांक्षा को दर्शाते हैं। उसकी हठधर्मिता या दुराग्रहपूर्ण प्रवृत्ति के दर्शन से तो उसके जीवन की पूरी गाथा भरी पड़ी है। हम्मीर को दर्शन न देकर पीठ फेर लेने वाले बाकलीपाव नाम के नाथ तपस्वी के तपभंग हेतु रचे गये षड्यंत्र, सोलेश्वर मंदिर के पुजारी से शिवजी की जटा दिखाने हेतु किये गये हठ के प्रसंग उसकी जन्मजात दुराग्रह पूर्ण प्रवृत्ति की भावी जीवन में किये जाने वाले हठ से संबंधित काल्पनिक प्रसंग हैं।

इन प्रसंगों में कतिपय ऐसे अनुत्तरित प्रश्नों के भी उत्तर मिल जाते हैं, जिनका उल्लेख इतिहासग्रन्थों में नहीं मिलता है। सोलेश्वर महादेव में हम्मीर के वंशजों के विषय में भविष्यवाणी के रूप में जानकारी दी गई है कि उसके वंशजों का राज्य रणथंभोर में नहीं रह पायगा और दुर्ग पर तुर्कों का आधिपत्य हो आयगा। भविष्यवाणी द्वारा भूत की घटनाओं का ज्ञान कराने की यह भी एक भारतीय इतिहास लेखन की शैली है। यहां इसी का प्रयोग करते हुए यह संकेत दिया गया है कि हम्मीर के कोई पुत्र रहे होंगे, जो दुर्ग में नहीं रह पाये।

इसी क्रम में खेम ने हम्मीर की दो पुत्रियों देवलदे और केवलदे के जन्म और देवलदे के अलौकिक जन्म की कथा के माध्यम से देवलदे की अठाइसवें वर्ष की आयु में हम्मीर को एक पुत्र की प्राप्ति और मृत्यु से ठीक पूर्व दूसरे पुत्र की प्राप्ति की इन्द्रलोक से आये ज्योतिषी के मुख से भविष्यवाणी कराई गई है। कवि भविष्यवाणी के माध्यम से यही जानकारी देने का प्रयास करता दिखाई देता है कि हम्मीर के दो पुत्र भी थे जिन्हें संभवतः वंशरक्षा के लिये अंतिम युद्ध से पूर्व दुर्ग से निकाल कर सुरक्षित स्थान पर भेज दिया गया होगा।

---

१. अर्लीचौहान डाइनेस्टीज—पृ १२२

तारीख राजगान, कोटा में मुंशी प्रेम चंद द्वारा लिखित में शाहबाद (कोटा) के धंधेल वंशी राजवंश को रणथंभोर के हमीर का वंशज कहा है। उसके अनुसार हम्मीर के युद्ध में मारे जाने पर उसके पुत्र जसराज ने सांवर गढ राज्य की स्थापना की।[1]

इस कथा के माध्यम से यह भी तथ्य सामने आता है कि देवलदे की आयु रणथंभोरदुर्ग के तुर्कों के अधिकार में जाने के समय ३० वर्ष थी अतः उसका जन्म सं. १३२८ वि. में हुआ होगा और मांडू दुर्ग को भी अपने पिता के समय संभवतः जय वर्मा के समय आक्रमण कर अपने अधिकार में लिया होगा। देवलदे के जन्म के दिन खेम हम्मीर के द्वारा मांडू पर अधिकार की बात कहता है।[2]

देवलदे का जन्म खेम के अनुसार बड़गूजर राजपूत कुल की रानी हीरां-दे से और केवलदे का जन्म सोलंकिनी रानी से हुआ था। केवलदे के विषय में अन्य किसी भी स्रोत से जानकारी नही मिलती। खेम के अनुसार उसका विवाह जाजा बड़गूजर से हुआ था। काव्य में उसकी पाहुना संज्ञा दी गई है। राजस्थान में 'पाहुणा' शब्द के दो अर्थ प्रचलित हैं—एक अतिथि के अर्थ में और दूसरा जामाता के अर्थ में। खेम ने केवलदे का पति होने के संबंध से ही उसके लिये 'पाहुणा' शब्द का प्रयोग किया है। हम्मीर ने अपने अंतिम युद्ध प्रयाण के समय रणथंभोर का राजमुकुट उसी के सिर पर रखा, इसका कारण भी उसका अप्रतिम योद्धा होना, सेनापति और मंत्री होना ही नहीं बल्कि अपना सर्वाधिक विश्वस्त व्यक्ति होना जामाता होना भी है।

भांडउ व्यास कृत हम्मीरायण में उसको देवड़ा चौहान बताया और हेडाऊ (घोड़ों को सौदागर) कहा है।[3] यह हो सकता है कि वह घोड़ों के व्यापारी के रूप में ही रण्थंभोर में आया हो पर खेम के अनुसार तो हम्मीर ने उसकी योग्यता परख कर उसके साथ अपनी कन्या केवलदे का विवाह कर

---

१. रणबांकुरा पत्रिका. वर्ष ८, अंक ७, (जुलाई १९९३) पृ. ६-७

२. खेम ने तिथियों के अंकन में गड़बड़ की है। उसने हम्मीर के सिंहासनारूढ होने की तिथि सं. १३३१ दी है जो संमवत १३४१ होनी चाहिए। अन्य कवियों ने यह तिथि १३३९ दी है। मांडू की विजय भी सिंहासन पर बैठने के तुरन्त बाद ही हुई लगती है। ऐसी स्थिति में देवलदे का जन्म १९४०-४१ के लगभग तथा पुत्रों का जन्म देवलदे का २० वर्ष की अवस्था में १९५६ और १९५८ में होना चाहिए। तीस वर्ष लेखक की अशुद्धि हो सकती है।

३. हम्मीरायण—माण्डउ व्यास -- छंद सं. ६८

उसे पाहुणा (जमाता) बना लिया। प्राकृतपैंगलम् में उसका नाम जाजा, जाजदेव, या जज्जलदेव मिलता है। नयचन्द्र सूरि भी जाजदेव के नाम का ही प्रयोग करता है। हम्मीर के चरित्र संबंधी सभी काव्यों में जाजा के उज्ज्वल चरित का विस्तृत वर्णन मिलता है।

खेम ने हम्मीरायण में हम्मीर के अभिषिक्त होने के समय रणथंभोर के परगनों की एक सुविस्तृत सूची दी है। उसके अनुसार वर्तमान सवाई माधोपुर जिला करोली—धोलपुर, टोंक, मालपुरा, लालसोट, चाटसू, कोटा, बूंदी, झालावाड़, खाताखेड़ी, चाचरणी और मध्यप्रदेश में धंधेरखण्ड तक उसका राज्य व्याप्त था। (नगरों और ग्रामों की विस्तृत सूची हमीरायण में छंद सं. ४४९ में मूल पाठ और अनुवाद में देखें।)

खेम ने हम्मीर के समय उसके काका महाराज बांकड़ा (वाग्भट ?) और मांडू के राजा मन्मथ के मध्य हुई लड़ाई का विवरण दिया है। मन्मथ के साथ बांकड़ा का संघर्ष चलता रहता था। बांकड़ा कुष्टरोग से ग्रस्त था और खाताखेड़ी और मऊ मैदान के थानों पर उसकी नियुक्ति थी। हम्मीर की राजसभा में वह जब भी उपस्थित होता, उसके जाने के बाद उसके आसन को गंगाजल से धुलवाया जाता था। हम्मीर और उसके सभी सभासद उससे छुआछूत करते थे। इससे बांकड़ा मन ही मन दुखी होता था।

मन्मथ से उसकी सदा छुटपुट लड़ाईं होती रहती थी। वर्षों तक ऐसी छुटपुट लड़ाइयों में सदा पराजित होने वाले मन्मथ ने अपने देवगिरि, आसेर, सूरत, खंभात, गुजरात आदि के सहयोगी राजाओं से सहयोग प्राप्त कर हम्मीर के राज्य पर हमला बोल दिया। बांकड़ा के साथ उसका भयंकर युद्ध हुआ। मन्मथ युद्ध में मारा गया और उसके सहयोगी राजा पलायन कर गये। हम्मीर उस युद्ध में सम्मिलित नहीं था। बांकड़ा के आवेदन पर सैनिक सहायता अवश्य भेज दी थी। महाराज बांकड़ा को भी इस युद्ध में असंख्य घाव लगे। युद्ध समाप्त होने पर हम्मीर वहां पहुंच पाया। उसके पहुंचने के चार दिन बाद ही बांकड़ा का देहान्त हो गया। जो हम्मीर अपने कोढी काका से नफरत करता था, वही उसे अपने कन्धे पर उठाकर ले गया और राजकीय सम्मानसहित उसका अंतिम संस्कार किया। तदुपरान्त मांडू पर आक्रमण करके उस पर अपना अधिकार कर लिया और वहां अपना प्रतिनिधि नियुक्त करके लौटा।

हम्मीरमहाकाव्य में हम्मीर की दिग्विजय यात्रा में विरोध का आश्रय लेने वाले 'अर्जुन' परमार, मांडू, तथा धार के परमार राजा भोज, अवन्ति (उज्जयिनी), चित्रकूट, आबू, वर्धनपुर, चांग (चंगा), पुष्कर, सांभर, मारोठ,

करोली या ककराला, तिहुनगिरि (त्रिभुवनाद्रि) पर विजय का वर्णन किया है ।[1] कह नहीं सकते कि मन्मथ के साथ वांकड़े के युद्ध के बाद मांडू पर हम्मीर के अधिकार का प्रसंग उक्त दिग्विजय से संबंधित है या नहीं ।

महाराज बांकड़ा नाम के किसी इतिहासप्रसिद्ध व्यक्ति की हमें जानकारी नहीं है, विशेषरूप से हम्मीर के काका की । रणथंभोर के इतिहास में वाग्भट नाम का शासक अवश्य है, जिसका लौकिक नाम बाहड़ दिया गया मिलता है जो बांकड़ा नाम से साम्य रखता है पर वह हम्मीर का काका नहीं दादा था, और अन्य ऐतिहासिक सूत्रों के अनुसार परदादे का भाई अर्थात् दादा का काका । खेम और नयचन्द्रसूरि के अनुसार वह सं. १३१३ तक जीवित था । मन्मथ शब्द का प्रयोग खेम ने हम्मीरायण में अलाउद्दीन के एक दूत और योद्धा पुहमीराय खत्री के मुख से स्वयं अलाउद्दीन के लिये ही कराया है ।

अत: इसका अर्थ मुसलमान शासक हो सकता है । पर खेम ने मन्मथ के लिये राजा शब्द का प्रयोग किया है । अत: मन्मथ कोई हिन्दू राजा होना चाहिए ।

यह संभव है कि हम्मीर के काल के सं. १३४५ के शिलालेख[2] में वर्णित ऐतिहासिक प्रसंगों में से किसी एक का संबंध खेम द्वारा वर्णित प्रसंग से हो और उसने दूसरे प्रसंग के साथ मिला दिया हो ।

मन्मथ शब्द किसी परमार राजा के लिये भी प्रयुक्त किया हुआ हो सकता है । परमार शब्द का अर्थ होता है अपर मार अर्थात् दूसरा मन्मथ (कामदेव) । अत: किसी परमार राजा का वाचक इसे माने तो बलवन के शिलालेख में उल्लिखित मालवेश जयसिंह या अर्जुन हो सकते हैं । इस शिलालेख में मांडू पर जयसिंह को राज्य करते दर्शाया है । अर्जुन को नयचन्द्र सूरि के अनुसार हम्मीर ने भीमरस में पराजित किया था ।[3] मालवा में ही मांडू के राजा से विद्रोह कर मालवे के एक भू भाग पर अधिकार कर लेने वाले गोगदेव (कोकदेव) का नाम और मिलता है । मन्मथ कोकदेव का पर्याय भी हो सकता है पर गोगदेव सं. १३६२ में अलाउद्दीन के हाथ से मारा गया था, न कि बांकड़ा से ।

---

१. हम्मीरमहाकाव्य—नवम सर्ग—श्लोक १६ से ४७
२. बलवन का शिलालेख (सं. १३४५) श्लोक सं. ७ और ११
३. हिस्ट्री ग्राफ इंडिया—इलियट, तीसरी जिल्द पृ. ७६

जयसिंह (द्वितीय) परमार का कोटा राज्य के अद्रू (अटरु ?) गांव से सं. १३१४ का एक शिलालेख प्राप्त हुआ है[1]। उससे पता चलता है कि कोटा राज्य में चंबल के तटवर्ती लेख प्रदेश पर उसका राज्य था। अत: झम्पायथा की घटना का संबंध खाताखेड़ी और मऊ में गये बांकड़ा के युद्ध से हो सकता है।

तीज के पर्व पर रणथंभोर एवं अहलादपुर की स्त्रियों का ताल पर झूला झूलने और गणगौर की पूजा के महोत्सव का प्रसंग राजस्थानी संस्कृति का ही विशेष अंग है। इस महोत्सव में देवलदे की गणगौर को लूट कर गागरोन के थानसिंह खीची द्वारा ले जाने की घटना इन राजपूत राजवंशों में समय-समय पर होने वाली इतिहासप्रसिद्ध अन्य घटनाओं से मेल खाती है। ऐसी ही एक घटना बून्दी के नरपाल हाडा के समय में सं. १४०३ में घटी थी। जब हरपाल डोड ने बून्दी की गणगोर लूट ली थी और इसके प्रतिशोध स्वरुप नापाजी (नरपाल) के पुत्र हम्मीर ने अनेक बार कोषवर्धन (शाहबाद) पर आक्रमण किये।[2] थानसिंह खीची का नाम अलाउद्दीन के साथ हुए युद्ध में हम्मीर की ओर से मृत्यु प्राप्त व्यक्तियों की सूची में दिया गया है। अत: इस घटना और इससे सम्बन्धित व्यक्तियों की ऐतिहासिकता में कोई सन्देह नहीं होनी चाहिए।

बणजारे ऐसे अवसर पर अपना माल बेचने हेतु पूरे देश में फिरते थे पर उनके द्वारा वितरित काजले का वर्णन कवि के द्वारा पाठकों के गणित ज्ञान की परीक्षा का ही प्रयास समझा जाना चाहिए। इस वर्णन में उस काल में प्रचलित टांक, तीस तोले के सेर और मण के तोल का उल्लेख किया है।[3]

उद्दा वेगम और महिमाशाह के मध्य वन में निधुवन की कथा काल्पनिक लगती है। इस कथा को तत्कालीन कतिपय लोगों की अलाउद्दीन के प्रति घृणा-भावना ही मान सकते हैं। हम्मीरमहाकाव्य और भांडउ व्यास कृत हम्मीरायण में इस घटना का अभाव है। महिमाशाह और गाभरू के हम्मीर की शरण में आने का कारण अलुखान द्वारा उनसे गुजरात से लूट कर लाये गये माल में से पंचाध मांगने पर हुआ संघर्ष बताया गया है।[4] खेम रचित हम्मीरायण में भी छंद सं. ७१३ से ७३६ तक त्रुटित पाठ के पूरक उक्त भांडउ

---

१. राजा भोज—विश्वेश्वरनाथ रेऊ—(१९३२) पृ. ३३०
२. रणबांकुरा-वर्ष ८ अंक, ७ (जुलाई १९९३) पृ. २-६।
३. खेम ने गणित करके ४,८६००० स्त्रियों की संख्या दी है, पर यह संख्या ठीक नहीं है। कुल स्त्रियों की सं. ४.५३,६०० होनी चाहिए।
४. हम्मीरायण-भांडउ-छंद सं. ४४; तारीख-ए-फिरोजशाही; तृतीय संस्करण पृ.१३० (अर्लीचौहान डाइनेस्टीज-पृ. १२६)।

कृत हम्मीरायण के परिशिष्ट रूप में प्रकाशित खेम के कवित्तों में भी यही कारण बताया गया है। तारीखे फिरोजशाही और फुतुहूस्सलातीन से भी इसकी पुष्टि होती है।

महिमाशाह के द्वारा हिंडौन में आये अलाउद्दीन के घोड़ों के अपहरण में अपनाई गई विधि महिमाशाह के साथ ही कवि खेम के अश्वों की विद्या के ज्ञान की जानकारी देती है। हिंडोन में घटी इस घटना की पुष्टि नयनचन्द्र सूरि भी करता है। हम्मीरमहाकाव्य में, महिमाशाह द्वारा यह आक्रमण हिंदवाट में लगाये गये उल्लुखान के शिविर पर आधीरात में किये गये आक्रमण का उल्लेख है।[1] दोनों में अन्तर इतना ही है कि खेम ने शिविर के स्थान पर अलाउद्दीन के अस्तबल में आधीरात में तीन ओर से आक्रमण कर घोड़ों के अपहरण और अस्तबल में आग लगाने का वर्णन किया है, उलुभखाँ की वहां उपस्थिति नहीं बताई है, जबकि हम्मीरमहाकाव्य में वह अपने आठ वीरों के साथ आठ ओर से शिविर में सोये एक लाख तुर्क सैनिकों पर आक्रमण का उल्लेख करता है। भांडउ कृत हम्मीरायण में हिंडोन या हिंदवाट के स्थान पर हीराघाट नाम मिलता है।

खेम हम्मीरमहाकाव्य में वर्णित उल्लूखाँ द्वारा अस्सी हजार सैनिकों सहित बनास नदी के तट पर आकर अठारह दिनों तक रणथंभोर के गाँवों को लूटने, खेतों को जलाने और धर्मसिंह द्वारा तुर्कों की सेना पर विजय के उपरान्त भीमसिंह द्वारा विजित रणवाद्य बजाने और तुर्कों के द्वारा भीमसिंह को मुठभेड़ में मारने की घटना[2] अपने काव्य में नहीं देता और न हम्मीर के द्वारा दण्डस्वरुप धर्मसिंह को अन्धा और नपुंसक बनाने का ही उल्लेख करता है। न वह हम्मीर के अनुज भोजदेव के बादशाह की शरण में चले जाने ओर सुल्तान से जगरा की जागीर मिलने का प्रसंग भी इस काव्य में नहीं देता है। डॉ. शर्मा इस घटना को प्रामाणिक मानते हैं औरइ सके घटित होने के समय के विषय में सं. १३५८ वि. की सम्भावना व्यक्त करते हैं।[3] उनके अनुसार खांडाधर, भोज, अलाउद्दीन और कान्हड़दे तथा सातल सोम की सेनाओं के बीच हुए युद्ध में मौजूद था और उसी युद्ध में उसकी मृत्यु भी हुई।[4] उनकी इस मान्यता के प्रमाणरूप में वे भांडउव्यास रचित हम्मीरायण के परिशिष्ट सं. २ के पद्य सं. ९-१० और उसी में परिशिष्ट सं. ४ में पद्य सं. १० के कवित्तों को प्रस्तुत करते हैं, जो वास्तव में खेम कृत हम्मी-

---

१. हम्मीरमहाकाव्य—दशमसर्ग, श्लोक ३५-६१।
२. —वही— , नवम सर्ग, श्लोक १५३-१५५।
३. विश्वंभरा पत्रिका, बीकानेर ६/३-४ पृ. ७५-७५।
४. --वही— , कान्हड़दे प्रबन्ध-खण्ड, १ छंद ५५।

रायण के ही किसी संस्करण से बिखर कर अलग हुए पद्य हैं। नयनचन्द्रसूरि ने हम्मीर के भाई भोज को भ्रमवश खड्गग्राही लिख दिया है। ये पद्य खेम कृत हम्मीरायण की प्रस्तुत प्रति में सं. ११८६ पर उपलब्ध है। इस पद्य का सीधा सा अर्थ है कि राण रोंपाल सुल्तान से जा मिला है, अब यदि बाहड़, भोजदेव, भोजराज, वीरमदेव, बड़रावत जाजा भी जाकर मिलना चाहे तो मिल जावें। यही नहीं सूर्य चन्द्रादि तेतीस कोटि देवता भी सुल्तान के पक्ष में हो जावें, तो भी मुझे परवाह नहीं। मेरे ये दो हाथ और मेरा यह घोड़ा उसकी शरण में नहीं जाना चाहिए। पाठ भेद और त्रुटित पाठ होने के कारण डॉ. शर्माजी को भ्रान्ति होना स्वाभाविक था।

उनके द्वारा इन्हीं पद्यों में हुई अशुद्धि का एक और नमूना भाण्डउ कृत हम्मीरायण की भूमिका में उक्त पद्य में प्रयुक्त 'चन्दसूर' के अर्थ में दृष्टव्य है,[1] जिसका अर्थ चन्द्रमा और सूर्य देवताओं से है न कि इस नामों के किन्हीं राजाओं से, जैसा उन्होंने समझा है। एक अन्य उदाहरण है, परिशिष्ट सं. ४ के कवित्तों को किसी 'मल्ल' कवि का समझ लेने में। वास्तव में ये खेम रचित पद्य ही हैं। मल्ल अलाउद्दीन का मोल्हणभार ही है। हम्मीर या अलाउद्दीन के साथ संवादों में कवित्तों में वक्ता के रूप में 'मल्ल' उसकी छाप है।

इन पद्यों के अर्थ पर ध्यान देने पर स्पष्ट हो जाता है कि रचोंपाल (राणरोंपाल) के अतिरिक्त अन्य कोई भी सुल्तान से नहीं मिला। नयचन्द्र ने भी धर्मसिंह, भोजराज और भीम आदि के प्रसंगों में कही कोई भूल की है। मुसलमानी तवारिखों में भी धर्मसिंह आदि का कहीं कोई नाम तक रोंपाल के साथ मिलने वालों में नहीं है। खेम तो हम्मीर के युद्ध में मर जाने के वर्णन के बाद भी भोजदेव को युद्ध क्षेत्र में उतरकर बादशाह के भानजे, जसपाल-तँवर और तेजपाल तँवर को युद्ध में मारकर रण की घाटी में तेजपाल तँवर से युद्ध करते हुए मारे जाने का उल्लेख करता है। अतः नयचन्द्र के कथन को सत्य नहीं माना जा सकता।

खेम ने हम्मीरायण में हिंडोन के अस्तबल से महिमाशाह के द्वारा खाशा घोड़ों के अपहरण की, हवालगीर से सूचना मिलने पर वजीरों की सम्मति लेकर मोल्हण्सी को दूत के रूप में भेजने का उल्लेख किया है। हम्मीरमहा-काव्य में भी रणथंभोर पर आक्रमण के लिये घाटियों तक सेना सहित पहुंच कर धोखा देने की नियत से सन्धि के प्रस्ताव सहित जनेउधारी श्री मोल्हण को हम्मीर के पास भेजने का उल्लेख किया गया है।[2] भाण्डउ कृत हम्मी-

---

१. हम्मीरायण-भाण्डउ-भूमिका पृ. ८२।

२. हम्मीर महाकाव्य—एकादश सर्ग, श्लोक २२-६६।

रायण में भी स्वयं अलाउद्दीन मोल्हाभाट को दूत बनाकर हम्मीर के पास भेजने का वर्णन है।[1] फुतुहूस्सलातीन भी इनका समर्थन करता है[2] पर इनकी मांगों में अन्तर है। हम्मीरमहाकाव्य में एक लाख स्वर्ण मुद्राएं, चार हाथी, चारों मुगल शरणार्थी, राज्यकन्या, तीन सौ घोड़े और भेड़ें मांगी गई हैं। भाण्डउ कृत हम्मीरायण में राजकुमारी देवलदे से सुल्तान के विवाह, धारू वारू को साथ देने, अनेक हाथियों की मांग करके बदले में हम्मीर को मांडू, उज्जैन और सांभर के परगने देने का प्रस्ताव कराता है। खेम के अनुसार महिमाशाह को बादशाह के सुपुर्द करने, दण्डस्वरुप राजा के दरबार की दो पातुरियों की भेंट और अधीनता स्वीकार करके चौकी पर एक लाख घुड़सवार रखने के साथ पेशकशी देने की मांग रखी गई है। फुतुहूस्सलातीन और सुरजनचरित में भी लगभग ऐसा ही वर्णन है। खेम ने बादशाह की मांग में पारसपत्थर, एक लाख टके और एक लाख घोड़ों की मांग और जोड़ दी है। ऐसा भी लिखता है कि उलुगखाँ ने दूत के माध्यम से मुहम्मदशाह और कामरू की हत्या करने अथवा युद्ध के लिए तैयार रहने का सन्देश हम्मीर के पास भिजवाया था। भाण्डउ ने हम्मीर के भाट का नाम नाल्ह दिया है। नाल्ह हम्मीर के द्वारा प्रेषित उत्तर वीरतापूर्ण शब्दों में देकर बादशाह की सभी मांगों की उपेक्षा कर देता है। नयचन्द्र के अनुसार राजनीतिक मर्यादा का पालन करते वाचाल दूत की भर्त्सना करके, उसके कण्ठ को उसी की जनेऊ से बंधवाकर दुर्ग से बाहर निकलवा देता है। खेम के अनुसार बादशाह को भेजे गये प्रत्युत्तर में गजना (दिल्ली) के दुर्ग, अलुखान, निसरत खान, ठठा, तिलंग और मरहड़ी नर्तकियों का समर्पण करके बादशाह को अपनी चाकरी में आने का प्रस्ताव भेजता है। बादशाह को कोरा उत्तर भेजकर वह दूत की धृष्टता पर खड्ग तो उठा लेता है, पर मारता नहीं। वह मोल्हण को तुरन्त दुर्ग छोड़कर चले जाने के आदेश का उल्लेख करता है। यहां खेम और नयचन्द्र के वर्णित उत्तरों और व्यवहार में समानता है।

खेम, उक्त सन्देश प्रेषण के वर्णन के बाद बादशाह द्वारा अलुखान को बुलवा कर रणथम्भोर पर तत्काल आक्रमण करने के आदेश का वर्णन करता है। उमरावों को बुलाने के लिये अहदियों को भेजकर बादशाह स्वयं फौज के साथ जाने का निर्णय लेता है। पर अलुखान की बात मानकर रणथम्भोर की सैन्यशक्ति के परीक्षण के लिये पहले सेना को भेजता है। वह अलुखान की सेना में सम्मिलित विभिन्न प्रान्तों से आये सैनिकों की जानकारी देता है और सं. १३४० माघ सुदि पंचमी को सैन्य प्रयाण का उल्लेख करना है। खेम के

१. हम्मीरायण-भाण्डउ छंद सं. १४२-१५०।
२ खिलजी कालीन भारत-पृ. २७०-२७१।

अनुसार अलुखान मलारण में सेना का शिविर लगाकर अपने गुप्तचर दुर्ग में भेजता है, जहां किसी भी प्रकार के सैनिक की सूचना उसे नहीं मिलती है।

नयचन्द्र कृत हम्मीर महाकाव्य में दूत के माध्यम से हम्मीर का उत्तर मिल जाने पर अविलम्ब दुर्ग पर आक्रमण का वर्णन है। यहां दोनों ओर की सैन्यसज्जा, घात-प्रत्याघात का वर्णन है। उसने दुर्ग में शल से मैले हुए लोह निर्मित कड़ाहों में उबलते तेल, भैरवयंत्र, उभयपक्षी वीरों द्वारा बाणवर्षा, गोलंदाजों द्वारा तोपों से बरसाये जाते गोलों आदि का सरस चित्रण किया है। इसी युद्ध में दूसरे दिन दोनों ओर से क्षिप्त तोप के गोलों के परस्पर टकरा कर टूटने और उनसे फूटकर निकले एक टुकड़े से निसुरतखान की मृत्यु का उल्लेख किया है[1]। भांडउ ने महिमाशाह के नेतृत्व में लड़ रहे योद्धाओं के साथ हुई लड़ाई में निसरतखां की मृत्यु होना कहा है।

खेम ने स्वयं बादशाह द्वारा दुर्ग पर आक्रमण करने का उल्लेख किया है। उसके अनुसार बादशाह द्वारा भेजे गये दूत पुहुमी राय खत्री के हम्मीर से अहलादपुर में मिलने और असफल होकर लौटने पर दुर्ग पर धावा बोल दिया। भयंकर संग्राम हुआ और उस युद्ध में नुसरत खां मारा गया। खेम के अनुसार नुसरतखां अलाउद्दीन का भतीजा था।[2] निसरतखां की मृत्यु का कारण खेम और भांडउ का दृष्टि में समान है।

अलाउद्दीन के इस सैन्य प्रयाण में खेम ने सेना की व्यवस्था का वर्णन करते हुए लिखा है कि सेना ने सं. १३४१ की अक्षय तृतीया को प्रयाण किया। सेना की हरावल में निसरतखां था, और चंडावल (चन्द्रावल) का नेतृत्व फतेहखान कर रहा था। बांयी ओर की पंक्ति हुसैनखां के नेतृत्व में चल रही थी और कराबुल सैन्य टुकडी तातारखान के अधीन थी।[3]

भांडउ जाफरखांन, अलुखान, निसरतखान, ताजखान की सेना में उपस्थिति का उल्लेख तो करता है, पर सैन्य व्यवस्था की कोई जानकारी नहीं देता।

खेम ने बादशाह के प्रयाण मार्ग में टोडा में मुकाम करके भोमियों की सहायता से सुगम्य मार्ग की जानकारी लेकर तोपों और गाड़ियों सहित लाखेरी का दरा पार करते हुए छायण में पडाव डालने का उल्लेख किया है।

---

१. हमीरायण सर्ग ११, श्लोक सं. ६९-९९
२. हमीरायण खेम— छंद सं ९१६-९१९
३. —वही छंद सं. ८८७-८९२

उसने अलाउद्दीन की सेना के विस्तार तथा हस्ति, अश्व, पदाति सेना के साथ सजिग, धनुर्धर, बंदूकची, तोपची रणवाद्यों के साथ साथ हम्मीर की सेना का भी वर्णन किया है। फारसी तवारिखों में छायण को लिपि दोष के कारण झायन लिखा मिलता है, अत: शोधार्थी मानचित्र में इसे ढूंढ नहीं पाये। ऐसी मान्यता है कि उलुगखां ने इस नगर को जीतकर इसका नाम शहर-ए-नू (नया शहर) रख दिया था। वही बाद में नवगांव के नाम से पुकारा जाने लगा।

वह अलाउद्दीन के द्वारा छायण में दो वर्ष तक पड़ाव डाल कर लड़ते रहने और इस अवधि में उसके शिविर में संचालित कलाओं (उद्योगों) की की सूचना देता है। खेम ने देवल देवी को अपनी ओर आकर्षित करने हेतु बादशाह के द्वारा किये गये कुट्टिनियों के प्रयोग की भी जानकारी दी है। प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य में ऐसे प्रयोगों के अनेक उदाहरण मिल जाते हैं, पर प्रस्तुत काव्य का वर्णन अस्वाभाविक सा लगता है। काव्य में रोचकता लाने हेतु यह प्रसंग जोड़ा गया है, पर कथा बहुत विस्तृत हो जाने से यह मूल कथा के सातत्य में बाधक बन गई है। किसी अन्य काव्य या फारसी इतिहास ग्रन्थों में इसकी पुष्टि नहीं होती।

अलाउद्दीन द्वारा रणथंभोर के घेराव और युद्धों की अवधि खेम ने बारह वर्ष की बताई है। प्राय: चारणों और भाटों द्वारा प्रणीत काव्य ग्रन्थों में बारह वर्ष तक किसी दुर्ग को घेरे रहने और युद्धों के प्रसंग काव्यरूढि से बन गये है। रणथंभोर पर सुल्तानों के एक के बाद दूसरे होते रहे आक्रमणों की अवधि से यहां तात्पर्य हो तो उस अवधि को बारह वर्ष के लगभग माना जा सकता है।

बारह वर्ष तक गढावरोह का संकेत शायद कवि ने अलाउद्दीन की परेशानी और हानि को बताने के लिये किया है। लम्वे समय तक घेरा डाले रखने पर उसको दुर्ग में प्रवेश करने का अवसर नहीं मिल पाया। वह थक चुका था। बरनी भी इस तथ्य का समर्थन करते दिखाई देते हैं। अलाउद्दीन की परेशानी का कारण उसके पास निरन्तर दिल्ली और अवध में हो रहे विद्रोहों के समाचार भी थे। खेम ने यहां अलाउद्दीन के शिविरों में ड़ेरों की रस्सियों, कनातों, सरायचों, रस्सों, जेवड़ों, घोड़ों के पादबंधनों और भारकशों के सड़ गल जाने, और परिणामस्वरूप घोड़ों और ऊंटों के स्वच्छन्द विचरण और सैनिकों को शीत, और वर्षा में संतप्त होने का प्रसंग जोड़ कर किया है। इससे उबारने के लिये उसे बूंदी में रह रहे मोमिन आरिफ नाम के जुलाहा जाति के ओलिया से सूत पैदा करने वाले करवे की प्राप्ति की कथा जोड़नी पड़ी है। इसी ओलिया के माध्यम से कवि ने अलाउदीन की

सेना में नियुक्त मादिकिलीच और निजामदी नाम के चमत्कारी सूफी पीरों से परिचय कराया है। खेम का कथन है कि अलाउदीन की सेना का कूच रण की डूंगरी पर उन्हीं पीरों ने कराया था।

खेम इस अन्तर्कथा के साथ मोल्हण भाट के द्वारा बादशाह के सामने दुर्ग के सुदृढ निर्माण और अपराजेयता, पहाड़ों की विकटता और दुर्ग में रक्षक रूप में रह रहे थोरी और भील जाति के जंगली युद्धवीरों का परिचय दिला कर तलहटी में सुरंग लगाकर दुर्ग को तोड़ने की सम्मति दिलाता है। ओलियों की उक्त कथा सर्वथा काल्पनिक और अतिप्राकृत तत्वों से युक्त हैं। थोड़ी बहुत सच्चाई यदि कोई हो तो वह मादिकिलीच और निजामदी नाम के सिपाहियों के द्वारा प्रदर्शित शौर्य और गेंद (गजेन्द्र) घाटी में घुस कर दरा पर विजय प्राप्त कर मूढे तक पहुंचने के उल्लेख में हो सकती है। ये दोनों वीर जाजा बड़गूजर से युद्ध कर शहीद होते दिखाये गये हैं। दुर्ग के द्वार जो सदा खुले रहते थे, उसी दिन बंद किये गये। इन दोनों योद्धाओं में परस्पर मामा भांजे का सम्बन्ध था। दुर्ग के दक्षिण में तीन कोस पर मामा भानजे की कब्रें शायद इन्हीं वीरों की हों।[1]

इस भीषण युद्ध में विजय प्राप्त कर बादशाह ने रण के डूंगर पर अधिकार प्राप्त कर लिया। दुर्ग में स्थित राज प्रासाद के सामने बैठकर वह प्रासाद में होने वाले आमोदप्रमोद के उत्सवों को देख देख कर कुढता था। उसने अनेक प्रपंच किये पर उसका कोई बस नहीं चला। पहाड़ पर उसने बुर्ज का निर्माण करा लिया और उस पर तोप भी चढा दी। सुल्तान की तोपों से सुबह से शाम तक गूंजते पहाड़ों और दुर्ग से बरसायी जा रही विशाल शिलाओं और पत्थरों के कारण तलहटी तक पहुंचने वाले तुर्क सैनिकों के वर्णन में खेम ने दावा किया है कि यह सब उसने अपनी आंखों से देखा था।

दोनों पक्षों के मध्य हो रहे इस भीषण संग्राम का समर्थन फारसी तारीखों और काव्यों में भी किया गया है। खेम के हम्मीरायण में नर्तकियों के नृत्य और उड्डानसी द्वारा उसके वध की कथा का समर्थन भांडउ कृत हम्मीरायण तथा हम्मीरकाव्य से भी होता है। खेम इनका नाम धारू और वारू देता है,[2]। भाण्डउ भी धारू और वारू[3] और नयचन्द्र सूरि एक ही नर्त-

---

१. ऐतिहासिक स्थानावाली—विजयेन्द्रकुमार माथुर (प्र. वैज्ञानिक एवं तकनीकी की शब्दावली आयोग. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार) पृ. ७७४-७७५

२. हम्मीरायण (खेम—छंद सं १०७३, १०९६-११०१

३. हम्मीरायण—भाण्डउ · छंद सं १४६, २०३-२०९

की धारादेवी के नाम का उल्लेख किया है। इन नर्तकियों को मारने वाले का नाम खेम और नयचन्द्र उड्डानसी या उड्डानसिंह देते हैं। खेम के अनुसार वह महिमाशाह का भानजा और चेला[1] है। भाण्डउ उसको महमाशाह का काका[2] कहता है। इसका प्रतिशोध नयचन्द्र के अनुसार महिमाशाह उड्डाण सिंह को बाण से वध कर लेता है। खेम कृत हम्मीरायण में और भांडउ कृत हम्मीरायण में सुल्तान का छत्र काट कर लेता है। यह कथा कितनी वास्तविकता लिये हुए है, कहा नहीं जा सकता। पर जिस प्रकार महिमाशाह की शक्ति और ऐतिहासिकता में अविश्वास के लिये कोई स्थान नहीं है, उसी प्रकार उड्डाणसी के व्यक्तित्व में भी हमें विश्वास करना चाहिए। इस प्रसंग में अतिशयोक्तिपूर्ण पुट है इसमें संदेह नहीं।

गढरोध के वर्णन में प्राप्त सभी काव्यों में दोनों पर्वतों के बीच की खंदक को बादशाह द्वारा भरवाने के प्रयासों का उल्लेख है। प्रस्तुत काव्य में ऐसे दो प्रयासों का वर्णन है। प्रथम बार सुल्तान ने खंदक को मिट्टी से भरवाने के लिए एक तोबरा भर कर डालने की मजदूरी एक रुपया नियत की और कई कारीगरों को इस काम पर लगवाया, जो रात के अंधेरे में यह काम करते थे। पर दुर्ग पर से गोलियों की बौछार में मिट्टी डालने के काम को दुष्कर समझ कर उसने मजदूरी प्रति तोवरा एक मुहर कर दी। बादशाह के सारे श्रम को हमीर ने पद्मला ताल की मोरी खोल कर नाकाम कर दिया। मोरी खोलने से खंदक में डाली गई सारी मिट्टी बह गई। फुतुहुस्सलातीन में चमड़े और कपड़े के थैलों में मिट्टी भर कर डालने का विवरण है। भांडउ भी थैलों में बालू भर कर डालने की बात कहता है। बरनी ने भी थैलों में बालू भरकर खाई में डालने, पाशेब बांधने और गरगच की चिनाई का वर्णन किया है।

खेम के अनुसार खंदक में डाली गई मिट्टी के बह जाने पर उसने खंदक को वृक्ष और झाड़ काट कर भरने और बीच मे मोरी के लिये जगह छोड़कर पत्थर चुणने का आदेश दिया। पहला पत्थर स्वयं सुल्तान ने सिर पर रख कर डाला और पुल बांध दिया। हम्मीरमहाकाव्य में भी खाई को पूलों और लकड़ियों के टुकड़ों से भरने का वर्णन किया है पर खाई को भरने के लिये किये गये दो प्रयासों का विवरण मात्र इसी काव्य में मिलता है।

इस काव्य में अलाउद्दीन के सैनिकों के द्वारा खाई को पाट कर दुर्ग में पहुंचने हेतु पुल तय्यार कर लेने पर हम्मीर के द्वारा अपने सैनिकों

---

१. हम्मीरायण (खेम) – छंद सं. ७८८, ११०४
२. हम्मीरायण भांडउ छंद सं. २०५

सन्नद्ध होकर पुल पर जाकर शत्रु को मार भगाने के आदेश का उल्लेख है।

इस प्रसंग के अंत में कवि ने एक सर्वथा नवीन ही प्रसंग जोड़ दिया है, जिस पर विश्वास कर पाना सम्भव नहीं है।

इस प्रसंग में भाट (खेम़) राव हम्मीर से अनुमति लेकर बुर्ज पर चढ कर सुल्तान के साथ चातुर्यपूर्ण संवाद करता है और बादशाह की प्रशंसा और व्याजस्तुतिपूर्ण वाक् शातुर्य का आश्रय लेकर उससे आश्वासन प्राप्त कर लेता है कि वह वहां से घेरा उठाकर चला जायेगा—यदि राव हम्मीर उसको थोड़ी बहुत पेशकशी ही दे दे। भाट मध्यस्थ बन कर सुल्तान का संदेशा देकर उसे एक घोड़ा ही दे देने हेतु निवेदन करता है जो किसी राव भाट को भी राव देता ही रहता है। पर उसके प्रस्ताव को राव स्वीकार नहीं करता और अंततः सुल्तान घेरा उठाकर दिल्ली के लिये प्रस्थान कर जाता है और सूरवाल के पास स्थित डूंगरी नामक स्थान पर डेरा डालता है।

इस प्रसंग को जोड़ कर खेम संभवतः इतनी सफलता प्राप्त कर लेने पर भी सुल्तान के मन में व्याप्त निराशा और सफलता के प्रति उठती शंका की ओर इंगित करता है, तो चिन्तातुर होते हुए भी हम्मीर के दृढ निश्चय और सुल्तान के साथ भयंकर संघर्ष हेतु सन्नद्ध रहने का संकेत दे रहा है।

दुर्ग के पतन का कारण खेम रचौंपाल और ख्योंपाल तथा गंगेलवाल (जसपाल गंगेलवाल का पुत्र और राव हम्मीर का साला) के कारण बताता है। ये लोग राजा के अति प्रिय थे पर किसी पुराने बैर का प्रतिशोध लेने के लिये षड्यंत्र रचकर घेरा उठाकर प्रस्थान कर गये सुल्तान को लौटाने की योजना बनाते हैं। रचौंपाल बादशाह से मिलने के लिये चुपचाप दुर्ग से निकल जाता है, दूसरा ख्यौंपाल अन्नभंडारों में सूखा चमड़ा बिछा कर भंडारों में अन्न समाप्ति का प्रचार करता है। हम्मीरमहाकाव्य में नयचन्द्रसूरि रचौंपाल ख्यौंपाल के स्थान पर रणमल्ल और रतिपाल नाम देता है। इसमें वर्षाकाल समीप जान कर भयभीत सुल्तान किसी तरह राव हम्मीर से सन्धि करने को उत्सुक होता है और दूतों को भेज कर रतिपाल को बुलाता है। वह राजा की अनुमति लेकर जाता है और शत्रुओं के चंगुल में फंस जाना है। रणमल्ल इसी बात से रुष्ट हो जाता है कि राजा ने रतिपाल को बादशाह से वार्ता के लिये भेज दिया है तो फिर "हमारी वीरता का क्या अर्थ है। षड्यंत्र में सम्मिलित तीसरा व्यक्ति अन्न भंडार का अधिकारी जाहड़ है।

हम्मीरायण भांडउ कृत में उनका नाम रणमल और रायपाल हैं, जिन्हें सुल्तान के निवेदन पर राव हम्मीर स्वयं सुल्तान के पास भेजता है। तीसरा

द्रोही इसमें कोठारी है, शायद उसका नाम जौहर है। हम्मीरमहाकाव्य के कोठारी जाहड़ से यह नाम मेल खाता है।

खेम विरचित हम्मीरायण में रचौंपाल योजना के अनुसार चुपचाप दुर्ग से निकलकर सुल्तान से मिला और स्वयं को राव हम्मीर के द्वारा भेजा गया दूत बताकर संदेश दिया कि आपको लौटते हुए देख कर राव ने अपनी विजय मान ली है। अब वह अपनी हठ को पूरी हुई मान कर आप से दुर्ग के बाहर आकर समर्पण करना चाहता है और अपने लिये कहीं अन्यत्र स्थान चाहता है। सुल्तान तदनुसार लौटने को तय्यार हो जाता है। रचौंपाल ने वापिस दुर्ग में लौटकर राव को सूचना दी कि अलाउद्दीन तो वापिस लौट आया है और अब कोठों में भी अन्न समाप्त हो गया है—उसकी व्यवस्था होनी चाहिए।

ख्यौंपाल ने भी रचौंपाल के कथन का समर्थन किया। उसने जौंरा और भौंरा नाम के अन्न भंडारों में अनाज पर सूखा चर्म बिछा कर, ऊपर से पत्थर डाल कर जांच के लिए साथ आये लोगों को रचौंपाल के कथन का विश्वास दिला दिया। अंत में षड्यंत्र का पता चल गया। ख्यौंपाल ने सारा भेद खोल दिया। रचौंपाल दुर्ग से निकल कर पुनः सुल्तान के पास चला गया।

हम्मीरमहाकाव्य के अनुसार भी दुर्ग में अन्न की कमी नहीं थी। अन्न भंडारों के अधिकारी जाहड़ ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये इस इच्छा से कि राव हम्मीर सुल्तान से संधि करले झूठ बोला कि वास्तव में भंडारों में अन्न समाप्त हो गया। उधर रतिपाल जो राव से अनुमति लेकर सुल्तान से मिलकर आया था ने हम्मीर को भड़काने के लिये सुल्तान की ओर से संधि की शर्त में राव की पुत्री का अलाउद्दीन के साथ विवाह की शर्त रख दी और यह संदेश भी दे दिया कि यदि वह अपनी पुत्री का विवाह नहीं करेगा तो सुल्तान उसकी रानियों को छीन लेगा। नयचन्द्र के अनुसार देवलदेवी भी अपने पिता, परिवार और राज्य की रक्षा हेतु अलाउद्दीन के साथ विवाह के लिये तय्यार हो जाती है। रतिपाल जो रणथंभोर का शासक बनने की अभिलाषा संजोये हुए था, रणमल्ल को भी अपने पक्ष में लेकर सुल्तान से जा मिला।

पुरुषपरीक्षा (पंडित श्री विद्यापति ठाकुर कृत) में तो षड़यंत्रकारी रायमल्ल और रामपाल हैं, जिन्होंने घेरा उठाकर लौटने को उत्सुक अदीन-राज (अलाउद्दीन) को यह सूचित कर रोके रक्खा कि दुर्ग में दुर्भिक्ष पड़ गया है अतः दुर्ग दो तीन दिन में ही उसके अधिकार में आ जावेगा।[1]

---

१. पुरुषपरीक्षा-पंडित विद्यापति ठाकुर—(दयावीर कथा) (हम्मीरायण-भांडउ का परिशिष्ट सं. ३

खजाइन-उल-फुतूह में लिखा है कि किले में अकाल पड़ गया था और चावल के एक दाने की खरीद के लिये दो दाने सोना देने पर वह प्राप्त नहीं हो सकता था।[1]

सुरजनचरित के अनुसार तो दुर्ग में रहने वाले लोग दुर्ग की घेराबंदी से घबरा उठे थे और उनमें से बहुत से शत्रु से जा मिले थे।[2]

डॉ दशरथ शर्मा ने मुस्लिम इतिहासकारों के इस कथन का समर्थन किया है कि वास्तव में दुर्भिक्ष की स्थिति थी, पर दुर्ग के अधिकांश व्यक्ति शत्रु से जा मिले थे के कथन को सत्य नहीं मानते।[3] पर जब राव के दो प्रधान अलाउद्दीन से जा मिले थे, तो उनके अन्य और समर्थक भी उनके साथ रहे ही होंगे इसमें संदेह नहीं होना चाहिए। खेम के अनुसार राजा का चित्त उचटने का कारण भी यही था कि प्रधान (मंत्री) ने शत्रु से मिलकर दुर्ग का, उसकी सैन्य व्यवस्था का समस्त भेद सुल्तान को दे दिया होगा और वे अकेले नहीं होंगे, उनके साथ और भी लोग होंगे जो शत्रु से जा मिले होंगे। उसके अन्य विश्वस्त मंत्रियों ने उसको विश्वास दिला दिया था कि दुर्ग में पांच और वर्षों के लिए अन्न के पर्याप्त भंडार हैं। फिर भी राव आश्वस्त नहीं हुआ। उसे भय था कि दुर्ग में रह रहे व्यक्तियों में या उसके समीप रह रहे उसके विश्वस्त व्यक्तियों में भी कोई शत्रु से मिला हुआ हो सकता है। उनमें से कोई कभी भी उसको जहर देकर या धोखे से हमला कर हथियार से मार सकता है। उसको ऐसी मृत्यु स्वीकार नहीं है अतः उसके लिये दुर्ग से निकल कर युद्ध करते हुए स्वर्ग प्राप्ति करना ही उचित है। उसका भाई वीरम भी उनको धैर्य रखने की सम्मति देता है पर सब व्यर्थ।

हम्मीर ने नगर में घोषणा करवादी कि अब दुर्ग के द्वार खोल कर सुल्तान से युद्ध अवश्यम्भावी है, अतः जिन्हें अपने प्राण प्यारे हों वे दुर्ग से निकल कर जहां भी जाना चाहें, चले जावें। जो तुर्कों से मिलने में अपना हित समझते हैं, उन्हें भी छूट हैं। उसने अपने विश्वस्त बंधु बांधवों, मंत्रियों और सामान्तों तक को जिनमें भोजदेव, (जिसके विषय में हम्मीरायण पूर्व में ही तीर्थयात्रा के बहाने निकाल कर अपने भाई के साथ सुल्तान की सेवा में चले जाने और जगरा की तथाकथित जागीर प्राप्त करने का उल्लेख किया है) भोजराज, भाई वीरम, तथा उसके जामाता (पाहुणा) जाजा भी सम्मिलित

---

१. खजाइनुल फुतूह —
२. सुरजनचरित—चन्द्रशेखर
३. हम्मीरायण—भाण्डउ—डॉ. दशरथ शर्मा द्वारा लिखित भूमिका—पृ. १३०

हैं । खेम के द्वारा हम्मीर और इन शूरवीरों के मध्य संवाद में ये वीर अंतिम क्षण तक अपने प्राण रहते मातृभूमि के प्रति भक्ति और स्वामिभक्ति के प्रति हम्मीर को आश्वास्त करते हैं । इस वर्णन में हम्मीर के हठ की झलक स्पष्ट दिखाई देती है ।

हम्मीर की यह स्थिति देख कर शरणागत महिमाशाह चिंतित हो उठता है कि राव दुर्ग से निकल कर सुल्तान से सीधी टक्कर लेने को उतावला है । उसके दृढ संकल्प को कोई डिगाने में समर्थ नहीं है । कहीं उसके मन में यह शंका तो नहीं है कि हम मुसलमान हैं अत: अपने जाति बन्धु सुल्तान से जाकर तो नहीं मिल जायेंगे । वह यदि युद्ध में हमसे पहले खेत रहा तो उसकी आत्मा में यह भावना न रह जाय कि हमारे कारण उसके राज्य और परिवार का सर्वनाश हुआ है ।

यहां खेम ने पुन: एक कथा और जोड़ दी है, जो सम्भवत: लोक में प्रचलित रही हो ।[1] इस कथा के अनुसार हम्मीर जो पूर्व में भी उचित अवसर प्राप्त हो जाने पर भी सुल्तान को मारने के पक्ष में नहीं था, अब अपने सामंतों बुलाकर सम्मति देता है कि आधीरात में बादशाही शिविर पर आक्रमण कर बादशाह को मार दिया जाये, या उसको पलायन के लिये बाध्य किया जावे । पर जाजा की सम्मति पर, कि झाड़-झंखाड़ों से भरे उबड़-खाबड़ पहाड़ों में रात के अन्धेरे में घोड़े दौड़ाकर आक्रमण कर पाना सम्भव नहीं होगा, अत: कोई अन्य ही उपाय करना चाहिए ।

सबने मिलकर राव की अनुमति से कोटा के आगे बरडी परगने के डाकणहेडा (संभवत: बून्दी जिले का बरड़ प्रदेश) में रह रही सिकोतरी को बुलाया ।[2] उसकी सम्मति से वज्रकेलि (विद्युत् संचालित यान) का निर्माण कराया गया । उसमें सामन्तों सहित बैठकर राव हम्मीर ने सुल्तान के शिविर

---

१. सं. १७८४ की प्रति में इस कथा के छंदों का क्रमांक पुन: १ से प्रारम्भ होकर ७७ तक गया है । उसके उपरान्त ही कथा में महमाशाह के उपर्युक्त कथन के उपरान्त उनके द्वारा उठाये गये कदम का वर्णन है.। संभव है यह कथा खेम ने ही जोड़ी हो या किसी और ने । उससे आगे के प्रसंगों के क्रम में ऐसी ही त्रुटि के दर्शन सं. १७८४ की प्रति में है । १७८४ वि की प्रति के आधार पर पं. हरिनारायण जी द्वारा करवाई गई प्रति छंद सं ११९५ की छंद सं. १२२७ में पुनरावृत्ति भी इसके बीच के पद्यों का प्रक्षिप्त होना सिद्ध करता है ।

२. खेम कृत हम्मीरायण के फारसी अनुवाद तारीखे-किला-रणथंभोर में सिकोतरी का प्रसंग नहीं है । यह संभव है कि फारसी अनुवादक की आधार प्रति में यह प्रसंग नहीं रहा हो । बाद में किसी ने जोड़ दिया हो ।

के द्वार पहुंचकर अन्दर प्रवेश किया तो सुल्तान के हाथ-पांवों को कटे हुए देख कर लौट आये, दूसरी बार प्रवेश करने पर उसे देवताओं और पीरों की रक्षा में पाया, और उन्हें लौट आना पड़ा।

(छंद सं. ११६५ के सातत्य में)— महिमाशाह यह सोचकर राव के मन की दुविधा को मिटाने के लिये, अपने घर गया और परिवार के सदस्यों को मारकर जौहर की नई परम्परा को जन्म दिया और हम्मीर को अपने घर पर निमन्त्रित कर उसे सारा दृश्य दिखाकर अपनी भक्ति के प्रति उसको आश्वस्त किया। हम्मीरमहाकाव्य में भी मुहम्मदशाह के द्वारा अपने बाल-बच्चों और स्त्री को असिसात (तलवार के घाट उतारने) की कथा दी गई है,[1] जो खेम की कथा से मेल खाती है।

खेम के अनुसार महिमाशाह के घर से हम्मीर दरबार में लौट आया और रचौंपाल और ख्यौंपाल के परिवार के सदस्यों को मारकर परकोटे से नीचे फिंकवा दिया। उनकी बहु-बेटियों को भीलों और थोरियों में वितरित कर दिया और उनकी समस्त सम्पत्ति लुटवा दी। राजसभा से उठकर वह घर गया और अपने ही हाथों उसने अपने परिवार का वध कर दिया। देवलदे ने तालाब में कूदकर प्राण दे दिये। पारसमणि को तालाब में फेंककर जौहर किया और अपने राजमहल की सम्पत्ति भी लोगों में लुटा दी।

हम्मीर महाकाव्य के अनुसार राव की रानियों, स्त्रियाँ और देवलदे अग्निप्रवेश कर जल मरी। समस्त धन सम्पत्ति पद्मसर में डाल दी गई। जाहड़ की भी समस्त धन-संपत्ति तालाब में डलवाकर उसने अपने भाई वीरम को आदेश देकर जाहड़ का सिर कटवा दिया। जाजा ने भी अपनी स्त्रियों का वधकर उनको श्रद्धांजलि दी।[2] भांडउ व्यास ने भी जौहर का विस्तृत वर्णन किया है। उसका वर्णन हम्मीरकाव्य से मिलता है।

दुर्ग में जौहर की कथा प्रायः सभी काव्यों में थोड़े बहुत अन्तर के अतिरिक्त एक-सी मिलती है। समकालीन इतिहासकार इनका समर्थन करते हैं। अमीरखुसरो भी ऐसा आभास देता है कि उसने स्वयं जौहर की उठती ज्वालाओं को देखा है। मुहम्मदशाह के द्वारा अपने परिवार की स्त्रियों को मारकर किया गया जौहर उसके द्वारा अपनाये गये नये धर्म के अनुकूल कहा जा सकता है अन्यथा इस्लाम को अपनाने से पूर्व वह या उसके पूर्वज भी हिन्दू थे और अग्नि उनका पवित्र देवता।

---

१. हम्मीरमहाकाव्य १३/१५३-१६०
२. —वही— १३/१७३-१८८

नयसुन्दरसूरि के अनुसार राव हम्मीर ने राज्य का मुकुट वीरम के सिर पर रखना चाहा, पर लोकापवाद के भय से उसने स्वीकार नहीं किया।[1] भांडउ के अनुसार हमीर ने वंशरक्षा की दृष्टि से दुर्ग से सुरक्षित निकल जाने का आग्रह किया पर उसने ऐसी संकट की अवस्था में भाई का साथ छोड़ने से इन्कार करते हुए युद्ध करते हुए मरना उचित समझा। हम्मीर ने इसको उचित माना और अपने कुमार को बुलाकर उसका राजतिलक किया और खड्ग हाथ में देते हुए (तलवार बन्दी की रस्म करते हुए) उसे उपदेश दिया कि वह ब्राह्मणों को दान देता रहे, माहेश्वरी महाजन को ही प्रधान नियुक्त करें (संभवतः भांडउ की दृष्टि में रतिपाल और रिणमल तथा कोठारी जाहड़ जैनी थे) तुर्कों को (महिमाशाह आदि के ईमान और को सत्यभक्ति दृष्टि में रखते हुए उन्हें) मान देने और उनको घोड़े और राजपूत योद्धा साथ देकर विदा किया।

नयचन्द्र के अनुसार जाजदेव को राज्य का भार सौंप कर[2] निश्चित होकर नौ वीरों को साथ लेकर रणभूमि में कूद पड़ा।[3] वीरम, सिंह (संभवतः नरसिंह), गंगाधर टाक, राजद, महिमाशाह आदि चार पठान, क्षेत्रसिंह परमार उसके साथ युद्ध कर रहे नौ वीर थे—उन्होंने भयंकर मारकाट कर सैकड़ों तुर्कों को मौत के घाट उतार दिया। महिमासाहि युद्ध में मूर्छित हो गया। हम्मीर ने लाखों योद्धाओं का संहार किया और अंत में यह सोच कर कि कहीं यवन उसे जीते जी पकड़ न ले, उसने स्वयं ही अपना गला काट कर मृत्यु का वरण कर लिया।[4]

भांडउ भी लगभग ऐसा ही वर्णन करता है। हमीर ने युद्ध करने हेतु पैदल ही प्रयाण किया। उसका भाई वीरमदे उसके साथ था। सब को माया मोह से दूर रह कर लक्ष्मी के उपभोग का उपदेश तथा भाट को यह आदेश देते हुए कि वह उसका अच्छी जगह देखकर दाग दिलावे और दोनों मीरों (महमासाह और गाभरू) को कब्र में दफन करावें युद्ध क्षेत्र में उतर गया और खेत रहा। उसके साथ ही जाजा, वीरमदेव, दोनों मीर बंधु, भी युद्ध करते मारे गये।[5]

खेम इन से थोड़ा अलग हट कर वर्णन करता हुआ यहाँ एक नये प्रसंग (कथा) का सृजन करता है। उसके अनुसार हम्मीर ने युद्ध क्षेत्र में जाने से पूर्व

---

१. हम्मीरमहाकाव्यम् -- १३/१६१
२. हम्मीरायण भांडउ - २५७-२६०
३. हम्मीर महाकाव्यम्—१३/१६६-६७
४. —वही— १३/२२६
५. हम्मीरायण भांडउ—२७६-२६४

यज्ञ की सामग्री मंगाई, वेदों के विद्वान् ब्राह्मणों को आमंत्रित कर महादेवजी के मंदिर में हवन करवाया और महादेवजी की अर्चना की। फलस्वरूप यज्ञ कुंड से हनुमान जी के अनुहार और नारी के रूप वाला खड्गधारी देव प्रकट हुआ। उसका नाम गोरल था। उसने राव हम्मीर को आश्वस्त किया कि वह उसके शत्रु का संहार कर देगा। यह कह कर वह दौड़ता हुआ सुल्तान तक पहुंच गया, और उसे मारना चाहा पर महादेव ने गोरल को यह कह कर रोक दिया कि हम्मीर की तपस्या अब पूरी हो गई है। उसकी आयु पूरी होने जा रही है और सुल्तान की रक्षा के लिये ब्रह्मा, विष्णु और मुझ (महादेव) सहित चौबीसों पीर नियुक्त हैं। उसका तुम वध नहीं कर सकोगे। अब तुर्कों के राज्य की स्थापना होने वाली है। हिन्दुओं के राज्य छुटपुट स्थानों पर ही रह पायेंगे। महादेव के वचन सुनकर गोरल देवता लौट गया और राजा को उसका भवितव्य सुना दिया।

राव ने अपनी साथी सामंतों को बुलाकर अपना तप पूर्ण हो जाने की सूचना देकर उन्हें अपने अपने अपने घर लौट जाने का निवेदन किया। उसके सभासदों ने राव को आश्वस्त किया कि वे युद्ध करने को तय्यार हैं। राव ने संतोष व्यक्त किया कि उसने अपना हठ पूरा करने के वचनों का निर्वाह किया है और महादेवजी को दिये गये वचन के अनुसार वह उनको अपना सिर समर्पित करेगा।

यह कह कर उसने खड्ग उठा लिया और सिर काट कर समर्पित करने हेतु सन्नद्ध हो गया। महादेवजी ने उसको समझाया कि वह व्यर्थ ही उन पर हत्या का दोष क्यों थोप रहा है—इतना कष्ट क्यों करता है। उसे जो भी चाहिए वह मांग ले। वे सब कुछ उसको देने को तय्यार हैं। राव ने निवेदन किया कि उसका सब कुछ तो लुट चुका है, अतः मैं आपसे और कौनसी सांसारिक वस्तु मांगू। मुझे तो यही वर दें कि जैसे हठ का निर्वाह मैंने किया है वैसा और कोई न करे और मेरा नाम युगों युगों तक अमर हो जावे। महादेवजी ने उसकी इच्छानुसार उसको वैसा ही आशीर्वाद दिया।

हम्मीर ने सं. १३५२ की श्रावण शुक्ला पंचमी (नागपंचमी) मंगलवार के दिन युद्ध करते हुए वीर गति प्राप्त की।[1] भाँडउ और नयचन्द्र ने युद्ध क्षेत्र में युद्ध करते समय आत्मघात की सूचना दी है। प्रस्तुत काव्य में भी यही बात कहीं गई है, अन्तर यही है कि वह आत्मघात की बात स्वीकार करते हुए भी उसके प्रति श्रद्धा भाव सूचक पद्य में यह बात स्पष्ट नहीं कर पाया फ़ारसी

---

१. हम्मीरायण (खेम) – छंद सं. १२५८

इतिहासकार अमीरखुसरों और एसामी के अनुसार वह युद्ध क्षेत्र में ही वीरगति को प्राप्त हुआ।[1] शिवपुरी के समीप गांधला गांव से मिले शिलालेख में भी हम्मीर की मृत्यु युद्ध करते हुए हुई वर्णित है।[2]

प्रस्तुत काव्य में हम्मीर के निधन की तिथि सं. १३५२ के श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी दी गई है। खेम ने तिथि और वार तो ठीक दिया है, पर संवतोल्लेख में उसने गलती की है। प्रस्तुत काव्य के फारसी अनुवाद में उक्त तिथि और वार के साथ संवत् १३५८ देकर उसमें सुधार किया गया है, या इसकी किसी प्रति में यहीं संवत् रहा होगा कह नहीं सकते। अमीरखुसरों ने खजाइनउलफुतूह में मंगलवार ३ जीकाद ७०० हि. की तिथि हम्मीर की मृत्यु की दी है।[3] नैणसी की ख्यात में भी यही तिथि मिलती है[4] जो १० जुलाई १३०९ ई. आती हैं।

हम्मीरमहाकाव्य में हम्मीर की वीरगति की तिथि का अंकन उसके युद्ध क्षेत्र में उतरने के समय मृत्यु से पूर्व ही कर दिया है। उसके अनुसार वह श्रावण शुक्ला छठ रविवार को स्वर्गस्थ हुआ।[5] स्पष्ट है यह तिथि वास्तविकता से मेल नहीं खाती। अतः डॉ. दशरथ शर्मा ने इसके समाधान स्वरूप इस तिथि को दो दिन बाद हुई युद्ध की समाप्ति की तिथि मान कर किया है। पर यह भी उचित नहीं क्योंकि नयचन्द्र द्वारा दी गई षष्ठी तिथि एक दिन बाद की है, दो दिन बाद की नहीं। वैसे भी नयचन्द्र ने तिथि के साथ वार का अंकन रविवार किया है, जो सर्वथा अशुद्ध है। षष्ठी को बुधवार था, न कि रविवार। भांडउ द्वारा दी गई तिथि १३७१ का तो कोई मूल्य नहीं है। नयचन्द्र के अनुसार हम्मीर की मृत्यु के बाद जाजा दो दिन और युद्ध करता रहा।[6]

खेम के अनुसार हम्मीर की वीरगति के उपरान्त अवशिष्ट सामन्तों ने परस्पर सलाह करके वीरम की सम्मति के अनुसार निर्णय लिया कि प्रतिदिन एक एक योद्धा अपने वीर साथियों के साथ रणक्षेत्र में उतरेगा और शत्रुओं को मार कर ही वीरगति प्राप्त करेगा। उन्होंने जाजा को अपना नेता स्वीकार किया। समस्त प्रजा को प्रभूत सम्पत्ति देकर उन्हें सुरक्षित रूप से दुर्ग से

---

१. फुतूहुस्सलातीन-एसामी (खलजीकालीन भारत-रिजवी) पृ. २००
२. तारीखे किला रणथंभोर—अनु. डॉ. आर के. सक्सेना--पृ. ८०
३. खजाइन-उल-फुतूह— पृ ४१
४. नैणसी की ख्यात भाग २—पृ. ४८३
५. हम्मीरमहाकाव्य – १३/१९६-९७
६. —वही— १४/१८

निकाल कर वांछित स्थानों पर भेज दिया और हम्मीर के समान ही हठ को धारण करके रणथंभोर की कीर्त्ति में वृद्धि की।

सर्वप्रथम महमाशाह अपने साथी मीर गाभरू और बिजलीखाँ सहित अल्ला का नाम लेकर दुर्ग से निकला और भयंकर युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त की। उसके बाद क्रमशः जाजा, वीरमदेव, भोजराज, भोजदेव, नरसिंह, वच्छराज, हरिराज, वीरसिंहदेव, भींव (भीम), कील्हणदेव, वील्हणदेव आदि ने भयंकर मारकाट मचाई। वीरमदेव ने अयुखान, ततारखान, हुसैन खाँ, और जैनखाँ को, भोजदेव ने सुल्तान के भानजे जसपाल तुंवर और उसके भाई तेजपाल तुंवर को मौत के घाट उतार दिया। बाहड़ ने पंवार,(?)खुर्रम खान और गौरीखान का वध किया। नरसिंघ ने भुरैखान, नूरखाँ गौरी और किसी कछवाह वीर को अनेक राजपूत और खानों के साथ मार डाला। वच्छराज ने शेरखान, पीरखान, ताजखान, तथा सुल्तान की सेना के गौरी, यादव और अनेक राजपूत योद्धाओं को मार कर वीरगति पाई। हरिराज, वीरसिंहदेव और भींवजी ने भयंकर मार काट मचाते हुए पेरोजखान सहित अनेक योद्धाओं को चुन चुन कर मौत के घाट उतारा। हरिराज ने किसी कूर्मराज का वध किया। वील्हणदेव ने दुल्हे का वेश धारण कर प्रस्थान किया। उसके साथी बरातीगण सिंधूडा गाते हुए सुल्तान के समीप जा पहुंचे और छलपूर्वक सुल्तान के पांव छूकर उसे मौत के घाट उतारने वाले थे, पर अन्य योद्धाओं के बीच में आ जाने से वह बच गया। जैनखाँ ने वील्हण के लिये गंवार शब्द का प्रयोग किया तो वील्हण ने एक ही प्रहार में उसका सिर अलग कर दिया। उसने कई पंच हजारी सात हजारी वीरों का शिरोच्छेदन किया और अंत में वीरगति पाई।

खेम ने इस अंतिम संघर्ष में मरने वाले हम्मीर के पक्ष के सैकड़ों वीरों के नाम गिनाये हैं, जिनमें प्रत्येक जाति के वीर सम्मिलित हैं। इस प्रकार वह पूरे डेढ वर्ष तक और रणथंभोर में लड़े गये संग्राम का विवरण देता है। अंत में मातृभूमि के रक्षक वीरों से शून्य हुये दुर्ग पर अलाउद्दीन ने संवत् १३५३ के माघ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को अधिकार कर लिया।[1]

फरिश्ता के अनुसार अलाउद्दीन ने युद्धक्षेत्र में घायल अवस्था में पड़े महमाशाह को हाथी के पांव के नीचे कुचलवा कर अच्छी तरह दफनाने की आज्ञा दी।[2] रतिपाल और रतिपाल को चमड़ी उधड़वा कर मार डाला।[3]

---

१. हम्मीरायण—खेम—छंद सं. १२४६
२. खजाइनुल फुतूह —जर्नल इंडियन हिस्ट्री, १६२६ पृ. ३६५
३. हम्मीरमहाकाव्य—१४/२१

दुर्ग पर चढ कर भी शवों की सडांध के कारण वह वहाँ नहीं ठहर सका और इतने बड़े नर संहार से क्लान्त होकर दिल्ली लौट गया और अंत में अपने छोटे भाई के सिर पर राजछत्र रख कर इस्लाम धर्म का पालन करते हुए समुद्र के किनारे जाकर घोड़े सहित समुद्र में प्रवेश कर गया। उसका पता ही नहीं चला कि कहाँ गया। इन्द्रप्रस्थप्रबंध के सातवें सर्ग के श्लोक सं. १७ में इसी घटना को दोहराया गया है—

> अलादीन लग्वदीन समुर्थ साधनार्थं सः
> गतं समुद्रमध्ये पुनः सः न आगतो ॥

इसके दो ही अर्थ हो सकते हैं। एक तो यह कि वह रणथंभोर विजय प्राप्त कर दक्षिण भारत, गुजरात आदि की विजययात्रा पर निकल गया। रणथंभोर की ओर वह पुनः नहीं लौटा। दूसरा यही कि इस असार संसार में एक दिन वह भी मृत्यु को प्राप्त हुआ। आज तक वह वापिस लौट कर नहीं आया।

हम्मीरमहाकाव्य में नयचन्द्र ने हम्मीर की वीरगति के बाद अन्य योद्धाओं के द्वारा दो दिन तक और गढ में लड़ते रहने का उल्लेख किया है पर कवि खेम के अनुसार अवशिष्ट वीरों ने अपने दृढ़ निश्चय और अदम्य साहस का परिचय देते हुए डेढ वर्ष और भी संघर्ष को जारी रखा और जब तक एक भी योद्धा जीवित रहा, शत्रुओं का दुर्ग में प्रवेश नहीं होने दिया। खेम ने जिस उद्देश्य को सामने रख कर इस काव्य की रचना की है—उस उद्देश्य की पूर्ति हम्मीर के बाद भी यहाँ के राजा और प्रजा शताब्दियों तक करती रही हैं। आशा है खेम द्वारा प्रस्तुत हम्मीर के चरित्र से भावी पीढी भी शिक्षा ग्रहण करती रहेगी।

खेमकृत हम्मीरायण में उल्लिखित ऐतिहासिक विवरण अन्य काव्यों में उल्लिखित विवरणों से सत्य के अधिक निकट प्रतीत होते हैं। पृथ्वीराज तृतीय से पूर्व के चौहान राजाओं के राज्याभिषेक से संबंधित संवतों के लेखन में अवश्य बहुत कुछ अशुद्धियां इसमें हैं, पर दूसरे सूत्र भी इससे अछूते नहीं रहे हैं। उन्हीं की तरह यह काव्य भी इतिहास के संशोधन में उपयोगी सिद्ध हो सकता है। रणथंभोर के शासन को संभालने वाले शासकों के राज्यकाल और ऐतिहासिक घटनाओं का विवरण खेम ने ठीक ठीक दिया है। अन्य सूत्रों के आधार पर काल निर्णय नहीं हो पाया है। मुस्लिम इतिहासकारों द्वारा दिये गये उल्लेख ही इतिहास लेखकों के लिए आधार रहे हैं। आशा है प्रस्तुत काव्य भी इसमें सहायक वन सकेगा। यहां सांभर के राजवंश, खेम के द्वारा दिये गये संवतोल्लेख के साथ डॉ. दशरथ शर्मा द्वारा अपनी पुस्तक में दिये गये संवतों का अंकन तुलनात्मक दृष्टि से पाठकों के उपयोग हेतु दिया

जा रहा है। इस ग्रन्थ के परिशिष्ट रूप में भी चौहान राजवंश की सांभर और अजमेर शाखा तथा रणथंभोर शाखाओं की तुलनात्मक तालिका भी दी जा रही है। प्रवंधकोष, बीजोलियां शिलालेख तथा पृथ्वीराजविजय की वंशालियां इस वंशावली से अधिकांश में मिलान खाती है, जबकि नयचन्द्र कृत हम्मीरकाव्य में दी गई वंशावली अव्यवस्थित दिखाई देती है। यह तालिका भी शोधकर्मियों के लिये उपयोगी रहेगी, इसी दृष्टि से दी जा रही है।

खेम कृत हम्मीरायण का दिग्दर्शन करने का प्रयास इस भूमिका लेख में किया गया है। इस काव्य का महत्त्व ऐतिहासिक और साहित्यिक दोनों ही दृष्टियों से हैं, फिर इसके ऐतिहासिक पक्ष की यह विशेपता है कि खेम ने हम्मीर के जीवन चरित को ही इसमें उजागर नहीं किया है, उसने उसमें उसके पूर्वजों की उपलब्धियों का भी प्रारम्भ से दिग्दर्शन कराया है, जो प्रायः अन्यत्र उपलब्ध नहीं होता। साहित्यिक दृष्टि से इस काव्य का महत्त्व प्रमुख रूप से इसके प्रणयन में कवि के द्वारा राजस्थान की एक आंचलिक बोली या उपभाषा को आधार बनाना है। संभवतः यह पहला ही प्रयास है जिसमें किसी आंचलिक बोली के स्वरुप को शिष्ट साहित्य रूप देकर छोटे मोटे नहीं एक वृहद् महाकाव्य का प्रणयन किया गया हो।

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान ने इस ग्रन्थ के महत्त्व को समझा और इसको प्रकाशित करने का निर्णय लिया है। इसके संपादन में पुत्र चि. शरद और सौ. व. बिटिया सुनीता एवं पुत्र वधुओं सौ. व. सुधा और अलका का पूर्ण सहयोग मिला है। ग्रन्थ के संपादन में जिन विद्वानों के ग्रन्थों का उपयोग किया है अथवा जिन मित्रों ने समय समय पर आवश्यक सुझाव या जानकारी दी हैं, उनके प्रति में आभार स्वीकार करता हूं।

समादरणीय पं. गोपालनारायण जी बहुरा का मै विशषरूप से आभारी हूं जिन्होंने अपने संग्रह की प्रति का लाभ इस ग्रन्थ के संपादन में लेने का अवसर दिया है और जब भी उनसे मिलना हुआ अपना आशीर्वाद देकर सदा प्रेरित किया है।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के अधिकारी वर्ग ने रुचि लेकर इसके सुन्दर स्वरूप में प्रकाशन की व्यवस्था की उसकी मुझे प्रसन्नता है। हिमालय प्रिंटर्स को भी धन्यवाद।

—व्रजमोहन जवालिया

सांभर और रणथंभोरी की राजवंशावली

हम्मीरायण (खेम)	ग्रन्य काव्यों के अतिरिक्त नाम	डॉ दशरथ शर्मा द्वारा निर्धारित काल
वसुदेव ६०६-६३१		६०८ (प्रबंधकोष)
सामन्तसिंह ६३१-६३५		
नरघोष ६३५-६५७		
नरदेव ६५१-६६६		
	चन्द्रराज	
	जयपाल चक्री	
अजयराज ६६९-६९८		
विहगराज ६९८-७०९		
विजयदेव ७०९-७२७		
चण्डराज ७२७-७४७		
गोविन्दराज (७४७-७७६)		
दुलंभदेव ७७६-८०७	दुर्लभराज	८५० वि.
वत्सराज ८०७-८१२		
हरसहदेव ८१२-८२७		
	सिंहराज	
	भीम	
दुजनधन(दुर्योधन)८२७-८७८		
	गूर्वाक	७८६-८४३ वि.
	शशिनृप (चन्द्रराज)	९००-९२५ वि.
	गूवाक	९२५-९५० वि.
	चन्दन	९५०-९७५ वि.
	विंध्यराज	१००० वि वि.
	वत्सराज	१०१३ वि.
विजयपाल ८७८-८८५		
वापलदेव (वप्पयराज) ८८५-९११		१०३० वि.
दुलंभदेव (९११-९३२)	दुर्लभराज	१०१५ वि.
गदलेव ९३२-९५०	गुण्ड, गुन्दू, गोविंदराज	१०५६ वि.
भुवपाल ९५०-९६९	वाक्पति	१०५६-१०७५

हम्मीरायण (खेम)	अन्य काव्यों के अतिरिक्त नाम	डॉ. दशरथ शर्मा द्वारा निर्धारित काल
विजहड़देव ६६९-६८४	वीर्यराम, राम	१०७५-१०९५
चामुंड(राजदेव)९८४-१००६		१०६५-११२०
	दुर्लभराज	११२०-११३६
	सिंहट	—
	दूसलदेव	
वीसलदेव १००६-१०२१	विग्रहराज	११३६-११५५
सोमदेव १०२१-१०३६		
श्री राजदेव (पृथ्वीराज) १०३६-१०८६	वृहद पृथ्वीराज	
अनलदेव १०८६-१११५	आल्हण	११६२-११८९
मालगदेव १११५-११३७	अर्णोराज	११८९-१२०८
जगदेव ११३७-११३८		१२०८-१
वीसलदेव ११३८-११५७		१२०८-१२२४
अमरगंगेव ११५७-११९३		
	देवदत्त	
गजदेव ११९३-१२०८		
प्रिथीदेव १२०८-१२२३		
सोमेश्वर १२२३	सोमेश्वर	१२२६-३४
राजदेव (पृथ्वीराज) १२३९	पृथ्वीराज	१२३४-४८
हरिसिंहदेव १२३९-१२५१	हरराज	१२५१
राजदेव (गोविंदराज) १२५१-१२६१	गोविन्दराज	१२५१
	प्रह्लादन	
वाल्हण (१२६१-१२७६)		१२७५
वीरनारायण १२७६-१२८२		१२८२
बाहड़देव १२८२-१३१३	वाग्भट	१२८३-१३१३ वि.
जैतसिंह १३१३-१३३१	जैत्रसिंह	१३१३-११३३९
राव हम्मीर १३३१-१३५२	हम्मीर	१३३९-१३५८ वि.

सिधि श्री गणेशाय नमः ।। श्री सतगुरूभ्यो नमः ।।

।। श्री सरस्वत्यं नमः ।।

।। अथ हमीरायरण लिख्यते ।।

।। श्री सिध कीज्यो ।।

(प्रथम अध्याय)

।। दोहा ।।

प्रथम सौंरू सरस्वती, लागूं[1] गुरु के पाय ।
हम्मीरायरण कथत हूं, अच्छर दयो समझाय ।।१।।
गवरी-सुत के नंद कूं[3] सुमरत है सब लोय ।
बल बुधि बाढै चौगनो, विघन न व्यापै कोय ।।२।।
चत्रभुज के विसतार कौ, पार न पावै कोय ।
लघु दीरघ[4] छिन मैं करें, अैसे समरथ[5] सोय ।।३।।
करता माया खलक मैं, पल मैं देह फलाय ।
क्रौधवंत तासूं[6] हुवै, छिन मैं ले सिमटाय ।।४।।
प्रिथीराज के वंस की, उपमा कहूं दरणाय ।
जेता[7] सुतन हमीर की, जुग[8] जुग नांव रहाय ।।५।।
सांवंत रूप हमीर की, सांवत सुरगहै वात ।
सूरापरण[9] हवै चौगनो, सूरां[10] सदा सुहात ।।६।।

।। सोरठा ।।

सुमरी[11] श्री भगवान, चरग़ वंदन चित मैं धरू[12] ।
लिखूं[13] कथा हमीराएा, विघ्न न को तामै करै ।।७।।

।। दोहा ।।

साको गढ रएाथंभ मैं, (जो)[15]कोन्हौ हमीर चहुवांन ।
ताकौं हूं अब लिखत हूं,[16] करि कैं सरब[17]बखान[18] ।।८।।

श्री गोपालनारायणजी बहुरा के पास स. १७८४ वि. की प्रति का प्रारम्भ- "सिधि श्री गणेशाय नमः ।। श्री सतगुरूभ्यो नमः ।। श्री सरस्वतीजी नम." से होता है । तदुपरान्त 'अथ हमीरायण लिख्यते' के नीचे "श्री सिध कीज्यो" पाठ है ।

पाठान्तर—१. ब प्रति, लागुं, प्रा. प्रति लागु । २. हमीरायरण ३. कुँ. ४. दीर्घं, ५. समर्थं, ६. तासुं ७. जैत ८. जुवो-जुग ९. सुरापरण १०. सुरा ११. सुमरि १२. धरुं १३. लिखु १४. कोई, १५. जो १६. हुं १७. अब १८. बषारण ।

सालवाहन साको कियो, नगरी वहे उजैन[१] ।
सत्रु सिंघारे पलक मैं, कीन्हौं राज सु चैन ।।९।।
हठ तौ राव हमीर को, अर रावन की टेक ।
सत राजा हरचंद को, अरजन बाण अनेक ।।१०।।

।। कवित्त ।।

गवरी नंद आनंद, चंद लिलाट विराजत ।
चत्रभुज कर में फरस, सरस भूषन[२] अंग राजत ।।
कर कमडळ जय माल, लाल बहु वसत्र सुहाई ।
एकदंत मैमंत, गात गहरे जु कहाई ।।
सिंदूर[३] सुगंध सुंडिम[४] चरचि, अर उंदर आसन कीन ।
होहु[५] प्रसन[६] सुधि बुधि धनी, सु कथूं[७] काबि परवीन ।।११।।
सुमरूं[८] सुरसत मात हैं[९] सुमरि[१०] हरिसिध[११] माता ।
आदि रूप धरि आपु, करि आपु घड़ी विधाता[१२] ।।
हंस वाहण कर बिनु, एक करि पुस्तक राखै ।
वस्त्र स्वेत गुण विमल, विमल वाणी मुख भाखै ।।
तुम परसाद रासो चवुं,[१३] देहि सुमति मोही माय ।
कह वरणन[१४] रणथंभ का, हम्मीरायण गुण गाय ।।१२।।

।। दोहा ।।

साईं कूं[१५] समरूं सदा, धार रहूं[१६] मन ध्यान ।
घटि बढि कथा मनुष्य की, (करुं)[१७] दोष न लागै आंन ।।१३।।
अलख परष माया रचो, अवनी हद्‌दु[१८] अपार ।
काहु कीं काहु देत है, चत्र-जुग में बिसतार ।।१४।।

---

१ उजीण २. भुपन ३. सिंदूर ४. सूंडिम ५. होह ६. प्रस्न ७. कथुं
८. समरु ९. हैं १०. सुमरि सुमरि ११. हरिसिधी १२. घड़ी विघाता
१३. चउं १४. वरणन १५. कुं समरुं १६ रहुं १७. करै १८ हुदु ।

।। कवित्त[1] (छप्पै) ।।

प्रथम मान चहुंवांन, मान घरि पुत्र हुवो नंदू ।[2]
नंदु सुतन आनंद, आनंद सुत बच्छि[3] कहंदू ।।
बच्छि[4] सुतन श्री बच्छि[5], एता ग्रेह धणी कहाई ।
श्री बच्छ[6] पुत्र बसुदेव, बध्यो कुल में अधिकाई ।।
जिहिं देवि[7] हेत तन मनि दियो, अनेक भांति सेवा करी ।
कुल देवी प्रसन्न भई, श्रीथल मधि आदि देव आसापुरी[8] ।।१५।।

।। दोहा ।।

आसापुरी सहाय है, मन वंछत फल देत ।
श्रीथल देवि वसुदेव कूं,[9] मनसा करि कै हेत ।।१६।।

।। कवित्त[10] छप्पै ।।

हुई देवी तुष्टमान, चहुवानहैं रिध सिध[11] बकसी ।
हेमकलस कलस च्यारि, अटूट[12] बोह[13] माया निकसी ।।
तुरंग हेकसौपांच, रूप माया करि दीन्ही ।
श्रीथल को दे राज, थापि करि बधती कीन्ही ।।
फागुन बदी तिथि चतुर्दसी, स्योरातरि इतरै दियौ ।
संवत छहसैछह मधे सु, वसुदेव नर राजा कियौ ।।१७।।
श्रीथल दुरंग जिह हेक, राणी[14] एक मालदे नांमा ।
तुरंग हेकसो पांच, देव अंग सोहत जांमा ।।
फिरि देवी कहयो मांगि, जिकै अंछति मैं आवै ।
मन की चाह न राखि, सकल बंछति भर पावै ।।
जिण मुंहमांगि मन की लई, सांमरि लूंण बणाइयौ ।
जे बरस पचीस लौं राज करि, पेट कसट सुं मराइयो[15] ।।१८।।

---

१. क्विवतु २. नंद ३. बछि ४. वंछि ५. श्री बछि ६. श्रीबछ ७. देवि ८ १४ ९. कुं १०. किवत छपै ११. ऋधि सिद्ध १२ अटुट १३. वौह १४. राणि १५ म्रितीयो ।

॥ दूहो ॥[1]

सांभर लूंण बणाइयो, मनसा करि कैं पूर ।
अखै बात रहसी सदा, चंद जहां लग सूर ॥१९॥

॥ कवित-छप्पै ॥[2]

तास पुत्र बइठौ पाट, साबंतसिंह जिण को नांम ।
संवत छह सै इकतीस, चैत्र बदि चौथ हुंगांम ॥[3]
तिंह वर्ष पांच कियो[4] राज, सांवरदे हेकज राणी ।
तुरंग[5] हेकसो बीस, दुरंगहै श्रीथल जाणी ॥
जिकै[6] जुरा-लबध तन मैं रहौ, मन की मोद काढी नहीं ।
कारिज कोई न करि सक्यो, ग्रेह मरण हुवौ[7] तिहीं ॥२०॥

तास सुतन नरघोष, राज बैठो बड दीसा ।
बैसाख मास बदि चौथ, संवत कहि छहसै[8] पैंतीसा ॥
जिहकै राणी हेक, नाम श्रीयादे तेही ।
एक दुरंग श्रीथल, वसै बड़ बासज जेही ॥
तुरंग[9] हेकसो साठि जिहि, (ते) व्रष बाइस लौं राज करि ।
व्याह काल मैं अ्रीतियो,[10] श्रीथल मांही आप घरि[11] ॥२१॥

तास सुतन नरदेव, बैठो ले राज अपावन ।
चैत मास बदि तीज, संवत कहि छहसै[12] सतावन ॥
जिहिकै राणी हेक, चांपलदे नाम कहाई ।
तुरंग श्रीथल हेक, बारहसै तुरंग रहाई ॥
चौदह वरस[13] मास सात जिह, राज करियो परवीन ।
मरण भयो तन कष्ट सूं, (सो)[14] तलफि जीव दीन ॥२२॥

तासु पुत्र अजैदेव, राज बैठो भड़ सत्तर ।
कतिक[15] मास बदि तीज, संवत कहि छहसै[16] गुणहैतर ॥

---

१. दोहा २. किवत ॥ छपै ३. चौथह गांम ४. कीयो ५. त्रुंग ६. जिके
७. हुवों ८. छसै ९. तुगं १०. म्रितीयो ११. घर १२. छसै १३. वर्ष
१४. सो १५. कार्तक १६. छसै ।

जिह कै राणी हेक, अजैदेवी नाम ज बाज्यो ।
श्रीथल दुरंग अजमेर, घोड़ा पंदरासै राज्यो ।।
जिण अठाइस बरस मास नव, लग राज करयो दोउ बीच ।
अजमेर मधे तन कष्ट सूं, इण बिधि पाई मीच ।।२३।।

तास सुतन कहयो नाम,[1] विहगराज देवज जाण्यो ।
सांवण वदि तिथ पंच, संवत (कहे) छहसै[2] इठचाण्यो ।।[3]
जिहकै राणी हेक, विजियादे नाम कहंता ।
दुरंग भया जिहि दोय, श्रीथल अजमेर रहंता ।।
जिहि तुरंग सहंसर दोय भण,[4] ते वर्ष अकईस लौं राजियौ ।
मास पांच उपरांति कहि, ते तन के[5] कष्ट सूं ना जियौ ।।२४।।

तासु सुतन बिजैदेव, राज कै तिलक बयठौ ।
सात सै गुणीस कै साल, कार्तिक सुदि आठै वयठो ।।
जिहि राणी विजियादे हेक, दुरंग जिहि पांच भणीजै ।
श्रीथल नरहर अजमेर, गायण भरड़ौज गिणीजै ।।[6]
जिहि पांच गज तुरंग पचीस सै, हसती प्रभूत[7] हूवा जिकै ।
ते सात मास वर्ष आठ[8] तपि, राणी विष दे मारयो तिकै ।।२५।।

तासु सुतन बैठो राज चंडराजदेव[9] जिंहि[10] को नांम ।
संवत सातसै सताईस, पोस बदि ग्यारस जाम ।।
जिंहि कै राणी चंडकादे हेक, दुरंग पांच हसती कहि दोई ।
तुरंग अकईस सै मूल,[11] बरस[12] बीस राज जिहि[13] होई ।।
मास तीन उपरांति कहि राजा आखेट है चढि गयो ।
जठै जुद्ध भयो सीह सूं.[14] इमस राव मृत भयो ।।२६।।

तास पुत्र गोबिंदराज, बैठो करि टीको ।
संबत सातसै सैंतालीस, पौस बदि बारस नींको ।।

---

१. नांग २. छसै ३. इठाण्यौ ४. तण ५. तनक ६. गीणीजै ७. प्रसूत
८. आठ बर्षं ९. चींडराजदेव १०. जिही ११. मुल १२. वर्ष १३. जिही
१४. सु

जिहि कै राणी हेक, गंगलदे नांम कहंता ।
दुरंग पांच गज हेक, सहंस दोय तुरग कहंता ।।
ते गुणतीस[1] वर्ष मास दस लगि, इतनो राज जिण सज्जियो ।[2]
घाय बडारण पेम सूं, म्रितकाल जिण घर कियौ ।।२७।।

तास पुत्र दुलंभदेव, राज बैठो शुभ[3] नीको ।
संबत सातसै छिहतरि, मारग सुदि चौदस[4] टीको ।।
राणी दुलंभदे हेक, दुरंग पांच सुणि नामा ।
श्रीथल अर अजमेर, सिरोही जुगनीपुर जामा ।।
पौली अर हसती पांच जिहि, तुरंग पैतालीस सै जिहिकै हुवौ ।
जे ब्रष इकतीस मास सात तपि देह कष्ट सूं ग्रेहे मुवौ ।।२८।।

तिंहि कौ बछराजदेव, राज बैठो ले गादी ।
संवत आठसै सात आसोज बदि अष्टमी आदी ।।
तिहिं कै राणी हेक, बाछलदे नाम भणीजै ।
दुरंग आदि ही पांच, पांच गजराज गणीजै ।
जिहीं सहस पांच घोडा हुवा, वर्ष पांच ते राजियौ ।।
मांस च्यार उपरांत[5] तपि सो पांव कष्ट सूं ना जियौ ।।२९।।

तिंहकै हरसहदेव, राज बैठो अभिषेका ।
आठसै बारह[6] कै साल, मारग बदि सातें लेका ।।
राणी हीरादे हेक, दुरंग आठ हाथी दस माता ।
बहतरि सै बीस तुरंग, बिड़द अरिमरदन कहाता ।।
ते साहि सहाबदीन सूं जीति कैं, ल्यायो पचि हैतरि सै गज च्यार ।
ते चौदह ब्रष मास दस तपि, घावां भीनौ ग्रेह मिरत हुयार।।३०।।[7]

तिह कौ दुजनधनदेव,[8] राज बैठो दिन मोटै ।
संबत आठसै सताईस, जेष्ट बदि अष्टमी वोटै ।।

---

१. गुणीस २. सजीयो ३. श्रुभ ४. चौदसु ५. ऊपरांत ६. बाराह ७. च्यार
८. दुजनधन ।

राणी दुरांदे हेक, दुरंग आठ तींह[1] नगरि बयांनो ।
बौंली ही कोट खंडारि, ऊटगर भटनेर पयांनो ।।

पंदरा सहंस आठसे इठासी, तुरंग चौईस हाथी तास सुनी ।
ते साहि नूरदीं सूं[2] जीति करि, तुरी बारह सै ल्यायो फुनी ।।

हसती सोलह ल्याइयो[3] ते वर्ष पचास[4] सात तपि ।
देह कष्ट सूं ग्रेह मुवौ, सुरतांन गहन ते विड़द सपि[5] ।।३१।।

तास पुत्र विजैपाल, राज बैठो दिन नींकै ।
संब्रत आठसै अठैतरि, असाढ बदि चौदसि लीकै ।।

जिहि कै राणी बिजियादे हेक, दुरंग पंदरा गज पचीस ।
तुरंग सहस'र साठि ते, चांबलि उतरिधरा पहुंचीस ।।

जठै राजा भोज सूं जुध करि, जीत जंग घरि आइयो ।
ते ब्रष सात तपि[6] मास नौ, सांभरि आइ म्रित पाइयो ।।३२।।

तिंह को बापलदेव, राज बैठो करी रली ।
आठसै पचासियै[7] साल, असाढ बदि मावस भली ।।

राणी वापलदे हेक, दुरंग पचास हसती कही तीसा ।
एक लाख बीस सहंस तुरंग,[8] ....।।

तिहि गुंटका देवी तुठि,[9] माया रूपी चौसठ तुरंग ज दीन्हा ।
ते मालवा उतरि गयो धारि, विग्रह राजा भोज सूं कीन्हा ।।

जठै जीत प्रधान चौसठि ग्रह्या, बांधि सांभरि कोट चुणाइयो ।
सौह डरपि सत्रु घरि आय मिलि, जे छबीस वर्ष मास ग्यारह
जियो ।।३३।।

तिंह कौ दुतीय दुलंभदे, नांम राज बैठो नौसै ग्यारह ।
सांवण बदि नवै तिथि, राणी दुलंभ दे इक तारह ।।

दुरंग चौदह गज गुणतीस, तुरी पैतालीस हजारा ।
ते चीतोड़ उतरि गावैं वरडि, कुडीछ राव सूं[10] कीन्ह जुझारा ।।

---

१. तौह्‌ २. सुं ३. ल्यधीयां ४. पांच ५. सांठ ६ ते सराह ब्रष तपि
७. पचीसैं ८. तुरी ९. सुं ।

जठै सिंघराम खेतर पडचो, तेईस वर्ष छह मास राजियौ[1] ।
धड़क सत्रां[2] घरि पाड़ि करि, चहुवांण चिहुं दिस बाजियौ[3] ।।३४।।

तिहकौ गदलेब राज बैठो भलदीसा ।
काती वदि तिथि हेक, संबत कहै नौसै बत्तोसा ।।
जिहकै राणी गोलादे हेक, दुरंग इकतालीस कहाया ।
हाथी मदझर बीस, इकावन सहस तुरंग रहाया ।।
जे महमुदसाहि सुरताण गहि, बांधि ल्यायो गजणी सूं जीत[4] ।
जे वर्ष अठारह मास च्यार तपि, घाव भिदयां पाई प्रीत ।।३५।।

तासु सुतन भुवपाल, राज बैठो भल मासा ।
नौं सै पचास के साल, पोस बदि तीज हुलासा ।।
राणी बाल्हादे हेक, दुरंग पैंतालीस कहि ग्रेहै ।
हसती कह्या पचीस, घोड़ा हजार सतरि नौ सैंहै[5] ।।
जे गुजरात उतरि[6] आधो धस्यो, ल्यो[7] राज सोलंषी सूं जुध लड़ी ।
ते बरस गुणीस मास नौ तपि, जहंठे मरियो देवराज पेतड़ी ।३६।

जिहंकौ विजहड़देव राज बैठो ले गादी ।
नौ सै गुणहंतरि कै साल, चैत वदि दोयज सादी ।।
जिहंकै राणी दोय, बिजहड़दे संकरदे नामां ।
अो गहे दुरंग पचीस, हसती हुवा बावनै जामां ।।
जिहिं सहसर सतरि तुरंग गणि, ते गुजरात उतरि लड़बा गयो ।
वो पंदरह[8] वर्ष मास ग्यारह तपि, जिहिं संकरदे राणी विष दयो। ३७।

तासु सुतन राजदेव, राज बैठो करि टीकौ ।
नौसै चौरासैं साल, फागुण बदि सप्तमी नीकौ ।।
रांणी राजलदे हेक, पचास जिण दुरंग कहाया ।
हसती माता साठ, इक्याणुवै[9] सहंस तुरंग रहाया ।।
ते गजणी साहि सूं जीत करि, ल्यायो तुरंग सहंसर पांच ।
जे बाईस बर्ष मास सात तपि, कहुं विष दे मारयो सांच ।।३८।।

---

१. राजीयौ २. सुत्रा ३. बाजीयौ ४. सुं ५. नौ सै ६. ऊतरि ७. दृयौ
८. पंदराह ९. इक्याणवै

तिहकौ वीसलदेव, राज बैठो अरिगंजरण ।
संवत दससै छह भादू[1] बदि दोयज रंजण ।।
जिहि राणी बिसलादे[2] हेक, पचास जिहिं दुरंग रहाया ।
हसती हुआ[3] तरेपन, घोडा एक लाख कहाया ।।
जिहिं गुजरात जीती जाय, करण गुजारो[4] बांधियो ।[5]
अजमेर मधे जो ल्याय, डंड लेय करि छांडियो ।।[6]
जे पंदरह वर्ष मास दस तपि. बाय रोग तन मैं हुवौ ।
बैर पुराणा काढ़ करि, आपण आय सांभरि मुवौं[7] ।।३९।।

तास सुतन सोमदेव राज बैठो इसैं जोगां ।
संबत दससै इकईस, बैसाख सुदि[8] दसैं संजोगा ।
राणो सोमल दे हेक, दुरंग पचास गज बावन जंगा ।।
तुरी इकईस लाख हजार[9] राजाथांन खंडारि दुरंगा ।
जे अस्त्रो[10] लंपट हुवो राजई, ब्राह्मणी संग ब्रह्म सरापियो ।।[11]
ते वर्ष पंदरह मास तीन तपि इमस मरण जिण आपियो ।।४०।।[12]

जिहि को श्री राजदेव, राज बैठो बड़भागी ।
दस सै छतीस कै साल सांवण सुदि दसमी लागी ।।
राणी श्रीयादे हेक, दुरंग साठि बासिठ भया ।
हाथी तुरंग एक लाख दस हजार,[13]सो घघ्घर नदी ऊतरि[14]गया ।
ते सुरताण साहबदी हैं जीति, तुरी सहंस तीन हाथी दस[15]ल्यायो ।
घावां भिळि ग्रिह आवियो,[16] पाटा बांधि डील जुगायो ।
चिगदा सुमार डील मैं लाग्या, बौह उपचार कराइयो[17] ।
ते बरस पचास मास तीन तपि, इण विधि मरण ज्यां पाइयो ।।४१।।

---

१. भांदु २. बिसवादे ३. हूआ ४ गुजरो ५. बांधीयो ६. छांडियो ७. मूवौ
८. शुदि ९. हजारा १०. जेऽ स्त्री ११. मरापियो १२. आपीयो १३. हजारा
१४. उतरी १५. दल १६. आयो १७. करायो ।

तिहको अनलदेव, राज बैठो ले गादी ।
दस सै छयासै[1] साल, चैत्र बदि दसमी आदी ।।
राणी आनलदे हेक, दुरंग हुवा जिहकै असी ।
हसती माता साठ[2], सब दुरंग भरिया बसी ।।
तुरी इक लाख गुणीस सहंस पांचसै, ते गुणतीस वर्ष[3]
मास तीन राजियो ।
आखेट सिंघ सूं जुद्ध करि, ते ग्रेह आयकैं आतियो ।।४२।।

तिहि कै मालगदेव, राज बैठो करि साखति ।
ग्यारहसैं पंदरह कै साल, जेष्ट बदि षष्टंमी राखति ।।
जिहि कै राणी मालगदे हेक, दुरंग असी गइंद पंचासह[4] ।
इक्यांणवैं सहंस आठसै तुरी, अजमेर जंग तुरकां सूं साजह[5] ।।
ज्यहै जीति इतरा लिया,[6] तुरी पंचास हसती दुवै ।
ते वर्ष बाईस मास तीन तपि, घाव भिलि ओतग हुवै ।।४३।।

जिहि कौ जगदेव बैठो राज । ग्यारह सै सैंतीसै साज ।
मास पांच जिहि राज करायो । ते मित्र विषदे मारि गिरायो ।।४४।।

जिह कौ बीसलदेव, राज बैठो करि रळी ।
संवत ग्यारह सै अठतीस, सावण बदि ग्यारस भली ।।
जिह राणी बीसलदे हेक, दुरंग चालीस गज पैंसठ ।
तुरंग जिह असो हजार, अनेक संग्राम जीत्यो ते हठ ।।
जे गुणीस वर्ष मास पांच तपि, गोपाल नदी भड़ उतरियो ।
तें तुरकां सेती जुद्ध करि, खेतर माहि मरतियो ।।४५।।

---

१. छयास्सै २. साथ ३ गुणीस ४. पंचासा ५ जासा ६. लीया ७. त्रितग

छंद स० ४४ भी कवित्त ही रहा होगा जिसका स्वरूप ही बदल गया प्रतीत होता है ।
मूल कवित्त के प्रथम दो चरण निम्नांकित रहे होंगे—

जिहि कौ जगदेव बैठो राज ते मित्र विष दे मारि गिरायो ।
ग्यारह सं सैंतोसै साज, मास पांच जिहि राज करायो ।।४२।।
अन्य चरण अप्राप्त है ।

तिहकौ अमर गंगेव, राज बैठो सुखदाई ।
ग्यारह सै सतावनै साल, सावण बदि दोयज सुहाई ।।
राणीअ मरावतीहेक, दुरंग चौरासी गज सत्तरि ।
इक लाख पंद्राह सहंस तुरंग, राज जुगणीपुर अंतरि ।।
जिकै वर्ष छत्तीस मास छह तपि, तन कष्ठ ऊपन्यो तिकै ।
सुरताण साहिबदीन सूं जुध करि जुगुणीपुर मूवो जिकै ।।४६।।
तास सुतन गजदेव, राज बैठो बड़ भागी ।।
ग्यारह सै तिराणवै साल, सांवण बदि चौदस लागी ।
(ग) जसाव पति हेक दुरंग गुणचास ज चाली ।
घोड़ा सहंसर तीस, ऊतरि घाघर नदि भाली ।।
ते सुरताण समसदीन सूं, जुद्ध करि लडियो खेतर झाड़ि ।
ते पंदरह वर्ष मास छपि, यौं मरियौ बाग उपाडि ।।४७।।
तास पुत्र प्रिथिदेव, राज बैठो ले गादी ।
बारह सै अठोतरै साल, बैसाख बदि पंचमी आदी ।
राणी पेमादे हेक, दुरंग पंचास भला भण ।
हसती हुवा चालीस, घोडा जिह हजार तरेपन ।।
(जे)वर्ष पंदरह मास दोय तपि, इतरा दिवस मही भुगतियो ।
ग्रेह मधे तन कष्ट उठी, सरीर दोष सूं मरतियो ।।४८।।
तास पुत्र देवराज, राज बैठो दिन भलै ।
संवत बारह सै तेईस, भादूं बदि दसमो फलै ।।
रांणी राजलदे हेक, दुरंग चौरासी संजम ।
एकसौ पैंतालीस गजराज, एक लषि पैतालीस सहस तुरंगम ।
अनेक संग्राम जीत्यो जिकै, घाघर नदी ऊतरि करि ।
ते वर्ष सोल्हा मास आठ तपि, गोरी सहाबदीन सूं खेत करि ।।४९।।
जिहि कौ हरसहदेव राज बैठो पाट लेई ।
संवत बारह सै गुनतालोस, बैसाख बदि पड़िवा लेई ।।
राणो हरसहदे हेक, दुरंग जिहकै छह सारा ।
हंसतो नही ज कोय, तुरंग अड़तालीस हजारा ।।

जिह अजमेर मधे जौंहर कियो, सकल अंतेवरि मारि करि ।
जे वर्ष तेरह मास आठ तपि, म्रित भयो हथियार झारि करि ।।५०।।

तास पुत्र राजदेव, राज बैठो द्रुंग पौली ।
बारह सैं इकावनैं साल, मारग सुदि चौथि ले सोली ।।
राणी राजलदे हेक, दुरंग अठतीस सात तेहि हाथी ।
घोड़ा हजार पैंतीस, धंधेड़ खंड सगलौ साथी ।।
जिह अजमेर धरा सांभर तजी, राजथान पौली थयो ।
जिकै वर्ष नव मास च्यार तपि, सु तन कष्ट सूं ग्रेह खप्यो ।।५१।।

तिहकौ बाल्हंदे हेक, राज बैठो उंही धरती ।
संबत बारहसै इकसठि, कातिक बदि ग्यारस बरती ।
जिह राणी बाल्हांदे हेक, दुरंग पांच हाथी नह कोई ।
घोडा हजार पचीस, सिंग्राम तुरकां सूं होई ।
जो जीत्यो जुव दिल्ली फौज सूं, हजार दोय घोडा लिया ।
जे वर्ष सोलह मास च्यार तपि, खेत हाथ करि स्रीतिया ।।५२।।

जिहको बीरनराइणदेव, राज बैठो बळा मांही ।
बारहसै छिहतर कै साल, कातिग बदि तेरस त्यांही ।।
जिह राणी बीरांदे हेक, दुरंग छह हसती को नांही ।
तुरंग भला तीस हजार, वसि वलै गूढौ दे मांही ।।
जठै सुरतांण सहाबदीन सूं, जुद्ध करी सरब अंतेवर जौंहर कियो ।
जे व्रष सात मास छह तपि, आडौबलै खेत स्रीतिया ।।५३।।

तास भाई राजदेव, जिहकौ पुत्र हेक नोको ।
बाहड़देव जिह नाम, जिहनै दियो मिलि टीकौ ।
मालवा देस थी ल्याय, पौली राजथान थपायो ।
बारहसैं बयासैं साल, माह बदि बारस पायो ।।
राणी बीनादे हेक तिह, हसती पांच माता छते ।
घोड़ा सहंस पचीस कहि, दुरंग सात सुण नाम ते ।।५४।।

पौळी और खंडारि मांडू अर उदैगिर जांणी ।
सारी धर कहि गागरौंणि, चाचरणी नवै जु आंणी ।

मिलि कै अडीलो मारि जे, जीति सिंग्राम ऊकस्यो ।
यों पौळि दुरंग हैं छांडि, आडैबळै आय कै बस्यो ।
जिण सांभरि लग धर बसि करो, दिली दलां सूं जीतियौ ।
बरस अकतीस[1] मास हेक तपि, पेट कष्ट सूं ग्रीतियौ ।।५५।।
तास पुत्र जैतसिंह, राज बैठो बळा आगळ ।
तेरह सै तेरह कै साल, असाढ बदि नवमी मंगळ ।।
जिहि कै राणो पांच, पटराणी दोय कहाई ।
पसावती जैतंगदेव[2], दुरंग ते बारह खाई ।।
पदमगढ दोल्यौ हद जिही, सहर सहंस दस ज्यां पर दुवा ।
हसती जींकै को नहीं, तुरंग हजार पंदरा हुवा ।।५६।।
जैतसिंघ चहुवान, गांव जैतपुर बसायो ।
छतीस पौंण कौं बसाय, चौग्रिद गच कोट करायो ।
तेरहसै चौदोतरे[3] साल, राज थाप्यो जिणो जागै ।
करे राज निहचिंत, सत्रु सुणि दूरि सूं भागै ।।
बारह पुत्र जिहकै हुवा, एक सूं एका अधिक ।
जिसड़ो महिमा पुत्र की, जिसड़ा ही दोई विधक ।।५७।।

।। दोहा ।।

बीच बलो चोग्रिद बनी, जहंठै अनड़ पहाड़ ।
डांग आय कोइ न रहै, काटि सकै (नह) झाड़ ।।५८।।

कवित्त-छप्पै

जैत सिंह जेठै रहै, बैठो घरि राज गुदारै ।
चाकर कोई को नहीं, नहीं कोई कै सारै ।।
ते बारह दुरंग हें खाय, और इतवत सूं आवै ।
करै सैर आखेट, आपण होड करावै ।
जैठें और सरीखो को नहीं, दिल्ली साह सरीक[4] है ।
कोई हिंदू अरि राखै नहीं, बंधी बड़ां की लोक हैं ।।५९।।

---

१. अकईस, २. जैतंगदेय, ३. चौडोतरै, ४. सरीखो

॥ दोहा ॥

आदि अंत आडोबळौ, सहर करंता राज ।
ज्यां राख्यो जैत सिंघजी, माथै करि सिरताज ॥६०॥
सहरां राख्यो बांह दे, ज्यां सूं वांकौ लाड ।
ज्यासूं राजा यों कहै, थांको सारी माड ॥६१॥

॥ चौपई ॥

ते करै आखेट चिहुं दिस धावै, जो विधि पावै सो ले आवै ।
क्यूं राजा क्यूं आरणा लेई, हाथ उंचाय ओरां नैं देई ।
इण विधि करत बहोत दिन बीतो, तब सकल साथ को उछल्यो पीत्यौ ।
म्हां करां कुमाई ईनैं दयोवां[1], अै बिलसै म्हां मौहड़ो जोवां ॥६२॥

॥ दूहो ॥

सारै साथ मतो कर्‌यो, एक मतो होय अंग ।
आप आपहैं दोड़िस्यां, छांडो यांको संग ॥६३॥

॥ चौपई ॥

सकल पंच एको करि बोलै, वैं तो रहै राजा कै पोळै ।
इण बिधि क्यों करि बणि है भाई, अै बिलसै म्हां करां कुमाई ॥
अै लोभी आपणौ घरि करइ, यांकै सारै भूखां मरई ।
सरब साथ अैसो बंध कीजै, जैसो यानैं उत्तरि दीजै ॥६४॥

॥ दूहो ॥

जेता हूतां अेक होय, बोल लियो छै भौंण ।
म्हाँ थां गेला दोय छै, सुणि हो रावत रौंण ॥६५॥

॥ कवित्त ॥

जदि रौणों कहै हंकालि, सुणो भाई बात'ज म्हांकी ।
एक पेट परवार, कांई बुद्धि बहकी थांकी ॥

---

१. घोवां

आदि अंति कौ बास, बळा मधि आप रहावां ।
थाँ म्हांकी छौ बांह, म्हां सिरदार कहावां ।।
म्हां का मन मैं क्यौं नहीं, थांकै डील कुभाव ।
जो थां म्हांसूं बिरचस्यो, तो म्हां का सिर पर राव ।।६६।।

।। दूहा ।।

थांका सिर पर राव छै, म्हांकी नहीं गिणंत ।
आप आपहैं दोड़स्याँ, म्हां थां नांहि बणंत ।।६७।।
सारो साथ बिरचियौ, टोली दसां बणाय ।
जे जिह सूं राजो हुवो, ते तिहकी संग जाय ।।६८।।
राल्हौ माल्हौ खींवसी, खींवो अर ख्यौंराज ।
ऊदो दूदो केसलो, हरियो अर हरराज ।।६९।।

।। चौपई ।।

कहूं पाँचसै कहुं दोसै हाल्या, कहुं सहंसर कहुं छहसै चाल्या ।
सहंस ड्योढ रौणां नखै रह्या, जे राजे करि गाढा गह्या ।।
आप आप है दौड़ करावै, दूर देस कौ धन हडि ल्यावै ।
जो पावै जो अमानति आणै, पहली आप राव हैं मानै ।।७०।।

।। दूहो ।।

रौणौं भोणौं साथ ले, पहुंता दुरंग पदम ।
वो बांको बनखंड (है), (जठै) नहीं मांणस की गम ।।७१।।

।। चौपई ।।

तिह तटि एक बरहौ सूतौ, तहंठै रौंणौ आयो रूंतो ।
कीन्ही चोट तोर की तिहकै, भरि मौरां बिचि बैठो जिहंकै ।।
बारहौ चढ्यो रुद्र की घांटी, तहंठै रौणौ पुहंतो मांटी ।
बारहो चढ्यो पदमगढ जाय, सकल साथ जिह लार कराय ।।७२।।

गहरो ताल सीतल जल दीठौ, जिहंकौ नीर ईख सौं मीठौ ।
उहंठै द्रुम सघन बनराय, तहंठै कोकिला कूक कराय ।।
वोयल मोर सोर जहँ करई, मधुकर गुंजै रस मैं भरई ।
चहुं दिस द्रुम लता लपटाई, सब बन फूल बास महकाई ।।७३।।
ले चकमक बैसांदर कीन्ही, काढि करद खाल जहँ छींन्हीं ।
बुगदो जिहाँ पाहरा परि धरियो, पलिट रंगते पीलो पडियो ।।
सबही अचरज रहियो साथ, या कांई बिधि कीन्हीं नाथ ।
काढि करद जठै ओर मिल्हाई. वो परिा हेम होय कैं जाई ।।७४।।
रौंणौ भौंणौं चतर दोय भाइ. पारस लीन्हौ हाथ उंचाई ।
अति आणंद ज्यां मन मैं कीन्हौं, पार ब्रह्म ह्रिदा मैं चीन्हौं ।।
असनान कर्यो अर डंडवत कीन्ही, आदि पुरस यों नवनिध दीन्हीं ।
करि गोठि बौह भांति बणाई, सूरवाल सूं सौंज मंगाई ।।७५।।

।। दूहा ।।

ज्यां दिखरा दिसा देखी हुंती, वहांइ निकस्या जाय ।
जिहं घांटी ऊपरि चढ्या, तहां (ही) निकस्या आय ।।७६।।
ज्यां चौकी जायगें मन मैं कही, जोयो गढवासै राम ।
यो पारस अहंठै लह्यो, तिहंको करस्यां काम ।।७७।।
सुरिग भौंरगा रौंरगौं कहै, यो पायो पारस माल ।
म्हांहै क्यों करि पचि सकै, म्हांकी वोछी खाल ।।७८।।
जदि भौंरगो उठि बोलियो, सुरिग हो रौणां बीर ।
खास्यां खरचस्यां मांरगस्यां, करि माया की भीर ।।७९।।
भौंरगां तूं तो बावलो, बे समझै बात कहाय ।
यो असंख माल क्युं करि दुड़ै, उलटि आपहै खाय ।८०।
थांका मन मैं जो बसै, सो ही कीजै काम ।
आप स्यारगप सोही करो, ज्यौं रहै आपरगी मांम ।।८१।।

म्हांका मन मैं यों बसै, यो पारस सौंप्या राव ।
इह सूं पदमगढ बासस्यां, ज्यौं रहै आपणो नांव ।।८२।।

या बात थां रूड़ी कही, जुग जुग रहसी नांव ।
जो राजपूत मन बदलसी, तो कांई करस्यो दाव ।।८३।।

करस्यां कोल खराखरी, बाचा बंध कराय ।
रांम रूद्र है बीच दे, जदि सौंपाला जाय ।।८४।।

थां भली बिचारी मांहिलै, जो रस आवै बात ।
(जो) राजपूत उलटो हुवै, तो थां खोटो खात ।।८५।।

बरस सात रहतां हुवा, राति दिवस इकठौर ।
म्हांको मन वांह सूं रंज्यो, वां कै नहींज और ।।८६।।

म्हां है कांई पूछिस्यो, म्हां तो थांकी साथ ।
जो थांहै इतबार है, तो सोंपो जायर हाथ ।।८७।।

राजा कदे न उलटसी, म्हांनै छै इतबार ।
खास्यां खरचस्याँ माणस्यां, करि म्हाँको दरबार ।।८८।।

केई एक दिवस बीत्यां पछै, कह्यो राव सूं जाय ।
एकैं ठौर रामति करौ, जहठै चालो राय ।।८९।।

किसी दिस कौंणसी ठौर छै, जिहस्यूं रीझ्या थेह ।
थांकै दाय बैठी जिके, सो पंणी देखां म्हेह ।।९०।।

।। चौपई ।।

वा जायगां म्हां देखी इसी, म्हांका मन मैं चुभकरि बसी ।
तब राजाजी चढि करि चल्यो, साम्हौ मांस मच्छ को मिल्यो ।
राजा सौंणी लियो बुलाई, यो सुकन किसौ छै भाई ।
यो सुकन उत्तम छै राजा, अखै लक्ष्मी पावोला ताजा ।।९१।।

।। दूहो ।।

फागुण मास रु चतुर्दसी, बड़ौ जोग छै आज ।
स्यौ को दरसण कोजिए, बेग चलो महाराज ।।९२।।

॥ चौपई ॥

बन सागर छै उत्तम ठाम, जहठै आज कीजे बिसराम।
उहंठै रजनी जागर कीजे, मन बंछत जीतब फल लीजे॥
जहंठै सरवर गहरा दोय, जो कोई करे और अर पाणी होय।
(जे वड़) म्हां फिरि करि चिहुं दिस देख्यो सोय, एक उतार
दूजौ नहीं कोय ॥९३॥

राजा जहठै गयो चलाई, स्यौ कै थान पहूंता जाई।
गौमुख अस्नान ज कीन्हौं, करी डंडवत परकरमां दीन्हीं।
पाछै गढ परि चढयो ज धाय, आगै रोणौ पाछै राय।
सारो गढ जिणि फिरि करि देख्यौ, जीवण जनम सुफल
करि लेख्यो ॥९४॥

फिरि फिरि राजा देखै ताहि, देखि देखि अर करै सिराह।
राजा अति ही राजी हुवौ, रौणो मन मैं हरखै जुवौ॥
राजा रीझि करै है ताही, म्हां अब लग मू देख्यो नांही।
नां यौं रौणां के चित बैसी, करे सिराह देखी म्हां तैसी ॥९५॥

॥ दूहो ॥

जेता गढ पिरथी मधे, इह सम तुल्य नहिं होय।
जे अहंठै बसती हुवै, पिशुण न गंजै कोय ॥९६॥
सुणि करि रोणौं यों कहै, जो राजो हूवा राव।
करो वास सिध जोग छै, जुग जुग रहसी नांव ॥९७॥
म्हां बिखा सर आइया, थां दे राख्या बांह।
म्हां नखै द्रव्य को है इतो, थांको दीयो खांह ॥९८॥
थां बड़ भागी पुरष छौ, अंछचा पुवै राम।
जो अठै बसती करो, तो घणौ हो ल्यासौं दांम ॥९९॥
रौणां थां रूड़ी कही, यो नहिं थोडौ कांम।
अठै वसती जदि हुवै, जब लाखां लागै दांम ॥१००॥

द्रव्य घणो ही ल्यावस्यौं, जो म्हांने दीजै बांह।
यो गढ बांधूं हेम स्यूं, अर सातूं पीढी खांह ॥१०१॥

थां म्हांहे कांई बूझस्यो, थांकै आवै दाय।
थांहै द्रव्य सूझै इतौ, तो निधड़क बास कराय ॥१०२॥

जो एक कोल म्हासूं करो, जो उलटो नहीं ज राव।
बैठा धरती भुगतस्यो, अर सत्रु लगै सहु पांव ॥१०३॥

थां किसड़ौ कोल म्हां नखै लहौ, सो म्हांनै द्यो समझाय।
किहिं कारण म्है उलटस्यां, सो थां कहो बणाय ॥१०४॥

जो द्यो वाचा तो म्हां कहां, विचि दीजै सिव राम।
थां कोल बोल चूको नहीं, तो असंख्य बतावूं दाम ॥१०५॥

बरस सात रहतां हुवा, राति दिवस इक ठौर।
म्हां को जीव थां मैं बसै, थांकै अजहूं ओर ॥१०६॥

थां धरती थंभ धो छत्रपति, म्हां छां कीड़ा जेम।
थां नाहर म्हां स्याळ छां, करां आसंगो केम ॥१०७॥

जिकै थांरा मन मैं बसै, जे ही बात कहाय्।
जो थां दुबध्या राखस्यो, तो कुंभी नरक पड़ाय ॥१०८॥

जदि रोणौं उठि बोलियो, अब म्हैं कहस्यां सांच।
एक बसत हूं मांगस्यौं, ज्यो थां दीन्ही बाच ॥१०६॥

म्हां थांनै बचन दीन्हौ खरो, कहो सांच अर एह।
जिकौ म्हारा घर महै, थां जाणो सो लेह ॥११०॥

क्युं घर की बसत न मांगस्यूं, मांगू आउठांन।
थांको क्यूं नही बीगड़ै, म्हारौ रहसी मांन ॥१११॥

म्हां तो थांनै सहु दियो, थां यों ही हठ कराय्।
जो अंछ्या हो सो लीजिये, थांकै आवै दाय् ॥११२॥

जो रीभया छो रावजी, अहंठै बासो गांव।
आगिलो नाव मिटाय् कै, नवौ रखावौ नांव ॥११३॥

थां नीकां जाणो त्योंही करो, म्हांनै पूछो कांय ।
थांका मन मैं जो बसै, जिहको राखो नांव ।।११४।।
जद कर जोडि रौंणौ कहै, जो बाचा दीन्हीं छै राव ।
अहंठै बास बसावजे, जे म्हांकै राखो नांव ।।११५।।
भलां भलां राजा कहै, या छै कितियक बात ।
जिणि विधि थै राजी हुवा, तो म्हां सुख पायो गात ।।११६।।

।। चौपई ।।

राजाजी रौंणौं राजी कीन्हों, हुवो हुकम नगारो दीन्हों ।
गढ सूं ऊतरि चलिया धाय, जैतपुर नगर पहूंता जाय ।
जदि राजा बैठो दरबार, पुत्र एक हुवो तिहिं बार ।
सकल साथ हें विदा दीन्ही, रौणो राजा बातां कीन्हीं ।।११७।।

।। दूहो ।।

हंमीर भलां ही जनमियो, पारस आयो हाथ ।
जैतसिंघ चहुवांण कूं, अब तूठो जगनाथ ।।११८।।
राम रु द्रहे बीच दे, बीच दिया नव-नाथ ।
बोल-बचन दीढाय करि, (जदि) पारस दीनो हाथ ।।११९।।
पारस घर मैं आइयो, मन अति भयो उछाह ।
इत हमीर (सो) जनमियो, दो विध उपना लाह ।।१२०।।
हुवा बधावा अति घणा, घर घर मंगलाचार ।
दान पुन्नि हुवैं चउगणां, बंधै बंदनवार ।।१२१।।
राजा अति ही आणंदियो, मन मैं उपनौ छोह ।
रौंणा सेतीं यों कहै, मंगावो मण दस लोह ।।१२२।।
मण दस लोह मंगाय कै, ले देखो इतबार ।
जे परसत ही कंचन हुवो, होत न लागी बार ।।१२३।।

जदि राजा यौं उठि बोलियौ, यो थे ही ले जाव।
...., ...॥१२४॥*
करि जोडी रोणौं कहै, यो म्हां ही का घर मांहि।
करि अरज ले जायस्यौं, जदि घरि होसी चाह॥१२५॥

॥ चौपई ॥

पहिलो तो थां सौण मनावो, मण दोय च्यारां ले जावो।
अर एक कह्यो यो म्हांकौ कीजै, देस देस नै कागज दीजै।
सुरतां पंडितां लेउ बुलाई, षट दरसण हैं दान दिवाई।
पहलै नीत पुन्य की धरस्यो, पीछै थां कहस्यों सो करिस्यों॥१२६॥

जदि रोणो लीन्हौं साथ बुलाई, हूं तो भंडार द्रव दियो खुलाई।
सरब है रोक रुपइया दीन्हां, देय दिलासा राजी कीन्हां।
सरब लोगां सूं कहचो बुलाई, एक काम थां कीज्यो भाई।
जैठै तैठै बेगा जावो, जो बासै जिहनै खींच दिवावो॥१२७॥

चिहुं दिस लोग बिदा करि दीन्हां, देस देस हैं कागल दीन्हां।
जो दूर देसंतर पहूंचा सोई, बुलाय लोगां सूं कहै ज जोई।
को कै राजा जग्ग कराई, छहुं दरसण स्यूं कह्यो बुलाई।
रजपूत ठाकर जो बास करावै, धरती घोड़ा गांव दिवावै॥१२८॥

जो दूर दिसंतर पहुंता जाई, लोग अपूरब पूछै आई।
कुण राजा कौठै को बासी, कोठै वास अब नवो बसासी।
जैतसिंह चहुवाण नरेसा, आडो बळो छै तिहकौ देसा।
नवो गढ इक और बसावै, जो बासै तिहनै बीच दिवावै॥१२९॥

बंस छतीस उलटि करि धाई, भोजन दीजै त्यांकै तांई।
बड़ा बड़ा ठकुराला आया, राजा नेती आंणि मिलाया।
और पौंगि पणि आवै जोई, जो विधि मांगै दीजै सोई।
रच्यो आरंभ बड़ा जग को लोई, ऊठै दांम गिणाती नहि कोई॥१३०॥

---

*१२४ के छूटी अर्धाली में उस धन को धनहीन लोगों में बांट देने का प्रस्ताव रखा गया है। (तारीखे क़िला रणथंभोर-पत्र 19)

राव सभा मधि बैठो आई, सुरता पंडिता लिया बुलाई ।
पुरातम सूं कह्यो था आघा आवो, बनसागर की बात सुणावो ।
अैठै कोण रहै छा आगैं, पुरातम खेडौ दीसै जागैं ।
..................और पदम गढ नाम क्यों करि बागै ।।१३१।।*

जदि सुरतां पंडितां बोल्या एहु, थां सुणौ बात राजा चित देहु ।
अैठैं रह्या रखीश्वर राई, अहंठै रांम उधारया पाई ।
अहंठैं रुद्र आप रहायो, अैठै हणुमांन पणि आयो ।
अहंठै लछमण जी आया, कुसि ल्योकुसि अहंठै ही जाया ।।१३२।।

।। दूहो ।।

राम किसै दिन आइया, कदि लछमण हनुमान ।
कुसि ल्यो कुसि क्यूं जनमिया, जिहंकौ कह्यो बखाण ।।१३३।।

।। चौपई ।।

सुणो महाराज सीता जदि हड़ी, जदि राम आयो तिह घड़ी ।
त्रिबैणी तटि बैठा आई, तिहतैं नाम रामेश्वर पाई ।
जिह हणुमांन सूं इण बिध कही, थां सीता हें करि आवो सही ।
लंका फिरि हणुमान उल्टो आयो, जिंहं सकल राम हें किसौ
सुणायो ।।१३४।।

।। दूहो ।।

हणुमांन पढायो सीत पै, करीं खबरि वहें जाय ।
बाग नौलखै देखि कैं, उलटो आयो धाय ।।१३५।।
हनुमान जी राम सूं, आण कह्यो बिरतंत ।
वहै दिन अैठै आइया, करबा लागौ मंत ।।१३६।।

।। चौपई ।।

जबै रामजी अैसैं भणी, किसी खस छै लंका बणी ।

---

*१३१ बनसागर नाम क्यों पड़ा—रिक्त स्थान में होना चाहिए ।

जदां रामजी इण विध रढियो, हनुमांन बनसागर चढियो ।
या देखो लंका की बांणी, अैंठै पर्वत ऊंठै पाणीं ।
जिह दिन रामजी अहंठै आयो, सो राजा सूं कहि समझायो ।।१३७।।

।। दूहो ।।

राम अयोध्या जाय् करि, सुरनर लिया बुलाय् ।
समंदर सिला तिराय कैं, लंका मारी जाय ।।१३८।।

।। चौपई ।।

अैंठा सूं जब गयो बहोडी, षसट मास लौं सेन्या जोड़ी ।
समद बांधि लंका तटि गयो, जहंठै जुध अपरबल भयो ।
रावण मारि कटुंब सिंघारयो, लंका बकसी वभीषण तारयो ।
सीतां लेय अजोध्या आयो, जदि एक कुष्टी कु बचन सुणायो ।।१३९।।

।। दूहो ।।

रांवण लंका मारि कै, दियो भभीछण राज ।
आप अजोध्या आइया, सुरनर सूं महाराज ।।१४०।।

।। चौपई ।।

राघो लछमंण लियौ बुलाई, कह्यो एक कांम थां करो मो भाई ।
थां तो म्हांकौ कह्यो न पेलो, सीता हैं जाय् बनखंड मेल्हौ ।
सुणत लछमण गह भरि लीन्हौं, यो तो मतो थां कूडौ कीन्हौं ।
हूं तो थांको अग्याकारी, थां कहस्यो सो करिस्यु सारी ।।१४१।।

।। दूहो ।।

रांम कहै लछमण सुणो, फेरि न काढौ बात ।
सीतां बन मैं मेल्हि कैं, फिर आवो परभात ।।१४२।।

।। चौपई ।।

राम कहै यौ ही या रचनां, फेरि न काढौ औहटै वचनां ।
हूं न कहस्यौं तो कहसी कौंन, अब क्यौं साध्यां बरगहैं मौंन ।
या तो थां जिय कुबुधि बिचारी, भूप तजै क्यौं घर की नारी ।
इसड़ौ कूड कांम नहि कीजै, कुबुधि मतौ क्यूं जीव धरीजै ।।१४३।।
फेरि रामजी बोल्या एहूं. म्हांकौ बचन ठेलि जिन देहूं ।
थां आगै बचन न मेटचो कबहूं, तिंह कारन मैं कहियो अब हूं ।
जब बोले लछमण नवरग कराई, यो तौ हुकम करचो नहि जाई ।
वैसी करि थां इसी बिचारी, तौ कहि कारग लंका थां भारी ।।१४४।।
जबैं राम खिजि बोल्यो तीजैं, अब क्यौं म्हांकौ कह्यो न कीजै ।
आगैं म्हांकौ कह्यो न लोटचौ, अब तौ उलटौ बचन करि कोप्यौ ।
अब थारै मन और हि आई, फिरि फिरि अहोंटी बात कहाई ।
तैं हठबाद मांडचो इंह ठौर, थां दूरा हो म्हां भेजां और ।।१४५।।
फ़ेर न बोल्यो लछमरग राई, हाथ जोड करि अरज कराई ।
जैसो हुकम करो थां राम, तहठै करां यांको बिसराम ।
जहठै बनखंड ऊजड़ होई, आसि प सि बसती नहीं कोई ।
जहठै सीतां मेल्हौ जाय, थां फिर आवौ बेगा धाय ।।१४६।।
लछमण लीन्हौं रथ मंगाई, जिह मधि सीतां बैठी आई ।
जे सारा बनखंड फिर फिर देखै, सारै ठौर बसती ही पेखै ।
चाल्यो चाल्यो जब अहठै आयो, यो बन सारो ऊजड़ पायो ।
इत धंधेड़ो इत नागरचाल, सरव सूंनो ऊजड़ असराल ।।१४७।।
इक बनखंड अर डूंगर मांही, यो अनड़ परबत ऊंचौ आही ।
जहठै लछमरग रथ्थ रखायो, आप चल्यो बनसागर आयो ।
जहठै रिषोश्वर तप कराई, गहरै पाणी कुंड भराई ।
जहठै सीता राखी आंरग, लछमरग गयो अजोध्या ठांरग ।।१४८।।
ल्यौ कुसि पुत्र सीतां कै भया, जिह परिरिषीश्वर राखै दया ।
जे हुवा बरस द्वादस मांही, दोऊ बीर अहेड़ै जांही ।

दोऊ हि भया़ बड़ा बलबंड, त्यौं त्यौं करी राज की मंड ।
ल्यौ तो जाय बली गांव बसायौं, कुस जीनैं कुसतळै आयौ ॥१४६॥

॥ दूहो ॥

एक कुंड ई बली मधै, जहठै रहै ज सीत ।
कुसि ल्योकुसि जोधा हुवा, दोन्यों ही भैभीत ॥१५०॥

॥ इति श्री प्रथमोऽध्याय ॥

(द्वितीय अध्याय)

।। चौपई ।।

ज्यांकै पाछै पद्म ऋषि रहियो, जिणको पहरों बोहतैं भइयो ।
जिहकी बात सुणीजो राई, तिंहकी महिमा कह्यी न जाई ।
जिणकै हूंतो पारस पाहंण, तिणकै रही न किहीं की चाहन ।
जिह पदम इकताल बंधायो, तिंह का व्याहु कौ ठठु करायो ।।१५१।।

जे लछमी सूं बहोत ही धापे, जिहनैं बहुतैं बडो जग थापे ।
अस्ट दिसा मैं खबर कराई, हुंता रिषीश्वर सकल बुलाई ।
देस देस का राजा आया, जुडिया दळ ज्यों लंका छाया ।
ज्याहै इंछ्या भोजन दीजै, फिर व्यालू की बूझा कीजै ।।१५२।

प्रात ऋषीश्वर सनान कराई, दिन कैं दिन आवा अर जाई ।
उहंठै पाणी बंध्यो पावां, म्हांकै पांणी बहता सूं न्हावां ।
सब ऋषि इसडो मतो उपावां, ईं पाणो सूं उंहठै न्हावां ।
.... ।।१५३

यौ ऋषि पुत्री बरणावती माता, लघु गंगा की आप विधाता ।
सो फल गंगा को न्हायां होई, जो फल न्हायां बनासको सोई ।
इहकौ नीर ले काढां उहंठै, कवला नांम ऋषीश्वर जहठै ।
जब आरोध ऋषीश्वरां कीन्हों, तुरत बरणावती दरसण दीन्हों ।।१५।।

जब सलिता बोली बिहसाई, मो बड़ भाग ऋष दर्शन पाई ।
हूं किह कारण सौंरो देवा, सो मोसूं कहौ बात को भेवा ।
जब ऋषीश्वर ब्रोल कहाई, म्हां इह कारण सौंरी माई ।
कोस पांच बनसागर ठांम, पद्म ऋषी को जहठै बिसरांम ।।१५५।।

जहंठै वांनैं जग्य करचो छै, अनंत ऋषीश्वर आंणि भरचो छै ।
रहैं को क्या आया तिंह ठांम, को दिन छै म्हांकौ विसरांम ।
उहंठै परिण पांणी ठांवां ढांवां, थांहै त्याग उहठै क्यौं न्हांवां ।
नित कै नित आयो नही जाय, होय वधीर बहोत दुख पाय ।।१५६।।

---

१५३ रिक्त पक्ति में कवाल (कृतमाल या कपाल) ऋषि का उल्लेख रहा होगा ।

जे म्हां पर भात भया करावो, एक धार थां उंहठै पठावो।
मुनि (कर) सलिता बचन कहाई, थां हुकम करो जिह ठांम बहाई।
नहीतर धार पांच ले जावो, जिहिं सूं रिषदेवां सुख पावो।
कहै ऋषीश्वर उहंठै नीकाळौ, बनसागर की जड़ां पखाळौ ।।१५७।।

जहंठै धार पांच बहाई, तिहंतै पंचतीर्थी कहाई।
जहंठै ऋषीश्वर अति सुख पायो, हरखि हरखि हरिकौ गुण गायो।
षट्-दरसन बोह आणंद कीन्हो, राजा राणा अति सुख लीन्हो।
रच्यो होम अग्यारी भई, इंदरपुरी लौं बासनां गई ।।१५८।।

सुणि राजा जग पूरण कीयो, पदम ऋषीश्वर अति सुख लीयो।
ऋषि राजा पहरावणी कीन्ही, सब काहू हैं आग्या दीन्ही।
जदि ऋषि राजा इक मतो बिचारयो, इह बन नाम और ही धारयो।
सारां बचन एक यों भाखो, इहकौ नाम पदमगढ राखौ ।।१५९।।

तब तैं नाम पदमगढ बाज्यो, जहठै ऋषीश्वर पदम बिराज्यो।
ऋषि कौ सिख इक राजा आहीं, ऋषीश्वर मया करै अति ताहीं।
रैनि दिनां ते सेवा करई, भाव-भगति हिरदा मैं धरई।
जिहिं राजा हैं पारस दीन्हो, ते पदमगढ कौ राजा कीन्हौ ।।१६०।।

।। दूहो ।।

धरी छत्र बैठो अटल, भैरूंसेण तिह नाम।
सभा भोज जिम दीपई, करै विक्रम ज्यौं नाम ।।१६१।।
भैरूंसेण बडै बखत, करै पदमगढ राज।
पारस पदम समपियो, अनंत लच्छि कौ साज ।।१६२।।

।। चौपई ।।

जिहंकौ राज बरण कौ सकै, चिंहु दिस लीन्हों धरिकै धकै।
जिहंकै उजीर च्यारि सै सही, सौंप्यो राज आपणौं जही।
राजा कै राणी सातसै, करै बिलास द्यौंस अर रात।
सौह राणी राजा की बेटी, त्यां पर और मंगाई चेटी ।।१६३।।

॥ दूहो ॥

ते राजा कामी हुवो, रहै कांम कै संग ।
रहै अंध होंय काम मैं, दोय राज मैं भंग ॥१६४॥

॥ चौपई ॥

ते राजा अति कामी भयो, काम वस तीको घर गयो ।
कामी रैन दिन काम निहारै, कामी कदै नहि राम संभारै ।
भली बुरीं कांमी न बिचारी, कांमी तकै बिरानी नारी ।
इह काम को कौन बिगोयो, इह काम लंकापति खोयो ॥१६५॥
और अपूरब सुणो नरेसा, समंद परैं भंको छै देसा ।
तहंठै मतो चलायो और, तिंहसूं करै पैगंबर दौर ।
तहंठै गौ विध्वंसण लाग्या, देव ऋषीश्वर सोह उठि भाग्या ।
तहंठै एक देवी को ठांम, सैदेही मंकेश्वरी नांम ॥१६६॥
वो आदि अंति देवी की जांकै, तिंह की पूजा अधिकी लागैं ।
वा पीरां नैं नहीं सुहाई, तिह सूं नित का छेड़ कराई ।
तिंह सूं करै पैगंबर बोली, जोगणि कहि कहि करै ढिठोली ।
देवता पहरौ घटि कैं गयो, पैगंबर पहरो चढ़तो भयो ॥१६७॥
ज्यांसूं देवी उठि बोली ऐसें, थां म्हाँ की छेड़ करो छो कैसे ।
हूँ अैठा की आद भवानी, थां तुरकां जोगणि करि जाणी ।
जो धारे अहंकार मन मांही, बहौत रोस करि बोली त्यांही ।
कह्यो हूँ थाँ पीराँ सगळा हे खोऊं, तौ हूं देवी नाँव न होऊं ॥१६८॥

॥ दूहो ॥

जब पैगंबर कोपियो, लियै करद कर जोर ।
मैं मारूंगा जीव सूं, करतो है क्या सोर ॥१६९॥

॥ चौपई ॥

जब पैगंबर उठयो रिसाई, तुझै झकूं मारूं दुःख दिखाई ।
तव देवी उठि बोली गाज, म्हां थां बाद मंडैलो आज ।

जो जीतै सो अैहठै रहाई, हारचो दीजे देस कढाई ।
(जब) दोन्यूं बाद मंडचो अति भारी, पैगंबर जीत्यो देबी हारी ।।१७०।।

।। दूहो ।।

तपस्या जिह की चौगणी, नवै जगत जहिं आय ।
हीण तपस्या होत है, बात न ल्यावै दाय ।।१७१।।

।। चौपई ।।

जिहकी तपस्या घटती भई, तिह थै मति भिष्ट ह्वै गई ।
जिह को राज उतरितो होई, तिह कौ उपर करै न कोई ।
जिह की बात न कोई मांनै, तिह सूं रहै परमेश्वर कांनै ।
घटै तप कहुं लहै न ठांउ, उतरचो सहणौ मरदक नांउं ।।१७२।।
तिह की तपस्या प्रगटै आय, तिहनैं रहै छै रांम सहाय ।
जिह कौ राज चढंतौ होई, तिहसूं भलौ कहै सब कोई ।
परमेश्वरजी वह कूं दीन्हीं, ते दूरी होय कूंणि की कीन्ही ।
करिवा मते स करि है सौई, राति दिवस बूझै नहिं कोई ।।१७३।।

।। दूहो ।।

देवी मन मैं सोचई, करवा लागी मंत ।
अैंठा सूं उठि चालिए, याको जोर अनंत ।।१७४।।

।। चौपई ।।

जब बैठ बिवांण देवी उठाणी, सलेमांन चढियो तुरंग पलाणी ।
आगैं देवी भागी जावै, पाछै पैगंबर लागो आवै ।
सोह राजा देख्या तिह जोय, तिहनै राखि सकै नहिं कोय ।
जो फिरत फिरत पदमगढ आई, राजा सैंती आय मिलाई ।।१७५।।

।। दूहो ।।

किस्सो राजा सूं सब कह्यो, उतपति ढेढि बखाणि ।
कह्यो मोनै अैहठै राखि जै, हूं थां है आई जांणि ।।१७६।।

पैगंबर मक्का महैं, खोसि लियो छै राज ।
वां सूं तो जोती नहीं, तिंह सूं आई भाज ।।१७७।।
वो म्हारै पीछै पड़यो, अब आसी इण ठौड़ ।
वो अजमति राखै घणी, करै पैगंबर दौड़ ।।१७८।।
राजा देवी सूं कहै, थां जिन सांको मात ।
अनंत पीर आवै अठै, सी वांसूं मांसूं बात ।।१७९।।
थां जिन सांको जीव मैं, वो तो एक मरदूद ।
जो सारा पैगंबर आवसी, हूं त्यांनै करूं गरद्द ।।१८०।।
सुणि राजा देवी कहै, थां मति जांणौ और ।
यो पंथ तो दूजो हुवौ, तिंह सूं वांकौ दौर ।।१८१।।
सुणि राजा देवी कहै, कछु मन मैं मनी न लाय ।
जिह कै जीव मनी बसै, तिंह सूं राम रिसाय ।।१८२।।
देवी सूं राजा कहै, होतिब रच्यो स होय ।
तेतीसां सूं म्हां लडां, ये पंथ कही ए दोय ।।१८३।।

।। चौपई ।।

इती कहत पैगंमर आयो, पोल्यां सेती आय बतलायो ।
राजा सैं तुम कहो जुहार, पैगंमर ऊभौ पौलि-दुवार ।
मेरा कहियो एक संदेसा, करो मति कोई और अंदेसा ।
चोर एक जो आया हमारा, जिस–हैं दीजै बेग निकारा ।।१८४।।
जदि पौलिदार राजा पैं आयो, कर जोड़ि कै नवण करायो ।
को पैगंमर नांव कहै पै, जीनै हूं भेज्यो छूं थांपै ।
वो ऊभो छै पौलि दुवार, जिहनैं थांसूं कह्यो जुहार ।
और वचन इक इसौ कहाई, चोर हमारा देह पठाई ।।१८५।।

।। दूहो ।।

सुनि करि राजा यौं, कहै, थां जिन ल्यावो भेर ।
कितौ साथ किसौ आप छै, सो थां देखो फेर ।।१८६।।

जदि पोल्यो विनती करै, म्हां सौह देख्यो तारि ।
आप मरद छै एकलौ, तखत गहै मर्द च्यारि ।।१८७।।
उंहसूं जाय थां यों कहो, यो चोर किसा को राजि ।
थांनैं यो जीती नहीं, जब आई छै भाजि ।।१८८।।

।। चौपई ।।

यों म्हां हैं ताकि म्हां कै गढि आई, सो म्हांपै क्यों दीन्हीं जाई ।
और बिध जौ सारी कीजै, सरिणैं आयो काढि न दीजै ।
थां फिर जावो आपणैं ठांई, विरण आई क्यौं मरौ गुसांई ।
ईंनै थांकौ कांई बिगाड्यो, हार्यो ते परमेश्वर मार्यो ।।१८९।।
जबै पौळियो उलटो गयो, जाय मरद पैं ठाढौ भयो ।
म्हां थांकी बात कही सौह जाय, जब राजा बोल्यो बहसाय ।
राजा कहै किसा कौ चोर, इहसूं थां पहुंचावो जोर ।
इहैं तो थां कदे न पावो, थां अैठां सूं बेगा जावो ।।१९०।।

।। दूहो ।।

पैगंमर जब कोपीयो, राजा सुं कहौ तुम जाय ।
चौर हमारा बेग द्यो, नहींतर मारूं सहु धाय ।।१९१।।

।। चौपई ।।

सुरगत पैगंमर उठ्यो रिसाई, तुम फेर कहौ राजा सुं जाई ।
जो तुम द्यो नहीं चोर हंमारा, तौ आवौ बेग दे मांड़ो अखारा ।
नहीं तर घर मैं मारूं आय, उसि जोगरिग कूं लेवुं छिनाय ।
.... ।।१९२।।
जठै वसीठ गयो फिर धाई, राजा पासि पहूंतो जाई ।
कहै वहतो बहोत ही रोस कराई, सो म्हांपैं थां सूं कह्यो न जाई ।
वह तो कहै छै जोगरणी दीजै, नहींतर साह्यो जुध को कीजै ।
वह तो बकि बकि बात करै छै, आपका जोम मैं जल्यो मरै छैं ।।१९३।।

॥ दूहो ॥

क्रोधवंत राजा हूवो, कोकि लिया सौह राव ।
पैगंमर सेती यौं कहौ, बेगा फिर क्यौं न जाव ॥१९४॥
जदि राजा पर जल्यो, लीन्हौं साथ बुलाय ।
जौ पौल्यां सूं जुध करै, तीनैं द्योह उठाय ॥१९५॥
वो नीकां नीकां जाय छै, तौ थां द्योह उठाय ।
वो हथीयार साम्हौं गहै, तो मारौं वहनै धाय ॥१९६॥

॥ चौपई ॥

सुणत प्रमांण साथ उठि धायो, ज्यां जाय पैगंमर यौं वतळायो ।
जौ तौ सूधी बात न करई, नैंक न संक्या मन मैं धरई ।
जब खिवज कैं रजपूत हंकारे, अब तूं नीकां नीकां जारे ।
म्हां तो भलां कहां छा तोनैं, नहीं तर मारां हुकम छै मोनैं ॥१९७॥

॥ दूहो ॥

पैगंमर खडग उचाय कैं, मारि लियो सब साथ ।
भाग्यो सो ही ऊबरचो, दे दे आड़ा हाथ ॥१९८॥

॥ चौपई ॥

सुणत पैगंमर उठचौ परजाळी, काढि खडग जिह कै सिर राळी ।
दोय च्यार मार लीना छै तब ही, ओर बच्या सो भाग्या सब ही ।
वै राजा नखि जाय पुकारचा, महाराज वैं तो ऊंहीं मारचा ।
म्हां वँह लोह घणो ही बाग्यो, वंहो कै डोल न टांचौ लाग्यो ॥१९९॥
राजा कोकि नंकीब सुं कही, जो वे अब आवै ते तौ सहो ।
दौड़ि नकीब जब कीयौ हंकारो, सुणत लोग मिली आयो सारो ।
बड़ा ठाकुर दस लिया बुलाई, त्यां सुं बात कही समझाई ।
जावो बेग दे करो न ढील, उणनैं मारचो जाय डील ॥२००॥

॥ दूहो ॥

मूंछां बळ करि चालिया, सौह सांवंत मिलि धाय ।
सिल्ह सुरंगा साजि कै, कीन्हौं जुद्ध अघाय ॥२०१॥

॥ चौपई ॥

दे मूंछां बळ ठाकुर हाल्या, ज्यां की साथि केई नर चाल्या ।
जो जात प्रमाण भेळा ह्वै गया, त्यां सूं लोह अपरबळ भया ।
ए सहंस एक हैं मारैं, तौ पैगंमर पावन टारैं ।
तरवारि कटारी बहैं अपार, उहंकैं अंग न भिदहै सार ॥२०२॥

॥ दूहो ॥

अंग सार लागै नहीं, इहनैं मारै कोय ।
पुरातम जोसी बांचता, यो पंथ दूजो होय ॥२०३॥

॥ चौपई ॥

मरद का बहैं इण विधि झटका, जिह कै मारे तिहंका दोइ बटका ।
तौ पणि रजपूत अघेरा धावै, वो होय नहीं पाछा पाछैं पावै ।
यौं कल हुवै अचंभो होय, उहंकै घाव भिदै नहीं कोय ।
रहचक मातो जोर घणौं ही, च्यार पहोर दिन हुई रणोही ॥२०४॥

॥ दूहो ॥

च्यार पहर रहचक रह्यो, सांवंत पडिया खेत ।
पैगंमर ऊभौ वुठै, पाछा पग नहीं देत ॥२०५॥

वो मरद उहंठै खड़ौ, देह न पाछा पाव ।
राति पड़ी क्युं करि लड़ां, कहौ राजा सूं जाव ॥२०६॥

ज्यां राजा सेती जाय कैं, मांडि कह्यो विरतंत ।
राव प्रधांन बुलाय कैं, करवा लाग्यो मंत ॥२०७॥

॥ चौपई ॥

राजा कहै परधानां सेती, या तो थोड़ी राड़ि ह्वै गई एती ।
कहै राति पड़ी अब क्यान्हैं भूझौ, वो छै कौंण खोजना बूझौ ।
देव दाणौं क रखीश्वर कोई, जिह कैं अंग न चिगदौ होई ।
जब परधानां अरज कराई, महाराज सुणो चित लाई ॥२०८॥
आगै पुरातम पुराण बांचता जोसी, वै कहता दूजो पंथ होसो ।
जिहंकौ मतौ चलणि होय जूवो, वो पंथ यो परगट हूवौ ।
ज्यांनैं बरस द्योढसैं होई, ए मंके राज करे छा सोई ।
वा धरती खोसि सारी यां लीन्हीं, रूंम स्याम लौं हद जांइ
कीन्हीं ॥२०९॥

॥ दूहो ॥

ए तो सकल बहोत छै, जिहं कौ पीर पैगंमर नांम ।
ए कलाधारी मरद छै, जिहसूं को जीतै संग्राम ॥२१०॥
थां तो बैठा छो छता, ओर नैं लेव बुलाय ।
इसड़ी मसलति मिल करो, ज्यूं अैठां सू जाय ॥२११॥

॥ चौपई ॥

इंह की मसलति यौं छै राई, वा जोगणि उहैं सौं पाई ।
तौ वह कौ नहीं चालै जोर, वो मांगै छै कहि कहि जोर ।
राजा कहै इसी क्यों होय, सरणैं आयो काढै कोय ।
म्हां वैनैं बांह दई बोह भांती, नहिं तो नीसरि आधी जाती ॥२१२॥
थां तौ आप इहै जिय धारौ, बिण दीयां क्यूं मिटसी कारौ ।
वह तो अब सकलाई कै भूझै, जिहं सूं नर और क्यूं पूजै ।
या म्हांनैं ताकि दूरि सूं आई, अर म्हां पणि यो राखी अरगाई ।
सो कहो काढि किसी बिधि दीजै, बांह गह्यां को सरम लहीजै॥२१२॥
सरणै राखि जै काढै कोई, जिहंकौ जनम अक्यारथ होई ।
जो नर बोल बचन है चूकैं, जनम जनम जो ऊभो सूकैं ।

राखि बांह जौ अहुंटो होई, ध्रिग जीतब छत्री छै सोई।
बचन बांह द्वै पूठ न दीजै, घर संपति अर जीवत जीजै ।।२१४।।
एक बुधि यौं उपजी राई, जो राजा कैं बैठें दाई।
या देवी अैठा स्यु द्योह पठाई, उहैं दिन दोय राखां अरगाई।
वा पहुंचेली दूरि ही जाय, इंह सूं कहस्यां बात बणाय।
वह तौ गई अैठा सूं भाजि, म्हां नखै सौगंध लीजै राज ।।२१५।।
राजा कहै अब बोल न हारां, अर ऊं माता नैं जीव उबारा।
म्हां हैं तो मत इसड़ो भावै, वा फिरि इहकैं हाथि न आवै।
जब देवी सूं कह्यो हंकारी, थां अैठां सूं बैठो टारी।
थां पहुचोला दूरहा जाई, जब लग इंह सूं राड़ कराई ।।२१६।।
रैंणि पकड़ि देवी उठि गई, बीती राति प्रात जो भई।
उठि करि लोग देखबा लाग्या, ठांम ठांम डेरा जिह जाग्या।
तठै पीर पैगंमर पहुंता आय, सारे पर्वत बैठा छाय।
ज्यां करि सकळाइ हाथ दिखाया, सकल मरद अजगैबी आया ।।२१७।।

॥ दूहो ॥

पीर अजगैबी आइया, लियो पदमगढ घेरि।
भैरूं सेरण सूं यों कहै, द्यो चोर हमारा फेरि ।।२१८।।
राजा भैरूं सेरण सूं, करी खबर यौं बेग।
तुरत पठावो जोगणी, कै उठि बांधो तेग ।।२१९।।

॥ चौपई ॥

ठांम ठांम बाजै रणतूर, बजै करनाल संख धुनि पूर।
ते खड़ा मरद लियैं तरवारि, आ बैठा केई पोळ दुवारि।
दीरध देह झलाहल सोई, ज्यां की दिष्ट न सहरै कोई।
चोग्रिद गढ ज्यां लीन्हों घेरि, 'रंडी बेग ल्यावो' यों कहैज ।।२२०।।
जो गढ का लोग निजरि करि देखैं, गिण्या न जाय दळ पड़्या अलेखै।
त्यां करि फिरादि राजा सूं जाय, माहाराजि देखो (मरद) दळ आय।

राजा कहै म्हां हैं कांई बूझौ, थां पणि साम्हां होयर झूझौ ।
थां राख्या छो दिन इहीं नै, सो जावो लूंण खायो छै तिहीं नैं।।२२१।।

॥ दूहो ॥

हांको करि कैं चालिया, करि एको रजपूत ।
सिल्ह सुरंगी साजिया, मार करै मजबूत ।।२२२।।

॥ चौपई ॥

सारा गढ मैं मांच्यो सोर, जदि हुइ बंब नगारैं ठोर ।
सावंत उतरचा सिल्ह सु मांडि, आसि जीव की चाल्या छांडि ।
दुहुं तरफ भई (जद) हाकांहांक, रजपूत करै नहि (मन मैं) सांक ।
वै दळ हंकारि कैं साम्हां आया, लड़चा दहुं दळ लोह उडाया।।२२३।।
ज्यां पर सावंत बाह कराय, वैंतो पळ मैं जाय बिलाय ।
जिंह पर झटका वै मरद बाहैं, ते तौ दोय टूक होय जांहै ।
तो पंणि सावंत साम्हां जावैं, भैभीत थका सुरसिंधू गावै ।
रूंड मुंड फिरै मातौ घमसांण, लथपथ होय पड़ै इक ढाण ।।२२४।।
लोथि परि लोथि हुवेज ढिगार, तिंह दिन भारथ मंडचो अपार ।

॥ दूहो ॥

परधांन राजा सुं कहै, क्यूं जूझौ महाराज ।
वै अजमती मरद छै, थांको होत अकाज ।।२२५।।

॥ चौपई ॥

परधांन राजा सूं अरज करावै, महाराज अकाज क्यों लोग खपावै ।
थांको साथ पडचो गिण सकै न कोय, वांको बाळ न बांको होय ।
वै तो मरद देव अवतारी, म्हां मांणस छां मल का धारी ।
मांणस देव हैं जीते नहैं, यौं बार बार राजा सूं कहै ।।२२६।।

राजा कहै जो होतिब होई, जिहिं नै मेटि सकै नहीं कोई।
थौ मारचो आपको साथ, यां को निमत छौ वांकै हाथ।
औरू परिण राड़ि मिटै छै कांई, न जाणां होसी कब तांई।
यो तो पंथ कोई नवो कहावै, म्हां तो लड़ां ते वीसूं आवै ।।२२७।।

।। दूहो ।।

आप लियो छत्री धरम (छां) म्हांज कहावां दास।
था वै योंही चाहिंजै, म्हांनै अरज की आस ।।२२८।।
करौं अरज नचिंत होय, इसड़ी बुधि उपाय।
म्हांको बोल ऊपरि रहै, पिसुण अैठा सूं जाय ।।२२९।।

।। चौपई ।।

सदा बोल ऊपरि छै थांको, एक कियो अब देख्यो म्हांको।
म्हां सारा उहैं मिलस्यां जाय, करि परिपंच याह ठोह उठाया।
जो अब लग हुई सु होय कै गई, बहोरि राड़ि होसी नहिं नई।
म्हां तौ बात थोडी करि जांणी, गाफल रहचा गिणती नहीं आंणीं।२३०।

।। दूहो ।।

थां बुधिवंत प्रधान छौ, थां सम तुल्य न कोय।
थां छतां एती हुवै, बड़ौ अचंभौ होय ।।२३१।।
म्हां इतरी जांणी नहीं, सांची कहां हजूरि।
कांई थोडी बात छै, सो तो विधि गई दूरी ।।२३२।।
या रचना यों ही रची, जे क्यूं मेटै राम।
जिण विध म्हां राजी रहां, सोई कीज्यौ कांम ।।२३३।।
बिदा होय करि आइया, करि एकौ परधांन।
कहैं बिना बुलाया आवज्यो, बड़ै प्रात इंह थांन ।।२३४।।

।। चौपई ।।

सूतो लोग अर्ध निस भई, जदि मरदां सकलाई ठई।
बहौत बलाय गढ मांहि पठाई, ते घर घर मधि पहुंती आई।

इक रोवैं इक उठै कराहो, कोई हंसि उठै कोइ लौटैं आई ।
कहुं पीड़ा कहुं मथवाय, काहु की नांकी रूद्र बहाय ।।२३५।।

बळि बळि उठै अर बूझि है आगी, कहुं जाय आकासां लागि ।
और मरद जो दीसै असेसा, बड़ा बड़ा दांत अरि बिखरे केसा ।
धरणी पांव ऊंचा असराल, मुख बांधै दीसै बिकराळ ।
ज्यां देखि देखि नारीनर गिरई, घोड़ा हाथी उठि उठि पड़ई ।।२३६।।

वृ करचो चाहै राजा परि जोहैं, छत्रपति हैं सकती न पोहैं ।
तिह नै बिघन न व्यापै न कोई,
डीढ मूंठ जो टोणां करईं, तिह परि उलटि अपूठा परई ।
वहै कै देवता रहै रखवारी, पूरब जन्म तपस्या दे टारी ।।२३७।।

जदि राजा सेती भई फिरादी, माहाराज कोई दीजै दाही ।
सारो गढ बिघन सूं भरई, घर घर त्रिया नर पीड़ा मरई ।
राजा कहै परधान बुलावो, इहको बंध कोई बेग उपावौ ।
करो बिध सारा मिल जोई, थां राति कही छी कीजौ सोई ।।२३८।।

।। दूहो ।।

जदि परधान बिदा किया, करैं बात की झौड़ ।
ऊठि परधांन चाल्या सबे, सारा होइ इक ठौड़ ।।२३९।।
हंस सोभाग मदन फैंन, कोकिदेव कामसेंन ।
पदमसेन परिण आइयो, काम समूह चन्द्रसेंन ।।२४०।।

।। चौपई ।।

ए अष्टप्रधान जब उतरचा पौळि, ठांम ठांम देखै तो रोळि ।
जो मिलिया ज्यांसूं कह्यो ज कांम, थां पैगंमर सूं कहौ सलाम ।
और अरज यौं कीज्यो म्हां की, म्हां हजूरि आवां छां थांकी ।
वो सिरदार छै जावो जठै, जब लग म्हां ऊभा छां अठै ।।२४१।।

जाय मरद सूं जब ही कहो, लिया प्रधान बुलाय कै सब ही ।
करि सलाम ते बात कहै छै, राजा थां सूं अरज करे छै ।

अब तौ घुसौ खिमा गहि कीजै, चूक पड़ी ते माफ करीजे ।
थां म्हां है समझ्या नहीं कोई, अब कहस्यो सो करस्या जोई ।।२४२।।

कहै पैगंमर वहैं जोगनी ल्यावौ, और नहीं कोई थांसूं दावौ ।
फिर प्रधान इण बिध कही, महाराज इहां जोगणी नहीं ।
म्हां चाळै थांकै चित्त दियो, उहकौ गढासन कोयां कियो ।
वो अणजाण्यां नीसरि गई, उंहकी खबरि न कहुं ठै भई ।।२४३।।

जबैं मरद बोलि उठ्यो ज ऐसैं, इस विध दात कहौ तुम कैसें ।
तुम हमारा चोर दुडावौ, हमसैं आय कैं बात बणावो ।
वा जोगणि लेवुं राजा कूं मारूं, और उपाडि इस गढ कूं डारूं ।
सरद करूं मक्के की नाई, मैं काल्हि दिखाऊं तेरे तांई ।।२४४।।

फेरि अरज प्रधांन कराई, अब तौ रोस न करौ गुसांई ।
म्हां मांणस थां देवता होई, करण मतै'स करोला सोई ।
कहां तो थां परमेश्वर पाया, भाग बड़ा घरि बैठा ही आया ।
अब दर्शन कौ फल म्हांनै योही, म्हां की बात मांनिजे जोही ।।२४५।।

तुम कहौ सौ सगळी मानूं, वा जोगणि ल्याबो यो हूं जानूं ।
तुम भी चैन पावोगे जब ही, बह जोगणि कूं ल्यावौ तबही ।
जो म्हां का गढ मैं जोगणि होई, म्हां गुनहगार छां थांका सोई ।
जोगणि ग्रैंठा सूं गई छै भाजि, म्हांपै सौगंद लीजै राजि ।।२४६।।

तुम लाख करौ तो भी नहीं मानूं तुम्हारी सौगंद सांच न जानूं ।
उसी जोगनीं है बेगा पाऊं, नहीं तो थांनै लोह भराऊं ।
थां लोह भरो भावै मारो जीव, थां कर वासतै'स अबही कीव ।
उहंनै राखि म्हां होहि अजाई, फिरि वां जोगनि करणी कांई ।।२४७।।

इती सुणंत दयामन आणी, वो याकै नहीं निश्चै करि जांणी ।
थां ज कह्यो म्हां कै नहीं बैसी, तिंहकी सौगंद खावोगे कैसी ।
जो वा म्हांकी जांग्गि मैं होई, हुकंम करो सौह खावां सोई ।
जो म्हां थां सूं झूठ बुलावां, तौ जन्म रहैं नर्क पड़ावां ।।२४८।।

जिहकौ थांकै आसौ होई, जिहकी सौगंद काढो सोई ।

अर गुर पीरों की सौगंद खावो, मेरे चरणों हाथ लगावो ।
कहो म्हां की निजर नैं जोगनी जोहै, तौ या सौगंद सारा नैं पोहै ।
काढि कुंडालो दयो थां वाच, तौ मेरे मन मैं आवै साँच ।।२४९।।

थां कहस्यौ जो देस्यां बाचा, आप नचावौ त्यौंहि नाचां ।
खरीं ते खोटो क्यों करि होई, मन मांनै त्यों तावो सोई ।
ऊभा होय कुंडाळो कीन्हौं, राम रुद्र गुर बीच मैं दीन्हौं ।
म्हां की जांणि मैं जोगणि जोहै, तौ या सौगंद म्हांनै पौहै ।।२५०।।

।। दूहो ।।

रंडी का ऊपरि करचां, हम राखैं अरगाय ।
जंग मांडी दिन तीन लग, जोगनिं दई भगाय ।।२५१।।
इती दूर मैं आइया, तिसका तुम हैं पाय ।
हमारा कांम बहरम हुवा, जिसका देउं सराप ।।२५२।।
जिण बिध हम कलपत रहै, ज्यौं कलपौंगे तुम ।
अब तुम्हारा राज गढना रहै, मेरा इहै हुकंम ।।२५३।।
पैगंमर अहुंटो फिर गयो, गढ आया परधांन ।
राजा सेती मांडि कै, (सौह) कही बात बखांण ।।२५४।।

।। चौपई ।।

मंकै गयो पैगंमर आप, भैरूं सेण कूं दिया सराप ।
जिह कै पुत्र नहीं को भयो, इह बिध राज बिखरि कैं गयो ।
पुत्र बिनां क्यूं थंभै राज, पुत्र बिना लछि होय अकाज ।
पुत्र बिना को नांव लिवावै, पुत्र बिना पाणी को पावै ।
पुत्र बिना आगै घर सूनो, पुत्र बिना थांभो सोह सूं जूनो ।।२५५।।
जिह कौ राज बिझिण कै गयो, जिह पाछै गढ उजड़'र रह्यो ।
जिह नै हुया च्यार सै बरस, बधि गयो बन आगै थी सरस ।
जब का अहठैं सहर बसाई, इह धरती नैं एही खाई ।
अहठैं निकट राजा नहिं कोय, इहं गढ हैं फिरि बासै सोय ।।२५६।।

त्रेता सतजुग द्वापर गया, बड़ा बड़ा राजा ज्यांमै भया ।
जिह पाछै कलिजुग परिण आई, ज्यां राजा जायगैं सहल बसाई ।
या विकट जायगैं क्यों करि छांडी, क्यों राजा बसती बसाय नहि मांडी ।
यो गढ कोयां देख्यो होसी, जिह की बात कहौ थैं जोसी ।।२५७।।

या जायगै यौं नहि बासी, जिह की बात कहूं परगासी ।
राजा आगैं इसड़ा रह्या, सब काहूं सूं करता दया ।
या जायगा तपसी की आहि, आदि अंत तप ऋषि कराय ।
ज्यां की कांरिग न चूरी कोई, ऋषीश्वर दीन्हीं लीन्हीं सोई ।।२५८।।

जो रखीसुर अहंठै रहता, भरण पोषण कहौं क्यों करि होता ।
थैं तौ कहौ अहंठै बसती नांही, वे रहता ते खाता कांही ।
ईं बन मैं मेवा बौह भांती, कंदमूळ छां केई भांती ।
देवता गया ज्यौं द्रुम टूटि गया, कळि सारूं फळ पैदा भया ।।२५९।।

बड़ा बड़ा पंडित थां आया, सुरता कविता कोकि बुलाया ।
पुरातन पुरखा आय बईठा, षट्दर्शरण परिण आय अहठा ।
अब सारा मिलि करि महूरत दीजै, ईं गढ मैं ज्यूं नांगळ कीजै ।
निछत्र बार भली तिथ सोधौ, बलि फळ देय देवता परमोधो।।२६०।।

पंडित महूरत सोधे लाग्या, सारा मिल जुडि बैठा आघा ।
पारब्रंभ मन मांहैं चीन्हौं, गरणेश सरस्वती नामज लीन्हौ ।
और गुरदेव सौर्‌यो जब ही, पोथी पतड़ौ काढ्यो तबही ।
कर खडी हो ले पाटो आगें, और न बात होय तिह जागें ।।२६१।।

ज्यां अज्या चक्र मांडि कै देख्यो, हय चक्र निजरि भरि पेख्यो ।
सताइसूं निछत्र हेर्‌या, अठाईसूं जोग निबेर्‌या ।
बारह लग्न मिलि सोध्या ज्यांही, नौ ग्रिह पूजा लीन्हीं त्यांही ।
रिब सोम बन देख्यो आयो, पुष्य निछत्र उत्तम ठहरायो ।।२६२।।

।। दूहो ।।

सकल सभा बैठी जठैं, राजा बोल्यो एह ।
महुरत किंह दिन राखियो, सो म्हासूं कहि देह ।।२६२।।

उत्तम मास बैसाख को, आखा तीज गुरुवार।
पुष निछत्र सिद्ध जोग छै, भलौ दुपहरो बार ॥२६४॥

राजा रौंणा सूं यों कहै, एक बात सुनि लेहु ;
जितौ लोग इकठौ हुवौ, यां (हैं) सब हैं सीधा देहु ॥२६५॥

आडा द्यौंस नांगळ जिता, यां (नैं) जाबा मति देहु।
जब लग राखौ अरज करि, और बुलावो एहु ॥२६६॥

॥ चौपई ॥

जब नांगळ की सामां कीन्हीं, देस देस हैं चीठी दीन्हीं।
बड़ा बड़ा रजपूत बुलाया, चारण भाट घणां ही आया।
कीन्ही सामां जग की सोई, जुड़्या मांणस गिणती नंहि जोई।
ज्याहैं मुकता सीधा देई, जो बिध मांगै सोइ लेई ॥२६७॥

सहंस दस मण चून पिसायो, दोय सहंस मण घिरत मंगायो।
च्यार सहस मण चांवळ आया, पांच सहस मण चणां तुलाया।
मोठ मसूर उड़द मुंग लीन्हां, मिसटांन मंगाय कै कागळ कीन्हां।
सहंस एक मण तेल बखांणी, पांच सै मंण सांभरि आंणी ॥२६८॥

सकल सामां इक ठौडी कीन्हीं, सो पहुंचाय पदमगढ दीन्ही।
और चलायो वहौत ही माल, तेरा सैं ग्यारह कै साल।
आखा तीज हैं आणंद कीन्हौं, पुष्य निसत्र गुरवारज लीन्हौ।
राजा परजा पहुंता आय, सौह मेळो हूवौ धाय ॥२६९॥

बारह भैंसा बल ज्यां दीन्हां, सहंस बोक रजपूतां कीन्हां।
ब्राह्मण भणैं वेद झुनकारै, करै होम आहूत उचारै।
चारण भाट बिड़दावली भणाई, जाचिग जाचैं चोग्रिद घणाई।
ठांम ठांम रसोई होय, गढ़ मैं गहगड़ मातां सोय ॥२७०॥

रसोई जीमि बैठा दरबार, राजा बूझै करै बिचार।
इह गढ कौ नांव और ही रखावौ, आगलौ नांम ते दूरि मिटावौ।
ए दोय भाई बैठा इक ठांय, या रौण्यां भोण्यां कै राखो नांय।
जदि सौह पंडित उठि बोल्या जांम, रणतभँवर गढ इहकौ नाम ।२७१।

॥ दूहो ॥

राजा प्रजा ब्रह्मसौह, षटदर्शण जीं जात ॥
इणि विधि गढ़ नांगळ हुवौ, गळगच सूं दिन सात ॥२७२॥
जदि सौह लोग बिदा किया, रूडां दे सिर पाव ।
ज्यांसूं राजा यौं कहै, बसौ स बेगा आव ॥२७३॥
मुकतो देस्यौं खीचड़ौ, महीनां करूं संपूर ।
मुकती धरती जोतिज्यो, करिस्यूं गांव हजूरि ॥२७४॥

इति श्री दुतियोऽध्याय ॥२॥



तृतीय अध्याय

।। चौपई ।।

नांगळ के दिन नींद दिवाई, पाछै लग्यां चुणबा कै तांई ।।
दूरि दिसा सूं सिलावट आया, खोह बंधाय दरवाजा रखाया ।।
तिंह परि ताल बंधाया दोय, कोट चुण्यो गचगीरी होय ।
राजा पूछै बिपर बुलाई, यां पौलि को नांम रखावां कांई ।।२७५।।

जो आगैं अैंठें ऋषीश्वररहता, ते तौ दोय घांटी ही कहता ।
इक स्योघांटी अर सूरज घांट, आदि अंत ए दोही बाट ।
पाछै रह्यो पद्म ऋषि आई, जिंह घांटी बांधि करि पौळि बणाई ।
स्यौ पौळि अर सूरज पौळि, अर ऊंचा नींचा बांध्या डौल ।।२७६।।

जिंह पाछै राजथांन अैंठे भयो, भैरूसेण बहौत बधिगयो ।
जिंह नै तीजी पौलि कढाई, भैरूं पौलि जिंह नांम रखाई ।
चौथि पौलि अब थां चिणावावो, जैत पोलि जिंह नांम रखावौ ।
कोट बंधायो ऊंचो जोरि, मांनू सांचै राख्यो ठोरि ।।२७७।।

दिसा च्यारूं दरवाजा रखाया, चिहुं पौळि चिहुंधा चिणवाया ।
रच्या महल पाथरिका घडिवां, लागी मेख लोह की जडिवां ।
जागैं जागैं काम चलाया, हाट दुहरा मंडप छाया ।
सारा लोग घरिबार हैं लाग्या, छतीस पौंणि बासी तिंह जाग्या।२७८।

।। जैति पोलि को दूहौ ।।

जैति पोळि चुणिजै सदा, पोळि न पूरी होय ।
बूझ्यो जोसी जोतगी, यो कारण छै कोय ।।२७९।।
द्यौस चुणि आवै पोळि कौं, राति गिरंद होय जाय ।
रौंणा सूं राजा कहै, ऊठैं कौंणि बलाय ।।२८०।।
राजा सूं रौणों कहै, वहै ऊंडी दिवावौ नींव ।
सीसै गच चेजौ करौं, ज्यौं पूरी पडि हैं सींव ।।२८१।।

पदमगढ सुपनै आइयौ, सुणिज्यो रावत राण ।
जुग जुग मांहै जस रहै, यो पूरौ होय आउ ठांण ।।२८२।।
सुपनां सूं रोणौं कहैं, तूं छै कोई देव ।
बात कहौ समझाय कैं, ज्यौं म्हैं जाणां भेव ।।२८३।।
पदमगढ फिरि बोलियो, सुणि हो रोणां बात ।
यौ सीस चढावै पौळिकौं, जद पूरी ह्वो जात ।।२८४।।
प्रात समैं दरबार मैं, जाय जुहारयो राव ।
एक अरज अब हूँ करूं, जौ चित आवै दाय ।।२८५।।
रौणां सूं राजा कहै, सौह बैठां उमराव ।
थारा मन मैं ऊपनो, सोही कहिजै भाव ।।२८६।।
रणतभँवर असें वही, हुई और अगंम ।
सीस चढावां पौळि कूं, कीजे सही हुकंम ।।२८७।।
रौणां सूं राजा कहै, गढ बसावां और ।
थां मूवां बसती हुवै, कांई करणी ठौर ।।२८८।।
राजा सूं रौणौ कहै, यो यों ही छै कांम ।
पार ब्रंह्म यों ही रची, जुग जुग रहसी नांम ।।२८९।।
थांका मन में जो बसै, सो ही (करो) काम बणाय ।
म्हांनै कांई पूछिस्यो, यो थांकै आय दाय ।।२९०।।
जैति पोळि दोऊ गया, कीन्हौ पुंनि अघाय ।
दरवाजै देखें सबैं, दीन्हौ सीस चढाय ।।२९१।।
रौण्या भोण्या कै पुत्र दो, लीन्हां राव बुलाय ।
राखै लोग चवगणौं, रौण्या सूंज सवाय ।।२९२।।
दे घोड़ा सिरपाव यों, दीन्हां घरां पठाय ।
दीन्हौ देस चवगणौं, करैं खरच अर खाय ।।२९३।।
जसपाल साह परधांन, (जहां) गंगेलवाल बड़चित्त ।
करैं करावै सो सही, सकल हवालै वित्त ।।२९४।।

सकल गढ बसती हुई, मरमति चुक्या बणाय ।
राजा पूछै प्रधान हैं, किती पौंणि बसि आय ।।२९५।।

प्रधान राज हैं पौंणि सुणाई, प्रथम ब्राह्मण बास कराई ।
जिह पाछै ठकुराला आया, खांप खांपका रजपूत बसाया ।
साह महाजन आया सोई, कायथ खत्री बसती होई ।
जाट अहीर गूजर पंणि आया, लोधा मीणां धाकड़ छाया ।।२९६।।

सेठ सुनार कुलबी तबोली, खाती लुहार कुंभार'र कोली ।
ठठेरा भरावा पिनांरा की भीर, मालो काछी काहर कीर ।
नाई बारी तेली खंगार, बाबर मोची धोबी मणियार ।
लखेरा कलाल'र छींपी डूम, भील सहर थोरी धांणिका खूंम ।।२९७।।

दरजी पटवा भड़भूंज्या और, कापड़ी तेरवा रंग (रे) जिया दौर ।
खिजमति कारीगर लोग कहै, सो सब बसिया गढ कै महैं ।
सौदागर जौंहरी आया घूणां, जड़िया घड़िया बिधबिध तणां ।
भौपा भरड़ा दरसणदार, रेगर डबगर खटीक चमार ।।२९८।।

।। दूहा ।।

राजा यौं राजी हुवौ, सुणो साह जसपाल ।
बाग लगावौ नौलखो और बंधावो पाल ।।२९९।।
बारह बेटा राव कै, ज्यांका वरणूं नांव ।
बड़ा (बड़ा) जोधा सूरिवां, ज्यां नवा बसाया गांव ।।३००।।

।। चौपई ।।

अहलादसिंघ भींवजी अर वसुदेव, भारथसिंघ बैरसल बीरमदेव ।
बलिदेव बिजैपाल अर कुंभराज, बील्हंणदे हमीर दे छोटो बछराज ।
जो राजा सूं जौला रहैं, आप आपका गावां महैं ।
राजा गढ पर राज कराई, जिह की दूरि लग फिरै दुहाई ।।३०१।।

अहलादसिंघ आल्हणपुर बास्यो, भारथसिंघ भदलाव प्रकाश्यो ।
भींवजी रह्यो भीरहरी जाय, बलदेव, बाजई लई बसाय ।
बलिदेव रह्यो छै बलिणबसाय, बीरम रह्यो बलौडणी छाय ।
बैरीसाल बखाड़ै बसियो, बिजैपाल बिचपड़ी धसियो ॥३०२॥
कुंभराज बसाई कुंभळमेर, बोल्हण बसियो बौंलिगढ घेरि ।
भारथसिंघ गांव दूजो बसायो, भूरी पहाड़ी नाम रखायो ।
जिह तो बास ऊंठे जाय कीन्हौं, जिह भदलाव हमीर हैं दीन्हौं ।
बछराज ते रह्यो हजूरि, नखैं सूं राजा करैं न दूरि ॥३०३॥

॥ दूहो ॥

ढग तटि बाग बहौत बण्या. कुवां बावड़ी ताल ।
(सौह) पर्वत जळ सूं भरि रह्यो, (जठै) बहै सदा ही खाल ॥३०४॥
राज जम्यो अति राव कौ, हो गया बहौत बरस ।
जहिं कौ प्यार आखेट सूं, राखै जीव सरस ॥३०५॥
एक हिरण तिन सींग कौ, जिह की साथि बड़ो डार ।
नागर चाल मैं वो फिरै, लीया मृग सै च्यार ॥३०६॥

॥ चौपई ॥

वो नागर चाळ का माल हैं खाय, सकल लोग लीन्हौं अखताय ।
चणां गोहूं रहिबा नहिं पावैं, जिहकौ मतौ रय्यत ऊपावै ।
जब सारा मिलि मसलत ठहराई, राजा पासि पुकारां जाई ।
जाय हकीकति सकल सुणावौ, ज्यांहै बढाय करि अंठै ल्यावौ ।३०७।
जब सारा लोग गढ ऊपरि आया, राजा सेंती किसा सुणाया ।
कह्यो हिरण अमोगी खेती खाई, अगणत फिरै ते गिण्या न जाई ।
थां राजा धरती का धणी, राखौ चूसि सिकार की घणी ।
चढि चालौ थां म्हांके हाट, जहंठै खेलो आप सिकार ॥३०८॥
सुणि राजा असवारी कीन्हीं, सुनहां डोरि मंगाय कै लीन्हीं ।

अौर बड़ा बड़ा रजपूत वुलाया, हुता सहर ते सगळा आया ।
गरड़ की डूंगरी पहुंता जाय, जहंठै हिरण गया निजरि पड़ाय ।
जब कुतरा घोड़ा लारैं दीन्हा, दोय च्यारि मृग मारिकै लीन्हा ।३०९।

जब राजा लोगां सूं कह्यो, अब थां जाय नचींता रहौ ।
दिन उठि सिकार म्हैं अैठें आस्या, अै सारा हिरण मारि करि खास्यां ।
फेरि राव कहै याही छै टोळी, जदि बोल्या लोग या तौ छै बोळी ।
कहूं पचास कहूं साठि रहाई, कहुं एकसौ कहुं दोयसै फिराई ।३१०।

वह तिसींगा की बड़ी छै डार, जिंह की रहै पाँच सै लार ।
जिंह नै सारो देस उजारचो, म्हां रय्यित को कांई सारो ।
राजा कहै थां सारा घरि जावौ, अब फिरादि फेरि जिन आवौ ।
थांकै नखैं म्हां पायो भेद, अब मारूं सारौं नै खेदि ।।३११।।

दिन कै जाय राजा आखेट, नित उठि होय जाय हैं भेंट ।
तिसींग्यो कदै हाथ नह आवै, अौरहि हिरण मारि करि ल्यावै ।
इण बिधि जात बहौत दिन बीता, घणां थोक तो कीन्हां रीता ।
तिसींगा साथ जे घोडौ डारै, वो कूदि जाय अर घोड़ो हारै ।।३१२।।

राजा सभा मधि बैठो आई, जठै हिरण की बात चलाई ।
इंह कौ पंडित करौ बबेक, तीन सींग वो हिरण छै एक ।
अब लग तौ म्हां सुण्यो न देख्यो, अब तो दिन उठि निजर भरि पेख्यो ।
उंह सू पचि पचि बहोत हूं हारचो, ते तौ नहीं जाय छै मारचो।।३१३।।
जदि पंडित यों बोल्यो त्यांही, उहंकी तुचा उत्तम अति आही ।
उंह की तुचा हाथि जो आवैं, पिंड भरचा (सुत) पित्र स पावै ।
अर उंह ऊपरि जाप जो होई । मौख, मुकति सिध पावै सोई ।
अर उंह को मांस सूर जौ भखै, रहै बोल जुग जुग मैं अखैं ।।३१४।।

बड़ौ कुँवर विदा जब कीन्हौ, अहलादसिंघ हैं बीड़ौ दीन्हौ ।
जो उंह हिरण हैं मारि तूं ल्यावै, तौ सहि जेठो पुत्र कहावै ।
हूं पणि जीव सुख पाऊं भारी, अचल बात जुग मैं रहै थारी ।
अग्रा जाणू गढ थंभ्यौ तौ ही, टीका का खावंद तौ छोही ।।३१५।।

ते बहौत साथ दे बिदा (ज) कीन्हौं, माहिर लोग साथि सब दीन्हौं ।
जो राजा की साथैं जाता, सो चाल्या आगैं होइ ताता ।
ज्यां मिलो भाल करी छी आगें, सारो साथ गयो तिह जागै ।
जठै हरिण चरैं बहोतेरा, जिह जायगै कंवर नैं कीन्हां घेरा ।।३१६।।

जे चौग्रिद सेतो लीन्हा घेरि, तीन सींग कौ काढ्यो हेरि ।
जो कंवर हैं निजरां बतायौ, जब देखि कंदर महासुख पायो ।
जिह पर बाग राळि कैं घूटो, मानूं पंछी पर सिकरिरो टूटो ।
उड़यो हरण पंछी की न्यांई, घोड़ौ क्यौं पहुंचै तिह कै तांई ।।३१७।।

मृग डाण भरै अति ऊंची, घोड़ो नजीक न छांडै पूंछी ।
मिरग जब भागि धंस्यों बन मांही, जहां घोडा कौ बाहस पहुंचै नाहीं ।
जदि कंवरि प्यादौ भयौ, करी काछनी बन मैं धंसि गयौ ।
देख्यो हिरण उभौ छै आगैं, महादेव गोरां जिहिं जागैं ।।३१८।।

जब महादेव सूं दरसण भयौ, पाप दोष सकलमिट गयौ ।
जाय रूद्र हैं ढोक ज दीन्हीं, हाथ जोड़ि करि सेवा कीन्हीं ।
बड़ी बार लग ऊभौ रह्यौ, तब पारबती रुद्र सूं कह्यौ ।
कोई राजा एक करै छै सेवा, किहिं कारण ते पूछो भेवा ।।३१९।।

पारबती की सुणि कैं वोली, महादेव जब पलकै खोली ।
महारुद्र जिहनैं बतळायौ, तूं छै कौण केठा सूं आयौ ।
यौ थांकै गढ जो राजा रहै, हूं जिहकौ पुत्र कंवरियौ कहै ।
जिहनै मोपै हिरण मंगायौ, जिह कारण हूं थां पै आयौ ।।३२०।।

कोई है तूं दिन कौ डरपावै, तौही न्याय यो भागौ आवै ।
(क्यौं) तूं दिन कै दिन इहनै डरपावै, थारै हाथि यौ क्यौं करि आवै ।
तूं मांगै अंछ्या सो भरि सो पावै, इह की बात न फेरि चलावै ।
थां कांई लेस्यो इह कै मांही, यो तो थांकै जीवै नांही ।।३२१।।

थां कौ बकस्यौ सौह घर मांही, कोई बात की चाह छै नांही ।
गांव परगनां हाथी घोड़ा, सूनौ रूपौ कपड़ा जोड़ा ।
म्रिग दीयां पिता सुख पावै, नहितर मोनैं अपज (स) आवै ।
दर्शण को फल मोनैं याहि, मोनैं पिता बहौत करि चाहैं ।।३२२।।

महादेव सुण बोल्यो नांहीं, पारबती फिरि इण बिध कहां ही ।
यो हिरण गहि करि इहनैं दीजै, इह कौ बोल तौ ऊपरि कीजै ।
पारबती कैं ऊपनी दया, महाराजि यौं करिजै मया ।
थांका दर्शण कौ फल इणि बिधि पावै, इंह का पिता नै यो ही भावै ।।३२३।।

महादेव पिर बोल्यो अैसैं, थां हिरण ले जास्यो कैसैं ।
यो हिरण तो जातौ मरिजासी, इहकौ जस इहनैं नहीं आसी ।
यह तो अनाहक ले छै पाप, इहनैं देसी मिरग सराप ।
कंवर का क्यों मन मैं भावै, सो तौ बसत हाथि नहीं आवै ।।३२४।।

थां तौ अगम की बात कहाई, सो तौ इहकै चित नहीं आई ।
इहकौ चित्त हिरण मैं जोई, थां बकस्यो जांणै ज्यों होई ।
जदि रुद्र कहै थां आघा आवौ, लेह हिरण बेगा घरि जावो ।
करि डंडवत हाथ गहि लीन्हौ, जीव में अति आणंद कीन्हौ ।।३२५।।

म्रिग लेय रूण बाहरि आयो, जहंठे सारो साथ मिलायो ।
ज्यां देख्यो म्रिग कंवर पैं सोई, अति ही आणंदचो सारो लोई ।
कंवर असवार घोड़ा पर भयो, हिरण हाथि औरां कै दयो ।
आघौ ले मिलि चाल्या जब ही, तो प्राण मुकति व्है गयो तबही।।३२६।।

कंवर मन मैं अति मुरझायो, सकल साथ बहोत पिछतायो ।
कंवरि कहै बेगारी ल्यावो, जिहकैं सिर दे गढ पहुंचावो ।
म्हां तो घरि हैं जास्यां भाई, यो म्रिग सौंपो राजा हैं जाई ।।३२७।।

।। दूहो ।।

म्रिग मरतैं यौं कह्यो, मन चिंती नहीं होय ।
करता हाथ कलम है, मेटि सकै नहीं कोय ।।३२८।।
सिव कहै सोही हूवौ, होय गयो वह भाव ।
म्रिग मिलियो हमीर कूं, जाय जुहारचो राव ।।३२९।।

॥ चौपई ॥

लेय हिरण बेगारी चलियो, गेला मैं हमीरदे मिलियो ।
पूछै कंवर कठा सूं ल्यायो, करचो जुवाब रौंण सूं आयो ।
बड़ै कंवर यों आप कहाई, यो राजा हैं थां दीज्यो जाई ।
हमीर हिरण आगै धरि लीन्हौं, मुजरो जाय राजा है कीन्हौं ॥३३०॥
म्रिग निजरि पडत राजा सुख पायो, खुसी हुवौ म्रिग तौ वो आयो ।
खुसी होय हमीर सूं बोल्यो, हिरदा कौ अंतर जिह दिन खोल्यो ।
सहस मोहौर सिर पाव ज दीन्हौं, अर जादवां ऊपरि विदा ज कीन्हौ ॥३३१॥

॥ सोरठो ॥

हमीर कहै सुणौ राव, तीजौ कोई ना सुणै ।
हूं करिस्यों इक दाव, वां सारा नैं मारिस्यौं ॥३३२॥

॥ दूहो ॥

बीडौ लीयौ हमीर नैं, चढि आयो भदलाव ।
सारो साथ बुलाय कैं, म्हांसु कोप्यो राव ॥३३३॥
सारौ साथ मिलियों कहै, कांई करो बिचारि ।
घोडा जादवां ऊपरि करौं, लांबा करौ जुहार ॥३३४॥
हिरदै राखी आपणैं, और न जाणै कोय ।
न्योंती ल्यावूं साथ सूं, तो मतलब पूरो होय ॥३३५॥

॥ चौपई ॥

हमीरदेव नैं बीड़ो पायो, जिह दिन ही भदलाव मैं आयो ।
कोई सेंती नहीं बात चलाई, सहजैं सहजैं साथ मिलाई ।
यो जादवां को भाणजो सोई, जिहकी गिणत न राखै कोई ।
निपट भांगिजो इसडौ होईं, मन मानें जो राखो कोई ॥३३६॥

एक दिवस मामा पैं गयो, हाथ जोडिकर ठाढौ भयौ ।
करी बात गरीब की नांईं, राखौ आसिरैं म्हारैं तांईं ।
थां तो सारी विध जाणौं सोई, अहंठै मोनैं जागि दयो कोई ।
राजा मुंहडै बोलै नांहीं, हूं आवूं छूं थांकी बांहीं ।।३३७।।
जब मामा दीलासा दीन्हीं, नीकी नीकी बातां कीन्हीं ।
थां राजी होयर आवो गांमे, बैठा गुदरान करो क्यौं न म्हामैं ।
थां ढील करो मति बेगा जावो, सारा लोग लेय करि आवो ।
थां वैठां को छोडो नांव, अहंठे ही दोय देइस्यां गांव ।।३३८।।

।। दूहा ।।

एक अरज अब हूं करूं, मामा सुणो चित देय ।
सारा चालो साथ सूं, मोनैं आवो लेय ।।३३९।।

।। चौपई ।।

एक अरज ओर छै मामा, हूं आऊं छूं थांकै गांमा ।
वैंठा सूं हूं द्यू छूं टालौ, एक बार थां उंहठै चालौ ।
इतरो क्रिपा म्हां पर कीजै, एक रसोई उंहठै जींजै ।
थां सारा जादूं कोकि बुलावो, आगैं होय मोनैं ले आवौ ।।३४०।।
थां राखो छो मो परि मया, जै जींबा की कीजै दया ।
अर मामाजी इतरी कीज्यो, सौह जादवां नैं न्योंतो दीज्यो ।
हूं जाऊं छूं ऊंही जागैं, सामा करूं सीधा की आगैं ।
जै कोई उंहठै नांही आई, जिहस्यूं बुरो मानस्यूं राई ।।३४०।।
मामो कहै तूं सुणि रे भाई, जींबा की चाली छै कांई ।
लेवा म्है आवस्यां सारा, म्हां तौ चाकर छां ही थारा ।
माजी नैं कही छै म्हासूं, हूं वांकौ कह्यो कहूं छूं थांसूं ।
हूं तो थांको सदा ही खास्यूं, सकल वसीले अहंठै आस्यूं ।।३४२।।
मांमो कहै किंधाडै आवां, किंह दिन सारा लोग बुलावां ।
आजि स्युं थां चौथे दिन आज्यो, डीलडील थां सारा ल्याज्यो ।

जौ थां म्हांकौ भलो मनावो, एक डील छोडि मति आवो ।
जौ थोड़ा आवौ तौ रामदुहाई, सारा आवौ तो म्हां सुख पाई ।।३४३।।

।। दूहो ।।

(थे) बार बार कांई कहो, म्हें सोह चढि आवां डील ।
करो रसोई चौगणीं, नेक न कीज्यो ढील ।।३४४।।

।। चौपई ।।

थां कांई कहो छो बारूम्बारा, म्हां नान्हां मोटा आस्यां सारा ।
जदि सीख मांगि भदळाव मैं आयो, माता सेंवी मतौ करायो ।
म्हैं न्योत्या छै सारा मांमा, हूं तो जास्यूं वांका गामां ।
म्हैं वे कोक्या लेबा नैं आवै, तिहकै ताईं गोठि करावै ।।३४५।।

।। दूहो ।।

कै जाणै हंमीरदे, कै जाणैं छै राव ।
तीजै कांनि नांही पड़ी, इसडौ कीन्हो दाव ।।३४६।।

।। चौपई ।।

इतरा ठठ सीधा का कीन्हां, गोहूं मंगाय पीसणां दीन्हां ।
चांवल खांड अर घ्रित मंगायो, चणां मंगाय वेसण करवायो ।
सकल मसीणो लीधो मंगाई, छांटि पखालि अर दाल बणाई ।
अर चीठी बकरा की कीन्ही, सो पठाय गावां मैं दीन्हीं ।।३४७।।
लावा तीतर अनन्त मंगाया, और बनास का मच्छ कढाया ।
हिरण सूसा निराही आया, लोग मारि बारहा ल्याया ।
न्याळो न्याळा मांस रंधायो, बेसवार दे के घिरत धपायो ।
बटिवां मांस सोह ते कीन्हों, वहोत मसाले घ्रित में भीन्हों ।।३४८।।
बटिवां मांस का सूळा कीन्हां, बांधि सूत घ्रित डोरा दीन्हां ।
सादा सूळा कीन्हा न्यारा, मसालो दे घ्रित सूं भारया ।

मांस बांटि कै चक्र तळाया, को कोरा को दही मिलाया ।
बांटि मांस पकोडी कीन्हीं, धोळी पीलो मसालें भीन्हीं ।।३४६।।

छतीसूं तीवण वेसरण का कीन्हां, कांजीबड़ा दही मैं भीन्हां ।
चांवल मूंग'र मसूर खडी, उडद मूंग चौळां की बडी ।
कुळथ चरणा तळवाया घी मैं, पहत मूंगा की हळदी जिहमैं ।
मांडा रोटी बाटो गोळा, ते तो मुकता घ्रित चमोळा ।।३५०।।

ग्रौर चरणाका डीरा हूवा, बैंगरण मेथी ग्रौर बथूवा ।
सो सोवा पालक सिरस्यों राई, डांडी साग राई चौंळाई ।
बंगा तोरईं ग्रौर करेला, चंचोडा टींडसा कदु कमुरेला ।
किंदूरो पलवल पान पतोंड़ा, ग्ररई सूरण ग्रौर ककोड़ा ।।३५१।।

भडी तो भटा ग्रगीथा को फली, बाल्होळि बणी कचनार की कळी ।
नींबू ग्रांब ग्रथाणौ ग्रायो, ग्रादौ हळद ग्रांवला ल्यायो ।
सूरण बांस पीपळ को थांणो, मुकता कैंर'र ग्रांबिल वांण्यो ।
वांधिवां दही ग्रर सदा न्यारो, गाढो मठ्ठो छांरिा धुंगारचो ।।३५२।।

खीर खांड सीरो पचधारी, पुरी कचोरी लूचइन्यारी ।
लाडू गूंझा मोहनभोग, डोवठा खाजा बण्या ग्रभोग ।
सकल जाति मिठाई खासा, कढचा दूध मैं नाख्या पतासा ।
खीच खीचडी पापड ब्रडिया, चणां की पापडी सू सूभर
　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　तळिया ।।३५३।।

फूल दारू की भाठी होई, जिह कै पटंतर ग्रमल नहीं कोई ।
घणै मसालै दाख चुवाई, गुल-महुवा की जुदी कढाई ।
ग्राफू भांग तिजारो गोळी, ते दे दे पुट धतूरे घोळी ।
सींगी मांहरो विष चवायो, ग्रकलक रहो जायफल पायो ।।३५४।।

ग्रौर गाडि ढाहरां सडहो कीन्हौं, बांधि ग्रांवळी गूंथि कै लीन्हौं ।
जिहमैं हाथ न होय पैसार, जिह पर चेठ्या भुकता भार ।
बडी दोराय सचौड रखायो, फलसा मुहकम दोय बंधायो ।
हितू डीला सूं कह्यो बुलाई, हूं काहूं काम तें कीज्यो भाई ।।३५५।।

॥ सोरठो ॥

सगळा खडग मंगाय, सिकल कराया बाढ दे ।
मुकता दाम दिवाय, सकल लोग राजी किया ॥३५६॥
थां सगला रहो हजूरि, दिनां दोय लागा अठै ।
कहीं टळो मति दूरि, जब लग जादू जीं चुकै ॥३५७॥
जिह दिन कहियो भेद, सकल साथ बुलायो तवें ।
सारा रहो हजूरि, हूं मामा मारूं अबें ॥३५८॥

॥ दूहो ॥

सारा जादू आइया, हरख्यो कंवर हमीर ।
डील डील आया सबें, जब उपज्यो मन धीर ॥३५९॥

॥ चौपई ॥

जहंठैं आया सगळा जादू, मानूं उमटी घटाज भादूं ।
जो चाहे ते सगळा आया, नान्हां मोटा साथि लगाया ।
करि मनुहार त्यां अमल मंगायो, जिहिं रूचियो तिह तेतो खायो ।
बहोत जतनि करि हीड़ा कीन्हा, ज्यांने आछचा बैठक दीन्हा ॥३६०॥
चालो ऊठो जींवो रसोई, हाथ पाँव थां डारो धोई ।
अधीन होय करि बोलै प्यार, ल्यावो खोलो धरो हथियार ।
सबका हथियार खुलाय कैं लीन्हां, पंगति सारू बैठक दीन्हां ।
सो सब कबज आपणी कीन्हां, न्याळी न्याळी पांतिज भीन्हां ॥३६१॥
डील डील सोह न्याला कीन्हा, ज्यां मैं और न बैठण दीन्हां ।
आडा लोग सब कीन्हां न्याळा, चाकर लोग और ए पाळा ।
ज्यांकी केई पांति कराई, पातलि ज्यांके हीरख धराई ।
थाळ कचोळा अनंत मंगाया, सो डीलां के हीरख धराया ॥३६२॥
अर हाथां में प्याला दीन्हां, फूल कटायण ज्यां में कीन्हां ।
जहर अमल खुवायो छो आगा, फिर बत कही डोकै लागा ।

सौह लागा दारू कें तांई, वैं एक एक तरकारी परोसै आई ।
ज्यांनै परोसत पहर लगायो, वांहें अमल अपरबळ आयो ।।३६३।।

जब हमीर दे आपका डील बुलाई, जिह दिन ज्यांसूं बात चलाई ।
राजा मोनें बीड़ो दीन्हो, जिह काजे इतनो हठ कीन्हों ।
ए डील डोल जोवां न्यारा, थां यां डीलां ने मारो सारा ।
आयो जीमरण जींमे सोई, जदि एके समचै वाहज होई ।।३६४।।

हूं तो लोक ते सकल बुलायो, सो परिण यों ही कहि समझायो ।
आडा लोगां हें जाबा दीज्यो, डील डील थां सारा लीज्यो ।
देखूं थां का हाथ ज भाई, रहसी थां की बात सवाई ।
राजा म्हांसूं होसी राजी, अर रह जासी आपणी बाजी ।।३६५।।

सकल साथ सूं इरण विध कहियो, थां वां मांहे ऊभा रहियो ।
हीड़ा कै मिस मिळ करि जावो, (ते) हुकम करै ते काम करावो ।
हथियार बिना मति जावो कोई, (वे) कहे काम थां कीज्यो सोई ।
सकल लोग जाय करि मिळिया, वैं सारा दारू मै झिळिया ।।३६६।।

कोई रसोई ले ले आवै, कोई पारणी भरि भरि प्यावै ।
कोई प्याला बतक सूं भरई, कोई ऊभो मिस करि फिरई ।
कोई तरकारी ले ले आवै, कोई उठि व्यंजन हें धावै ।
सारा ऊभा बर यां ताकै, वे तो भरि भरि प्याला छाकै ।।३६७।।

प्रोसत प्रोसत पूरण हूबो, जब जींबा को दीन्हो दूवो ।
कोई हंसि हंसि गासज खाई, कोई टम टम चोघै लाई ।
कोई लोटैं और हंसावैं, कोई सोवै ढुळि ढुळि जावै ।
कोई है हंसिवें टगि लागी, कोई रोवैं कोई करैज रागी ।।३६८।।

।। दूहो ।।

करचो हुकम हमीर दे, दचो तरवारां रीठ ।
मारो सारा डील है, दयो मति कोई पीठ ।।३६९।।

॥ चौपई ॥

घडी दोय लग रामति दीठी, पीछै उठी तरवारां रीठी ।
ज्यां परि जराजर झटका बह्या, इसा भाणिजे मामा चह्या ।
सारा मारि एकठा कीन्हां, और लोग सोह जाबा दीन्हां ।
बां सारा हैं दाग दिवायो, बची रसोई अपलोग जिवायो ॥३७०॥

॥ दूहो ॥

जादू मारचा जुगति सूं, कीन्हां इसड़ा कांम ।
धरती कारण वीर यों, तोडी मामां (तणी ज) मांम ॥३७१॥

॥ चौपई ॥

इसा भाणिजै कीन्हा काम, जिह तोड़ी मामा की मांम ।
जिह घरि राज द्रव्य जो होई, मिलक व्रिति जिहके सोई ।
जिह घरि भांणिजो नांहि खटावै, जो राखै तो ए पद पावै ।
निदान भाणिजो इसडो होई, कोटि जतन करि देख्यो सोई ॥३७२॥

माता रोवै परस्पर भींनी, अरे हमतें इसडी कीन्हीं ।
साथ बुलाय तयारी धरी, हमीरदेव असवारी करी ।
सो कड़कडाय करि इसौ ही धायो, जाय देस मैं मार मचायो ।
साम्हां हुवा सो नाख्या मारि, आंणि मिल्या सो लिया उबारि ।३७३।

धणी बिना को करै चढाई, बिना धणी को लेय लडाई ।
धणी होय घर को रखवाळो, पराई भोमि हैं चाहैं न्याळो ।
धणी होय तो देस हैं राखैं धणी बिना सौह हींणति भाखैं ।
धणी बिनां घरबारैं सूनो, कोइ मति हूज्यो धणी विहुंनौ ॥३७४॥

जादू मारचा कंवर बुलाई, जिहकी सुधि राजनैं पाई ।
पाछै देस मधि गयो चलाई, जादूवाटी बहोत पंजाई ।
ज्यों ज्यों राजा खबरि सुणावै, खुसी होय राजा सुख पावै ।
हंमीर कंवर कूं सदा संभाळै, जिह का आबा को गेलो न्हाळै ।३७५।

जाय हमीर नैं अनड़ नवायो, सकल लोग पै डंड मंगायो ।
सब जादूवाटी कोन्ही जेरि, जठै दुहाई आयो फेरि ।
जठै राखि कमेती अमल जमायो, दाम लेय आपण घरि आयो ।
सकल द्रव्य साथि करि लीन्हों, जाय राजा हैं मुजरो कीन्हौं ।।३७६।।

॥ दूहा ॥

फते करी हमीर नैं, जाय जुहारचो राव ।
हरखि कह्यो यों रावजी, फेरि करो टुक दाव ।।३७७।।

।। चौपई ।।

राजा बहुत करि राजी हुवो, हाथ चूंबै अर हरखैं जुवो ।
द्रव्य हुतो सो हमीर हैं दीन्हौं, अति आनंद ह्रिदा मैं कीन्हौं ।
जदि राजा बात इक और चलाई, थां जसपाल हैं मारो जाई ।
तौ दुख मिटसी म्हारा जी को, अर थांनै गढ को देस्यूं टीको ।३७८।
जब हमीर कहै राजा सेती, एक बात थां कीज्यो एती ।
तीजै कांन या बात न जाई, और बुरा कहो थां म्हारे तांई ।
सौह लोगां आगै कुजस करीज्यो, गाळि काढ अर रोस भरीज्यो ।
दरबार मोसूं मनैं करावो, सारां आगै अपजस गावो ।।३७६।।

।। दूहो ।।

मतो करचो हमीर नैं, यौं मारूं जसपाल ।
(मो नैं) देस निकाळो दीजियें, (तो) म्हारो लागै ताल ।।३८०।।

।। चौपई ।।

(अब) सुणों बात जसपाल बखाणी, (सो) राजा की नहिं मांनै कांणी ।
करवा मते सोहो कर डारै, कोयां के वो नहीं ज सारै ।
वो ही बैठो राज कुमावै, सबसूं रहै बराबरि दावै ।
(ते) कंवरां ऊपरि राखै जोरो, जिह कौ कही न मानै तोरो ।३८१।

राजा कहे ते बात न मानैं, बूढो कहि कहि कुबुधि बखाणै ।
राजा आपण खरो सयाणो, जिहं सूं कहै थां कांई जाणौं ।
राव का मरम कटे कटि जांही, जे देखें ते सारा पछिताई ।
सकल उमराव जिहं सूं बेराजी, सारो रहावणो कोई न राजी ।३८२।

बूढा पैं इतरा गुण होई, जिंहं की बात न मानैं कोई ।
(जो) बूढो सुबुध की बात उपावै, जिंहं की बात न काहू भावै ।
बेटा पोता और बंटावू, सकल कहें इहनैं उठावू ।
जहंठै बूढो बैठो होई, जिंह की काणि न राखै कोई ।।३८३।।

नान्हां मोटा जितरा आवै, देखि देखि बुंहे मुसकावै ।
मन मांनै ज्यों बोलै आई, बुंहका मरम कटे कटि जाई ।
तरणां तरणीं मसकरि ठांणै, बालक सो उंहनै जाणै ।
अस्त्री पुरख राव रंक सोई, लेख प्रमाण बूढो सब होई ।।३८४।।

जसपाल कैं घरि विभौ एतौ, राजा के बराबरी जेतौ ।
जिंहं कै मनी बहोत मन महें, चौदासै बरछी नित रहै ।
बडा बडा सूरवां सांवंत सोई, बापैता साखेता सोई ।
ज्यांनै नखै सुं करै न न्याळा, पळ पळ मांहैं करै संभाळा ।।३८५।।

जिंह के घरि दरबार ज होई, राजा की गिणत न राखै कोई ।
को मौंसर राजा कैं आवै, करि मुजरो तब ही उठि जावै ।
राजा कैं वसुधा (है) जेती, अर कंवरा की बसी समेती ।
ज्यांह मैं साह करै ते सही, और न चालै कोयां की कही ।।३८६।।

।। दूहो ।।

दरबार सदा जसपाल कैं, चौदहसै रहैं हजुरि ।
बरछी ज्यांका हाथ मैं, वांनै करै न दूरि ।।३८७।।

मुकता अमल खुवावजै, मुकता दीजै माल ।
साह नखैं बैठा रहै, अरियां रैं उर साल ।।३८८।।

हमीर मिल्यो जसपाल सूं, मन मैं कियो विचार ।
राजा म्हासूं कोपियो, थांसूं अबै जुहार ।।३८९।।

जसपाल उठि बोलियो, सुणिज्यो कंवर हमीर ।
तैं जादू मारया भला, खोई म्हांकी पीर ॥३६०॥
क्यां नैं जावो राव पैं, क्यां नैं करो जुहार ।
मुकतौ द्रव्य म्हां नखि लहौ, यो थांको घर बार ॥३६१॥

॥ चौपई ॥

जिहकैं हम्मीर दिन उठि जाई, आपकौ दुख सुख कहै सुणाई ।
कह्यो मैं जाण्यो भलो मानिसी राजा, म्हां की बात होयली ताजा ।
मैं कोण भेद सूं जादूं मारया, जिह कारण राजा दुतकारया ।
म्हांको करम गयौ छै फूटी, एक दिसा छी सो पणि तूटी ॥३६२॥

॥ दूहो ॥

जादू सारा मारिया, मैं तो कियो कुदाव ।
दिस म्हां तोडी हाथ सूं म्हां परि कोप्यो राव ॥३६३॥
कांई करसी रावजी, कांई करसी और ।
जसपाल कहै हमीर सूं, या भी थांकी ठौर ॥३६४॥

॥ चौपई ॥

जु कोई दरबार मैं आवै, जिह आगै म्हांको दुख गावै ।
अति मुंहड़ै छूटो गाळी बोलै, म्हांसूं कहै तूं फीटो डोलै ।
थां पणि सुणीक अबैं सुणोला, थां ही म्हांकी भली कहोला ।
और हूं वेंठा सूं काढि दिवायो, दरबार म्हांसु मनें करायो ॥३६५॥
सुणत जसपाल बोल्यो यौं जबही, थांकी बात म्हां सुणी (छै) सबही ।
जद्दयां आदमी बूढौ होई, मति भिसट होय छै सोई ।
राजा तिरिया हाथि बिकाण्यौं, जिह सूं करै आपणो जाण्यों ।
थां कांई बुरी कीन्ही बांसूं, जिह को जस पणि दोयो थांसूं ॥३६६॥
वां सूं कितरा ही बरस लड़ता ही भया, कंवर उमराव सारा हठ रह्या ।
और कितरा ही दांम लगाया, बड़ा बड़ा जहां डील खपाया ।

जादवां सेंती कोई नही जोत्यो, जो चढि गयो स आयो रीतौ ।
थां सूं घणा हुवा म्हां राजी, थां राखी छै सारी बाजी ।।३६७।।

राजा थांमैं नांहो जाणी, वहतो रह्यो परहाथ बिकांणी ।
अब कोई चिन्ता नहि कीजै, अंछया होय स म्हां नखि लीजै ।
थां तौ कांम बड़ौ ही कीयौ, बडो देस राव नें ले दीयो ।
घोड़ो सिरपाव मंगाय कै दीन्हौ, वहां देस हैं विदा ज कीन्हौ ।३६८।

कह्यो थां जादूंवाटी बैठो जाय, लोग बसी हैं जाव लिवाय ।
ज्यां है मुकता झाड दिवावो, भलो भांति सूं अमल जमावो ।
जो कोई वेंठै राजा को जाई, जींहे दीज्यो मारि कढाई ।
ज्यौं म्हांसूं जादू लड़ता वेंठै, जींही रोस लडौ थां जैंठै ।।३६६।।

एक समै यो इसड़ो लयो, जसपाल राजा नखि गयो ।
करि मुजरो अर बात चलाई, जादूं मारचा हमीर दे जाई ।
वां कौ सारो देस खोसि कै लीन्हौं, अर भलीभांति सूं
अमल ज कीन्हौ ।
देबौ लेबौ तो थांकौ रह्यो, भलो भलो तौ हमीर सूं कह्यौ ।।४००।।

।। दूहो ।।

जैति कहै जसपाल सूं, मति ल्यो वहं को नांव ।
देस निकालो दीजिये, करौ खालसै गांव ।।४०१।।
जसपाल कहै राजा सुणौ, वें करचा भलेरा कांम ।
थां भलो जस वंहं नैं दियो, करो खालसै गांम ।।४०२।।

।। चौपई ।।

जो सुणत हि राजा उठचो रिसाई, उंह की बात थां भली चलाई ।
उंह नै क्रम कीन्हों अति खोटौ, मामा मारि पाप कियो खोटो ।
उंहको मुख न देख्यो जाई, उंह नै अैठा सु दयोह कढाई ।
उंहनै जायगैं नहीं ज अैंठे, मन मानें जावो वो जेठें ।।४०३।।

महाराजि तो बोझलि हो रहो, इसी बात थां क्यों करि कहो ।
(वेंठै) वांसूं कितरो धोंकळ हूवो, कदें ही जादूं एक न मूवौ ।
अर कितरा दिन लडतां ही लागा, खेड़ खरच है दमड़ा आगा ।
इहनै मारि सांथरो दीन्हो, अर सगळो देस खोसिकै लीन्हो ।।४०४।।

वहं सूं म्हांसूं नाही बणती, वहं की म्हांकै किसी गिणती ।
(जो) हमीरदे सोना को होई, तो पणि म्हांकै चाहि न कोई ।
अौर हंमीर हुयो जदि पारस पायो, गढ बास्यो अर देस बसायो ।
वांसूं म्हांसूं प्रापति याही, उंहकी बात न फेरि कहाई ।।४०५।।

अर बो उंहठै ही उठि कर जासी, सारो देस खोस करि खासी ।
तौ थांका हाथ सूं देस पणि जासी, अर ऊंहैं मारचा अपजस आसी ।
वहं की थोड़ी बहोत दिलासा कीजे, पुत्र ह्यं सो उहै पणि दीजै ।
...., ... ।।४०६।।

अब थां अणबोल्यां ही बैठा रहौ, उंह की बात फेरि मत कहो ।
वो देस जाय अर वो पणि जावो, वो आपण हो नैं कांटा बावो ।
थां पणि मुद्दड़ै मति लगावो, दाय पडै जहठे वो जावो ।
अौर सक्ल की अरज करीजै, म्हांसूं वांको नांव न लीजै ।।४०७।।

सुणि कर साह घरां उठि आयो, हमीरदेव जिह तुरत बुलायो ।
थां की बात म्हे राजा सूं कही, क्यों राजा कैं चित बैठी नहीं ।
थां तो कांणि न चूरो कोई, भय बिना लाल प्रीत न होई ।
म्हांकौ कह्यो करो थां जाई, आल्हा आल्हा करो छो कांई ।।४०८।।

जब हमीर जसपाल सूं कहै, म्हांकी बाजी थां सूं रहै ।
म्हां थांकी बात सूं हूवा ताजा, म्हां कै तो थांही छौ राजा ।
म्हां है थां बहोत क्यों दीयो, कोई एक द्योस देखूं छूं कीयो ।
पाछै हूं उंहठै ही जास्यूं, थां हुकम करचो ते जाय करास्यूं ।।४०९।।

।। दूहो ।।

ए बातां सुणी हमीर की, साह हुवो खुस्याल ।
घोड़ो दीन्हौ चढण को, अर मुकतो दीन्हो माल ।।४१०।।

॥ चौपई ॥

आगैं साह करतो अति मया, हमीर हैं देखि आवती दया।
फेरि इकलास नवो अब बांध्यो, जिह रैन दिनां दरबार हि साध्यो।
हिलिमिलि दोनूं एक ह्वै गया, जब हमीरदेव राजी भया।
जदी कवर नै मतो उपायो, आपकौ साथ सब नखि बुलायो ॥४११॥

सकल दरबार वांही सूं भरई, साहजांणै ए चाकरी करई।
जसपाल का लोग सब गाफिल रहैं, इकलास जाणि कै ढीला बहैं।
दोन्यों जोला बैठा जाय, तीजो कोइ नखैं न आय।
जिह को निमत ज पूरो होई, कोटि सयाणपि भूलै सोई ॥४१२॥

॥ दूहो ॥

कीन्हो मतो हमीर नैं, साथ सूं कही समझाय।
हूं मारूं जसपाल नैं, मसलति कैं मिस जाय ॥४१३॥

॥ चौपई ॥

हमीरदेव इसड़ो बंध कीन्हों, उंहकौ साथ टाळि कै दीन्हौं।
जब आपका साथ सूं कह्यो बुलाई, थां सावधांन सा रहिज्यो भाई।
जिह घडी ज्यांसूं बात कहाई, हूं मारूं जसपाल नैं जाई।
हथियार गहै जिहै थां मारो, भागि जाय जिह सूं द्यो टारो ॥४१४॥

हमीर जसपाल मसलति कराई, दोनूं अकेला बैठा जाई।
उंह को काल लग्यो जब आई, ते मारि कटारी दियो ढुलाई।
जिहनैं काल आय करि छावै, जिहनैं बुधि एक नहि आवै।
काळ हीं आय विपरीत उठावै, वोही विपरीति काळ होय खावै।४१५।

मांझी मारचो गोठि विणीठी, और हुता सो भाग दे पीठी।
पांच सात आदमी भला सम्हाया, ज्यां मिलि घणां ही लोह उडाया।
बहोत आगै थोडा ते कांई, वें तो मारि लिया पल मांई।
और हवेली लीन्ही घेरी, पाछै नर भागा करि करि सेरी ॥४१६॥

या खबरि राजा जब पाई, पोल्यां भेजि तहकीक कराई।
और साथ जेठैं बहोत खिदायो, ज्यांहे भेद सारो समझायो।
साहू की ग्वाडी घेरी जाई, महोकम करि बंधवसत कराई।
कह्यो जतन कंवरिका कीज्यो, अैठै बेगा मोकळि दीज्यो ।।४१७।।

बहोत साथ जठै गयो चलाई, ते सौह दीन्हा चौथि बिठाई।
कह्यो सावधान सूं चौकी दीज्यो, कंवर कहै तेही विध कीज्यो।
उमराव सकल अैसे बतलाया, आप कंवरजी राव बुलाया।
सुणत कंवर राजा नखि आई, राजा लीन्हौ छाती लाई ।।४१८।।

॥ दूहो ॥

मारि कंवरि जसपाल कुं, जाय जुहारह्यो राव।
फूल्यो अंग न मावई, मन मैं हूवौ उछाव ।।४१९।।

॥ चौपई ॥

राजा फूल्यो अंग न माई, अति आणंद्यो करे बधाई।
धनि वो दिन तिह दिन तूं जायो, धनि थारी मां जिह कै उरि आयो।
हूं पणि धनि तूं पुत्र छै म्हारै, तूं पणि धनि थारै बलिहारैं।
ए दोउ दुख तें भला कटाया, अै और पुत्र सौह यौं ही जाया।।४२०।।

रूपो सूनो हाथी घोडो, देस परगनों दद्यों ते थोडो।
म्हारो घर सारो तो आगैं, बैठा मांणो ई ही जागैं।
जसपाल साह को वीभौ सारो, घर बार मांणस सूंधा थारो।
जिहिं विधि छो साह को दावो, ज्यों ही थां सब काम चलावो ।४२१।

जद्यां हमीर तसलीम ज कीन्हीं, धनि धनि पिता दादि मोहि दीन्ही।
कहै यो काम क्रियो छै कांई, थां कहस्यो सो करिस्यों सांई।
जे ठै पसेवज थांको परई, जेठै म्हांरो रूहियर ढरई।
हूं निवाजि करि थां मोटो कीयो, राम करै थां बहोत ब्रस जीयो।४२२।

जसपाल गहि करि कोट चिणायो, मारयो मारयो सारे ज सुणायो।
राव रंग राजी सब हूवौ, कंवर राहणों हरखै जूवौ।

साह मारचो सारां सुख पायो, सौह कंवर बिदुख्या हमीर वधायो ।
रांम रचना रची सो होई, बिहका लिख्या न मेटें कोई ।।४२३।।

जसपाल साह कें बेटा दोय, पंदरह बारह बरस मैं सोय ।
जिह कै बेटो छै एक अनूप, ते दिव्य पदमनी रंभा रूप ।
सुभ लक्षरण बरस बारह मांही, कंवारी कंवरि कहूं ब्याही नांही ।
जे तौ हमीरदे घर मैं लोन्हीं, बहोत प्यार की रांणी कीन्हीं ।।४२४।।

हमीरदेव कमेती कीन्हों, सकल बोझ राजा जिह दीन्हौं ।
ते भली भांति सूं काम चलावै, देखे सुणें बहोत सुख पावे ।
रयत साथ सौह राजी कीन्हौ, भायां सुधां अनंत जस लीन्हो ।
सौ वर्स ऊपरि राजा हूवो, जिहनैं राजी राखै जूवो ।।४२५।।

सकल कंवर गढ बारैं रहै, ज्यांका घर माण प्रगनां महें ।
ज्यांहैं चिन्ता और कोइ नाहीं, सुख मांणे बेठा घर माहीं ।
जे आप आपहैं राज गुदारें, कदे हि न आयके राव जुहारें ।
ज्यांसू राजा राजी नांही, चित्त चुभ्यो हमीरदे मांही ।।४२६।।

ज्यो राजा का हीड़ा करें, राव कहे ज्यूंही पग धरें ।
सकल रावळो राजी रहें, जिह सूं गढ भलां सब कहें ।
अवर साथ है राजी राखैं, राव रंक सौह धनि धनि भाखैं ।
अैसें करत बरस द्वे गयो, राजा आश्रम चौथें भयो ।।४२७।।

पहली माल साह को आयो, पाछै भंडार राव को पायो ।
जिह कें दाम अलेखें भयो, माथो आभि लागि कैं गयो ।
कोइ सत्रू जंठै सीस उठावै, जैंठे जाय सरद करि आवै ।
जब राजा रीझ के टीको दीन्हो, पारस लेयर हाजर कीन्हो ।।४२८।।

जो राजा को मिलापी आवै, जिह सूं राजा बात कहावै ।
ए दोय दुःख बहोत छा म्हांनै, ज्यां की बात कहां छां थांनै ।
एक जादूं अर दूजो बाण्यो, हूं यां दोयां सूं अति अकुलाण्यो ।
कंवर उमराव सारां सूं कही, कोयां नखें क्यूं सुधरी नहीं ।।४२९।।

जादवां परि सारा चढि गया, दमड़ा पणि खरचि कितरा भया ।
और साथ पणि कितरा मुवा, तौ पणि सरद कदें नहीं हुवा ।
ऊपरि बोल न हूवो कबहीं, मोनैं चिख लागी छी जबहीं ।
म्हां तनक बात हमीर सूं कही, जिण सूं किसड़ी बाजो रही ।४३०।

और बाण्या नैं मनि अति गही, जिह म्हांरो बात न मानी कही ।
वो पणि जाण्यो करै छो सोई, म्हांरी कांणि न मांनी कांई ।
मोनैं रोस छूटचो जब भारी, यों कही बात कंवर सूं सारी ।
अर उमरावां सूं पणि कही सोई, जिह परि धीर धरें नहीं कोई।४३१।

ए म्हांरी बराबरि का बेटा सारा, हूं ज्यांका करतो बहोत उभारा ।
ज्यां मैं अहंकार कहु मैं नांही, बैठा सुक्ख करें घर मांही ।
और उमराव रजपूत घणा छै, एक सूं एक इधक बण्या छै ।
कहुं पै हिम्मति न हूई इतरी, (ई) हमीर बाण्यां सूं कीन्हीं जितरी।४३२।

म्हैं सोह बेटा कपूत करि जाण्यां, यां सूं तो नींका केई बाण्यां ।
जिह की गिणत न करौं कोई, जिह कीन्हीं थां देखी सोई ।
इंह डावडे भली संभाळी, यो करसी गढ की रखवाळी ।
अंतकाळ मोनैं सुख दीन्हों, करि राजी अर टीको लीन्हों ।
जिह वर्ष अठारह राज कुमायो, मास सात उपरांति कहायो ।।४३३।।

।। इति श्री तृतीयोऽध्याय संपूर्णम् ।।

चतुर्थ अध्याय

।। चौपई ।।

आरबलि जिहकौ पूरण भयो, हमीर देव हें टीको दियो ।
संवत तेराहसै इक्तीसे सार, फागुण बदि दोयज गुरुवार ।*
जिहनै पोल्यां मैं रजपूत रखाया, और कंवर आबा नहीं पाया ।
पिरि फिरि गया संदेसा कह्या, माथो पटकि बैठि कैं रह्या ।।४३४।।

* हमीर महाकाव्य में यह तिथि माघ सुदी पूर्णिमा सं. 1339 दी है । प्रबध कोश में यह तिथि 1342 वि. दी है ।

॥ दूहो ॥

बैठो राज हमीरदे, ठाकुर मिलिया आय ।
घोड़ा अर सिरपाव सूं, दीजें पटा सवाय ॥४३५॥
सबैं साथ राजी कियो, भाई लिया मनाय ।
राज करै हमीर दे, बैठा धरती खाय ॥४३६॥

॥ चौपई ॥

गढ को राज हमीरदे पायो, जिहनैं दूणो बास बसायो ।
बाग बगीची कूवा बाय, जिहनैं जैत सूं करी सवाय ।
मुंहडै च्यारूं दरा बंधाया, मांहै मांहै ताल रखाया ।
जिह सारो डूंगर घेर बंधायो, घाटी घाटी कोट चुणायो ।
सोळह कोस लौं बंध्यो लंबाय, आठ कोस बांध्यो चौडाय ॥४३७॥
दिस उगोंणी डांगज ऐती, जाय लगो धंधेडा सेंती ।
दिस आथौंणी एती धरा, बौंळी बंणहंटौ डूंगर परां ।
देव देहरा मंडप माळां, चौग्रीदां गढ कै करि राल्या ।
गढ के तट दोय ताल बंधाया, ते गंदोदक नीर भराया ॥४३८॥

॥ दूहो ॥

संभरि नरेस हमीर वर, भूप वेद महसूर ।
जिही नाम अविचल कियो, रणतभंवर गढ पूर ॥४३९॥
दोय हवद ता तटि दिपह, मानसरोवर तूल ।
ता मधि बाग (हु) बर्णवूं, रहे पंक जहां फूल ॥४४०॥
बरणों बाग हमीर को, जाति जाति के रूंख ।
मधुकर जहंठै गुंजई, देखत भागै भूख ॥४४१॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

जिहां आंबहु आंबली खीर घनी, जंबुवा निंबुवा बडबेर बनो ।
कडहल बडहल गूलरयं, दड पीपल साख ज भूमरियं ।

तिहां ताड बकायण नींब जिके, मधि सोभत रूंख अंजीरन के।
सिरु केलि खिजूरि सुपेद महा, भुकि आंवली डाल सुबास तिहां।
अगथ्या तरतूंत सुहेजणियं, फुंनि दाख छुहारा बादांमनियं।
जहां पिंड खिजूरि नारेळ घनें, किसमिस वा दाख बिजोर बने।
बिचि चंदण बास महकत यों, पिसता फल लौंग इलायचियों।
बौह बौलसरी सीसौं पाडळियां, फुनि पीपल वेल महा भरिया।
ल्हसव गूंदिया तर सिंभलके, बरना करना'र कदंमन के।
सिरस केतकी केवड़ा फूल फले, और चंपा चंबेली सेव तले।
मरवा मोगरा जूही जाय पिली, मधि सोभत कुंज गुलाब खिली।
अब नांव कहूं गुल जातिन के, किलंगा बौह भांति हजारिन के।
गुलबांस अनेक जू फूल रहे, फुनि बहरूं सूरजमुखी ज कहे।
अबरूं हंमाउ ते मुखमलियं, गुडहल सोसन नर्गसियं।
जहं नांफुरमान'र दाउदिया, कनीयर फुनि लाल खेरू कियां।
भरि केसरि क्यारी कमोद किते, अर नागर बेल के पांन जिते।
बहरू कहूं रूप महलन के, खण ऊपर खण्ण भरोखन के।
जहां जाली बनी केउ भांतिन की, महा रंग रंगी खिड़की तिनकी।
चितराम करी चितलाय जिहां, मधि वोवरी साल हमाम तिंहा।
जै ठें कारंज रूप अनेक छुटै, मांनु भादवा मास प्रवाह टुटै।
फिर कोट निकट रह्यो जिनकें, करि कांगुरे सेत बुरज्जिन के।
बरने कवि रूप कहां लग ते, इति खेम कहैं सुनि सार जिते ।।४४२।।

।। दूहो ।।

कहां लौं बरनूं बाग को, कहूं कहां लौं जाति।
कविता यूं बिनती करे, काबि सरस हुइ जात ।।४४३।।
पंछी बास अनेक जहां, मधुकर गुंज कराय।
भरनाट करे केइ भ्रंगनां, नौलखै बागन भांय ।।४४४।।

।। छंद मोतीदांम ।।

जहंठें बोहौ कोयल कूक करे, केइ कोकिला रूप अनूप धरे।

जहँ मैना सारोइ तूतो उचरें, केउ हजारां मोल अमोल सरें।
जल फोदयां बया'र बबीहो घनी, फुनि पीलक चात्रक केल बनीं।
महामोर चकोर कहो कतनी, केइ जाति कबूतर छोपकनी।
बौह लाल मन्या अर खंजन है, बनिया जिनके द्रिग अंजन है।
बौह भांति चिडी अर बुलबुलियां, स्याह स्वेत पीत अर हुदहुदिया।
केउ पंडक खुमरी कोचरियां, जहठें लाल सबज रंगो चिरियां।
बौह गुरगुल और हरेल हरो, केउ स्याह चिड़ा और सौंनचिरी।
बौह कुरचि लखैरी सारसियां, जहां टुकल्या बुगला टींटरियां।
कुही सिकरा जिमच बाज भंवैं, जहां बहरी लंक'र भीझ रवें।
अर पंछीय जाति अनेक घनें, जिह कब लग किबता नाम भनें।४४५।

॥ दूहा ॥

पंछी जाति अनेक है, बरनत है सब कोय।
सुरतां पंडितां कह्नत है, नैणां न देखी होय ॥४४६॥
रणथंभगढ इतरो बड़ौ, कोस दोय उपराय।
साढा तीन कोस जड कहुं, चौग्रिद तळै फिराय ॥४४७॥

॥ छन्द अरधनाराच ॥

बसंत बास सोभियं, ते लच्छि अच्छि भोगियं।
छतीस पौंण सुक्खियां, ते कोटिधज्ज मुक्खियां।
सहस्स एक हट्टियां, अनेक छब्बि पट्टियां।
सोहंत मधि कोटड़ी, अनूप जेब जो जड़ी।
आवास स्वेत बंगले, ते सात खण्ण संभले।
झरोखे खंभ जालियां, किंवाड़ लाल बारियां।
जहां हेमकलस सोहए, चित्राम चित्र मोहए।
अनूप रूप झांकियां, उतंग ऊंची बांकिया।
उत्तम नरां पेखिए, ते भूप सम लेखिए।
सोहंत साह हाट में, ते हीरा मोती ठाठ में।

कहूं तो हेम काटी हें, पाटंबर चीर साटी हें ।
अष्टधात ब्यौपरें, जरावसाज जो जरें ।
वस्त्र महंगा मोलके, ते चीर जरी तोल के ।
हथ्यार भांति भांति के, सकेल सार जाति के ।
तंबोली पान बेचईं, फूलादि फूल के तईं ।
तयार भोग सो रहें, जो चाहें जीव सो लहें ।
जु ठाम ठाम चाव हें, अनेक भांति भाव हें ।
कहूं तो गीत नाद हें, कहूं तो वादि वाद हें ।
कहूं तो वेद बांचई, कहूं तो नट्ट नाचई ।
पढंति विडंद भाट हें, जहां बैठा सुर ठाठ हें ।
कहूं तो कथा होत हें, सांगीत छंद जोति हें ।
कहूं तो गेंद डूलि हें, पखरेत फिरे फूलि हें ।
कहूं तो अखाडे मल्ल हैं, तुलंत तेज बल्ल हें ।
रणथंभ दुरंग देखिए, जु इन्द्रपुरी पेखिए ।।४४८।।

।। दूहो ।।

रणथंभोर गढ जौ बसै, सब विध भोग कराय ।
राज करै हम्मीरदे, इता परगनां खाय ।।४४९।।

।। नीसाणी ।।

भदळाव पहाड़ी मलारणो जौरोतो जांणी ।
सलेमपुर उदेही उजीरपुर लालसोट कहाणी ।
बौंळी निवाई चाटसू खिरणी जु बखाणी ।
सारसोप लिवाली बणहटो वो टोडो टोंकाणी ।
अंवानगर नैणवो डरियारो आंणी ।
मालपुरो मोंजाबाद ले भिलाय भिलाणे ।
लोहरवाड़ो विचगडी बरवाड़ो बाणी ।
खाटचाणो छापण ढीपरी बालू पौपांणी ।

तळाव खातोली ख्यांवदो देलवाडो ढाणी ।
पाटणि बारांई सलेमपुर सांगोद सुहाणी ।
फुसौद गुराई जैतपुर धनवाडौ धांणी ।
बूंदी कोटो पतळाइथो वो बडोदि जराणी ।
सीसवाळी इंटावो लुहावद लेय मांगरोळ महांणी ।
कुभराज खटकड़ गोरड़ी जल्हवाडौ जांणी ।
कहद कुजोड गोगौर ले आटोंणि अटाणी ।
बीथोर पिडाई कोटडी भटनेर कहांणी ।
बौंळी बालाखेडी यो दुबलाणियो बंभोर बिहाणी ।
खाताखेडी चाचरणी सौह धरा और धंधेडो टांणी ।
सोपर खंडारि खिलजीपुरो अहलापुर आंणी ।
इता प्रगनां ऊगहें रणथंभगढ आंणी ।।४५०।।

।। दूहो ।।

राज करै हमीरदे, इता परगनां खाय ।
मांडूगढ मनमंथ सूं, दिन उठि राड़ि कराय ।।४५१।।
मांडूगढ मालवा महें, जठैं राज करै मनमत्थ ।
जिह की हमीर सूं द्रोहता, तिहकें लाखां सत्थ ।।४५२।।
काको राव हमीर को, महाराज बांकड़ौ नांम ।
जिह कैं मुंहडै वो रहैं, जे करैं नित्य संग्राम ।।४५३।।
खाता खेड़ी जो रहे, मउ मैंदाने ठांम ।
वो ऊंठं थांणैं रहै, जों महाराज बांकडौ नाम ।।४५४।।

।। चौपई ।।

जिह कें दाग कोढ को आहि, सूग करै वच कोई ताहि ।
दरबार हंमीर के वो जब आवै, घडी एक बैठि अहौंठो जावै ।
जिह की बैठक छांटा दीजे, इसी सूग काका की कीजै ।
जो बात महाराजा सुणि कैपाई, क्यूं कह न सकै मन मैं पिछताई।४५५।

जब वो ऊठि गयो आपकै थांणै, मांडूगढ सूं नित जुध ठांणे ।
मनमथ की फौजां चढि करि आवैं, जिहनै अहोंटी मारि भगावैं ।
ज्यां मैं लड़त केइ व्रष भाग्या, जदि मनमथ हें अहंकार ज लाग्या ।
महाराज हें कागज लिखि भेज्यो, भेम्हां आवां थां बैठा रहिज्यो ।४५६।

जिहनें अहोंटो जुवाब लिखायो, लगाय चोख अर बेग बुलायो ।
कालिह आवो छा ते आजि ही आवो, अर एकें जायगें खेत भड़ावो ।
म्हां तो थां सूं खरी प्रगासी, सौह खबरि चौड़ें पडि जासी ।
थां बचन कह्यो ते पूरो कीजें, बचन जाय कौल गहो जीजें ।।४५७।।

जदि मनमथ राजा करी चढाई, देस देस की खेड़ बुलाई ।
महाराज लिख्यो हमीर हें कीन्हों, सब साथ खिंदाज्यो यो लिखि दीन्हौ ।
भला भला रजपूत खिंदावो, साथ खिंदाज्यो थां प्रति आवो ।
म्हां अर मनमथ खेत भड्यो छै, मनमथ अबकैं आप चढचो छै ।४५८।

घणो साथ रणथंभ सूं गयो, सिमटि मऊ को इकठो भयो ।
आगैं पणि उंहठै बहोत रहै छो, जिह कैं बल ही जीत गहै छो ।
सारा मिल कैं गया चलाई, ते पेली हद मैं बैठचा जाई ।
जिह जायगे जायर खेत भड़ायो, जिहठैं मनमथ कोकि बुलायो ।४५६।

मनमथ राजा चढि करि आयो, सिमट माळवो सग्ळो धायो ।
देवगिर आसेर को साथ बुलायो, सूरत खंभायच गुजरात को आयो ।
सौह मांडू देस चढचो धरि जेती, सगा मिल्या मदति की एती ।
मनमथ चढचो विक्रम की नांई, ऊडी रज धर अंबर छाई ।।४६०।।

दोऊ दळ जब इकठा हूवा, दहूं त्रफ सूरवां हरखैं जूवा ।
कायर मुख गया मुरझाई, सूरवां राती चढी सवाई ।
दळ हें दळ जब निजरां आया, बधि बहलायता दर्श दिखाया ।
तीर तुपक नही पड़ी लड़ाई, दहुदळ पड़िया बाग उंचाई ।।४६१।।

॥ छंद त्रोटक ॥

कढो तरवारि अपार जिके, मंडया असवार हंकार तिके।
भड़ाभड़ मार भई झटकां, जे अडाअडि होय पड्या कुटकां।
कड़ाकड़ि हाड करें कड़का, सड़ासड़ि सांट बहे सड़कां।
बड़ावड़ि माति रहोज भड़ें, दडादड़ि लोथि सूं लोथि अड़े।
तड़ातड़ि सार सूं सार झड़े, जुड़ाजुड़ि मुंड सूं मुंड अड़े।
दहूं दळ मारहीं मार कहै, भड़ सौहड़ सूर उपट्टि बहै।
तन त्यागि कें खाग की आस करै, सूर स्यांम के कामहें जीव धरै।
जु बुकारि बुकारि बुलाय लियं, हंकारि हंकारि जुवाव कियं।
भई रहचक भहचक मांती घणी. उडै लोह समोह ज दोनु अणी।
भयो रंभ अचंभ ते चाव हंसै, मुख सूर के नूर महा बरसैं।
घन घाय अघाय कें साम्हो परें, बर-माल लिये रंभ ताहि बरै।
असवार सूं सार सवार कियो, प्यादे जो पालोहि आय लियौ।
तुरि छांडि कें भांडि उतारि लड़्या, एक मेक हुवै हिलि मीलि पड़्या।
है गजराज महाज पडे, ते उचंदि उचंदि भसुंड भिड़े।
बळा बळि जुद्ध सूं जुद्ध भयो, गळागळि ग्रीभनी मख्ख लियो।
चौसठि औहठि हीं धाय गयी, रज पूरि यों सूरयों रैंन भई।
मनमथ हथ महराज लियं, महराज यों गाजि कें घाव कियं।
खेंचा खेंचि अंचे घरंनो जु परें, जुड़ा जूडि मल्ल ज्यूं बाथ भरें।
लथपत्थ हुवें दोउ जोध महा, लट पट्टि उलट्टि उमट्टि महा।
बथा बथ हाथ सूं हाथ भरें, गिरि गिरि परें उठि उठि लरें॥
मनमत्थ अकत्थ ही मारि लियौ, महाराज नै गाजि कें नीचे दियो।
मतमत्थ मरचो सब साथ डिग्यो, एकहें एकते छांडि भग्यो।
खेत सूं हेत महराज कियो, पडचो घाय अघाय दिन च्यार जियो।
॥४६२॥

॥ दूहो ॥

पहल्ली साथ खिदाय कें, पाछें चढचो हमीर।
सकल लडाई हो चुकी, जदि जाय पहौतो तीर॥४६३॥

मनमथ मारचो जीव सूं, घावां भिल्यो महराज ।
जिह हमीर आयो सुण्यो, जब बोल्यो गल गाज ।।४६४।।
कहियो जाय हमीर सूं, पूरण हूवो काम ।
मोनें आय थां ले चलो, तो छांडू रण ठांम ।।४६५।।
जब उतरि हमीर पाळो हुवो, जाय दई पग धोक ।
करें मनुहार ते अति घणी, (कहे) थां लीनो जसलोक ।।४६६।।
कै बैठक छिड़कावतो, धरतो केई नांम ।
जीहैं ले कांधै चल्यो, इसड़ो प्यारो कांम ।।४६७।।

।। किवत ।।

महराज खग अरि राय हो, सु चुवै सेज भीजै घनी ।
पीव पावस बासना बसन दांसन हुलासै ।
अरि मोर दादुर मेर गिर सिखरां बासै ।
पीव पोव चुवंत चुवंत पपीहा कांम रस ।
आप पौरि रह्यो बंकडो बीर रस ।।
भीजि अनंग तन मन चुवै, मनमथ सीर संभी हनी ।
महराज खग अरिराय हो, सु चुवै सेज भीजै घनी ।।४६८।।

।। चौपई ।।

मनमथ मारचो साथ सौह भाग्यो, राव हंमीर मांडू जाय लागौ ।
धणी बिना धौळहर कैसो, हमीर राव मांडूगढ बैसो ।
फेरि दुहाई अमल जमायो, मनमथराव को खोज गमायो ।
मेल्हि कमेती थांणो रखायो, आपण फिर रणथंभ गढ आयो ।४६९।

।। दूहो ।।

गढ रणथंभ सुबस बसै, जैठै अनड पहाड़ ।
राज करै हम्मीर दे, (कोइ) काटि न सक्कै झाड़ ।।४७०।।

एक गली राखी जठै, घाटी दरा सब बांधि ।
बरखा ज्यूं झरणा झरैं, भरी नीर सूं सांधि ।।४७१।।
खुली बाट अहलादपुर, जठै रह कमेती जाय ।
जुड़ै कचहड़ी राव की, सौह चुके प्रगना आय ।।४७२।।

।। चौपई ।।

नचींतो गढ पर राज कुमावै, सत्रु कोई नहीं सींव दबावै ।
भरि जोबन मैं उपटा बहैं, दिसट करूर झलाहल रहैं ।
खेले सिकार डूंगरां जाई, जहंठै जोगी एक रहाई ।
दर्शन हें राजा गयो जहंठै, वो आवत देखि पीठ दे
बैठै ।।४७३।।

बाकलीपाव जो नाम कहावै, भूखो होय जब बकळ ही खावै ।
जिह दर्शन न दियो राजा दुख पायौ, राजा रोस भरि इक मतो उपायो ।
मैदा खांड मधि घिरत मिलायो, वो न जाणैं रूंखां लपटायो ।
जोगी हें भूख जदि लागै आय, आगली रोस बकलवो खाय ।।४७४।।

तिहाड़ौ करि फिरि ताहि सिकावै, इसडी चीज जोगी नित खावै ।
जोगो कहै मैं तपस्या कीन्हीं, जिह की दादि राम भरि दीन्हीं ।
कहै तपस्या को गुण इसड़ौ भयो, यो बकल मिसटाण हुय कै गयो ।
खातां भया बहुत दिन जबही, जोगी मोटो हूवो तबही ।।४७५।।

।। दूहो ।।

राजा मतो उपाय करि, दासी लई बुलाय ।
डूंगर मैं तपसी रहै, जिहकौ तप्प डिगाय ।।४७६।।

।। चौपई ।।

जदि राजा इक चेड़ी कोकी, जे चेडी जोगी पैं झोंको ।
जिहनै बसत्र और पहराया, आगिला वस्त्र दूरि कराया ।

कंचन जड़ित भूषण पहिरायो, सोना को इकथाल मंगायो।
छतीस भोजन जिहमैं पुरसाया, सो चेडी कै हाथ दिवाया ।।४७७।।

राजा कहो चेडी समझाई, थां जींवावो अतीत नें जाई।
वो तोनै पूछेसी कठा सूं आई, तूं कहिजे इंद्रदेव पठाई।
मांणस दस साथि ले जावो, थां उहने दिखाई मती दिवावो।
पैंड दसबीस थां उरहा रहज्यो, छोरी नैं थां जाबा दीज्यो ।।४७८।।

।। दूहो ।।

चेडी आयस पैं गयी, ले कंचन कौ थाळ।
इन्द्र तणी अपछरा हुई, देखत की'र छंछाळ ।।४७९।।

।। चौपई ।।

जदयां आधी राति चांदणी भई, जब चेडी आयस नखि गई।
हींथै थाल मेल्हि जोड़्या कर दोऊ, जदि पूछै आयस तूं छै कोऊ।
कहै हूं अपछरा इंदर केरी, ज्यां भेजी छूं जींमण देरी।
थां तप अति गति ही कीन्हौं, तिणथे इन्द्र कांसो इह दीन्हों ।।४८०।।

जब आयस जीय सोच कराई, यो विधि होय तो होय परिण जाई।
आसपासि दोय कोस उजारी, इसी बार कुण आवै नारी।
और आभूषण इसड़ा को पावैं, अर कंचन थाळ कहां सूं ल्यावैं।
ज्यों बकळ मिसटांण होय कै गयो, ज्यों ही कारण यो पणि भयो
।।४८१।।

फिरि चेरी यों बात कहाई, थांकी इंदरजी करै बडाई।
जब ही कोडि तेतीसूं आवै, तब ही थांकी बात चलावै।
जदि सकल देवतां यो ठहराई, वाहैं चलतौ भोजन देह पठाई।
जदि मोनैं इंदरजी आप खिदाई, बैठि बिवांणि हूं भोजन ल्याई ।।४८२।।

जबैं आयस नैं भोजन जींयो, जीम चूंठ अर पाणी पीयो।
मुख न बोल्यो चळू कराई, कांसो पखाळि दीन्हों सरकाई।

ले कांसो चेरी फिरि आई, हूंतो साथ जिहां आय मिलाई।
मिल्यो साथ गढ आई नारी, राजा सेती आय जुहारि ।।४८३।।

जींमत भया बहोत दिन जे'री, जब राजाजी बूझी चेरी।
कदही क्यों तोनैं बात कहै छै, अकानां साध्यां मोन रहै छैं।
जोडि हाथ जिह अरज कराई, वो हुंके न पावसै बोलै कांई।
जींम कांसो अर चळु भरावै, धोय पखाळि कांसो सरकावै ।।४८४।।

जदि राजा चेरी (नैं) समझाई, अब थां रहो उंठै ही जाई।
आजि ओहटी मति आवै अहंठै, बैठी रहो जावो छो जहंठै।
उहकौ सत थां जाय डिगावो, दोय बालक उंहसूं उपजावो।
इसड़ा चिरत करो थां जाई, पाछै उंहै ल्यायो गढ़ चढाई ।।४८५।।

गहणौ सकल बकसीस ज कीन्हो, अर झोळी भरि कैं दमडो दीन्हौं।
यो थां खावो अर बैठा रहो, अहंठां को कोई बात न कहो।
आवो जिह दिन खबरि करीज्यो, उंहका सिर पर बालक दीज्यो।
जैं तूं कांम यो करसी म्हारो, करूं बडारणि हुकमी थारो ।।४८६।।

जब चेटी मतौ रहबा कौ कीन्हौं, जिह दिन साथ विदा करि दीन्हों।
उंहनै जाय कै अतीत जिमायो, अर मन मांहें चिरत उपायो।
जहंठै नारी बैठकैं गई, बैठा बार बड़ी सी भई।
कहै आयस क्यों बैठी आज, चेटी कहै दरसण के काज ।।४८७।।

पीछे उठि करि ठाढी भई, करि तसलीम पैंड दस गई।
उंहठा सूं गरळायर भागी, डरूं डरूं करि रोवै लागी।
कहै आयस क्यूं अहोंटी आई, म्हांरो बिवांण नहीं उंह ठांई।
तपस्या कौ गुण अब क्यूं कीजै, इंद्रपुरी पहुंचाय कैं दीजै ।।४८८।।

कहै आयस इसो हूं कायों, तोनैं पुहचाऊं उंहठा तायों।
थारो बिवांण कदचां अब आसी, जिहनै चढि तूं सुरपुर जासी।
जौ तौ इंद्रदेव पहुंचावै, उंह बरियां आवै तो आवै।
जब लग हूं तो बहुत डरूं छूं, कहां बैठूं अब कांइ करूं छूं ।।४८९।।

आयस कहै अहंठै डर छै कैसो, थां अग्निकुंड नखि आय'र बैसौ।
जीव जंत अहंठै नहीं कोई, भूत प्रेत छळ छीत न होई।
या देखत की छै इसी उजारि, सिंघ बाघ सौह नाख्या मारि।
.... ।।४६०।।

जब नारी मन में मुसकाई, बातां तौ लीन्हों छै लाई।
अब म्हारै आगै कहुंठै जावै, जतीसतो सूरवां बसि आवै।
जैठै कौंण जाति कौण छै राजा, ए कौणें का बाजैं छै बाजा।
कांईं छै राजा कौ नांम, किसो नगर छै उंहको ठांम ।।४६१।।

कहै आयस सुणि रंभा नारी, तैं पूछी तो कहस्यूं सारी।
जाति चोंहवाण हमीरदे नांव, रणतभंवर गढ वहको ठांव।
ते कोस दोय अैंठा सूं आगां, बडो ही गढ बड़ी ही जागां।
जहंठां को वो राज करै छै, यां डूंगरां मांहि दिहुं फिरै छैं ।।४६२।।

वा सरकत सरकत आवै आगैं, कहै महाराज मोनैं डर लागैं।
बोल्यो अतीत क्यों जोख्यो नांही, तूं डरपैं मति माहिला मांही।
ज्यौं ज्यौं रिगसती आगी आवै, त्यों त्यों अतीत पाछो सरकावै।
वा तो उंहकै पैंडे पड़ी, बैठी आय अंग सूं अंग अडी ।।४६३।।

जबै अतीत नैं इहैं विचारी, या पड़ी रहो डरपै छै नारी।
नारी कहै थे स्वामो म्हांका, कहो तो चरण पळोटू थांका।
अतीत कहै सुणि रंभा नार, म्हांसूं थांसूं किसा विचार।
तूं रंभा हूं जोगी कहाऊं, थां नखि कैसे पांव दबाऊं ।।४६४।।

जदि ही नारी हाथ लगावै, खीजि कैं जोगी दूरि करावैं।
करै कटाच्छ अर मोह उपावै, केई चरति करि पेम बधावै।
मुरड़ाटा सूं हाथ लगाया, जोरावरी सूं पांव दबाया।
आयस कहै अब कोठें जाऊं, अर इंह आगैं क्यों जाबा पाऊं ।।४६५।।

हाथ पांव अर मोर दबाया, अंग आयस के काम जगाया।
नारो कर मरद कौं लागैं, निपट कांम अपरवळ जागैं।

रूई अग्नि होय कैं जागैं, सो तो सिलगि लागैं ही लागैं ।
— — — — — — — — — — — — — — ।।४९६।।

आगैं मास दोय लों चीज खुवाई, ते चीज क्यूं पचै पचाई ।
हुई पुष्ट देहो अति मातौ, भयो संग चेडी रंग रातौ ।
भयो संग चेड़ी सूं सोई, जिहनें तपस्या सगळी खोई ।
जोगी रस नारी संग पायो, जप तप ग्यांन ध्यान बिसरायो ।।४९७।।

सब रस मैं नारी रस प्यारो, जे चाखै तो होय न न्यारो ।
नारी को रस इसो सुहावै, रेनि दिनां वोही रस भावै ।
जो नारी नर सूं नेह निबाहैं, आठूं जाम जींह नैं चाहैं ।
तिरिया रस मैं पड़्यो नर जोही, जो जाणैं जींहें बीती होई ।।४९८।।

जे नर परत्रिया रस मैं परइ, कुलकटूंब की कांणि न करइ ।
सिंघ हाकम सूं नेक न डरै, दमड़ा जीव की गिणत न करै ।
कोट नदी जे गिणे न खाई, चौकी पहरा लांघ'र जाई ।
होय अंध रस मैं भरि रहें, भली बुरी सब सिर पर सहैं ।।४९९।।

खिस्यो अनंग नींद जद आई, तिरिया जोगी पोढि रहाई ।
बीति निस भगसारो भयो, जोगी ऊठि सांपडि कै लयो ।
न्हांय धोय जपतप विधि कीन्हीं, तिरिया ठेलि गुफा मैं दीन्हीं ।
जिहैं च्यार पहर दिन भूखां गयो, आई निसा भांण छिप रह्यो ।।५००।।

जब जोगी तिरिया बतळाई, अब थांरो बिवाण कदयां सैं आई ।
कहै त्रिया बरियां जब होई, अरध रैंनि जो आवै सोई ।
बिना बिवाण हूं जाऊ कैठी, वो ही गेली देखूं छूं बैठी ।
पणि एक चिंता म्हारा मन माही, हूं थां भींटी आवैक नांही ।।५०१।।

कहै जोगी यो चिंता उपजाई, आवै कींधो क नांही आई ।
तूं तो म्हांनै छोड़ी न भावै, जब लग बिवाण थाकौ आवै ।
जब लग सुख औरूं भी दीजै, गई रैंनि ज्यों क्रीळा कीजै ।

नारी कै मन भावै सोई, कही बात जोगी नैं जोई ।
दोनूं फिरकैं हूवा भेळा, अरध रात लौं औरूं मेळा ।।५०२।।

जदि जोगी नैं सुरत कराई, अब देखौ जाय बिवाण जो आई ।
जदि अतीत नैं इण विध कहीं, दसैक पैंड जाय बढि रही ।
घडी दोयलौं बार लगाई, अर आय कह्यो बिवाण नहीं आई ।
मोनें बिवाण अब झालै कैसें, थां तो दोय दिनां हूं भुगती अैसें ।।५०३।।

अब थां कहो बिवाण नहीं आई, या चिंता (मुझ) अधिकी उपजाई ।
थां अहंठै रहस्यो तौ खास्यो कांई, हूं तौ लागूं बकळ कै तांई ।
त्रिया कहै हूं कहूं विसेखौ, थां आजि रैंनि तो कीयो देखो ।
आवै बिवाण तौ जास्युं हूं ई, नहीं तर अहंठै बैठो छूं हीं ।।५०४।।

जदि दोऊ मिलि पौढि कै रह्या, प्रात भयो आयस यूं कह्या ।
थां तो भूखो कांई कीजै, नारी कहै ए रुपइया लीजै ।
जाय कठा सूं सीधो ल्यावो, करौं रसोई मुकती खावो ।
जब जोगी ऊठि ठाढो भयो, रुपइया लेर गुढा मै गयो ।।५०५।।

दिन दस तो यारी मैं गया, पाछैं ग्रिहस्ती दावै भया ।
बांधि मढी जो बैठा सोई, जोगी जोगणि कहावै दोई ।
दस बारह ज्यां छाळी लीन्ही, पांच सात गऊ पणि कीन्हीं ।
जींहि रहत बरस दिन गयो, जिह कै पुत्र एक जब भयो ।।५०६।।

मठधारी जे सिद्ध कहावै, आया गया नैं राब खुवावै ।
गूढा गांढ कै नीचै रहै, अहलाखु जहंठै बासो लहै ।
मुकतो माल चेडी खुवावै, दिहूं पुत्र हैं गोद खिलावै ।
ले माया मोह मैं रहै लपटाई, जोग जुगति सब भूल्यो गुंसाई ।।५०७।।

ले करै सुख अति मोटो भयो, छयाळी गऊ विभौ बधि गयो ।
ग्यांन ध्यांन सोह भूलो सोई, जप तप कसव वरत नहिं होई ।
चेडो सेती अति रचि गयो, जिह कै पुत्र दूजौ पणि भयो ।
वर्ष एक औरूं सुख लीन्हों, चेडी सुरति कौल जदि कीन्हौं ।।५०८।।

स्वामी बांत कहूं हूं थांनैं, यो गढ छै स दिखावो म्हानै ।
जब स्वामी उठि अैसे कहैं, रजपूत रावत उंहठै रहैं ।
थांहै देखि को करसी हांसी, जींसूं म्हांहैं आणि बणासी ।
या थांका मन मैं उपजी कांयो, कांई देखस्यो गढ कैं तांयो ॥५०९॥

जिह दिन तो अणबोली रही, दिन दूजै तीजै औरूं कही ।
म्हां पर प्यार किसौ छै थांकौ, कह्यो करौ नहीं कोई म्हांकौ ।
म्हैं थांको कह्यो किसो नह कीयो, मैं तो थांकैं बचनैं पग दीयो ।
जो म्हांकौ बचन नहीं थां टाळो, तौ एक बारि गढ ऊपरि चालौ ॥५१०॥

॥ दूहो ॥

चेरी नैं हठ मांडियो, सोचै मन (हि) अतीत ।
सुर नर गंद्रप मोहिया, ज्यांहै किसी प्रतीत ॥५११॥

॥ चौपई ॥

कहै अतीत तूं भूली नारी, थां तौ जीव मैं कुबुधि बिचारी ।
म्हां जोगी कुंणी कै सारैं, म्हां हें सारो जगत जुहारैं ।
उंहठै राजा परजा रहै, थांहै देखि बुरां सब कहै ।
हूं उंहठै थांहे लीयां जाऊं, जींसूं सोभा नांही पाऊं ॥५१२॥

अब म्हांनै क्यां न्हं साथ लगावै, म्हांरी श्रम आवै ही आवै ।
इंदरलोक मैं दियो बिसारी, हूं रंभा थारै घरि नारी ।
कोटि तीरथ न्हावैं कोई, तोउ न पावैं म्हांहै सोई ।
जाय हिंवाळा म्हांहें गरैं, कासी कर्वत ले ले मरैं ॥५१३॥

जौहर झांप जायकैं लेई, अग्नि धूंम मैं घूंटै केई ।
अनेक भांति की तपस्या करैं, पांच अग्नि मैं देही जरैं ।
इंह म्रितलोक मैं नारी जेती, म्हारै पटंतर दीजे केती ।
राज ओर चित सो आवै, म्हांहैं कोई नर क्यूंहुं न पावै ॥५१४॥

हूं थारै सहजे ही आई, तिह थैं तो मैं हूं न सुहाई ।
तूं आखरि जोगी भीखारी, हूं रंभा थारै घर नारी ।
जाति पांति नहीं जाणूं थांरी, मैं कीन्हौं इसड़ौ घरबारी ।
हूं नहीं दीसूं हींणी कुमलाई, रूप भूषन नहीं बुरी दिखाई ॥५१५॥

॥ दूहो ॥

मैं अैठैं तपस्या करी, राजा नेता आय ।
तें हठ मांड्यो बुरो, थांरे एक न दाय ॥५१६॥

॥ चौपई ॥

मैं तो बात और विध कही, थां तो नारी ओर ही लही ।
थां सूं शरम हूं नहीं मरूं छूं, हूं आपका जीव कौ सोच करूं छूं ।
हूं जोगी निर्गुण निरमोही, अब म्हांरी लारज देखे कोई ।
सब कोई म्हांसूं बात कराई, या थारै नारि कठा सूं आई ॥५१७॥

॥ दूहो ॥

स्वामी सूं नारी कहै, थां सूं कुण को जोर ।
राजा सेती सो डरै, जो कोई होसी चोर ॥५१८॥

॥ चौपई ॥

हूं जीसूं कांई जुवाब कराऊं, जी आंटै थानैं समझाऊं ।
नारी कहै सिखाऊं तोहि, कहज्यो इंदर दीन्हीं छै मोहि ।
नहींतरि तूं मति बोलै क्योंही, जीं सूं जुबाब करूं ली हूं हीं ।
थां इसी बात सूं डरपौ कैसैं, खोसि लई कोयां की जैसैं ॥५१९॥
फिरि जोगी नारी सूं कहै, अहंठै राजा खोटो रहै ।
तोहि देख वो लेय छिनाई, म्हारो मरण बणेलो आई ।
नारी कहै कुदरति छै कांई, राजा खोसै म्हारै तांई ।
इसी बात सूं निधड़क रहो, फेरि वचन इसड़ा जिन कहौ ॥५२०॥

उंह कौ कौल तौ पूज्यो आई, तिंहि पै रह्यौयों कैसे जाई ।
जीं कौ कह्यो जोगी नहीं करै, राजा सेंती डरप्यो मरै ।
जब नारी नैं अति हठ मांड्यो, करबो खावो सबही छांड्यो ।
बालक दीन्हौं परहौ धकोई, आपणि रही अंधमुख सोई ।।५२१।।

भूखो बालक रोवै भोरौ, जिंह कौं जोगी करै निहोरौ ।
वा आंखि न चोघै न मुंह बतलावै, बिन चूख्यां बालक बिललावै ।
इतवत बहौत हलावत फिर्यो, जाय नारी कै पांवन पर्यो ।
कहै दीजे थांन बालक कै तांई, अब थांको कह्यो न मेटूं कांई।५२२।

जदि नारी बोली सत डाई, देस्यौं थांन गढ ऊपरि जाई ।
दोऊ भूखा बाळक चिरळावं, ज्यों ज्यों जोगी अति पछतावै ।
उपज्यो मोह हियो गहभर्यो, उत नारी हठ देख्यो खरो ।
जब जोगी बोल्यो उकळाई, उठि बैठी हो गढ काल्हि चलाई ।।५२३।।

चेडी इक जासूस बुलायो, अहलाखु दाखिल पहल्यां बैठायो ।
ते बैठो चरत देखै सोऊ, आयस कहै बटाऊ कोऊ ।
जीं कै आगै बाचा दीन्हीं, काल्हि चालां यो सौगंध लीन्हीं ।
कौल बोल जब काठौ कीयौ, जदि नारी बाळक करि लीयो ।।५२४।।

जदि जोगी दीन्हौं काम खिदाई, जब लीन्हौं जासूस बुलाई ।
कह्यो थां राजा नखि बेगा जावो, ए वातां सारी गुदरावो ।
कहिज्यो काल्ह आवसी चेरी, दोपहरां लग मारग हेरी ।
अवसि आवसी इणविध कहज्यो, थां दरवाजै बैठा रहज्यो ।।५२५।।

सुणि जासूस अहोंटो गयो, ते जाय राजा नखि ठाढो भयो ।
करि सलाम अर ऊभो रह्यो, हाथि जोडि अर इण विध कह्यो ।
वो जोगी काल्हि आवसी ऐंठै, महाराज आप दरवाजै बैठै ।
वो जीम रसोई करै निकासी, दोपहर लौं ऐंठै आसी ।।५२६।।

॥ दूहो ॥

बार बार जोगी कहै, नारि न मांनै कोय ।
माथै बाळक पालणो, गढ हैं चाल्यै सोय ।।५२७।।

॥ चौपई ॥

राजा हें देखण को चाऊ, दरवाजै बैठो आय अगाऊ ।
इत थैं जोगणि जोगी आयौ, सो राजा की दिसट पड़ायो ।
ते हजूर राजा की निकस्यो आई, राजा जोगी दिसट मिलाई ।
आगै जोगी पाछै चेरी, सीस पालणा आयस केरी ।।५२८।।

॥ दूहो ॥

दरवाजै राजा मिल्यो, जोगी निजर दुराय ।
थां आयस कोठैं रहो, या नारि कठा सूं ल्याय ।।५२९।।

राजा सूं जोगी कहैं, दीन्ही इंद्र पठाय ।
ता तणैं हूं तपस्या करूं, वैंठे सदा रहाय ।।५३०।।

॥ चौपई ॥

जदि आसिर वचन राजा हें दीन्हौ, चेडी लांवौ घूंघट लीन्हौ ।
आयस धसि करि चल्यो अघेरो, राजा कोकि अपूठो फेरचो ।
जीं सूं राजा बात कहाई, या थारै नारि कठा सूं आई ।
तूं तौ हूंतो सिद्ध गुंसाई, या कूणैं दीन्हीं थारै तांई ।।५३१।।

जब जोगी बोल्यो अैसे, थां म्हांकी बात करौ छो कैसे ।
थां राजा हूं गरीब भिखारी, कांई बात बूझो छो म्हांरी ।
या लेख प्रमाण जठा सूं आई, बिह को लिख्यो न मेटचो जाई ।
एती कहि आगैं पग दीयो, आयस फेरि अहोंटो लीयो ।।५३२।।

जादौ कहां छो ऊभा रहो, म्हांसूं दात सांच थां कहो ।
झूंठ बोलो तो नाथ दुहाई, या थांकै नारि कठा सूं आई ।
थां इहकौ सारो क़िसौ सुणावो, जब थां अैंठा सूं आघा जावो ।
झूंठ कहो तो रोकि रखास्यों, अर काठो तोनैं मारि दिवास्यों ।५३३।

जब जोगी जीव इहैं विचारी, दरबार मांहि छै सांच पियारी ।
जदि राजा सूं बातां कीन्हीं, मोनैं नारि इंदरजी दीन्हीं ।
मैं तपस्या कीनी कटनाई, हूं बवल रूंख का रहौं'ज खाई ।
जदि इंदर ए रंभ पठाई, ले ले भोजन म्हां नखि आई ॥५३४॥

तब बोल्यो राजा थां सांची कही, थारी बात म्हां मानी सही ।
या जोगणि तो म्हांरी छै छोरी, तैं आयस कैठां सूं चोरी ।
भली हुई तूं इहनैं ल्यायो, घरि बैठा ही चोर ज पायो ।
म्हांसूं कहै इंदर जी दीन्हीं, मैं करी तपस्या इह विध लीन्हीं ।५३५।

जदि जोगी बोल्यो उकळाई, थां इसड़ी बात क्यों काढो राई ।
क्यौं तो म्हां को अदब करीजै, जोगणि हें क्यों दासी कीजै ।
जोगी इतरी बात कहाई, जदि राजा बोल्यौ बहसाई ।
उंह चेड़ो कौ नांव ज लीन्हौं, अर राजाजी हेलो दीन्हौं ॥५३६॥

सुणत प्रमाण हीरली बोली, अर घूंघट जिह दीन्हो खोली ।
करी तसलीम धरती कर लाई, सो जोगी हें राव दिखाई ।
क्यूं जोगी तूं कहै छै रंभा, देखी जोगी रह्यो अचंभा ।
फेरि जोगी कहै या नांही गोली, या थांकी तपस्या कै डर बोली ।
॥५३७॥

॥ दूहो ॥

जोगी सूं राजा कहै, बातां यों समझाय ।
बिरखां चीज लगाय कैं, पाछै कांसो दयो पठाय ॥५३८॥

॥ चौपई ॥

सुणि मूरख जोगी तूं बातां, जदि म्हें थारै आसण जाता ।
म्हां तौ जाणा दर्शण करां, तूं अहोंटो मुख करतो परां ।
म्हां जी काजै एतौ हठ कीन्हौं, थारा तप कौ परचौ लीन्हौ ।
म्हां पहलां बिखां मीठो लपटायो, पाछै इंहकै कर थाळ पठायो।५३९।

जब रिस लागी जोगी खुणसायो, बाळक धरि सिल सूं पटकायो।
अर राजा सूं इण विध कह्यो, हूं फिरि चेतूं तूं तो बह्यो।
तूं आरंभसी मन मैं सोई, तिहकी पूरी पड़ै न कोई।
इसो सराप राजा हैं दीन्हों, जोगी फेरि जाय तप कीन्हों।५४०॥

॥ दूहो ॥

क्रोधवंत आयस हुवो, राजा सूं कह्यो ज आप।
तपस्या म्हारी खोटी करी, जिह को तोहि सराप ॥५४१॥

॥ चौपई ॥

फेरि जोगी जाय इसौ हठ मांडचौ, जीं खाबो पीबो सबही छांडचो।
जो अमर हूवो डूंगरां मांही, निजर न कोई देख्यो ताही।
चाव देखि राजा घरि गयो, चेडी मुख मांग्यो सो दयो।
डरचो न राव सराप जो दीयो, आपणो हठ जिह पूरो कीयो।५४२।

राव हैं छक राज को आही, दूजो छक जोबन को ताही।
तीजौ छक पारस घर मांही, चौथो छक कोई अरि ढिग नांही।
और नचींतौ धरती खाय, इक फिरबा की लागी बाय।
खेलैं सिकार अर रांमति करै, सारै डूंगर दिन उठि फिरै ॥५४३॥

अनन्त देवली गढ तट करी, पाथर मूरत घड़ि घड़ि धरी।
ज्यां पर सेवग राख्या सारै, ते धूप दीप नेवज बिस्तारै।
ज्यांकै दर्शन दिन उठि जावै, भाव भगति करि पूजा करावै।
राजा कै कन्या पुत्र नहीं कोई, अंछ्या पुत्र की राखै सोई ॥५४४॥

गढ कै दोल्यूं पाणी बहै, ज्यां पर पड़्यां नावड़ा रहै।
बैठि'र राजा ज्यां ऊपरि खेलै, दाय पड़ै जिही दिस पेलै।
जठै कोस दोय इक स्यो को ठांम, जिहि कौ कहै सोलेसर नांम।
जिहकै दर्शन राजा चल्यो, अधबिच आवत सेवक मिल्यो ॥५४५॥

जीं पंडा नखि नहीं ज पाती, देखि राजा सूं धड़की छाती ।
जीं सेवग नखि पाती नहीं पावै, जीहै राजा दुःख दिखावै ।
जब पंडा सिर का फूल ज लीन्हां, जो राजा कै कर मैं दीन्हां ।
जिह मैं बाल माथा कौ आयो, जो राजा की दिष्टि पडायो ।।५४६।।

देखौ पंडै क्रम्मज कीन्हां, माथा मांहिला फूल ज दीन्हां ।
महाराजि म्हारी हद कांई, सिर का देस्यौं थांकै तांई ।
यो फूलां मांहे केस कठा कौ, सांच कहौं परसाद जठा कौ ।
महाराज स्यो जटाधारी, जीको केस खुसै हर वारी ।।५४७।।

थां म्हांनै स्यौ की जटा बतावो, चालो ओंहटा वेग फिरावो ।
अबैं जटा कठा सूं होई, कोई संमियै होय छै सोई ।
वो समियो वेग दिखावो म्हांनै, नहितर जीवां मारिस्यूं थांनै ।
आजि पछैं दिन पंदरा जाई, जिह दिन जटा थां देखो आई ।।५४८।।

पंडै राजा सूं कौल करायौ, करि दरसण राजा फिर आयो ।
जीं पछैं दिन तेरह गया, पंडै स्यौ पर धरणा दया ।
कहै यों म्हारो परण राखो स्योजी, नहितर म्हारी हत्या लोजी ।
मोनैं राजा हो मारेलो आय, कै मारो कै करो सहाय ।।५४९।।

पंडा नैं जब धरणो दीयो, भूख प्यास तीजौ दिन वे लीयो ।
जिह दिन को कौल पहूंतो आई, ज्यों ज्यों पंडो खरो उकळाई ।
कहै घड़ी च्यार मैं राजा आवै, सो तो मोनैं तुरत मरावै ।
पंडै बिध मरबा की ठांणी, जदि स्यो बोल्यो आकासी बाणी ।।५५०।।

तूं झूठ क्यों बोल्यो राजा आगौं, अब म्हां पर हित्या देबा लागो ।
अब तूं नचिंत रह सोई, थारी चिंता पूरण होई ।
तूं जिन डरै होय नखीसी, तीन जटा पिंड मांहे निकसी ।
इती करत ही राजा आयो, देखि जटा हिरदे सुख पायो ।।५५१।।

जब्र महादेवजी परचौ दीन्हौं, पंडो बुलाय राजी अति कीन्हौं ।
जब राजा इक गांव चढ़ायौ, ते तांबा कै पत्र करायो ।

विधि को लेख न मेटचो जाई, ए परपंचै चुगल यों बात कहाई।
कह्यो पांहुण कैर जटा वहुं आई, ए परपंच करि पंडै चिपकाई।
॥५५२॥

॥ दूहो ॥

दुबध्या मन मैं आंगिग्र कैं, फिरि देखी निरताड़ि।
कुबुधि ऊपनो राव कैं,(अब) देखूं सही उपाड़ि ॥५५३॥

॥ चौपई ॥

सकल भायो मनमांनी खरी, राजा कैं मन दुबध्या परी।
जीं की बात जु बांनी सूं बही, तीनू जटा हाथ मैं गही।
करि आंवळी दे खैंची सोई, ऊपडी जटा दूध जहां होई।
जहां स्यो की बाणी निकसी अैसी, कोई थारो जांम नहिं
गढ मैं रहसी ॥५५४॥

॥ दूहो ॥

स्यो बाणी ऐसी हुई, हमीर सुणी अप कांन।
यो गढ थांकै ना रहै, अैठै राज करै तुरकाण ॥५५५॥

॥ चौपई ॥

दूजौ सराप राजा हें दीयो, सकल साथ को धड़क्यो हीयो।
यो तो होतिब यों ही होई, रचना रची स मेटै कोई।
राजा नै अति अजुगति कीयौ, करि कै कुबुधि सराप ज लीयौ।
कलिजुग अमल कियो ही चाहै, बिधि लेख क्यूं मेटे ताहे ॥५५६॥
राजा फेरि गढ ऊपरि आयो, करै राज अप मन को भायो।
ते कोई और को कह्यो न मांनै, अति गति मांडि खेलि ही जांनै।
जिह कै छी बड़गूजरी रांणी, नाम हीरांदे सो पटरांणी।
जिह की कन्या देवळदे, अर सोलंखणी केवळदे।
दोय कन्या राजा कै हुई, जिह की बात सुणौ अब नुई ॥५५७॥

॥ इति श्री चतुर्थो अध्यायः ॥

(पंचम अध्याय)

॥ चौपई ॥

देवळदे राजा की बारी, ते कन्यां रंभा अवतारी ।
जिह कन्यां की सुणो बखांणी, ते छी रंभा इंदर कै पटरांणी ।
जीं सूं इंदर मया अति करई, ते आठूं जाम दूरि नहिं टरई ।
जहंठै ब्रह्मा कथा सुणावै, जो इंदर की अंछया आवै ॥५५८॥

॥ दूहो ॥

आन जन्म की बात है, कहत कवीश्वर जोय ।
देवल रंभा इंद्र की, सुणि लीज्यो सब कोय ॥५५९॥

॥ चौपई ॥

जब रंभा सहत इन्दर यों बोल्यो, म्रित्य लोक की पोथी खोलो ।
जंबु दीप की कथा सुणावो, आदि अन्ति ठेठ सूं गावो ।
बैंठा का नर अैंठ आवै, चढि बिवांण देव पदई पावै ।
जहंठै कला अलख की जाई, धरि औतार क्रीला कराई ॥५६०॥

सुर तेतीसूं जहंठै आया, रिख अठचासी आय बिठाया ।
गन ग्रंध्रप सौह सिध मुनि आया, लोमचि रिखि वसुदेव बुलाया ।
नौ ग्रह निछत्र वरण बैठायो, चीत्र विचित्र ध्रमराय कूकायो ।
भवांनी रंभा इंद्राणी मेली, इंदरपुरी सौह हुई भेळी ॥५६१॥

जदि ब्रंमाजी कथा उचारी, सप्तदीप सब कह्यो बिचारी ।
जंबू दीप की कहीज महिमा, नौखंड बरणा सारा तिह मां ।
जप तप ब्रत जंबू मधि करै, धर्म नेम जग बिस्तरै ।
धर्म छेत्र जंबूदीप कहावै, उंहठै करै स अहंठै पावै ॥५६२॥

सील संतोष नर लीयां रहै, जीव दया मन करणा बहै ।
आप पीड़ परपीड़ है जांनै, पाप झूठ रती नहिं ठांणैं ।

ए नहंचै करि जो सों साधै राई, अहंठै आवै फिर पावै जाई ।
जोगी पंणी ए साधना करै, लोभ मोह क्रोध परिहरै ।।५६३।।

छै उहंठै मलमूंतर देही, पंणि अनंत कष्ट करै छै तेही ।
जोग मांहै जो बंछ्या रहैं, सो भरि पावै सारी लहैं ।
धरम छेत्र मधि करणी करै, जो बंछै सो नांही टरैं ।
भली करै भली परि पावै, बुरी करचा सूं कष्ट पड़ावै ।।५६४।।

त्रेता सतजुग द्वापर गयो, तींमैं सत सत्यारथ भयो ।
आपां सकल मिलि उंहंठे जाता, अहंठे उंहठे एको बातां ।
अब कळिजुग मांहे गयो न जाई, आपां सूं भोम भई पराई ।
जैसी जीं नै करी कुमाई, या सकल सभा वैंठां सूं आई ।।५६५।।

वहंठै राजा राव बौहतेरा, इंदरपुरी सा ज्यांका खेरा ।
ते छपन भोग छह रस हैं जांणै, बसत्र अनेक पहरैं अर मांणै ।
जरी पटंबर नीलक परचा, सकल रंग की जहंठै चरचा ।
धोळा राता काळा पीळा, सूहा सोसन हरिया नीला ।।५६६।।

श्रीसाप'र सुखंबर खासा, महमूंदी अर मलमल तासा ।
अनेक बाफता औरूं कचिया, आसावरी तार हेम का तचिया ।
टूक अधोतर कायमखांनी, अनेक अंबर गजी मन मांनी ।
और नांव ते अनेक कहावै, ज्यांकी गिणती कौंण गिणावै ।।५६७।।

इसड़ा वसतर वैं नर पहरैं, दीन मांन की लेछै लहरैं ।
और उंहठै त्रिया जो जाती, काम रूप मैंमंत मदमाती ।
ज्यो थांकै अहंठै ए रंभा, वा देख्यां पणि रहौं अचंभा ।
बसत्र षोडस भूषण पहरावै, ज्यां देख्यां सुर मुनि डूलावै ।।५६८।।

जो पहरैं लहंगा अर सारी, कांचू सोहै चित्र संवारी ।
चीर पटंबर तनसुख पहरैं, जरीतार की ज्यां मधि लहरैं ।

लालरंग मैं बिधि बिधि ऐसी, जो चाहै ते देखी तैसी ।
सालू चोल जामसाही लूंगी, बासतौ चौळ अर छींट अमूंगी ।।५६९।।

कुसुंभा रंग मैं लाली केई, लहरचा बंधनू सादा तेई ।
त्यां मधि तवकी छापा सोहै, हरिया पीळा रंग रंग जो है ।
बाला चूंनड़ चूनड़ रातो, ज्यां मधि बिंदळी भांतो भांती ।
केई रंग बंधनू चूंनर काळी, नाना रंग की न्याळी न्याळी ।।५७०।।

लीली साड़ी अति ही सोहैं, सेंत लाल छापा की होहैं ।
केई पोमच्या ज्यां धर काळी, रंग रंग साड़ी टीपटिपाळी ।
बनिता केई कसीदा काढैं, ते दीसैं चित्तर सूं बाढैं ।
भांति भांति बस्तर बहौतेरा, ज्यां का कहां लग करूं नबेरा ।५७१।

।। दूहो ।।

महिमा जंबू दीप की, बरणी अनंत अपार ।
जदि रंभा ऐसें कही, वुहां लीजें औतार ।।५७२।।

।। चौपई ।।

षट चकवै सा ऊंठै हूवा, बारह मंडलीक और ते जूवा ।
कोटचान कोटि जहां राजा तपिया, करि करि करणी इंद्रपद हैं खपिया ।
जहंठै रांम सिरी का मेळा, पदम अठारह कीन्हां भेला ।
सहंस सोळहा सूं किसन होय रमिया, जंबुदीप छै इसड़ी भुमिया ।।५७३।।

यों चरचा ब्रंमाजी भणी, सकल सभा चित धरि कै सुणी ।
जठै तीन रंभा इण विध बतळाई, वैठै औतार तो लीजै जाई ।
ए बरण्यां सो सारा सुख लीजैं, इंह टगटगापुरी मैं कांई कीजै ।
वां कैं अंछ्या इण बिध आई, जो इंदर जी गयो ज पाई ।।५७४।।

वैं रंभा जदि लई बुलाई, कहौ थां तीनूं कांई बतळाई।
जो थांका मन मैं अंछया आई, सांच कहौ थां राम दुहाई।
महाराज म्हां कथा जो सुणी, जींकी बात आपस मैं गुणी।
म्हां तौ बात हांसा मैं ठांणी, सौ तौ आप पहिली ही जांणी ।।५७५।।

ज्यां सूं इन्द्रजी उट्यो रिसाई, पाट रंभा सूं कह्यो खिजाई।
यौं कांई छै थांकी हांसी, जीसूं होय जिय आप बिणासी।
थां म्रित लोक मैं जाय औतरो, अर थांकी अंछया पूरो करो।
इन्द्र जी अति हो खीजियो आप, ज्यांहैं खीजि करि दियो
सराप ।।५७६।।

।। दूहो ।।

इंद्र रीसि करि यौं कहै, रंभा लई बुलाय।
जो मन मैं अंछया करी, सोही भुगतो जाय ।।५७७।।

।। चौपई ।।

जदि पाट-रंभा यौं बिनती कीन्हीं, महाराज मैं यों ही चीन्हीं।
अनधन वस्तर लाहौ लीजै, नेम धरम जप तप व्रत कीजै।
नर की अंछ्या नांही राखी, सो थांसूं मैं सब सत भाखी।
जदीं इंद्र कहै तूं सब सुख करै, तोनैं पुरख कोई नहीं वरै ।।५७८।।

कहै इन्द्र कलिजुग थांनै दहसी, मलेछ कौ दुख थांनै रहसी।
पाट-रंभा रणथंभगढ आई, जे देवलदे नांव कहाई।
दूजी औतरी देवगिर जाई, सीलवती ते नाम चिताई।
तीजी सिंघलगढ मैं गई, सो चीतोड़ पदमावती भई।
बरस तीस कौ कौल ज कीन्हौं, सो जंबूदीप औतरी तीन्हौं ।।५७९।।

देवलदे देवी औतारी, दिन दिन बाढै राजकुंवारी।
बरस एक मैं भई ज सोई, दीसै बरस दोय मैं जोई।

थार बरस मैं जो जब आई, सो आठ बरस की देय दिखाई।
बर्स आठ मैं होयज गई, मानूं बरस बारह मैं भई ।।५८०।।

ते अनूप रूप लियां चतुराई, जो देखै ते नहीं अघाई।
राजा कै पुत्र नहीं कोई, पहिल्यां भई कन्यां ए दोई।
ज्यां है राखै पुत्र कै नांई, सकल रावळो हरखि कराई।
जो नईं बरस मैं लागी आई, जिह की इंद्रजी खबरि मंगाई ।।५८१।।

इन्द्रजो देवता एक बुलायो, जीं नै मत सकल समझायो।
थां म्रित लोक मैं आपण जावो, बड़ी रंभा की खबरि करावो।
वा छै म्हां की मन की प्यारी, ते कदे न करी नख्यां सूं न्यारी।
उंहनै जाय थां सुख्ख दिवावो, जीव अभिलेखा दूरि करावो ।।५८२।।

वो देवता जंबू दीप मैं आयो, ब्राह्मन कौ जीं रूप धरायो।
पटु खड़ाऊ धोवती कीन्ही, पुस्तग बांधि कैं कर मैं लीन्हीं।
रुदराछै माला सिर सूं बांधै, सेत जनेऊ सोहै कांधै।
देव एक को सरूप बणाई, सो बैठो अहिलादपुर आई ।।५८३।।

जींकी सकल नगर मैं महमां भई, राब रंक सकल चाली गई।
को अंछ्या पूछै ते ही कहै, ते खुसी होय अति राजी रहै।
जिहि की खबरि हाकिमा पाई, ते नान्हा मोटा गया चलाई।
जो पूछी जो निसां कराई, जी नैं जद ले गया गढैं चढाई ।।५८४।।

ते भींवसेण कैं उतर्यो जाई, भई प्रभता गढ मैं ताईं।
प्रधाना जाय राजा सूं कही, एक पंडित सति भाखैं सही।
जो महाराजा को वंछ्या होई, वो सारी कहि देसी सोई।
जो राजाजी बुलाय कैं लीन्हौ, आय देवता दर्शण दीन्हौं ।।५८५।।

राजा कै भई वंछ्या जेती, सो पंडित हैं पूछी तेती।
सकल जुवाब पंडित जब दीन्हौं, जो राजा अति ही राजी कीन्हौं।
जब राजा बोल्यो वचन अभेवा, एक अभिलेषा छै मोनैं देवा।
कन्यां दोय तौ आय औतरी, पुत्र की अंछ्या छै मोनैं खरी ।।५८६।।

पंडित कहो वै कन्यां बुलावो, वां बायां का दर्श दिखावो ।
वांका कर को रेखा लहूं, जों पाछै थांसूं बिध कहूं ।
सो राजाजी कोकि बुलाई, देवलदे केवलदे आई ।
ज्यां देख्यां पंडित सुख पायो, अर राजा सूं यौं व्यौंत वतायो ।।५८७।।

ज्यांका कर भिन भिन करि देख्या, अर राजा सूं लखण वसेख्या ।
या देवलदे देवी औतार, थां इहकी बौह बिध कीज्यो सार ।
यो थांकै घरि लछमी आई, इंह सूं चढसी अधिक बड़ाई ।
या मांगै सोही ईंनै दीज्यो, थां इंह की अंछया पूरण कीज्यो ।५८८।

या खेलै ज्योंही खेलबा दीज्यो, थां इंहकौ डर कोई और न कीज्यो ।
थां पुत्र ज्यौं ईंनैं परमोधो, अर ईंनै बर कोई जिन सोधो ।
पालै सील रजायस करसी, बरस तीस पाछैं बर बरसी ।
ईं समतुल कोई और न होसी, तौ करिज्यो यादि कहि गयो
जोसी ।।५८६।।

जब अठाईस बरस मैं बाई होय, जदि एक पुत्र थाँकै घर जोय ।
वो भाई गोद खिलासी, जीं पाछै बरकै घर जासी ।
अर अंतकाल थांकौ जदि आवै, दूजो पुत्र इक राणी जावै ।
उंहसूं नाम अखै थां रहसी, नयो बिड़द जे औरूं बहसी ।।५६०।।

जदि पंडित ए बात सुणाई, जब सुंणि कै बोल्यो आंपण राई ।
जींधाडै देवलदे जाई, जीं दिन म्हांकै मांडू आई ।
म्हां भागवान यो जांणी जबही, और थां बात प्रकासी सबही ।
यातौ म्हांकै पुत्र की नांई, इंहकौ कह्यो न मेटचां कांईं ।।५६१।।

मांडू कौ हांसल बाई खावो, ज्यों जाणे त्यों नेग लगावो ।
राजा सीख पडित हैं दीन्हीं, और घणी मनुहार ज कीन्हीं ।
पंडित जब औहोंटो ही गयो, जाय भींवसेण घर ठाढौ भयो ।

जींका भींवसेण हीड़ा बौह कीना, जीहैं आसीरवचन दैवता दीन्हां ॥५६२॥

एती कही अर गयो बिलाई, इन्द्रपुरी पहुंतो ते जाई ।
भींवसेण पंडित ह्वै गयो, अति गुणवत जोतगी भयो ।
जिहकी गढ मैं महिमा बाढी, राजा चाहि करै तिहि गाढी ।
जीं है राजा टहल अढाई, देवलदे जिंहिं पासि पढाई ॥५६३॥

जींहे जोसी आप पढावै, सो अच्छर पहली ही आवै ।
प्रथम प्राकृत ग्रंथ सब आयो, कागळ लिखि अर बांच सुणायो ।
लेखो करि लीलावती लीन्हीं, व्याकरण पढि अमरस रस भींनी ।
सामुद्रिक आई सारसुत जांणै, कोकिला सास्त्र मन मांहि आंणै ।५६४।

पसुपंछी की भाषा ठांणै, सांगीत कवित्त भेद छंद बखाणै ।
सकल विदया कंठपाठ सुणावै, जोतिक बतैं अर्थ बणावै ।
नटुवा सधावै पातुर जैंठै, वैठें कंवरि जायकैं बैठै ।
ज्यांकौ गुण हिरदा मैं धरियो, गाबो बजाबो सबही लीयो ॥५६५॥

हूंनर सीख सकल ही लीन्हां, मातपिता अति आणंद कीन्हां ।
फिर जो रही रसोई मांही, सकल जीमण विध सीखी त्यांही ।
चिकन करै चितरांम ज तेही, नांनां पूतळी बूंटा केही ।
बरस च्यार मैं सव गुण लीन्हौं, पाछै सील संतोस धर्म चीन्हौ ।५६६।

दूजी कन्यां केवलदे आही, ते बडगूजर जाजा नैं ब्याही ।
कली लियै देवलदे दाई, ते पणि बरस बारह मैं आई ।
ते वर्स सोलहां की निजरयां आवै, भरि जोवन रूप अंग न मावै ।
जो सादा वस्तर पहरयां रहै, ते पणि रूप बरण को कहै ॥५६७॥

खेलै रमैं पुत्र की न्याई, पिता हुक्म न मेटैं कांई ।
जदि रीभयो राजा बात कहावै, मांगि पुत्री जो अंछया आवै ।
बाई कह्यो अनधन सौह मोरो, घलावो डूंगरां मांहि हिंडोरो ।
परैतां तणां बड़ौ तळावौ, जहंठै म्हांहै तीज खिलावो ॥५६८॥

बैंठे रामति करस्यां जाई, जिही घड़ी सूत्रधार बुलाई।
जो जायगै राजा जाय बताई, जहठै कुंदा लोह जडाई।
रूपा सांकळ जाय घलाई, ज्हिां हींदै देवळदे बाई।
रांणी सहत सब जाय हिंदावै, बैठे नाव अर कीळ करावै ।।५९९।।

गढ की नारी सकल ही जावैं, अहिलादपुर की बनिता आवै।
खेले भूलै करै वै क्रीला, श्रावन क्रित सब करिं हैं लीला।
ठांम ठांम जठै होइ रसोई, जो आवै जीमैं सब कोई।
खरचै द्रव्य देवलदे बाई, रैंन दिनां जो धर्म कराई ।।६००।।

आगल नगर अहलादपुर अैसो, अजोध्या उजैण बानारसि तैसो।
गढ की महिमां कही न जाई, दोऊ बिचि त्रिया भीड रहाई।
घर ठांवां की बनिता तेती, और नारि पणि आवै केती।
सब की बाई खबरि करावै, देय चित्त अर हसै खिलावै ।।६०१।।

बरण बरण की त्रीया आई, ते रही प्रबत टीडी सी छाई।
ठांम ठांम जिहां मंदर छाई, रैनदिनां जहं रहै लुगाई।
इतै ही तीज सांवणे आई, रचिपचि मूरत चित्र बणाई।
रतन जड़ित भूषन पहराए, जरी बाब पटंबर चीर चढाए ।।६०२।।

जहां सकल सिंगारज कीन्हों, रंग रंग वस्त्र पहिरयौ भीनौं।
कसूंमल रंग पहरयो अधिकाई, दक्षणी साळू जोति लगाई।
वंदर छींट'र चीर पटंबर, जरी बाब नीलक कै अंबर।
उत स्यांम घटा गिगन गहराई, इत बोरबहोटी फिरैं तिराई ।६०३।

जहां बाजै नौबति घुरै निसांणा, ठाम ठाम बाजै सहिदांणा।
ताल पखावज ढोलक बाजै, उति स्याम घटा गगन मैं गाजै।
जुड़या ढूलरा नारि अलेखी, ज्यां देवलदे सादी ही देखी।
मिली त्रिया जिहसूं बतळाई, कहै थां पणि सिंगार करौ किन
बाई ।।६०४।।

ज्यांसू देवलदे बात कहावै, मोनैं शरम पिता की आवै ।
हूं सादा ही रहस्यूं थामैं, — — — — — — — — ।
ज्यां त्रीयां फेरि बात कहाई, ए बाली बूढी बणि ठणि आई ।
कंवारी व्याही सिंगार सब करै, त्यौंहार तीज को नांव न धरै ।६०५।

जदि ज्यांकी बात देवलदे मानी, अंग उबटि कीन्हों असनानी ।
मेल्हि फुलेल कांकही कीन्हीं, अर कर मांहे दरपन लीन्हीं ।
बेणी चित दे गूंथि बणाई, ज्यांकै बिचि बिचि कुसम लगाई ।
मोती मांग मैं भरिया ऐसा, स्याम घटा मैं बुगपंत है तैसा ।।६०६।।

घसि किस्तूरी लाई केसा, अलक बेणि छुचोना ज्यों सेसा ।
भंवर केस बासिग के बारा, जिनकै छूटैं होय अंधारा ।
मिलागरी भरे केस बौह कारे, डरे भवंग लहर बिसारै ।
घूंघर वाली अलका सोहैं, लपट्या नाग मिलागरी जोहैं ।।६०७।।

बरणूं मांग सीस ऊपरी राह, चढ्यो न सिंदुर जीं ऊपरि नांह ।
बिना सिंदुर चमकै ज्यों दीयो, अंधियारे धाम रैंनि ज्यौं कीयो ।
जीं मांहे कंचन रेख (।) चमक्कै, मानुं घन मांहे बीज दमक्कैं ।
सूरज रेख ज्यौं गगन दिखाई, ज्यों सुरसती जमुनां मधि आई ।६०८।

खडग रेख ज्यौं रुहियर भरई, ज्यों करवत बैनी ऊपरि धरई ।
जिह पर पूर भरया गज-मोती, ज्यों जमुना मधि गंग की सोती ।
दिपै लिलाट चंद ज्यों जोती, जैसी कला पून्यौं की होती ।
चंदा मांहि कलंक है खासा, यौं बिना कलंक ज्यों सूर प्रगासा ।६०९।

सहंस कला सूं सूर दिपाई, देखि लिलाट सोउ छिप जाई ।
चंद हैं आयकैं राह गिरासै, या बिन राह ज्यौं सूर प्रकासे ।
जिंह लिलाट परि तिलक बणायो, अटल बन्यो तारा धर छायो ।
भोंह बणाय धनक ज्यौं तांणै, देखैं इम जो रेख बखाणै ।।६१०।।

भौंह धनक सरिभरि नहीं कोई, दिष्ट परैं मुरझावै जोई ।
जींसूं दिष्ट न देखै कोई, जो देखै सो जांणै लोई ।

राता बरन कंवळ कै भावा, उलटि पांखुडी ज्यों उपसावा ।
— — — — — — — — — — — — — — ।।६११।।

उठै तरंग लहैं नहीं बागा, चाहैं उलटि गगन ज्यौं लागा ।
जैसें पवन सु नीर हिलोरें, इलवत फिरैं लहर झकोरें ।
भरयो कामरस उपट्यो चाहै, उलटि झकोर रहै पुळ मांहैं ।
खंजन लरैं हि मींन ज्यों डूलैं, देखि द्रिग मृग गति हि भूलैं ।।६१२।।

देखि नासिका कीर भुलाना, चंपकली ज्यौं ललीलप बांना ।
ग्रैसी नासिका बेसरि सोहै, कंचन जडित नग मोती जोहैं ।
ग्रधरलाल ग्रमीरस भरिया, बिंब सुरंग तंबोल ज भरिया ।
दोउ बराबरि बिद्रुम ढारा, बिहंसै हंसै जब होय उजारा ।।६१३।।

मानूं रंग मजीठ मैं रंगा, कसुंभ रंग तौ दीसै भंगा ।
दसन चमक दीसैं ज्यौं हीरा, बनी बतीसी रंग मैं तीरा ।
बोलत चमकत दांमनी दीठी, भांन किरन ते रंग मजीठी ।
देखि द्रपन जिन हांतो ठयो, फाट्यो दरड़कि दाड़यों को
हियो ।।६१४।।

रसना रटै ज्यौं कोकिल वाता, इभ्रत बचन सुनैं मन राता ।
कोयल कंठ तूंबो किधौं बीना, सारंगी बांसरी बरन तैं चीन्हां ।
ग्रब बरन्यो बिंब सुरंग कपोला, नारंग रंग ते दहूं ग्रमोला ।
पहोप रंग केसरि रंग राता, कनक रंग ग्रैंपन मैं भाता ।।६१५।।

पीयाबांसौ चंपा कैं रंगा, केसू फूल की जोति कुरंगा ।
श्रवन सींप दुहु दिपै संवारै, बारह-बांनी कंचन उजियारे ।
दुहुंन तुरकला सूर दिपाई, रतन जडत ग्रर चमकत राई ।
ग्रीवा सोहै कुंजकली सी, कंचन तार लाय ज्यों सीसी ।।६१६।।

ज्यौं हीयां हैं काढि कबूतर रहैं, चाक चढाय सांचा सी लहै ।
कहां लग बरनूं कंठ मही सौ, उतरत पीक लीक सी दीसौं ।

जिह कंठ मैं मुकताहळ माळा, चंपकळी तिमना नंग डाला।
रतन पदारथ पहरचा हारूं, मोहनमाळा अनंत सिंगारूं ।।६१७।।

कनक बरन दोउ भुजा कलाई, उतरति सूंडि करी ज्यों आई।
जावक मांझि हथेरी अैसी, रुहियर भरी रिब जोति है तैसी।
मूंगफली सी आंगुली मूठी, रतन जडित त्यां मांहि अंगूठी।
पहौंच्या परम दोउ इसी कलाई, अति सरूप कंचन गति आई।६१८।

हीयो थाळ कुच कंचन बटे, इम्रत भरे ऊठत ही डटे।
कुंदन बेलि मैं जानूं कुंदे, कंवलकली सा कंचुक बधे।
बंध भंवर केतगी कंटक नंधे, अगिन बांण से दोऊ संघे।
नारंग नींबू जंभीरी उणिहारी, भरे मयन ऊभे रस भारी ।।६१९।।

पेट पत्र चंद जिम लावौ, कूंकू केसरि बरन सुहावौ।
खीर ग्रास नहीं अन्न अहारा, पान फूल कै रहै अधारा।
कनक बरन निरमल जो अली, नाभि गंभीर सोभा अति भली।
ऐसी पीठ बनी तिंह पाछै, मानु रही अपछरा काछै ।।६२०।।

मिलागरी रचि पीठि संवारी, जिंहि परि बैंनी नाग निकारी।
भांनु लता पोठ परि आई, भवंग चंदण रह्या लपटाई।
लंक न अैसो देख्यो काहीं, केहरि चीतां सरिसो नांही।
कटि टांटचां भ्रंग नाडि भुतैंसी, सोही लंक गति है जैसी ।।६२१।।

नाभि कुंडळ तिसो बनी समीरू, समद भंवर जानु भंवै गंभीरू।
बास कंवळ की सुगंध सरीरू, समद लहर ज्यौं सोहै चीरू।
बरनूं अबै नितंब की सोभा, दोऊ जंघ केलि के गोभा।
चरन-कंवळ अति बन्या दिसेखा, गज की गति गवन तिंहि
देख्या ।।६२२।।

जड़त कंचन तेहड़ झुनकारा, अनवट बिछुवा बजै अपारा।
अौर करचा जिन आभरन बारा, जिनकौ नाम सुनौं बिस्तारा।

प्रथम मंजन करचो सरीरू, अर पहरचो जिन चंदन चीरू।
मांग मैं लाल सिंदूर बनायो, फुनि लिलाट मैं तिलक करायो
।।६२३।।

दहुं द्रिगन जिन अंजन करे, कानन दोउ तुरकला जरे।
नथ नासिका बनी अमोला, करचो मुख रातो चाबि तंबोला।
ग्रीवा पहरचा आभरन जहां तांई, दसन चूड़ौ कर कंकन कलाई।
कटि क्षुद्रका बंधी संवारे, पायन आभरन पहरे सारे ।।६२४।।

बारह आभरन कह्या बखांनि, सो पहरचा बारह अस्थांनि।
ओर सिंगार सोलह जिन साजे, जिनका नांम कहां लग पाजे।
करि मंजन जिन चीर पहर्यो, जरी पटंबर रंग रंग गहरचो।
बाल बाल मोती जिंह सारचा, हीरा पदारथ माणिक न्यारचा
।।६२५।।

।। दूहो ।।

सीस फूल हीरां जड़चो, चूनी कुंदन लाय।
सीस घटा कै बीच मैं, ऊग्यो सूरज आय ।।६२६।।

कंचन का भूषन सज्या, मुकता पहरचो हार।
ज्यांकी जोति छिप गई, तन की जोति अपार ।।६२७।।

षोडस भूषन साजि कैं, बरनि सकै को सोभ।
नवल अंग केसरि लता, मानु केलि की गोभ ।।६२८।।

सकल त्रिया बनि ठनि चली, गावत करत आनंद।
ज्यांकै बिच देवल दिपै, ज्यौं तारा बिच चंद ।।६२९।।

चंदा री भीड़ मती करौ, क्यों काढो छौ गारि।
चंदा मांहि कलंक छै, यों निकलंकी नारि ।।६३०।।

देवलदे के अंगु कूं, उपमा दीजै सोय।
देवल रंभा इंद्र की, ताकूं बरनैं लोय ।।६३१।।

सौह बंनिता मिलि जुड़ि चली, खेलण सांवणि तीज ।
एक सु ं एक अधिकी बणी, (ते)रही कांम रस भीज ।६३२।

।। चौपई ।।

जहंठै एक विणजारो आयो, नौ मण काजळ भरि करि ल्यायो ।
भैरू ं ताल ऊतरचो आई, जींकी खबरि तीज मैं पाई ।
उलटी त्रिया बादल की न्याईं, भरि भरि आंगुली-आंज्यो त्यांई ।
ते सगळो ऊठि बानगी गयो, बिणजारे ग्रंथ तमासो लयो
।।६३३।।

पहल्यां आई ते अंजन लई, पीछैं आई सो फिरि फिरि गई ।
की दारा करी बिणजारै राजी, एक टांक सू ं नौ नौ आंजी ।
जीं बिणजारै लेखो कीन्हौं, नौ मण काजल के त्रियां दीन्हौ ।
ते हजार छयासी लाख भइ च्यार, यो तोल तीस की करचो
विचार ।।६३४।।

जौ चंदेरी कौ आयो साह, तिह बिणजारे के द्रव्य अथाह ।
जो अहठां सू ं लाद चलाई, जिह की खबरि रावजी पाई ।
नौ मण काजल उठि कैं गयो, तिह बिण जारैं दांम न लयो ।
— — — — — —, लयो फळाय दाम सब दयो ।।६३५।।

इसडी रण थंभ तीज जुडाई, देश देश मधि भई बडाई ।
सो बिणजारो दिल्ली गयो, पातिसाहि सू ं भेळो भयो ।
जहंठै तीज की बात चलाई, इसी तीज देखी न सुणाई ।
जिह देवलदे की महिमा कीन्हीं, अलावदीन चित मैं धरि लीन्हीं
।।६३६।।

आठू ं जाम देवलदे मांणै, जो करण मतै सोही करि ठांणै ।
रेन दिनां सो दाम उडावै, पहरै खरचै खाय खुवावै ।

सील धर्म की बात सुहावै, नेम धर्म अंछ्या मनि आवै ।
दया करै'र भलाई जांणै, कोई कुबुधि की बात न टांणै ।।६३७।।

॥ दूहो ॥

अलावदीन पतिसाह नैं, फिरि कैं पूछी बात ।
किसी दिसा रणथंभ है, कौंण भौमियो खात ।।६३८।।

दक्षिण दिसा रणथंभ हैं, आडोवळौ कमठाण ।
राज करै हमीरदे, जाति वहै चहुवाण ।।६३९।।

ए बातां पतिसाह नैं, मन मैं लई सुणाय ।
कोई समयो पाय कैं, देवल देखैं जाय ।।६४०।।

॥ चौपई ॥

अर हंमीर राज करण को कहै, चकवै चाळो करणी रहैं ।
रैन दिनां तिंह चाव सुहावै, जो रीझै नहिं रीझ पचावै ।
पंडित चातुर गुणी कविता, गावण बजावण ओरूं सुरता ।
आठूं जांम चतुराई चाळौ, रहै अछक छक्यो मतवाळो ।।६४१।।

गुणी (जन) सुरति (कविता) करि आवै, देय दांम सनमान करावै ।
जिंह गढ की महिमा बहोत बधाई, च्यारूं खूंट मधि कीरति गाई ।
दूरि दिसा सूं सौदागर आवै, ते करै बिणाज लबध बहु पावै ।
अर राजा की चलणि सुंणावै, ते करि कै चरचा सुख पावै ।।६४२।।

जहां लग हमीर की फिरै दुहाई, राजा प्रजा अति चकि आई ।
जस अपजस छांनौं नहीं रहैं, वुठा की बाट बटाऊ कहै ।
हुई कीरति पतिसाहि सुणावै, जिंहका उर मैं नांही समावै ।
आगैं सुणी कंवरि की महिमा, फेरि सुणी ए बातां तिहमां ।।६४३।।

अलावदीन सौहड़ायत साहि, सो हमीर की नहिं खातरि मांहि ।
करै नीत अनीत नहीं जाणैं, लेय भलाई बुराई नहीं मानै ।
खाग त्याग हुस्यार रहै सोई, और न राजा इंह समतुल कोई ।
सुभ लछरण सेती राज कमावै, परनिंदा चाड़ी नहीं भावै ।।६४४।।

जिह लच्छण दोय छोटा इधकाई, तामस तेज अंग नहीं माई ।
जिह परि गुन्हो चूक पडावै, जिहनैं मारत न बार लगावै ।
रही हदस धरती मैं सोई, चोरी जोरी करि सकै न कोई ।
इह बिध करत निकस दिन जाई, इतरै तीज दूसरी आई ।।६४५।।

फेरि बांणिक वैसो ही हुवौ, जुडी तीज ठठ बण्यो ते जुवो ।
बीस कोस लौं दुनियां आई, जुड्यो तमासो तीज सवाई ।
त्रिया अधिक मरद को नाहैं, पुरख डूंगरां ऊभा राहै ।
सो निधड़क खड़ा चिंता नहीं कोई, इसी धड़क राव की होई ।६४६।

गावत बजावत चल गई नारी, ते भैरूं ताल पर तीज उतारी ।
थांनसिंघ खीची आय उंचाई, ते घोड़ी चढि ले गयो भजाई ।
इसड़ी अजुकति भई घणेरी, तें कोयां नहीं अहोंटी फेरी ।
सकल त्रिया बाई बिलखाई, ते राजाजी सुणी कहाई ।।६४७।।

कही गागरौंणि कै खीची चोरी, जिहकै पाणीपंथी घोरी ।
जीं पर राजा फौज खिंदाई, भाजि गयो ते हाथ न आई ।
पायो सोही उंहकौ मारयो, लूटयो देस घर बार उजारयो ।
फौज जिकैं अहोंटी आई, हाथ मलै राजा पिछताई ।।६४८।।

॥ दूहो ॥

आभूषण सौह तीज का, खीची ले गयो आय ।
पाणीपंथी घोडी चढै, एती दौड़ कराय ।।६४९।।

फौजां फिरि आई सबैं, कीन्हों मुंजरौ आय ।
खींची ठेका दे गयो, लीन्हौं देस लुटाय ।।६५०।।

राव कहै सुणो ठाकुरौ, उंहनै मारो घेरि ।
वौं तो गीध्यो तीज कौ, ग्रौरूं ग्रासी फेरि ।।६५१।।

।। इति श्री पंचमोऽध्याय संपूर्ण ।।

(षष्ठम ग्रध्याय)

।। चौपई ।।

ग्रब उठ्यो उपद्रव ते सुणौ बखांण, ग्रलावदीन डिली सुरतांण ।
जंबु दीप मधि जिह की ग्रांण, तेज प्रताप तपै ज्यों भांण ।
सो पतिसाही ग्रैसी करै, ग्रष्ट दिसा जिह कूं कर भरै ।
सकल जीति धरती बसि कीन्हीं, एकौंकार दुहाई दीन्हीं ।।६५२।।

।। दूहो ।।

दिल्ली साहि ग्रलावदी, खेले जाय सिकार ।
उड़दाबेगी पांचसै, रहै हमेसां लार ।।६४३।।

।। चौपई ।।

जब तब साहि सिकारां जावै, उड़दाबेगी साथ चढावै ।
ते हथियार बांधि सोटो कर धरै, पहरि मकनौ ग्रसवारी करै ।
ते पांचसै ग्रसवारी साहि दोल्यों रहै, जबरदस्त ग्रति जालम बहै ।
गयो सिकार कोई जीव न मिलियो, पातिसाहि रीतो फिरि ।
चलियो ।।६५४।।

।। दूहो ।।

बिछडी एक हुड़म तिहां, यादि करी नहिं कोय ।
भूली बन मैं पिरत ही, महिमां मिलि गयो सोय ।।६५५।।

॥ चौपई ॥

साथ सूं बिछट हुरंम इक गई, पडी उजाड़ि मधि इकली भई ।
जहां दूजो मनुष्य न दीसै कोई, महिमांसाहि मिलि गयो सोई ।
जिह सूरत देख नारी ललचानी, घोडौ मसकि जाय बतलानी ।
अर कह्यो एक बात नर पूछूं तोहि, है रतिदान की अंछ्या
मोहि ॥६५६॥

॥ दूहो ॥

हम चाकर पतिसाह कै, गहैं न दांवरण आय ।
ए बातौं हजरति सुणैं, तो नांखै खरच कणाय ॥६५७॥

॥ चौपई ॥

महिमांसाहि समझावै ताहि, हम चाकर तुम ख्यावंद आहि ।
हम निमक खाहिं पतिसाही केरा, क्यों करि दांवन गहैं तैं मेरा ।
कहै त्रिया हम सब सुख पावैं, एक मरद की भूख रखावैं ।
जो तुम कह्या करौ नही मोहि, तौ तौहमति देय मरवाऊं
तोहि ॥६५८॥

॥ दूहो ॥

महिमां मन मैं सोचई, क्या करिए जु खुदाय ।
या कुछि सैं कुछि जा कहै, झूठी तौहमति आय ॥६५९॥

॥ चौपई ॥

तब महिमां मन मैं समझावै, जौ इह रंडी जाय कें झूठ लगावै ।
तौ मैं अनाहक मारचो जाऊं, इसकी आस्या पूर कराऊं ।
महिमां कहै नटै तुम आगैं, करचां अजाब इह तुझ हैं लागैं ।
दोन्यौं उतरि जीए पोस बिछायो, जिहसूं महिमा सौहबत मैं
आयो ॥६६०॥

॥ दूहो ॥

तीन बसत साधैं सदा, मीर (जु) महिमा साहि ।
उकडूं पल बैठै नहीं, खाणा गरम न खाहि ॥६६१॥

गरळ्यों नीर पीवै नहीं, साधै पांच निवाज ।
हसती फोडै तीर सूं, मीर इस्या गजराज ॥६६२॥

॥ चौपई ॥

एक सिंघ भूखौ जहं आयौ, त्रिया कै साम्हैं दिष्ट पड़ायो ।
नारि कहै छांडौ उठि माया, तुम्हारैं पीछै नाहर आया ।
आसण राखि महिमां मुड़ि देख्यो, — — — — — —
जदि खैंचि तीर साम्हैं मुंह दयो, मूलद्वार वह नीसरि गयो ॥६६३॥

सिंघ करडाय बैठ कैं गयो, पल मैं प्राण मुकति ही भयो ।
हुरम मनोरथ पूरण कीन्हों, उठि महिमासाहि पांणि करि लीन्हौं ।
हुरम महिमा सूं बतळाई, कहौ इती कुवति तुम क्यों करि पाई ।
कोई दारू खावो कि साधन राखौ, सो तुम सांची ही कहि भाखौ
॥६६४॥

जदि महिमा नारी सूं कहै, हमकूं जोस पिंड का रहै ।
ऊखदि बूंटी कछु न खावें, तीन बसत हम साधै जावैं ।
खड़ै गरळि सूं नीर न पीवैं, खाणां बहौत गरम नहिं जींवै ।
बैठें न ऊकडू पळ ठहराई, एती कहि गयो तुरंग कुदाई ॥६६५॥

॥ दूहो ॥

साम्हैं मौंहडै सिंघ कै, दीन्हीं खैंचि कसीस ।
देखि हुरम अचिरज रही, काढि लिया नख बीस ॥६६६॥

॥ चौपई ॥

मन मैं मता हुरम इक कीन्हां, सिंघ का काढि बीसुं नख लीन्हां ।
चढि घोड़ै नारी परिण गई, वा जा साथ सूं भेळी भई ।
जहि जागैं करवळ जब आया, ज्यां बैठा नाहर दिस्ट पड़ाया ।
करी चोट गोळी की ज्यांई, वो मुंवो नाहर बोलैं कांई ॥६६७॥

॥ दूहो ॥

करवळ मन कूं सोचवै, या क्यों बोलै नहि ज सिंघ ।
जाय निरत करि देखियो, घाव नहीं कोइ अंग ॥६६८॥

॥ चौपई ॥

जब करि करि निरत जाय कैं देख्यो, ते बिगर घाव मूवो जिह पेख्यो ।
ज्यां तरवारि सेल का घाव बणाया, आपकैं डील खरसटा लाया ।
ले मिलिया साहि नैं जाई, ज्यांनैं दीन्हीं साहि दडाई ।
और इधकौ मनसब बधायो, साहि खुसी भयो नाहर पायो ॥६६९॥

सिंघ चौक में दियो डराई, पातिसाहि महिलां मैं जाई ।
वो हुरम हुंती स हजूरि बुलाई, जिह पातिसाहि की कमरि खुलाई ।
औ अरज करी सेर किंन मारे, वुसके नख्ख मंगावो सारे ।
पूछै साहि किस कामौं आवै, हुरम कहै ताबीज मंडावैं ॥६७०॥

॥ दूहो ॥

सिंघ मारचा उस मीर नैं, मनसब और ही पात ।
वुसके नख मंगाय कैं, फेरि कहैंगे बात ॥६७१॥

॥ चौपई ॥

जबैं साहि दरबान हंकारा, और कही आजि नाहर मारचा ।
जिसके नख वै बीसूं ल्यावो, ढील न करनी बेगे जावो ।

दौड़ दरवांन सिंघ पै गयो, ते पंजों हेरि अहोंटो भयो ।
जिह जाय साहि पै सीस नवाया, कहै सेर के नख एक नंहि
पाया ।।६७२।।

जब साहि फेरि यौं हुंकम कराया, पूछौ जाय जो नाहर ल्याया ।
जिसने मारचा जिसपैं जावो, होय जहां तहकीक करावौ ।
केई दरबांन गया तिहां, हूतां करवळ पहुंता जहां ।
कही हकीकति जाय ज्यां आगै, वुस नाहर के नख हजरति
मांगै ।।६७३।।

करवळ कहै तुम सिंघ पै जावो, हजूरि आपकी जाय कढावौ ।
प्यादां कही हम देखरि आये, उसके नख एक नहीं पाये ।
जबे हवालगीर सकल बुलाया, तुम ल्यावौ नख यौं सकल पुछाया ।
नख कहीं न पाया करवल डरिया, फूटो भैंड सिंघ ल्याये मरिया
।।६७४।।

।। दूहो ।।

करबल मन मैं डरपिया, या बात कही है कोय ।
इसके नख उसपै होयंगे, या सिंघ मारचा है सोय ।।६७५।।

।। चौपई ।।

ज्यां जाय साहि सूं किसा सुणाया, उस सिंघ के नख एक
नंहि पाया ।
ज्यांसूं साहि भयो इतराजी, कहै मूवा सेर ले मिलिया पाजी ।
जींहै निकस बहौत दिन गया, वैं हुरम सूं साहि रुलबति मैं भया ।
जिह सूं पातिसाह संगम करै, जहां कचोळा एक ताख सूं गिरै।६७६।

जौ ओलग चिंता आहट हुवौ, साहि आसण छांडि हो गयो जुवौ ।
जे दहसत खाय अति ही डरै, धड़क धड़क छाती जिह करै ।
जदि देखि हुरम कूं हांसी आई, जिहसूं पातिसाहि खिज्यो रिसाई ।
मैं कांपू तूं हंसत है लौंडी, मारि चाबकौ करूं अधौंडी ।।६७७।।

ज्यौं ज्यौं अधिकी हंसैज त्रीया, पातिसाहि करि चाबक लीया ।
कहौ सांच तूं हंसीज कैसैं, सोही सांच प्रकासो अैसैं ।
जो हूं जीव की आंमा पाऊं, तौ हजरत सैंती बात कहाऊं ।
एक जुवांन ऐसा बल धारै, आंसण सूधे सिंघ कूं मारै ।।६७८।।

।। दूहो ।।

ए ऊंचे महल विकट हैं, इहां काहु नहीं लगाक ।
इह पड़्या कटोरा ताख सूं, यौं हजरति मांनी सांक ।।६७६।।

।। चौपई ।।

अर ए ऊंचे महल बिकट असराळा, जहां चौकी पहरे लाग्या ताला ।
इस जागैं डर किसका होई, हजरति चमक पडै हो सोई ।
तिससैं मुझहें हांसी आई, इस जागैं तौ डर नहीं खुदाई ।
जब साहि कहै अणबोली रहो, सिंघ मारचा ते बातां कहौ ।।६८०।।

किन मारचा ते देखा कहां, कह दे बात सुणी है तहां ।
नारी कहैं मैं देख्या नहीं, सुणी है बात पुराणी कही ।
जब साहि कहै फेरै मति वातां, खीझि करि दोय लगाई लातां ।
वुस ही बात का देह न बेरा, नहीं तर टूक करूं दोय तेरा ।।६८१।।

जब पातिसाह डरपाई नारी, उंह कांठी ऊपली मति बिचारी ।
अरि होतव्य होय स हूवौ चाहै, नारी बात कहै अब ताहै ।
हजरति सिकार सूं रीते आए, जिस दिन सिकार एक नहीं लाए ।
अर मैं भी बिछुटी अकेली बन पड़ी, जहां एक जुवांन आया जिस घड़ी ।।६८२।।

।। दूहो ।।

मैं बिछुडी बन एकली, मिलिया कोई मीर ।
संगम सूधा सेर कैं, दिया साम्हैं मोंहडै तीर ।।६८३।।

॥ चौपई ॥

जिससूं मैंने चित्त चलाया, उह जुवांन रुळवति में आया।
इतनै ही इक नाहर आया, उसि पीछै मैं निजरि मैं लाया।
मैं कह्या छोडि तुझे नाहर लेहैं, जबै उंहैं मुडि देख्या जेंहै।
वै नैंक न डरया सर कर मैं लीया, आसन सूधां सिंघ कै मुख दीया ॥६८४॥

ते नाहर कै साम्हैमुंह लाग्या, पूंछ तळै होय नीसरि भाग्या।
मरि गया सिंघ तुरत जे सोई, ए देखो जिसके नख होई।
पूछै साह कुछ नांव भी जाणौं, किंधौ उसकी सूरति पहिछाणौं।
हुरम कहै मैं नांव न जाणूं, जो फिरि देखूं तौ सूरति पहिचाणूं ॥६८५॥

तैं कछु पूछया क्या क्या बतलाया, कछु नीसांण यौं उसका पाया।
हुरम कहै मैं बहुतैं पूछी, चलती सी बात कहि गया छूछी।
हम ऊकडू बैठें न तता खावैं, खड़े गरळी सूं आब न पावैं।
वह एती कहि करि चलता रह्या, फेरि बचन कछु और न कह्या ॥६८६॥

॥ दूहो ॥

ए बातौं पतिसाह सूं, सो सब कही हुरम्म ॥
कचहरी कीच मचाय कैं, खाणा होय गरम्म ॥६८७॥

॥ चौपई ॥

जबैं साह इक मंत उपाया, उमराव तुरक सब न्यौंति बुलाया।
कह्यो जाय तुम बेग दे आवौ, आजि हजूरि हमारी खाणा खावो।
जहंठै पतिसाह नैं कीच करवाई, और तहां देगचा दिया चढाई।
आप झरोखै बैठो आई, चिग दे नखैं हुरम बैठाई ॥६८८॥

जो आवै सोहो कीच मैं बैठै, तातो जीमणि आवै जैंठै ।
जै बैठि ऊकडू गास दोय खावै, ज्यौं त्यौं साहि कौ भलो मनावै ।
उमराव सबै पिछतावत जाहीं, कहै नीचैं कीच बिछावणां नांही ।
सकल कै जीय सांसो परचो, साहि खेल या कायौं करचो ।।६८९।।

।। दूहो ।।

महिमा चलै हजूरि कूं बीच सुणी इह बात ।
क्या उपाव हजरति किया, सो पिछतावत जात ।।६९०।।

।। चौपई ।।

एतै करत मीर महीमां आया, तीन जुवांन साथ और लगाया ।
जो देखै तौ धरती आली, काटि कुरबाण जिह ऊपरि डाली ।
च्यारों मारि पालथी बैठा, गरम नाज बौह आया जैंठा ।
ज्यों काढि रुमाल अर पवन उडाया, करि आराम जिन खाणा खाया ।।६९१।।

।। दूहो ।।

हजरति कहै हुरम्म सौं, तुम देखो निरताय ।
महिमां मीर पिछांणि कै, दीन्हों तबै बताय ।। ६९२ ।।
तीनूं समस्या देखि कै, मानि लई तब साहि ।
इस बिन ऐसी को करै, बैठि गई तब दाय ।। ६९३ ।।

।। चौपई ।।

ज्यांहै देखि पातिसाहि यौं कहैं, ए देखो तो कौणज हैं ।।
जबैं हुरम नैं देख्यो निरताई, महिमा साहि जिन दियो बताई ।।
तुम पूछौ सो बीचि है सोई, पातिसाह पहिचाण्यो जोई ।।
मतलब करि अंदरि उठि गयो, अर जैंन उजिर बुलाय कैं लयो ।।६९४।।
हुंते मजलसी ते और बुलाया, ज्यांसूं साहि सब किसा सुणाया ।
जिन सुणि कै बात दांत आंगुली दीन्ही, और कह्यो गैर बौहो कीन्हीं ।

साहि कही क्या उसिका करिए, एक कहै जंजीरौं जड़िए ।।
एक कहै उसैं जहर दिवावो, कोई कहै उसै तुरत मरावो ।।६६५।।
एक कहैं कहुं पेलि कैं दीजैं, ज्यों जाणो ज्यों मारचो कीजै ।।
साहि कहै उसे अबैं मराऊं, जब मैं चैन जीव मैं पाऊं ।।
उजीर कहै इकतार तुम्हारे, हुकम करौं सोही जाय'र मारैं ।।
जदि अलुखांन सूं साहि कहाई, अरध रात मारौ तुम जाई ।।६६६।।

।। दूहो ।।

पाई खबरि हुरंम नैं, मारन किया विचार ।।
अलुखान कूं विदा किया, अरध राति कूं मारि ।।६६७।।

।। चौपई ।।

जिंहकी हुरम जासूसी लीन्हीं, सब सुणे बात जो हजरति कीन्ही ।।
निदान बात मारण ठहराई, अर सारी मजलस विदा कराई ।।
हुरंम जाय इक उरकौ कीन्हों, सो महिमा कैं डेरे दीन्हों ।।
निकल्यो जाइ तौ निकसि कै जइयो, नहीं तौ सामां जुध का करियो ।।६६८।।
तुम पर अलुखां विदा भया, वा करण तयारी डेरे गया ।।
ते अरध राति तुम ऊपरि आवै, यौं मति जांणो बार लगावै ।।
तुम तौ निकसि अबही सूं जावो,.............................. ।।
हितु बसत साथ ले जावो, आड़ी बसत पड़ी छिटकावो ।।६६९।।

।। दूहो ।।

खबरि महिमा साह कूं, यौं लिख दई हुरम्म ।।
तुम सूं हजरति कोपिया, ऐसी बात गरम्म ।।७००।।

।। चौपई ।।

यों महिमा साहि नखि उरको आयो, जिंह नैं बांचि करि सोच करायो ।।
इसकी सारे मुलक दुहाई, किसी तरफ हैं निकसैं जाई ।।

जब दक्षिण दिसा मन मांहि बिचारी, आगैं जमीं है इसतैं न्यारी ।।
वा जिहीं घडी उचाळो कीयो, सकल कबीलौ साथि करि लीयौ।।७०१।।

।। दूहो ।।

महिमा साहि मंगोल नैं, सम्हांळ्यो सबैं अराब ।।
आया नहीं उडाणसी, पीआ गया सराब ।।७०२।।

।। चौपई ।।

निकस्यो महिमा दिली सूं सोई, देख्यो न सुण्यो जाण्यो नहिं कोई ।
जहां आधीरात अलूखां आयो, जे ढूंढि हवेली अति पिछतायो ।
जिह दिसु-दिसां हैं फोज पठाई, चोग्रिद घाटा लिया बंधाई ।
महिमा चलि अहिलादपुर आयो, सोही दरा मधि रोकि रखायो।७०३।

अलुखांन दिली सहर ढुंढायो, महिमासाहि कौ खोज न पायो ।
महिमासाहि को भांणिज्यो बीर, जिह कौ नाम उडाणसी मीर ।
ते मतवाळो कलाळ कैं पायो, वो पकड्यो अलुखान कै आयो ।
ते जाय साहि सूं मालुम कीन्हौं, वो तो पकड़ि बंदि मैं दीन्हौं ।७०४।

।। दूहो ।।

अलावदीन अलुखान कूं, लीन्हौ फजर बुलाय ।
महिमा किस दिस भागिया, उस पर फौजों लागी जाय ।।७०५।।

महिमा कहै दरवान सूं, क्यों रोकित हो यार ।
किह मतलब तुम रोकि हौ, सो ही कहौ विचार ।।७०६।।

।। चौपई ।।

महिमा कहैं क्यों रोकौ भाई, सो हमसे बात कहौ समझाई ।
दरवांन कहै अैठै राजा रैहै, त्यांकै हुकम को आगै जैहैं ।
कदी जाय राजा पैं कोई, हमहैं जब लग ढील न होई ।
एती करत राजा ही आयो, आघौ सिकार खेलबा धायो ।।७०७।।

॥ दूहो ॥

सुण्यो नगारो राव कौं, लीन्हा दरबान बुलाय ।
करौ अरज अब राव स्यूं, ल्यावो हुकम कराय ।७०८॥

॥ चौपई ॥

दरबान दौड़ि राजा नखि गयो, हाथ जोड़ि कर ठाढौ भयो ।
कहै कोई मीर दिलो सूं आया, ज्यां थां सूं मुजरा गुदराया ।
भला घोड़ा सहस असवार, ते करचां उचाळो मांणस लार ।
वै ऊभा दरा मैं अरज करावैं, हुकम होय तो आवा जावैं ॥७०९॥

सुणि करि राजा बात कहाई, फिरि पूछौ थां वांनैं जाई ।
कौं ठैं रहो अर कौं ठैं जावौ, अर कौं ठैं अब थां बास करावौ ।
फिरि दरबांन महिमा नखि आई, राव कही ते आय सुणाई ।
महिमा कहै दिली सूं छूटै, त्रफ दखिण की जाहैं रूठे ॥७१०॥

॥ दूहो ॥

हम विरस किया पतिसाह सूं, उहां सुं आये छोड़ि ।
दखिण देस कौं जात हैं, बसी हमारी घोड़ि ॥७११॥

॥ चौपई ॥

फिरि दरवांन राजा नखि आई, महिमां कही ते जाय सुणाई ।
दरबांन सूं राजा फिरि यों कहै, थां फिर जाय पूछौ जो अहंठै रहैं ।
जु क्यों पावता वैठै थांही, जिह सूं पटो सवायौ देस्यां म्हांही ।
दरवांन उलटि महिमा सूं कह्यो, थां है राजा राखै अहंठै जौ रहौ ॥७१२॥

॥ दूहो ॥

महिमां कहै दरवांन सूं, हम सुणी है इक बात ।
तुरकौं सैं अन्तर करैं, आडी रहै किनांत ॥७१३॥

महिमां कहै दरवान सूं, अरज करो फिर जाय ।
........................,........................ ।
........................,........................ ।
........................,........................ ॥७१४॥

पा.टि. काव्य में छंद सं० ७१३ से छंद सं० ७३६ तक और छंद सं० ७३७ का आधा भाग अनुपलब्ध है। सा.रा.रि. इन्स्टीटयूट, बीकानेर से प्रकाशित भांडउ व्यास कृत हमीरायण के परिशिष्ट सं० २ और ४ में दो कवित्त परस्पर सामान्य अंतर के साथ उपलब्ध हैं। परिशिष्ट सं० ४ से स्पष्ट है कि ये कवित्त खेम रचित हैं और इसी त्रुटित पाठ के प्रतीत होते हैं अतः उन्हें यहां उद्धृत किया जा रहा है।

(परिशिष्ट २)

कीधा गुनह अपार, छोड़ दिल्ली तैं आए।
में छीना नवलाख, साह मारण फुरमाए ॥
तुरक बसै तै पोल, दंड तहां हिंदू दखै।
ओथ न करो समरत्थ, मूझ सरणागत रखै।
ऊगवाण सूर विच आथवंण, सुणो राव सांसो भयो।
महिमा मुगल इम उच्चरै, हूं तो सरणै आवीयो।१।

जां लग गढ रिणथंभ, जांम जाझो वड गूजर।
जांम बांधव वीरम्म, तांम वळि राखां असमर॥
मोमू साह मुगल्ल, आव मो सरण पयट्ठो।
दळ मेलै पतिसाह, दुगम रिणथंमह दिट्ठो ॥
बह दांम दियां सिर ऊंचरा, मांगे साहस दिया मुझ।
हमीर कहै मूगल सुणो, तांन न अप्पां काढ तुझ ॥२॥

(परिशिष्ट ४)

मैं क्रिता अन्याय साह मारण फुरमाया।
मे छेका नवलख फोरा दिल्ली धर आया ॥

तुरक सबै (तैं) प्रोल, डंड हिंदु उपकठा ।
उलुखा अस भए तास वंदै दस वखां ।।
जहं लग उगै अथगै कहो राय कोई सरै ।
मंगोल कहै हंमीर सुनि हम तुम सरणै ऊगरै ।१।

जांम स गढ रणथंभ, सीस जब लग धर ऊपर ।
जांम स ह्वै भुजडंड, चलण ह्वै चलु बिचत्तर ।
जाम जैत वीरम, जाम जाजा वड गूजर ।
जाम स हय गय तुरी, संग नहि करूं अचित डर ।।
गरथ देह गढ अप्पिहुं, अब किम मंथौ जाति मोहि ।
हमीर कहै मंगोल सुनि, ताम न कढु आपि तोहि ।।२।।

तारीखे किला रणथंभोर जो अक्षरशः इस काव्य का अनुवाद ही है, में लिखा है कि "उसने उत्तर में अनुरोध किया कि राव वहां का शासक है और यदि गरीबों पर कृपा करेगा तो कुशल ही होगा। तत्पश्चात् दोनों भाई मेहमानसाह और मीर कावरूखां तथा उनका भतीजा बिजलीखां दस सैनिकों सहित राव के सम्मुख उपस्थित हुए। मेहमानसाह ने कमर से खंजर खोल कर राव को भेंट कर समुचित सम्मान दिया। राव ने उससे प्रश्न किया कि ऐसे पराक्रमी सैनिक को राजा ने अलग क्यों किया ? मेहमानसाह ने समस्त कहानी राव को कह दी तथा अपना दोष भी राव से स्पष्ट रूप से कह दिया। उसने राव को सूचित किया कि उलूखां को उसकी हत्या करने का आदेश दे रखा है, परन्तु अवसर पाते ही वह वहां से पलायन कर आया तथा अब उसकी छत्रछाया में शरण ली है। राव ने उसे आश्वस्त किया और उसकी रक्षा का उत्तरदायित्व स्वयं स्वीकार किया। वह निश्चित हो निवास करें।

❀ तारीख में लिखा है—मेहमानशाह ने बड़ी कृतज्ञता बताई और निवेदन किया कि जैसी शूरवीरता और सज्जनता का विवरण उसने राव के सम्बन्ध में सुना, वही उसने आज स्वयं देख लिया। राव के अतिरिक्त कोई अन्य बादशाह के अपराधी को शरण देने का साहस नहीं कर सकता था। मेहमानशाह ने शब्दों के माध्यम से उसकी प्रशंसा करने में असमर्थता प्रकट की।

(ता. कि. रणथंभोर-पृ. ४० (डॉ. आर. के. सक्सेना)

❀— — — — — — —, इहां मैं नैनों दीठा ।
घन जननी घन बाप, बोल बोलै मुख मीठा ।
उह मेच्छी पतिसाह, तास कहुं नहीं उवारा ।
मंगोल कहै हमीर सुनि, सु तुम बूझी हम सारा ।।७३७।।

।। दूहो ।।

तुरंगा चढि कै मीरजी, दिया महूला आय ।
पाणी पंथा घोडिला, खुरी रळावत जाय ।।७३८।।

महिमा साहि नैं महोलो दियो—

।। छंद भुजंगी ।।

दोय हैंवर हैं ज्यांकै पांणीपथा, सिर ऊंचल चंचल कुरंग जथा ।
जिके तोय मैं चाल इसही चलै, जिंहि कें सुम प्रसंन नैक ही जलै ।।
अैराकीय दीरघ आठ इसा, सिर लंक कबूतर नाड़ि तिसा ।
तुरी कीसैय पांच माता उमता, जिंकै पौन की गौन पंछी भ्रुमता ।
सो जांमीय पिछमीय ताजी काछी, भरै डांण उडाण जो चालइ आछी ।
यौ खंधारी बुखारी बलखीय सबै, ईरानी पीरानी तुरंग नवै ।
असी आरबी खारबी रूमी स्यामी, घर व्यावत घोडी ते होहि हैं नामी ।
भला असीय गुंट परब्बत का, सब दिच्छन देस सरब्बत का ।।
तुरी सहंसर एक सूं एक भलो, जिण भांति अनेक कौ रंग खुलो ।
जिके लाल पतंग कसुंभ लीयं, जैसी जावक हींगलु मुख मलीयं ।
जरदा हरदा तुंन केसरिया, हटताल सा अै पंण टेसरिया ।
हरिया बन पान सा कीर परं, केइ लीला हरचा अर लील बरं ।
अर सेत मोती कुंभी फूल जिसा, केइ अबलख पचरंग छींट तिसा ।
केई स्याह भंवर रंग काजर कै, खाखी सांझ भादूं रंग बादर कें ।
बन्या रंग अनेक कहां लौं पढै, जिंहि होय बधीर'र काबि बढै ।
अर गैंवर पांच पटाझर ते, बड़दांत भसुंड उंचा गिर ते ।
ज्यां कै तीन सै ऊंट'र गाडी इसी, ते भरचा अराबा सुं साथि बसी
।।७३९।।

॥ चौपई ॥

सो राजा वे नखैं रखाया, ज्यांका ड्योढा पटा लिखाया
सागर ताल पर जायगैं दीन्हीं जहंठै जाय हवेली कीन्हीं ।
प्रगनां और जागिरी दीन्हां, जहंठै जाय अमल ज कीन्हां ।
जे राजा नैं नखैं रखाया, ज्यांका कुरब बहौत बधाया ॥७४०॥

असवार सै सतराह महिमां नखि हूवा, ज्यांका बास बसै वै जूवा ।
जे दोऊ हीं वीर महा बलवंत, ज्यांकै बल नहीं आवै अंत ।
एक तीर सूं हसती फोड़ै, और न दूजो यां कै जोड़ै ।
इसड़ी बिध का बस्या पठाण, ज्यां रहण खाण को सुणो बखाण
॥७४१॥

अधौंण धांन दोउ भाई खाहीं, सातसेर रोगान जीं मांही ।
पांच पसेरी बकरौ आवैं, और चीज ते कौण गिणावैं ॥
एक बार दिन मांहे जींवै, अधौंण दूध ब्यालू हैं पीवै ।
पांच सै जुवान असा ही बांणी, दोउ भायां के अधिकर जांणी ।७४२।

दोऊ नखै कबाण सार की रहै, टांक बत्तीस को चिल्लो लहै ।
ते सवा सेर को भळको डाबै, सार पसेरीं सांग चलावै ॥
अष्टधात को सोटो कर मैं, पौंचे लटकत बाहै सर मैं ।
जमधर खांडो कमरि रहावै, जिंह परि बहै खबरि ते पावै ।७४३।
जिंह नै रहत बौहत दिन गया, एकै दिन रावजो बातौं भया ।
कहै थांकी क्यों बसत रही पंणी वैठें, अक सर्ब निबाह लियाया अैठैं ॥
महिमा साहि जब अरज कराई, मुझसा रह्या हितू इक भाई ।
वह हमसैं बिछुटि कलाळ कैं रह्या, सो मतवाळा साहि नैं गह्या।७४४।
हमारा हितु भांणजा सोई, वा मेरे काज दुख पावै जोई ।
ते कोरे चणों का रातब पावै, वां जड़्या जंजीरौं अति उकळावै ॥
वह धर्मदेह ली अर यार कहावै, जिसका दुख मुझै बहौत सतावै ।
उहां प्यारी बसत हम कछु नहीं छोड़ी, खैरीज बसत कौण गिणै
निगोड़ी ।७४५।

जदि राव कहै अब क्यूं करि चूको, क्यूंतौ ऊपरि करौ थां उंहकौ ।
कोई अहिठां सूं जासूस लगावो, चोरी जोरी करि वुहनै ल्यान्ौ ।।
महिमां साहि यौं बात कहावै, हुकम हुवा तौ अब वुह आवै ।
देखैं कोई दावज परैं, कै आवै कै कुछि करै ।७४६।

॥ दूहो ॥

जासूस दिली भेजिया, कही बात समझाय ।
करो खबर उड्डाण की, उसहैं ल्यावै जाय ।७४७।

॥ चौपई ॥

ए गढ परि बैठा मांणै सोई, और फिकरि दूजी नहीं कोई ।
एतैं करत सावणी आई, देवळदे रचि तीज बणाई ।।
जिह की खबरि रावजी पाई, सारै डूंगर चौकी रखाई ।
कही घाटो जाय चौकस रखावौ, वो चोर मिलै तो बांधि'र ल्यावो ।
।७४८।

भला भला रजपूत बुलाया, सो बातां अैसी समझाया ।
महिमा साहि वै देख्या सोई, पूछै बात राजा सूं जोई ।।
कहां कूं ए ठाकुर बिदा कराया, ज्यांहै राजा सब किसा सुणाया ।
जदि महिमा कहै मैं अग्या पाऊँ, हुकम होय तो मैं भी जाऊँ ।७४६।

॥ दूहो ॥

महिमा सूं राजा कहै, दीज्यो चौकी दूरि ।
जो हाथैं थांकै पडै, (तो) बांधि ल्यावो हजूरि ।७५०।

॥ चौपई ॥

महिमां सूं राजा अैसै कहै, जावो बैठो एकै पहै ।
जब महिमां असवारी कीन्हीं, एकै घांटै जाय चौकी दीन्ही ।।
जठै सकल त्रिया एकठी मिली, गावत बजावत खेलबा चली ।
सौह भैंरूंताल परि इकठी हुई, अहलादपुर की आई जुई ।७५१।

त्रिया सब जीव मैं डरपावैं, इतवत फिरि फिरि चौघें गावैं ।
ज्यां डूंगर चौकी देखी भई, जीव की दहसत मिटि कैं गई ।।
केई हींदै बांधि हिंडोला, खेले रमै अर करैं किलोला ।
सब त्रीया गावैं केलि कराई, टूटचो चोर किलकिला नाईं ।७५२।

।। दूहो ।।

महिमां देख्यो दूरि सूं, यो तो वोही चोर ।
साथ सबै पीछै लग्यो, माच्यो सारे सोर ।७५३।

घोडे ऊपरि तीज कूं खींची लीयां जाय ।
महिमां घोडौ नांखि कैं, लाग्यो पाछै धाय ।७५४।

।। चौपई ।।

जे घोडी परि ले भाग्यो जाई, मानुं घोडी पांख लगाई ।
ते सब चौकी लार लगायो, ज्यां पणि मिलि घोडौ दौडायो ।।
वो महिमां साहि पणि देख्यो जातो, जीं पैं घोडो वैसो ही मातौ ।
चढि चौग्रिद सेती दौड़्या सारा, चांबलि लग ज्यां घोड़ा डारचा ।७५५।

।। दूहो ।।

खींची चांबलि ऊतरचो, ऊभौ रहग्यो साथ ।
महिमा धंसि आघो हुवौ, लाग्यो तिंह कै गाथ ।।७५६।।

।। चौपई ।।

वा घोडी पाणि ऊपरि जाय, जिंह बिधि धरती लागै पाय ।
जैठें सकल साथ झुकलावै लागौ, महिमां साहि हुवो जाय आघौ ।।
जिंह पांणि मधि घोड़ौ डारचो, जीं पल मैं पैली पार उतारचो ।
वो भोमियौ ढाहैं चढिकैं गयो, महिमां इतवत अंडबंड भयो ।७५७।

जब लग अधिकी छेकि पडि गई, महिमा परिण फिरि वा गेली लई ।
जदि खीची मुडिकैं पाछौ देख्यो, आवत असवार एक जिह पेख्यो ।।
खेजड़ा तळै एक ऊभौ गुवाळचो, जिह खेजड़े खींची बरछौ राल्यो ।
(अर) कह्यो रे गुवाळ आवै जिहनैं कहजै, तूं इहनैं देखि आघौ
पग दीजै ।।७५८।।

।। दूहो ।।

वै चालत फोड़चो खेजड़ो, कहि गयो एकौ भाव ।
इहनैं देखो निरत करि, जदि आघा दीज्यो पांव ।।७५९।।
महिमां कैबर मारियो, नीसरि गयो दुसार ।
गुवाल देखि साकति रह्यो, थां जावौ नचींता लार ।।७६०।।

।। चौपई ।।

जहंठै महिमां निकस्यो जाय, वैं गुवाळै बरछो दियो बताय ।
वो आगिलो गयो बताय कैं भावौ, थां इहै देखि'र आघा जावौ ।।
रिस करि महिमा कैबर दियो, दुसार खेजड़ै नीसरि गियो ।
जब गुवाळ कहै निचिंता जावो, थां परिण उंहकै बसि नहिं आवौ ।
।७६१।

जदीं रीस करि महिमा घोडौ डारचो, पहुंचि'र खीची जाय पचारचो ।
खीची पणि सांम्हो ही आयो, महिमा साहि जब खडग उंचायो ।।
जदि खीची पंणि काढी तरवारि, कहै महिमां तूं पहिली डारि ।
खींची कहै थां पहली बाहौ, महिमां कहै तूं ही करि घावौ ।७६२।

।। कवित्त छप्पै ।।

खीची कीन्ही बाह, सीस हैवर कै लागी ।
सीस पड्यो धर जाय, घोडौ भयो पांव चिरागी ।
आफळि ऊछळि तुरी, खीचो आंठुं तल दाबी ।
घोडी गई धर बैसि, पांव च्यारूं फैलाबी ।
जदि महिमां कूदि दूरौ हुवौ, खीची हुवो कला भंग ।
ते महिमा तळा सूं काढि कैं, बांधी मुसक बेढंग ।।७६३।।

॥ चौपई ॥

देखो दइगति इसड़ी भई, घोड़ी सो उठि ठाढी भई।
खीची रालि लियो तिह ऊपरि, अरि महिमां पणि चढि बैठो तिह परि।
जींहे महिमा पकड़्यां लियां आवै, खीची की बहणि रहै इक गांवैं।
जीं नै घोळि करि जहर खिदायो, सो खीची हैं आणि पिवायो ।७६४।

खीची हें जहर असर जब आयौ, झुकि झुकि पड़ै अर जाय मुरझायो।
जदि महिमां कर मोहोरो लीन्हौ, जीं मधि पोय कैं डोरौ कीन्हौं।
ते मोहरौ मेल्यौ मोहड़ा मांही, गांति गुदी परि दीन्हीं ज्यांही।
जिंहि कौ विष ऊतरि कैं जाई, महिमां उतरचो चांबळि आई ।७६५।

जीं सरब साथ देख्यो जाय आगैं, त्रिछो भयो महिमां तिहिं जागैं।
ते निसरी अगाऊ आडौ हुवौ, और मनुष्य जहंकै नहीं जूवो।
जहां खीची बांध्यो गैल मैं राळयो, जिंहनै मेल्हि अघेरो चाल्यो।
महिमां गढ परि पहुंतौ जाय, सर्व साथ आयौ खीची तिह ठांय।७६६।

बांध्यौ पड्यो देख्यौ ज्यां सोई, जहंठे आय'र इकठा होई।
जो पूछै तूं कुण छै भाई, तो बोलै न चालै उतरि दे कांई।
एकैं ठाकुर आय पिछाण्यो, कह्यो वो छै खीची यो म्हां जाण्यो।
ज्यां उंचाय घोड़ा परि घाल्यो, खुसी होय गढ हें ले चाल्यो ।।७६७।।

ज्यां सारा मिलि करि मतौ उपायो, यौं कहिज्यौ ठाकुर बीरसिंघ ल्यायौ।
सकल साथ हें सौंह कढाई, थां इह ठाकुर हें द्यौह बडाई।
सारा बचन एक हो कीज्यो, थां और न दूजो ऊतरि दीज्यो।
जींहै लेरि राजा नखि आया, राजा हरखि बहौत सुख पाया ।।७६८।।

बीरसिंघहैं सिरपावज दीन्हौं, और पटायत दूणौ कीन्हौं।
खीची ते जंजीर जडायो, भयो प्रात जब राव बुलायौ।
सकल सभा भरि बैठी आय, जैंठे खीची ऊभौ कीन्हौं जाय।
जिह कौ राजा सर्ब देख्यो भावो, अर हुकम कियो ईंनैं तुरंग चढावौ ।।७६९।।

वो अष्टघात कौ घोडो जोई, कोयला नांखि धवाजै सोई।
महिमा साहि दरवारां जाय, वैं घोडा नखै निकसियो आय।
जब महिमा पूछी क्या है यारौ, जदि घोड़ा निखला बोल उचार्‌यो।
कहै काल्हि खीची पकड्‌यो आयौ, यो जींकै कारण गरम करायो ॥७७०॥

महिमां साहि पहुंतौ दरबार, जाय कै राजा सेंती करचो जुहार।
जिह खीची देख्यो मसक समेती, जदि महिमां पूछै राजा सेती।
यो बांध्या गुन्ही कहां सूं आया, राजा कही बीरसिंघजी ल्याया।
थां पणि तो काल्हि गया छा वैठे, या कैं हाथि आय गयौ कैंठौ।७७१।

यौं सुनि कैं खीची मांथौ ढोल्यो, अकराळ थकौ राजा सूं बोल्यो।
मोनैं थारो चाकर कोई नहीं ल्यायौ, हूं बसि इंह मीयां कै आयौ।
जदि राजा चोघै महिमां दिसी, यो खीची बात कहै छै किसी।
फिरि खीचा कह्यो थां पूछौ कांई, होतिब ल्यायौ म्हारै तांई ॥७७२॥

॥ दूहो ॥

ए बातां खीची कही, राव रह्यो मुंह देखि।
बीरसिह बैठो फूल में, होय गयो मैलें भेखि ॥७७३॥

॥ चौपई ॥

हुंतौ बीरसिंघ फूल में बैठो, सुणी बात धरती मैं पैठो।
राजा पणि वो देख्यौ सोई, वो रह्यो नाडि नीची करि गोई।
जदि महिमां हे फिरि पूछै राजा, थां सांच कहौ कांई छै काजा।
महिमा कहै यो खीची ही कहसी, ज्यो लायो सो छानो नहि रहसी ॥७७४॥

॥ दूहो ॥

खीची कहै महिमां सुणौं, म्हां थां हुं बाह।
मैं थांकौ घोड़ो मारियौ, मोनै मेल्हिर आया राह ।७७५।

॥ चौपई ॥

जदि खोची कहै थां ग्रात न मोडो, मैं मार्‌यो छै थांरो घोड़ो ।
हूं थां बांधि गैलि छिटकायो, तूं म्हारी घोड़ी चढि घरि श्रायो ।
यो मोनैं गैला सूं ल्यायो ऊंचाई, जींकी सोभा इंह पणि पाई ।
ल्यायो ते तौ बोलै नांही, ठाकुर फूलि रह्यो मन मांही ।।७७६।।

यौं कही बात खोची दुहराई, साक्त होंय कैं राव रहाई ।
जब महिमां कहै या जुवांन भला है, किसी ग्रहकायें खोटा काम करचा है ।
जदि हंसि कै राजा बात कहाई, देखां तो वा घोड़ी मंगवाई ।
जब महिमा साहि राजा की निजरी गुदराई, वा देखिर राजा बकसीस कराई ।
खासा घोडो श्रौर मंगायो, सो महिमां की निजर करायो ।।७७७।।

बीरसिंघ दिसा राव भौंह तांणी, जिंह को दरबार मैं उतरचो पाणी ।
अर खीजि कैं खीची ऊपरि श्रायो, कहै क्यों रे तूं कुणी बहकायो ।
ईंनै खैंचि श्राघा ले जावौ, श्रष्टधात कै तुरंग चढावो ।
श्रब महिमां की सुणो बडाई, हाथ जोड़ि कैं श्ररज कराई ।।७७८।।

श्रैसा जूवान श्रजांया नहीं कीजै, कही वांको जायगै पौलि कै दीजै ।
श्रौर तमासा देखो इसका, या श्रौर काहू कै नाँही बस का ।
राजा कहै यौ रहसी नांही, कोई जोख्यौं करसी काही ।
यो तो गुनही छै श्रति मोटो, ईनैं काम कीयो श्रति खोटो ।।७७९।।

॥ दूहो ॥

महिमा श्ररज कराय कै, खीची लियो छुडाय ।
चाकर कीन्हौ राव कौ, श्रापरण नखै रखाय ।।७८०।।

॥ चौपई ॥

महिमा साहि नैं श्ररज कराई, इसहैं बकसौ मेरै तांई ।
जदि राव कहै थां खोटो खास्यो, ईनैं राख्यां सुख नहीं पास्यो ।
महिमां कहै इसहै चाकर कीजै, इसहैं खूब जागिरी दीजै ।
तब राजा वो दियो छुड़ाई, महिमां की ताबीन रखाई ।।७८१।।

महिमां खीची नखैं बसायो, फिरि राजा अैसै बतलायो ।
कहौ थांसूं ईसूं क्यौं करि बणसी, किसी भांति सूं बाजी अणसी ।
जब खीची राव हैं किसौ सुणायो, जीं महिमां साहि यो आभि लगायो ।
जिहकौ राव बधारौ कीन्हौ, खीची हैं सिरपावज दीन्हौं ।।७८२।।

।। दूहो ।।

आभूषण सब तीजका, महिमां लिया मंगाय ।
राजा अति राजी हुवौ, फूल्यो अंग न माय ।।७८३।।

।। चौपई ।।

तीज का हूंता आभूषण जेता, महिमा साहि मंगाया तेता ।
सो हजूरि राजा की कीन्हा, ते राव पठाय बाई नखि दीन्हा ।
जदि बाई महिमां कोकि बुलायो, सो ड्योढयां राजा नैं तुरत खिदायो ।
बाई कहै तूं भाई म्हारौ, अब थां म्हांकौ खेल सुधारचो ।।७८४।।

।। दूहो ।।

देवलदे राजी हुई, दीन्हौं एकज गांव ।
महिमाँ तूं कहिजे जिसौ, इसडौ थारो नांव ।।७८५।।

।। चौपई ।।

महिमां बाई बहिण करि चीन्हीं, देवलदे नौछावर कीन्हीं ।
आपकी त्रफ सूं गांव दिवायो, दे सिरपाव अर घरां पठायो ।
जब गढ पर रहत बहौत दिन गया, महिमां यादि भाणजा भया ।
वो जासूस दिली सूं आयो, जीं नैं सारौ किसौ सुणायो ।।७८६।।

जो महिमां सेती कहै ज भावौ, उहां तौ नहीं काहू को दावौ ।
मैं चौकस करि चौकी जागै, कहुठैं नहीं दाव अर बाहस लागै ।
मैं देख्या साही का घोडा आया, हूं पणि वांकी साथि लगाया ।
सो आंणि बंध्या हिंडौण के मांही, ते खाय खीर दुसरा हैं जांहीं ।७८७।

॥ दूहो ॥

करि खबरि जासूस नैं, महिमा सेंती आय ।
ए घोडे सब साहि के, इनकूं ल्यावै जाय ॥७८८॥

॥ चौपई ॥

जब महिमा जिय मांहि बिचारै, या तो गहा साहि का मारैं ।
एक ब्याही घोडी पैदा कीन्हीं, वा घोड़ी साथ आपकी लीन्हीं ।
ज्यां राव नखैं जाय सीख मंगाई, आज सिकार हम खेलैं जाई ।
ते सहंस तुरंग सौं ऐसौ दोड़्यो, जिहि सूं रह्यो हिंडोण'ज थोडौ ।७८९।

जिह दिन तो आराम करायो, ज्यां धापरि खाणो दाणो खायो ।
अरध राति ते पहुंता जाय, सारी पायगैं दई लगाय ।
चौगिरदा है आगि'ज दीन्हीं, घोडी दरबाजै ऊभी कीन्हीं ।
और चौक मैं रह्या संम्हाया, जागी पायगैं लागी लाया ॥७९०॥

जदि सारा लोग उठ्या भड़भड़ाय, जिति देखैं तितही दीसै लाय ।
अगाडी पछाड़ीं काटि नखाई, अर दरवाजा दिया खुलाई ।
घोड़ा काढि सौह बाहिर दीन्हां, वां घोडी कैं लारैं कीन्हां ।
सहंसर घोड़ा गढ पर ल्यायो, और हंकाल मारि करि आयो ॥७९१॥

॥ दूहो ॥

महिमा ऐसैं कहि गया, करि गया ऐसैं दौड़ ।
यो छोडो मेरा भाणजा, कै दिल्ली सेती भौड़ ॥७९२॥

॥ चौपई ॥

राजा सेती आय मिलायो, सारो आय करि किसौ सुणायो ।
और सगळा घोड़ा निजर्यां कीन्हां, सो राजा बकसि अपूठा दीन्हा ।
हवालगीर हिंडौण का दिल्ली गया, सो साहि सूं फिरादू भया ।
महिमां हरामखोर बहोरूं भया, सारे घोडे ले करि गया ॥७९३॥

सुणत पातिसाह उठ्यो रिसाई, पूछ्या समाचार हजूरि बुलाई ।
कहौ कहां सैं आए कहां वै गए, कौंण ऐस सूं घोडे लए ।
कहो अरधरात वे पडेज आय, सारी पायगैं दई आगि लगाय ।
वे रणथंभ सूं चढि करि आये, उहां हीं जायके तुरंग चढाये ।।७६४।।

॥ दूहो ॥

सुणी बात पतिसाह नैं, अलूखाँ लियो बुलाय ।
महिमां घोडा ले गया, तिसका करो उपाय ।।७६५।।

॥ चौपई ॥

जब पातिसाहि अलुखाँन बुलाया, और उजीर मोल्हणसी आया ।
सकल मजलसी आय बैठाया, ज्यांसूं साहि नैं किसा सुणाया ।
महिमा औरूं हरामखोर भया, खासा घोडे ले करि गया ।
सो रणथंभगढ ऊपरि रहै, जिसकी बात न कोई कहै ।।७६६।।

वह आँपण ही सैं प्रगट भया, भांणजा छोड़ौ यौं कहि गया ।
अब उस ऊपरि असवारी कीजे, उस हिंदू सूधां सजाह दीजै ।
जवैं ऊजीर उठि बोल्या ग्रैसे, तुम अबही करौ असवारी कैसै ।
पहिलें एलची भेजिकैं देवो, करि विसटाला मतलब लेवो ।।७६७।।

जब सुणि करि पातिसाहि ग्रैसैं कहै, मेरी निसां किस ही सूं न है ।
जे तूं मोल्हण आपण जावै, तो मेरी खातर जमा रहावै ।
तुम बिन बात करै को जाय, मुझे और की बात न आवैं दाय ।
तुम मेरी बात सुणि कै सब जावो, करि मतलब अरि बेगा आवो।७६८।

कहज्यो चोर हमारा बांधि खिदावो, अर तकमीरी मैं देवलदे ल्यावो ।
उहां दोय पातुरां अजब कहावैं, सो भी हजूरि हमारी आवैं ।
चौकी मैं तुरंग लाख रखावो, अर कछु पेसकसी सिर ठहरावो ।
तुम एती बसतौं मांगो जाय, और करो कछु तुमसै होय सवाय।७६९।

॥ दूहो ॥

मोल्हण बिदा कराय कैं, बात कही समझाय ।
एती बसतां मांगियो, महिमां बाधि खिदाय ।।८००।।

॥ चौपई ॥

जदि मोल्हण सी बिदा करायो, चल्यो चल्यो अहलादपुर आयो ।
जठैं ले डेरो आरांम करायो, दिन दूजै तीजै गढ़ परि आयो ।
बैठि कचहडी फिरि उठि जावै, कोई सूं कछु नहीं बात चलावै ।
जिहिं आवत जात मास दस भागा, जींहै नौसंदा पूछै लागा ।।८०१।।

जौ मोल्हण सूं यों बतलाया, थां चाकर रहौक मतलब आया ।
ज्यां सूं मोल्हण किसा सुणाया, मैं दिली सूं साहि पठाया ।
राजा सेती है इक कांम, मोल्हणसी है मेरा नांम ।
जदि मोल्हंण यो बाता भया, नवसंदा हूंता स राज नखि गया ।८०२।

ज्यां राजा सूं अरज कराई, एक एलची दिन कैं दिन आई ।
वो बैठै आय कचहड़ी ज्यंही, अब लग कोयां बूझ्यो नांही ।
जे म्हां बूझ्यो आप कठा सूं आया, ते यौं बोल्यो हूं साहि खिदाया ।
मोल्हणसी है मेरा नांम, राव पासि आया इक कांम ।।८०३।।

जदयां राव तहकीक करायो, करि ठावो ज्यां आंणि सुणायो ।
जो राजाजी बोलि खिदायो, करि साकति सो गढ पर आयो ।
राजा झरोखैं बैठो आय, तळै मोल्हणसी लियो बुलाय ।
राजा पूछै कठा सूं आया, किसै कांम थां साहि पठाया ।।८०४।।

॥ दूहो ॥

दिल्ली साहि अलावदीं, अैसें किया हुकुम्म ।
गढ परि राव हमीर कूं, जाय समझावो तुंम ।।८०५।।

॥ कवित्त छप्पै ॥

मोल्हण किया सलाम, निवट सै-सात तुखारा ।
चढे वे हिन्दू तुरक, चढे सब संभरिवारा ॥
इम पूछै हंमीर कहां सूं मोल्हण तू आया ।
हूं डीली पतिसाह साहि तुझ पासि पठाया ॥
उलटिया समदर जुग परळै होइ कोटि राव हिं डूबत घणां ।
रखिब राव रखि न सकै सु रणथंभ दुरंग मैं बूढ (त) सुण्यां ।८०६।

राजा कहै—

॥ दूहो ॥

बूडो दुरंग कपूत रो, डरपै अपणैं जीव ।
म्हैं दिल्ली मांगा अबैं, छोडो म्हांकी सींव ॥८०७॥

॥ कवित्त ॥

अरे मोल्हण बसीठ, कांई मो आगळ भखै ।
जो धरि मारूं तोहि, तौ कुणि सरणागति रखै ॥
वति वे दिली पतिसाहि, इतै हूं संभरि राजा ।
फेरिहुं जाय चकवै साहि, कै ल्यों सबही बाजा ।
असवार समेति बिगहैं अरूं, अर झूझन कूं सामहो डसूं ।
कै घोरि होय सुलतांन की, कै हूं हमीर जूझन परूं ॥८०८॥

मोल्हण कहै—

॥ दूहो ॥

पेसकसी पतिसाह नैं, मांगी राव हमीर ।
देवल धारू पातुरां, अर पारस महिमां मीर ॥८०९॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

डिल्ली आलम साहि, कंवरो तिस कारण दीजे ।
धारू बारू पातुरां, अर महिमां ज भणीजे ॥

लाख टका किं न देह, देह किं न लाख तुह्मारा ।
अष्ट खांन किं न देह, जियो चाहै इह बारा ।।
जीय रो बिथा बाहिकैं, सरग कांप की बेरि है ।
मोल्हरण कहै हमीर सुनि, सु मति गिर मरै पतंग ह्वै ।।८१०।।

राजा कहै—

।। दूहो ।।

मुंहडै राखै मूंछ कूं सो धारू कूं लेय ।
जो डर मांनै साहि को, तौ महिमां नैं देय ।।८११।।

गढ गंजनी अलुखांन कूं, निसरत खान मंगाय ।
ठठा तिलंग मड़हट्टिया, ऐता मोय पठाय ।।८१२।।

।। कवित्त छप्पै ।।

मोहि देह गढ़ गज्जरगो, साहि मोहि सेवा आवै ।
अलूखांन मुझ देह, पकडि करि घास कटावैं ।।
निसरतखां मुझ देह, पकड़ि गहि बेडी पग्गू ।
ठठा तिलंग मुझ देह, नारी मडहट्टी मंगू ।।
तौ सुनि मोल्हनचित्तधरि, (कहिज्यो साहि सूं) अर रामायन भारथ भरूं।
कै घोरि होय सुरतान की, कै हूं हमीर जूझै परूं ।।८१३।।

मोल्हरण कहै—

।। दूहो ।।

दिलीसाहि अलावदी, उसके नौलाख तुरंग ।
तेरे लख न पूजई, अब तुझिपै एक दुरंग ।।८१४।।

।। कवित्त छप्पै ।।

उझि घरि असी लख पायक, तुझ घरि लख न पूजैं ।
उझि च्यारि खूंट चिहु चक्क, साहि सरभर को सूझै ।।

उझि चौदह सहस मदगलत, तूझि घर अठसै गैंवर ।
सुणि हंमीर चक्कवै, कड़क्या मेघाडंबर ।।
मोल्हन पूछै बांह देय, सायर थांह न बूडही ।
सुरतांन सिचानां तूं चिड़ा, उडि हमीर किम छुटिही ।।८१५।।

राजा कहै—

।। दूहो ।।

राव कहै मोल्हण सुणो, म्हारे एक हि लख्ख ।
गैंवर मोटा बन महे, वै सींहा रा भख्ख ।।८१६।।

।। कवित्त छप्पै ।।

गैंवर गात अधिक, सींह नैन्हो सो लागै ।
जदि नाहर करै गुंजार, कोटि कुंजर उठि भागै ।।
बिसहर मैं विस घणो, नाग गरड हैं मारै ।
मिरग दीर्घ अति होय, ताहि सिंहगोस पछारै ।।
वै नैन्हडै कान्हड़ काली गह्यो, अर कंस मारयो गल गाज ।
जो सुरतांण निजरया पड़ै, तो वै कुलिंग हूं बाज ।।८१७।।

मोल्हण कहै—

।। दूहो ।।

कान्हड़ नै काली गह्यो, अर मारयो कंस पछाड़ि ।
गैंवर आगैं किम रहैं, कहो पलासी बाडि ।।८१८।।

।। कवित्त छप्पै ।।

किंन समंद लै थाह, परवत किंन कर सूं ठेल्या ।
कूंण तरै दरियाव, पड़त अंबर किंन झेल्या ।।
सूरज पहुंचै कहि कवण, कुंण मेरि गिर हैं फांदै ।
होय आरबळ छीण, जबै कोई आव न सांधै ।।

घडै ऊंट मावै नहीं, इति बात नहीं निरवहैं ।
मोल्हण कहै हंमीर सुनि, सो कूंडै चांद न दबि रहै ।।८१९।।

मोल्हण कहै—

।। दूहो ।।

सुमेर कहूं कर ढंकिए, अब सुणि हो राव हंमीर ।
उलटै सात समंद जब, डाबर रहै न धीर ।।८२०।।

राजा कहै—

।। कवित्त छप्पै ।।

राव कहै सुणि साहि, अबैं कांइ हींणति भाषा ।
होतव्य रच्यो सु होय, जिन कहौ क्यों करि राखा ।।
भागां तो पति जाय, जायगै कोठै नंहि पावां ।
सांभरि श्रम्म लजाय, अवर प्रिथी राज लजावां ।।
म्हां लडस्यां साम्हां होय कैं, करां ऊमेद आवै कदै ।
रणथंभ सूं टळस्यां नहीं, कहां कौल थांसूं बदै ।।८२१।।

माल्हण कहै—

।। दूहो ।।

मोल्हन कहै सुनि रावजी, उंह सूं लडि जीतै नंहि कोय ।
वै गढ केई खोसिया, हूंठी अलावदी सोय ।।८२२।।

।। कवित्त छप्पै ।।

पूरब करी सरद्द अग्निकूंण आय नवंतो ।
दखिण देस देई पेस, नइरति नाव चुवंतो ।।
पछिम द्रव्य सर्व देइ, वायब लछमी नित आवै ।
उत्तरपंथ कर देइ, इसट ईसांन ल्यौं आवै ।।
अष्ट दिसां जर ऊपजै, सो सर्व आवैं ही साहि पग ।
मोल्हन कहै हंमीर सुनि, सो सकल आण जंबुदीप लग ।।८२३।

राजा कहै—

॥ दूहो ॥

बेंकी आए जंबूदीप मैं, म्हैं डरपां नहिं कोय ।
जदि चढि आवै अलावदी, जुद्ध बराबरि होय ॥८२४॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

अरै वांकै तो जंबूदीप, म्हांरै थोड़ी सी जागैं ।
बांकै धरा बहोत, थोड़ी रणथंभ हैं लागैं ॥
वेंकी लछमी अनंत, म्हारै पणि नहींज थोड़ी ।
उहतौ गरब कराय, आजि कुंण छै म्हारै जोडी ।
हाथ घणां ही दिखावस्यौं जो एक बार आवै अठै ।
हमीर कहै मोल्हन सुनि, सो पडै खबरि आवै कठै ॥८२५॥

मोल्हन कहै—

॥ दूहो ॥

आयें सुख नहि पावगे, उजडै सबै मुलक्क ।
एता हठ तुम मति करो, उसकी गैल खलक्क ॥८२६॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

नौ लाख तिस पातुरी, सहंस दोय मैमंत गजैं ।
सहस एक नीसाण, सकल धर नौबति बजै ॥
सहंस केइ उमराव, नाळि पणि सहंसर पीखौ ।
पैदल का नहि छेव, लाखौं बांण सिंगणी दीखौ ॥
अवर भड भीड को गिणैं, धड़कै पार समंद ।
मोल्हन कहै हमीर सुनि, (उसि सूं) सुरनर डरै फुनिंद ।८२७।

राजा कहै—

॥ दूहो ॥

हमीर कहै मोल्हण सुणो, गरब प्रहारी रांम ।
सूरा कदे न डरपइ, जिह कुलं ईही कांम ॥८२८॥

।। कवित्त छप्पै ।।

जिणकै धरती सीस, सो काई डरै ज सेसा ।
चकवै अर मंडलीक, घणां होय गया असेसा ।।
सूर पणि कांई डरै, सुरनर डरै न कोई ।
जींहै जीव की आस, साहि सूं डरसी सोई ।।
म्हांनै चाव छै जुद्ध को, सुणि मोल्हण मारां मरां ।
जब तब मरणों छै छतौ, तो होतव्य सेती क्यों डरां ।।८२९।।

मोल्हण कहै—

।। दूहो ।।

मोल्हन कहै हंमीर सुनि, क्यांन्हैं समंदर घोळौ विस ।
महिमां धारू दीजिये, ज्युं (रहै) थांसूं वांसूं रस ।।८३०।।

।। कवित्त छप्पै ।।

यों रावण कीन्हीं टेक, निकट गढ लंक सुं खोयो ।
करी जुरजोधन टेक, जिके कुरखेत बिगोयो ।।
प्रिथीराज कीन्ही टेक, साहि गहि गहि जिन छोड़्या ।
मैं ज कहूं भलै तोहि, करै मति उनकी होडां ।।
अलावदीन पतिसाहि सूं इतना अब न कीजिए ।
मोल्हंन कहै हंमीर सुनि, यों सुमेर कहुंकर ढकीजिए ।।८३१।।

राजा कहै—

।। दूहो ।।

हंमीर कहै मोल्हंन सुणों, उंहकै सताई लाख तुरंग ।
वो लडि जीव्यो और सूं, यों अबकै म्हासूं जंग ।।८३२।।

।। कवित्त छप्पै ।।

जब कोपे हंमीर क्रोध करि, सबद सुणांयो ।
जब बैठौ रणथंभ, कासिब कूं सीस नवायो ।।

धेठ देह इम कहैं, सांक कुछि मन मैं आनौ ।
बेग उतरि किंन जाब, सबद इक मेरो मांनौ ।।
चहुवांन. रांन इम उच्चरे, हीरा किम भाखै वसीठ ।
जिह छत्री को ध्रिग जियो, सु देह जुद्ध कूं पीठ ।।८३३।।

राजा कहै—

।। दूहो ।।

जब कोपे हंमीरदे, लीन्हौ खडग उंचाय ।
मोल्हण सेती यों कह्यो, बेगो परहो जाय ।।८३४।।
मोल्हन कीन्ही अरज सब, राव सूं कही बनाय ।
उठि चाल्या दिल्ली अबै, आई नहि कुछ दाय ।।८३५।।
क्रोध करिकै ऊतर्‍यो, तब ही गढ सूं आय ।
कूंच दरकूचि पहुंचिया, तब दिलीपुर मैं जाय ।।८३६।।

इतिश्री महाराज श्री रावजी वा मोल्हणसी बसीठ

संवादे षष्ठमोध्याय संपूर्ण ।।

(सप्तम अध्याय)

॥ चौपई ॥

जदि मोल्हणसी दिली फिरि गया, जाय साहि पैं भेळा भया ।
करी सलाम अर पांव छिवाए, कहै साहि बहौत दिन लाए ।
खुसी होय साहि बात पुछाई, कहै कछु तुम क्या ठहराई ।
अर इतरे रोज तुम वहां क्या कीया, जबै मोल्हणसी ऊतर दीया ।८३७।

मोल्हण कहै साहि सूं —

॥ दूहो ॥

समै यो देखि साहिकौ, करी अरज बनाय ।
हिंदू कुछ मानै नहीं, अब कीजै सोही दाय ॥८३८॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

मानै न संक झेलै न डंड, लैंन डिली नित धावै ।
मूंछ महै करवर कसै, राव सावंगण आवै ॥
मांगै अलूखांन, नारी मांगै मरहठ्ठी ।
अर मांगै गढ गज्जनौ, रहै चहुवांन ज'हठ्ठो ॥
चहुवांन सरस बिगहै अरै, अर जूझन कूं ससंम होय धंसै ।
गढ ऊपरि राव हंमीर(निसि)द्यौस ढळैहि चंवर हड हड हंसै ।८३९।

॥ दूहो ॥

सुणी वात हंमीर की, गयो साहि मुरझाय ।
मोल्हण सेती यौं कहै, मुझ गढ की गत्त बताय ॥८४०॥

॥ चौपई ॥

जब पातिसाहि कोप्यो अति ही, मुझसैं कहो बस गढ की गति ही ।
नखैं मैदान क खोह पहाड़, बेहड़ जंगल किंधौ हैं झाड़ ।
केता ऊंचा केता दौराय, चौग्रिद बनी है किती चौराय ।
हम जैसी बिधि चढाई करैं, इहां के दौडै उहां जाय परैं ॥८४१॥

जबैं मोल्हणसी साहि सुं कहैं, चौग्रिद पहाड सतपड़े रहै।
कोस आठ नौ कैं चौडाय, लंबे लगे समंद सूं जाय।
जिनौं के अंदर गढ है बणां, ते ऊंचा बहुत विकट है घणां।
कोस पंदरह बनी है उरैं, पैलो तरफ धंधेड़ा परैं ।।८४२।।

जिह मैं पहाड़ एता बंध किया, बणाय जंजीरा गढ़ बिच लिया।
जोजन च्यारि लौं बंध्या लंबाय, दोय जोजन बांध्या चौडाय।
खोह घाटी सब ढूंढि बंधाई, जहां च्यार राह प्रछति रखाई।
तीन राह बिकट जौ रहैं, एक राह बजारि ज्यौं बहै ।।८४३।।

जिसके आगैं इक सहर बिलंद, जिस देखै सुख पावै जंद।
जहां तीनसै साठ कुवा अर बाय, अर तीनसै देहरे बने सवाय।
जे जोजन एक दचोराय होगा, जिसमें देखो छप्पन भोगा।
अर गढ की महिमा कही न जाई, मानूं इंदर राज कराई ।।८४४।।

फिरि पातिसाहि मोल्हंण सूं बोल्या, तूं बैठ्या रह्या कगढ मैं डोल्या।
उहां केही बस्त कहियै अधिकाई, तुम भी सुणी क निजरौं आई।
उस लड़की की महिमा घणी, और सुधड पातुरां दोय हैं बणी।
अर कहै देवल का जुदा अखारा, जिसका भेद सुणावौ सारा ।।८४५।।

मोल्हंण कहै—

।। सवैयो ।।

वंसतो किसोरी गोरी भोरी भोरी बात करै,
नाजक तनक तन कनक गात बनी है।
चंचल चकोर मीन खंजन से दृग मृग,
चलत अनियारे नैंन सेल की सी अनी है।
चंद्रमुखी मोती दंत सूवा नाक डींभू लंक,
चाल गजराज लीये रंभा की सी मनी है।
कौंधत ज्यौं बीजरी मजेज तेज मांही घनी,
है तो लरकनी पै हीरे की सी कनी है ।।८४६।।

केसरि की क्यारी न्यारी दीपक उजारी भारी
पहिरै लीलक सारी त्रिया ऊभी धाम मैं ।
मृग के से नैन अैंन चंद्रमुखी पिक बैंन,
देह की दमक दिपै कंचन ज्यौं घाम मैं ।
उज्जल बतीसी सारी रंभा की सी उनिहारी,
चलत गजराज कटि केहरी हगाम मैं ।
सोल्हा हुं बरस मांही देवल रणथंभगढ,
देखी है सरूप रूप संभ्या की सी भांम मैं ।।८४७।।

।। कवित्त छप्पै ।।

त्रियान मधि ते धवल, धवल ही वस्त्र सुहावै ।
अलप भूख तिस अलप, नैंन बौंह नींद न आवै ।
धवल कुसुम सिंगार, धवल ही राखै भूषण ।
धवल ठौर सूं प्यार, धवल तटि रामति रूंखन ।
सखी सहेली धवल सब, अर विमल राग गावै इसी ।
सुणी न देखी चातुरी, देवल दुरि सी रंभा तिसी ।।८४८।।

कहै पद्मनी रूप, सु तौ दोय पातुर पिख्यो ।
चातुर गण सब नाच, बिनैं काम कंदला दिख्यो ।
भरि जोबन कैं बीचि, पेखि तपसी तप टारैं ।
सुर नर मोहै पीर, जबैं रंग राग उचारैं ।
अौर पांच सात सोभी भली, (अर)नटवा पनि केई बिगहैं ।
कंचन जड़ित लछमी इसी सो देखत भूख न लगहैं ।।८४९।।

राव की बैठक सुणौं—

।। कवित्त छप्पै ।।

जिसकी बैठक सुंणौ, छौह पर रंग चढावै ।
कंचन पत्र दीयै दुवाल कनक खंभ कोरि घडावै ।

उंह हेम मई सब ठौर, पडछे हडवाई हाटिक।
सत खंणे धौलहर, कलस जड़िवां घडे घाटिक।
जहाँ दरबार जुड़ै सावंत, मिलै सकल समतुल भूप है।
जर बाब मंढे लछमी घणी, इसी कचैंहडी रूप है ।।८५०।।

रणवास की सोभा कहै—

।। सवैयो ।।

रणवास मैं सुघड़ सुंदरि धाय बडारणि देखी इसी।
रंभा कै रूप पदमनि एवज चाल चलै गज हेम लसी।
नाना तन अंबर चीर पटंबर बीर बहोटी कै रंग तिसी।
सर्म घणेरी अदब लियैं फिरैं झुंड कै झुंड कमानि कसी।८५१।

तळाब की सोभा कहै—

।। सवैयो ।।

ताल की तीर मैं नीर भरैं पनिहारी सबै रूपवंत भली।
जड़िवा तन भूषन चीर पटंबर हेम घड़ा सिर लेउ चली।
तें पौणि छतीस सबैं सुखिया त्रिया एक सूं एक अधिक अली।
गावैं हंसै'र विनोद करैं जावैं ढूलरौ' ढूलरौ आप गली ।।८५२।।

सहर की सोभा कहै—

।। सवैयो ।।

द्यौस चाव आन आन महोलै महोलै जांनि,
रात हुवै जगा जोति दूनी जेब लागैं है।
कीरतन रास होय ठांम ठांम कथा जोय,
नाचत है देवी भोपा मूरति जो आगैं है।
देहरो बाजार मांहि चकाचौंधि लागि रही,
लछमी फैलाव महा देखैं भूख भागैं है।
सारौं की अटारी बारी जामैं गीत गावै नारी,
होत है बिलास रणथंभ अई जागै हैं ।।८५३।।

गढ कोट की सोभा कहै—

॥ सवैयो ॥

ऊंचा अैसा यों छील कोरि ग्रिद जैसा,
बन्या है कुदरती कोट खाई बंध जगैं हैं।
ऊपरि मुकत्ता नीर ब्रषा ज्यों बहै है सीर।
आसि पासि पांणी घणा प्रबत उमगै है।
च्यारूं दरा मांहि आंटी बिकट चौरासी घांटी,
दोल्यों है पहाड़ बांकै बड़ी बनी अगै है।
रणथंभ गढ (अैसा) लंका के बणाव जैसा,
वांकै आगै और गढ गढी सेस लगै हैं ॥८५४॥

पातिसाह सूं मोल्हण चौंप लगाई—

॥ दूहो ॥

सोभा यो रणथंभ की, मोपै कही न जाय।
वा गढ तौ लंका जिसा, पहाड़ रहै फिराय ॥८५५॥

कोपै साहि अलावदी, मजलसि लई बुलाय।
अब मसलति अैसी करो, उस गढ कूं घेरैं जाय ॥८५६॥

॥ चौपई ॥

पातिसाहि हैं चौंपि लगाई, तुरत लियो अलुखांन बुलाई।
यौं होय कोपि अर बात कहाई, रणथंभ ऊपर करौ चढाई।
लिख्या उमराव सारौं कूं कीजै, महोला आय सताबी दीजै।
अहदी बिदा दिसूं दिस कीन्हां, पातिसाहि परवानां दीन्हा ॥८५७॥

॥ दूहो ॥

अलु उजीर इकठा भया, तें मिलकैं पूछै साहि।
दे सिरदारी बिदा करैं, तुम हुकम करौ अब ताहि ॥८५८॥

जदि पातिसाह ज्यां सूं कहै, हम आप चलै उसि ठांम ।
मेरी होय निसां किससैं नहीं, मुझ बिन सरै न काम ।।८५९।।

।। सोरठो ।।

अरज करै अलुखांन, तुम पहिली ही मति चढौ ।
ले देखो उनिमांन, फोज पठायां गम पड़ै ।।८६०।।

जो आखिर हो हैं काम, तो तसदीहां क्यों करौ ।
जो कमी होय उसि ठांम, जबैं असवारी तुम करो ।।८६१।।

।। दूहो ।।

साहि कहै अलुखांन सूं, तुम जावो उसि ठौर ।
तो मतलब सारा होयगा, वहां काम नहीं किसी और ।८६२।

अलुखांन पाती लिखी, पठाई देस दिसंत ।
जिन कूं साहि सूं काम है, सो आवो बेग तुरंत ।।८६३।।

अलूखांन कीया विदा, दे सारो इकतार ।
लारां दिये उमराव सब, और दियो खजानो लार ।।८६४।।

।। कवित्त छप्पै ।।

प्रथम चढे अलुखांन, अवर प्रिथी के रानैं ।
पूरब केर पठांन (ह), अवर खोखर खुरसानैं ।
चढियै सैद मरद्द, किये हरवल दल मांही ।
सेख मुगल सब चढे, मिले तुरि लाख दलां हीं ।
कनवज अर बैराट ठठे, गोरी भरि आये ।
उडीसा अवर खंधार, बलख परबत लौं धाये ।।८६५।।

।। दूहो ।।

(संवत) तेरह सै चालीस कौं, चढि धाये अलुखांन ।
माह (ा) सुदी बसंत कूं, लारैं सबैं पठान ।।८६६।।

॥ चौपई ॥

अलुखांन जी कूंच कराया, वे कूंच दर कूंच मलारणैं आया।
जहां सूं एक जासूस खिदायो, ते जासूस गढ ऊपरि आयो।
जीनै हड़बड़ कहीं न देखी, सील सोफती सारै पेखी।
जो फिर जासूस मलारणै आयो, अलुखांन सूं किसौ सुणायो ॥८६७॥

पाछै खबरि राजाजी पाई, जब करबा लाग्यो आप चढाई।
सो महिमां साहि नैं मनैं करियो, कह्यो साहि आवै तो तुम भी चढियौ।
जदि राव कहैं कुण भेजां कोई, हुकम होय जायगा सोई।
जब राव कह्यौ थे ही चढि जावौ, करि कारज अर बेगा आवौ॥८६८॥

॥ दूहो ॥

जदि महिमां असें कहै, अब क्या करिएज मंगोल।
राति उतरि रोळा करो, राव का होय सुबोल ॥८६९॥

महिमां चढि करि चालिया, दस सहस लिया असवार।
च्यारूं त्रफ सूं लागियां, देइ अलू कूं मार ॥८७०॥

॥ चौपई ॥

इत सूं महिमां विदा करायो, सो तीजैं पहर गढ सूं चढि धायो।
साथि असवार सहंस दस लीन्हां, ज्यांका तूंगा च्यारि मिली कीन्हां।
वै तो नहिंचित रह्या'ज सोई, भया गाफिलि जासूस सूं होई।
ए च्यारूं त्रफ जाय कैं लागा, भड़ाभड़ि जाय करी तिहिं जागां ॥८७१॥

ते करि उकटाळो होय गया न्यारा, आपस ही मैं मांची मारो मारा।
राति अंधेरी खबरि न पड़ई, वै आपस ही मैं लड़ि लड़ि मरई।
देस देस का आया सोई, कोइ हैं पहिचाणें नहिं कोई।
पडी जरांजरि चौग्रद भागा, अलूखांन भयो तिहिं आगा ॥८७२॥

मरबा वाळा मर ही गया, औरां पंथ आपणां लया ।
सांहण बांहण घोड़ा टार, हाथी डेरा तुपक हथियार ।
दारू नाळि पडी कुलि रही, और मताह फिरै सब बही ।
महिमासाहि सब आय संभाळी, तुरक गडाया हिंदू बाली ।।८७३।।

जीं सकल बस्त अवेरि कै लीन्ही, सब गढ हैं चलती कीन्ही ।
जो जाय राजा की नजरि गुदारयो, जदि राजा नैं भाट पचारयो ।
कहो महिमांसाहि किसो रजपूत, जीं प्राक्रम कींन्हां अदभूत ।
राजा अति ही राजी हूवो, जहंठे खेम हंकाल्यो जूवो ।।८७४।।

।। दूहो ।।

अलुखान भगाय कैं, जाय जुहारयो राव ।
राजा अति राजी हुवो, दियो घोडो सिरपाव ।।८७५।।

।। कवित्त छप्पै ।।

बौह चाचरि हिंदू तुरक, किबत्त ज खेम भनि ।
जानूं बसंत पत्ति झडंग, पडिया मीर मंगोल जनि ।
खग्ग खरा खत्रियां, महा जिम मांस अलगो ।
बौह फरास लदिया लहंसन सो वन लहस लगो ।
तो महिमा मंगोल का बांन तल अलुखांन दल निठ करी ।
अलावदीन हमीर सूं बंध्यो बैर अवसि करी ।।८७६।।

।। चौपई ।।

सकल मताह महिमां हैं दीन्ही, करि सलाम जिहिं उरही लीन्हीं ।
क्षों तो ब्राह्मण भाट दिवाई, और बकसीस सिपाह्यां पाई ।
जदि अरज करी सारी रजधांनी, कहै सौंपाल ख्यौंपाल हैं द्यो परधांनी ।
राजा मानियो हुकम कराई, जीं दिन परधांन किया दोउ भाई।८७७।

ज्यां हैं सगळौ कांम सौंपि कै दीन्हौ, और भंडार हवालै कीन्हौ ।
जदि राजा दरवांन बुलाया, जे कहि बातां ग्रैसे समझाया ।

सहंस घोड़ां लग कोई आवौ, ज्यांहे चढतां जिन मनैं करावौ ।
सहंस ऊपरै आवै कोई, ज्यां है चढवा दयो मति कोई ।।८७८।।

।। सोरठो ।।

गयो अलूखां भागि, भई खबरि पतिसाह सूं ।
जिह तन लागी आगि, हाथ मलै अर सिर धुंनैं ।।८७९।।

।। कवित्त छप्पै ।।

इतनी सुनतां परिजल्यो, मानूं पावक घ्रित डारयो ।
निकट उजीर लिये बोलि, आवो इक मंत्र बिचारयौ ।
बेद कतेब सब आंनि, भली भली सांयत ढूंढो ।
हम चढि हैं रणथंभ, छिन हठ करे है न रूंढो ।
च्यार खूंट चहुं चक्क, दिसूं दिस कागळ फंके ।
चढत डिली पतिसाहि, तेज मृतलोक ज संके ।।८८०।।

।। दूहो ।।

बुलाया जोसी जोतकी, काजो मुल्ला और ।
पुसतग देखो आप मैं, सब बैठो इक ठौर ।।८८१।।

।। कवित्त छप्पै ।।

जोगणी चक्र विचार, पाछै कालचक्र बिचारयौ ।
दसासूळ हैं टाळि, राह देखि पीठ हैं डारयो ।
भदरा कौ करि ग्यांन, चन्द्र सूर्य बळ हेरयो ।
सुभ निछत्र मधि लेय तिथ, अर वार न बेरयो ।
नौग्रह बारह रासि पिखि, सुभ मास बैसाख लिय ।
पहरि घडी पल लगन, सो सिद्ध जोग सिध गवन किया ।।८८२।।

।। चौपई ।।

सातैं काल करका मेषां, आठैं कन्यां मिथुनां देख्यां ।
नौंमी मक्र कुंभ जो मिलैं, दसमी सिंघ सर्व सो गिलैं ।

एकादसी धन मीनैं काल, द्वादसी तुला बिरछ कैं भाल।
रास बारह छह तिथ कौ भेव, यों काल गवन बांचै सहदेव ।।८८३।।

।। दूहो ।।

तेरह सै इकतालसा, आखातीज गुरुवार।
चढै साहि अल्लावदी, इतरा दळ ले लार ।।८८४।।

सुभ महुरत पंडित दियो, करचो प्रस्थांनो साहि।
इतरा दळ इकठा हुवा, अब वरणैं कविताहि ।।८८५।।

।। भुजंग प्रयात ।।

पातिसाह की चढाई—

चढे भूप भूपं महादेस एता, कहूं तास रूपं सुधा सार जेता।
चढे राव खानं बसैं दोय दीनं, सुनो तास नाऊं सबैं ठौर कीनं।
गजं देस काबिल उचं देस ठट्टा, मघं देस पैसोर जिते खांन जठ्ठा।
कछं देस सोरठ चढे राव मारू, चढे झाड़खंडं मेवात बारू।
चढे देस सूरति गुजरात सारी, चढे पछिमं फौज चित्रकोट भारी।
अजमेर देसं जिते जिते राव सूबा, चढे ब्रज भोम्यां ढूंढाहड़ खूबा।
चढे कामां बह्मतर जादू भोम जेती, लखी जांगळू बांधु कनवज एती।
पूरब बंगालो कांबरू देस ढाका, नौ नेज पहाड़ ते ते बलख बांका।
चढे ईडरं ऊजेए आसेर भोमी, रोहतास गुवालेर चढे गौंड जोमी।
उडीसा जगनांथ जिती भोंमि होती, देवगिर तिलंग करनाट जोती।
सूरति खंभायची जिता भोमि भोम्यं, लाहौर खंधार चढे साहि रोम्यं।
चढै च्यारि खूंटं जिती भोमि सारी, कहां लौं कहिए लगै बार भारी।
चलै रैन दिनं फुनी भख्ख लावै, मनु रुति रखा घटा जेम छावै।
चढै फूलि फूल्यं अपो मांहो मांही, जिते दोय दीनं तिते ल्योन खाहीं।
जिती साहि सकत्ति जिती फौज मोली, इसौ साहि तपं चढचो पांए डोली ।।८८६।।

साहिं कहै—

॥ दूहो ॥

अलूखांन उजीर कूं, लिया उजीर बुलाय ।
सब दळ इकठ्ठा हुइ चुके, (अब) गढ परि कूंच कराय ।८८७।

बकसी कहै—

॥ दूहो ॥

उमराव सारा आइया, सो पूछै सुरतांण ।
तेरह लख दळ हिंदवां, चौदह लख तुरकांण ॥८८८॥

अलुखान कहै—

॥ दूहो ॥

अबैं कूच हजरति करो, सब आए उमराव ।
करो हुकम हरौळ सूं, देखत चलै पडाव ॥८८९॥

निसरतखांन हरौळ कूं, फतेखांन चंडौल ।
हुसैनखांन बांई रहौ, ततारखांन करौल ॥८९०॥

॥ नीसांणी ॥

फौजां इसी इकठी हुई, पतिसाहिं बुलावै ।
उलटि घटा जिम भादवै, इसड़ा दल आवै ।
खेह उड़ै खुरताल सूं, रज अंबर छावै ।
ज्यां मधि धजा धरहरै, चपळा चमकावै ।
घुड़ै नगारा त्रंबकी, घनघोर करावै ।
अळवळता अैराकियां उमराव नचावै ।
पाणीपंथा घोड़ला, उडि डांण भरावै ।
ताजो तुरकी आफळै, केई खुरी रळावै ।

कच्छी गूंट परबत का, अति तेज चलावै ।
केई तूंगा टूटिया, कर सेल रुळावै ।
हथ्यां हलका मदगळां, केई पटा झरावै ।
पार न गाड्यां पावजे, हथनाळ ढुलावै ।
सो धवळ बैलें जूपिया, गज ताहि धकावै ।
करहा पार न पावजे, सुत्र-नाळ चलावै ।
धूलिधांणी देग जंबूरते, बांण कूंण गिणावै ।
ज्यां मुख बैठे आदमी, केई मण गोळा खावै ।
पैदल पार न पांमजे, पंथ ऊबट धावै ।
ज्यां मधि कर वंदूक सींगणी, केई पार न पावै ।
ज्यां मधि जांगड़ हूकळै, नट सिंधू गावै ।
सहनाय सिंधू रणतूर मैं, करनाळि बजावै ।
ऊबटबाटां होय गई, चलतां तिह ठांवै ।
औघट ते घांटा हुवा, पथ सूध चलावै ।
सकल धरा इकठी हुई, कहुं नाहि समावै ।
चलै रैंनि दिन यौं कहै, कदीं रणथंभ आवै ।।८९१।।

।। कवित्त छप्पै ।।

खंड्यो गवरी गज्जणो, खंड्यो डिली समाँनौ ।
खंड्यो खंभायचपुर देस, खंड्यो खोखर खुरसानौं ।
खंड्यो बंग तिलंग, खंड्यो उह पिंगुल देसा ।
खंड्यो कच्छ कांबरू, खंड्यो ईडर उपदेसा ।
तो इतौ अलावदीन खंडि, रणथंभ दुरंग मच्छर अड्यो ।
हंमीरराव हडहड हंसै, सु मनुं इक टांडो पड्यो ।।८९२।।

।। चौपई ।।

इसड़ौ साहि नें कूंच करायो, कूंच दर कूंच टोड़ा मधि आयो ।
जहंठै आय मुकाम ज कीन्हों, और बुलाय भोमियां लीन्हों ।

जीहैं पूछै बात कहावौ, रणथंभ (गढ) की राह बतावो।
जहां होय ल्हसकर सब जावैं, गाडी नाळि नहीं अटकावैं ॥८९३॥

जिहां सूं भोम्यो साथ लगायो, जे सूधो लियां लाखेरी आयो।
जिहकै दरै उतारयो सोई, छायण आय पड़ावज होई।
पूछै साहि अब गढ है केतै, उजीर कहै कोस पांच छह जेते।
जब साहि कह्यो कालि चढ मारूं, अलूखांन का बैर उतारूं।८९४।

छायण मैं आय लोगां को तसीहो लियो।

बकसी कहै साहि सूं—

॥ कवित्त छप्पैं ॥

अलि कपोल भुंनकार, (घुरैं) दसपंच गयंदा।
तुरी सताइस लख्ख, अनंत को गिनै नरिंदा।
पंच लख्ख पायक्क, दगड़ दह तेरह सजिग।
सात लाख मपलंद, लाख तेरह कनवज्जिग।
तौ अलावदीन दल देख करि, फुंनि सुर नर मंथ्यो थुनंग।
इकवै राव अंगवै रह्यो, सु सवालख संभरि धनंग ॥८९५॥

जासूस कहै—

॥ दूहों ॥

करी खबरि जासूस नैं, कही राव सूं जाय।
दळ असपति का आइया, सु तो कह्या न जाय ॥८९६॥

जदि गढ मांहै राजा नै आपका लोगां को महौलो लियौ।

॥ कवित्त छप्पैं ॥

सवा लाख बर तुरी, लाख दस पैंदल पिख्यो।
आध लाख बरकमज, सहंस एक सिंगनि दिख्यो।

सहंस एक मदगलत, सहंस एक नालि ज सजिग ।
आध सहंस नीसाएा, रैंन दिन इक लग बजिग ।
सहर सहंस धनंकधर, इतरो दल रणथंभ महैं ।
च्यारि दरा घांटी सबै, सु रैंन दिनां चौकस रहै ।।८६७।।

॥ अरिल्ल ॥

दोउ त्रफ होय आवाज, गाजि पर्बत सब रहिया ।
दोहुं त्रफ घुड़ै निसांण, तड़िक बादळ जिम फहिया ।
उमंगि उमंगि सब कहैं, अग्या हम पांवहीं ।
हरिहां चौसठि जुड़ी, जंमीति सु मंगल गावही ।।८६८।।

॥ दूहो ॥

जितरो लोग हमीर को, रहै डूंगरां आय ।
उतरि पर्वत सुं रैंनि कूं, पडै फौज मैं जाय ।।८६९।।

॥ चौपई ॥

हुवौ विहांणौ जब सूर उगायौ, पातिसाहि परधांन बुलायो ।
कहै करो चढाई गढ कूं मारैं, इहां पड़े पड़े क्या बात बिचारैं ।
जबै उजीर यों बात कहाई, उहां एक बार कोई और खिंदाई ।
कै मिलै हैं कै कछु मांनै सोई, नहितरि करण मतै करोगे जोई ।९००।

॥ चौपई ॥*

खत्री एक बोल्यो तिहं ठांउ, (जो) हुकम होय तौ मैं वुहां जाउं ।
कै मिल्याउं कै बसत कबूलै, लेउं हाथ सगळी गल भूलैं ।
जिहैं साहि नैं हुकम करायो, जिकैं सकल बातां कहि समझायो ।
जे बिदा होय अहलादपुर आयो, राजा सेती आंणि मिलायो ।।९०१।।

---

*छंद का नाम "कवित्त छप्पै दिया है । होना चाहिए चोपई ।

खत्री कहै—

॥ दूहो ॥

मनमथ जानि हमीर इहैं, इहै डिल्ली सुरतांण ।
दिस च्यारूं (ही) वस्य करी, खोसि लई खुरसांण ॥६०२॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

करी पयज खत्री मयंक, गढ ऊपरि आयो ।
तौ सुनि रांव हंमीर हूं, साहि तुझि पासि पठायो ।
बहैं साहि अलावदीन, काफर दल-भंजन ।
चिहुं दिसा तैं आन्यो डंड, लंका हुंतै आन्यो कंचन ।
तौ मन मथ जांनि हंमीर तूं, देह दड करि जोड़ि कर ।
अलावदीन हठ करि चढ्यो, सुनंत गढ छोडि पग जाय परि ।६०३।

राव कहै—

॥ दूहो ॥

अलावदीन आयो भलैं, याकी छी म्हांनै चाह ।
म्हां यां झगड़ो ठेठि कौ, यां सूं याही राह ॥६०४॥

राजा कहै—

॥ कवित्त छप्पै ॥*

देवगिरि म म जानि, जानि म म जादुं नवावै ।
गुजरात म म जानि, करन चालक नहीं धावै ।
मंडोवरि म म जानि, सु तो हेलां संग रहियौ ।
चीतोड़ म म जांनि, सु तो कूड करि गहियौ ।
तौ तूं अलावदीन हमीर हूं, द्रिढ किंवाड़ आडौ खरौ ।
रणथंभ दुरंग लड़त ही, सु अब जांनि बौ पटंतरौ ॥६०५॥

---

* माण्डउ व्यास कृत हमीरायण का छप्पय सं० 156 भी सामान्य अन्तर के साथ यही है ।

फिर खत्री कहै—

॥ कवित्त छप्पै ॥

कहै डिली पतिसाहि, हूं खांन दिन पंच न खैंहूं ।
रणथंभगढ हूं लेय, अवरगढ पाछै लेहूं ।
अहंकार पड़्यो इस ख्याल, सब खांन उँबराव बुलावै ।
गड़बड़ बहोत कराय, सकल साहिनीं मनावै ।
यौं सताईस लख दल साजि करि, पातिसाहि गढ सूं अड़्यौ ।
उत्तर न देह हमीर तुव, कहे मांनु आय टांडो पड़्यौ ॥६०६॥

राजा कहै—

॥ दूहो ॥

उत्तरि दियो हमीर नैं, जुद्ध करूं भरपूर ।
देव-गिर लेइ अलावदीं, वैं कायर छा सूर ॥६०७॥

फिर राजा कहै—

जुध रांम रावरा, जुध बाली सुग्रीवैं ।
जुध करण अरजन, जुध दुसांसरा भींवैं ।
तो पुहमराय इह सुनि जुद्ध, सो काल्हि बीतैं चहुंवानैं ।
धीर (पुंडीर) जिम कटि हैं, छत्र ऊपरि सुरतांनैं ।
तूं परमहंस इह चितधरी, अरियन जिम पुंडर रयन ।
झगड़ौं पुरांनो ऊधड्यो अरि नरिंद हम्मीर सन ॥६०८॥

फिर खत्री कहै—

॥ कवित्त ॥

मकैं अरस की जोति, नाम साहि जानैं घरूंघर ।
रूम स्यांम सिर नांय, उह साहि धडक रहै डर ।

आसाम परैं हद जोरि, तिलंग करनाट भरे कर।
द्वारिका लौं जगनाथ सब जंबूदीप कीया सर।
नौमण जनेऊ कास्मीर लई, अर देहरे दीए ढहाय।
तुम सूं मतलब होय चुकै, जबैं सेत बंधावै जाय ।।६०६।।

राजा कहै—

॥ दूहो ॥

पहुमिराय तोसूं कहूं, (तूं) फिरि किंन पाछौ जाव।
हजरति जो मांगै अठैं, सो थे कदैं न पाव ।।६१०।।

॥ कवित्त ॥

भावैं रहो भावैं जाव, अठै क्यों काम न होई।
साहि करैं ते चाहि, अठै पावै नहिं कोई।
अठै झड़सी सार, किंधौ ल्यो मुकता पाथर।
ए खैर धोकड़ा रूंख, गांठि बांधि ल्योह अजाथर।
हूं थांको डरायो नां डरूं, थां करण मतै सो ही करो।
राव कहै पहौमराय सुनि, थां बिचका फिर फिर क्यों मरो।६११।

॥ दूहो ॥

जेती बात खत्री कही, राव न मानो कोय।
(वो) ता क्यो मारबा जीव सूं, (जदि) गयो अहूंटो होय ।६१२।

घाटां लोग बैठा रहैं, च्यार दरां कैं मांहि।
दरवाजा खुलिया रहैं, सांक न मांनै ताहि ।।६१३।।

खत्री कहै साहि सूं—

॥ दूहो ॥

खत्री फिरि गयो साहि पै, कीन्हीं जाय सलाम।
हिंदू कुछि मानैं नहीं, होय न कोई काम ।।६१४।।

॥ कवित्त छप्पै ॥

हजरति सुनौ अरज, बात हिंदू नहिं मानैं।
मैं अहोर सहोर सौह कही, वह दिल सांक न आनैं।
मन मैं मनीं बहोत, जोम मैं अंग न मावै।
आजि काल्हि लड़ै आय, लरन कूं सन्मुख धावै।
तुम करण मतैं सोही करो, अर परपंच अनंत उपाय।
दीया लेकरि देखिए, सो तौ नहीं इह लाय ॥६१५॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

सुण भभक्यो सुरतांन, खड़ै होय कमरि बंधाई।
कह खांन सूं जाय, बेग दे करौ चढाई।
सारौ ल्हसकर लेय, कोपि दरा सूं अडियो।
भयो जुद्ध भाराथ, ता दिन निसरतखां पडियो।
च्यार पहर बीत्या विषम, अर सूरज भयो असत्त।
जदि साहि मुडि डेरैं गयौ, सौंप्यो धर निसरत्त ॥६१६॥

॥ दूहो ॥

खाटा दांत हुवा साहि का, मर्यो भतीजो डील।
हाथ मरोड़ै सिर धुणै, कहै आया टीका लील ॥६१७॥

परपंच घणा ही करि रह्यो, बाहास न लागै कोय।
जद्‌च्यां हुकम अैसे किया, गढ चौग्रिद घेरा होय ॥६१८॥

मुसलमान आंयण नखैं, हिंदू तरफ आथौंणि।
पहाड़ बंधबसत (सब) करौं, (कहुं) खाली रही
न कोणि ॥६१९॥

(इतैं) लग्या आय बनास सूं, दूजो छोड़ हिंदवाड़।
बलौंडणी (सूं) छायण बिचै, ज्यांकौ छेह खंडारि ॥६२०॥

॥ सोरठो ॥

अबै खायगा क्या, सकल पहाड़ बंधबस्त किये ।
एता अंदर क्या, मैं बरसों (ही) बैठा रहूं ॥६२१॥

॥ दूहो ॥

उतरे लोग पहाड़ सूं, दिन कैं दे रतियाव ।
(जे) मारि मारि डूंगर चढे, राजा करत सिहाव ॥६२२॥

जेती माहैं आंतरी, बावै धांन किसांण ।
(जठै) सकल जरायति ऊपजे, जहां पाणी जहां पाण ।६२३।

जदि साहि मसलति करै—

॥ कवित्त ॥

करै साहि मसलत्ति, लिया उमराव बुलाई ।
सब भड़ बैठा आय, जिनौं सूं बात कहाई ॥
इसके बडौं सूं बैर, आदि हमसूं चलि आया ।
जिनौं मारे केइ घेरि, ऊनौं परिण केई खाया ॥
स्यूं दिली सूं दिये निकालिकै, अर दिये अजमेर सूं काढि ।
तोऊ छाता टूटा नहीं, फेरि बधि गये बाढि ॥६२४॥

और सुनो फिरि बात ए, दोय जुदे दावादार मेरे ।
हंमीर देव दूजा राम, इनौं दुख दिये घनेरे ॥
आंन जनम मैं नाग, ए हुंते दोय कांन कलीला ।
जदि मैं गल्यां हिंवाळै जाय, ए भी साथि भये दुखीला ॥
जब तौ कर बिनां छूटै नहीं, अब किरोड़ कर मेरै करे ।
गहि चिमटी सेंति मसळि हूं, तो अलावदीन नांम मोहि अवधरे ।६२५।

॥ दूहो ॥

(अब) निसालाताला जौ करै, (तौ) तोडूं छाता फेरि ।
जिमि ऊपरि राखूं नहीं, मारूं सबकूं घेरि ॥६२६॥

पड़चा दूरि कहुं ढिग नहीं, (वै) निजर न आवै ठांम ।
जो कहुं आख्यों देखि हूं, तो करूं घणैं ही कांम ॥६२७॥

॥ चौपई ॥

जीं सारै डूंगर कीन्हौं घेरौ, च्यारूं तरफ होय गयो डेरौ ।
राव लोग डूंगर पर रहैं, जठा सूं गोळा नाळि का बहैं ।
कोस दुकोस दूरि रहावै, डूंगर की जड़ कोइ न आवै ।
इण विध लड़त बरस दोय गया, जबैं साहि मता और ही ठया ।६२८।

॥ दूहो ॥

छांयण पडचो अलावदीन, खेलै राव सिकार ।
चोरासी घाटचाँ महैं, आवैं रसति अपार ॥६२९॥

कारखांने पतिसाह कैं, सर्व हुनर की साल ।
(केई) त्रिया पढ़ाई दूतरस, ज्यांहैं गम पाताल ॥६३०॥

॥ चौपई ॥

पातिसाहि दोय दूति बुलाई, जे पणि बरस सोलह की आई ।
दूत करम ते असी जाणैं, तारा तोड़ि अंबर का आणैं ।
रोवत आदमी तुरत हंसावै, रूठांहैं पल मांहि मनावै ।
जो रूपवंत विदचा बहौतेरी, अति चातुर अर गावैं घनेरी ॥६३१॥

ज्याँ की पहोंचि जोतिग कै मांही, वां पटंतरि को पंडित नांही ।
जोगी जती सिंनासी भगता, पूजै न चरचा किबता सुरता ।
टौंणा टांमण मोहणमंत्र, बैदंग बाद करि जाणैं जंत्र ।
वै बोह रूप को पाखंड करई, बहोत छंछाळ चातुरी धरई ॥६३२॥

जो पातिसाहि श्रैसैं समझाई, तुम देवल कूं ल्यावो जाई।
जो उसकूं तुम श्रांणि मिलावौ, तो तुम मांगो सोही पावौ।
लगे दाम श्रर चीज खुवाई, इह तुमसै कांम पड़्या है श्राई।
जो श्राजि के दिन कूं तुम मैं सेई, खाया निमक उरण करौ तेई
॥६३३॥

श्रमोलक मुहमुंदी बेग मंगाई, ज्यांका कपड़ा दिया सिंवाई।
ते तो तन मैं पहरयां त्यांही, रूप स्यामण्यां रियो ज्यांही।
कर मैं चौंरी पातर लीन्हौं, पानां पुसतग कांधै लीन्हौं।
कर श्रासौ ले चलीज सोई, मोहन रूप बंणी श्रति दोई ॥६३४॥

मोती माला गल मैं डारी, हीरा-सुमरणी कर मैं न्यारी।
श्रौर पनां पदारथ लीन्हां, सो गुपत करी गांठडी कीन्हा।
मुकती मोहर खरची बांधी, गढ हें चलो महूरत सांधी।
जो पूछै जिह सूं ज्वाब कराई, हंमे श्रतीतणी बाई बुलाई ॥६३५॥

बाई कै नांव न रोकै कोई, जाय पहुंती गढ परि सोई।
बैठी जिकै जागै मैं श्राय, ज्यां देखी त्यां सिपत कराय।
इक माया श्रर जुवांन रूपवंत, ऊंचा वसत्र बहु गुणवंत।
ज्याँ को खबरि देवलदे पाई, जदि वै दोनूं नखैं बुलाई ॥६३६॥

श्रासोरवचन ज्यां दीन्हों श्राई, दोऊ कर जोड़ि श्रर लागी पाई।
हुकम कियो यौं बैठा ज्यां सूं, श्रर चरचा श्रति कीन्हीं त्यांसू।
बाई श्रति ही राजी हुई, सखी सहेली हरखी जुई।
मनुहारि ज्यांकी बहोत कराई, श्रौर कह्यो दिन कैं दिन श्राई।६३७।

फिरि बाई जब श्रैसैं कह्यो, कहुं ठै जावो कहुं ठै रहौ।
इत्ती विद्या थां कहुंठै पाई, श्रर इसा दिनां (मैं) क्यों भेष धराई।
थां कूंए जाति कुणैं की बेटी, कटुंब छोडि क्यूं भई ज हेठी।
भूखी भो थां दीसौ नांही, श्रनंत माया छै थां मांही ॥६३८॥

सुंनि दूती बोली बहसाई, म्हां कहां बात जौ मानौ बाई।
पूरब मांहि उड़ीसो बाजै, ज्हंठै म्हांकौ पिता बिराजै।
उण देस कौ वोही राजा, म्हां कहतां बात मरां छां लाजां।
थां पूछ्यो तो ऊतरि दीजै, जींकी श्रम अब कांई कीजै ॥६३६॥

म्हांका पिता दोन्यूं छै भाई, सो पूर्ब परै वै राज कराई।
ज्यांकै पुत्र भयो नहीं कोई, वां कै कन्यां भई म्हां दोई।
ज्यां बर्स बारह लौं लाड लडायो, पीछै म्हां कौ ब्याह करायो।
संजोग दईगति इसही भया, म्हां का सांई नीसरि गया ॥६४०॥

वां राज पाट त्यागो सौह भुमियां, धरयो जोग तीर्थ हैं रमियां।
म्हां बरस पांच लौं गैली देखी, कोयां खबर न आय बसेखी।
पीया बिन भूषन लागै फीको, पीया बिन वस्त्र अंग नहिं नीको।
पीया बिन नीर नाज नहीं भावै, पीया बिन नैंन नींद नहीं आवै।६४१।

पीया बिन भवन भुजंग सौ लागै, आंगण ग्रेह सुहावै न जागै।
पीया बिन रामति सब ही बुरी, पीया बिन रहजै गृह मैं दुरी।
पीया बिन कहुं न परिहै चैन, तंबोल न टीको काजल नैंन।
जहाँ ऊभी तिहां सोहिजै नाहीं, सबको नांव धरै मन मांही ॥६४२॥

पीया बिन सेज अकेली जावै, भरि जोबन मैं कांम सतावै।
सो बिध कीजै सो नहिं भावै, रैन दिनां कहुं कल न परावै।
सकल सिंगार आग सा लागा, तिण दुख सूं म्हे नीसरि भागा।
ईं अवस्था मैं थां धनि बाई, थां हैं पिय बिन क्यूं ज सुहाई ॥६४३॥

अब म्हां तीरथ करिस्यां सारा, जो कहुं कंत मिलै पिय प्यारा।
तो तौ अपूठा घर हैं जास्यां, नहिं तरि सगळा तीरथ न्हास्यां।
एक काम दोय पंथ कहावै, तिंह सूं सारै फिरि फिरि आवै।
म्हांकौ जीय बसै पिया मांही, कै लाधा कै भटकां छां ही ॥६४४॥

उड़ीसा मैं म्हैं जनमी जाई, इंदरवनि केई बरियां न्हांई ।
जगन्नाथजी पंरिण होतां आई, गया पिंड भरचो म्हां जाई ।
नेमषार मीसरि पंरिण देख्यो, अजोध्या प्राग नींका करि पेख्यो ।
बानारसी मैं बरस दिन रह्या, जठै जोतिग बौह गुण लह्या ।।६४५।।

गंगा को गंगोदक पीयो, केदार कौ म्हां कांकरण लीयौ ।
हरिद्वार(जी)परिण देख्यो आछां, बदरीनाथ(जी)म्हां गया जका छा ।
जीं पाछै पौहोकरजी न्हांया, बाराहजी का दरसन पाया ।
थां की महिमां सुणी ज कांनि, जिह सूं दर्शन कीन्हौं आंनि ।।६४६।।

जदि बाई जी पूंछै ज्यांहैं, अबैं सुरति को वाकी थांहैं ।
कोई दिन तो अैठै ही रहिज्यो, म्हांहैं दिन कैं दिन दर्शन दीज्यो ।
गोमती मांही करां असनांन, पीछे गिरनारि देखस्यां आनि ।
...., ... ।।६४७।।

जिहठैं तीर्थंकर देव हमारा, नेमनाथजी खरा पियारा ।
जहंठै देहरा भांतौं भांति, ज्यां परसण की लागी खांति ।
आबू सिखर देखस्यां थांन, जांमू-मारग करां असनांन ।
गोदावरी अर सेत बंध जावां, अड़सठि तीरथ सगळा न्हांवां ।६४८।

म्हां इतरी आसंगि निसरचा सोई, दोन्यूं मैं फल एक तौ होई ।
यौं जीव कलप्यौ इतरा काजैं, जो कहुं राम आवसी छाजै ।
जदि देवलदे बोली अैसें, दुबध्या मांहि पड़ी थां कैसें ।
तीरथ कौ फल क्योंकरि पावो, थांकै जीव तो पीव बसावौ ।।६४६।।

थां तो बात कहो यों बाई, पिय बिन क्यों करि नारि रहाई ।
देवांगना राजा को कन्यां, राव रंक पसु पंछी सिन्यां ।
ईं सुख सूं सुख भलो ज कैसौ, थां म्हानैं और बतावो तैसौ ।
थां आगिली खोय'र पाछिली खोस्यो, अब देखां थां पंरिण
रहिज्यो सो ।।६५०।।

म्हांकैं यो सुख यादि नहीं छै, इसी बात थां कांई कही छै।
म्हांहैं यो सुख यादि न कोई, थांकी बातां इचरज होई।
म्हांकौ पंणि तो जीव सूं जासी, थां मनि मैं करि जांणी हांसी।
आरज्या कहै अति निबहै नहीं कोई, अर गूजरीवाळो जोबन
होई ॥६५१॥

थां ही रह्या क पिता नहिं ब्याहै, म्हांसूं कहौ यो कारण का है।
ज्यांसूं बात कहै जदि बाई, म्हांकै निमति असी बणि आई।
म्हांरा पिता की जोड़ न कोई, जिह को सोच करै छै सोई।
अर मोनैं पंणि या बात न भावै, कोई माणस म्हारै अंटि न
आवै ॥६५२॥

जदि दूती फिरि बोली सोई, जिह कै घर मैं कन्यां होई।
बिनां ब्याही बरस बारह आगैं, जिह का कुल हैं दूषण लागैं।
यो राव रंक जाणै सब कोई, थां सूं इचरज कहीं न होई।
बंस बरण जुडै जाति को बेटो, घर बर देखि करो लपेटो ॥६५३॥

जदि देवलदे बोली ज्यां सूं, थां तो बात न समझौ म्हांसू।
एकैं पंडित यों बात कहाई, वो म्हांका पिता सूं गयो डिढाई।
थां इंह बाई नैं कहीं न देज्यो, बरस तीस पाछै ब्याह करीज्यो।
वो पंणि सो करै मन मांही, अर म्हांनै पणि क्यों नहीं ज
चाही ॥६५४॥

बहकाय गयो बाम्हण छौ कोई, इसी बात कहीं न होई।
धन माता पिता कौ हीयो, सो इसी बात को देखैं कीयो।
थां को कहिबो क्यूं नहीं आवै, यौ तो कांम वै हीज करावै।
थां की सरम न वांहै आई, अर और न कौ वां हैं समझाई ॥६५५॥

ज्यांसूं यौं फिरि बोली बाई, इसी बात थां कांइ चलाई।
जो ए बात पिता चित आवै, तौ ए बात न मोहि सुहावै।
जो वै म्हांरै कारण बर नैं डोलै, के करूं मन तो फ़ेरि न बोलै।
बरस तीस ऊपरि होय जासी, जो तौ जब लग राम जिवासी ।६५६।

जदयां चाहिनां बर की करस्यां, अप देख्यां अरहैं म्हैं अरस्यां ।
जब लग कहुंठै चित न चलाऊं, इंह गढहैं छोड़ि कहीं नहीं जाऊं ।
इता ऊरै पंरिए हैं नहीं छांडूं, जो पिता करै तो मरणौं मांडूं ।
बरस तीस ऊपरि क्यूं होसी, ए ही बात कही छै जोसी ।।९५७।।

जब लग तौ बूढी होय जास्यौं, जदि परण्यां कांई सुख पास्यौं ।
बरस बीस लौं जोबन त्रीया, पाछै करणो छै कांई पीया ।
ए दिन तौ थांका खाबा का छै, अब रस सो रस नहीं ज पाछै ।
धनि छै बाई थांकौ हीयौ, बहौत कठिन पाथर सो कीयौ ।।९५८।।

जो छत्री ज्यांका एही हीया, बरण संकर पैं जाय न कीया ।
बोल्यो पंरिए निरबाह्यो कीजै, जो जीव जाय तो जाबा दीजै ।
जो कुल छत्री नर नारी आवै, बुरी तजै'र भली कूं ध्यावै ।
अर जो सनमंधि करिस्यां सोई, जो म्हांरा पिता कै पटंतर होई ।।९५९।।

म्हां थांका पिता सूं दूणो देख्यो । कनवज कौ महाराजा पेख्यो ।
जींको बेटौ राज कंवार । जे कोइ देव लियो अवतार ।
बरस बीस ऊमर छै सोई । लछमण कंवरि राम सो जोई ।
म्हाँ उसी सूरति देख्यो नहिं कोय । सारी पिरथी देखी जोय ।।९६०।।

अति बिचित्र गुण सुंदरताई । ज्यांसू थांसू आदि सगाई ।
उंह की बहरिए म्हां की सिष हुई । वो पंरिए बाई पद्मनी जुई ।
जिह म्हाँहैं ए भेंट चढ़ाई । लाल पनां नग खालि बताई ।
................................., ... ।।९६१।।

वै हीरा पदारथ बाई देख्या । पंना लाल ले कर मैं पेख्या ।
बाई कहै थांहै दीया इतरा । वांकै होसी औरूं कितरा ।
दूती कहै वांकै बहुतेरा । चाकर चेरी डेरां डेरां ।
यां ही नग सूं जींन जड़या छै । अर महिला मै गरा पड़चा छै ।।९६२।।

जौ घरि बरि उसडो पावौ । तो थां परमेसुर हैं सदा मनावौ ।
आखरि थां हैं करणो सांई । तौ इसौ औसरि जिन चूकौ बाई ।
जब तब कांम सो करणों होई । औसरि चूकि करौ मति सोई ।
.............................., ... ॥६६३॥

जदि बाई कहै थां बहकी फिरौ । बार बार ए बातां करौ ।
म्हारा कर्म मैं होसी जोई । सो तौ जठैं बणी रही सोई ।
न जांणू राम करसी कांई । ज्यां यो बांणिक दियो बणांई ।
मैं तो थां हैं दियो जितावौ । फिरि फिरि कांई बात चलावौ ॥६६४॥

थां तौ बुरो यौं मांनौ बाई, म्हां तौ अतीत परदेसणि आई ।
दिन दस थांसूं भेळा रह्या, जींसूं सबद इतरा कह्या ।
अर म्हांहैं म्हांकी पीड़ ज सूझी, जींसूं बात थांहैं पंणि बूझी ।
म्हांकी थां सूं बधीज प्रीत, जीं सूं म्हां इतरी बिधि चींत ॥६६५॥

म्हांका जीव मैं करुणां आई, जींसूं म्हां यौं व्यौंत बताई ।
अर थांकौ किस्सौ सारो सुणि पायो, तींसूं म्हां यौं व्यौंत बतायो ।
सगति को फल कांई म्हांकौ, जो म्हां सूं भलौ न होयजी थांकौ ।
जो सुख पावो तो यादि करीज्यौ, नहिं तरि दिन उठि गाळी दीज्यो ।
॥६६६॥

थां वो ज कनवंज बतायौ, वो म्हांकी जोडि किसा कौ आयौ ।
म्हांकौ बडो जै चंद बुलायो, जीं की बेटी खोसिर ल्यायो ।
थां तो बात न जांणो माता, म्हां सूं वांसूं किसड़ा नाता ।
लेख बण्यो सो होय रह्यो न्याळो, हूं म्हांरा पण सूं द्यौं नहिं
टाळो ॥६६७॥

जो थांकै जिय धीरज एतौ, एक म्हांकौ कह्यौ करो थां जे तौ ।
चालो जब लग तीरथ न्हांवा, थांहै प्रिथी को रूप बतावां ।
अहंठै वैठा करस्यो कांई, क्यूं ग्रिह को सुख नहिं थांकै तांई ।
जब लग पंण पूरो हो जासी, पीछे आयर ब्याह करासी ॥६६८॥

स्याबास थांहैं भली डिढाई, इसी बात कहतां सरम न आई ।
थां तो निकसी अर कियो बिगोवौ, आप गई औरां हैं खोवौ ।
हूं राजा की कन्यां कुंवारी, भलो कहाय अब करस्यौं ख्वारी ।
थांकी साथि चालसी सोई, होय बिगडायल जींकै नहिं कोई ।६६६।।

दूती कहै म्हां तो कही और कै काजैं, थां का जीव मैं और बिराजै ।
थां तो पंणि इण विध लीयो, म्हांकौ सुंणि सुंणि फाटै हीयौ ।
पातिसाहि गढ घेरचो आई, वो मांगै छै थारै तांई ।
जो थांका पिता का मन मैं आवै, अर तोनैं गहि उंहठै पहुंचावै
।।६७०।।

जब थां कांई जोर करासी, सारो पंणि परहौ घुसी जासी ।
जींसूं कहां थां साथै चालो, अहंठा सेती दीजे टालो ।
वो तुरक हठचो छै थारै काजैं, इता निसांण तो ऊपरि बाजै ।
यो जायगैं छोडि ओठैं उठि जावै, तो देखैं नहीं अनैं कुतो भुसावै ।
थां की खबरि अहंठा की नहीं पासी, तो माथो पटकि तुरक उठि
जासी ।।६७१।।

जिहकै काठो धीरज होई, तिंहकौ काम न बिगड़ौ कोई ।
जो काचै धीरज जीव डुलावै, सो अजगैब सूं सजा वो पावै ।
म्हांरी मोनैं खबरि छै अैसी, रामजी करसी पूरण जैसी ।
अर म्हांरा पिता सूं थां जो डरई, जीव तजै पणि और न करई
।।६७२।।

यो जीव तज्यो कुंणी पैं जाई, जीव काजे यो गढ कोट कराई ।
जीव काज ए ल्हसकर राखै, जीव काजै यो हीणाति भाखै ।
(ई)जीबा काजै अभख्य भखीज, (ई)जीबा काजै जाय नीच नवीजै ।
देबो जीव दुलंभ छै बाई, जीव बरोबरि और न कांई ।।६७३।।

जीव तौ छै कायर नै प्यारो, सूर सती तिणका करि डारचो ।
छत्री जीवहैं पळ मैं त्यागै, बुरी बिचारयां काळौ लागैं ।

और म्हांरो पिता थां कांई जाण्यों, जीं नैं जुद्ध डील सूं ठाण्यो ।
कै मारै कै आपण मरै, थां समझो सो कदै नहिं करै ।।६७४।।

थां तौ बात न जांणो बाई, जब बांकी बार पड़ै छै आई ।
जदि बेटा बेटी आडा दीजै, इंह विधि सेती कारज कीजै ।
यौ तौ तुरक बुरो छै बायो, केई राजा की बेटी ल्यायौ ।
वै राजा पहली इह सूं लड़िया, फिरि ले ले बेटी पांवां पड़िया
।।६७५।।

इंह मड़हट्या की बेटी लीन्हीं, सो घर मैं पटराणी कीन्हीं ।
देवगिर सूं चिताई आंणी, जीं सत न छांड्यो कहुं बखाणी ।
चीतोड़ जाय पद्मावती हेरी, जठै घणां रजपूतां की बेटी घेरी ।
यो जाय जठा सूं आवै नहिं रीतौ, ईंसूं राजा कोई न जीत्यौ ।६७६।

थां वै राजा वैसाहो जांणौ, वांकै पटंतरि म्हाहैं आंणौ ।
म्हांका बडा नैं पातिसाहि पकड़्या, बांधि डंडि बेड़्यां मैं जकड़्या ।
अर जीवता मेल्हि घरां मुकलाया, म्हैं तो छां ज्यांही का जाया ।
उसा हीं जाणौं म्हा कै तांईं, इसा तुरक की गिणती कांई ।।६७७।।

थां तौ गिणत न राखौ बाई, वो हठ लागौ छै थारै तांईं ।
राति दिवस ए जौंहर होई, जब तब तोनैं लेसी सोई ।
वो जदि अैंठा सूं आघौ जासी, यो गढ सारौ जब सुख पासी ।
थां सूं म्हां सूं राम राम हूवो, जिंह कौ सोचि करै छां जूवौ ।६७८।

गढ की बस्ती अर जीव हैं खोवै, म्हांरो पिता मोनैं नहिं धोवै ।
जो कायरताई जीव मैं धरै, तो मोनैं देबो आरै करै ।
तौ हूं आप घात करि मरिस्यौं अैंठैं, यौं मति जाणौं मैं जावूं ऊंठै ।
....,...............................।।६७९।।

जौ म्हारौ पिता कायर होइ जाई, तौ हूं तौ कायर नहीं छूं बाई ।
इसी बात जौ हूं सुणि पाऊं, खाय जहर पहिली मरि जाऊं ।

ओसाण करूं आवै ते सोई, कै काढि हिथ्यार मारि मरूं जाई।
हूं इसी बात जाणूं जिहि घड़ी, थां देखो लाज देवलदे करी ।।६८०।।

थां इसी बात क्यों चीत्यौ बाई, इसी विचार करौ छौ कांई।
करौ बिधि ज्यो थांकौ घरि रहै, लोग रय्यत सारो सुख लहै।
पिता बचै अर राज कमावौ, थां पंणि आप महासुख पावौ।
अर थां दुख पायो तौ कांई हूवौ, लाखा लोग बचैलो जूवौ ।।६८१।।

कहौं म्हां सपूतपण्यो किसडो करां, कहौ तो जाय म्हैं पणि लडां।
म्हां कै बड़ा ठाकुर स्याणां छै केई, घणौं बिचार करै छै तेई।
छत्रीहै लड़बौ ही फुरमायो, अर लड़बौ बंटि छत्री कै आयो।
सु म्हांकौ साथ दिन कै दिन लड़ै, अर मरबा सेती कांई डरै।६८२।

यौं एक बात म्हां कै चित आई, कहां जो बुरो न मांनौ बाई।
इतरो लोग मरैलो सारौ, यांकौ थांसूं होय उबारो।
अर मढचो मादळ जड़जप ही रहै, अर थां कौ राज सदा निरबहै।
थां लेव दया अर लेहु भलाई, तौ थांकौ अमर राज रहाई ।।६८३।।

किंह बिध अमर राज रहाई, सो पंणि बात कहौ समझाई।
दूती कहै पिता नखि जावो, अर वांसूं जाय थां बात कहावो।
पिता जीव जिन अपणो खोवो, अर राज सगळौ क्यां म्हैं बोवो।
जाणै हूं काजै तुरकां कै भई, थांकै जाणैं मरि ही गई ।।६८४।।

जो थां आप जावौ तो आप ही जावौ, अर आप कहतां सरम रहावौ।
तौ और कै हाथि कहाव करावौ, यो व्यौंत थां अवसि डिढावौ।
जदि थांहैं पातिसाहि पासि खिदासी, थां देख्यां साहि अति सुख पासी।
या राड़ि सारी मिट जासी, इण बिध अविचल राज रहासी।६८५।

अर थां पंणि जातां डरपो छौ कांई, थांहै पतिसाहि चाहै बाई।
भली भांति सूं थांहै बरसी, सारा मैं पटिराणी करसी।
थां की सूरति इसी ही बणी, थांकै पटंतरि और न जणी।
वो थांसू मया इसो ही मांडै, एक घड़ी नहीं ढीली छांडै ।।६८६।।

सुणि सुणि बातां भभकी बाई, जींकै तन ज्यौं ग्रागि लगाई।
कहौ थां कुंणौ बिचि दीन्हीं, म्हांसूं इतरी बातां कीन्हीं।
मात पिता मामा ग्रर भाई, काका बाबा सौह ठुकराई।
म्हारै मुंहडै पड़ै नहीं कोई, थां हूं बातां इसी बिगोई ।।६८७।।

म्हां तौ जांणि ग्रतीतणी राखी, ग्रर थांकी जीभ ग्रबै म्हां चाखी।
हूं तौ कहूं छूं माता माता, या दारचां की देखौ बातां।
म्हारौ तुरकहैं ग्रंग भिटाऊं, बड़ कुल ग्रायड़ इबरथा जाऊं।
म्हां कै बाबि लिख्यो ते होई, होणहार मेटै नहीं कोई ।।६८८।।

इंह गुण काजै मुंहडै लगाई, यां तौ इसड़ी बात चलाई।
पहल्यां तो कनवंज बतायौ, पाछै संग ग्रापणौ गायौ।
ग्रब मोनै ए तुरक बतावै, इसड़ी बातां रांडा नखि ग्रावै।
कोई काची सी तौ डिग कै जाती, म्हैं तो करी बजर की छाती
।।६८६।।

म्हां सूं दुख भिन पावौ बाई, क्यांह नै कळपौ भौंह चढाई।
म्हां च्यार मास थां भेळी रही, जींसू बातां एती म्हां कही।
ग्रर थांकी बात बिगड़ती देखी, जीं काजै म्हां बात बिसेखी।
थां तौ म्हां सूं उलटी करि मांनी, म्हां तौ क्यौं ग्रौर नहीं जांनी
।।६६०।।

इसी बात तौ त्यांसू कहिजै, ज्यां पै पना पदारथ लीजै।
ज्यां सूं कहौ यां बातां रीझै, पाहंण कौ कांई पाणी भीजै।
इसी बात जै फेरि कहाई, तो थां इज्जति बेगि गुमाई।
म्हां तौ जाण्यो क्यूं गुण थांमैं, सारा ग्रौगुण देख्या यामैं ।।६६१।।

म्हां क्यांह नै ग्रैठै रहस्यां बाई, तूं म्हांकी बातां उलटी जाई।
म्हां ग्रत्र लागस्यां ग्रापणै पंथा, जोगीहैं कांई राजसु कंथा।
इसा भाग थारा छै कांई, पातिसाहि परणे थारै तांई।
कै मरसी कै जासी वैठैं, थांकै भली छांडि बुरी मन बैठै ।।६६२।।

यां रांडां यो कांई जाणी, ज्यौं बरजूं ज्यौं वा ही बांणी ।
कंवारी कन्याहैं यों बहकावै, मो सतवंती हैं ग्रैब लगावै ।
पातिसाहि परणौ आपणी धीया, अब फिरि बोली तौ लेरयूं जीया ।
हूं देवलदे देवी औतार, म्हारै चाहि नहीं भरतार ।।६६३।।

उठ्यो रोस तन मैं परजरी, जैसैं घ्रित बैंसादर ढरो ।
बांध्यौ सिंघ ज्यौं दीन्हौं छोरी, ज्यौं काला की पूंछ मरौरी ।
मानुं सूर कै चोट ज लागी, जैसैं रुई मैं पड़ी ज आगी ।
अति ही चिख जदि लागी बाई, सखी सहेली अनंत बुलाई ।।६६४।।

चंपकळी'र चंब्रेली आई, रायबेल भागली धाई ।
कुंजकली'र जसौदी दौरी, रामरखी हीरली ल्हौरी ।
रामदासी हरदासी स्यामौ, किसनदासी सांवली दांमौ ।
बीरांदे हीरांदे दासी, किसनकलो नाथी अर ग्यासी ।।६६५।।

बीस तीस ती सौंह इकठी हुई, ज्यांसूं बात कही करि जुई ।
थां यां दोन्यां हैं मारो काठी, बोल न निसरै मुंहड़ै दयौ धाठी ।
सोर न होय इसडी बिधि कीजै, केस माथा का लौंचरि लीजै ।
जिहां बांधि घौंकाई काढी, बाई रामति देखैं ठाढी ।।६६६।।

करि चौमेखी देई ढुलाई, पीट जरबां मुख सांच बुलाई ।
जमधड़ि छाती मांझि अड़ाई, कहौ सांच बातां थां कुंणै खिंदाई ।
डरपी दूती परगास्यो आपैं, पातिसाहि म्हैं भेज्या थांपै ।
जदि मूंड मुंडाय भांडि अति कीन्हीं, तुरत उतारि जे गढ सूं दीन्हीं ।।६६७।।

सब दास्यां हैं बाई समझावौ, या झिन कोठै थां बात चलावौ ।
हूं जाणूं कै थांही जांणौ, या झिन को ठैं थां बात बखाणौ ।
म्हां पिछतावां बड़ी झख मारी, बिना पिछांण की राखी नारी ।
अबैं सावधान रहस्यां बाई, राव सुंणै तौ अति दुख पाई ।।६६८।।

देवलदे धीरज की बाई, फ़ेरि न कहुंठै बात चलाई।
इसडी सीलवंत सूरी पूरी, जींनैं काम कियौ चकचूरी।
सीता मैंना पदम चिताई, ज्यांसूं भई देवलदे इधकाई।
वांकै तन नर कौ कर लाग्यौ, देवलदे देखबौ नर त्याग्यौ ।।९९९।।

।। दूहो ।।

गढ सूं दूती ऊतरी, गई साहि की गोढि।
मूंड मुंडायौ जुगति सूं, खौसि लियौ क्युं गोढि ।।१०००।।

दूती भागी राति कूं, मिली साहि सूं जाय।
मारे थे हम जीव सूं, ल्याया एक खुदाय ।।१००१।।

।। चौपई ।।

पातिसाहि पैं दूती गई, हाथि जोडि करि ठाढी भई।
कहै हम तौ इलाज बहोतेरा कीया, उस नारी का बजरि है हीया।
कोटि उपचार बिचारि उपाये, उसकी खातरि एक न आये।
च्यारि महीनै हम हठ कीया, पैं उसने तन कबहूं नहीं दीया।१००२।

अनेक भांति करि थाकी रसनां, ए देख्यो हम मारे उसनां।
हम खराब करे अर मूंड मुंडाई, और बात क्या कहैं बणाई।
फेरि बचन और नहीं कह्या, पातिसाहि सुंणि चुपका रह्या।
करी रोस डूंगर जाय लागा, भई भड़ाभड़ उलटा भागा ।।१००३।।

।। इति श्री दूतिका देवलदे कथन सप्तमोध्याय सम्पूर्णम् ।।

(अष्ठम् अध्याय)

॥ दूहो ॥

बारह बरस तौ होय गया, (अर) ल्हसकर हुवा खराब ।
गढ आख्युं देख्या नहीं, और हुवा नहीं लाभ ॥१००४॥

॥ चौपई ॥

इण बिधि लड़त बारा बरस गया, तब डेरा तणांव गळि सब ढया ।
कनांत सराइचा कहुंठै नहीं, रसा जेवड़ा न दीसै कहीं ।
अगाडी पछाडी भारकस टूटा, घोडा ऊंट फिरै सव छूटा ।
इसी परेसांनी ल्हसकर मैं करैं, घांम पाणी ठंढ ऊपरि परै ॥१००५॥

साहि कहै—

॥ दूहो ॥

साहि कहै मोल्हण सुंणो, अब क्या करैं विचार ।
या गढ तो तूटै नहीं, ल्हसकर हुआ खुवार ॥१००६॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

जदि साहि करै विचार, सकल उमराव बुलाया ।
अलूखान बैठा आय, और जैनखांन बिठाया ।
कहै मोल्हण सूं बात, राह कोई इसी बतावौ ।
तुम देखी सब ठौर, अबैं क्या बार लगावौ ।
वया करूं बस पूजै नहीं, मुझि गुस्सा घणां हि छूटि है ।
इहां पंछी नहीं पैसार, किमस गढ़ इह टूटि है ॥१००७॥

मोल्हन कहै सुनौं साहि, पहाड़ कुलि पग पग बंधे ।
सब भरी आंत रो आत्र, दे गच सीसे संधे ।

अंदर भरे गंवार, देखो कैसी मारि जु देहैं।
सिपाह रंघड किले बीच, ए थोरी भील चोट जु लेहैं।
और तरफ कुलि बिकट हैं, जो इह एक दरा क्यूं हि खुटि है।
तौ मेल्हूं दुरंग तळै जाय, इमस गढ इह टूटि हैं।।१००८।।

।। चौपई ।।

ल्हसकर मैं परेसांनी भई, चली बात उजीर सूं कही।
उजीर साहि सूं अरज कराई, हकीकति सारी कही बणाई।
जदि पातिसाहि अैसें फुरमाई, अहदी सारे दयोह पठाई।
जिस जायगें गांव बसती पावौ, जहां सेती सण सूत मंगावौ।१००९।

जब अहदयां की लागी रेजी, चौगिरदां हैं चीठी भेजी।
ल्हसकर दोल्यौं गांव न कहीं, कोस बीस लग बसती नहीं।
एक लिख्या बूंदी मैं गया, सो जाय बुंणाकरां हैं दया।
ज्यां कागद मसतक लियो चढाई, अहदी हैं डेरो दियो बताई।१०१०।

अर बुणाकरां यौं अरज कराई, रोटी टुकड़ा लीजै खाई।
अर हमारा बड़ा दिली सूं आवै, सो सुबां तुमौं कूंसूत दिवावै।
जहां सूं लीज्यो आप उगाही, लिखी जमा सब देहैं पुजाई।
उह गांव गया ते कदी यों आवै, जब लग हमौं कूं ढील लगावै
।।१०११।।

उह सकस दिली कद गया, तुमौं आसरा वुसका लया।
वौ आजि गया अर आज हि आवै, सुबां तुम्हारे कदम छिवांवैं।
इसी मजाख़ बहोरूं नहीं कीजे, हमकूं क्यौं बहका यौं दीजैं।
उसि कैं क्या कछु पांखें लागैं, सो दिन कैं दिन आवै उस जागैं
।।१०१२।।

मौंमन आरिफ उसिका नांव, वड़ा उली रहैं इस गांव।
उह दिन उठि इहां सै गुदरी जावै, कपड़ा बेचि राति घरि आवै।

वुस पूंजी सेती खाय कुमावै, बधता होय सो खैरि करि आवै ।
अब अहदी फिरि अैसे कही, हम इह भी तमासा देखैं सही ।१०१३।

सकल जुलाहा इकठा भया, ते मिलि आरिफ कै डेरै गया ।
सारा किसा जिन जाय सुणाया, उत ताकीद करता प्यादा आया ।
आरिफ हिकमति इसी कराई, इक कोरा करवा लिया मंगाई ।
और करामाति इसी ही करी, तीन नळी करवे मैं धरी ।।१०१४।।

जींका तारि टूंटी होय बाहरि लीन्हा, करवा कै मुख ढांकणा दीन्हा ।
तिंह ऊपरि चपड़ी मुहर कराई, ते लियां जिया अहदी नखि जाई ।
ते देख'रि अहदी यौं बतलाए, सांप बीछू सा क्या मूंदि'र ल्याये ।
जदि आरिफ यौं उत्तरि दीया, हमारी बात सुनौं तुम मीयां ।१०१५।

तुमसैं लोग खराब सब भया, सब आलम मुलक उझड़ि कैं गया ।
ते जायगै छूटि काम न करैं, रय्यत लोग सब भूखौं मरैं ।
जिससूं किसी कूं सतावौ मति कोई, इससैं काम करौ तुम सोई ।
अर मुंहंडा इसका खुलणे नंहि पावै, अमानति हमारा हम पैं
आवै ।।१०१६।।

यौं सुणि करि अहदी बोल्या केई, तुम्हारे सूत लिख्या मण केई ।
इसमैं सेर दुसेरी होगा, तुम कहते हो ल्हसकर जोगा ।
जो टौणा टांमण जादू कोई, तो भी मण दो मण ही होई ।
लिखे माफक तुम बेग मंगावौ, तब तुम इहां सैं उठणै पावौ ।१०१७।

फिरि आरिफ यौं बात कहाई, तुम इसका तमासा देखो जाई ।
जो इससे कछु काम न होई, जब तुम ओरूं आवज्यो कोई ।
हम एक मुचलका ऐसा करैं, लिखे सूत सैं दूणा भरैं ।
और लालच तुम इधका मति कीज्यो, चाह माफक सब ल्हसकर
लीज्यो ।।१०१८।।

जदि अहदी आपस मैं कही, इह भी तमासा देखैं सही।
इह भी कोई उली कहावै, इहां सैं दिल्ली आवैं जावै।
एक कौल हम करैं ज सोई, जो इससैं कुछि कांम न होई।
तो दूणां सूत लेहेंगे आय, तकसीरांना खांना रोज सवाय ।।१०१९।।

इह सही बात कबूली हंमौनै, सिधारो सीख दई है तमौनैं।
अहदी ले ल्हसकर मैं आया, पहली आपका रसा बणाया।
अधौण बोझ निकस्यौ ज्यां मांही, जदि खरी बात करि जांणी ज्यांही।
जब ले करवौ साहि नखि आया, हाथि जोडि कर अरज कराया
।।१०२०।।

कह्यो एक अरज सुणो साहि हमारी, ज्यां मांडि हकीकति कही सारी।
हम सूत सण कूं बूंदी गया, जहां एक ऊली नैं बदना दया।
कह्या इससैं सारा काम करावौ, और रयति कूं मति सतावौ।
अर इसका मुंहड़ा खुलणै नहीं पावै, अमानति हमारा हम पै आवै
।।१०२१।।

जब पातिसाहि यौं हुकम कराया, तुम करौ ज्यौं ऊली फरमाया।
पहले सिरकार का काम बणावो, पीछै ल्हसकर मांहि फिरावौ।
दोय इतबारी नर जीं ऊपरि राख्या, ज्यां सूं साहि इण बिध भाख्या।
करियो जतन मुख खुलणै नहि पावै, निमां स्यांम दिन हम पै आवै
।।१०२२।।

यौं सब ल्हसकर मैं रसा बणाया, जदि पातिसाहि कूं आंणि सुणाया।
जदि वै अहदी हजूरि बुलाया, ते पातिसाहि आप साथि लिवाया।
बीसेक आदमी साथि करि लीया, ते छड़े घोड़े बूंदी मैं गया।
नांव छिपाय सिपाही कहाया, परदेसां का नांव धराया ।।१०२३।।

पातिसाहि पहुंतो बूंदी सोई, गयो अगम आरिफ हैं होई।
ते घरि स्यूं चलि कै साम्हो आयौ, जीं पातिसाहि कौ दर्शन पायौ।

सो करि सलाम अैसें बतलाए, हजरति इहां काहे कूं आए।
मैं तो गरीब कमीण तुम्हारे, किसे वास्तै कदम तुम धारे ।।१०२४।।

जदि पातिसाहि अैसें बतलाए, तुम्हारे दीदार की खातर आए।
कहै चलो तुम्हारै डेरै चलिए, अर हमारा नांव न जाहर करिए।
इहां हमारै कुछ जमींत नहि आगै, इहै मुलक है गनीम की जागै।
तुम्हारा दीदार का नफा हम पाया, चलो डेरे चाहैं बतलाया।१०२५।

जदि आरिफ डेरे ले गया, तहै बिछावण गूदड़ा दया।
वो तो निरगुण घर मैं कांई, सोच करै अर मन पछिताई।
अति ही साहि की मीनति करै, मेरे बड़ भाग कदम तुम धरै।
करि मनुहारि अैसे बतलाए, कहौ कांम जिस हजरति आए।१०२६।

।। दूहो ।।

बूंदी गया अलावदी, आरिफ मिलिया आय।
यो गढ किस विध तूटि है, सोई कहौ उपाय ।।१०२७।।

।। चौपई ।।

जिहसूं पातिसाहि इण बिध कहै, तुम से उली इस जागैं रहैं।
बारह बरस हमकुं इहां (हो) गए, तौ भी हिंदुन हाथि न भए।
अर उह गढ भी मेरी निजर न आया, पहाड़ों मैं लड़ि लोग खपाया।
अबै इलाज कोई इसा बतावै, इह गढ हाथि हमारै आवै ।।१०२८।।

।। दूहो ।।

जदि आरिफ अैसें कही, समस्या दई बताय।
दोय उली ल्हसकर मैं रहै, वै फतै करिंगे जाय।१०२९।

।। चौपई ।।

जदि आरिफ साहि सूं कहैं, उली दोय तुम ल्हसकर रहैं।
वै गढ ले देंगे तुमकूं, असी गम आवै है हमकूं।
साहि कहै कुछि नांव बतावौ, तौ सताईस लाख मैं ढूंढि मंगावौं।
आरिफ कहै मैं नांव न पाऊं, उनौं की समस्या एक बताऊं।१०३०।

आजि सेंती पंदरवै दिन जांनौ, उठै पवन दिन अस्त समानौं।
डेरे तंबू सब उडि परिंगे, आंधी आवै बिरख गिरेंगे।
अर बाजी पवन थंभि कैं जावै, जब कछु छांट मेह की आवै।
सब कै डेरे गिरि पड़ि ढहैं, उनौं के डेरै कायम रहैं।।१०३१।।

और चिराग दीसै नहीं कोई, जलती चिराक उनौं कै होई।
तुम डेरे उंनौ कै आपण जावौ। जब पढत कुरान उनौं कूं पावौ।
दीज्यो बुजरगी बहौत बणांय, वै फतै करहंगे गढ कूं जाय।
आरिफ नै यौं ब्यौत बतायौ, जदि पातिसाहि उठि डेरै आयौ।१०३२।

अति आतुर पातिसाहि करावै, कहै रोज कदिस वहै दिन आवै।
बोल्यो पाख वहैं दिन आयो, निमा साम चोबदार बुलायो।
कह्यौ हजारौं पाळे वेग बुलावो, इस जायगें सब खड़े करावौ।
इती करत ही आंधी आई, डेरा रूंख सब दिया गिराई।।१०३३।।

थंभी पवन अर बूंद पड़ाई, सरब प्यांदा सूं कह्यो बुलाई।
तुम ल्हसकर मैं फैलि कैं जावौ, जळती चिराक देखि करि आवौ।
जिसहैं देखि'र हम पै आवौ, कैसें दोड़ौ बार न ल्यावौ।
चौग्रिद्रां हैं खबरि कराई, जळती चिराक एक कैं पाई।।१०३४।।

जोहैं देखि'र प्यादा उलटा आया, पातिसाहि सूं आंण कहाया।
मादि किलीच निजामदी मीयां, जिनौं कैं डेरै बळै है दीया।
वे वैठै कुरान बांचै है दोऊ, और कै डेरे चिराक न कोऊ।
पातिसाहि उठि ठाढा भया, जिनकें डेरै पाळा गया।।१०३५।।

वै महमूंज कुरान मैं थांही, सो जाय देख्या आपरण पातिसाहि ।
साहि नैं जाय दवा जब करी, ऊंनौं मुड़ि देखि अलेकी भरी ।
जे पिछांणि साहि कूं ठाढे भए, करैं सलाम अर नवि नवि गए ।
साहि कहैं तुम बैठि कैं जावौ, वो बोलैं हजरति बैठावो ।।१०३६।।

।। दूहो ।।

साहि दिल मैं राजी हुवौ, मिलै ओलिया दोय ।
आरिफ की समस्या मिली, अब कारिज पूरा होय ।।१०३७।।

।। चौपई ।।

दोऊ उली साहि पहिली बैठाया, पीछे आप आराम कराया ।
देत बडाई पळ पळ तेही, वै थोड़े थोड़े हो हैं जेही ।
दोऊ मन मैं सोच कराई, आजि इसके दिल मैं क्या यौं आई ।
हम मुजरे कूं जाते जबही, ए भरि निजर न देखता कबही ।१०३८।

आजि हमारे डेरैं इह क्यौं करि आया, हम हैं बैठाय जब आप बैठाया ।
पातिसाहि उठि बोल्या जबहीं, हम अब तांई तुम जाणे नाहीं ।
माफ कीज्यो तकसीर हमारी, अति ही साहि करै मनुहारी ।
जब दोनूं मर्द बोल्या अखताई, हम हैं क्यौं तुम देहु बडाई ।।१०३६।।

हम नौकर खानाजाद तुम्हारे, तुम इती दूरि कदम क्यों धारे ।
जु कोई मतलब हमसूं आया, ते चोबदार सूं क्यों न कहाया ।
हमैं बार बार तुम देहु बडाई, इता हम लग काम पड्या क्या आई ।
अब करि मनुहार बहौत बतलाए, वां कहो काम जिस हजरति आए ।।१०४०।।

।। दूहो ।।

साहि कहै इहां पडि रहै, अर काम न हूवा कोय ।
लोग अजायां होय गया, हिंदू हाथ न होय ।।१०४१।।

॥ चौपई ॥

जबै साहि अैसे फुरमाया, मैं इस गढ कैं मतलब आया।
तुमसे उली इस ल्हसकर महैं, तुम छतैं बारै बरस क्यौं रहैं।
तुमसे मुरबी हमारे सिर पर, या हिन्दू क्यौं बैठा गढ पर।
अब इलाज अैसा होय कोई, इह गढ हाथि हमारे होई ॥१०४२॥

पीर कहै—

॥ दूहो ॥

मादि किलच अैसे कही, इनकूं गढ की चाहि।
या तो अैसैं बनि रही, यौं रचि रह्या खुदाहि ॥१०४३॥

॥ चौपई ॥

जब भाणजा सेती मांमू कहै, गढ की चाहि इनौं कूं रहै।
गढ ही होय कै हम ही होगा, दोय माहें सूं एक ही ल्योगा।
तुम मति जाणौं होय है दोऊ, जाणौ बसत एक ल्यो कोऊ।
साहि कहै मुझि गढ अति भावै, तुम भी बचो अर गढ भी आवै
॥१०४४॥

जली कहै—

॥ दूहो ॥

उली जब अैसे कही, हजरति जावौ अब।
जो हुकम हजरति किया, खुदाय करेगा सब ॥१०४५॥

॥ चौपई ॥

जब यौं कह्यो हजरति डेरे ज़ावौ, हम सुबांह करैं सोही फुरमावौ।
जब पातिसाहि डेरैं उठि आयौ, खुसी हुवौ भयो मन भायौ।

दोउ मरद तड़कैं ही जाग्या, न्हाय धोय अर तसबी लाग्या।
पढत कुरान उत सूरज चिलका, जीं कूं देखि दोउ मरद किलका
॥१०४६॥

उठि ठाढा भया अर कुरान सिमटाई, खैर करी सरब दियो लुटाई।
पातिसाहि सूं अैसे कही, करो बिदाते आवै सबही।
जदि पातिसाह सरब साथ छिदायो, हुवा तयार अर जीण बंधायो।
ते करि निवाज हैंवर पर चढिया, सिल्है सुरंगी सब नर मंडिया
॥१०४७॥

पीर की असवारी—

॥ दूहो ॥

हक सहु दियो सिपाह कौ, और दीन्हो खरच कराय।
हुवौ नगारो पीर कौ, गढ पर चढिया धाय ॥१०४८॥

वरमाला लिय बरंगना, अर हर्ष करै सौह बीर।
सिल्है सुरंगी साजि कैं, अैसे चढिया पीर ॥१०४९॥

दोउ मरद सीख मांगि कैं, लग्या दरा सूं आय।
या झेली मारि गूढा परैं, गढ सूं जाजै जाय ॥१०५०॥

जाजन आयो धाय करि, होबा लागी मार।
कायर मन मुरझाइया, बहिबा लाग्या सार ॥१०५१॥

॥ छंद भुजंगी ॥

दोऊ मरद चढैं जु वढै दल सैं, दिल सांच धरै जु भरै बल सैं।
लिया नांम अले जु भले बखतैं, चढे नूर जहूर दिपैं मुखतैं।
अडे दरे जाय लड़े जंग मैं, किरवांन कढी जु मढी रंग मैं।
इत जाजंन बीर मड्यो रन मैं, भड़ सांकत मीर सबैं तन मैं।

सहनाय नफीरी अनेक बज्जं, सहदानां सिंधु करनाल गुज्जं ।।
बहै नाळि गोळा हथनाळि छूटै, मानुं मेघ की धार अपार टूटै ।
सूत्रनाळि बंदूक भड़ाकि भड़ं, बहे तेग जंबूर धड़ाकि धड़ं ।
बहैं बांण उडांण भ्रणाट करै, पड़ै तीर सरीर कुं छेदि परै ।
तरवारि झड़ाझड़ि माती घणां, पड़ै लोथि दड़ादड़ि मांचै रणं ।
बोले हाड़ कड़ाकि कड़ाकि करैं, पडे सीस दड़ाकि दड़ाकि गिरैं ।
लोहि खाळ प्रनाळ ब्रसात चलै, दोउ दीन लड़ै जु भिड़ै जु भलैं ।
बहै सार अपार मुचै नहिं कोय, धमाध्रंम गाजि घमाघम होय ।
ऊली आपणौं सीस उतारि लियं, भई रहचक मारि सुं मारि कियं ।
दोउ पीर मडे गैंद घाटी धस्यां, रणथंभ अड़चा रण चढ़्ढि हस्यां ।
ऊली आगैं चढ्या जु दरा टुटिया, हिन्दू पाछा भया जु दरा छुटिया ।
दोउ पीर चढ़े रण ऊपरि कै, राव के लोग चढे गढ भींतरि कैं ।
रण ऊपरि मरद फिरैं रहस्यं, घोड्रो डाकि डकाय महा बहस्यं ।
गढ माहिली नारिन सो दरस्यं, जबैं ठैण भई जु गिरचा गिरस्यं ।
दोउ लेट गया जु सईद भया, जहाँ साहि नैं आय कै डेरा दया ।
गढ चौग्रिद बेढि लियौ जबही, भइ मार बराबरि ह्वै तबही ।
।।१०५२।।

।। दूहो ।।

दरो छूटियो राव स्यूं, रण परि चढियो साहि ।
दोउ पीर जहाँ लेटिया, (तहाँ) डेरा दीया आय ।।१०५३।।

।। छंद वीरसिंगार ।।

इतै कुच कठोर परसत हारे, उतैं भुजबल गजदंत उखारे ।
इतै कोकिल कामिनो मन रंजै, उतै दुरजन दारण दहुं दलभंजै ।
इतै पहौप सासत्रि वाल संवारै, उतै सूर सूं सूर साम्हां झूझारै ।
इतै कंठ किलोल तरगै खेलै उलगै, उतै सूर सावंत पहरन जग्गै ।
इतै कूं कूं चंड पढै भाँति भांतै, उतै वीर नारी रढै द्यौंस रातै ।

इतै कंकन कोपि पर सुं बिभावै, उतै सार सूं सार भारी बजावै ।
इतै दसन चमकंति बीजली समानं, उतै सार चिनगैं उडते बखानं ।
इतै पाइ तै बाला पीकै संवारै, उतै मुख सूं बहै स्रोणंत धारै ।
इतै लाल पचरंग पहरंत बाला, उतै सुं झूझंत भइ भोमि लाला ।
इतै नाद बिनोद बौह रंग गीता, उतै जंग के जोर बौह देस जीता ।
इतै साजि कूंकूं छिरक्कै सुबासं, उतै सार चिनगी उडते अकासं ।
इतै माणिक्य मोती साजैं जरावं, उतै सर्वधात बाजे बजावं ।
इतै मालक काफी सौधा ही लारं, उतै सुत्र मारे मोती संचारं ।
इतै राजसभा चात्रंग जारै, उतै सुत्र झूझंत ताते ततारे ।
इतै इबला तौ बाला रहते गुमानं, उतै झूझंत झाझा गिरंते पठानं ।
इतै कंत कंमल गूथंत बालं, उतै टूटि टोप सु फूटै कपालं ।
इतै चौसठि छंद गावंत गीतं, उतै कहै राव हंमीर जीतं ।।१०५४।।

।। दूहो ।।

चौसठि तौ मंगल करै, बांवन करै बखांण ।।
गढ रणथंभ हंमीर परि, (यौं) चढि आयौ सुरतांण ।।१०५५।।

।। छंद वीरसिंगार तथा ।।

इतै नखधा गळै चमकावा, उतै वै छत्री सेल अजमावा ।
इतै पिकबैंनी बचन सुनावै, उतै जंबुक अरी घुनि गावैं ।
इतै गूंथि लीयैं गहैं हार हाथं, उतै ईस गलै गहै काटि माथं ।
इतै माता प्याला पीवै मुलकै, उतै जोगनी स्रोवण पीवै किलकै ।
इतै पाय बैठी जु बाला पलौटै, उतै सत्रु झाझा धुकि धुकि लौटै ।
इतै मान कीये छूटै गुमानं, उतै सूर पंचारि झूझै पठानं ।
इतै चौसठि छन्द गावंत गीतं, कहै राव हंमीर हंमीर जीतं ।।१०५६।।

।। दूहो ।।

च्यारि पहरी भारथ भयौ, लड़िया पीर अपार ।
जिह दिन लोथ्यां पुळ बंध्या, भई दरा मैं मार ।।१०५७।।

॥ चौपई ॥

जब दोउ पीर लेटि कै गया, पातिसाहि गढ दोल्यौं भया।
जिह दिन किवाड़ लगाया गढ का, मांहि सूं भार दई जिन चढका।
ए गढ परि वे डूंगरा सोई, दहुं त्रफ मारि बराबरि होई।
तीर गोळी पहुंचै नहिं कांई, नाल्यां सेंती होय लड़ाई ॥१०५८॥
तोउ न कारगर कोई भयो, पातिसाहि डूंगर चढि गयो।
बैठो जाय घरां कै साम्हैं, जुड़ै दरबार राव को जामैं।
सारौ लोग जैठां सूं दीसै, देखि दरबार दांत अति पीसै।
जठै अखाड़ो रांमति होई, पातिसाहि परिण देखै सोई ॥१०५९॥

॥ दूहो ॥

पाति साहि बठो तहां, दीसै सौह दरबार।
राव बैठो रणथंभ मैं, कोई नहीं सुमार ॥१०६०॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

बण्यो छोह चौगांन मंड्यौ दरबार निरंतर।
खांप खांप रजपूत आप आप नहिं अन्तर॥
मानूं पंकज फूले किंधौ यह फैन ज फूले।
जहाँ बैठा सावंत सूर नाना बिधि वस्त्र खुले।
मांनुं तारायन जगमगै अक सूर बिच इंदर राजियौ।
इसड़ौ दिपै संभरि धनी, सु बीजौ चंद बिराजियौ ॥१०६१॥

॥ दूहो ॥

पाहड बैठो अलावदी, गढ परि बैठयो राव।
पातिसाहि परपच करै, कोइ न लागै दाव ॥१०६२॥

॥ छंद भुजंगी ॥

यौ साहि पहाड़ सब आय लिया, जहां बुरजिं चिणाय तयार कियं।
जिनुं ऊपरि मोरचा नालि रुपी, दिन रैन भई अर सूर लुपी।

छुटै सब होय अरड़ाट इसौ, मांनु भादव मास घरड़ाट तिसौ ।
तड़कै जिम दांमनी गोळा चलै, भड़कै अति सोर पहाड़ हलै ।।
गोळा रणथंभ कै जाय लगै, कोइ ऊपरि होय पड़ेजु अगै ।
बहै बांण बंदूक परमांण नहीं, जो गढ पर पहुंचै न जाय कहीं ।
बजै बंब नौबति ते होत घाई, गजै जु पहाड़ अरड़ाट झांई ।
उत सूं गढ ऊपली नाळि बहैं, ज्यूं ढुलै मतवाळा अपार कहैं ।
सरकै सिल पाथर लाख पड़ै, मच्यौ घमसांण कि राड़ झड़ै ।
अर तीर जंबूर अपार चलै, नहीं आय सकै कोई गढ तलै ।
धांम धूम हुवै धुंधकार मच्यो, जैसें भारथ रावण राम रच्यौ ।
होय गाज सुनै नहीं को बतियां, पड़ै कायर सांकि फटै छतियां ।
रज खेह उड़ै'र उठै ज धुवैं, जु गयो दबि सूर अंधार हुवै ।
दोउ तर्फ सूं आग ही आगि झड़ै, मनुं परसराम गंगेव लड़ै ।
किंधौ कृष्ण बांनासुर रुद्र मंड्यो, बहै गोळा गोळी मेघ धार छंड्यौ ।
हाथाजोडी करी पतिसाह इसी, बरणी कवि आंखिन देखि तिसी ।
आठौ जाम इसौ रहचक्क रहै, तोउ नहिं कारगर होय कहै ।।१०६३।।

॥ दूहो ॥

गोळी मारे एक दोय, पथर मारे दस बीस ।
लोग अजायां होत हैं, दूरि सूं करो कसीस ।।१०६४।।

सुरंग भी लागैं नहीं, जड़ पाहड़ तटि नीर ।
कोट कराई त्रिकट कुलि, पाखर परबत भीर ।।१०६५।।

॥ कवित्त छप्पै ॥

फिरि बोल्यो पतिसाह, लोग मति करौ अजायां ।
तीर एक रहौ दूरि, निजरिबंध रखौ दबायां ।।
देखौ निकसि नहिं जाय, घेरि करौ चौग्रिद डेरे ।
जौ कहुं आवै हाथि, करूं जो मन में मेरे ।।

नाळी राड़ि करबो करौ, मरो मति गढ तटि जाय्कै ।
इह घुस्या रहेगा कबलग किलै, फिरि मैं रहूं बरसौ छायकै ।१०६६।

॥ दूहो ॥

महिमा कहै सुणो रावजी, अब क्या सोचो बात ।
हुकम होय रोळा करूं, जुद्ध करूं परभात ॥१०६७॥
राव कहै महिमा सुणौ, इसी न कीजै दौर ।
कांई करसी पतिसाही, जीकै बिणजारां को ढौर ॥१०६८॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

सुण्यौ प्राक्रम हंमीर, सकल गढ चौक संभाळै ।
जिता मोरचा कोट, रैंन दिन आप संभाळै ॥
आठूं जाम कड़ाचूर, कदे नहीं कमर खुलावै ।
जै सोवै घड़ी रैंनि, जबै आय पीर सतावै ॥
ते नैक नि डरै रांमति करै, ते हरखि हरखि इम बूलि हैं ।
देखौ डेरा रंग रंग तणां, सु प्रबत किसौ एक खूलि है ॥१०६९॥

॥ दूहो ॥

ल्हस्कर परवत छाइयो, हर्ष करै अति राव ।
गढ ऊपरि नौंबति घुड़ै, जाणिक पड़्यो पड़ाव ॥१०७०॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

कांइ हुवौ लियां पहाड़, कहौ गढ किम करि लेई ।
जी हैं कहुं ठै नहीं लगाक, माहैं लोग गढ साकेई ॥
यो बारह बरस रह्यो छाय, जितौ अहंठै पंणि रहसी ।
यो टीडी दळि पड़्यो तटि आय, सोभा गढ म्हारौ लहसी ।
यो रणथंम दुरंग मझ्याचल महैं, ई और न गढ समतुलि हैं ।
जीहैं रछिक मांहि हंमीर दे, तटि सताईस लखि दळ् झूलि हैं ॥
॥१०७१॥

॥ दूहो ॥

छाय रह्यो अलावदीन, भोळै भूल्यो और ।
बाराह बरस ऊंठै रह्यो, ए तौ छावौ और ॥१०७२॥

इति श्री पीर मादिकिलीच निजामदी मीयां जाजनजी
सावंत जंग अष्टमोऽध्याय सम्पूर्ण

[नवम अध्याय]

॥ कवित्त छप्पै ॥

धारू करत सिंगार, बारू महा बनि आई ।
षोड़सि साजि सिंगार, जड़े नग कंचन तांई ॥
रूपवंत अतिरंभ, चीर नाना बिधि पहरे ।
तन अमल बौह लाय, हार फूलन के गहरे ॥
बनि ठनि आय ठाढो भई, अर अळापी राग उचार ।
कोयलि कंठ सुर मधुर धुनि, सब सखी गावत लार ॥१०७३॥

॥ लघु चौपई ॥

प्रथम भैरूं राग अलापी, जिह की पाँच भारज्या थापी ।
भैरवी नटी मालश्री रांनी, पटमंजरी अर ललित बखांनी ॥१०७४॥

पाछै राग मालकोस गाई, पाँच त्रिया जिहकी पणि आई ।
गौडी खंभायच मालवौ गौरी, मानवती गुणकळी बिनौरी ॥१०७५॥

तीजै राग हिंडोलज कीन्हीं, ए पांच भार्ज्या जिहकी लीन्ही ।
बिलावल टोडी देसाख सोहै, देवगंधारि मधु माधवी वोहै ॥१०७६॥

चौथी दीपक राग उचारी, जिह की सुंदरि पाँच सुधारी ।
धन्याश्री बसंत कान्हड़ौ गावै, बैराड़ी देसाख सुनावै ॥१०७७॥

पाँचवै मेघ मल्हार गलारी, जिह की कही पांच ही नारी ।
गूजरी गौंडकली कुंकुंभ, मेघमलार बंगलो संभ ॥१०७८॥

षष्ठमैं गाय करी श्रीराग, जींहकी अली पांच बेराग ।
पंचम कमोद'र सेत मलार, आसावरी केदारो कीन्हों लार ॥१०७९॥

इती छत्तीस राग बखाणी, ज्यांकी पौधि और पंनि ठांनि ।
बिहागड़ौ मारू सोरठ करी, जैजैवंती काफी सिरी ।।
नाचै नाच मान जदि आवै, पातिसाहि दिस पांव उचावै ।
देखै साह पछितावै अति ही, देखौ इस रंडो की गति ही ।।१०८०।।

है कोइ ऐसा जुवान हमारै, इस रंडी के पग कैबर मारै ।
या बात फैलि ल्हस्कर मैं गई, उडांणसीह लग प्रगट भई ।।१०८१।।

सो बंदोवांन बंदि मैं रहै, गलै तौक पग बेड़ी महै ।
ते सुणी बात असे उठि बौल्यो, मैं मारूं जे मुझहैं खोलो ।।
यों बात कही साहि सूं जाई, जे खुसी होय करि लियो बुलाई ।
जाय उडाणसी सीस नवायो, पातिसाहि जिह सूं फुरमायो ।।१०८२।।

।। दूहो ।।

पातिसाहि असे कही, कैबर मारो पाय ।
बड़ा करूं उड्डाण तुझ, मनसब तुझे सवाय ।।१०८३।।

।। चौपई ।।

जे तूं इह काम करेगा मेरा, तो बहौत करि मुजरा मानूं तेरा ।
या जब ही रंडी पांव उंचावै, उसही पग मैं कैबर लावै ।
जो असा आवध तुझ पै आवै, करूं बड़ा मांगै सो पावै ।
बोल्यो उडांणसी कहौ स कराऊं, जो एक महोना फुरसत पाऊं ।१०८४।

तूं अब ही क्यों न करे यह काम, कदीस महीनां आवै जांम ।
फिरि उडाणसो अरज कराई, मैं पंदरह बरसां तांई अन्न न खाई ।
रात दिवस मैं जकड़या रहूँ, भूख प्यास मैं सगली सहूं ।
मुझ मैं कुवति कहां से होई, यों मैं फुरसति मांगू सोई ।।१०८५।।

ते तुरत बंदि सूं दियो छुडाई, पातिसाहि असे फुरमाई ।
यो मुख मांगै सोहि(चीज)खुवावो, इसकी दासति खब करावो ।

जब ज़ाबता करत महिनों गयो, बांधि पुष्टि ते ताजा भयो ।
वांकै तो वोही रहै चाळो, जब पातिसाहिजी फेरि संभाळयो ।१०८६।

बुलायर कह्यो इस देखि रंडी कूं, तेरा मुजरा मारि लंडी कूं ।
उडांग कहै कबांग ज ल्यावो, मेरे जोर की ढूंढि मंगावो ।
जब साहि कह्यो वै ल्यावो ख़ासा, देखैं इनौं का ग्राजि तमासा ।
बड़ी बड़ी सी ढूंढि मंगाई, दस बारह जहां ग्राणि नखाई ।।१०८७।।

भली देखि उठाय कैं लीन्हो, सो कसीस उडांणसी कीन्हीं ।
खैंचत प्रमांण टूटि कैं गई सोई, जदि साहि कहै ग्रौर ल्यो कोई ।
दूजी पणि टूटि कैं गई, जब तीजी उठाय हाथ मैं लई ।
सो पंणि गई टूटि कैं ग्राखी, दस बारह जिह तोडि'र नांखी ।१०८८।

जब ही साहि गुस्सै होय गया, क्यूं बे तरफ मांमू की भया ।
ऐसी बात क्या सूझी तुझे, एक एक ही चाहिये मुझे ।
मैं तो खिलाफ न करिहू काहूं, मैं तो मेरे बल की चाहूं ।
जब साहि कही तेरी है कहीं, उडांण कहै दिल्ली मैं रही ।।१०८९।।

मैं एक कलाल कैं सराब जो पीया, लाख टका उस ऊपरि कीया ।
जिहि कूं भेज्या लेण कूं सोई, जाय देख्यो घर बळींड़ो होई ।
जदि कलाल का घर उपड़ाया, ग्रठाराह कहार जिह कूं ल्याया ।
दचौंस पंदराह ल्यावत हो गया, जब लग ताजा ग्रौरूं भया ।१०९०।

लेर कबांण चढावै जोई, करै जोर चढै नहीं सोई ।
जब उडांण सोचै मन मांही, दिन पंदराह जो ग्रौरूं जाहीं ।
जब लग जोस ग्रौर कुछु होई, ऐते परपंच करिये कोई ।
करी मालूम साहि सूं इहो, एक ग्ररज जो मानौं कही ।।१०९१।।

इसकूं ल्हसकर मांहि फिरावो, कोई मुझ सा जुवान ग्रौर भी पावो ।
जु कोई मरद चढावै इस हैं, करि कैं जोड़ी राखूं तिस हैं ।
साहि कूं तो देखन का चाउ, हुकम करचो तुम जाय फिराउ ।
काहार फिरचा सब (ही) जागां, दिन पंदराह ग्रौरूं भी लागा ।।१०९२।।

कूंण चढावै किसकी बात, जब लग कूवति भई फिरि गात।
जदि करि जोर कबांण चढाई, काठी खैंचि अर कसीस कराई।
ते खंची नहीं आगलै परमांन, रह्यो पचि आवै नहिं कान।
कहै दिन पंदराह जो ओरूं जाहै, तो आगिली कूवति आवै मुझि
माहै ।।१०९३।।

जब जाय साहि सूं कहै ज सोई, हूं देखूं इसहैं खैंचैं कोई।
मैं कोई जोड़ अपणी का हेरूं, जो हुकम होय तो ल्हसकर फेरूं।
पातिसाहि हैं चाळौ रहे, लेकरि जावौ हुकम यौं कहैं।
जिहैं फिरत फिरत केई दिन लाया, खैंचे कौण साहि बोहौलाया
।।१०९४।।

ज्यौं त्यौं महीनां तीन लगाया, जब लग बल पहिला सा आया।
आपणैं डेरैं खैंचि जंमाई, ते खैंचत प्रमाण स्रवण लग आई।
इत राव सभा मैं पातुरा गाई, जदि साहि उडांणसी लियो बुलाई।
जाय उडांणसी सोस नवायो, मन मांहै उसताज मनायो ।।१०९५।।

।। दूहो ।।

साहि कहै उडाण सूं, अब कहो कूवति की बात।
दिन कैं पांव बतावै पातुरा, कहो कहां की बात ।।१०९६।।

राव बैठो रणथंभ पर, धारू करत विलास।
देखै साहि अलावदी, खड़ो उडाणसी पास ।।१०९७।।

करै अरज उडाणसी, हजरत देखौ तास।
अबैं पात्र उठावै पातुरा, चाली जाय अकास ।।१०९८।।

।। कवित्त छप्पै ।।

ठयो हंमीर प्रीखनौं, तरन नांचै रायअंगन।
सीस धुनैं अलावदीन, आवटै खिन खिन।

पग नेवर रून झुन करैं (हिं) कांन सोवन तरकर।
हय गय पाखर पडंग, चढा चहुं नरवै नर।
कर गही कमान गलगज करि, छत्र सांमही ताडंग।
उडाणसी पातरा हिनंग, सु ताल दयंत खड़ि हड़ि पडंग ॥१०६६॥

॥ दूहो ॥

धारू मारी जीव सूं, खुसी हुवो सुरतांण।
मनसब दीयो चौगणों, अर दीन्हीं खुरसांण ॥११००॥

॥ चौपई ॥

उड़ी पातर पान की नांई, अलंग तळै ते पड़ीज जाई।
कहैं साहि दौड़ि कैं जावौ, उसहै झेलि अधर हीं ल्यावौ।
कहत प्रमाण दौडद्या नर कैई, ज्यां है मार गढ सूं जब देई।
जिह पर मांणस तीन सै मूवा, ते गढ तटि गंज सईद जे हूवा ॥११०१॥

धारू मारी राजा मुरझायो, जिह का जीव मैं सोच पड़ायो।
जदि महिमां साहि उठि बोल्यो असे, तुम दलगीर भए किधौ कैसे।
राव कहै यो खेल मिटायो, वांकै बाणावली इसड़ो आयो।
जिह को तीर अठा लग आवै, मति कोई और कै चोट लगावै ॥११०२॥

॥ दूहो ॥

अरज करै महिमा साहि तब, सुणजै राव हंमीर।
वहै सागिरद उडाणसी, जिसका हैं या तीर ॥११०३॥

॥ चौपई ॥

बोलै महिमां यो तीर हमारा, उसि बंदिवान भाणिजै डारा।
उह छोकरा साग्रिद मेरा, मैं ही सधाया मारि थपेरा।

जो हुकम होय साहि कूं मारूं, तुरत धारू का बैर उतारूं ।
राव कहैं साहि झिन मारो, यो बिगड़ जायलो खेल ज सारो ।११०४।

॥ दूहो ॥

राव कहै महिमां सुणौं, मारचां बिगड़े ख्याल ।
बराबरी (जे) अब सधे, जीं सूं रहां खुस्याल ॥११०५॥

॥ चौपई ॥

फिर अलुखान जो बात करावै, दाहिणी भुजा रिछपाल कहावै ।
अवर प्यार का हाथी साथै, हुकंम होय तौ इसकै दयूं मांथै ।
इन दोन्यूं मैं मारू कोई, इह उठि जायगा दुचिता होई ।
इसी न कीजै यो उठि जाई, अर उंह अपस जीव नैं लागै कांई ।
॥११०६॥

जो हुकंम होय छत्र कूं मारूं, उसके सिर सूं परहा डारूं ।
राव कहै या बात ज नींकी, अब थां पाई म्हांका जी की ।
छत्र मारचौ तो ऊही मारचो, अर धारू को बैर उतारचो ।
बैर सधै अर खेल रहै सारो, इसे बैर उहैं मति मारो ॥११०७॥

उरकी एक इण विधि लिखायौ, यो धारू को बैर कढायो ।
या आवै चोट छत्र के तांई, यौं मति जाणौं कैरी बांई ।
त्रिया कै बैर तूं नहीं मरवायो, अब कै थारो जीव बचायो ।
इण बिध लिखी तीर कै बांधी, करी घात डांडा हैं साधी ॥११०८॥

॥ दूहो ॥

महिमा कहै साहि सूं, हजरति जाज्यो दूरि ।
अब कै राव बचाइया, मारूं ऊगै सूरि ॥११०६॥

।। कवित्त छप्पै ।।

छत्र धरनेह भई, सार बज्यो सिर ऊपरि ।
कर गहि रहीय डंड, जांणिक गोरख ध्यांन धरि ।
राव रांण भडहडंग, अवर सुरतांन बयठ्ठौ ।
आयो तीर बंचियो लिख्यो, महिमां सोई दिठ्ठौ ।
तो मन बधि रोस धारू मरी, सुनत ही हंमीर भोजन कियो ।
(ता करण असपति राय हो, तीर महिमा मूकियो) ।।१११०।।

।। चौपई ।।

तीर डांडो फोड़ि ब्रिख जाय अड्यो, छत्र भड़ देय दूरहो गिर पड़्यो ।
दरबार सारौ अचिरज रहियो, यो छत्र जाय दूर क्यों पड़ियो ।
ज्यांकी निजरयां तीर जब आयो, हाय हाय भई साहि डरायो ।
ऊठि कै साहि दूरो भयो जाय, तीर ब्रिख सूं लियो मंगाय ।।११११।।

।। दूहो ।।

उरको बांचि सुणाइयो, सब भड़ मिले उजीर ।
अब डेरा ओठै करो, यो लिखी महिमा मीर ।।१११२।।*

साहि कहै महिमां बिनां, अैसी करे न कोय ।
जो एक बार हाथौं पड़ै, तो मतलब मेरा होय ।।१११३।।

।। चौपई ।।

कहै आजि कै रोज तो खैर गुदारी, जबै साहि जिय और बिचारी ।
उलटि अर रण कै डूंगर आयौ, जहंठै परपंच एक उठायो ।
कहै कोइ इलाज इहां ऐसा कीजै, इह खंदक हैं सो भरि करि लीजै ।
चौगिर्दा हैं खबरि कराई, रूपइये तोबरे गारि रळाई ।।१११४।।

---

*पाठान्तर—यों लिखियो राव हमीर ।

॥ दूहो ॥

रण कैं डूंगर आय कैं, खंदक भरावै साहि ।
चेजागर लाग्या किता, तोबरो रुपइयो पाय ॥१११५॥

॥ चौपई ॥

राति होंय जब गारि नखावै, द्यौस नाखबा कोई न पावै ।
बहैं सिफ गोली की सोई, डरतो गारि न राळै कोई ।
जबैं पातिसाहि दियो बधाई, मुहर तोबरै गारि रळाई ।
जीं की खूंटी ढुळि कैं जावैं, आरबळ पूरी मुहर ल्यावै ॥१११६॥

॥ दूहो ॥

राव कहै सौह साथ सूं, इहं को कौण बिचार ।
यों हठ लाग्यो पातिसाहि, राति नखावै गारि ॥१११७॥

महिमां कहै सुणो रावजी, इह पड़ा रळावो गारि ।
अबै हुकंम अैसैं करो, इसहै दयों हूं मारि ॥१११८॥

थांनै यौं ही चाहिजे, छै ज भरोसो मोहि ।
पहिली रोळो मति करो, ना जानां क्यों होहि ॥१११९॥

॥ चौपई ॥

जदि राव कहै अप लोगां सेती, पातिसाहि नैं कीन्ही अेती ।
जो कहुं पुळ पूरो पड़ि जावै, अर वुठां सेती यो चढि आवै ।
थां पणि सावधान रेहौ भाई, ईं पुळ पर किसड़ी लेव लड़ाई ।
वों तो जीव मैं नांहीं डरै, देखां राम कांई यौं करै ॥११२०॥

॥ दूहो ॥

अरघ राव बीत्यां पछै, महिलां पोढयो राव ।
पदम सुपनै आईयो, कहि दीन्हीं सौह भाव ॥११२१॥



॥ चौपई ॥

रैंन राव हैं सुपनौ आयो, पदम रिषीश्वर दर्स दिखायो।
आय कह्यो राव सूं अैसे, थां मांहिलै सांकौ छो कैसें।
पदमोळाव की मोरी छोड़ौ, बांध्यो पुळ थां इण बिध फोड़ौ।
इक बूढा तेली हैं लीज्यो बुलाई, ऊ मोरी (थांनै) देसो बताई
॥११२२॥

बीती रति जब सूर उगायो, जदयां राव दरबारां आयो।
ते मन मैं सोचै कहतां सरमावै, मति कोई म्हारो हांसो करावै।
कहिला तांतल्यो बीएाै राई, तलाब मैं कांई इतो सकलाई।
करि गाढो मन बोल्यो सोही, एक बात कहूं जो मांनो कोई।११२३।

॥ दूहो ॥

राव कही दरबार मैं, सारा लीन्ही मांनि।
केई कुबुधी यौं कहैं, सुपना सांच न जांणि ॥११२४॥

॥ चौपई ॥

बोलैं उमराव कहौ महाराजा, जो हुकंम करो सोई करां काजा।
जदि बात सुपनां की कही बणाई, ते सकल सभा नैं लई सुणांई।
कुबुधी कैं चित्त नहीं आई, सुपनो साँच किसौ होय जाई।
स्याणा बात सांच करि जाणी, जे उठि बोल्या इसड़ी बांणी।११२५।

ईं मैं कांई आपको लागै, ऊ बुलाय तेली देखो जागैं।
जब बूढो तेली कोकि बुलायो, जो पूछ्यो जीं जाय ठांम बतायो।

❀टि. निम्नलिखित दोहे का यहाँ कोई क्रम नहीं दिया गया है—
सातूं सायर नौ सैं नदी, सबका मो मैं सीर।
पुळ फोडूं पतसाह की, हठ मति करै हंमीर ॥१॥

जहँठै जायगैं खिणायर देखी, जदि निकसी मोरी सब कहुं पेखी ।
जिहकै मुँहडै तवौ ज आडौ, सहंस चालीस मण को जाडौ ।११२६।

तेली कहै—

॥ दूहो ॥

बलि दचो इंहकौ बाकरो, दारू धार दिवाय ।
मोरी इंह की छोडि दचो, देसी पुळ (हि) बहाय ॥११२७॥

॥ चौपई ॥

बकरो बाल कुला दारू धार मंगाई, जिहकौ बलि दे धार चढाई ।
सारा मिल करि तवौ धकायो, जहँठा सेती नीर चलायो ।
गहरो पांणी उमग्यो अैसौ, घडि सिलता की भादूं जैसौ ।
फूटचो पुल सौह दियो बहाई, धकै पडचो जे दियो धकाई ॥११२८॥

॥ दूहो ॥

पुळ फोड़्यो पल एक मैं, अैसी उमगी सीर ।
राव जबैं राजी हुवौ, जदि उपज्यो मन धीर ॥११२९॥

पुळ जब देख्यो साहि नैं, अचिरज रहियो साथ ।
इता नीर इस गढ महैं, क्यों करि आवै हाथ ॥११३०॥

॥ चौपई ॥

जदि दांत आंगुली साहि दे रह्यो, अर मुख सूं बोल इण विधि कह्यो ।
इस गढ पर नदी कहां सूं आई, जिनि बांध्या पुळ सब दिया बहाई ।
इस गढ ऊपरि हैं एता पाणी, तो मैं भी करूंगा आपणी जांणी ।
मैं अैसा बंध करूंगा कोई, जिसमैं कारगर अबैं नहीं होई ॥११३१॥

दरखत झाड़ खड़ काटि मंगावो, ए बिच बिच दे कैं पथर चिणावो ।
जिसमैं मोरी संधि रखावो, पांणी बीचि पड़्यां बह जावो ।
इक पत्थर पहिलां साहि उठायो, मसतग धरि कैं जाय नखायो ।
आदमी नखैं जिता था खड़ा, सताइस लाख इक समचै पड़्या ।११३२।

पारकी फिरि पाळ बंधाई, जिंह की खबरि रावजी पाई ।
जदि लोगां सूं इण विध भाखी, पहिलै तो रज पदमलै राखी ।
अब ऊ उंठी सूं धसैंज सोई, अहठाँ सूं थांकी धस होई ।
पुळ पर किसड़ा मंडि कै जावौ, मारि तरवारयां परा धकावो ।
।।११३३।।

इक भाट कह्यो देखो हूँ जाऊं, जो बंणी जाय तो परहौ उठाऊं
राव कहै थां कांई जावौ, कांई कह करि कंमी करावौ ।
अर थां उहस्यूं कांईं कहस्यो जाय, सौ विधि म्हासूं कहौ समझाय ।
पढूं कवित अर चोख लगाऊं, अहठां सेती परहौ भगाऊं ।
एक टकर करूंलो अैसी, जो वुंह कै मनि जाय छै बैसी ।।११३४।।

।। दूहो ।।

जाय भाट ऊभो रह्यो, बुरज स्यूं कह्यो पचारि ।
तूं अलावदीन छत्रपती, कांई ढोवै गारि ।।११३५।।

।। कवित्त छप्पै ।।

जिंह सिर कनक मणिरतन, मौड़ माणिकां मंड्यो ।
जे सिर बास कुसम निवास, छिनक एक नहीं छंड्यो ।।
जे सिरि सिरहैं नहीं नयो, तास सिर छै बइठौ ।
जे सिर पंच भूपालन मांहि, उदयवंतै दीठौ ।।
तौ हमीरराव गाढो कृपण, देह न राम जिम देवगिर ।
पाहण बहंत कठेव करि, सु पडिया चांदि सुरताण सिर ।।११३६।।

॥ दूहो ॥

खेम भाट कौ सबद सुणि, बोल्यो साहि हकालि ।
(यौं) कहो राव सूं जायकैं, हम उठि जावें कालिह ॥११३७॥

हुकम करौ जो ही कहूं, जे मानैं छै राव ।
तुम पतिसाहि सब मुलक के, इस तांई क्या जाब ॥११३८॥

॥ कवित्त ॥

जबैं कवित सुण्यो पतिसाहि, भयो दिलगीर ज मन मैं ।
कहौ कछु पेसकसी देहि, अबैं उठि जाऊं पल मैं ॥
बहौत नहीं इता ल्याव, एक घोड़ा इक चाबक ।
देखि आलम का रूप, क्या घुसि रह्या ज काबक ॥
मैं बिना लिये जाऊं नहीं, मुझि अलावदी नाम ।
तेरा बकस्या गुनाह सब, (तुझै) इह गढ दिया बिसराम।११३९।

॥ दूहो ॥

बैठ्यो राव गढ ऊपरैं, सुणी बात सौंह कान ।
साहि बहक्यो बातां करै, मांग्यां मिलै न दान ॥११४०॥

राव कहै सुरताण सूं, यो गढ दीन्हौं राम ।
थां सिरखा चेजा करै, (म्हांकी) सोभा पावै ठांम ।११४१।

भाट कह्यो जाय राव स्यूं, एक घोड़ो साहि दिवाय ।
(यौं)नाक-नवणि लाखौं गिणै, लेकरि परहौ जाय ।११४२।

नाक-नवणि गोली घणी, पीपळ घणीं ज लाख ।
राव कहै (कवि) खेम सूं, फेरि इसो नह भाख ॥११४३॥

करै अरज यौं खैमसी, टेक न छोड़ै राव ।
यो बैठो ही बरसां रहो, कौडी कदे न पाव ॥११४४॥

हठ अब छोड़ो रावजी, (एक) घोड़ो साहि नै देव।
जाणि बकस्यो भाट हैं, सारो जस किन लेव ।।११४५।।

।। कवित्त छप्पै ।।

राव कहै—

मेर चलै ध्रुव टळै सप्तसागर जळ सूकै।
राम चन्द्रि टळ जाय, टेक जो रावण मूकै ।।
भीम मुचै भारत्थ, गंगजल पच्छहौ ढूंकै।
सहस विक्रम भजइ, भोज विद्या इम चूकै ।।
तौ बलिराय बाचा परिहरै, अर सत छांडै हरिचंद जठ।
धरणि अकास होय ईकठी, तौ न तजै हमीर हठ ।।११४६।।

।। चौपई ।।

भाट रावहैं फेरि समझावै, राव कै दाय क्यों एक न आवै।
एती अड़ नहीं कीजै राजा, थांही को बिगड़ै छै काजा।
कांइ बुन्यादि घोड़े की आई, भाट चारण हैं द्यो बकसाई।
इहैं दीजे फिसाद मिटावो, फेरि देसड़ै अमल करावौ ।।११४७।।

।। दूहो ।।

राव कहै—

भाट चारण हैं लाख द्यौं, ईंनै द्यौं नहीं कोय।
यो परबत बैठो रहौ, (ईंनै) करतां थोड़ी होय ।।११४८।।

।। कवित छप्पै ।।

राव कहै सुणि भाट तूं, जाण अजाण क्यों होवै।
इतरा दिन को हठ, कांइ तूं अब्रिथा खोवै ।।
मैं काढ्या मुख वचन, जिकै पाछा नहिं टाळूं।

होणहार सोई होहि, अब कांइ आल झंखाळूं ।।
मैं जीव कळपियो आपको, जिकै बाजि देस्यों अबैं ।
थां काची बातां मति करौ, फिरि इसौ मौसर पाऊं कबैं ।।११४६।।

।। कवित छप्पै ।।

जुवाब लेय कैं भाट, जाय बुरज ऊपरि बोल्यो ।
सुंणो अलावदी साहि, राव मैं बहौत टटोळयो ।
कहै घरि बसत नहीं इसी, जिकै साहि नैं देवूं ।
म्हांतौ करां छा आस, मांगि क्यौं साहि पैं लेवूं ।
जो बस्त होय घरि प्यार की, जिकै सुरताणि हैं दीजिए ।
ईं जीव उपरांति प्यारो क्यौं नहीं, सो जब्र जाणौ तब लीजिए ।११५०।

सुणि कैं भाट की बात, साहि मन मांहि बिचारा ।
जिसकी हमकूं चाहि, मुलक तौ आया सारा ।
इहां थांणै चौग्रिद राखि, मुलक हम और संभाळैं ।
मतलब हुवा सब पूर, इहां कांम बिनां दिन क्यूं गाळैं ।
इह गढ मांहैं रहबो करो, अंदर घुस्या क्या खायगा ।
परि काटि कूटि करि छोडिया, अब किस विध लड़नै आयगा ।११५१।

।। दूहो ।।

आखतो होय अलावदी, दिल्ली चलियो धाय ।
थाणा चौग्रिद राखि कैं, कीन्हो कूच अघाय ।।११५२।।

।। चौपई ।।

सबद भाट कौ हिरदै धरयो, पातिसाहि जब अहौंटो फिरयो ।
सूरवाळ परैं डूंगरी आई, जहंठै डेरा दीन्हां जाई ।
सब लोग कहैं साहि तौ गयो, राजा कै क्यों दाय न भयो ।
राव कहै ईं नैं जाबा दीजे, आपणो देस खोसि करि
लीजे ।।११५३।।

।। इति श्री नवमोऽध्याय सम्पूर्ण ।।९।।

(दशम अध्याय)

॥ दूहो ॥

रचौं (पाल) ख्यौंपाल प्रधान दोय, राजा कौ अति ष्यार ।
काम चलावै सर्व वै, सारो वां पर भार ॥११५४॥

॥ चौपई ॥

गढ मैं प्रधांन गंगेलवाळ बांण्यो, ज्यां मिलि मतौ और ही ठांण्यो ।
कहै ईं समियै म्हां बैर न लीयो, तौ धिग पड़ौ आपणो जीयौ ।
अब इसडौ परपंच कीजे कोई, पातिसाहि फिरि आवै सोई ।
एक साहिहैं जाय मिलायो, दूजै भंडार मैं चांम बिछायो ॥११५५॥

ख्योंपाल समझावै—

॥ दूहो ॥

ख्यौंपाल कहै रचौंपाल सूं, खोटो करो विचार ।
ए बातां राजा सुणें, तो नाखै सबहैं मारि ॥११५६॥

भावैं मारो जीव सूं, भावैं सो होय जाव ।
रचौंपाळ कहै ख्योंपाळ सूं, फेरि न पाऊं दाव ॥११५७॥

रचौंपाळ गढ सूं ऊतरचो, कोयां जाण्यो नहिं ज जाय ।
पहुंतो जाय ल्हसकर महैं, मिल्यो साहि सूं आय ॥११५८॥

रचौंपाळ गयो ल्हसकर महैं, पहिली मिल्यो दिवांन ।
साहि पूछै अलुखांन सूं, या किसका परधांन ॥११५९॥

या परधांन है राव का, आया आप हजूरि ।
या अरज करि है कछु, कीजै मतलब पूरि ॥११६०॥

अरज करो है रावजी, यो गढ मुमारख साहि।
म्हांनै चाकर कीजिए, राखो अपणैं पाय ।।११६१।।

।। चौपई ।।

पातिसाहि जीसूं बतळायो, कहि बे बणियां क्यौं करि आयौ।
कहै हजरति पासि हूं राव पठायौ, राव उतरि तलहटी आयौ।
अर इण विध राव कहै है सोई, इह गढ तुम्हैं मुमारख होई।
कहिज्यो हजरति अहठैं आवै, दिन दोय औरूं महिर करावै ।११६२।

जब सुंणि कै पातिसाहि इण विधि कहै, हम तौ वहां तेरह बरस रहै।
अब दिन दस पांच औरू भी चलै, हम भी चाहैं राव हैं मिलैं।
कहै जिस दिन मैं गढ पर जाऊं, तो सगळौं ऊपरि तोहि रखाऊं।
हम कूं चलितैं फेरि क्या लगै, साहि कहै देखैं वा जगैं ।।११६३।।

पूछै साहि इस मैं क्या तेरा, इन बातों का देहि नबेरा।
वा इतनै दिन हम सूं मिल्या क्यौं नांहीं, अब क्या वैठि उसके
दिल मांही।
रचौंपाल कहै ऊ यों न मिलावैं, जो लडत मिलै तो हारि कहावैं।
अब हजरति ऊठि चलै ज डिली, जबै टेक हिन्दू की टली ।।११६४।।

इसी अड़ कांईं हिन्दू पैं आवै, मरोड़ न छूटैं मरि ही जावै।
जब लग आप लडै छा वां सूं, जब लग वै पंणि लड़ै छा थां सूं।
अब थां घरिहैं गवन करायौ, राव उतरि मिलिबा हैं आयौ।
कहि छै यो गढ आपण लीजै, म्हां हैं जायगैं औरठैं दीजै ।।११६५।।

साहि कहै—

।। दूहो ।।

गढ सूं जायगैं चौगणी, मुगता दचौंगा देस।
राज करो बैठा रहो, खाबो करो हमेस ।।११६६।।

॥ चौपई ॥

जब पातिसाहि फिरिकैं उलटायौ, जिकैं नवसइदां आंणि पडायौ।
जदि ख्यौंपाल हुंतौ सु राजा नखि गयो, करि सलाम अर ठाढो भयो।
कही पातिसाहि तो औरूं आयो, अर अंबारां मांहिलो धांन बितायो।
जींकौ इलाज कांई यौं कीजें, नजोक नहीं सु मंगाय कै लीजै।११६७।

जब राव कहै यो नीकी कीन्हीं, तैं भली आय बधाई दीन्हीं।
जब राव कहै इतरो तौ होई, को दिन की झड़ झेलै सोई।
ख्योंपाल कहैं अन्न सही बीत्यो, जौंरो भौंरो होय गयो रीतौ।
जब देखिबा हैं औरि खिंदायो, ज्यांकी साथ ख्यौंपाल लगायो।
ज्यां ऊपर सेती पाथर नखायो, बाजी अधौड़ी आहट आयौ।११६८।

॥ दूहो ॥

राव तौ मांनै नहीं, वांनै नहिं परतीत।
अब कांइ करी जे ठाकुरौं, गयौ नांज सौह बीत ॥११६९॥

॥ चौपई ॥

ज्यां सूं ख्यौंपाल कहै बात बणाई, यो तो तळै को पठो बाज्यो भाई।
रावजी तो झूंठी करि मांनी, अब थां तो बात सांची कर जांणी।
वां तौ जाय राव सूं कही, अब बीत्यो धांन बात छै सही।
म्हां पाथर नांख्यो आपणै होई, भड़ दै पठौ बोलियो सोई ॥११७०॥

जदि राव मांहिलै औरसो कीयो, तौ तो म्हां है गढ ऊतर दीयो।
जब उमराव लोग सब लिया बुलाई, ज्यां सूं बात कही समझाई।
कहै धांन कोठार को बीत्यो भाई, उतरो गढ सूं लेहु लड़ाई।
अन्न के धोखें कांइ मरावां, तरवारयां सूं जाय अघावां ॥११७१॥

जबै उमराव सारा इण विध बोल्या, कीयां अंबारां का मुंह पणि खोल्या।
ज्यां देख्यां त्यां बात कहाई, वे ऊपरि सेंती म्हां देख्या जाई।

कोई इतबारी माणस और खिदावौ, वै सारा मुंहड़ा जाय खुलावौं।
फिरि जाय कैं बारणां दिया खुलाई, अब जाय देखैं तो खाल
बिछाई ॥११७२॥

देखैं तळै धान अर उपरि अधोड़ी, जहां देखैं तिहां धांन घणोड़ी।
जब आदमी देखि राव नखि आया, देख्या सो परपंच आणि सुणाया।
जबैं राव ख्यौपाल बुलायौ, ते नीठ नीठ हजूरां आयो।
पूछै राव यो कांई छै रे, तूं ईं परपंच को उत्तर दै रे ॥११७३॥

जे मुख न बोलै उत्तर आवै, जीं है फेरि करि राव बात पुछावै।
जबैं कोरड़ो लियौ मंगाई, दुहरैं कोरड़ै खाल उडाई।
मार को घाल्यो भूत ज भागैं, जब बोल्यो राजा कैं आगैं।
कहै रचौंपाल मिल्यो साहिहैं जाई, ऊ मोनैं गयो बिधि बताई
॥११७४॥

॥ दूहो ॥

राव कहै सुणो ठाकुरौ, आयो पाछिलो छेह।
प्रधान घरां का जा मिल्या, कहि दीन्हो सौह भेव ॥११७५॥

॥ चौपई ॥

लिख्यो करम बाज यौं खाई, राजा हैं मति और ही आई।
उमराव सारा लिया बुलाई, कहै उतरौ गढ सूं लेहु लड़ाई।
जबै कोयां अरज इण बिधि कीन्ही, यो माहिलैं कांईं चीन्हीं।
इतौ धांन क्यों करौ अजायां, यो बरस पांच बीतै नही खायां।११७६।

थां मन मैं कांई एती धरौ, बैठा गढ मैं लड़बो करौ।
जदि यो धांन बीति कैं जाई, जब ही करस्यां उतरि लड़ाई।
राव कहैं थां भेद न पायो, ना जाणूं कुण कुण मिलि आयो।
प्रधान घरां का मिलिया जाय, ज्यां दीन्हो सौह भेद बताय
॥११७७॥

भई दुजायगी लोगां मांही, अब जोबा कौ धरम छै क्यौं नांहीं ।
अब न जाणूं कोई विषदे मारै, कै बैठां सूता हथ्यार की झारै ।
इतो हठ अन्निथा जाय हमारो, अर बिगड़ैलो सकल जमारो ।
गढ मैं तुरक फैलसी धाय, सारा मनुष पकड़ि ले जाय ।।११७८।।

जदि राजा सूं बीरम बतळावै, जो थांकै चित लड़बो ही आवै ।
तो को दिन तो देखो सुसतावौ, धीरज सेंती कांम करावौ ।
इतरा थां कांई अखतावौ, और माहिला मांहि कांईं पिछतावौ ।
जिह दिन यो गढ तूटै सोई, आप कीज्यो थां बतै ज होई ।।११७९।।

राव कहै सुणि बीरम सूरा, ए म्हासूं लोग होय गया दूरा ।
थां यौं मति जांणो साह एकलो गयो, वां मैं सांमलि कोई और पणि भयो ।
थां म्हांको जीतब कांई बिगाड़ौ, जो मिलिया सो सगळा ताड़ौ ।
म्हां कै चित लड़बा की आई, थां फिरि बोलो तो राम दुहाई ।११८०।

राजा कहै—

।। दूहो ।।

सारा अरज करि राखिया, ज्यांका फळ छै एह ।
लाख बरस मैं नित नवो, (बैरी) सोवै न सोबा देह ।।११८१।।

जब करचो हुकम यौं रावजी, जीनैं जाणो होय सो जाव ।
कोई सरमा सरमी मति रहो, फेरि न पास्यो दाव ।।११८२।।

फेरचो ढंढेरो गढ महै, कहिज्यो इण विध जाय ।
जीं हैं प्यारो जीव छै, सो मिलो तुरक सूं जाय ।।११८३।।

मनैं कोयां हैं मति करो, जो गढ सूं उतरै कोय ।
म्हांकी लारां जौ रहौ, जींहैं मरणो होय ।।११८४।।

सकल सभा बैठा थकां, राजा कही सुणाय ।
रचौंपाल मिल्यो पतिसाह सूं, और मिलौ पंणि जाय ।।११८५।।

सकल सूं राजा कहै—

॥ छप्पै ॥

मिलौ राण रौंपाल, मिलौ बाहड़ बिगसंतो ।
भोजदेव पणि मिलौ, मिलौ भोजराज तुरंतो ।
बींरमदे पणि मिलौ, मिलौ बड़ रावत जाजा ।
चंद सूर पणि मिलौ, हींण नहीं भाखत राजा ।
तैतोस कोड़ि वहै पणि मिलौ, अर मिलौ बौपति दयौ ।
हमीर कहै इह मति मिलो, सु करकर हौवर हीयौ ॥११८६॥

राजा कहै—

॥ दूहो ॥

जाजन आयो पाहुणो, अब रह्यो ज म्हां नखि छाय ।
जाजन सेंतो यौं कह्यौ, थां मिलौ साहि सूं जाय ॥११८७॥

॥ सोरठो ॥

जाजा तूं चलि जाह, तूं परदेसी पाहुणौ ।
म्हैं रहिस्या गढ मांहि, अप जीवतड़ां गढ देस्यां नहीं ॥११८८॥

॥ दूहो ॥

जाजन कहै सुणो रावजी, साहि मिलै कोई और ।
म्हैं तो रहिस्यां थां सवां, छोड़ां नंहि रण ठौर ॥११८९॥

॥ सोरठा ॥

जाजौ कहीं न जाहि; ते नर जाया तिहुं नरां ।
भात बिराणो खाय, थांही छोड़ां संकड़ा ॥११९०॥

जाजा तूं जगनाथ, जगि ऊपरि रमि रह्यौ ।
पायो पूरो साथ, साझो कियो हमीर सूं ॥११९१॥

॥ दूहो ॥

जाजन कहै हमीर सूं, अब थां देखो राव ।
तरवारचां सुरताण पै, करूं छत्र परि घाव ॥११९२॥

॥ कवित्त छप्पै ॥

वीरम कहै जाजन सुणि, सु हूं हमीर आगै पडूं ।
हूं न मिलूं असपति, छोडूं नही राव गढ भींतरि ।
मन मैं बांधि मूकिया, रावरूकीया मूंछि अरि ।
हूं सिर तोडूं भीड़ मैं, हूं अब लग भाजि न जाणूं ।
मो जननी नहि दोस, मैं न कुल खंपन आणूं ।
हूं रहूं सीस सभांन मधि, बोल ज खयो बाहुडूं ।
वीरम कहै जाजन सुणी, सु हूं हमीर आगै पडूं ॥११९३॥

जाजन कहै बीरम सुंणि, हूं स्याम काज इतौ करसि ।
पहिली चढिस्यौं हैयवरां, जाय भुजबलि दिखिसि ।
तब भलौ टूटि हूं ठठ, मुगलां पचारसि ।
तब भलौ टूटि हूं तांम, करि सिंगन झालसि ।
जबैं तो सिगनी टूटि है, तांम कर खड़ग संभालसि ।
जवै तौ खडग अब झडि पड़ै, तब कटारो सांम्हो सारसि ।
जांजन कहै वीरम सुणि, सु हूं स्याम काज इतो करसि ।११९४।

॥ चौपई ॥

जब महिमां राव की या गति देखी, महिमासाहि जीव करयो बबेखी ।
जे भायां सूं यौं बतळायो, राजा कै दिल लड़णौ आयो ।
जो कहुं असो बिधि करै खुदाय, या हम पहिली मारचा जाय ।
तो इसके दिल मैं असी रहाय, मैं इन काजै मेरा घर बहाय ।११९५।

॥ दूहो ॥

राव कहै सुणो ठाकुरौं, कांई कीजै दाव ।
पतिसाहि हठ मांडियो, जींको करो उपाव ॥११९६॥

सकल साथ अैसें कहैं, सुणो राव चित लाय ।
पातिसाहि बैठो रहो, करसी राम सहाय ।।११९७।।

।। चौपई ।।

राव सभा मधि बैठ्यौ आय, ठाकुर सारा लिया बुलाय ।
एक बात जो (थांकै) आवै दाय, तो मारचा साहि नैं आपण जाय ।
अरध रात यो दौड़ करावो, तरवारचा मारि परहो उठावो ।
कै तो भागि परहौ उठि जासी, नहिं तरि किधौ आपणौ पाजी
।।११९८।।

।। दूहो ।।

जाजन कहै सुणो रावजी, ऊंचा बिकट पहाड़ ।
घोड़ा क्यों करि दौड़सी, जैठे मुकता झाड़ ।।११९९।।

राव कहै जाजन सुणो, क्यौं तो करो उपाय ।
रचौंपाल मिल्यो पतिसाह सूं, यो क्यौं करि परहो जाय ।१२००।

।। चौपई ।।

सारा मिलकरि अरज कराई, एक बात जो मांनौ राई ।
कोटा परैं बरड़ि मैं गांव, डाकणिहेड़ो जींको नांव ।
जठै एक सकोतरी रहै, जींकी नजरि झळाहळ बहै ।
वा करण मतै सोही करि नाखै, थांको बोल (सिर) ऊपरि
राखै ।।१२०१।।

।। दूहो ।।

राव कहै सुणो ठाकुरौ, ऊनैं ल्यावो हजूरी ।
मुंहड़ै मांग्यो दीजिए, वा छै कितीयक दूरि ।।१२०२।।

॥ चौपई ॥

ढील करो मति बेगा जावौ, वा सकोतरी अैठै ल्यावो।
मुहड़ै मांग्यो उंहनै दीज्यो, ज्यो जाणौ ज्यो कारज कीज्यो।
केई ठाकुर बिदा कराया, चल्या चल्या कोटा मधि आया।
एक भेदी आदमी लियौ बुलाई, जिह सेती यौं बात पुछाई ॥१२०३॥

॥ दूहो ॥

भेदी भेद बताइयो, बल भैंसा कौ लेय।
थां मन मैं चींतो जिकै, सौ पल मैं करि देय ॥१२०४॥

॥ चौपई ॥

भेदी बैंठा सूं लार लगायो, जिह डाकरिण हेड़ौ ठांम बतायो।
सारा बैठा बूंठै जाई, सकोतरी पूछे कोठां सूं आई।
गढ रणथंभ सूं म्है पणि आया, राव हमीर थां नखैं खिदाया।
सारां मिलि कह्यौ छै सलाम, ऊंठै धारौ पांव एक छै काम ।१२०५।

॥ दूहो ॥

कांईं काम छै राव कौ, जिहको कह दद्यो भेद।
एतौ कांईं सांकड़ौ, कीन्हौ अैठै खेद ॥१२०६॥

॥ चौपई ॥

पातिसाहि गढ घेरचो आय, दिन उठि म्हां सूं राड़ि कराय।
बारा बरस लड़ता यौं होई, तो पणि कारगर होय न कोई।
अबै परधांन घरां का मिलिया जाय, ज्यां दीन्हौं सारो भेद बताय।
इह कारज थां राव बुलाया, ए बाराह भैंसा भेंट खिदाया ॥१२०७॥

॥ दूहो ॥

बातां सारी पूछ कैं, चली सकोतरी धाय।
गढ ऊपरि हंमीर सूं, मिली बेग दे आय ॥१२०८॥

॥ चौपई ॥

गढ ऊपरैं सकोतरी आई, राव हमीर सूं आणि मिलाई ।
भला भला जिहां ठाकुर आया, सारा जिहका दर्सण पाया ।
भली करी थां आया आप, म्हांकै छौ थांहो कौ जाप ।
म्हैं थांकैं दरसण हुवा राजी, अबैं रहसी म्हांकी बाजी ॥१२०९॥

॥ दूहो ॥

सकोतरी अैसे कही, करौं (थैं) बज्जर केळि ।
थांनै यौं पतिसाहि पैं, करि दचौं भेळा भेळि ॥१२१०॥

॥ चौपई ॥

राव कारीगर लिया बुलाई, ज्यां सूं हुकम कियौ समझाई ।
एक बज्र को केलि बणावौ, बणाय हजुंरि यौं बेगो ल्यावौ ।
कारीगर बज्र की केलि बणाई, राव सभा मधि बैटचो आई ।
आणि कारीगर सीस नवायो, जाजन हुंतो स हजूरचां आयौ ॥१२११॥

॥ दूहो ॥

बज्र केलि आई अबैं, देखो यौं निरताय ।
राव हुकम अैसें कियो, सकोतरो लेहु बुलाय ॥१२१२॥

सकोतरी कहै—

॥ दूहो ॥

सावंत सारा लार ल्यो, सुणज्यो राव हमीर ।
डोढचां मेल्हु सुरताण की, यौं राखो मन धीर ॥१२१३॥

॥ चौपई ॥

जाजन राव यौं बेग बुलायो, बीरम और साजि कैं आयौ ।
महिमांसाहि मंगोल हैं ल्यावौ, अलावदी साहि सूं आजि मिलावौ ।

जदद्यां रावजी कमरि बंधाई, सारा साथ सूं हुकम कराई।
म्हैं तो आजि चढां सिकार, ठाकुर सारा चालो लार ।।१२१४।।

॥ दूहो ॥

लारै लई सकोतरी, चढि धाये ज हमीर।
वीरम जाजन साथ हैं, मंगोल महिमां मीर ।।१२१५।।

।। कवित्त छप्पै ।।

चढिया राव हमीर दे, करि मेघाडंबर।
धर घोड़ा परबत पलाण, सिर टंटर अंबर।
सात समंद नौ सै निवासी नंदी, जडिया जर कंमर।
........................,...........................।
क्या गावेगा चारणा, क्या गावेगा भट्ट।
ढाढी जुग ढंढोरिया, सुरसति हंदा हट्ट ।।१२१६।।

।। चौपई ।।

राव हमीर यौं कमरि बंधाई, आपणि बैठचौ कदळि परि आई।
जाजन बीरम नखैं बैठाया, महिमा साहि मंगोल बुलाया।
कियो हुकम सकोतरी सेंती, अब यौं ढील करो मति एती।
जबै सकोतरी केलि उड़ाई, जा पहूंती (वा) डोडचां तांई ।।१२१७।।

।। दूहो ।।

म्हांरी सकति डचोढी म्हैं, आगैं नांही जोर।
थां करण मतैं सोही करो, पाछै होसी भोर ।।१२१८।।

।। चौपई ।।

राव हमीर उतरि कै चाल्यो, ढाल खडग हाथ मैं झाल्यो।
जाजन महिमा लारैं लीन्हां, ज्यां सूं मता फेरि यौं कीन्हा।

बीरम मंगोल थां पूठि रखावौ, जो आवै जींनै मारि गिरावौ ।
डेरा मांहि धंसी कैं धाया, जदि महिमां साहि सुलतान बताया ।।१२१९।।

।। दूहो ।।

खंड खंड सुरताण का, आंख्यां देख्या जाय ।
राव हमीर अैसें कहै, मारि गया कोइ आय ।।१२२०।।

।। चौपई ।।

सकोतरी नखैं राव फिरि आयो, आंख्यां देख्यो सो बिरतंत सुणायो ।
फेरि सकोतरी अरज कराई, थां ओरूं देखो आपण जाई ।
ऊतौ उली सुलतांन कहावैं, जींकी चौकी देवता आवैं ।
पीर पैंगंबर रहै सहाय, अब ऊ क्यों करि मारचो जाय ।।१२२१।।

।। दूहो ।।

खडग हाथ मैं काढि कैं, राव गयो यों धाय ।
सारा जैंठै देवता, आडा फिरिया आय ।।१२२२।।

।। चौपई ।।

राव हमीर सूं वैं बतळाया, थां छौ कौण कैंठा सूं आया ।
हूं छूं राव हमीर चहुवाण, म्हे देखबा आया सुरतांण ।
थां तो फिरी अहींटा जावौ, क्यान्है करो खड़ग को घावौ ।
यो थां नखैं नहिं मारचो जाय, ईंनै देवता छैज सहाय ।।१२२३।।

।। दूहो ।।

राव हमीर अहींटो हुवौ, आय मिल्यौ जब साथ ।
अैंठा सूं उठि चालिजे, आवै नांहीं हाथ ।।१२२४।।

।। चौपई ।।

जदी सकोतरी कदलि उडाई, गढ ऊपरि मेल्ह्या जिहां आई ।
राव महिलां मधि बैठचो आय, ठाकुर सारा लिया बुलाय ।
वांसूं बात कही समझाई, पातिसाहि मांहै छै सकळाई ।
अबैं काम कोई गाढौ करो, लडिबा सेती मति कोई डरौ ।।१२२५।।

।। दूहो ।।

कायर डरपै जीव सूं सावंत करै उछाह ।
कै मारै कै (खुद) मरै, ज्यां कुल एही राह ।।१२२६।।

।। चौपई ।।*

जब महिमां राव की या गति देखी, महिमां साहि जीव करचो बबेखी ।
जे भायां सूं यौं बतलायो, राजा कै दिल लड़णो आयो ।
जौ कहुं असी बिधि करै खुदाय, या हम पहिली मारचा जाय ।
तौ इसकै दिल मैं अैसी रहाय, मैं इन काजै मेरा घर बहाय ।१२२७।

अर रहैगी दिल मैं अैसी भाय, तुर्क हैं तुरक मिलैंगे जाय ।
जिस सूं कीजे इसो उपावौ, आपण तमासा पहल बतावो ।
तौ इसकै दिल की गलायरण भागै, जो हम भी बाजि लड़ै इस आगैं ।
तौ इसका मन का भागै भ्रम, यौ हमारे आये का रहेगा ध्रम ।१२२८।

।। दूहो ।।

महिमा कहै मंगोल सूं, भ्रम पड़िया है राव ।
पहिली ही रोळा करौ, कीजै अैसा दाव ।।१२२९।।

मंगोल कहै महिमां सुणौ, जो चिंत तुम्हारै होय ।
करणां होय स कीजिये, ढील करो मति कोय ।।१२३०।।

* यही चौपई सं० ११९५ पर भी ज्यों की त्यों आई है । इससे प्रतीत होता है कि छंद सं० ११९८ से १२२५ का अंश प्रक्षिप्त है । छंद सं० ११९७ के उपरान्त छंद सं० १२२६ का मेल बैठता है । छंद सं० १२९७ पुनरावृत्त होने से निरर्थक है ।

॥ चौपई ॥

इतरी सोचि घराँ उठि आयो, सब मांणस मारि कै जौंहर करायौ।
सब लोथनि कौ कोट दिवायौ, रुहियर सारौ रोकि रखायो।
लोथां परि चादर सेत उढाई, आपण चलि राजा नखि जाई।
अर राजा सेती अरज कराई, टुक चलिये हमारे डेरा तांई।
बुढिया माता मांणस मेरे, उमेदवार दरसण के तेरे ॥१२३१॥

॥ दूहो ॥

महिमां देख्यो रोस मैं, राजा गयो ज पाय।
उठि बैठो होयो तबै, गयो ज डेरै धाय ॥१२३२॥

॥ चौपई ॥

सो रगत सूं भरचो अर आंखि ललाई, जींहै राजा देखि गयो गति प्राई।
राजा आपका मन मैं ईंछै, ईंकै घरि क्यौं कुसल नहीं छै।
राजा कै जिय करुणा आई, ज्यां की साथि घरि गयो चलाई।
कहै थांका मांणस सोही म्हांका, म्हां पंणि दर्सण पावां वांका ॥१२३३॥

जब राजा दरवाजै गयौ, मुंदचो नारदो खोलि कै दयौ।
भभक दे श्रोवण चल्यो बहाई, राजा कै ढिग निकस्यो आई।
राव कहै यो कांइ करायो, महिमां नैं अंदर बुलवायो।
उठाय लूगड़ा अर लोथ बताई, ए हमारा कबीला देखो राई ।१२३४।

महिमां साहि थैं कांईं कीयो, मांणस मारि कोट क्यौं दीयो।
जब महिमा श्रैसें बोल्यो सोई, यो हमरै कारण इतरी होई।
अर तुम चढते हो करण लड़ाई, जौ कहूं तुम्हारा दुसमन मारचा जाई।
तौ तुम्हारे दिल मैं रहती एती, ए तुरक मिलहंगे तुरकौं सेती।१२३५।

ज्यांसूं राजा बहोत खिजाई, थां तो बात बुरी करी भाई ।
नां जाणां कदि होय लड़ाई, थां तो अब ही कुमति कमाई ।
जब महिमां कहै हम मेटचा सांसा, अबै हमांरा देखौ तमासा ।
तुम हमारे काजै एता कीया, जो हम एता न करें तो नांनत
जीया ।।१२३६।।

।। दूहो ।।

(जदि) राव आय दरबार मैं, नांख्यो ख्यौंपाल मराय ।
सोह बैठा देखै सबैं, दीन्हौं माल लुटाय ।।१२३७।।

।। चौपई ।।

जदचां रावजी हुकम करायो, ख्यौंपाल साह तौ तुरक मरायो ।
अर बाण्यां का मांणस मारचा, ते सगळा घींसि कोट सूं डारचा ।
माल मामलौ दियो लुटाई, बहु बेटी (सो) थोरचां हैं दिवाई ।
ओर हैं खाड खिणै जो कोई, आपण ही पडि मरैलो सोई ।।१२३८।।

राव कहै—

।। दूहो ।।

होणहार यौ ही बण्यो, जीं नै मेटै कोय ।
जौंहरि कीन्हौं रावजी, करता करै स होय ।।१२३९।।

।। चौपई ।।

जो महिमां की गति देखी राई, सो ही मन राजा कै आई ।
दरीखानां सूं ऊठि घर मैं गयो, खरो खडग हाथ मैं लयो ।
जायर सगळा माणस मारचा, जौंहरि करचो सब हाथ सिंघारचा ।
देवलदे परि गयो ज जबही, सो कूदि पड़ी पांणी मैं तबही ।।१२४०।।

जदि राजा यौं जौहर कीयौ, सारो धांम लुटाय कैं दीयौ ।
पारस हुतौ सु पदमलै डाल्यो, आपण उतरि दरूजै चाल्यो ।
अग्यारी की सौंज मंगाई, बिप्र बेदंगी लिया बुलाई ।
जाय देहरै होम करायो, महादेव बौह भांति मनायौ ।।१२४१।।

रच्यो होम पांडू की नांई, बेद जुगति सब करी बणाई ।
जीं मधि पुरष परगटचो एकौ, जीं हाथ खड़ग हनुमान बवेको ।
नाम गोरळि बिड़ रूप बैरा रा, ते पूछत निकस्यो राव किसारा ।
कह्यो थांका अरि हैं मारूं जाय, इण बिधि कहि करि चल्यो
ज धाय ।।१२४२।।

।। दूहो ।।

गोरळ कहै हमीर सूं, हू मारूं सुरताण ।
उंह मारयां दळ बोखरै, भागि जाय सौह पांण ।१२४३।

गोरळ गयो सुरताण पैं, निकट पहूंच्यो जाय ।
महादेव आडो फिरचो, अब तूं कोठै जाय ।।१२४४।।

महादेव कहै—

।। दूहों ।।

राव को तप पूरण हुवौ, क्यांन्है करौ उपाव ।
ईं की चौकी देवता, थांको नांही दाव ।।१२४५।।

।। चौपई ।।

ते पतिसाहि नैं मारण गयौ, जीं नैं आडौ रुद्रजी भयौ ।
जीं सूं सिवजी इण विध कही, साहि की तपस्या यौं बाकी रही ।
ऊ तो नखि नहिं मारयो जाय, उंहकी चौकी आप खुदाय ।
और चौकी चोईसूं पीर, ब्रह्मा विष्ण अर हूं भी भीर ।।१२४६।।

अर कह्यो—

छत्री छेह आय कैं गयो, (इं) राजा को तप पूरण भयो।
कुलि तुरकाणौ हूवौ चाहै, हिंदू रहसी कहुं ठाहै ठाहै।
थां अैठा सेती फिरि कैं जावो, थांको चालै न तुरकां परि दावौ।
जब महादेव की अग्या पाई, जब गोरळ राजा पैं आई ।।१२४७।।

राव सूं गोरळ कहैं—

।। दूहो ।।

ए बांणी गोरळ सुणी, कही राव सूं आय।
थांकौ तप पूरण हुवौ, वांनै राम सहाय ।।१२४८।।

राव कहै—

।। दूहो ।।

सारो साथ बुलाय कैं, सीख दई तब राव।
म्हांको तप पूरण हुवौ, थां अपणैं घर जाव ।।१२४९।।

सकल सभा अैसे कहैं, जुद्ध करां महाराज।
एता दिन थां हठ करचो, अब क्यौं करौ अकाज ।।१२५०।।

म्हैं हठ तो पूरण कियौ, अर निरबाह्या बोल।
सीस चढावण म्है कह्यो, महादेव सूं कोल ।।१२५१।।

।। चौपई ।।

जदि होम राव को पूरण भयौ, जब उचाय खड्ग हाथ मैं लयौ।
कहै हूं जुध कांइ तुरकां सूं करूं, सिवजी ऊपरि मस्तक धरूं।
जब रुद्र वांणी बोल्यो अैसें, म्हां परि हत्या दीजै कैसें।
अंछ्या होइस मांगि कै लीजै, इतो कसट कहो क्यान्हैं कीजै ।१२५२।

कहै घर मांणस तो दिया गमाय, अब म्हांरै नखि कांई मांग्यो जाय।
फेरि रुद्र कहै मोसूं नहिं दूरि, जो मांगै ते करूं हजूरि।
जदि बोल्यो राव इसौ वर दीजै, म्हांरो नांव अमर जुग कीजै।
फिरि ईं गढ ऊपरि हठ इसौ न होई, तौ म्हारो नांव मिटै
नहिं कोई ।।१२५३।।

महादेव कहै—

।। दूहो ।।

महादेव कहै हमीर सुंणि, (थारो) नांव अखै भरपूर।
ए धरणी ऊपर डूंगर जितैं, तपै चंद अर सूर ।।१२५४।।

सिंघ विसन सापुरस बयण, केलि फलै इक बार।
त्रिया तेल हमीर हठ, चढै न दूजी बार ।।१२५५।।

।। लघु चौपई ।।

गढ रणथंभ जलहरी राजा हमीर, पूजन कूं जाजा बलवीर।
तुम संकर मैं भगत तुम्हारा, दसूं सीहले संभरिवारा ।।१२५६।।

।। कवित्त छप्पै ।।

रणंतभंवर जलहरी, ईस हमीर गरठवै।
वै जल फूल वे भये, पुरख पूजिवा दीठवै।
असी ताल कै झाल, सेल सबळो संजुत्तौ।
करि गूगळ आरती, पुरिष पूजै ज सपुत्तौ।
तो राव नैं बिवांन खेम कहि, को संकर को भाव धरै।
जाजा जु राय हमीर छलि, सु कंवळसीस पूजा करै ।।१२५७।।

॥ लघु चौपई ॥

संवत तेराहसै'र बावनां, सुकल पच्छि अर मास सावनां ।
नाग पंचमी मंगलवार, तिहिं दिन जूझै संभरिवार ॥१२५८॥*

जब सब उमरावां मतौ उपायो, अबें राव तौ सीस चढायो ।
कहो नैं आपां कांई करस्यां, बिना खावंद (कहौ) क्यों करि लड़स्यां ।
जब बीरम जाजै यौं बातां कही, कांई हुवौ जै राजा नहीं ।
गढ सूं एक एक उतरता जावौ, अर आप आपको चाव दिखावौ ।
॥१२५९॥

इण बिधि सेती करौ लड़ाई, थां मति आंणौ मन मांहि कचाई ।
सकल सभा यौं मतौ उपायो, राव की जागें जाजौ ठहरायो ।
(कहै) सारा माणस उतारि कै दीजे, यौं होय छड़ा अर जुद्ध करीजे ।
जब मांणस सकल उतारि कै दीया, लड़बा का पंण सगळा लीया ।
॥१२६०॥

जदि महिमां साहि नैं इण बिधि कही, तुम्हारी बाजी तो खूब ही रही ।
मिनख सबौं के उतरि कै गए, सब कुसल खेम सूं पहुंचत भए ।
जिनौं की साथि सब मताह चलाई, जो टूटें नहिं पीढौं लग खाई ।
एक एक सब घर का रह्या, राव का घर तो सगला वह्या ॥१२६१॥

वैसे साहिब यौं होय अजायां, अब क्या होहै पीछै पछितायां ।
जिसके राज अैसे सुख पाए, देस परगना मुकते खाए ।
अब जिसका पाछ्या आप सुधारो, और कछु जीय मैं मति बिचारो ।
सब जिसका निमक हलाल करावौ, अब देखैं कैसे हाथ उंचावौ ।
॥१२६२॥

---

*पाठान्तर—तारीख-ए किला रणथम्भोर में यह दोहा निम्न प्रकार है—
संवत तेरह सौ अठबावना, शुक्ल पक्ष और मास सावना ।
नाग पंचमी मंगलवार, ते दिन झांझी संवरवार ॥

जिसने हठ इसी विधि कीया, मिल्या नहि पांणी माथा दीया ।
अब अैसा ही हठ तुम्ही करावौ, रणथंभ (गढ) कूं आब चढावौ ।
सर्बं माल मांमला ज्यों का त्यों है, अब तांई क्यों बिगड्या न क्यौं है ।
वा एक जीव नहीं है राजा, अब जिस ही का सारो काजा ॥१२६३॥

वै तो सिरताज सबके थे ही, पंण लडबा वाळे आपण ए ही ।
उनकैं छतैं तो गफळाई करते, भली बुरी उनकैं सिर धरते ।
अब तो बाजी तुम सूं खाई, अब कैसे बणै करें गफलाई ।
अब तुम आपनी लज्या राखौ, अब गढ ऊपरि तुम ही लाखौं ।१२६४।

जब महिमा सूं उमराव कहाई, यो ही चित म्हांकै पणि आई ।
अब म्हां मरबा सूं कोइ न डरस्यां, थांकौ कह्यो अदुल न करस्यां ।
म्हां पणि जीव की छोड़ी आसा, अब देखो थां म्हां का तमासा ।
हुंकाळि हुंकाळि कै बाजी पडिस्यां, गढ सूं उतरि नचींता लडिस्यां ॥१२६५॥

राव तौ अपघात करि मूवौ, पातिसाहि लौं परगट हूवौ ।
जब दरड़दे पातिसाहि गढ तटि आयो, गढ ऊपरि बिसटाळौ खिदायो ।
कह्यो खोलि दरवाजै आय मिलावौ, जो मांगो ते मनसब पावौ ।
तुम क्या घुसि कैं अन्दर रहै, पातिसाहि नें यौं करि कहै ॥१२६६॥

जदि सब उमरावां यौं कहि भेज्यो, पातिसाहिजी थां सुंणि लीज्यो ।
तूं है राव मिल्यो नहिं म्हैं क्यों मिला, म्हां पणि जाय राव सूं भिळां ।
कह्यो तरवारयां सूं मिलिस्यां थांनै, थां कांइ काचा देखो म्हांनें ।
जदि जाजा हैं सब पूछै जाई, उतरो गढ सूं करां लड़ाई ॥१२६७॥

महिमा कहै जो अग्या पाऊं, पहिली उतरि करि मैं ही जाऊं ।
पहिली पाछै कांई करणों, आखरि छै सबहि नें मरणों ।
कहै थांकै पीछै हूं ही आऊं, यों मति जाणौ ढील लगाऊं ।
वोसरै वौसरै सारा आसी, निंमत प्रमाण सौह जुद्ध करासी ।
सीख मांगि जब महिमा धायो, खिड़की होय उतरि कैं आयो ।१२६८।

महिमा साहि कहै—

॥ दूहो ॥ उपमां को

महिमां मुंजरो करि चालियो, सुंणिज्यो जाजन वीर ।
हम काजै घरि खोइया, धनि धनि राव हमीर ॥१२६६॥

॥ छंद भुजंगी ॥

महिमा साहि चल्या लिया नाम अला, उतरचा गढ सूं करचा काम भला ।
जो पडचा दरड़ाय उपाडि बागें, हद भूत मंडचा पतिसाहि आगें ।
भली मार दई सब दल मांहैं, मार मार करें तोड़ि तोड़ि खांहैं ।
दौड़ि दौड़ि लड़ै जु भरै बल मैं, यौं मरैं सिरदार दुहु दल मैं ।
आम्है साम्है बहैं तरवारि सैलें, मानु कान्ह राधा रस फाग खेलें ।
बहै तीर गोळी मांनु मेघ धारा, जुवांन माते खेद सूंद डारचा ।
जंभदाढ बहै धड़ मैं भचकं, पड़ै लौथि आंतें थचका थचकं ।
पड़ै कालिज फेफरका फरका, फिरैं मीन ज्यौं ताफड़ तूफड़का ।
लोट पोट हुवैं ज फिरैं ढळकैं, भड़ रुंड ही मुंड दहुं दळ कैं ।
धांम धूंम पड़ै करै हांक हांकै, झड़ि झड़ि पड़ैं हाथ पांव फांकैं ।
कड़कड़ाय कै बाह करैं जिसकैं, दोय टूक बरोबरि हो तिसकैं ।
केइ ताफड़ तूफड़ लोटत यौं, झुकि झुकि पड़ैं मतवालेय त्यौं ।
मरद एक नैं लाखौं सुं राड़ि लई, सिंभूं साहि की फौज बिच लाय दई ।
जिनौं फेरे पाछे पाछे पांव दिये, घमसांण मचाण खिल्हांण किये ।
इति देखि कै साहि नें खीज कह्या, लानत कै मारे हौ भागौ कहां ।
साहि बोल सुन्यां किलकारि टुटे, मिलि फौज एको करि आय जुटे ।
हांक हांक भई दहुं त्रफ भारी, लई चोट भली जब फौज सारी ।
एक मेक भए'र झड़ाकि झडं, बजैं हाड़ कड़ाकि कड़ाकि कडं ।
साहि देखें खड़ा खड़ा हाथ मलैं, दुसमन कै घाव सिराह करैं ।
देखो इस मरद का खूब हिया, जिनौं लाखौं सु आय कै लोह किया ।

मीर गाभरू महिमा साहि लड़ै, जिनौं धड़ सूं सीस उतारि पड़ै ।
भए रूंड हि मुंड दुहुं दळ कै, गहि बाथ पछाड़त यौं दरसै ।
जुदा सीस फिरै उछळा उछळा, गह दांतौं सुं तोड़त जाय गळा ।
जिनौं मानी अठारह काटि खाए, टूक टूक भए कहुं नांहि पाए ।
इसी रौस लड़ै महिमां साहि गिरचो, चहुवांन कौ लौन हलाल करचो ।
मीर गाभरू बीजळो खान पड़ै, तीनूं मर्द लड़ाइय एक लड़े ।१२७०।

॥ दूहो ॥

महिमा साहि मीर गाभरू, लड़िया गढ तटि आय ।
साहि जिहां देखै खड़ो, दीन्ही फौज धकाय ।।१२७१।।

(ए) महिमां साहि मीर गाभरू, (ए) पड़चा धरणि मुरझाय ।
जब जाजन जी ऊतरचो, लड़ियो गढ तटि आय ।।१२७२।।

॥ छंद रसावळो ॥

चहुवाण की आण बखाणंत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं ।
बड़गूजर राणं जंग जुडाणं, करि गहि बाणं जाय मंड्यो ।
चिहुं दिस ताणं घन बरसाणं, छेदि पठाणं और गड़चो ।
धमचक्क मचाणं तीर खिल्हाणं, यो सर ताणं पंथ बहं ।
चहुवाण की आण बखाणंत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं।१२७३।

इसौ नर मंटी भरै सर अंटी, बहै सुध संटीय पेल परैं ।
असै सब रट्टिय, कूंण प्रगट्टिय, देखन झंट्टिय मार करैं ।
जिनौ कौज अह्रोट्टिय दाटि दबट्टिय सिंहनी टुट्टिय खड्ग गहं ।
चहुवाण की आण बखाणत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं
।।१२७४।।

तरवारि संभालिय अरि सिर राळिय, फाड़ि निराळिय बेउ बरंग ।
सांचै ज्यौं ढालिय फेरि संभाळिय, बाहि छंछाळिय श्रोवण रंग ।

ओझड़ घालिय इसीय उछालिय, धमचक चालिय लोथि गहं
चहुवाण की आण बखाणंत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं।१२७५।

गैंवर डुंड नहि जिन सुंड, तुरी बिन मुंड ते रंग इसा।
नरांवर झुंड पड़े विपरुंड, पेलै जिम डुंड सरूंज तिसा।
फिरे रूंड मुंड नहीं भुजडंड, केई पग खंड अखंड नहं।
चहुवाण को आण बखाणंत राण भरै भड़ डाण उडाण महं।१२७६।

अणियाली लई अरि छाती दई, उर पार भई भचका भचकं।
धुकि जाय नई तुरकांन मई, गिरि आंत गई थचका थचकं।
धर लोथि छई ज्यों ज्यों चोज भई, रुही खाट बही काहि बाह बहं।
चहुवाण की आण बखाणंत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं।१२७७।

झूझ अघाइय जुगनी धाइय, रुंड चढाइय संकर हैं।
चावंड चाइय प्रेत हंसाइय, रंभा आइय मंक रहै।
रविरत्थ खिचाइय सूरां सुहाइय, रिक्ख नचाइय नारद हैं।
चहुवाण की आण बखाणंत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं।१२७८।

खपुवो नसतां मंडियो गुसतां, धंमका मसतां धाम धमं।
पड़ि लोथि पलत्थौ उलटि उलत्थौ, मारै गलत्थौ घांम घमं।
जोडै हत्थौ बत्था बत्थौ सत्था सत्थौ, बाह बहं।
चहुवाण की आण बखाणंत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं।१२७९।

जुडिया जुध जाजा भारि बिराजा, सु रन साजा खेत लियं।
चिहुं दिस जाजा भाज स भाजा, टलिया राजा टाळकियं।
अखताय अखाजा साहि भी लाजा,........हाय कहं।
चहुवाण की आण बखाणंत राण, भरै भड़ डाण उडाण महं।१२८०।

साहि कहै—

॥ दूहो ॥

जाजन जाजन फौज मैं, अर कितेक जाजन बीर।
क्या जाणूं करते जबै, जे होता राव हंमीर ॥१२८१॥

वीरम कहै—

॥ दूहो ॥

वीरम चढियो साहि परि, सोह देखे उमराव।
कांइ करां राजा नहीं, अबें देखते चाव॥१२८२॥

॥ छन्द ॥

झड़ि जाजन खेत पड़्यो बजरंगी, ऊ उतर्‌यो बीरमदेव अभंगी।
गहि रोळति सांगि धस्यो रण मैं, जिकै जाय पड़्यो तुरकां घण मैं
॥१२८३॥

देखि आवत फौज भयौ तिरछी, अलुखांन कै जाय दई बरछी।
घम्म छाति दई उर पार बढी, मानु जाल मैं मीन ज्यौं मुख्ख कढी
॥१२८४॥

जो हलाय कै काढि लई पल मैं, अति रोस भर्‌यो'र भयो बल मैं
और कै जाय दई ज इसी, दोय च्यारि कै फोड़ि परें निकसी।१२८५।

रण ऊपरि साहि यौं हाथि मलै, जुध खेत मंडयो सत पौळि तलै।
सुरताण कहै कोइ है बे इसा, अलुखांन कै बैर कु काढै तिसा।१२८६।

जब लोग सबै किलकारि टुट्यो, जीसु खान ततारखां आय जुट्यो।
उन बाह करी इन झेल लई, बीर बाह करी जिरह टूटि गई।१२८७।

कड़ी फूटि बगतर रंत रनी, जो दुरंग भयौ ज झुक्यो धरनी।
पीछै खांन हुसैन नैं बाह करी, कर कंपत की बिधि थोड़ि परी।१२८८।

जिह कैं फिरि औझड़ सीस दई, मांनु चोट सु डोट उभंटि गई।
फिरि जैन अलावदी आणि घली, जिंहि की तरवारि भी ढाल
झिली॥१२८९॥

तिह कै खीजि खडग इसौ हि दयौ, ते टूटि खडग दोय खंड भयौ ।
जद्दि ग्रांडौ पठाए ज ग्रौर ग्रायौ, जिहि ऊपरि खपुवा काढि घायौ ।
॥१२६०॥

उर मांहि दई जंभ डाढ इसी, जिकै पौंचा सवाएिय जाय धंसी ।
पांच सात कटारी सुं ग्रौर ढाया, जिकै तीर तरवारि सुं मारि लाया ॥१२६१॥

यौं साहि कहैं है जुवांन किसे, बिनां खावंद ग्राय मरे है इसे ।
गढ कोट सुं देखैं तमासा खड़ै, वै बीरमदेव तौ खेत पड़ै ॥१२६२॥

॥ दूहो ॥

ग्रलूखांन ततारखां, पहली मारंचा धाय ।
हुसैन खां जैन ग्रलावदी, बीरम सार बजाय ॥१२६३॥

भोजदेव कहैं भोजराज सूं, थां तौ सही हरोळ ।
थे चालौ म्हैं ग्रावां ग्रबै, म्हां थां एही कौल ॥१२६४॥

॥ छन्द भुजंगो ॥

उतरचौ भोजराजि ते गाजि परचो, धंमचक्र मांहै भलो काज करचो ।
तरवारिन मारि गिराय दियं, हिंदवांन पठान जे जाय लियं ।१२६५।

धंमरोळि जराजरि होय गई, जमरोळि बरार्बरि दोय भई ।
उड़ै सार ग्रपार नचीं जुगती, जु भुखाळ भुखाळ ग्रंची दुगनी ।१२६६।

रहसी बहसी जहां रंभ फिरै, सूरवां पूरवां बर ग्राज बरै ।
प्रेत कौ खेत महा किलक्यो, ध्यान छोड़ि कै दिखि रिखी किलक्यो
।।१२६७।।

महादेव नैं ख्यास कै आस करी, रुंड मुंड की माल तौ आजि जुरी।
अर ग्रिद्ध कैं ब्रिध भई इधिकी, रणथंभ अचंभ इसो बिधि की।१२९८।

हनुमान बिवांन ज्यौं आय गयौ, देखि भूप का रूप हैं राजि भयौ।
चहुवांन को मान अधिक्क बढ्यौ, महीपति प्रमांन बिवांन चढ्यौ
॥१२९९॥

सुरतांन कौ मान कछू न रह्यौ, जिहैं साहि सिराहि कै ग्रैसें कह्यौ।
ग्रैसे ग्रैसै हैं रंघड़ ग्रौरूं किते, हांकि हांकि बुलावौ ज्यों ग्रावै जितै
॥१३००॥

लरतैं मरतैं जु नहीं डरते, ए राव की लार यौं क्या करते।
तुम खोलो किंवाड़ ध्रमद्वार दिया, सर्ब गुन्हांहे गुन्हां बकसीस किया
॥१३०१॥

जित तित जावौ सो तो बेग जावौ, जू सर्ब ग्रावौ मनसब पावौ।
तौ नैं माराह थारा जीव सेती, ग्रब सांच कहां म्हां सांच सेती
॥१३०२॥

॥ दूहौ ॥

भोजराज लड़ि पड्यो खेत मैं, बरंगना ले गई ताहि।
जबै भोजदेवजी ऊतरचो, ग्रब हूं मिलस्यौं पतिसाहि ॥१३०३॥

भोजदेव कहै सुरतांण सूं, ग्रब मनसब म्हांनै देव।
थे चढि ग्रावौ बेगदे, यौं मुंजरो म्हांकौ लेव ॥१३०४॥

॥ छन्द दोधक ॥

धस्यो भोजदेव महा बरबीर, इसौ मंड्यो जाय धरैं मनधीर।
जीं काढि खड्ग लियौ कर मैं, ललकारि पड्यो ज नरां नर मैं।१३०५।

जिंहि ऊपरि जाय कै बाह करैं, जींको टूटि दड़ी सौं सीस परैं ।
भचक भयो पतिसाहि कहै, बिना खावंद देखो तो राड़ि जुहै ।१३०६।

तूं तौ दूरि ऊभौ भोजदेव चुवै, रए आय मंडो तो खबरि हुवै ।
जब साहि कहै तूं आव उरैं, सबं आय मिलौ नहीं होय बुरैं ।१३०७।

गढ खाली करौ जागै छोड़ि देवौ, तुम मांगौ सोहो मनसब लेवौ ।
मनसब गयौ म्हांको राव लारैं, अब कांईं होस्यां तुरकां कै सारैं
।।१३०८।।

तूं तौ यौं समझै गढ आवै म्हारै, यौ बहौत खायां गढ आसी थारै ।
इसी बात कही फिरि जाय मंड्यो, सुरताण को भाणिजो जाय
खंड्यौ ।।१३०९।।

जिकै मारि तरवारि गिराय दियौ, अर हांकि कहै मनसब लियौ ।
सुरतांण नैं लोगा हैं गालि काढी, जबै उमराँवां हैं चौंप चाढी।१३१०।

जसपाल तूंवर जीं आडो भयो, चहुवाण कै आंणि कै घाव दयो ।
जदि भोजदेव नैं लोह चख्यो, जिकै मारि तरवारि गिराय रख्यो
।१३११।

तेजपाल तूंवर नै हांकि कह्यो, म्हारा भाई हैं मारि कै तूंज रह्यो ।
भैभीत थका दोउ अै साज लड्या, घमसाए मंच्यौ दोउ खेत पड्या
।१३१२।

हिन्दू तुरक खड़ा घाघरट्ट तहाँ, पातिसाहि खड्यौ दोउ पीर जहां ।

।। दूहो ।।

भोजदेव जदि झड़ि पड़्यो, उतरच्यो बाहड़ देव ।
रएतभँवर बिचि रए भयो, दुहुं त्रफ देखैं भेव ।।१३१३।।

॥ छन्द त्रिभंगी ॥

बाहड़देव टुट्यो, मांनु सिंघ छुट्यो, जंगजाय जुटयो, जिकैं देय अड़ी ।
भड़ धाय पड्यो, इसौ जाय लड्यौ, जहां खेत झड्यौ केइ लोथि पड़ी
॥१३१४॥

रण छाकि गयौ, गलियार भयौ, अरि मारि दयौ जरकां जरकं ।
कड़कड़ाय अड्यो, महासार झड्यो, अरि हाड घड्यो बरका बरकं
॥१३१५॥

मार मार करैं घनसार परैं, नहीं पांव टरैं जिम बालि सुता ।
लड़ै सर्व खांन, मच्यै घमसांन, जिते हिंदवान सु आय जुता॥१३१६॥

मड्यो इक सूर महाबल पूर, करी जिन चूर बराबर की ।
जिहि नाँव अजब, बडौ मनसब, करी जिन दब जरा जर की ।१३१७॥

भई अतिमार झड्यो घनसार, बकारि बकारि कहै झटका ।
लुहौ बाहड़राय पड्यो अरड़ाय, पुंवार गिराय किया कुटका
॥१३१८॥

जठैं फतेखांन, गौरी मरदान बड़ो हि जुवान जे आडौ फिरचौ ।
दोऊ भयभीत दिक्या बिपरीत, न को सकैं जीत न कोई गिरचौ
॥१३१९॥

जबैं खूरमखान गौरी मरदांन, महाबल हान नैं भार करी ।
इस्या ही अटल्ल जुप्या जिम मल्ल, देखैं सर्व दल्ल जु लाख परी
॥१३२०॥

गिरचा गिरैं होय बच्या नहीं कोय, हजारौं मैं सोय ज मारि लिया ।
जु मलै साहि हत्थ मरया सब सत्थ, इसा अनरत्थ कहुं न भया
॥१३२१॥

॥ सोरठो ॥

बाहड़ पड़ियो खेत, देख्यौ सारां कोट सूं ।
(जब) नरसिंघ कीन्हौ हेत, आय मंड्यो सब साथ ले ।१३२२।

॥ दूहो ॥

बाहड़ बरियो बरंगना, पहरि गई बरमाळ ।
(अब) चौसठि तौ तृपती करी, ज्यौं बरषा बरसाळ ॥१३२३॥

॥ छंद नराज ॥ (लघु बीर बिराज)

भलौ लार सत्थं गहैं सांगि हत्थं, मंडचौ आय खेतं घमाघंम देतं ।
भए खांन साम्हे भलै ही हंगामै, जुड़ी जंग भारी घमाघंमकारी ।
करी जो तिरच्छी चलाई बरच्छी, पार (जाय) कढी मनु मेख गढ़ी ।
सबै साथ मंडै जिनौं हाथ खंडै, बड़ाबड्डि बाहै सड़ा सड्डि साहै ।
कड़ा कडि पांची सड़ा सड़ि सांची, बहै धार एती बळाबळि सेती ।
घंमै चक्र मांतौ फिरैं रंगरातौ, बड़ाबड्डि झाड़ै सड़ासड्डि ताड़ै ।
हीकै हीक चोटैं उडै मुंडि डोटैं, रूड़ै दूरि जाई गिरैं धर धाई ।
तड़ातडि तूटैं अड़ाअडि जूटैं, उभै राड़ि कीन्हं लड़ै दोइ दीनं ।
मुरैखांन टूटौ नरैसिंघ जूटौ, जिकै सीह जारी करी बाहभारी ।
इसी जिन्न घाली करी दो निराली, मनु सूर आयो नरां परि धायो ।
दुहुं जुद्ध कीन्हौं जबै घाव भीनौं, चिग (त्ता) समेतं राख्यो मारि खेतं ।
नूर खांन गोरी नरैं बाह जोरी, दोउ लत्थपत्थं पड़ै एक सत्थं ।
रजटपूत औरं लड़ै दौरिदौरं, जिनौं और मारे टरै नांहि टारे ।
कुछाहो अभंगी करी आय जंगी, केई खान आया जिनौं वै गिराया ।
कुछाहो ज लीयो इसो जुद्ध कीयौ, खांन पांच ज्यांही लियो साथ त्यांही।
इसी रौस भूझ्यौ, स्वाम धर्म बूझ्यौं ॥१३२४॥

॥ सोरठो ॥

खड़ियौ नरसिंघदेव, दहुंदळ देख्यो खरो ।
बछराज उतरचौ तेव, आय लड़चौ संग साथ सूं ॥१३२५॥

॥ दूहो ॥

च्यारि पहरि भारथ करचौ, नरसिंघ पड़ियो घाय ।
ल्हस्कर यौं सुरताण कै, मांचि रहि हाय हाय ॥१३२६॥

सौह भड़ चालौ सांतरा, सिल्है सुरंगा साज ।
या छै जान हमीर की, चढि चाल्यो बछराज ॥१३२७॥

॥ छन्द ॥

हवै बछराज धंस्यौ, जबै जमराज हंस्यौ,
भला रजपूत साथैं, कढी तरवार हाथैं ।
जिकैं रण घाय पड़चौ, जठै सुरताण खड़्यो ।
नखैं उमराव इसा, मनु पतिसाहि तिसा,
जठैं जाय लोह करचौ, तठै पतिसाहि डरचौ ॥
सबै भड़ कोपि कियं, बड़ाबडि मारि दियं ।
पड़ै तरवारि घणी, झड़ाझड़ि डीलां बणी,
झबाझबि गेरि कड़ी, भसुंडन डंड पड़ी,
जहां मूसेंखान ढहचो, जबैं साहि ध्रिग कहचौ ॥
भयौ सेरखांन आड़ौ, लड़ै चहुवांन जाडौ,
जिकै बछराज रुव्यौ, पड़चो सेरखान दिख्यौ ।
धंस्यौ पीरखांन जिको, पड़चो उह आनि तिको ।
पछै ताजखांन लड़्यौ, तठै बछराज पड़चौ ।
बच्या रजपूत जिके, मंडचा रुंड मुंड तिकै ।
जिनो गौरी एक हरचौ, जादू एक आडौ फिरचौ ॥
भली रहचक्क भई, धरा घरा लोथि छई ।
पड़चा सब एक मेके, जादू गिरचो राखि टेकैं ।
जादू जब ओर छुटे, पड़ै घमसाण कुटे ।
सबै साथि मारि लियं, पडै झड़ि-कूट कीयं ॥१३२८॥

॥ दूहो ॥

सवा लाख सुरतांण दळ, एक सहंस बछराज ।
सावंत सारा झड़ि पड़्या, स्वाम धरम कै काज ॥१३२९॥

॥ सोरठो ॥

खेत पड़्यो बछराज, सारां देख्यो कोट सूं ।
जदि उतर्‌यो हरिराज, बिरसिंघदेव अर भींवजो ॥१३३०॥

॥ दूहो ॥

हुवौ नगारो भींव कौ, पतिसाहि मांनी सांक ।
कोको डरै नकीब सूं, ल्हस्कर करबे हांक ॥१३३१॥

॥ छन्द ॥

उह अैसो छछोहो ते आय गयौ, सब साथ ले खेत मैं ठाढो भयौ ।
साहि कहै अबैं मति मरो, तुम लेव विलायत खूबी करौ ।
अब जावौ फिरौ उहां जाय कहौ, सारे यौं ही अनाहक काहे बहौ ।
बोल्या म्हां तो थां पासि आवांहछता, कोई आवै नखैं जिह सुं होय मता ।
तुम हथ्यार हाथ सूं दूरि धरौ, अैसे होय नंगे अर बात करौ ।
कहै म्हांहैं हथ्यार तौ राम दिया, अब तो नहीं होय छै दूरि किया ।
दीयां धर्म छत्री को नांही रहै, यौं सुणौं मियां चहुवांण कहै ।
पति साहि कहै अब मारे जावौ, तुम डालो सिल्है हम पासि आवौ ।
उन एती कही उरड़ाया इसा, पड्या जे पवन का पूत तिसा ।
ज्यां कैई नर जाय गिराय दिया, वड़ाबड़ा देखि उमराव लिया ।
ज्यांसु खांन पेरोज आय साम्हो अड़्यो, भड़ सूर एक जिहिं हाथ झड़्यो ।
जिह साम्हो एक राठोड़ जुड़्यो, राठोड़ गिर्‌यो हरी नांहि मुड़्यो ।
जहां अैसी ही बागड़दोड़ मची, महा जाणिक गींदड़ खेल रची ।
जिहिं आडो एक कूरमराव आयो, ऊ जिके दलकारि कैं चूरि घायो ।

जीं चहुवांन सुं आनि दकाल करे, जे जानु जुरासिंध भींव अरे ।
वै अटल बराबरि दोऊ महा, जु दोऊ बलवान टळै ज कहा ।
यौं भयो जुध तेज कूंण कहै, जुं कवीश्वर नांहि न छोव लहै ।
जो मंडया अदभूत ते होय तकै, जे लड़या घड़ि च्यारि लौं बेउ जके ।
जठै कूरंम पड्यो चहुवान बच्यो, यौं जब लग रवि नैं रत्थ खंच्यो ।
यौं जबैं घमसाण पठांण करी, जहां केई तरवारि ज लाख परी ।
यौं मारयो हरिराज सुं साथ सुधा, सु पचो रणबीच पड़या न जुदा ॥१३३२॥

॥ दूहो ॥

हरिराज पड़यौ झड़ि खेत मैं, उतर्यो बील्हणदेव ।
साथ लिया रजपूत बौह, भाइ भतीजा तेव ॥१३३३॥

भींव पछैं बील्हण लड़ै, भाइ भतीजा लार ।
साहि देखि साकृति रह्यौ, इनौं ल्हस्कर नांख्या मार ।१३३४।

॥ छन्द ॥

धंस्यो करि केसर्या बागा संवारि महा, कस्या तन भूषन कंचन जानि कहा ।
तन मैं घनसार कुसुम की हार गलैं, बन्यां सब दूल्है साथ हसंत चलै ।
जर हथ्यार मंड्या कंध सांगि धरी, ठई सिंधु जांगड़ हूंकळ राग करी ।
कर्‌यौ परपंच बसीठ चलायो अगैं, अबैं सुरतांण कै पायन आय लगैं ।
भयौ पतिसाहि खुसी तुम बेग आवौ, निधड़क साथ खड़ौ सब देखैं चावौ ।
जब चहुवांन चले अहि फैंन फुले, अमल आरोगि जरी पोस्याख खुले ।
इमा दरड़ाय गयो रह्यो साहि थोड़ौ, साहि हुकम्म करै हथियार छोड़ौ ।
यौं चहुवान कहै धरती न भिलै, म्हां तौ इसी ही रौस पतिसाहि मिलै ।
गुंवारि टेक न मिटै जैनखांन भख्यो, सुणी बील्हण खड़ग जिण सीस नख्यो ।

सात हजारी कौ सीस पल मांहि तोड़्यो, रपट्यो सब साथ भलौ तब
हाथ जोड़्यौ ।
पांच सात हजारी गिर्या उंमराव, लड़्यौ चहुवांन इसो करि दाव ।
मार्या सदी मनसब गिन्या नहीं जाय, जे पतिसाहि सुनै'र महा
पछिताय ।
अधिक हाल कलोल भयो ज इसौ, मनु महा परळै जुग होय तिसौ ।
ज्यों बकारि नरसिंघ हनुमान आयो, सौह गन गंध्रप देवता चाव धायौ ।
रिख नारद नाचत रुद्र जाग्यो, जिके रूंडमाल काजें हंसि आय लाग्यो ।
मिली रभा जुगंनी मंगलचार कर्‌यो, जहां प्रेत पलच्चर ग्रिभ व्यांत
जुर्‌यो ।
यौं चावंड चाव अघाय कंकाळि रजी, जिकें आय कैं गाय बिड़द
बोलि गजी ।
अबैं त्रपति भई प्रिथिराज पछै, म्हां हैं चहुवांन बिना औरकूं ण पुछै ।
इण घराणां की होड न कोइ करै, छत्री और न मरबा हैं जीव धरै ।
हूंता तुंवर पंवार ते टूटि गया, राव राठौड़ तुरकां कै सा'रै भया ।
केई बड़ गूजर सोलंखी आधि छंता, इसा जुध बाबति नहिं भता ।
अर कूरमराव अबैं चढता, ज्यांकै घर छै बुधिवंत मता ।
तपै सीसद रांण पछिमांन धनी, तिके करि न सकै इसी करनी ।
अबैं फिरि इसड़ा जुद्ध न होय कहीं, कहूं जबै लगि कलिजुग रजि सही ।
यौं अघाय कंकाली चहुवांन सुनी, घावां भिळी बिलोय कै सीस धुनी ।
जीं दिन प्रातर सांझ लौं राड़ि भई, भर्‌या पोखर खाळ रगत्त मई ।
बौह लोथ्यां पुळ बंधाय'र खोह भरी, जठै रुंड मुंड फिरे जु अनंत
तिरी ।
जे दिन असत भयो ज जड़यौ झड़ि कै, जिहि दोल्यौं सावंत लोग
पड्यो अड़ि कै ।।१३३५।।

॥ दूहो ॥

सावंत राव हमीर का, एक सूं एक सरस ।
ज्यां पाछ्यौ कीन्हों ऊजलो, लड़िया ड्योढ बरस ।।१३३६।।

जे सारा लड़ता एकठा, देता साहि भगाय ।
लाडा बिना जनेतियां, कीन्हौं जुद्ध अघाय ।।१३३७।।

इतना सावंत लड़ि चुक्या, अब सब कहूं सुणाय ।
आप आपकौ साथ ले, दिन उठि लड़ै जु धाय ।।१३३८।।

ए उमराव लड़िया जिता, राव बराबरि डील ।
एकैं कांसैं जीमता, करि करि हांसै क्रील ।।१३३९।।

उमराव लोग आड़ा जिता, हुता सकल सिरदार ।
ज्यां यो पाछ्यो सुधारियो, लड़िया एकोकार ।।१३४०।।

मंडिया सकल बंधेज करि, कोइ न टलियो मूळि ।
उतरि उतरि गढ सूं लड़्या, हो गया राव समतूलि ।१३४१।

आप आपकौ साथि लै, गढ तटि लड़िया आय ।
इतरा भाव प्रकासिया, और न गिणिया जाय ।।१३४२।।

।। लघु चौपई ।।

सकल साथ गढ सूं उतरि लड़्यौ, राव अंतेवर को जौहर करयो ।
एक सुं एक लड़्यौ जाय आधौ, पातिसाहि इसे हठ लाग्यौ ।१३४३।

।। छंद भुजंगी ।।

(सकल उमराब बखाण)

उतर्यौ चहुवान जुवांन बछौ, करि केसर्यां साज सुं साथ कछौ ।
उतर्यौ चहुंवान दीवान हंसौ, उतर्यो अखैराज द्यौराज जसौ ।
उतर्यौ चन्द्रसेन बुघल सांगौ, उतर्यौ कन्हीराम ते डालु गांगौ ।
उतर्यौ जगरूप अनोपौ भाटी, उतर्यौ जगदेव जैदेव मांटी ।
उतर्यौ हरिराम स्योराम रामो, उतर्यौ दलपति'र जोध भांमौ ।
उतर्यौ भठ संकर सिभुदेवो, उतर्यौ महादेव'र भट्ट सेवो ।

उतर्यौ अभै चारण और रासौ, उतर्यौ महराज गंगेव आसौ ।
उतर्यौ खेम भाट को पूत पूरौ, उतर्यौ भाट तेजसी राघौ सूरौ ।
उतर्यौ ब्रंभनाथ ते जोगी लडयो, उतर्यौ पुरी खेम सन्यासो पड्यो ।
उतर्यौ हरिबंस अहीर रूपौ, उतर्यौ किसनौ बिसनौ अर जाट कूंपौ ।
उतर्यौ महासिंघ'र देदौ दासौ, उतर्यौ बनवारी महेस आसौ ।
उतर्यौ चहुवान किलाणमलं, उतर्यौ चहुवान ते बैरिसल ।
उतर्यौ चहुवान ते भारत्थ भडं, उतर्यौ चहुवान सौह जाय लडं ।
उतर्यौ बड़गूजर राजसिंघं, उतर्यौ हरिराज ते जोडि जंघं ।
उतर्यौ हेमराज सोलंखी इसौ, उतर्यौ जगराज ब्रिराज तिसौ ।
उतर्यौ गजसिंघ राठौड़ जहां, उतर्यौ हरिसिंघ कुछा हौ तहां ।
उतर्यौ रामचंद तुंवर तिके, लियां आपसौ आपहि साथ जिके ।
उतर्यौ अभैरांम पंवार सरू, उतर्यौ नरू भाइ सौं भाइ हरू ।
उतर्यौ हररूप सीसोद सूरो, उतर्यौ जगरूप'र राव्र पूरो ।
उतर्यौ हरिभान ते गौड़ भाऊ, उतर्यौ ब्रिषभान नरेस राऊ ।
उतर्यौ बीरभान'र भारमलं, उतर्यौ ब्रिजराज महाज दलं ।
उतर्यौ सूरसैन'र भींव हरी, उतर्यौ संग जाहम बांधि करी ।
उतर्यौ भड़ बेणियदास भींवो, उतर्यौ हरिदास ख्यौंराज खींवौ ।
उतर्यौ हरिराम जैराम संगे, उतर्यौ जगराम स्योरांम जंगे ।
उतर्यौ मनदास चंदेल चंदौ, उतर्यौ निरवाण बिहारी नंदो ।
उतर्यौ खींची थानों सुजाण सूजो, उतर्यौ जगनाथ हमीर दूजौ ।
उतर्यौ जगदेव जैदेव मलौ, उतर्यौ फतेसिंघ जैसिंघ कलौ ।
उतर्यौ हरिनाथ मदन महा, उतर्यौ हरदत्त करण कहा ।
उतर्यौ धरणीधर धीरधरं, उतर्यौ दलमति ते बीरवरं ।
उतर्यौ उदैसिंघ'र बालचंदं, उतर्यौ छत्रसेन महाजनंदं ।
उतर्यौ धर्मपाळ डालु जिकौ, उतर्यौ जसपाल निहाल तिकौ ।
उतर्यौ क्रमसेण सुजाण देवौ, उतर्यौ मनोराम पंवार सेवौ ।
उतर्यौ जगमाल पूरणमलं, उतर्यौ अणीराय बड़ो अटलं ।

उतर्‌यौ खांडेराय ते सोनिगरो, उतर्‌यौ हरिचंद बिक्रम खरो ।
उतर्‌यौ जगजीवणदास अभौ, उतर्‌यौ बलि राम'र स्याम सभौ ।
उतर्‌यौ अमरेस नरेस नरो, उतर्‌यौ चक्रपांण किलांण करौ ।
उतर्‌यौ धर्मदास'र तेज दुदो, उतर्‌यौ धनजी अर राव उदौ ।
उतर्‌यौ सुखदेव'र नाथ राजौ, उतर्‌यौ जसवंत पंवार जाजौ ।
उतर्‌यौ महासिंघ राठौड़ खेमौ, उतर्‌यौ उदैसिंघ कूरंभ पेमौ ।
उतर्‌यौ हठीसिंघ तुंवर लालो, उतर्‌यौ थांनसिंघ गवड़ बालो ।
उतर्‌यौ ब्रंभदास नवल सादौ, उतर्‌यौ गंगदास'र वासु बादौ ।
उतर्‌यौ मदसूदन पांडे लड़्यो, उतर्‌यौ घणस्यांम ते जोसी पड़्यो ।
उतर्‌यौ हरिदत्त स्योदत्त हेमो, उतर्‌यौ रूघनाथ'र ब्रंभ पेमो ।
उतर्‌यौ खतरी सबलेस जपै, उतर्‌यौ जिण बंधू आठ तपै ।
उतर्‌यौ भइया आणंदचंद लर्‌यो, उतर्‌यौ भइया साहिबराय पर्‌यो ।
उतर्‌यौ चतरू जसु साहि धंस्यो, उतर्‌यौ धरमु करमु ज फंस्यौ ।
उतर्‌यौ केसराज सह रसियो, उतर्‌यौ खींवसी डूंगरसी हरियौ ।
उतर्‌यौ बिसनौं किसनौं जगल्यो, उतर्‌यौ मदन्यो जगन्यो दमल्यो ।
उतर्‌यौ दुरग्यो देइदास कलौ, उतर्‌यौ बिरम्यौं जगसी'र सांगो ।
उतर्‌यौ रणमल ते ताजी मीणौं, उतर्‌यौ हठीमल'र डालू जीणौं ।
उतर्‌यौ अभैराज मोहन दांमो, उतर्‌यौ धनराज किलाण नामौ ।
उतर्‌यौ खेमदास गूजर इसो, उतर्‌यौ पांच सात सुं सूर तिसौ ।
उतरी सब पौंणि तो टूटि परी, अपनी अपनी करनी ज करी ।
जठै खाळ प्रनाळ रगत बह्यो, इसी कीच मची बरसाळ कह्यो ।
बौहरू सब पोखर खाल भरे, सीढी चौग्रिद लोथिन पाळि करे ।
हाथ पांव का टूक ज्यौं मच्छ फिरै, पड़ी धड़ लोथि ते मगर तिरै ।
यौं दादुर सबद कराह भई, पड़ी कसावट केंकड़ा जेम तई ।
सिबाल सिंवाळ ज्यों फैलि खुले, मुख सूरवां जेम कंवळ फुले ।
जिण सोभत चखि ते भंवर बसै, अरि सोर करै तिकै भोर तिसै ।
पणिहारी चौसठि भरत घटे, बण्यो मानसरोवरि गढ तटे ।।१३४४।।

।। दूहो ।।

उतरि उतरि इण बिधि लड़्या, राव पछै सब लोग ।
मास अठारह रण रह्यो, गढ रणथंभ मधि सोग ।।१३४५।।

जदां गढ खाली भयो, ऊपरि रह्यो न कोय ।
खबरि मंगाई साहि नै, जदि गढि चढियो सोय ।।१३४६।।

सकल लोग लड़ि मरि चुक्यो, मिटि गइ सबही सांकि ।
गढ खाली सूनो देखि (करि), जब ऊपरि चढियो हांकि ।१३४७।

आगैं फौज चलाय करि, सब पोळयां दई खुलाय ।
रचौंपाल साह आगैं कर्‍यो, (जिके) ठांव बतावत जाय ।।१३४८।।

।। कवित्त छप्पै ।।

तेराहसै'र तरेपनां, माह सुदि ग्यारस मंगल ।
अलावदीन छत्रपति लियो रणथंभ करि कंदल ।
सुणि बिध्यांन हमीर, चित हरि चरणां लायो ।
दरवाजै सतपौळि ईस कूं सीस चढायो ।
तो जेत सुतन जुग जुग अमर, कहै खेम जस निर्मल पढ्यो ।
पग पांणी भेद बक्काळ कै, सु पातिसाहि गढ पर चढ्यो।१३४९।

चढि दरवाजै एक दूजे दरवाजै चढियो ।
जहंठै रजपूत हेक अटकि खूंणा सूं रहियो ।
जे बिगर सीस धड़ खड़ो जीव डुलै क्रोड़ि मांही ।
कहै कटारी कमरि मधि रही जिकै मैं कहुं न बाही ।
देखि जलेबदार ठोसो दियो, वो पकडि हाथ लियो तिके ।
जींकै कटारी दोय उर मैं दई, यो मारि ढेर हूवो जिकै ।१३५०।

।। दूहो ।।

देखौ ओरूं घुसि रहै, ढूंढो सगळी ठोर ।
या मूवा ही ले मुवा, नींकैं देखो ओर ।।१३५१।।

जीहैं साहि देखि साक्रत रह्यो, पांणिय बखाणे जौस ।
या हिन्दु मरचा ही ले मुवा, देखो इसका रोस ।।१३५२।।

।। कवित्त छप्पै ।।

जदि आगैं चढियो हांकि, पंथ मधि लोथ हि लोथ्यां ।
पग पग पड़्या मिनख, होय रह्या लांथकपोथ्यां ।
जदी चल्यो जठै गयौ, राव कौ सीस सिव पर ।
जिकै बतायो रचौपाल, साहि हैं उंचाय पग कर ।
जींहैं देखि साहि ऊभौ रह्यौ, जो मानु हु सीस अब हंसि उठै ।
धड़ बिवांण जे ले गयौ, जाय बरंगना बरियो जठै ।।१३५३।।

।। दूहो ।।

साहि देख्यो जब लग रह्यो, सीस पणि गयो बिलाय ।
रुंडमाल सिव (गल) करी, राख्यों अपणै पाय ।।१३५४।।

।। कवित छप्पै ।।

जींहै पूछै सुरतांण, इसकैं तूं कब का नौकर ।
क्या खिजमति तुझै रहैं, सोही सांच बोल मुंह कर ।
जदि बोल्यो रचौंपाल, हम सात पुस्त के सेवा ।
सर्ब घर के परधांन, निमक हांडी मैं देवा ।
यौं सुणि कै साहि मन सोचियो, इह ओरूं बुराई लेयगा ।
ईं नै राव सूं असी करों, स्युं मुझि बफादारी क्या देयगा ।।१३५५।।

जब ख्यास करै पतिसाहि, इसा नर नखैं नहीं रखरणां ।
ईनैं मराया रजपूत, इह भी मारि कै नखरणा ।
मैं दिया इसैं बचन, कह्या तुझै सबं ऊपरि रक्खूं ।
यौं बचन भी रह ज़ाय, और इसैं मारि कै नक्खूं ।
जब साहि यौं हुकम कराइयौ, केइ मंगाय लोथि इकठी करी ।
ज्यां ऊपरि रचौंपाल चढाइयौ, इरण बिधि कंठ दीन्ही छुरी ।१३५६।

साहि कहै सकल सूं—

॥ दूहो ॥

हम तौ डिल्ली जाय थे, (या) बरिणयां ल्याया फेरि ।
इतनौं का निंमत (गढ सूं) लिख्या, सो परिण ल्याया घेरि ॥१३५७॥

॥ कवित छप्पै ॥

जब उपरि चढ्यो सुरतांन, राव कै घरां मधि गइयो ।
जो देखै तो जाय सबं, घर लोथ्यां भरियौ ।
अस्त्री पड़ी अनंत, जिके गिणती नही जाई ।
देखि भयौ भै चक्रित, म्रितक सब रही बसाईं ।
सो देखि करि औहौटौ बाहुड़्यो, चौग्रिद सकल गढ मैं फिरचौ ।
पग धरबे कूं नहिं ठौर, सकल गढ लोथ्यां भर्‌यौ ॥१३५८॥

सब घर बास सिडाय, सकल मूंदि नाक हैं डोलै ।
इसड़ौ देखि बिरतंत, जबं साहि यौं मुख बोलै ।
इहां बैठन की नहीं ठौर, कुंरण रहसो इह थांणै ।
कछु एक कोट पड़ाय, चलौ उठि इह हम जांणै ।
जे ऊतरि आयौ घड़ी च्यारि रहि, अति ही दरेग मन मैं कियौ ।
इहां लाखों लोग खपाय करि, इह हठ सेती गढ (मैं)लियो ।१३५९।

।। दूहो ।।

मन पछितावै साहि अति, लीन्हौं उजीर बुलाय ।
कहौ किते लोग मारे गये, सुमार करौ तौ जाय ।।१३६०।।

उजीर कहै पतिसाह सूं, आठ लाख उमराव ।
ग्यारह लाख पैदल मुए, एक लाख मरै राव ।।१३६१।।

जो हमीर मरता नहीं, करता किसके काम ।
सारी पतिसाही खपि गई, नींठ लई इह ठांम ।।१३६२।।

।। कवित्त छप्पै ।।

दिल सोचै पतिसाहि, दरेग मन मैं इत कीन्हां ।
इस टोले के काज, इसा अपराध ज कीन्हां ।
किता एक जीवरण अबैं, इसा अहंकार बंधाया ।
मैं समझाया सौ बेर, हिंदू कैं दाय न आया ।
मैं बिलायत इतनी लई, इसे जौहर कहुं नां भए ।
हम हाथ झाड़ि घरि उठि चले, ए गढ ठिकाणे ही रहि गए ।१३६३।

बीस लाख इहां मुवे, लाख दस गळी जागां ।
इतने मांणस मरे, जिके अजाब मुझि हैं लागा ।
खुरक जीव गिणौ कुंण, पसु पंछी संग मुए ।
एक मेरे जीव कै काज, मिहनती मुए स जुए ।
अब मुझि जीवरण थोड़ा रह्या, मैं पतिसाही नां करूं ।
फरजंद भी नहिं कोय, किस कारण पचि पचि मरूं ।।१३६४।।

नानत पड़ौ इस जीव मैं, इतै अब जीव खपाए ।
इस आदम की देह, मारण नहीं फुरमाए ।
मेरा यौं कूंण हवाल, मैं हतना घर घाले ।
ते हुए किरोड़ सुमार, जिनौं दुख मुझि हैं साले ।
इस एक उदर कै वासते, अब मैं ममता नां करूं ।
या देऊं पतिसाही और कूं, मैं तो जाय समदौं परूं ।।१३६५।।

भई उचाट पतिसाहि, कहै आज कहुं चलि रहौं तो ।
करे कूंच पर कूंच, तुरक जाय दिल्ली पहूंतौ ।
छोटो बंधु बुलाय, तास सिर छत्र ज दीन्हौं ।
हय गय भवन भंडार, हवालै सब मुलक दल कीन्हौं ।
जैन अलावदीन नाम तस, तिहैं तखत दिली को सौंपियो ।
आप दरड़दे नीसरचो, सु सेतबंध (ज) पहूंचियो ।।१३६६।।

जठै दुहाई फेरि, बहौत खेरायत कीन्हीं ।
आदि तुरक की राह पूछि, बिधि सगळी कीन्हीं ।
आप समंद तटि जाय, हुंता त्यांहै दई बड़ाई ।
कह्यो तुम्हैं तखत की श्रम, अवर श्रम जैंन भलाई ।
इती कही तुरंग तातौ कियो, अवर समद मैं रालियो ।
दौड़चो हैंवर जळ ऊपरैं, मनुं धरणी ऊपर चालियो ।।१३६७।।

ते नीसरि गयो अलग, को जाणै कित हैं गयौ ।
अक बूडचो जल कै मधि, किंधौं मर्द सिध ही भयौ ।
जिंह की देखा देखि, पांच सात औरूं पणि दौड़चा ।
केई गया जळ बूडि, केई आहौंटा ही बहोड़चा ।
ते समंद तटि घोरि बणाय कैं, सकल लोग घरि हैं फिरे ।
जंबूदीप मधि आंणि करि, अलावदीन समंदा परै ।।१३६८।।

यो हमीरायण ग्रंथ रावरंक सब हैं भावै ।
मन मैं धीरज रहै, तन मैं सूरापणि आवै ।
सील सत्त छत्री धरम, सिंगार जुद्ध कथियो सारौ ।
सुणंत पढंत अति हनांव, फिरि फिरि लागत प्यारौ ।
यौ अजीत ठौर रणथंभगढ, अटल आडाबळ मांहिलौ ।
हर जळहरी अर अटूट दुरंग, (यो) चौरासी गढ को लाडिलौ ।१३६९।

॥ कुंडलिया ॥

अैसी करै न काहु, सु करी या राव रवि चक्रतळि ।
बाईस बिक्रमा राणो, बुधि बिन खाधा बयाला ।
अजहुं मांझि किरोडि, रोळै दिछिन भड़ाला ।
मदल कच्छ हैं मलैं, सिंह गुर्जर रै अंगन ।
तौ गंग बूडि जैचंद मुवौ, भिड़ियो न भवंगिम ।
तौ सरस हमीर करीय, करि कंदलि रणथंभ छळि ।
अैसी करै न काहु, सु करी या राव रवि चक्रतळि ।।१३७०।।

मोहि आसीस दै माय, कांई जीबौ बरसां सौ ।
धन जोबन हे माय, माय मोहि दै असीस ।
छत्री इतौ पर जीवै, बाराह ऊपरि बीस ।
बाराह ऊपरि बीस, भैंनैं जाजन बीरबर ।
ऊ रहै सांगि फूटंत, हिया धाय जे हीर हर ।
स्याम काज रण मर्‌ण, तौ होय बैकुंठां बासौ ।
मोहि असीस दे माय, कांई जीबौ बरसां सौ ।।१३७१।।

॥ दूहो ॥

नांव अमर हंमीर कौ, अमर दिलो सुरताण ।
ए परबत जुग जुग अमर, कहांलौं करूं बखाण ।।१३७२।।

जैसी देखी तैसी लिखी, सुरता लीज्यो सोय ।
चूक बिचूक जु माफ करि, आगें पीछै होय ।।१३७३।।

इति श्री हम्मीरराव अलावदीन पातिसाहि, चहुवांण राव हमीर की हम्मीरायण संपूर्णम् ।

मिती येष्ट सुदी १४ सोमवासरे लिपी कृतां ऋषि सबला । संवत १७८४ वर्षे ।। श्री रस्तु ।। कल्याण मस्तु ।। शुभंभवतु ।।

पुस्तक लिखित लेखक गोपीचन्द शर्मा बिप्र गौड़ जयपुर निवासी । मिति मार्ग शीर्ष शुक्ला ६ मंगल । संवत् १९८५ । तारीख १८ दिसम्बर सन् १९२८ ईसवी । लिखायतं प्रोहितजी श्री हरिनारायणजी बी.ए. ।। महाराज मानसिंहजी राज्ये ।।

।। शुभम् ।।

प्रथम अध्याय

मैं सर्वप्रथम माँ सरस्वती का स्मरण करके गुरुदेव के चरणों में प्रणाम करता हूं। मैं हमीरायण (हमीर की कथा) कहता (कहना चाहता) हूं। मुझे समझाकर अक्षर (भाषा) का ज्ञान दो।१।

गौरी (पार्वती के पुत्र गणेश का सब लोग स्मरण करते हैं। वे बुद्धि-बल में अपरिमित वृद्धि करने वाले हैं। उनकी कृपा हो जाने पर कोई विघ्न या बाधाएं नहीं आती। 2।

भगवान् चतुर्भुज (विष्णु) के विस्तार का पार कोई नहीं पा सकता। वे अपार सामर्थ्य के स्वामी हैं अतः क्षण भर में ही अणु मात्र को महत् और महत् को अणु में परिवर्तित कर सकते हैं। ३।

वे समस्त ब्रह्माण्ड में अपनी माया शक्ति का प्रसार करते रहते हैं, और निमिष मात्र में ही उसे फलवती कर देते हैं। जब रुष्ट हो जाते हैं तो अपनी समस्त मायाको समेट भी लेते हैं। ४।

मैं पृथ्वीराज (चौहान) के वंश की उपमा (प्रशस्ति) की रचना कर रहा हूं, जिससे उसके वंशज हमीर का नाम (कीर्त्ति) युगों युगों तक स्थिर रहें। ५।

वीर शिरोमणि नायक हमीर की बात (कथा) को जब सामंत लोग सुनेंगे तो उनमें शूरवीरों को शोभा देने वाले अथवा शूरवीरों में रुचिकर शौर्य की अपार वृद्धि होगी। ६।

मैं भगवान् का स्मरण करते हुए उनके चरणारविन्दों की वन्दना कर उन्हें, अपने चित्त में धारण करता हूं और फिर हमीरायण की कथा लिखता हूं, जिससे इस कार्य में कोई बाधा न डालें। ७।

राव हमीर ने रणथम्भौर के दुर्ग में जो धर्म-युद्ध किया, उसका विवरण मैं अब वर्णन (बखान) करते हुए लिखता हूं।८।

उज्जैन नगर में राजा शालिवाहन (विक्रमादित्य) ने धर्म युद्ध किया था। उसने शीघ्र ही (क्षण भर में) समस्त शत्रुओं का संहार कर दिया और अपने राज्य में सुख शान्ति स्थापित करके शासन किया। ९।

जिस प्रकार लंकापति रावण की टेक, (प्रतिज्ञा) राजा हरिश्चन्द्र की सत्यवादिता और अर्जुन की बाण संधान की एकाग्रता प्रसिद्ध है उसी तरह राव हमीर का हठ भी प्रसिद्ध है। १०।

गौरी (पार्वती) को आनन्दित करने वाले उनके पुत्र गणश, जिनके ललाट पर चन्द्रमा सुशोभित है, जिनकी चारों भुजाओं में परशु, कमण्डल और जयमाला तथा अंगोपांगों में आभूषण तथा शरीर पर लाल वर्ण के वस्त्र शोभा दे रहे हैं, जो विशाल मदमस्त काय के साथ एकदन्त (एकदांत वाले) कहाते है। अपनी शुण्ड को सिन्दूर और सुगन्धित द्रव्यों से चर्चित करके मूषक की सवारी करते हैं। ऐसे हे सुधि (सुधी) बुद्धि के धनी देव! आप मुझ पर कृपा करें जिससे मैं प्रवीणतापूर्वक श्रेष्ठ काव्य की रचना कर सकूं। ११।

मैं माँ सरस्वती और हरसिद्धि माता का स्मरण करता हूं जिसे सृष्टि के आदि में स्वयं ब्रह्मा ने (विधाता ने) अपने ही हाथों से घड़ा (जन्म दिया) जिसका वाहन हंस (आतमा) है और जो हाथों के अभाव में भी एक हाथ में पुस्तक (वेद-ज्ञान) को धारण किये रहती है जो श्वेत वस्त्र धारण करती है, जिसके गुण विमल (पवित्र) हैं और जो अपने मुख से विमल वाणी (भाषा) का उच्चारण करतो है। हे माँ! मुझे सुमति दो जिससे तुम्हारा आशीर्वाद प्राप्त कर मैं रासौ (हमीर की कीर्त्ति) का कथन कहूं, रणथम्भौर का वर्णन करते हुए हमीरायण काव्य का गायन करूं। १२।

मैं अपने स्वामी (भगवान) का स्मरण करते हुए उनको सदैव अपने ध्यान में धारण किये रहूं। मनुष्य को कथा कहते समय उसमें कोई कमी रह सकती है अथवा आधिक्य-अतिशयोक्ति हो सकती है-इसके अतिरिक्त और कोई दोष न लगे। १३।

अलख पुरुष (निराकार प्रभु) ने अपनी माया (प्रकृति) से अनन्त लोकों (अवनियों) की रचना की। सत, त्रेतादि चारों युगों में उसका विस्तार होता रहता है। वह अपनी माया से किस किस को क्या कुछ प्रदान कर देता है।१४।

इस वंश में सर्वप्रथम (आदिपुरुष) मान चौहान हुआ। मान का पुत्र नन्द था। नन्द का पुत्र आनन्द और आनन्द का पुत्र वच्छि (वत्स) कहा गया है। और वच्छि (वत्स) के पुत्र रूप में श्रीवत्स हुआ। ये सभी गृहपति

कहे गये। श्री वत्स का पुत्र वसुदेव हुआ जिसने अपने कुल में सर्वाधिक उन्नति की। उसने श्रीथल (श्री स्थल) में अपने कुल की अधिष्ठात्री आशापुरी देवी की तन मन से सेवा की। उससे वह प्रसन्न हुई। १५।

आशापुरी माता सदा उसकी सहायक (रक्षक) रही और उसको मन-वांछित फल दिया। श्री स्थल में वसुदेव को हृदय से स्नेह प्रदान किया। १६।

देवी ने सेवा से सन्तुष्ट होकर पुरस्कार स्वरूप उसको ऋद्धि-सिद्धि प्रदान की। उसको चार स्वर्ण कलश मिले जिनमें से अखूट सम्पत्ति निकली। अपनी माया (अलौकिक शक्ति) से एक सौ पांच अश्व देकर श्रीथल में उसके राज्य की स्थापना कराते हुए उसके यश में वृद्धि की। संवत् ६०६ की फाल्गुन वदी चतुर्दशी (शिवरात्रि) के दिन वसुदेव श्रीस्थल का राजा बना। १७।

उसके अधिकार में मात्र एक श्रीथल का दुर्ग था। उसकी रानी का नाम मालदे था। उसके पास एक सौ पांच अश्व थे, जिनमें देवी का अंश शोभा देता था। यह सब देकर भी देवी आशापुरा ने उसको कहा कि अपनी काम-नाओं को मन में ही मत रख; जो भी आकांक्षाएँ हों वे सब मांगले। तुम्हारी सभी इच्छाएँ पूरी होगी। उसे मुंह मांगी सभी वस्तुएँ प्राप्त हो गई। उसने सांभर झील के पानी से नमक बनाया। पच्चीस वर्ष तक श्रीथल में शासन करके अन्त में उदरपीड़ा (रोग) से उसकी मृत्यु हुई। १८।

उसने अपनी इच्छाओं की पूर्ति की और सांभर में नमक का निर्माण (उत्पादन) किया। जब तक सूर्य और चन्द्रमा विद्यमान हैं, उसकी कथा अमर रहेगी। १९।

उसके सिंहासन पर उसका सांवरतसिंह (सामंतसिंह) नाम का पुत्र संवत् छः सौ इकतीस की चैत्र वदी चतुर्दशी को आरूढ हुआ। उसकी रानी का नाम सांवरदे था। उसने पांच वर्ष तक राज किया। उसके अधिकार में श्रीथल का दुर्ग और एक सौ बीस अश्व थे। वह सदा ज्वरग्रस्त रहा, अपने मन की इच्छाओं को पूरा नहीं कर सका और न अपने शासन काल में कोई विशिष्ट कार्य ही सम्पन्न कर सका। ज्वर रोग से अपने घर में ही उसकी मृत्यु हो गई। २०।

उसका पुत्र नरघोष संवत् छह सौ पैंतीस की वैशाख कृष्णा चतुर्थी को शुभ मुहूर्त्त में सिंहासनारूढ हुआ। उसकी एक ही रानी थी जिसका नाम श्रीयादे था। उसके एक मात्र दुर्ग श्रीथल में ही उसका निवास था। उसके पास एक सौ साठ घोड़े थे। बाईस वर्ष तक राज्य करके अपने ही घर श्रीथल में विवाह के अवसर पर उसकी मृत्यु हो गई। २१।

उसका पुत्र नरदेव संवत् छह सौ सतावन की चैत्र वदी तृतीया को बलात् (अपावन रूप में) राज-सिंहासन पर अधिकार करके आरूढ हुआ। उसकी एक चांपलदे नाम की रानी थी। उसके अधिकार में भो मात्र एक ही दुर्ग श्रीथल था और बारह सौ अश्व थे। उसने दक्षतापूर्वक चौदह वर्ष सात माह तक शासन किया। अन्त में शरीर में व्याधि के कारण अत्यधिक पीड़ा से तड़फड़ाते हुए उसकी मृत्यु हुई। २२।

उसके सिंहासन पर उसका वीर पुत्र अजयदेव कार्तिक वदी तीज संवत् छह सौ उनसत्तर को बैठा। उसकी रानी का नाम अजैदे था। उसके अधिकार में श्रीथल और अजमेर के दो दुर्ग और एक हजार पांच सो घोड़े थे। उसने इन दोनों दुर्गों पर अठाईस वष और नौ मास पर्यन्त शासन किया। उसको मृत्यु अजमेर में रोग के कारण हुई। २३।

उसका पुत्र विहगराजदेव के नाम में प्रसिद्ध हुआ। वह संवत् छहसौ अठाणवै की श्रावण वदी पंचमी को सिंहासनारूढ हुआ। उसकी रानी का नाम विजयादे कहा जाता है। श्रीथल और अजमेर दो दुर्ग उसके अधिकार में थे। उसके पास दो हजार घोड़ थे। इक्कीस वर्ष और पांच महिने तक शासन करके वह भी रोगग्रस्त होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ। २४।

उसके सिहासन पर उसका पुत्र विजयदेव संवत् ७१६ की कार्तिक सुदी अष्टमी को आरूढ हुआ। उसकी रानी का नाम विजयादे था। उसके अधिकार में श्रीथल, अजमेर, गायण, भरडौज और नरहर (नरहड़ नामक पांच दुर्ग, पांच हाथी और २५०० अश्व थे। उसकी रानी (विजयादे) ने उसको विष देकर मार डाला। विजयदेव ने आठ वर्ष और सात मास तक शासन किया। २५।

विजयदेव के उपरान्त उसके पाट पर उसका पुत्र चंडराज संवत् सात सौ सताईस की पौष वदी ११ को बैठा। उसको उसकी रानी का नाम चण्डकादे का। उसके पास पांच दुर्ग, दो हाथी और २१०० घाड़े थे। उसने बीस वर्ष तीन मास तक शासन किया। उसको मृत्यु शिकार के समय सिंह के साथ लड़ते हुये हुई। २६।

उसके बाद उसका पुत्र गोविंदराज सिंहासनारूढ हुआ। संवत् ७४७ की पौष वदी बारस शनिवार को उसका राजतिलक हुआ। उसकी रानी का नाम गंगलदे था। उसके पास पांच दुर्ग, एक हाथी और दो हजार घोड़े थे। उनतीस वर्ष और दस महिने तक शासन करने के उपरांत बडारण धाय के साथ प्रेम करने के कारण घर पर ही उसने मृत्यु प्राप्त की मारा गया)।२७

तदुपरांत उसका पुत्र दुर्लभदेव मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशी संवत् ७७६ को राजगद्दी पर बैठा। उसके अधिकार में श्रीथल अजमेर सिरोही, जोगनीपुर (दिल्ली) और पौळी, ये पांच दुर्ग, पांच हाथी और ४५०० अश्व थे। कुल इकतीस वर्ष सात मास तक राज्य कर उसने अपने घर (श्रीथल ?) में ही रोग से मृत्यु पाई। २८।

उसकी मृत्यु हो जाने पर उसका पुत्र बच्छराज सिंहासन पर अधिकार करके आश्विन वदी अष्टमी सवत् ८०७ को गद्दी पर बैठा। उसकी रानी का नाम वाछलदे था। उसके पास पांच दुग, पांच हाथी और पांच हजार घोड़े थे। पांच वर्ष चार मास तक शासन करने के बाद पांव की बीमारी से उसकी मृत्यु हो गयो। २९।

उसके सिंहासन पर हरसहदेव (हर्षदेव) मार्गशीर्ष वदी ७ संवत् ८१२ को अभिषिक्त हुआ। उसकी रानो का नाम होरादे था। उसके पास आठ दुर्ग, दस मदमस्त हाथी और ७२०६ अश्व थे। उसका विरुद 'अरिमर्दन' था। उसने शाह (सुल्तान) सहाबुद्दीन को युद्ध में पराजित कर उससे चार हाथी और ७५०० (घोड़े) विजय में प्राप्त किये। चौदह वर्ष और चार मास तक राज्य करके युद्ध में लगे घावों के कारण घर में ही उसकी मृत्यु हुई। ३०।

उसके पाट पर ज्येष्ठ कृष्णा अष्टमी संवत् ८२७ को उसका पुत्र दुजन-धनदेव (दुर्योधनदेव) का अभिषेक हुआ। उसकी रानी का नाम दुरांदे था। उसके अधिकार में बगाना, बौली, कोट खडार, उटगर, भटनेर आदि आठ दुर्ग थे। उसके पास १५८८ घोड़े और चौबीस हाथी थे। उसने शाह नूर-उ-दीन से युद्ध में विजय प्राप्त कर बारह सौ घोड़े और सोलह हाथी अपने अधि-कार में किये। उसने 'सुरताण गहन' का विरुद प्राप्त किया। पांच वर्ष सात मास[1] तक राज्य करके उसने रोगी होकर मृत्यु प्राप्त की। ३१।

उसके सिंहासन पर संवत् ८७८ की आषाढ वदी चौदस को उसका पुत्र विजयपाल आरूढ हुआ। उसकी रानी विजयादे थी। उसके पास पन्द्रह दुर्ग, २५ हाथी, ६७,००० घोड़े थे। उसने चम्बल नदी को पार करके धारा नगरी पर

---

1 दुजनधनदेव का राज्यकाल संवत् ८२७ से पांच वर्ष सात मास बताया गया है, जबकि उसके पुत्र विजयपाल का राज्यारोहण संवत् ८७८ आषाढ वदी चौदस को होना कहा गया है। ऐसो स्थिति में दुजनधनदेव का राज्यकाल पांच वर्ष के स्थान पर पचास वर्ष लिखा जाना चाहिये। अवश्य प्रतिलिपि कर्त्ता के प्रमाद से यह पांच वर्ष ही लिखा गया है।

आक्रमण किया और राजा भोज पर विजय प्राप्त की। सात[1] वर्ष नौ महिने तक राज्य कर उसने सांभर में आकर मृत्यु प्राप्त की। ३२।

उसके पुत्र वापलदेव का संवत् ८२५[2] (८८५ ?) के आषाढ मास की अमावस्या को राजतिलक हुआ। उसकी रानी का नाम वापलदे था। उसके अधिकार में पचास दुर्ग, तीस हाथी और एक लाख बीस हजार घोड़े थे। गुंटकादेवी ने प्रसन्न होकर उसको ६४ मायावी घोड़े दिये। उसने भी मालवा पार करके राजा भोज से युद्ध किया और विजय प्राप्त की तथा राजा भोज के चौसठ प्रधानों को बन्दी बनाकर लाया। सांभर सरोवर को बांधकर उसने कोट (दुर्ग या परकोटा) का निर्माण करवाया। भयभीत होकर उसके सभी शत्रुओं ने उसके सम्मुख आत्म समर्पण कर दिया। छबीस वर्ष और ग्यारह मास राज्य करके उसने मृत्यु प्राप्त की। ३३।

वापलदेव की मृत्यु हो जाने पर उसके सिंहासन पर दुलंभदेव (द्वितीय) संवत् ९११ के श्रावण वदी ९ को बैठा। उसकी रानी का नाम दुलंभदे था। उसके अधिकार में चौदह दुर्ग, उनतीस हाथी और पैंतालीस हजार घोड़े थे। उसने चित्तौड़ को पार करके वरडी और कुडीछ गांवों के राव से युद्ध किया और वहीं युद्ध में मारा गया। उसने तेइस वर्ष और छह मास तक राज्य किया। ३४।

उसके पुत्र गदलेव ने संवत् ९३२ की कार्त्तिक वदी प्रतिपदा को शासन संभाला। उसकी रानी का नाम गोलादे था। उसके पास इकतालीस दुर्ग, बीस हाथी और इक्यावन हजार घोड़े थे। गजनी के सुल्तान महमूद शाह को उसने बन्दी बनाया। अठारह वर्ष चार महिने तक राज्य करने के उपरान्त घावों के कारण उसकी मृत्यु हो गई। ३५।

---

1 काव्य में यहां 'सारह' शब्द दिया है। प्रतीत होता है यहां 'सातह' पाठ रहा होगा।

2 छंद सं. ३१ में की गई अशुद्धि के समान यहां भी प्रतिलिपिकर्त्ता के प्रमाद के दर्शन होते हैं। दुजनधनदेव की मृत्यु तिथि सं. ८७८ में विजयपाल के राज्य काल सात वर्ष के योग से वापलदेव का राज्यारोहण ८८५ में होना सिद्ध होता है। इसकी पुष्टि वापलदेव के राज्यकाल छबीस वर्ष ग्यारह मास के उपरांत सं. ९११ में उसके पुत्र दुलंभदेव के राज्यारोहण से भी होती है।

उसका पुत्र भुवपाल पौष वदी तृतीया संवत् ९५० को गद्दी पर बैठा। उसकी रानी का नाम बाल्हादे था। उसके पास पैंतालीस दुर्ग, पच्चीस हाथी और सत्तर हजार नौ सौ घोड़े थे। उसने गुजरात प्रदेश को पार कर और आगे बढते हुए देवराज सोलंकी (चालुक्य) से युद्ध किया और युद्ध में मारा गया। उसने उन्नीस वर्ष और नौ मास राज्य किया। ३६।

उसका पुत्र विजहड़देव चैत्र वदी दो संवत् ९६९ को सिंहासनासीन हुआ उसकी दो रानियां विजहड़दे और शंकरादे थी। उसके पास पच्चीस दुर्ग, बावन हाथी और सत्तर हजार घोड़े थे। वह भी गुजरात पार करके युद्ध करने गया। उसने पन्द्रह वर्ष और ग्यारह महिने तक शासन किया। उसकी रानी शंकरादे ने उसको विष देकर मार डाला। ३७।

उसके उपरान्त उसके पुत्र राजदेव का राजतिलक हुआ। वह संवत् ९८४ की फाल्गुन कृष्णा ७ को राजगद्दी पर बैठा। उसकी रानी का नाम राजलदे था। उसके पास पचास दुर्ग, साठ मस्त हाथी और इकरानवे हजार घोड़े थे। उसने गजनी के शाह से युद्ध में विजय प्राप्त कर पांच हजार घोड़े छीन लिये। उसने बाइस वर्ष सात मास तक राज किया। अन्त में किसी ने उसे विष देकर मार डाला। ३८।

उसके पाट पर उसका अरिगंजन (शत्रुमर्दन) पुत्र बीसलदेव भादवा वदि २ संवत् १००६ को बैठा। उसकी रानी का नाम बिसवादे (विसलादे ?) था। बीसलदेव के अधिकार में पचास दुर्ग थे और उसके पास त्रेपन हाथी और एक लाख अश्व थे। उसने गुजरात राज्य को जीत कर कर्णगुजारा को बंदी बना लिया। उसको अजमेर लाकर उससे दंड वसूल किया और छोड़ दिया। अपनी पुरानी शत्रुता का प्रतिशोध लेकर वह सांभर गया। वहीं वायु रोग से उसकी मृत्यु हो गई। उसने पन्द्रह वर्ष और दस महीने तक राज्य किया।३९।

उसके बाद उसका पुत्र सोमदेव वैशाख सुदि (शुक्ला) १० संवत् १०२१ को सिंहासनारूढ हुआ। उसकी रानी सोमलदे थी। सोमदेव के अधिकार में पचास दुर्ग, बावन हाथी तथा एक लाख इक्कीस हजार घोड़े थे। उसका स्थान (राजधानी) खंडारदुर्ग में था। वह स्त्री लंपट (कामी) राजा हुआ। ब्राह्मण और ब्राह्मणी ने उसको शाप दिया। इस प्रकार पंद्रह वर्ष और तीन मास तक राज करके वह मृत्यु को प्राप्त हुआ।४०।

उसके पाट पर उसका भाग्यवान पुत्र राजदेव बैठा। श्रावण शुक्ला १० संवत् १०३६ को उसने राज्यभार सभाला। उसकी रानी श्रीयादे थी।

उसके अधिकार में साठ दुर्ग थे। बासठ हाथी और एक लाख दस हजार घुड़सवार सेना के साथ घग्घर नदी को पार करके उसने सुल्तान साहबदीन को युद्ध में पराजित किया और दस हाथी और तीन हजार घोड़े जीत कर लाया। घावों से भिद कर वह घर लौटा और औषधियुक्त पट्टियां बंधवा कर चिकित्सा करवाई। पर शरीर में इतने अधिक शस्त्राघात लगे थे कि अनेक उपचार कराने पर भी उन्हीं से उसकी मृत्यु हुई। उसने कुल पचास वर्ष और तीन महिने तक शासन किया।४१।

उसके सिंहासन पर उसका पुत्र अनलदेव संवत् १०८६ में चैत्र बदि १० के दिन बैठा। उसकी रानी का नाम आसलदे (आनलदे ?) था। उसके अधीन अस्सी दुर्ग, साठ मस्त हाथी तथा एक लाख उन्नीस हजार पांच सौ घोड़े थे। उसके सभी दुर्ग प्रजा (बस्ती) से भरे पूरे थे। उन्नीस वर्ष (उन्नतीस वर्ष ?)[1] तीन मास तक राज्य करने के उपरान्त सिंह का शिकार करते समय उससे भिड़ते हुए वह घायल हो गया और अपने महल में आकर मर गया।४२।

उसके उपरान्त उसका पुत्र मालगदेव संवत् १११५ में ज्येष्ठ वदि ६ के दिन साखति करके सिंहासन पर बैठा। उसकी रानी का नाम मालगदे था। उसके पास अस्सी दुर्ग, पचास हाथी, इक्याणवै हजार आठ सौ घोड़े थे। उसने अजमेर में तुर्कों से युद्ध किया और उन पर विजय प्राप्त कर उनसे दो हाथी और पचास घोड़े छीन लिये। बाईस वर्ष और तीन मास तक राज्य करके वह शस्त्राघात से लगे घावों के कारण मर गया।४३।

संवत् ११३७ में उसके पाट पर जगदेव बैठा। उसने पांच महीने ही राज्य किया था कि उसके किसी मित्र ने उसको विष देकर मार डाला।४४।

संवत ११३८ श्रावण वदि ११ को बीसलदेव गद्दी पर बैठा। उसकी रानी वीसलदे थी। उसके अधीन चालीस दुर्ग और पैंसठ हाथी तथा अस्सी हजार घोड़े थे। उसने हठपूर्वक अनेक संग्राम किये और उनमें विजय प्राप्त की। गोपाल नदी को पार करके तुर्कों से युद्ध करता हुआ युद्ध क्षेत्र में मारा गया। उसने उन्नोस वष और पांच महीने तक शासन किया।४५।

---

1 उसके पुत्र का राज्याभिषेक संवत् १११५ वि. में कहा गया है अतः अनलदे का राज्यकाल उन्नतीस वष तीन मास लिखा जाना चाहिए था।

उसका प्रजा को सुख देने वाला पुत्र अमरगंगेव श्रावण कृष्णा २ संवत् ११५७ को सिंहासनारूढ हुआ। उसकी एक ही रानी अमरावती थी तथा उसके पास चौरासी दुर्ग और सत्तर हाथी और पन्द्रह हजार घोड़े थे। उसका राज्य योगिनीपुर (दिल्ली) में था। छत्तीस वर्ष छः मास तक राज्य करने पर उसका शरीर व्याधि ग्रस्त हुआ। सुल्तान साहिबदीन के साथ उसने युद्ध किया और योगिनीपुर (दिल्ली) में उसकी मृत्यु हुई।४६।

उसके बाद उसका भाग्यवान् पुत्र गजदेव सं. ११९३ वि की श्रावण वदि चौदस के दिन गद्दी पर बैठा। उसकी सेना में साठ हाथी थे। उसके अधीन उनचास दुर्ग थे और तीस हजार घोड़े थे। उसने घाघर (घग्घर) नदी को पार करके सुल्तान शम्सदीन से भयंकर युद्ध किया। पन्द्रह वर्ष और छह महीने शासन करके युद्ध करते हुए मारा गया।४७।

उसका पुत्र पृथ्वीदेव बैशाख बदि पंचमी संवत् १२०८ में गद्दी पर बैठा। उसकी रानी पेमादे थी। उसके पास पचास अच्छे दुर्ग, चालीस हाथी और तिरेपन हजार घोड़े थे। उसने १८ वर्ष और दो मास तक पृथ्वी पर राज्य किया। अन्त में शरीर में उत्पन्न किसी व्याधि के कारण अपने घर में ही मृत्यु प्राप्त की। ४८।

उसका पुत्र देवराज भादवा वदी १० संवत् १२२३ को सिंहासनारूढ हुआ। उसके एक ही रानी थी जिसका नाम राजलदे था। उसके अधीन चौरासी दुर्ग और सेना में एक सौ पैंतालीस श्रेष्ठ हाथी तथा एक लाख पैंतालीस हजार घोड़े थे। उसने घग्घर नदी के पार जाकर अनेक युद्धों में विजय प्राप्त की। अन्त में सहाबुद्दीन से युद्ध करते हुए मृत्यु प्राप्त की। उसने सोलह वर्ष आठ महिने तक राज्य किया। ४९।

उसके बाद उसका पुत्र हरसहदेव (हरिसिंहदेव) वैसाख वदी प्रतिपदा संवत् १२३९ को सिंहासन पर अधिकार करके अधिरूढ़ हुआ। उसकी एक रानी हरसहदे थी। उसके पास मात्र छह दुर्ग रह गये, हाथी एक भी नहीं था और अश्व भी मात्र अड़तालीस हजार ही थे। उसने तेरह वर्ष और आठ महिने तक राज्य किया। अन्त में उसने जौहर का आयोजन करके समस्त अन्त पुर की रानियों को मार डाला और युद्ध में धराशायी हुआ। ५०।

उसके पुत्र राजदेव ने पौली दुर्ग में राजधानी स्थापित की और संवत् १२५१ की मार्ग (मगसर ?) शुक्ला चौथ को धरा पर अधिकार कर सिंहासन पर बैठा। राजलदे उसकी रानी थी। उसके अधीन अड़तीस दुर्ग थे। और सेना में सात हाथी और पैंतीस हजार घोड़े थे समस्त घंघेरखण्ड उसका सहयोगी था। अजमेर और सांभर को उसने छोड़ दिया और पौली को राज-

धानी बनाया। नौ वर्ष और चार महिने तक राज्य करके रोगग्रस्त होकर वह घर पर ही मरा। ५१।

उसकी मृत्यु के उपरान्त कार्त्तिक वदी एकादशी संवत् १२६१ को उसी पौली दुर्ग में सिंहासन पर बैठा। उसकी एक रानी बाल्हांदे थी। उसके पास पांच दुर्ग थे पर हाथी एक भी नहीं था। उसने पच्चीस हजार घुड़सवार सैनिकों के सहयोग से तुर्कों के साथ संग्राम किया। दिल्ली की फौज पर विजय प्राप्त कर उनसे दो हजार के लगभग घोड़े छीन लिये और सोलह वर्ष और चार मास तक राज्य करके युद्ध करता हुआ मारा गया।५२।

उसका पुत्र वीर नारायणदेव संवत् १२७६ वि. की कार्त्तिक कृष्णा १३ को वळा (पर्वतों के मध्य स्थित नगर) में गद्दी पर बैठा। उसकी रानी वीरांदे थी। उसके अधिकार में छह दुर्ग थे, हाथी एक भी नहीं था। उसके पास तीस हजार घोड़े थे। वह वळा में गूढा (रक्षा का गुप्त प्रबंध) देकर रहता था। उसने सुल्तान सहाबदीन से युद्ध किया। उसकी रानियों ने जौहर किया। वह आडावला के रणक्षेत्र में ही वीरगति को प्राप्त हुआ। उसने सात वर्ष और छह मास तक राज्य किया।५३।

उसका भाई राजदेव था। राजदेव का पुत्र बाहड़देव (वाग्भट) बहुत ही भला आदमी था। सब ने एक मत होकर उसका राजतिलक किया। मालवा से लाकर पौळी में उसकी राजधानी स्थापित की। उसने संवत् १२८२ की माघ वदि बारस को राज्य प्राप्त किया। उसकी रानी का नाम बीनादे था। उसके पास पांच हाथी, पच्चीस हजार घोड़े और सात दुर्ग थे। उन दुर्गों के नाम सुनो। ५४।

पौळी, खण्डार, मांडू, उदैगिर और नये रूप में सम्मिलित की गई गागरोन और चाचरणी की समस्त धरा, सबके साथ मिलकर उसने आडीला (आडावळा) पर विजय प्राप्त की और उत्कर्ष को प्राप्त किया। इस प्रकार पौळी दुर्ग को छोड़ कर वह आड़ावळा में आकर रहने लगा। उसने दिल्ली की सेनाओं पर विजय प्राप्त कर सांभर तक की भूमि पर अपना अधिकार कर लिया। इक्कीस (इकतीस) वर्ष और एक मास तक राज्य करके उदर के रोग से उसने मृत्यु पाई। ५५।

उसका पुत्र जैत्रसिंह वळा (आड़ावळा) में ही आषाढ वदि नवमी मंगलवार (?) संवत् १३१२ में सिंहासन पर बैठा। उसके पांच रानियां थी जिनमें से दो को पटरानी का पद प्राप्त था। उनका नाम पसावती और जेतंगदे था। उसके अधिकार में बारह दुर्ग थे, तथा उसके सैन्य में पन्द्रह हजार घोड़े थे।

उसके पास एक भी हाथी नहीं था। पद्मगढ के चारों ओर जितनी सीमा थी उसमें रहने वाले दस हजार शहरियों का भी उसको आशीर्वाद (सहयोग) प्राप्त था। ५६।

जैत्रसिंह चौहान ने जैतपुर नाम का नगर आबाद कर उसके चारों ओर चूने का पक्का परकोटा बनवाया तथा छत्तीस ही जाति के लोगों को आहूत कर उसमें बसाया। संवत् १३१४ वि. में उसने वहां अपनी राजधानी स्थापित की। वह वहां निश्चित होकर राज करता था। शत्रु उसका नाम सुनकर दूर से ही पलायन कर जाते थे। उसके एक से एक बढकर बारह पुत्र हुए। जैसी उसके पुत्रों की महिमा थी वैसी ही उनमें दो विधक (ऐबें) थीं। ५७।

बळा के चारों ओर ऊँचे ऊँचे पर्वत हैं और बळा उनके मध्य में बसा हुआ है। डाँग प्रदेश में न तो वहां कोई आ सकता था और न वहां की किसी झाड़ी तक को काट सकता था। ५८।

जैत्रसिंह जहाँ रहता था, वहीं घर बैठे वह शासन करता था। उसका न तो कोई चाकर (सामंत) था और न वह किसी के सहारे (आश्रित) था। वह बारह दुर्गों का उपभोग करता था। इसके अतिरिक्त इधर उधर से और भी आय हो जाती थी। शहरिये शिकार करते थे और उसको समर्पित करने के लिये स्पर्धा करते थे। वहां उसकी बराबरी करने वाला कोई नहीं था— वह स्वयं दिल्ली के बादशाह के बराबर था। कोई भी हिंदू राजा को वह शत्रु बनाकर नहीं रखता था। वह पूर्वजों की मर्यादा से बंधा हुआ था। ५९।

आडावळा में एक छोर से दूसरे छोर तक सहरिये राज करते रहे हैं। उन्होंने जैत्रसिंह को अपने सिर का मुकुट मान कर रखा। ६०।

सहरियों ने उसको सहायता देकर रखा अतः उनके साथ उसका स्नेह था। राजा उनसे कहता था कि यह सारी मर्यादा (गर्व) आप ही की है। ६१।

वे सहरियां चारों ओर दौड़ करके आखेट करते थे और भाग्य से जो भी प्राप्त होता, ले आते थे। कुछ तो राजा ले लेता था और कुछ ये लोग लेते थे। और हाथ उठा कर दूसरों को भी देता था। ऐसा करते हुए बहुत समय व्यतीत हो गया। तब सभी साथियों में प्रीति स्खलित हो गई। हम कमाई करके लाते हैं और इसको देते हैं। यह उसका उपभोग करता है और हम मुँह ताकते हैं। ६२।

सभी सहरियों ने एक मत होकर निर्णय लिया कि इनका साथ छोड़ कर हम अपने आप ही दौड़े करेंगे। ६३।

सभी पंचों ने एकता करके कहा कि वे तो राजा के द्वार पर रहते हैं। अरे भाई ऐसा कैसे हो सकता है, कि हम तो कमाई करके लावें और ये उसका भोग करें। ये स्वार्थी व्यक्ति अपना घर बना रहे हैं और हम इनके आश्रित रह कर भूखों मरते हैं। सभी एक साथ मिल कर ऐसा प्रबंध करें और उनको वैसा ही उत्तर दिया जाय। ६४।

सबने एक होकर (भौणा) भाण से वचन लिया (कहा)। हे रावत राण? अब हमारे और तुम्हारे दो अलग अलग रास्ते हैं। ६५।

तब रौंणा ने उनको ललकार कर कहा कि भाइयों? हमारी बात सुनो। हम एक ही परिवार के हैं, तुम्हारी बुद्धि क्यों बहक गई है। हमारा बला में आदि काल से निवास है और अंत तक हम यहां रहेंगे। आप लोग हमारे सहायक हैं? और हम आपके सरदार (नायक) कहाते हैं। हमारे मन में तो ऐसी कोई दुर्भावना नहीं है, आप ही के मन में ऐसे बुरे विचार हैं। यदि आप हमसे विमुख होते हैं तो हमारे सिर पर तो रावजी का हाथ है। ६६।

तुम्हारे सिर पर तो रावजी है और हमारी कोई पूछ नहीं है। हम अपने आप अलग ही दौड़ा करेंगे। हमारी आपके साथ नहीं बन सकती। ६७।

समस्त संघ विमुख हो गया और उन्होंने दस दल बना लिये। जिसकी जैसी इच्छा हुई, वह उस दल में सम्मिलित हो गया। ६८।

इन दस दलों के नायक थे— राल्हा, माल्हा, खींवसी, खींवा, ख्यौंराज, ऊदा, दूदा, केसला, हरिया और हरराज। ६९।

किसी दल में पाँच सौ, किसी में दो सौ, किसी में एक हजार और किसी में छह सौ मिल कर चले। रौंणा के पास डेढ हजार सहरिये रहें जिन्हें प्रसन्न करके दृढता से पकड़ रखा। वे अलग अलग दौड़े करते थे और दूर दूर के प्रदेशों से धन लूट कर लाते थे। जो भी प्राप्त होता था वह अमानत (धरोहर) के रूप में लाते थे और प्रथम आय (प्राप्ति) राव की मानते थे। ७०।

रौंणा और भौंणा अपने साथियों को लेकर पद्‌मगढ (दुर्ग) पर पहुँचे। वह विकट वनखंड था, जहां किसी मनुष्य का आवागमन संभव नहीं था। ७१।

उसके ढाल पर एक वाराह (शूकर) सोया हुआ था। रौंणा भ्रमण करता हुआ वहाँ आया। रौंणा ने शूकर पर बाण से प्रहार किया—वह ठीक

उसकी पीठ में घुस गया। सुअर रुद्र की घाटी पर जा चढा। वीर (मर्द) रौंणा भी वहाँ जा पहुँचा। शूकर वहाँ से पद्मगढ में जा चढा। रौंणा भी पीछा करता हुआ अपने सभी साथियों के साथ वहाँ पहुँच गया। ७२।

वहाँ उसने इक्षुरस के समान मीठे और शीतल जल से भरा हुआ सरोवर देखा। वहाँ वृक्षों से आच्छादित सघन वन रात्रि में कोयलें कुहुक रही थी। मोर बोल रहे थे, पुष्पों के रस से मस्त हुए भँवरे गुंजार कर रहे थे। चारों ओर लताएँ वृक्षों से लिपटी हुई थीं। सारा वन पुष्पों की सुगंध से महक रहा था। ७३।

उसने चकमक निकाल कर आग जलाई। छुरा निकाल कर सुअर की खाल उतारी। छुरा निकाल कर जिस स्थान पर पत्थर पर रखा गया, उसका रंग परिवर्तित होकर पीला हो गया। सभी साथियों को आश्चर्य हुआ—हे भगवान् ! यह क्या लीला की। दूसरा छुरा निकाल कर जब पुनः मिलाया गया तो वह भी स्वर्ण बन गया। ७४।

रौंणा और भौंणा दोनों भाई चतुर थे। उन्होंने पत्थर को हाथों में उठा लिया। उन्होंने मन में अत्यन्त आनन्द की अनुभूति की और हृदय में पारब्रह्म परमात्मा का स्मरण किया। स्नान करके उन्होंने दंडवत् प्रणाम किया। आदि पुरुष (परमात्मा) ने उन्हें उस प्रकार नवों निधियाँ प्रदान की। सूखाळ से सामग्री मंगवा कर अनेक प्रकार के व्यंजन बनाये गये और गोठ (प्रीति भोज) की। ७५।

जहाँ उन्होंने दक्षिण दिशा देखी थी वे वहीं जा निकले। जहाँ से वे घाटी पर चढे थे, वहीं आ गये। ७६।

रौंणा ने मन ही मन विचार किया कि जिस स्थान और चौकी को हमने देखा है वहाँ भगवान राम निवास करते हैं। यह पारस पत्थर यहां से प्राप्त किया है—अतः इस स्थान का उद्धार करेंगे। ७७।

रौंणा ने भौंणा से कहा कि सुनो ! यह जो पारस रूपी निधि हमें मिली, वह हमसे किस प्रकार पचाई जा सकती है। इसको पचाने के लिये हमारी चमड़ी बहुत छोटी है, अर्थात् हम हीन वर्ग के हैं। ७८।

तब भौंणा ने कहा कि हे भाई रौंणा सुनो। हम अपने भाइयों की सहायता करेंगे, इस माल को खायेंगे, पीयेंगे और खर्च करेंगे। ७९।

हे भौंणा तूं पागल है, बुद्धि हीनता की बातें कर रहा है। यह असंख्य अपार संपत्ति किस तरह से छिपाई जा सकती है—उलटी यह हम को ही खा जायगी। ८०।

आप वहीं करें जो आपकी इच्छा हो। आप वैसी हीं स्याणप (समझदारी का काम) करें जिससे हमारा नाम अमर हो जावे। ८१।

हमारे मन में तो यही विचार हैं कि हम इस पारस को राव जैत्रसिंह) को समर्पित करदें। इससे पद्मगढ को आबाद करेंगे, जिससे हमारा नाम अमर हो। ८२।

आपने यह बात अच्छी कही– युगों युगों तक आपका नाम स्थायी रहेगा। यह राजपूत (राजा) का मन बदल गया तो कोई और उपाय किया जावेगा। ८३।

हम उनसे वचनों का अनुबंध करा के स्पष्ट वादा करेंगे। और भगवान् राम और महादेव जी की सौगन्ध दिलवा कर ही यह पारस पत्थर उन्हें सौंपेंगे। ८४।

आपने अच्छा विचार किया। यह आनन्द प्राप्त करने जैसी बात है। यदि राजा बदल भी जावे तो आप भी बुरा कर सकते हो। ८५।

सात वर्ष से हम रात दिन एक साथ एक जगह रह रहे हैं। हमारा मन उनके मन से मिला हुआ है। उनके लिये भी हमको छोड़ कर और कोई नहीं है। ८६।

हमसे आप क्या पूछते हो, हम तो आप के साथ हैं। यदि आपको विश्वास है तो पारसमणि उनके हाथों में सौंप दो। ८७।

हमें विश्वास है कि राजा हमसे कभी विपरीत नहीं होगा। हम अपनी राजसभा का आयोजन करके इस निधि को खायेंगे, खचेंगे और मौज मस्ती करेंगे। ८८।

कई दिनों बाद उन्होंने राव से जाकर कहा कि हे राव जी! हम किसी एक स्थान पर परिभ्रमण के लिये जाना चाहते हैं—वहाँ आप भी हमारे साथ चलें। ८९।

ऐसी कौनसी जगह किस दिशा में है, जिससे तुम्हारा मन आकर्षित है। जो स्थान तुम्हें पसन्द आया है, उसे हम भी अवश्य ही देखेंगे। ९०।

जो स्थान हमने देखा है, वह हमारे मन में घर कर गया है। तब राजा ने उस स्थान के लिये प्रयाण किया। प्रस्थान के समय उनको सामने मत्स्य

के मांस के शकुन हुए । राजा ने शकुनी (शकुन शास्त्री) को बुला लिया और पूछा कि यह शकुन किस प्रकार का फल देने वाला है । शकुनी ने बताया कि हे राजा जी यह शकुन उत्तम फल देने वाला है । इससे आप तत्काल अक्षत लक्ष्मी (धन) प्राप्त करेंगे । ९१ ।

आज फाल्गुन महीने की चतुर्दशी है । आज का योग बहुत उत्तम है । आप शिवजी के दर्शन करके अविलंब प्रस्थान करें । ९२ ।

वनसागर बहुत अच्छा स्थान है, आज वहीं पर विश्राम करें । वहाँ आज रात्रि जागरण करें और मनोवाँछित फल प्राप्त करें । उस जगह दो गहरे सरोवर हैं । वहां आदमी करता कुछ है और होता कुछ और है । हमने वहां घूम फिर कर चारों दिशाओं में निरीक्षण किया है । इनमें से कोई भी स्थान किसी से कम नहीं है । ९३ ।

राजा वहां पांवों चलकर गया और शिवजी के स्थान पर पहुँचा । उसने गौमुख में स्नान किया और शिवजी को दण्डवत् प्रणाम करके परिक्रमा की । उसके बाद दौड़ कर दुर्ग पर चढा । आगे आगे रौणां, उसके पीछे राव चल रहा था । उसने घूम फिर कर सारा दुर्ग देखा और अपने जन्म और जीवन की सार्थकता का अनुभव किया । ९४ ।

राजा घूम फिर कर दुर्ग को देख रहा था और उसकी सराहना (प्रशंसा) करता था । राजा बहुत प्रसन्न हुआ । रौंणा भी मन में हर्षित हो रहा था । राजा दुर्ग की प्रशंसा करते हुए कहा रहा था कि मैंने पृथ्वी पर ऐसा स्थान नहीं देखा । रौंणा के चित्त में भी ऐसा कुछ नहीं था । जैसा मैंने देखा है वैसी ही मैंने प्रशंसा की है ।। ९५ ।

पृथ्वी पर जितने भी दुर्ग हैं, उनमें इस दुर्ग की समता करने वाला कोई नहीं है । यदि यहाँ बस्ती बस जावे तो उसको कोई भी शत्रु नष्ट नहीं कर सकेगा । ९६ ।

राजा की बात सुन कर रौंणा ने कहा कि यदि रावजी प्रसन्न हुए हैं तो शुभ मुहूर्त (सिद्ध योग) में यहाँ निवास करें, आपका युगों पर्यन्त नाम अमर रहेगा । ९७ ।

हम आपात्काल में यहाँ आये और आपने सहयोग देकर यहाँ रखा है । हमारे पास इतना धन कहां है ? हम तो आपके द्वारा दिये हुए धन का उपभोग कर रहे हैं । ९८ ।

हे राजन् ! आप तो भाग्यवान् पुरुष हैं, भगवान् आपकी इच्छाओं की पूर्ति करेंगे। यदि आप यहाँ बस्ती बसायें तो द्रव्य तो हम बहुत ही ले आयेंगे । ९९ ।

हे रौंणा ! तुमने कहीं तो अच्छी बात है, पर यह काम इतना छोटा नहीं है। यहाँ तो बस्ती (नगर) तब ही बस सकता है, जब अपार धन यहां खर्च करें। १०० ।

मैं इस दुर्ग का स्वर्ण से निर्माण करा दूंगा और सातपीढी तक सुख पूर्वक इसका उपभोग करेंगे - पर आप प्रभूत धन लाकर देंगे, ऐसा मुझको सहयोग का वचन दें। १०१ ।

आप हमें क्या पूछते हो, जो आपकी इच्छा हो और आपको इतना धन दिखाई देता है, तो निश्चित होकर यहां निवास करेंगे। १०२ ।

हे रावजी ! यदि आप हमसे एक वादा करो और उसका उल्लंघन नहीं करो, तो घर बैठे इस धरा पर राज्य करोगे और सभी शत्रु आपके पांवों में आकर पड़ जायेंगे। १०३ ।

आप मुझसे किस प्रकार का वादा चाहते हैं, वह मुझे समझा दें। और हम किस कारण से उससे विपरीत होंगे यह भी आप बता दें। १०४ ।

यदि आप महादेवजी और भगवान राम को साक्षी मान कर वचन दें तो हम कहें। यदि आप वचन देकर उसको नहीं तोड़े तो मैं आपको अनंत सम्पत्ति बताऊं। १०५ ।

हमें रात दिन एक ही स्थान पर रहते हुए सात वर्ष हो गये हैं। मेरा जीव आप लोगों में बसा हुआ है फिर भी आज आपके मन में कुछ दूसरी बात है। अर्थात् मुझ पर विश्वास नहीं है। १०६ ।

आप इस धरती के स्तम्भ (रक्षक) छत्रपति राजा है और हम लोग आपके सम्मुख कीटवत् हैं। आप सिंह हैं और हम शृगाल, फिर आपसे बराबरी कैसे कर सकते हैं। १०७ ।

जो बात तुम्हारे मन में घर कर गई है, वही कह दो। यदि आप किसी बात की दुविधा मन में रखते हो तो कुंभीपाक नामक नर्क में पडोगे। १०८ ।

तब रौंणा ने खड़े होकर कहा कि अब हम आपको सत्य बात कहेंगे। आपने वचन दिया है तो मैं आपसे एक वस्तु (बात) की मांग करूंगा।१०६।

मैंने आपको स्पष्ट वचन दिया है अब आप सच्ची बात कहें। मेरे घर में जो कुछ भी है उसमें से जो भी इच्छा हो ले लो।११०।

मैं घर की कोई वस्तु नहीं मांगूंगा, मैं तो स्मृति-चिह्न मांगता हूं। इससे आपकी कोई हानि नहीं होगी और मेरा सम्मान सुरक्षित रहेगा।१११।

मैंने तो तुमको सब कुछ दिया है-आप व्यर्थ ही हठ कर रहे हो। आपको जिस वस्तु की इच्छा हो, जो वस्तु आपको पसन्द हो वह आप ले लें। ११२।

हे रावजी ! यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो इस स्थान पर गाँव बसावें। पूर्व के नाम को हटाकर इसका नया नाम रखावें। ११३।

जो बात आप उचित समझें वही करें, मुझे क्यों पूछते हो। तुम्हारे मन में जो भी बैठा हुआ है, वैसा ही नाम रख लो। ११४।

तब रौंणा ने हाथ जोड़ कर कहा कि रावजी ने जो वचन दिया है— उसके अनुसार यहाँ बस्ती बसावें और उसका नाम हमारे नाम पर रखा जावे। ११५।

बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा ! राजा ने कहा कि यह कौनसी बड़ी बात है। जिस तरह से भी आप खुश रहो—उससे हमारी काया को सुख मिलता है। ११६।

राजाजी ने रौंणा को प्रसन्न किया। आज्ञा हुई और कूच का नगाड़ा बजाया गया। वे दुर्ग से नीचे उतर कर शीघ्रतापूर्वक चले और जेतपुर आ पहुँचे।

राजा जब राजसभा में बैठा हुआ था, तब उसको एक पुत्र की प्राप्ति हुई। राजा ने सभी सभासदों को विदाई दी और राजा और राजा ने परस्पर बातचीत की। ११७।

हम्मीर का शुभ जन्म हुआ और पारस पत्थर की प्राप्ति हुई। जैतसिंह चौहान पर अब जगत्पिता प्रसन्न हुए। ११८।

भगवान राम, देवाधिदेव महादेव और नवों नाथों की साक्षी देकर जब पक्के वचन ले लिये तब पारस पत्थर जैतसिंह को सौंपा। ११९।

जब पारसमणि घर में आ गई तो मन अत्यन्त उत्साह से भर गया। उधर हम्मीर का जन्म हुआ। इस तरह दो प्रकार का लाभ हुआ। १२०।

अनेक प्रकार के बधावे (वर्धापन) हुए, घर घर में मंगलाचार हुए। दान पुण्य भी बहुत किया गया और हर घर में बंदन माल बांधे गये। १२१।

राजा बहुत प्रसन्न हुआ, उसके मन में उत्साह का संचार हुआ। उसने रौंणा से दस मन लोहा मंगाने के लिये कहा। १२२।

दस मन लोहा मंगवा कर उसकी परीक्षा ली तब विश्वास हुआ। वह लोहा पारस का स्पर्श करते ही सोना बन गया। उसमें कोई देरी नहीं लगी। १२३।

तब राजा ने रौंणा से कहा कि यह सोना तुम ही ले जाओ। १२४।

रौंणा ने निवेदन किया कि यह हमारे ही घर में रखा है, जब भी घर में आवश्यकता (इच्छा) होगी तब निवेदन करके ले जाऊंगा। १२५।

सर्वप्रथम आप लोग शकुन मनावें और दो चार मन सोना ले जावें। एक ने कहा कि आप हमारा कहना माने और सभी देशों में पत्र भिजवावें। विद्वानों और पंडितों को बुलालें। षट् दर्शनियों (चारण, भाट, ब्राह्मण साधु-सन्यासी आदि) को दान दें। इस प्रकार सबसे पहले दान पुण्य की नीति का पालन करें। उसके बाद आप जो भी कहेंगे वैसा ही करेंगे। १२६।

तब रौंणा ने अपने साथियों को बुला लिया और भंडार में जितना भी द्रव्य था वह सब खुलवा दिया। सब को नकद (रोकड़ी) रुपये देकर संतुष्ट करते हुए प्रसन्न किया। सभी लोगों को बुलाकर कहा कि वे एक काम करें। आप लोग इधर उधर चारों दिशा में जावें और जो यहाँ आकर बसना चाहें उन्हें खींच सम्मान) दिलावो। १२७।

लोगों को चारों दिशाओं में विदा करके हर प्रदेश में पत्र भेजे। वे लोग दूर देशान्तर तक जा पहुँचे और लोगों को बुला बुला कर कहा कि राजा जैतसिंह यज्ञ का आयोजन कर रहा है अतः उसने छः दर्शनों के अनुयायियों को बुलाने की आज्ञा दी है। जो भी राजपूत ठाकुर वहां बसना चाहें उन्हें राजा जागीर के गाँव और घोड़े देगा। १२८।

जो लोग दूर देशान्तर में जा पहुँचे उनसे लोगों ने इस अनोखी बात के विषय में आकर पूछा कि कौन कहाँ का राजा अब कहाँ नयी बस्ती बसा

रहा है। (दूतों ने बताया) कि वह चौहान नरेश जैत्रसिंह है और उसका देश (राज) आडाबळा में हैं। वह एक और नया दुर्ग बसाने जा रहा है। जो भी वहाँ बसना चाहे उसको वह खींच दिलावेगा। १२९।

छत्तीस ही वंश के लोग उमड़ कर (अपार संख्या में) आये। उन सबके लिये भोजन की व्यवस्था की गई। बड़े बड़े क्षत्रिय सामंत आकर राजा से मिले। अन्य जातियों के भी जो लोग आये उन्हें उनकी इच्छानुसार वस्तु दी गई। लोगों ने एक महायज्ञ का आयोजन किया। उसके लिये जितना द्रव्य खर्च हुआ उसका कोई लेखा नहीं था। १३०।

राज सभा का आयोजन करके राजा ने अपना आसन ग्रहण किया। विद्वानों और पंडितों को उसमें बुला लिया। राजा ने उनसे कहा कि वे आगे आवें और वनसागर के विषय में प्राचीन काल से सारी कथा कहें। यहाँ पूर्व-काल में कौन निवास करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ कोई पुराना खेड़ा (ग्राम) था। यह भी बतावें कि इसका नाम पद्मगढ क्यों कहा जाता है। १३१।

तब विद्वान् पंडितों ने कहा कि हे राजा! आप ध्यान से कथा सुनो। यहाँ ऋषीश्वर रहे और हनुमान भी यहाँ आये थे। लक्ष्मणजी भी यहां आये थे। लव और कुश का जन्म इसी स्थान पर हुआ था। १३२।

राम, लक्ष्मण और हनुमान यहां कब आये और लव और कुश का जन्म यहाँ क्यों हुआ, इसका विवरण बताओ। १३३।

हे महाराजजी सुनो। जब सीताजी का अपहरण हुआ तब भगवान श्री राम यहाँ आये थे और त्रिवेणी के किनारे पर आकर बैठे थे। इसी से इसका नाम रामेश्वर पड़ा है। उन्होंने यहीं हनुमान से कहा था कि वे सीताजी का सही पता लगा कर आवें। हनुमान लंका जाकर वापिस यहाँ आये और उन्होंने रामचंद्रजी को सारी बात बतायी। १३४।

हनुमान को सीता का पता लगाने को भेजा गया। उन्होंने पता लगाया और नवलखा बाग देख कर शीघ्र वापिस आया। १३५।

हनुमान ने आकर तत्काल रामचन्द्रजी से समस्त वृत्तान्त कहा। राम उन्हीं दिनों यहाँ आये थे और मंत्रणा करने लगे। १३६।

तब रामचन्द्रजी ने पूछा कि लंका कैसी रहस्यमयी बनी है। तब राम चन्द्र जी ने इस प्रकार युद्ध किया। हनुमान वन सागर पर चढ़ा (आक्रमण

किया) । यहाँ देखो— यह लंका की समता करता है। यहाँ पर्वत है तो वहाँ पानी है। यह सब राजा को समझाया। । १३७ ।

रामचन्द्रजी ने अयोध्या में जाकर देवों और मनुष्यों को बुलाकर एकत्र किया। समुद्र में शिलाओं को तिराकर (पत्थरों का पुल बना कर लंका पर आक्रमण किया। १३८ ।

रामचन्द्रजी जब यहाँ से लौट कर गये तो उन्होंने छः मास तक सेना एकत्र की। समुद्र को बाँध कर (पुल बनाकर) लंका के समीप पहुँचे। वहाँ भयंकर युद्ध हुआ। उन्होंने रावण को मार कर उसके सारे कुटुम्ब का संहार कर दिया। और विभीषण को लंका का राज देकर उसका उद्धार किया। सीता को लेकर वह अयोध्या गये तब एक दुष्ट ने बुरे वचन कहे। १२९ ।

रावण की लंका को जीत कर विभीषण को राज्य दिया और देवताओं और मनुष्यों के साथ वे अयोध्या लौट आये। १४० ।

श्रीराम ने लक्ष्मण को बुला कर कहा कि हे भाई तुम मेरा एक काम कर दो। तुम मेरे कहे का कभी लोप नहीं करते हो। तुम सीता को वनखंड में जाकर रख आवो। सुनते ही लक्ष्मण व्याकुल हो उठा और बोला कि आपने यह बहुत बुरा निर्णय लिया है। मैं तो आपका आज्ञाकारी हूँ अतः जैसा आप कहेंगे वैसा ही करूंगा। १४१ ।

राम ने लक्ष्मण से कहा कि आगे और बात मत करो। सीता को वन में छोड़ कर, प्रातःकाल ही लौट आवो। १४२ ।

राम ने कहा कि यह रचना ऐसी ही है। इस विषय में और कहीं कुछ भी न कहना। मैं नहीं कहूंगा तो और कौन कहेगा? मौन साध लेने से कैसे समाधान हो सकता है? (हे राम!) आपने यह विचार बहुत बुरा (बुद्धि-हीनता का) किया है। राजा अपनी पत्नी का परित्याग क्यों करें। आप ऐसा बुरा काम न करें। क्यों कुबुद्धि पूर्ण विचार में अपने को लगा रहे हो। १४३ ।

रामचंद्रजी ने पुनः कहा कि हमारे वचन की उपेक्षा मत कर देना। पूर्व में भी तुमने मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया है—इसी से मैं अब भी यह तुम्हें कह रहा हूँ।

तब लक्ष्मण ने प्रणाम करके उत्तर दिया कि यह काम उससे नहीं होगा। यदि यह सब करके यही निर्णय लेना था तो फिर लंका का विध्वंस किस कारण से किया। १४४ ।

तब झुंझला कर तीसरी बार बोले—अब तूं मेरा कहा क्यों नहीं मानता है ? तुमने आज तक कभी मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया था—अब उल्टा जवाब देकर क्रुद्ध होता है। तुम्हारे मन में अब कोई और ही विचार आ गया है, जो तुमने इस समय जिद्द करना प्रारंभ कर दिया है। तुम हमसे दूर हो जाओ, हम किसी और को भेज देंगे। १४५।

उसके उपरान्त लक्ष्मण ने रामचन्द्रजी से और कुछ नहीं कहा। हाथ जोड़ कर उनसे निवेदन किया कि आप जैसी भी आज्ञा देंगे, उसी के अनुसार इनको छोड़ देंगे।

(राम ने कहा कि)—जहाँ निर्जन गहन वन हो, वही सीता को रख दो और तुम तत्काल लौट आवो। १४६।

लक्ष्मण ने रथ मंगवा लिया। सीताजी उसमें आकर बैठ गई। लक्ष्मण ने सभी जंगलों में घूम घूमकर देखा और सभी जगह लोगो की बस्तियाँ दिखाई दी। जब वह घूमता फिरता इस स्थान पर आया तो उसने सारे जंगल को निर्जन देखा। इसके एक ओर नागरचाल प्रदेश था और दूसरी ओर घंघेरखंड। यह सारा प्रदेश दूर दूर तक उजाड़ था। एक तो जंगल और उसमें बहुत ऊंचे ऊंचे पर्वत। १४७।

लक्ष्मण ने वहां आकर रथ को रोका और स्वयं चल कर वन सागर पर आया। वहाँ एक ऋषिराज तपस्यारत थे। समीप ही पानी से भरा गहरा कुण्ड था। उसने सीता को लाकर वहाँ रखा और स्वयं अयोध्या लौट गया। १४८।

सीता के यहाँ लव और कुश नाम के पुत्र हुए। उन पर ऋषि पूर्ण कृपा रखते थे। वे दोनों कुमार जब बारह वर्ष के हुए तो दोनों ही शिकार के लिये जाने लगे। दोनों ही महाबलशाली वीर थे। उन्होंने किसी प्रकार अपने-अपने राज्य स्थापित किये। लव ने बली नाम का गाँव बसाया और कुश ने कुशतला। १४९।

इस पर्वत में एक कुण्ड था, जहाँ सीता रहती थी। उसके पुत्र लव और कुश दोनों ही महान् योद्धा और भयँकर वीर थे। १५०।

द्वितीय अध्याय

उसके बाद यहाँ पद्म ऋषि ने निवास किया, जिनका निवास यहाँ बहुत समय तक रहा। हे राजन्! उनकी बात सुनो। उनकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता। उनके पास एक पारस पत्थर था, अतः उनको किसी वस्तु की कमी नहीं थी। उन्होंने यहाँ पर पद्मताल का निर्माण करवाया और उसके नवमांगलि उत्सव (विवाह) का प्रबन्ध किया। १५१।

वे लक्ष्मी प्राप्ति से बहुत अधिक तृप्त थे। उन्होंने बहुत बड़े यज्ञ का आयोजन किया। आठों दिशाओं में समाचार प्रसारित करके, उन्होंने सभी ऋषियों को आहूत किया। देश-देशान्तर के राजा लोग वहाँ पधारे। उनके समूह ऐसे प्रतीत होते थे जैसे लंका में राम सेना के दल। उनको इच्छानुसार भोजन दिया जाता था—तदुपरान्त सायँकालीन भोजन की व्यवस्था की जाती थी। १५२।

ऋषिगण प्रातःकाल स्नान करते थे। तदर्थ प्रतिदिन उनको दूर तक जाना आना पड़ता था। उस स्थान पर बंधा हुए कुंड या सरोवर का पानी मिलता था। ऋषियों का कहना था कि वे अपने आश्रमों में सदा बहते पानी से ही स्नान करते हैं। सब ऋषियों ने मिल कर एक मत से उपाय सोचा कि वे इसी पानी से वहाँ स्नान करेंगे। १५३।

सभी ऋषियों ने सम्मति की कि माता वरणावती (बनास) ब्रह्माजी की पुत्री स्वयं लघु गंगा है। गंगा में नहाने का जो फल मिलता है, वही फल बनास में स्नान करने से मिलता है। इसका पानी निकाल कर उस स्थान तक ले जावें, जहाँ कँवला (कँवालजी—कृतमालेश्वर) नाम के ऋषि का आश्रम है। तब बनास नदी ने तत्काल दर्शन दिया। १५४।

हँस कर बोली कि उसका अहोभाग्य हैं कि मैंने ऋषियों के दर्शन किये। हे ऋषिगणों! आपने मुझे कैसे याद किया। जो भी रहस्य हो वह मुझसे कहो। तब ऋषियों ने कहा कि हे माता हमने आपको इस लिये स्मरण किया है कि, यहाँ से बनसागर का स्थान जहाँ पद्म ऋषि का आश्रम है, यहाँ से पाँच कोस दूर है। १५५।

ऋषिश्वर ने जहाँ यज्ञ का आयोजन किया है, वहाँ असंख्य ऋषिगण आये हुए हैं। हम भी बुलाये जाकर वहाँ आये हैं। हम वहाँ कई दिनों तक

रहेंगे। वहाँ स्थान स्थान पर पानी है, पर तुम्हें छोड़ कर हम नहीं नहाते। हमारा प्रति दिन यहाँ तक आ पाना दुष्कर है। हम थक जाते हैं और दुखी होते हैं। १५६।

हे माता हम पर कृपा करके अपनी एक धारा वहां भिजवा दें। प्रार्थना सुनकर नदी (बनास) ने कहा कि आप आज्ञा देंगे, उसी जगह मैं अपनी धारा वहां तक बहा दूंगी। अथवा आप मेरी पांच धारायें ले जावें और ऋषि गण उससे सुख प्राप्त करें। ऋषियों ने कहा कि आप इन धाराओं को वहां भेजें जिससे वे वनसागर की जड़ों (नींव) का प्रक्षालन करते हुए बहें।१५७।

बनास नदी ने तदनुसार उधर अपनी पांच धाराएँ प्रवाहित कर दी। इसी से वे पंच तीर्थी कहाती हैं। ऋषि गण उस स्थान पर अत्यन्त सुखी हुए और प्रसन्न होकर भगवान की स्तुति करने लगे। साधु, संन्यासी, ब्राह्मण आदि षड्दर्शनी अत्यन्त आनन्दित हुए, और उस आयोजन में सम्मिलित हुए राजा लोगों को भी बहुत प्रसन्नता हुई। यज्ञ प्रारम्भ हुआ इसकी सुगन्ध स्वर्ग लोग तक व्याप्त हो गई। १५८।

यह सुनकर राजा ने यज्ञ पूरा किया। पद्म ऋषि इससे बहुत संतुष्ट हुए। ऋषि और राजा ने आगत अतिथियों को पहरावणी (विदाई के सम्मान सूचक परिधानादि) दी। राजा और ऋषि ने विचार करके इस वन का दूसरा ही नाम रखने का निर्णय लिया। सबने मिल कर एक ही बात कही कि इसका नाम पद्मगढ रखा जावे। १५९।

उस समय से ही इसका नाम पद्मगढ हो गया, जहां पद्म ऋषि निवास करते थे। ऋषि के शिष्यों में राजा भी एक शिष्य था। ऋषि की उस पर अत्यधिक कृपा थी। राजा रात दिन उनकी सेवा करता था और हृदय में उसके प्रति अपार श्रद्धा रखता था। ऋषि ने उसको वह पारस पत्थर दे दिया और उसको पद्मगढ का राजा बना दिया। १६०।

राजा का नाम भैरूंसेन था। छत्र धारण करके वह सिंहासन पर बैठा। उसकी राज सभा राजा भोज की राजसभा की तरह प्रकाशित (सुशोभित) थी। वह राजा विक्रमादित्य के समान शासन करता था। १६१।

भैरूंसेन बड़ा भाग्यशाली था। वह पद्मगढ में राज्य कर रहा था। पद्म ऋषि ने उसको पारस पत्थर दे दिया, जो अंतहीन संपत्ति प्राप्त करने का साधन था। १६२।

उसके राज्य का वर्णन कौन कर सकता है। उसने चारों दिशाओं में अपनी शक्ति के बल पर राज्य का विस्तार किया। उसके चार सौ मंत्री थे—उन सभो में उसने शासन प्रबंध का वितरण कर दिया। राजा के सात सौ रानियां थी। वह रात दिन उनके साथ विषय भोग में लिप्त रहता था। उसकी सभी रानियां राजकुमारियां ही थी। फिर भी उसने और भी दासियां मंगवाई। १६३।

वह राजा कामातुर हो गया और हर क्षण काम की संतुष्टि में रत रहता था। काम वासना से अंधा हो गया। राज्य में अशान्ति व्याप्त हो गई। १६४।

वह राजा वासनाग्रस्त हो गया। कामवासना से नगर की शान्ति नष्ट हो गई। कामो व्यक्ति का ध्यान रात दिन काम वासना की ओर ही रहता है। वह कभी भगवान का स्मरण नहीं करता। अच्छे बुरे का ध्यान नहीं रखता। वह दूसरों की स्त्रियों को ताकता रहता है। कामदेव ने किस किस को नहीं डुबो दिया है। लंकापति रावण ने भी काम के वशीभूत होकर अपना सर्वस्व खो दिया। १६५।

हे राजन्! और भी आश्चर्यजनक बात सुनो। समुद्र पार मक्का का देश (अरब) है। वहां एक नये ही मत का प्रादुर्भाव हुआ है। उसके प्रचार के लिये पैगम्बर दौरा करता रहता है? वहा गायों का वध किया जाने लगा। वहां के सभी देवता और ऋषि वहां से पलायन कर गये। वहां एक देवी का स्थान (पीठ) था। उस देवी का नाम मंकेश्वरी था। १६६।

वह सृष्टि के आदि और अंत की देवी के रूप में मान्य थी। वह बहुत अधिक पूजित थी। पीरों को यह बात अच्छी नहीं लगी अतः वे प्रतिदिन उसका उपहास (तंग) करते थे। पगंबर उसे जोगिन कह कर हँसी उड़ाते थे। देवताओं का प्रभाव कम होता गया और पैगम्बरों का प्रभाव बढता गया। १६७।

तब देवी उठकर उनसे इस प्रकार बोली कि आप लोग मुझे तंग क्यों करते हो? में यहां की आदि भवानी हूँ, पर तुम तुर्क लोगों ने मुझे जोगिन समझा है। मन में अत्यन्त अहंकार धारण करके उसी प्रकार अत्यधिक क्रुद्ध होकर उसने कहा— हे पीरों! मैं तुम सबको क्षण भर में नष्ट कर सकती हूँ। यदि ऐसा नहीं कर सकी तो मेरा देवी नाम नहीं होगा। १६८।

तब पैगम्बर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और हाथ में तलवार उठाली। और बोला—तुम क्या बकवास करती हो, मैं तुमको जान से मार डालूंगा। १६९।

तब पैगंबर क्रुद्ध हो उठा और कहने लगा, कि मैं तुमको कष्ट दे दे कर मारूंगा। तब देवी ने गर्ज कर उत्तर दिया आज मेरे साथ तुम्हारा शास्त्रार्थ होगा। जो जीत जायगा वही यहां रहेगा और हारने वाले को देश से निष्कासित कर दिया जायगा। तब दोनों के मध्य भयंकर शास्त्रार्थ हुआ। पैगंबर जीत गया और देवी हार गई। १७०।

जिसकी बहुत अधिक तपस्या थी और सारा संसार आकर जिसको प्रणाम करता था, तपस्या के क्षीण हो जाने पर उसकी बात किसी को अच्छी नहीं लगती। १७१।

जिसकी तपस्या क्षीण होती जाती है, उसकी बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है। जिसका राज्य छिन जाता है, उसकी कोई सहायता नहीं करता। उसकी बात कोई नहीं मानता, भगवान भी उनसे दूर ही रहता है। तपहीन हो जाने पर उसको कहीं कोई स्थान नहीं मिलता। सहना (रक्षक) के पद से च्युत कर दिये जाने पर उसका मर्दक (मालिश करने वाला) नाम हो जाता है। १७२।

जिसकी तपस्या फलीभूत होने लगती है, भगवान् भी उसकी सहायता करता है। जिसका प्रभाव वृद्धि पर होता है, सब उसको अच्छा कहने लगते हैं। भगवान् ने यदि किसी को कुछ दिया है तो वह किसी अन्य के किये कैसे दूर हो सकता है। उसने जो कुछ भी करने का सोचा है. वह करेगा वह निशिदिन और किसी को नहीं पूछता। १७३।

देवी मन में विचार करती थी, और निर्णय लेने लगी कि यहां इनकी शक्ति (प्रभाव) अधिक है, अतः इस स्थान को छोड़ कर चले जाना चाहिए। १७४।

तब देवी विमान में बैठकर उड गई, जिस प्रकार सुलेमान घोड़े पर चढ कर भाग गया था। आगे आगे देवी भागती जा रही थी और उसके पीछे पैगंबर पीछा करता आ रहा था। सभी राजाओं ने उसको देखा, पर उसे कोई संरक्षण नहीं दे सका। घूमते फिरते वह पद्मगढ आ पहुँची और राजा से मिली। १७५।

उसने राजा से सारी घटना सुनाई और अपनी उत्पत्ति का वर्णन प्रारंभ से किया। १७६।

पैगंबर ने मक्का में मेरा राज्य छीन लिया है। में उससे जीत नहीं सकी, इसीलिये भाग कर आई हूँ। १७७।

वह मेरे पीछे पड़ा हुआ है, और वह यहां आ पहुंचेगा। वह चमत्कारी व्यक्ति है और दौड़ा कर रहा है। १७८।

राजा ने देवी से कहा कि हे देवी ! तुम भयभीत न होवो। यहाँ असंख्य पीर भी आ जाय तो भी मैं उनसे मुकाबला करूंगा। १७९।

तुम अपने मन में शंकित मत होवो। वह तो एक ही आदमी है, यदि सभी पैगंबर मिल कर भी आ जावें तो भी मैं उन्हें नष्ट कर दूंगा। १८०।

देवी ने कहा कि हे राजा ! सुनो आप और कोई बात नहीं समझें। इस मत का नया ही उद्भव हुआ है, इसी से वे लोग दौरे कर रहे हैं। १८१।

देवी ने कहा कि हे राजा सुनो अपने मन में किसी प्रकार का गर्व (मन्यु) मत लावो। जिसके भी मन में मनि (घमंड, का भाव उत्पन्न हो गया, भगवान् उससे रुष्ट हो जाता है। १७२।

राजा ने देवी को उत्तर दिया कि जो कुछ होना है, वह तो होकर ही रहेगा। हम तैंतीस ही देवताओं से लड़ सकते हैं ये तो दो ही पंथ कहे गये हैं। १८३।

इतने में हीं पैगंबर आ पहुँचा और नगर द्वार पर आकर द्वारपाल से से कहा कि वह जाकर राजा से उसका अभिवादन कहे। "पैगंबर नगर के द्वार पर आ खड़ा हुआ है" मेरा एक संदेश जाकर कह देना। वह और किसी प्रकार संदेह न करे। मेरा एक अपराधी जो तुम्हारे पास आया हुआ है, उसको अविलंब बाहर निकाल दें। १८४।

तब द्वारपाल राजा के पास आया और हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और कहा, "कोई पैगंबर नाम वाला आया है, और उसीने मुझे आपके पास भेजा हैं। वह द्वार पर खड़ा है और आपको अभिवादन कहलाया है। साथ ही एक संदेश और भी कहलाया है कि उसके अपराधी को लौटा दें। १८५।

सुन कर राजा ने कहा, "तुम देरी मत करो, वापिस जाकर देखो कि उसके साथ कितनी सेना और शक्ति है। १८६।

तब पोल्या (द्वारपाल) ने निवेदन किया कि मैंने सब कुछ सतर्क होकर देखा है। वह अकेला ही एक मर्द हैं और उसके तख्त को चार अन्य मर्द (पुरुष) उठाये हुए हैं। १८७।

उससे जाकर कहो कि यह किसका चोर (अपराधी) है। यह तुमको परास्त नहीं कर सकी, इसी से भाग कर आई। १८८।

"यह हमको देख कर हमारे दुर्ग में आई है अतः हम इसको कैसे दे सकते हैं। और सभी उपाय किये जा सकते हैं, पर जो शरण में आ गया है उसको बाहर नहीं निकाला जा सकता। आप वापिस अपने स्थान पर लौट जावें। हे श्रेष्ठ पुरुष! क्यों अकाल मृत्यु को प्राप्त होना चाहते हो। इसने तुम्हारी क्या हानि की है। जो हार गया उसे तो भगवान् ने पहले ही मार डाला हैं। १८९।

तब द्वारपाल वापिस लौट गया और उस पुरुष से जाकर कहा कि उसने उनको सभी बातें राजा को कहदी है—और राजा ने हँसते हुए उत्तर दिया है कि यह किसका अपराधी है जिस पर तुम अपना जोर जमा रहे हो। तुम इसको कभी भी प्राप्त नहीं कर सकोगे, अतः शीघ्र ही वापिस लौट जावो। १९०।

तब पैगंबर ने क्रुद्ध होकर कहा, "तुम राजा से वापिस जाकर कहो कि हमारे अपराधी को शीघ्र ही हमें लौटा दो, अन्यथा सबको मार डालूंगा। १९१।

सुनते ही पैगंबर रुष्ट हो उठा और द्वारपाल से कहा कि वह राजा को दुबारा जाकर कहे कि यदि हमारा अपराधी हमें नहीं लौटाते हो तो, आवो और युद्ध करो। नहीं आये तो मैं तुम्हारे घर में आकर तुम्हें मार डालूंगा और जोगिन को छीन कर ले जाऊंगा। १९२।

तब दूत वापिस लौट कर गया और राजा के पास जा पहुँचा और कहा—वह तो बहुत अधिक क्रुद्ध हो रहा है। वह सब कुछ मुझसे नहीं कहा जाता। वह तो कह रहा है कि जोगिन उसको लौटा दे अन्यथा सामने आकर युद्ध करे। वह तो अनाप-शनाप बोलता हुआ बात कर रहा है और अपने ही जोश में जलकर मरा जा रहा है। १९३।

राजा अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और सभी सामंतों को बुला भेजा और आदेश दिया कि वे पैगम्बर को जाकर कहे कि वह लौट क्यों नहीं जाता है। १९४।

तब राजा अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और सैनिकों को भी बुला लिया और उनसे कहा कि द्वारपाल से जो भी युद्ध करे उसे मार डालो। १९५।

वह भली भांति चला जावे तो तुम उसे जाने दो। अगर वह हथियार लेकर सामना करे तो उसको मार डालो। १९६।

सुनते ही सैनिक दौड़ पड़े और पैगम्बर से जाकर बात की। वह तो सीधे बात भी नहीं कर रहा था और न मन में किसी प्रकार का भय ही था।

तब राजपूतों ने क्रुद्ध होकर उसको ललकारा और कहा—"अब तूं यहां से अच्छी तरह निकल जा। हम तो तुम्हारे हित की कह रहे हैं, अन्यथा हमको आदेश मिला है कि हम तुमको मार डालें"। १९७।

पैगम्बर ने खड्ग उठाया और सभी सैनिकों को मार डाला। जो भाग गया वही इधर-उधर हथियार चलाते हुए बच सका। १९८।

सुनते ही पैगम्बर क्रुद्ध हो उठा और खड्ग निकालकर सैनिकों के सिर पर प्रहार किया और दो चार को मार डाला। जो भाग गये वे बच गये। उन्होंने राजा के सामने जाकर अपनी दु:ख गाथा सुनाई कि उसके बीच भयंकर शस्त्राघात हुआ पर उसके शरीर पर तो खरोंच तक नहीं आई। १९९।

राजा ने नकीब को बुलाकर कहा कि सभी सामन्त और सभासद् अब आ उपस्थित हो। नकीब ने सबका तत्काल आह्वान किया, जिसे सुनते ही सभी लोग इकट्ठे होकर आ गये। राजा ने दस बड़े सामंतों को बुलवा लिया और उनको सारी बात समझाकर कहा कि वे त्वरित जावें और उसको मार डालें। २००।

सभी सामंत इकट्ठे होकर मूंछे मरोड़ते हुए दौड़कर गये। उन्होंने सुदर कवच और आयुध धारण किये और भयंकर युद्ध किया। २०१।

सामंतों ने अपनी मूंछों पर बल देते हुए प्रस्थान किया। उनके साथ और भी कई आदमी गये जो जाते समय वहां एकत्र हो गये थे। उनमें भयंकर शस्त्र प्रहार हुए। एक ओर एक हजार सैनिक प्रहार कर रहे थे, पर पैगम्बर ने वहां से अपना पांव तक नहीं हटाया। तलवारों और कटारों के अगणित प्रहार हो रहे थे, पर पैगंबर के शरीर में कोई घाव तक नहीं हो रहा था।२०२।

उसके शरीर पर कोई हथियार कारगर नहीं हो रहा था। उसे कौन मार सकता है। पुराने जोशी पढते थे कि यह दूसरा ही मत चलेगा। २०३।

उस मर्द का शस्त्र प्रहार इस प्रकार हो रहा था कि जिस पर भी वह प्रहार करता था उसके दो टुकड़े हो जाते थे। यद्यपि राजपूत योद्धा आगे दौड़-दौड़कर उस पर प्रहार करते थे, पर वह अपने पांव पीछे नहीं हटाता था। युद्ध में इस प्रकार का अचंभा हो रहा था कि उसके शरीर पर किसी शस्त्र से घाव तक नहीं हो रहा था। भयँकर युद्ध हो रहा था। चार प्रहर तक दिन में युद्ध हुआ। २०४।

चार प्रहर तक युद्ध हुआ। अनेक सामंत वीर गति को प्राप्त हुए। पैगंबर अपने पाँव दृढ किये हुए वहीं खड़ा रहा।२०५।

सामंतों ने सोचा कि अब रात हो गई है, युद्ध कैसे करें। अब राजा से जाकर कहा जाय।२०६।

उन्होंने राजा के पास जाकर सारी घटना का विवरण बताया। तब राजा प्रधानों को बुलाकर विचार विमर्श करने लगा।२०७।

राजा ने प्रधानों से कहा कि यह छोटी सी बात थी जो बढ कर बहुत बड़ी हो गई है। अब रात हो गई है अतः अब युद्ध करना व्यर्थ है। यह पता लगावो कि वह कौन है। वह कोई देव है, दानव है या कोई ऋषि है, जिसके अंगों पर शस्त्राघात नहीं होता। तब प्रधानों ने निवेदन किया कि महाराज ध्यान देकर सुनो।२०८।

पहले वृद्ध जोशी पुराण पढते समय बताते थे कि किसी नये पंथ (सम्प्रदाय) का प्रादुर्भाव होगा, जिसके सिद्धान्त और आचरण भिन्न ही होंगे। यह वही सम्प्रदाय प्रकट हुआ प्रतीत होता है जिसका प्रादुर्भाव हुए लगभग डेढ सौ वर्ष हो गये हैं। मक्का में इसका संस्थापक राज्य कर रहा था। उसने पड़ौस के राज्यों पर अधिकार करते हुए रूम और शाम तक अपने सुदृढ राज्य की स्थापना कर ली थी।२०९।

यह तो चमत्कारी पुरुष है। इसका नाम पीर पैगंबर है। वह एकलधारी (अकेला ही लड़ने वाला वीर) पुरुष है, इससे युद्ध में कौन विजय पा सकता है।२१०।

आप लोग तो यहां है ही, अन्य वीरों को भी बुलवा लो। और सब मिलकर कोई ऐसा परामर्श (उपाय) करो, जिससे यह यहां से चला जावे।२११।

"हे राजन्! इसकी युक्ति यही है कि इस जोगिन को उसे सौंप दिया जाय। उस अवस्था में उसका कोई जोर नहीं चलेगा। वह बार बार चोर (अपराधी) बता बता कर उसकी मांग कर रहा है।" राजा ने कहा कि ऐसा कैसे हो सकता है? क्या शरण में आये को कोई निकाल देता है। मैंने उसको अनेक प्रकार से संरक्षण का आश्वासन दिया है, अन्यथा वह कभी से निकल कर दूर चली जाती।२१२।

आप स्वयं इस विषय में विचार करें कि इस योगिनी को यहां शरण देने पर यह झगड़ा किस प्रकार मिट सकेगा। वह अपनी कला, चमत्कार के बल पर गर्व करता हुआ युद्ध करता है। उससे मनुष्य किस प्रकार मुकाबला कर सकता है। यह हमको समर्थ देख कर इतनी दूर से दौड़ कर आई है,

और हमने भी इसको यहां रोक रखा है। आप बतावें कि इसको किस प्रकार यहां से निकाल दिया जावे। शरण में आये को प्रतिष्ठा का निर्वाह करें।२१३।

यदि कोई किसी को शरण में लेकर निकाल देता है, तो उसका मनुष्य जन्म ही निरथक हो जाता है। जो व्यक्ति अपने दिये गये वचन से विमुख हो जाता है, तो वह जन्म जन्मान्तर तक कष्ट पाता है। संरक्षण में लेकर जो दूर हो जाता है, उस क्षत्रिय के जीवित रहने को ही धिक्कार है। आप दिये गये वचन और संरक्षण से पीछे न हटो - अपने घर बार संपत्ति और मनुष्य जन्म को सार्थक बनावो। २१४।

हे राजन्! हमें एक उपाय सूझा है, यदि आपको पसंद आ जाय। देवी को यहाँ से कहीं बाहर भेज दिया जाय और पीर को दो दिन तक उलझाये रखा जावे। तब तक वह बहुत दूर चली जायगी और तब हम इससे बात बनाकर कहेंगे कि वह यहाँ से भाग कर दूर चली गई है। आप हमसे चाहे तो सौगंध ले सकते हैं। २१५।

राजा ने कहा कि हम अपने वचन से विमुख न हो, और उस माता के प्राणों की रक्षा कर सकें। हमें तो यही सम्मति अच्छी लगी है। इस प्रकार वह इसके हाथ में नहीं आयगी। तब राजा ने देवी से अपने मन की बात समझा कर कहीं कि आप यहाँ से कहीं दूर चली जावें। जब तक आप दूर पहुँचोगी, हम इससे युद्ध करते रहेंगे। २१६।

रात में ही देवी वहाँ से चली गई। रात बीत गई और जब प्रातःकाल हो गया तो लोग उठकर बाहर देखने लगे। स्थान स्थान पर जन समूह उमड़ कर इकठ्ठे हो गये। पैगंबर वहाँ आ पहुँचा और सारे पर्वत पर व्याप्त होकर बैठ गया। उसने अपनी कला का प्रदर्शन किया और अनेक कलाधारी (चमत्कारी) जवान वहाँ आ उपस्थित हुए। २१७।

चमत्कारी पैगंबरों ने आकर सारे पद्मगढ को चारों ओर से घेर लिया। और भैरूंसेन से कहने लगे कि वह उनके अपराधी को लौटा दे।२१८।

उन्होंने राजा भैरूंसेन को संदेश पहुँचाया कि वह योगिनी को अविलंब भेज दे या युद्ध के लिये तलवार संभाल ले। २१९।

स्थान स्थान पर रणतूर वाद्य बजाये जा रहे थे। करतल और शंख ध्वनि हो रही थी। योद्धा तलवारें हाथ में लिये खडे थे। अनेक योद्धा नगर द्वार पर आकर बैठ गये। वे विशालकाय थे जिनके शरीर देदीप्यमान

थे। उनके नेत्रों की नजर कोई सहन नहीं कर पा रहा था। उन्होंने दुर्ग को चारों ओर से घेर लिया और आवाज लगा रहे थे कि उस रंडी (योगिनी) को शीघ्र लेकर आवो। २२०।

दुर्ग के निवासियों ने दृष्टि फैलाकर देखा के पीरों की अगणित सेना पडी थी, उनकी गिनती कर पाना सभव नहीं था। उन्होंने राजा के पास जाकर फरियाद की कि वे स्वयं आकर सैन्यदलों का निरीक्षण करें। राजा ने उत्तर दिया कि उसको क्यों पूछते हो तुम लोग ही उसका सामना कर युद्ध करो। आप लोगों को ऐसे ही आपत्ति के दिनों के लिये तो रखा गया है। वे सभी जावें जिन्होंने मेरा नमक खाया है। २२१।

सभी राजपूतों (सैनिक) नें सुन्दर कवच धारण करके एक मत होकर जयघोष करते हुए प्रस्थान किया और भयंकर मारकाट प्रारम्भ कर दी। २२२।

सारे दुर्ग में ही हल्ला व्याप्त हो गया। रणनाद होने लगा, ढोल और नगाड़ों पर चोट पड़ने लगी। सामंत लोग कवच और आयुधों से सुसज्जित होकर अपने प्राणों की आशा छोड कर दुर्ग से उतरे। दोनों ओर से युद्ध घोष हो रहा था। राजपूत सैनिक किसी प्रकार से भयभीत नहीं थे। दोनों पक्ष की सेनायें एक दूसरे को ललकारते हुए एक दूसरे के सामने हुए और लड़ते हुये शस्त्र प्रहार कर रहे थे। २२३।

सामंत जिस पर भी प्रहार करते थे, वह क्षण भर में गायब हो जाता था, पर पैगम्बर जिस पर भी खड्ग प्रहार करते थे उसके दो टुकड़े हो जाते थे। तो भी सामंत उनका सामना कर रहे थे और भयभीत होकर भी सिंधु राग (वीरस पूर्ण राग में युद्ध के गीत) गाते थे। भयंकर युद्ध हो रहा था। योद्धा लथपथ होकर एक ही स्थान पर गिर पड़ रहे थे। युद्ध क्षेत्र में सिर विहीन धड़ घूमते दिखाई देते थे। २२४। (शवों पर शव गिर कर उनका ढेर लग गया। उस दिन भयंकर संग्राम हुआ।) २२४।

प्रधान ने राजा से कहा—"हे महाराज युद्ध क्यों कर रहे हो। वे तो चमत्कारी पुरुष हैं। आपकी ही इससे हानि होगी। २२५।

प्रधान ने राजा से निवेदन किया कि आप व्यर्थ ही में क्यों लोगों को मरवा रहे हैं। आपके सैनिकों के शवों को कोई गिन नहीं सकता, अर्थात् उनकी संख्या बहुत है, जब कि उनका बाल तक बांका नहीं हुआ है। वे अवतारी पुरुष है और हम मल (बुराइयों) को धारण करने वाले मनुष्य हैं।

मनुष्य देवों को नहीं जीत सकते—वे ऐसा बार बार राजा को कह रहे थे। २२६।

राजा कहता था कि जो होतव्य (भवितव्य) है, वह होकर रहता है, उसे कोई नहीं मिटा सकता।

इसने आपके शूरवीर सामंतों को मार डाला है। इनका निमित्त (हेतु, मृत्यु) उन्हीं के हाथ से लिखी थी। क्या इससे और भी संघर्ष की स्थिति टल गई है क्या ? कौन जाने यह कब तक होता रहेगा। यह तो कोई नया ही पंथ कहलाता है। हम उनसे युद्ध करते हैं, तो तेंतीस ही देवता उनकी सहायतार्थ आ जाते हैं। २२७।

आपने क्षात्रधर्म को अपना रखा है, जबकि हम तो आपके सेवक कहलाते हैं। आपको तो ऐसा ही करना चाहिए अर्थात् युद्धरत रहना चाहिए, पर हमारा तो निवेदन करने का ही अधिकार है। २२८।

आप लोग निश्चित होकर निवेदन करो और ऐसी बुद्धि लगावो कि हमारे वचन की रक्षा हो जाय और शत्रु भी यहाँ से चला जावें। २२९।

आपका वचन सदा ही सुरक्षित है। अब आप हमारा भी एक निवेदन मान लें। हम सभी उससे जाकर मिलेंगे और प्रपंच करके उसको यहां से उठा देंगे। अब तक जो कुछ होना था वह हो गया। अब और कोई नया झगड़ा नहीं होगा। हमने तो इसे साधारण (सामान्य) बात समझी थी। हम असावधान रहे और अनुमान नहीं लगा सके। २३०।

आप सभी बुद्धिमान प्रधान हैं। आपकी बराबरी और कोई नहीं करता। आप लोगों के रहते हुए भी इतना कुछ हो जाय, इसी का महान् आश्चर्य है। २३१।

हे श्रीमान् ! हम सच कहते हैं। हमने इतनी बात नहीं समझी थी। कितनी छोटी सी बात थी यह, जो बढकर इतनी बड़ी हो गई। २३२।

यह माया इसने ही फैलाई है, भगवान् किसी प्रकार इसे मिटा दे। आप लोग वही काम करना जिससे हम प्रसन्न रहे। २३३।

सभी प्रधान संगठित होकर राजा से विदा होकर आये और सम्मति की कि प्रातःकाल होते ही सभी बिना बुलाये इस स्थान पर एकत्र होवें। 2३४।

सभी लोग सोये हुए थे और जब आधी रात का समय हुआ, तब उन पीरों ने अपना चमत्कार दिखाया। उन्होंने दैवी विपत्ति को दुर्ग में भेजा। उसने प्रत्येक घर में प्रवेश पा लिया। घरों में कोई रोने लगा तो कोई हँस रहा था, कोई उठ कर कराहने लगा तो कोई लोट पोट हो रहा था। किसी के शरीर में पीड़ा होने लगी तो किसी को सिर दर्द होने लगा। किसी के नाक से रक्त बहने लगा। २३५।

कही बार बार स्वत: आग लग जाती थी और स्वयं बुझ जाती थी। कहुं उसकी लपटें आकाश को छूने लगती थी। विपत्ति रूप उस भयंकर पुरुष को जो पूर्ण रूप दिखाई दे रहा था—उसके अनुसार उसके बड़े बड़े दांत थे, केश बिखरे हुये थे, उसके पाँव पृथ्वी से बहुत ऊपर तक लगातार चले जा रहे थे। अपने मुख को बांधे हुये वह बहुत भयंकर लग रहा था। उसको देख देख कर नर नारी भूमि पर गिर पड़ रहे थे। घोड़े और हाथी भी उठ उठ कर गिर रहे थे। २३६।

वे राजा पर प्रहार करना चाहते थे, पर छत्रपति होने के कारण उस पर प्रभाव नहीं डाल सकते थे। उस पर किसी प्रकार की कोई विघ्नबाधा प्रभावित नहीं कर सकती। उस पर कोई भी दृष्टिपात (नजर), मुष्टि प्रहार (मूंठ या जादू-टौणा किया जाता तो वह लौट कर प्रहार करने वाले पर ही पड़ता है। उसकी रक्षा देवता कर रहे से। पूर्व जन्म की उसकी तपस्या ने ही इस बाधा को उससे दूर रखा। २३७।

तब राजा से फरियाद की गई कि महाराज कोई न्याय कीजिये (अथवा सहायता कीजिये) समस्त दुर्ग विघ्नों से भरा पड़ा है। प्रत्येक घर में नर-नारी रोग ग्रस्त होकर मर रहे हैं। राजा ने आज्ञा दी कि प्रधान को बुलाया जाये। इसकी रोकथाम का शीघ्र ही कोई उपाय करो। सभी मिलकर वे सब उपाय करो जो तुमने रात में बताये थे। २३८।

तब प्रधानों को विदा किया गया। वे सभी वाग्युद्ध करते हुए वहां से उठकर चले और एक जगह इकठ्ठे हुए। उन प्रधानों के नाम थे, हंस, सोभाग, मदनफैन (मदनसेन) कोकदेव, कामसेन, कामसमूह और चन्द्रसेन।२३९-२४०।

ये अष्टप्रधान जब नगरद्वार से बाहर उतरे, तो उन्होंने स्थान-स्थान पर भाग दौड़ देखी। जो भी मिले, उन्हें एक ही काम के लिये कहा गया कि वे पैगंबर से उनका सलाम कहें और हमारी ओर से निवेदन कर दें कि हम उनके दरबार में (सेवा में) उपस्थित हो रहे हैं। वह सरदार जहाँ भी हो वहाँ जाकर कहो। हम यहां प्रतीक्षारत खड़े हैं। २४१।

जब पैगंबर से जाकर कहा गया, तो उसने सब को बुलवा लिया। सलाम करके उन्होंने कहना शुरू किया कि राजा ने आपसे निवेदन कराया है कि अब तो क्रोध को शान्त करें। यदि हमसे कोई अपराध हो गया तो उसे क्षमा करें। आप और हम एक दूसरे को समझ नहीं पाये। अब आप जो भी कहेंगे, वैसा ही करेंगे। २४२।

पैगंबर ने कहा कि उस जोगिनी को ले आवो और कोई हमारी ओर से तुम पर कोई बैर नहीं है। तब प्रधानों ने उससे इस प्रकार कहा कि महाराज योगिनी यहाँ नहीं है। हमने आपके क्रोध पर ध्यान दिया है और उसको इस दुर्ग में रहने को स्थान नहीं दिया। वह बिना बताये निकल गई और उसका किसी कोई पता तक नहीं चला। २४३।

तब पैगंबर एकदम जलभुन उठा और बोला, तुम इस प्रकार की बात कैसे कह रहे हो। तुम हमारे चोर (अपराधी) को छिपा रहे हो और हमारे पास आकर बातें बना रहे हो। मैं उस जोगिन को लूंगा, राजा को मार डालूंगा और इस दुर्ग को उखाड़ कर ध्वस्त कर दूंगा। मैं मक्का की तरह इस पर भी अधिकार कर लूंगा। यह मैं कल ही तुम्हें बता दूंगा। २४४।

प्रधानों ने दुबारा निवेदन किया कि हे श्रेष्ठ पुरुष ! अब तो आप क्रोध न करें। हम तो मनुष्य और आप देवता हैं। जो कुछ आपने करने का सोचा है, वही करोगे। हमने तो आपको भगवान् के रूप में प्राप्त किया है। हमारा अहोभाग्य है जो आप घर बैठे ही आप हमारे पास चले आये हैं। आपके दर्शनों का अब हमको यही फल मिलना चाहिए कि आप हमारी बात मान लें। २४५।

तुम लोग जो कुछ भी कह रहे हो वह सब कुछ मानने को तैयार हूं। उस जोगिन को ले आवो, बस यह ही जानता हूं।

तुम भी सुख पावोगे जब जोगिन को ले आवोगे।

यदि हमारे दुर्ग में जोगिन हो तो हम आपके अपराधी (दोषी) हैं। योगिनी यहाँ से भाग कर चली गई है। आप हमसे सौगंध ले लें। २४६।

तुम कुछ भी कहो मैं मानने को तैयार नहीं हूं और न तुम्हारी सौगंध को ही सत्य मानने को तैयार हूं। मैं उस योगिनी को अविलंब पाना चाहता हूं, अन्यथा तुमको लोहे में भरवा दूंगा।

आप लोहा भरा दें अथवा हमारे प्राण हरण कर लें, जो कुछ आप करना चाहते हो वह अभी करलो। उसको रख कर हम पहले ही दुःखी हैं, तो फिर उस योगिनी से हमें क्या करना है। २४७।

इतना सुन कर पैगंबर के मन में दया आ गई। उसने निश्चित रूप से जान लिया कि योगिनी इनके यहाँ नहीं है। तुम जो कुछ भी कह रहे हो, वह हमारी समझ में नहीं आई। उसकी सौगंध तुम कैसे खावोगे।

यदि वह हमारी जानकारी में हो, तो आप जो आज्ञा दें, उसी की हम सौगंध खाने को तैयार हैं। यदि हम आप से झूठ बोल रहे हो तो हम जीते जी ही नर्क में पड़ जावें। २४८।

जो भी तुम्हारा इष्ट हो,उसकी सोगंध खावो और साथ ही अपने गुरुओं और सिद्ध महात्माओं की सौगंध खावो। मेरे पाँव छूकर कहो कि यदि जोगिन का हमें पता हो तो हम सबको यह सौगंध पहुंचे (प्रभावित करें)। वृत्त (घेरा) बना कर तुम यह वचन दो तो मेरे मन को विश्वास हो। २४९।

जैसा भी कहोगे वैसे ही वचन देंगे। जैसे आप नचावोगे वैसे ही नाचेंगे। खरा हो या खोटा, कैसा भी हो, और अपनी इच्छानुसार हमको कष्ट दो। खड़े होकर उन्होंने घेरा बनाया, भगवान राम को, महादेवजी और गुरु को मध्य में रख कर कहा कि हमारी जानकारी में यदि योगिनी कहीं हो तो यह सौगंध हमें प्रभावित करें। २५०।

रंडी की रक्षा करके हमका अटकाये रखा। तीन दिन तक युद्ध करके जोगिन को भगा दिया। २५१।

हम इतनी दूर से आये हैं, उसका पाप तुमको लगेगा। हमारा काम खराव हुआ, उसका तुम को शाप देता हूं। २५२।

जिस प्रकार हम दुख पाते रहे हैं, उसी तरह तुम भी दुःख पावोगे। अब इस दुर्ग पर तुम्हारा राज्य नहीं रहेगा, यहीं मेरी आज्ञा है। २५३।

पैगंवर उल्टा लौट गया और प्रधान दुर्ग में आये। उन्होंने सारी बात विस्तार सहित राजा को बतायी। २५४।

पैगंबर भैरूंसेन को शाप देकर मक्का चला गया। भैरूंसेन के कोई पुत्र नहीं हुआ। इस प्रकार उसका राज्य छिन्न भिन्न हो गया। पुत्र हुए बिना राज्य कैसे स्थायी रह सकता है। पुत्र के बिना धन दौलत भी व्यर्थ हो जाते हैं। पुत्र नहीं हो तो पानी कौन पिलायगा (जलांजलि कौन देगा)। पुत्र ही नहीं होगा तो पिता के नाम को आगे कौन चलायगा। २५५।

पुत्र के अभाव में भविष्य में घर सूना हो जायगा (वंश नहीं चलेगा)। बिना पुत्र के सारा वंश ही समाप्त हो जाता है।

उसका राज्य जन शून्य हो गया। उसके उपरान्त यह दुर्ग उभाड़ हो गया। इस बात को चार सौ वर्ष हो गये। यह वन पहले से भी अधिक सघन हाकर बढ़ गया। जो कोई भी इस भूमि में नगर बसायेगा, वही इसका उपभोग भी करेगा। इस दुर्ग के आस पास ऐसा कोई राजा नहीं है, जो इसको पुन: बसाता। २५६।

त्रेता युग, सतयुग और द्वापर युग बीत गये। इस पृथ्वी पर बड़े बड़े राजा हुए। उसके बाद कलियुग भी आया। यहाँ इस स्थान को राजाओं ने अच्छी प्रकार बसाया। इस विकट स्थान को क्यों छोड़ दिया। किसी राजा ने यहाँ बस्ती क्यों नहीं बसाई या इस दुर्ग को किसी ने देखा तक नहीं होगा हे जोशी ! तुम इस बात को स्पष्ट करो। २५७।

यह स्थान पुन: क्यों नहीं बसाया गया, उसका रहस्य आपसे कहता हूं। पूर्वकाल में ऐसे ऐसे राजा हुए हैं, जो सब प्राणियों पर दया करते थे। यह स्थान तपस्वियों का रहा है--प्रारम्भ से अब तक ऋषिगण यहां तप करते रहे हैं। उनकी मर्यादा को किसी ने भंग नहीं नहीं किया। ऋषिगणों ने जो भी दिया वह उन्होंने लिया। २५८।

यहाँ जो ऋषि निवास करते थे, उनका भरण पोषण कैसे होता था। तुम तो कहते हो कि यहाँ बस्ती नहीं थी तो फिर वे जो यहाँ रहते से, क्या खाते थे।

इस जंगल में अनेक प्रकार के फल (मेवा) और अनेक प्रकार के कंदमूल थे। जब देवता यहाँ से चले गये, तो पेड़ पौधे भी नष्ट हो गये। अब कलियुग के अनुरूप फल उत्पन्न होने लगे। २५६।

बड़े बड़े पंडित यहाँ आये। अनेक ज्ञानी कवियों को भी निमंत्रण भेज कर बुलाया गया। बुजुर्ग व्यक्ति भी यहाँ पधारे और साथ ही छहों दर्शनों के ज्ञाता विद्वान् भी इस स्थान पर आये हैं। अब सभी मिल कर मुहूर्त निकालें और दुर्ग में उसी के अनुसार नांगल (नव मंगल) का आयोजन करें। शुभ नक्षत्र, शुभ वार और शुभ तिथि का शोधन करो और बलि और फलादिक की भेंट देकर देवताओं को जगावो। २६०।

सभी पंडित एक स्थान पर एकत्र हुए और मुहूर्त निकालने लगे। उन्होंने परब्रह्म परमात्मा का ध्यान किया और गणेश, सरस्वती देवी, और गुरुदेव का स्मरण करके अपनी पुस्तकें और पंचांग निकाले। उन्होंने अपने एक हाथ में खड़िया पकड़ी, सामने (दूसरे हाथ में) पट्टी रखी, उस स्थान पर अन्य किसी बात पर चर्चा नहीं हो रही थी। २६१।

उन्होंने ज्या (धनुष की प्रत्यंचा के आकार की), और अज्या (अजा) चक्र तथा हय चक्र वना कर अध्ययन किया। साथ ही सताईस ही नक्षत्र और अठाइस योगों का शोधन किया। उसी प्रकार बारहों राशि लग्न को शोधन किया और नौ ग्रहों की पूजा की, रविवार, सोमवार आदि सात ही वारों के वल का निरीक्षण किया और पुष्य नक्षत्र के मुहूर्त को उत्तम मुहूर्त घोषित किया। २६२।

जहाँ सारी राजसभा एकत्र थी, वहाँ राजा ने पूछा कि मुहूर्त किस दिन का रखा गया है, वह मुझे बता दें। २६२।

(पंडितों ने बताया कि), सर्वोत्तम बैशाख मास में अक्षय तृतीया गुरुवार के दिन दुपहर में पुष्य नक्षत्र में सिद्धि योग है। २६४।

राजा ने रौंणा से कहा कि वह एक बात सुन ले, यहाँ जितने भी लोग इकट्ठे हुये हैं, उन्हें भोजन के लिये सीधा (आटा दाल घी आदि) दे देवें। २६५।

और नांगल के दिन तक इन्हें लौटने न दे। इन्हें निवेदन करके उस समय तक रोके रखो। और भी लोगों को यहाँ के लिये निमंत्रण दो। २६६।

नांगळ (नव मंगल) का जव प्रवंध किया गया, तो प्रत्येक देश (प्रदेश) में पत्र लिखे गये। उसमें वड़े बड़े प्रसिद्ध क्षत्रियों को आमंत्रित किया गया। चारण और भाट भी प्रभूत संख्या में सम्मिलित हुए। यज्ञ की सामग्री (प्रबंध) की गई, तो उसको देख कर इतने मनुष्य इकट्ठे हुए कि उनकी संख्या का पार नहीं था। उन सवको मुक्तहस्त से सीधा (भोजन सामग्री) दिया गया। वे जिस तरह से भी मांगते थे, वैसे ही उनको मिला। २६७।

दस हजार मन आटा पिसवाया गया और पाँच हजार मन चने खरीदे गये। मोठ, मसूर, उड़द और मूंग भी खरीदे गये। दो हजार मन घी, चार हजार मन चावल, एक हजार मन तेल और पांच सौ मन नमक लाया गया। मिष्ठान्न मंगवा कर कागळ (कारुवलि—पितरों के श्राद्ध रूप में कौवों को दिया जाने वाला भोजन) किया गया। २६८।

समस्त सामग्री एक स्थान पर एकत्र की गई और पद्मगढ़ पहुंचाई गई। और भी प्रभूत सामग्री वहाँ प्रेषित की गई। संवत् १३११ की आखातीज (वैशाख शुक्ला ३) गुरुवार को पुष्य नक्षत्र का आनंद प्राप्त किया। राजा और प्रजा सब वहाँ आ पहुंचे और सब का एक सम्मेलन सा जुड़ गया। २६९।

वहाँ राजपूतों ने बारह भैंसों और एक हजार बकरों की बलि दी। ब्राह्मण एक लय से वेद पाठ कर रहे थे और आहुतियाँ देकर हवन कर रहे थे। चारण और भाट विरुदावलियाँ गा रहे थे। चारों ओर याचकों की अपार भीड़ थी। स्थान स्थान पर भोजन बनाया जा रहा था। दुर्ग में भयंकर भीड़ जमा थी। २७०।

भोजन करके दरबार लगाया गया। राजा ने उस दुर्ग के पुराने नाम के स्थान पर नया नाम रखने हेतु विचार करने को कहा। ये दोनों भाई रोण्या और भौंण्या एक स्थान पर बैठे हैं। इन्हीं के नाम पर दुर्ग का नाम रखो। तब पंडितों ने खड़े होकर कहा कि इस दुर्ग का नाम रणतभँवर रखा जावे। २७१।

राजा, प्रजा, उपस्थित सभी ब्राह्मण और षट्दर्शनी जातियों के लोग वहाँ उपस्थित थे। इस प्रकार सात दिनों तक अत्यन्त तृप्ति के नांगळ (नव मंगल) का आयोजन हुआ। २७२।

तब सब लोगों को सुन्दर सिरोपाव भेंट करके विदाई दी गई। राजा ने उनसे कहा कि वे शीघ्र ही यहाँ आकर बस जावें। २७३।

मैं आप लोगों को करमुक्त जागीर दूंगा और साथ ही मासिक वेतन भी भरपूर दूंगा। आप जितनी चाहें भूमि जोतें, मैं हजूर (राज्य) की ओर से आपको गाँव जागीर में दूंगा। २७४।

तृतीय अध्याय

नाँगळ (नवमंगल) के दिन नीव खुदवा कर चुनाई की जाने लगी। इस कार्य के लिये दूर दूर से शिलावट आये। घाटियों को बंधवा कर द्वार रखवाये। दुर्ग में दो तालाब बंधवाये गये। चूना तैयार करवा कर परकोटा बनवाया। राजा ने ब्राह्मणों को बुला कर पूछा कि इन दरवाजों का नाम क्या रखा जावें। २७५।

(ब्राह्मणों ने बताया कि) पूर्वकाल में यहाँ जो ऋषि रहते थे वे तो इन दोनों को घाटी ही कहा करते थे। एक शिवघाटी और दूसरा सूरज घाट। प्रारंभ से अब तक ये दो ही मार्ग थे। उनके बाद पद्मऋषि यहाँ आकर रहे।

उन्होंने घाटी को बांध कर द्वार बनवा दिये थे। एक का नाम शिवपोल और दूसरी का नाम सूरजपोल रखा। और ऊँची नीची डौळ (दीवार) बनवा दी। २७६।

उसके बाद यहाँ राजधानी स्थापित हुई। भैरूसेन ने बहुत विस्तार किया। उसने तीसरे द्वार का निर्माण करवा कर उसका नाम भैरूपोळ रखा। चौथे द्वार का निर्माण अब आप करवा रहे हैं। इसका नाम जैतपोळ रखावो। आपने बहुत ऊँचा और सुदृढ परकोटे का निर्माण करवाया है—मानो सांचे में ढाला गया हो। २७७।

चारों दिशाओं में दरवाजे रखवाये गये। चारों ही ओर चार पोलें चिणवायी गयीं। पत्थरों को घड़कर उनसे महलों का निर्माण कराया, जिनमें लोहे की मेखें (पाऊ) जड़ी गई। स्थान स्थान पर कमठे चल रहे थे। हाटें (दुकानें), देवालय और मंडपों का निर्माण किया गया। छत्तीस ही जाति के लोगों को घर बार सहित वहाँ बसाया गया। २७८।

प्रतिदिन जैतपोळ की चिनाई की जाती थी, पर वह पूरी नहीं बन पा रही थी। राजा ने ज्योतिषियों और जोशियों (पुराण वेदों) से पूछा कि इसका क्या कारण है। २७९।

चेजारे दिन में पोळ को चुणाई करके आते हैं और रात में वह गिर जाती है। राजा ने रौंणा से पूछा कि वहाँ कौनसी प्रेत बाधा है। २८०।

राजा से रौंणा ने बताया कि इसकी नींव गहरी दिलाई जाय। उसमें सीसा भर कर चुणाई करावो, जिससे पत्थरों की संधियाँ अच्छी प्रकार जुड़े। २८१।

तब पद्मगढ रौंणा के स्वप्न में आया और उससे कहा कि हे रावत रौंणा सुनो! यह अधिष्ठान पूरा हो जाने पर युगों युगों तक तेरा नाम अमर रहेगा। २८२।

रौंणा ने स्वप्न से वापिस पूछा कि क्या तुम कोई देव हो। सारी बात समझा कर कहो, जिससे हम रहस्य को समझ सकें। २८३।

पद्मगढ ने फिर कहा कि हे रौंणा! मेरी बात सुनो। तुम अपना सिर इस पोल को चढा दो तो पोल का निर्माण पूरा हो जायेगा। २८४।

प्रातःकाल होते ही रौंणा ने राजा को जाकर प्रणाम किया। मैं अब आपसे एक निवेदन करना चाहता हूं, यदि आपको पसंद आ जावे। २८५।

सभी सामंत बैठें हुए थे। राजा ने रौंणा से कहा कि तेरे मन में जो भी विचार हो, वह स्पष्ट कह दें। २८६।

रौंणा ने बताया कि रणतभँवर दुर्ग ने स्वप्न में आकर कहा है कि मैं पौळि (द्वार) निर्माण के लिये अपना सिर समर्पित कर दूं। अब आप जो उचित समझें वह आज्ञा दें। २८७।

राजा ने रौंणा सें कहा कि हम हम कोई दूसरा दुर्ग बनवा लेंगे। तुम्हारे मरने से ही नगर बसता है, तो ऐसी जगह किस काम की। २८८।

रौंणा ने राजा से कहा—यह ऐसा ही कार्य है। परब्रह्म परमात्मा की ही यह माया है। इससे युगों युगों तक मेरा यश अमर रहेगा। २८९।

जो तुम्हारी इच्छा हो, कार्य की सिद्धि के लिये वही करो। जब यह तुमको ही पसंद आ गया है तो हमको क्यों पूछते हो। २९०।

तब दोनों ही जैत पोळ पर गये और फिर प्रहार किया। सभी लोग दरवाजे की ओर देख रहे थे--रौंणा ने सिर काट कर चढा दिया। २९१।

रौंणा और भौंणा के दो पुत्र से, दोनों को राव जैतसिंहने बुलवा लिया। उन्हें रौंणा से भी अधिक मान देकर रखा। २९२।

उन्हें घोड़े और सिरोपाव देकर घर पर भेज दिया। रौंणा से भी चौगुणी जागीर दी गई, जिसकी आय को वे खर्च करते और खाते। २९३।

वहाँ जसपाल गंगेलवाल नाम का साह (महाजन) जैतसिंह का प्रधान था। वह मनन शील व्यक्ति था। सारा धन उसी के अधीन था। जो कुछ वह करता या कराता वही मान्य था। २९४।

जब सारे दुर्ग में लोग रहने लगे, और निर्माण का कार्य पूरा हो गया, तो राजा ने उससे पूछा कि कितनी जातियाँ यहाँ आकर बसी है। २९५।

प्रधान ने राजा को जातियों का जो विवरण दिया वह इस प्रकार है। सर्व प्रथम ब्राह्मणों को बसाया गया, उनके बाद ठाकुर लोग (राजपूत) आये। दुर्ग में अलग अलग शाखाओं के राजपूतों को बसाया गया है। सभी वर्गो के साह (सेठ) और महाजन यहाँ आये हैं। कायस्थ और खत्रियों की भी यहाँ बस्ती बसाई गई है। जाट, अहीर, गूजर, लोधा, मीणा, धाकड़ भी यहाँ प्रभूत संख्या में आकर रह रहे हैं। २९६।

सेठ, सुनार, कुलंवी (कुलमी), तंबोली, खाती, लोहार, कुम्हार, कोली (हिन्दू जुलाहे), ठठेरे, भरावे, पिंजारे, काछी, माली, कहार, कीर (धीवर) नाई, बारी, तेली, खंगार, बावर, मोची धोबी, मणिहार, लखारे, कलाल, छींपे, डूम, भील, सहरिया, थोरी, धानके, मुसलमान भी अपार संख्या में आकर बसे हैं । २६७ ।

दरजी, पटवे, भड़भूंजे, कापड़ी (भाट), तेखा (भ्रष्ट ब्राह्मण), रंगरेज (रंगेनिया), खिजमति (हजामत बनाने वाले, या दास) और कारीगर, ये सभी लोग दुर्ग में आकर बस गये हैं । सौदागर (व्यापारी), जौहरी, अनेक प्रकार के जड़िया और घडिया (आभूषणों पर रत्नों की जड़ाई करने वाले और आभूषण घड़ने वाले) भी बहुत आये हैं । इनके अतिरिक्त भोपे, भरड़े दरसणदार (तात्विक विवेचन करने वाले, अथवा षड्दर्शनी), रेगर (चमड़ा रंगने वाले) ढबगर (ढोल नगाडों पर चमड़ा मढने वाले), खटीक (भेडों को मार कर उनके चमड़े और ऊन का व्यापार करने वाले) और चमार (चर्मकार) भी यहाँ आकर वस गये । २६८ ।

यह सब सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और जसपाल से कहा कि वह नौलखा नाम से बगीचा लगावे और तालाब बंधावें ।२६६।

राव (जैतसिंह) के बारह पुत्र थे उनके नामों का वर्णन करता हूं । वे सभी महान् शूरवीर योद्धा थे । उन सभी ने नये गाँव बसाये । ३०० ।

अहलादसिंह (१) भींवजी (२) वसुदेव (३) भारथसिंह (४) वैरसल (५) वीरमदेव (६) बलिदेव (७) बिजैपाल (८) कुंभराज (९) बील्हणदेव (१०) हमीर (११) वछराज (१२) (३०१)

ये राजा से अलग अपने अपने गांवों में रहते हैं । राजा दुर्ग से राज चलाता है । दूर दूर तक उसकी आज्ञा चलती है । ३०१ ।

अहलादसिंह ने आल्हणपुर, भारथसिंह ने भदलाव, भींव जी ने भीर-हरी और वसुदेव ने बाबई गाँव बसाये । वलिदेव बलिण गांव बसाकर रहने लगा । बीरम बलौंडणि बसाकर और वैरिसाल बरवाड़ा बसाकर रहा । बिजं-पाल ने बिचपड़ी में प्रवेश किया । ३०२ ।

कुंभराज ने कुंभलमेर (कुंभराज) वसाया, और बील्हण बौळी गढ को घेर कर रहने लगा । भारथसिंह ने एक अन्य गांव भूरी पहाड़ी नाम से आबाद किया । इन लोगों ने तो इन गांवों में जाकर रहना प्रारंभ कर दिया । हमीर को भदलाव गांव दिया गया । वछराज जो सबसे छोटा पुत्र था, सदा राजा

के पास ही रहता था। राजा उसको कभी अपने पास से दूर नहीं करता था। ३०३।

दुर्ग के पास अनेक बाग-बगीचे, कुए, बावड़ियां और तालाब बनाये गये। सारा पहाड़ पानी से भरा रहता था, जहां सदैव नाले बहते रहते थे। ३०४।

राव जैतसिंह के राज्य की स्थापना को बहुत वर्ष बीत गये। उसकी रुचि आखेट में थी—इसे वह प्राणों से भी प्रिय समझता था। ३०५।

तीन सींगों वाले (त्रिशृंग) एक हरिण के साथ हरिणों का बहुत बड़ा झुंड रहता था। वह चार सौ हिरणों को साथ लेकर नागर चाळ प्रदेश में घूमता रहता था। ३०६।

वह नागर चाल के खेतों को नष्ट कर देता था। उससे सभी लोग परेशान हो गये। बोये हुये चणे और गेहूं के खेतों को वह नष्ट कर देता था। सारी प्रजा ने मिल कर विचार किया। सबने मिल कर सलाह की कि हमें राजा के पास जाकर पुकार करना चाहिये। और उन्हें सारी हकीकत बतावें। और उनको यहाँ लाया जाय। ३०७।

जब सब मिलकर ऊपर आये और राजा को सारी बात बताई कि हरिणों ने सारी खेती (फसलों) को खा डाला है। वे बहुत बड़ी संख्या में खेतों में घूम फिर रहे हैं, जिनकी गिनती कर पाना संभव नहीं है। आप इस भूमि के स्वामी राजा हैं और शिकार में भी काफी रुचि रखते हैं। आप हमारे साथ ही सवार होकर चल पड़ें और वहाँ जाकर शिकार खेलें। ३०८।

सुन कर राजा ने सवारी सजाई। कुत्ते और रस्सी मंगा कर साथ में ली। बड़े बड़े राजपूतों को बुलाया। नगर में जितने भी थे, वे सभी आ गये और गरड़ की डूंगरी (पहाड़ी) पर जा पहुंचे। वहाँ उनको हरिण दिखाई दे गये। उनके पीछे कुते और घोड़े दौड़ाये गये और दो चार हरिणों को मार डाला। ३०९।

तब राजा ने उन लोगों से कहा कि, वे अब निश्चित रहें। प्रतिदिन सूर्योदय होते ही उठकर हम यहाँ आयेंगे और इन सभी हरिणों को मार कर खा जायेंगे। राव जेत्रसिंह ने पुनः पूछा, क्या हरिणों की यही टोली (झुंड) है जो फसलों को चौपट कर रहा है? तब लोगों ने बताया कि ऐसी अनेक टोलियाँ हैं। कहीं पचास साथ रहते हैं तो कहीं साठ, कहीं एक सौ तो कहीं दो सौ हरिण एक साथ विचरण करते हैं। ३१०।

उस त्रिसिंगा की डार (टोली) सबसे बड़ी है। उसके साथ पाँच सौ पांच सौ हिरण घूमते हैं। उसने पूरे राज्य को उजाड़ कर दिया है। हम प्रजा को और कौनसा सहारा है। राजा ने कहा कि आप लोग सब अपने अपने घर चले जावें। अब फरियाद लेकर मत आना। आप लोगों से मैंने सारी बात जान ली है। अब मैं सबको घेर कर मार डालूंगा। ३११।

प्रतिदिन राजा आखेट के लिये जाने लगा। प्रतिदिन प्रातः काल ही उसकी हिरणों से भेंट हो जाती थी। पर त्रिसिंगा हिरण कभी हाथ में नहीं आता था। वह दूसरे ही हिरणों को मार कर लाता रहा। इस प्रकार बहुत दिन बीत गये। उसने अनेक झुंडों को तो मार डाला, पर जब भी वह त्रिसिंगे हिरण के पीछे अपने घोड़े को डालता, वह छलांगे लगा कर भाग जाता और घोड़ा थक कर हार जाता। ३१२।

राजा सभा में आकर बैठा और उसने हिरण की चर्चा की। उसने पंडितों से अपनी बुद्धि लगाकर बताने को कहा कि एक तीन सींगों वाला हिरण है। अब तक मैंने ऐसे हिरण के विषय में न तो कभी सुना ही और न देखा ही। पर अब मैं प्रतिदिन प्रातः उठते ही उसे अच्छी तरह देख लेता हूं। मैं उससे हार थक कर परास्त हो गया हूं पर वह मारा नहीं जा रहा है। ३१३।

तब पंडितों ने उसको बताया कि ऐसे हिरण की त्वचा (खाल) बहुत ही उत्तम कही गई है। यदि उसकी खाल हाथ में आ जाय, तो पिंडदान देकर पितरों को तृप्त करने का फल प्राप्त करता है। और उस चर्म पर बैठकर यदि कोई ध्यान लगावे तो मोक्ष की सिद्धि प्राप्त करता है। यदि शूरवीर योद्धा उसका माँस खावे तो उसकी कीर्त्ति युग युगों तक गायी जाती है। ३१४।

राजा ने तब बड़े राजकुमार अहलादसिंह को बीड़ा देकर विदा किया। और कहा कि यदि उस हिरण को तुम मार कर लावोगे तो वास्तविक रूप में मेरे ज्येष्ठ पुत्र कहलाने के अधिकारी बनोगे। मेरी आत्मा भी उससे बहुत सुखी होगी, और तुम्हारा यश युगों युगों तक संसार में रहेगा। मैं तभी जान सकूंगा कि दुर्ग तुमसे सुरक्षित रहेगा। वैसे भी राजतिलक के अधिकारी तो तुम हो ही। ३१५।

अनेक व्यक्ति उसके साथ में देकर राजा ने राजकुमार को विदा किया। शिकार विद्या में दक्ष जितने भी व्यक्ति थे, उन सबको भी राजकुमार के साथ कर दिया। वे लोग जो राजा के साथ जाया करते थे, वे सन्नद्ध होकर तेजो से आगे आगे चले। जिन लोगों ने पहले हिरन का पता लगाया था—वे

सब भी उस स्थान पर गये। जहाँ बहुत से हिरण चर रहे थे, राजकुमार ने उसी स्थान पर जाकर घेरा डाला। ३१६।

उन सबको चारों ओर से घेर कर तीन सींगों वाले हिरण को ढूंढ निकाला। साथियों ने जब राजकुमार को वह हिरण दिखाया तो देखकर कुमार को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। उसने घोड़े की लगाम ढीली करके हिरण पर दौड़ा दिया, मानों गरुड़ पक्षी टूट कर पड़ा हो। हिरण ने पक्षी की भांति दौड़ लगाई—घोड़ा उसकी बराबरी कैसे कर सकता था। ३१७।

हिरण ऊँची छलांगे लगा रहा था। घोड़ा उसका पीछा करना नहीं छोड़ रहा था। हिरण जब दौड़ कर वन में घुस गया, जहां घोड़े का प्रवेश संभव नहीं था। राजकुमार तब पैदल ही काछनी (पायचा टाँग कर) लगाकर वन में घुस गया। उसने देखा कि उस स्थान पर महादेव और पार्वती स्थित थे, और हिरण उनके सामने खड़ा था। ३१८।

महादेवजी के दर्शन करके उसके सभी पाप और दोष (अपराध) धुल गये। उसने महादेवजी के पास जाकर प्रणाम किया और हाथ जोड़ कर उनकी सेवा पूजा की। बहुत देर तक वह वहीं खड़ा रहा। तब पार्वतीजी ने महादेवजी से कहा कि कोई राजा आपकी सेवा कर रहा है—इसका क्या कारण है, कृपया उससे पूछें। ३१९।

पार्वती का वचन सुनकर, महादेवजी ने अपने निमीलित नयन खोले। महादेवजी ने उससे पूछा—तूं कौन है और कहां से आये हो ? उसने कहा— तुम्हारे दुर्ग में जो यह राजा रहता है, मैं उनका पुत्र हूं। उन्होंने मुझे यह हिरण लाने के लिये कहा है। मैं उसी काम के लिये आपके पास आया हूं।३२०।

तूं कौन है जो प्रति दिन इसको भयभीत करता है--उसी का न्याव कराने का यह इस प्रकार भाग कर आता है। तूं प्रतिदिन इसको डराता है, फिर यह तुम्हारे हाथ में कैसे आयगा ? तुम्हारी और कोई इच्छा हो तो वह अवश्य पूरी होगी--इस मृग की बात दुबारा मत करना। तुम इसको लेकर क्या पाना चाहते हो ? यह मृग तो तुम्हारे यहां जीवित नहीं रहेगा। ३२१।

घर में जो कुछ भी है, वह आपका ही दिया है, मुझे और किसी चीज की इच्छा नहीं है। गाँव, परगने, हाथी, घोड़े, सोना, चांदी, वस्त्र सभी हैं। इस हिरण को ले जाकर मैं पिताजी को दूंगा, तो उन्हें अत्यधिक सुख मिलेगा, अन्यथा मुझे अपयश का भागी बनना पड़ेगा। आपके दर्शन का मुझे यही फल चाहिए। मुझे मेरे पिता बहुत चाहते हैं। ३२२।

महादेव सुनकर मौन रहे। पार्वती ने पुनः उनसे इसी प्रकार निवेदन किया कि, यह हिरण पकड़ कर इसको देदें। इसके वचनों की रक्षा करें। पार्वती के मन में करुणा उत्पन्न हुई और कहा कि महाराज इस पर दया करें। आपके दर्शन का फल इसको इसी रूप में मिलना चाहिए। इसके पिता को यही अच्छा लगता है। ३२३।

महादेव ने पुनः उससे कहा कि तुम इस हिरण को किस तरह ले जावोगे। वहाँ जाते जाते ही यह हिरण तो मर जायगा और इसको ले जाने का यश भी इसको नहीं मिल सकेगा। यह व्यर्थ ही पाप स्वीकार कर रहा है। यह हिरण इसको शाप देगा। इस राजकुमार के मन में जो कुछ भी इच्छा है, वह तो इसको मिल नहीं पायगी। ३२४।

आपने तो भविष्य की बात कह दी। वह तो इसके मन में आई ही नहीं। इसका चित्त तो हिरण में लगा दिखाई दे रहा है। आप यह इसको दे दें, फिर कुछ भी हो। तब महादेव ने कहा कि तुम आगे आवो और हिरण को लेकर सीधे अपने घर पर चले जावो। राजकुमार ने डंडवत प्रणाम किया और हिरण को हाथ में पकड़ लिया। वह मन में बहुत प्रसन्न हुआ। ३२५।

हिरण को लेकर वह अरण्य के बाहर आया, जहाँ उसको सभी साथी मिल गये। राजकुमार के पास हिरण को देखकर, उन सबको आनंद हुआ। राजकुमार घोड़े पर सवार हो गया और हिरण को किसी अन्य के हाथ में दे दिया। जब वे सब मिल कर वहां से आगे चले, तभी हिरण निष्प्राण हो गया। ३२६।

कुमार अपने मन में बहुत दुखी हुआ। उसके साथी भी बहुत पछताए। कुमार ने उनसे बेगारियों को बुलाकर, हिरण को उनके सिर पर लदवा कर दुर्ग में पहुंचाने को कहा। और कहा कि मैं तो अब अपने घर जा रहा हूं, इस हिरण को ले जाकर राजा को सौंप दो। ३२७।

मरते समय हिरण ने कहा, मनुष्य जो कुछ मन में सोचता है, वही नहीं होता। लेखनी तो विधाता के हाथ में है, उसके लिखे लेख को कोई नहीं मिटा सकता। ३२८।

महादेवजी ने जैसा कहा था, वैसा ही हो गया। हिरण हम्मीर को मिल गया और उसने ले जाकर राव जैत्रसिंह को प्रणाम किया। ३२९।

बेगारी हिरण को लेकर चला, उसे मार्ग में हमीरदेव मिल गया। राजकुमार ने उससे पूछा कि वह यह हिरण कहाँ से लाया है। उत्तर में उसने

वताया कि यह रौंण (राण) की पहाड़ी से आया है। महाराज कुमार ने कह-लाया है कि इसको मैं राजाजी को दे दूं। हमीर ने हिरण को उससे ले लिया और राजा से जाकर प्रणाम किया। ३३०।

मृग को देखते ही राजा बहुत खुश हुआ कि वही हिरण आ गया है। प्रसन्न होकर उसने हमीर से उस दिन अपना हृदय खोल कर पूछा कि यह तुम्हारे हाथ कैसे आ गया। हमीर ने उत्तर दिया कि आपके आशीर्वाद (प्रभाव) से ही यह लाया जा सका है। राजा ने हमीर को एक हजार मोहरें और सिरोपाव दिया। तदुपरान्त उसे यादवों पर विजय के लिये विदा किया। ३३१।

हमीर ने कहा कि हे महाराज! और किसी को पता नहीं चलना चाहिए। मैं एक ऐसा उपाय करूंगा, कि सभी यादवों को मार डालूंगा। ३३२।

हमीर ने बीड़ा लिया और प्रस्थान करके भदळाव आ गया। अपने सभी साथियों को बुलाकर कहा कि राजाजी उससे अप्रसन्न हो गये हैं। ३३३।

उसके सभी सहयोगियों ने एक मत होकर कहा कि अब क्या विचार किया जाय। घोड़ों पर सवार हो जाओ और दूर से ही सदा के लिये प्रणाम कर लो। ३३४।

हमीर ने अपनी योजना अपने मन में ही रखी। उसे और कोई नहीं जानता था। उसने विचार किया कि मैं सभी यादवों को निमंत्रित करके यहां बुला सकूं, तो मेरा उद्देश्य (स्वार्थ) पूरा हो सकेगा। ३३५।

हमीर ने जिस दिन बीड़ा स्वीकार किया, उसी दिन वह भदळाव आ गया। उसने किसी के साथ चर्चा नहीं की। धीरे धीरे उसने अपने साथी संगी जुटाये। यह यादवों का भांजा है इसी से इसको कोई आदर सत्कार नहीं मिलता। श्रेष्ठ भांजा तो ऐसा ही होता है, जिसकी इच्छा हो वह उसे अपने पास रखे। ३३६।

एक दिन वह अपने मामा के पास गया और हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। उसने अपने मामा से एक असहाय निर्धन व्यक्ति की भांति बात की और निवेदन किया कि उसको अपने आश्रय में रख लें। आप सारी बात अच्छी तरह से जानते हैं। मुझे यहीं रहने के लिये कोई स्थान दे दें। राजा मुझसे अप्रसन्न हैं, मेरे साथ बात तक नहीं करते। मैं आपकी शरण में आना चाहता हूं। ३३७।

मामा ने तब उसे धैर्य बंधाया और उससे भली प्रकार अच्छी तरह बात की। और कहा—तुम प्रसन्नता के साथ अपने गांव से आकर हमारे यहाँ क्यों नहीं अपना गुजारा करते हो। तुम विलंब मत करो और शीघ्र ही यहां आ जाओ। अपने साथ अपने सभी साथी संगियों और सैनिकों को भी लेकर आवो। वहाँ के नाम को भूल जावो—तुम्हें यहीं दो गाँव दे देंगे। ३३८।

हे मामा मैं अब आपसे एक निवेदन करता हूं, जिसे ध्यान देकर सुनो। आप सभी परिजन साथ होकर चलें और मुझे वहां से ले आवें। ३३९।

हे मामाजी ! मेरा एक निवेदन और है। मैं आपके यहाँ आना चाहता हूं। मुझे वहां से छुटकारा दिला दें। एक बार आप लोग वहाँ चलें। मेरे ऊपर एक कृपा करें। आप एक समय का भोजन वहीं करें। आप सभी यादवों को निमंत्रण देकर बुलवा लें और स्वयं आगे आकर मुझको लेकर आवें। ३४०।

आप मुझ पर कृपा रखते हैं, तो मेरे वहाँ भोजन करने की कृपा और करें। मामाजी इतनी कृपा और करें—आप सभी यादवों को भी निमंत्रण भेजें। मैं वापिस उसी स्थान पर लौट रहा हूं, और जाकर भोजन सामग्री की व्यवस्था करूंगा। यदि आपमें से कोई वहाँ नहीं आया तो मैं बुरा मानूंगा। ३४१।

मामा ने कहा—अरे भाई यह भोजन की औपचारिकता क्यों करते हो। तुमको लिवा लाने को तो हम सब आयेंगे। वैसे भी, हम तो तुम्हारे ही चाकर हैं।

(हे मामाजी !)—मुझे माताजी ने कहा है। मैं उन्हीं के कहने से हो आपसे कह रहा हूं। मैं तो सदा आपका ही दिया खाऊंगा और सारी प्रजा को लेकर यहीं तो आउंगा। ३४२।

मामा ने पूछा ! हम लोग कब आवें और सभी परिजनों को कब का निमंत्रण दें।

(हमीर ने उत्तर दिया)—आज से चौथे दिन आप लोग आवें, और हर व्यक्ति को साथ में लेकर आवें। यदि आप हमारा भला चाहते हैं तो किसी भी व्यक्ति को पीछे न छोड़ें। यदि कम लोग आयेंगे तो आपको भगवान की सौगंध है। जितनी अधिक से अधिक संख्या में आयेंगे उतना ही मुझे आनंद प्राप्त होगा। ३४३।

आप बार बार क्यों कहते हैं—हममें से हर व्यक्ति आपके यहां आयगा। आप चौगुणी (प्रभूत मात्रा में) भोजन की व्यवस्था करें, उसमें किसी प्रकार की शिथिलता (कमी) न रहे। ३४४।

आप बार बार क्यों कह रहे हो, हम छोटे बड़े सब आयेंगे। तब विदाई लेकर वह भदळाव में आया और अपनी माता से परामर्श किया कि मैंने अपने सभी मामा लोगों को निमंत्रित किया है। मैं तो उनके गांवों में जाउंगा। मैंने उन्हें बुलाया हैं, और वे लेने को आ रहे हैं। उनके लिये प्रीतिभोज किया जाय। ३४५।

या तो हमीर जानता था, या राव जैतसिंह, उनके अतिरिक्त कोई अन्य न जान सका, उसने ऐसा उपाय किया। ३४६।

उसने भोजन सामग्री की इतनी व्यवस्था की। गेहूं मंगवा कर पीसने के लिये दें दिये। चावल, शक्कर और घी मंगवाया। चणे मंगवा कर उनसे वेसण पिसवाया। सभी प्रकार के मासीन (उड़द मूंग आदि) मंगवा लिये, जिन्हें शोध कर धोकर ढालें बनवाई। बकरे मंगवाने के लिये संदेश पत्र करवा कर गांवों में भेजे गये। ३४७।

अगणित संख्या में लावा और तीतर पक्षी मंगवाये गये। बनास नदी में से मत्स्य निकलवाये। अनेक हिरण और और खरगोश और सूअर मार कर लोग ले आये। इन सबके मांस अलम अलग पकवाये गये। उनमें वेसंवार (नमक, मिर्च, हल्दी, धनिया आदि मसाले) डाल कर, खूब घी से प्लावित कर दिया। उसने सभी प्रकार के बंटवा मांस भी बनवाये, जिसमें घी में पकाये मसाले प्रभूत मात्रा में डाले गये। ३४८।

पीसे गये मांस से शूला तय्यार करवाये (लोहे की शलाका पर सेका हुआ मांस) उन्हें सूत बांध कर घी में पकाकर डोरा मांस बनवाया। अलग से सादे शूले भी तय्यार करवाये, जिन में मसाला डालकर, ऊपर से घी का भारा दिया गया। मांस को पीस कर उनके चक्र (टिकिया) तलवाये (भुनाये)। कुछ में दही मिलाया गया और कुछ कोरे (बिना दही के) चक्र बनवाये गये। मांस को पीस कर पकोड़े और मसाला भरी श्वेत पोळी (रोटी) बनाये गये। ३४९।

वेसण से छत्तीस ही प्रकार के व्यंजन (पकवान) तय्यार करवाये। दही में डाले गये कांजी बड़े बनवाये। चावळ, मूंग, मसूर और कढ़ी, उड़द, मूंग और चँवळ की बडिया (वटिका) बनवाये। घी में कुळथ और चणे तलवाकर तय्यार कराया। मूंगों की पहत तय्यार करवाकर उसमें हल्दी

की लाग दी गई। मांडा रोटी (दूध मलाई डाल कर बनाई रोटियां), बाटियां और गोळा, जिनमें खड्डे करके खूब घी डाला गया था, भी बनवाये गये। ३५०।

चणे के डीरे (नवांकुरित पत्र), बैंगण, मेथी, मथुवा, सोवा, पालक, सरसों, राई, डांडी (चौलई), राई, चौलाई, बंगा तुरई, करेला, चंचीड़ा, टींडसी, टींडसा, कद्दु, मुरेला, किंदूरी, पलवल (परमल), पान-पतोड़, अरबी सूरण, ककोड़े, । ३५१।

भट्टो (गोल बैंगन) का भुर्त्ता, अगथ्या (अगस्त्य) की फली, बाल्होळ की फली, वणी, कचनार की कलियाँ की सब्जियाँ बनवाई गई। नींबू और आम, अदरख, हल्दी, आंवला, सूरण कंद, बांस के पत्तों और पीपल के अथाणे (अचार), कैर और इमली का प्रभूत झोळ (पानी), बंधा हुआ और सदा दही और धुंगार दी हुई गाढी छाछ। ३५२।

शक्कर मिली खीर, दूध और मावे के मिश्रण से बना पंच—धरी हलवा पुड़ी, कचौरी (कचपुड़ी) और लूचा पुडी, लड्डू, गूंझे, मोहन भोग, डोवठे (दोवटी मिठाई), खाजा, बण्या (बणज-मीठें पीले रंग के चावळ), अभोग, सभी प्रकार खाशा मिठाइयाँ, ताजा दूध जिसमें पतासे डाले गये थे, खीच, खिचड़ी, अच्छी तरह तले हुए पापड़, वड़ी और चणों की पापड़ी, आदि का भोजन तैयार किया गया। ३५३।

फूल दारू (हल्के नशे की पहलीबार निकाली शराब) की भट्टी निकाली गई जिसमें किसी प्रकार का कोई नशा नहीं था, महुवे के फूल की शराब, जिसमें बहुत मसाला डाला गया, दाखों का रस चुवाया गया, अफीम, भांग, तिजारा मिलाया गया, बार बार धतूरे के पुट दे देकर घोला गया, जिसमें सींगी मोहरे का विष, चुवाया गया, अकलकरा और जायफल पिलाया गया था भी तैयार कराई गई। ३५४।

कांटेदार वृक्षों और झाड़ियों की टहनियाँ गाड़ गाड़ कर बाड़ बनवाई, जिसे परस्पर लपेट कर ऐसे गूंथा गया कि उसमें हाथ तक न घुसाया जा सके। उस बाड़ पर खूब झाड़ झंखाड़ डाल कर ढंक दिया गया। उसमें बहुत वड़े क्षेत्र में खुला मैदान रखवाया। उस बाड़ में दो मजबूत कांटेदार फाटक लगबाये गये। अपने विश्वासपात्र सैनिकों को बुलाकर कहा कि आप लोग जो काम मैं कहूं वह करें। ३५५।

सारे खड्ग (तलवारें मंगवा कर उन पर धार देकर चमकाया गया। लोगों को मुंह माँगों खूब धन देकर सबको खुश किया। ३५६।

आप लोग दो दिन तक यहीं मेरे पास उपस्थित रहो। जब तक यादव जीम न लें आप में से कोई दूर न जावें। ३५७।

उसी दिन बुलाये गये अपने सैनिकों को सारा भेद खोल कर कहा कि आप लोग मेरे पास उपस्थित रहें। मैं अपने मामा लोगों को अब मारूंगा। ३५८।

सभी यादव वहाँ आ गये। देख कर कुमार प्रसन्न हुआ। जब एक एक कर सभी आ गये तब उसके मन में धैर्य हुआ। ३५९।

वहाँ सभी यादव इस प्रकार अपार समूह में आये मानो भादवा मास की घटायें उमड़ कर आई हो। जिनको चाहा था, वे सभी छोटे बड़ों को साथ लेकर आ गये। उनकी मनुहार करके उनका अफीम से सम्मान किया। अपनी अपनी रुचि के अनुसार लोगों ने अफीम खाई। अनेक उपाय करके सबकी सेवा की। उन्हें अच्छे आसन दिये गये। ३६०।

उनसे निवेदन किया कि वे उठे और भोजन करने पधारे। उससे पूर्व अपने हाँथ पाँव धोलें। वशवर्ती होकर उन्होंने यादवों से बड़े प्यार के साथ कहा, आप अपने हथियार खोल कर रख दें। उन्होंने सबके हथियार खुलवा कर ले लिये और पंक्तियों के अनुसार सबको बैठक (आसन) दी जिन पर अधिकार कर वे बैठ गये। वे सभी अलग अलग पंक्तियों से सुशोभित थे। ३६१।

सभी जवान सैनिकों को अलग बैठाया, उनके साथ दूसरों को नहीं बैठने दिया। दूसरी जातियों के लोगों (सैनिकों) को अलग कर दिया। इसी प्रकार नौकरों और पैदल लोगों को भी अलग करके, उनकी अनेक पंक्तियां बनाई गई। उन सबके लिये पत्तले रखी गई। सैनिक रजपूतों के लिये के अगणित थाळ और प्याले रखे गये। ३६२।

और उनके हाथों में प्याले दिये जिनमें हल्की शराब भरी थी जिनमें पहले ही अफीम और विष घोला गया था। बाद में वे लोग बतकों (सुराहियों) से ही ओक मांडने लगे (अर्थात् खूब शराब पीने लगे)। सभी दारु पीने में लग गये। वे लोग एक एक तरकारी लाकर परोस रहे थे। उसे परोसने में ही उन्होंने एक प्रहार लगा दिया। उन लोगों को अफीम का भयंकर नशा गया। ३६३।

तब हमीर ने अपने आदमियों को बुलाया और उनसे बताया कि राजा जी ने मुझे बीड़ा दिया था, उसी के कारण मैंने इतना हठ किया था। इनमें

से प्रत्येक व्यक्ति को ठीक से देखें और इन सब आदमियों को मार डालो। जब वे लोग लाया गया भोजन कर रहे थे—उन पर एक दम आक्रमण होने लगा। ३६४।

मैंने तो सभी लोगों को बुलाया था—यह सब बात कह कर समझाया कि दूसरी जातियों के सभी लोगों को निकल जाने दो और अन्य सभी (जवान) आदमियों को मार डालें। हे बंधुओं ! मैं आपके हाथ (शस्त्र प्रहार क्षमता) देखना चाहता हूं। आपकी बात अधिक रहेगी। राजाजी मुझसे प्रसन्न होंगे और अपनी बाजी रह जायगी। ३६५।

अपने सभी साथियों को उसने इस प्रकार कहा कि आप लोग उनके बीच में इस प्रकार खड़े रहकर सेवा के बहाने उनमें मिल जावो। जैसी वे आजा दें, वैसा ही करें। तुममें से कोई भी बिना हथियार के न जावें। वे जो भी काम बतावें, उसे करदें। सभी लोग यादवों में जाकर मिल गये और सभी यादव शराब के नशे में मस्त होकर झूल रहे थे। ३६६।

कोई रसोई ले लेकर आ रहा था, तो कोई भरभर कर पानी पिला रहा था। कोई बतक से प्यालों में शराब भर रहा था—कोई खड़ा खड़ा ही बहाने बनाकर लौट रहा था। कोई तरकारियाँ ले ले कर आ रहा था। कोई उठ कर पक्वान्न लाने के लिये दौड़ रहा था। सभी खड़े खड़े अवसर की ताक में थे। यादव प्याले भर भर कर छक रहे थे। ३६७।

परोसते परोसते जब पुरस्कारी पूरी हो गई तो जीमने के लिये निर्देश या आशीर्वाद दिया गया तब कोई हँस हँस कर ग्रास खा रहा था, कोई बिचारा मिच मिचाकर आंखे खोल रहा था, कोई लौट रहा था, कोई हँस रहा था, कोई सो गया और कोई नीचे झुकता जा रहा था। कोई हँसता ही जाता था तो कोई रो रहा था और कोई अपनी ही राग अलाप रहा था। ३६८।

हमीर ने आज्ञा दी कि तलवारों के प्रहार प्रारंभ करो, सभी आदमियों को मार डालो। कोई पीठ न दिखावें। ३६९।

दो घड़ी तक यह खेल चलता रहा, तभी तलवारों के प्रहार रूके। उन लगातार प्रहार होते रहे। भांजे ने मामाओं के प्रति ऐसा ही चाहा था। सभी मारे गये। उनके शवों को एकत्र किया गया। अन्य सभी लोगों को जाने दिया। (हमीर ने कहा कि)—इस सबका दाह संस्कार करो और जो भोजन बच गया—अपने आदमियों को खिला दिया। ३७०।

यादवों को युक्तिपूर्वक मारकर हमीर ने ऐसा काम किया। भूमि प्राप्ति के लिये उस वीर ने इस प्रकार मामा की मर्यादा या (अहंकार) को तोड़ डाला। ३७१।

भांजे ने ऐसा काम किया, जिसने मामा के संबंध की मर्यादा को तोड़ डाला । मामा के घर भांजा सहन नहीं किया जा सकता । यदि कोई रखता है तो उसको यही पद (फल) मिलता है । जिसके घर में राज्य और द्रव्य (धन संपत्ति होती है, सारा मालिक और उसका स्वभाव (प्रकृति भी वैसा ही हो जाती है । आखिर में (निश्चित रूप से) भांजा ऐसा ही होता है, कोई कितना ही यत्न करके देखलें । ३७२ ।

माता आपस में सुबक सुबक कर रो रही थी कि अरे इसने हमारे साथ ऐसा व्यवहार किया । हमीर ने अपने सहयोगी आदमियों को बुलाकर प्रयाण किया । क्रुद्ध होकर क्षिप्र गति से उसने दौड़ लगाई और यादवों के प्रदेश में जाकर मारकाट प्रारंभ कर दी । जो सामना करने आये, उन्हें मार डाला । जो उससे आकर मिल गये, उनकीर क्षा की । ३७३ ।

जब स्वामी (राजा) ही नहीं हैं तो युद्ध कौन करेगा और कौन आक्रमण करेगा । स्वामी ही घर का रक्षक होता है और दूसरों की धरती को भी अधिकृत करने की लालसा रखता है । यदि स्वामी (राजा) हो तो वह देश की रक्षा करें । स्वामी के अभाव में सभी कायरता पूर्ण बातें करते हैं । विना स्वामी के घर द्वार सब सूने (उभाड़) हो जाते हैं । हे भगवान् ! कोई भी बिना स्वामी का न रहे । ३७४ ।

कुमार हमीर के द्वारा यादवों को बुलाकर मार डालने की सूचना राजा को मिली । तदुपरान्त वह यादवों के प्रदेश में गया और जादूवाटी प्रदेश को को नष्ट भ्रष्ट कर दिया । राजा को जैसे जैसे समाचार सुनाये जाते थे, वह बहुत प्रसन्न होता था । वह हमीर के प्रतिदिन कुशलता के समाचार मंगाता था, और उसके लौट आने की प्रतीक्षा करता रहता था । ३७५ ।

हमीर ने जादूवाटी में जाकर शक्तिशाली उद्दंड व्यक्तियों को अपने अधीन किया और समस्त प्रजा से कर उगाहा । पूरी जादूवाटी को ध्वस्त कर दिया और अपनी आज्ञा प्रसारित कर आया । उस प्रदेश में अपना कामदार (प्रतिनिधि अधिकारी) नियुक्त करके अपना अधिकार जमा लिया और द्रव्य लेकर अपने घर लौटा । सारी सम्पत्ति अपने साथ लेकर राजा के पास जाकर प्रणाम किया । ३७६ ।

हमीर ने विजय प्राप्त की और राजा को प्रणाम किया । राजा ने प्रसन्न होकर हमीर से कहा कि एक यत्न (षड्यन्त्र) और करो । ३७७ ।

राजा बहुत प्रसन्न हुआ । वह हमीर का हाथ चूमकर अपना हर्ष प्रकट करता था । हमीर जो धन लेकर आया था, वह उसको ही दे दिया और हृदय

में अत्यधिक आनन्द का अनुभव किया । तब राजा ने उसके सामने जसपाल को मारने का आदेश दिया । यदि तुम जसपाल को मार डालो तो मेरी आत्मा का कष्ट दूर हो जायगा । और मैं तुम्हें इस दुर्ग (राज्य) का राज-तिलक कर दूंगा । ३७८ ।

तब हमीर ने राजा से कहा कि आप इतनी सी बात करें कि इसका किसी को पता न चले और साथ ही आप मेरी बुराई करें । सभी लोगों के सामने आप मेरी बुराई करते हुए गालियाँ दे, मुझ पर क्रोध करें । मेरा दरबार में आना रोक दें, और सर्वत्र मेरे अपयश की ही चर्चा करें । ३७९ ।

हमीर ने परामर्श करके कहा कि मैं जसपाल को शीघ्र ही मार डालूंगा । आप मुझे देश से निष्कासन की आज्ञा दें, जिससे मेर वंश चले । ३८० ।

अब आप जसपाल का वर्णन सुने । वह राजा की कोई परवाह नहीं करता था । जो भी उसने करने का सोचा, वही वह कर डालता था । वह किसी पर आश्रित नहीं था । घर बैठे वह वहीं राज्य का संचालन करता था और सबके साथ बराबरी की होड़ करता था । वह राजकुमारों पर अपना दबाव (जोर) बनाये रखता था, जिसके प्रभाव (रंग ढंग) की कोई सीमा नहीं थी । ३८१ ।

राजा की कही हुई बात को वह नहीं मानता था और उसे बुढ्ढा (सठियाया हुआ) कह कह कर उसकी दुर्बुद्धि का वर्णन करता था । राजा स्वयं में बहुत सज्जन था । उससे जसपाल कहता कि वे क्या जानते हैं । राजा का हृदय बिंधा जाता था । जो भी उसकी यह अवस्था देखते थे वे भी बहुत पछताते थे । सभी सामंत उससे अप्रसन्न थे । राज सभा में भी उससे कोई प्रसन्न नहीं था । ३८२ ।

वृद्ध व्यक्तियों में इतने गुण होते हैं, फिर भी उसकी बात कोई नहीं मानते । बुढ्ढा व्यक्ति यदि सुबुद्धि (ज्ञान) की बात भी करता हैं, तो वह भी किसी को अच्छी नही लगती । बेटे, पोते और भाईबंधु सभी भगवान् से प्रार्थना करने लगते हैं कि इसे शीघ्र ही उठालें (स्वर्ग-लाभ दे देवें) । बुढ्ढे आदमी कहीं बैठें हो, तो उनकी शर्म (सम्मान) कोई नहीं करता । ३८३ ।

छोटे बड़े जो भी सामने आते हैं, उसको देख देख कर मुस्काराते हैं । जैसा भी मन में आया, वे वैसा ही बोलते हैं । उस बेचारे का हृदय बिंधता जाता है । जवान नर नारी उसकी मजाक (मस्करी) उडाते हैं । बालक भी उसको (खिलौना) समझते हैं । स्त्री, पुरुष, राजा, रंक सभी, विधाता के लिखे लेख के अनुसार बुढ्ढे होंगे । ३८४ ।

ज़सपाल के घर में राजा के बराबर वैभव था। उसके मन में बहुत अधिक अभिमान था। उसके अधीन सदैव चौदहसौ बर्छी धारी योद्धा बने रहते थे। वे सभी महान् शूरवीर थे जो परम्परा से ही श्रेष्ठ कुलीन वंश के थे। वह उन्हें अपने पास से दूर नही रखते थे। वे हर क्षण उसकी संभाल रखते थे। ३८५।

जसपाल के घर पर दरबार जुडता था। राजा की कोई परवाह तक नहीं करता था। यदि वह किसी महोत्सव या विशेष अवसर पर राजा के यहां आता भी तो अभिवादन करके उठ कर चला जाता था। राजा के अधिकार में जितनी भूमि थी, राजकुमारों की जो भी जागीरें थीं, उनकी प्रामाणिकता के हस्ताक्षर वहीं करता था। उसमें और किसी की नहीं चलती थी। ३८६।

जसपाल के दरबार में सदैव चौदहसौ बरछीधारीयोद्धा रहते थे, जिन्हें वह अपने से दूर नहीं करता था। ३८७।

वह उन्हें खूब अमल खाने को देता था और साथ ही खूब धन संपत्ति भी। शत्रुओं के हृदय में शल्यवत् वे योद्धा शाह जसपाल के पास बैठे रहते थे। ३८८।

हमीर मनमें विचार करके मिला और जसपाल से मिल कर कहा कि राज़ाजी मुझसे रुष्ट हो गये हैं, अब तुम्हें भी नमस्कार है। ३८९।

जसपाल ने खड़े होकर कहा—"हे हमीर सुनो! तुमने यादवों को मार कर अच्छा काम किया। तुमने हमारी पीड़ा को दूर कर दिया हैं। ३९०।

तुम राजाजी के पास किसलिये जाते हो और क्यों अभिवादन करते हो। तुम मुझसे जितना चाहे धन लो—यह घर तुम्हारा ही है। ३९१।

हमीर प्रतिदिन सूर्योदय होते ही उसके घर जाता और अपनी सुखदुख की बातें कहता। "मैंने तो समझा था कि राजा इसे अच्छा समझेगा और हमारी बात से वे प्रसन्न होंगे। मैंने किस प्रकार रहस्यमय ढंग से यादवों को मारा है, जिसके कारण राजाजी ने मुझे दूर कर दिया है। मेरा तो भाग्य ही नष्ट हो गया है। मेरे लिये एक ही दिशा थी, वह भी छुट गई है। ३९२।

मैंने सभी यादवों को मार डाला है। मैंने तो बुरा दाव चला है। (बुरा काम किया है)। मैंने अपने हाथ से मेरी अवस्था बिगाडी है—महाराज मुझ पर रुष्ट हो रहे हैं। ३९३।

जसपाल ने हमीर से कहा—"रावजी तुम्हारा क्या बिगाड़ लेंगें और दूसरे भी क्या कर लेंगें। यह भी तुम्हारा ही घर है। ३९४।

(हमीर बोला)—दरबार में जो भी आता है, उसके सामने रावजी मेरे ही दुःख का बखान करते हैं। अंधाधुंध (अनर्गल) गालियाँ देते हैं और मुझसे कहते हैं कि तू निर्लज्ज होकर घूमता रहता है। आपने भी सुना होगा, नहीं सुना हो तो अब सुन लोगे। आप ही हमारे लिये हित की बात कहोगे। मुझे तो वहां से निकाल दिया गया है। दरबार में जाने पर भी मेरे लिये रोक लगा दी गई। ३६५।

सुनते हैं, जसपाल ने कहा, आपकी सारी बातें मैंने सुनली है। आदमी जब बूढा हो जाता है, तब उसकी बुद्धि निश्चय ही भ्रष्ट हो जाती है। राजा स्त्रियों के हाथ में बिक गया है और इसीसे वह अपसे मन की करता है। आपने उसके साथ ऐसा कौनसा बुरा काम किया है, जिसका राजाजी आपको यह यश दे रहे हैं। ३६६।

उनसे (यादवों से) लड़ते हुए कितने वर्ष हो गये हैं। सभी राजकुमार और उमराव हठ पर लगे रहें। प्रभूत धन खर्च किया गया। बड़े बड़े आदमी (योद्धा) उसमें मारे गये, पर यादवों पर कोई विजय प्राप्त नहीं कर सके। जो भी आक्रमण करने गया, वही खाली हाथ लौटा है। आपसे मिलकर हमें बहुत प्रसन्नता हुई। आपने हमारी इज्जत की रक्षा की है। ३६७।

राजाजी आपको या मुझको नहीं जानते, वे तो दूसरों के हाथ बिके हुये हैं। अब आप किसी प्रकार की चिन्ता न करें। आपकी जो भी इच्छा हो वह मुझसे ले। आपने तो बहुत बड़ा काम किया है। एक बहुत बड़े राज्य पर अधिकार करके आपने राजाजी को सौंपा है। आपको घोड़ा और सिरोपाव देकर सम्मानित किया और आज वही राजा आपको देश से निकाल रहा है। ३६८।

जसपाल ने कहा, आप जादूवाटी में जाकर रहो। वहाँ की प्रजा और जागीरों पर जाकर अधिकार करो। लोगों पर खूब दबाव रखो और उन पर अच्छी तरह से अधिकार जमावो। यदि वहां राज का कोई आदमी जावे तो उसे मारकूट कर बाहर निकलवादो। जिस प्रकार यादव हमसे उस प्रदेश में रह कर लड़ते थे, उसी तरह आप भी लड़ें। ३६६।

एक दिन अवसर पाकर जसपाल राजाजी के पास गया और अभिवादन करके बात प्रारंभ की। हमीर ने जाकर यादवों को मारा। उनका सारा प्रदेश छिन कर अधिकृत कर लिया और उस पर अच्छी प्रकार शासन स्थित कर दिया। जो कुछ देना लेना हो वह तो आप जाने, पर इसके लिये उसकी बड़ाई तो करो। ४००।

जैत्रसिंह ने जसपाल से कहा कि तुम उसका नाम मत लो, उसको देश निकाला देकर उसके गाँव खालसा करलो । ४०१ ।

जसपाल ने कहा ! हे राजाजी सुनो ! उसने बहुत अच्छा काम किया है । आपने अच्छा यश (पुरस्कार) दिया उसको और उसके गाँव खालसे कर लिये । ४०२ ।

सुनते ही राजा क्रुद्ध हो उठा और बोला, उसके विषय में तुमने अच्छी बात छेड़ी । उसने बहुत बुरा काम किया है । आपने मामाओं को मार कर बहुत बड़ा पाप किया है । उसके लिये यहाँ कोई स्थान नहीं हैं । उसकी जहां इच्छा हो वहां चला जावें । मैं उसका मुख नहीं देखना चाहता । उसे यहां से निकलवा दो । ४०२ ।

हे महाराज ! आप उसके उपकार से दबे रहो । ऐसी बातें अपने मुँह से क्यों कहते हैं । वहां यादवों से कितने युद्ध हुए, पर हमसे एक भी यादव नहीं मारा जा सका । कितने समय तक हम उनसे लड़ते रहे । हमारा युद्ध में कितना धन पूर्व में ही खर्च हो चुका है । उसने इन सबको मारकर ढेर लगा दिया और उनका सारा राज्य छीन लिया । ४०४ ।

(जैत्रसिंह ने कहा) उसके और हमारे बीच संबंध ठीक नहीं रहते हैं तो उसका हमारे लिये कोई महत्व नहीं । हमीर यदि सोने का भी हो, तो भी हमें उसकी कोई आवश्यकता नहीं है । जब हमीर का जन्म हुआ, तब हमें पारस मणि मिली और उससे हमने इस (दुर्ग को) इस देश को बसा दिया । उससे हमें यदि कोई लाभ हुआ है तो यही है उसके विषय में और कोई बात मत करना । ४०५ ।

(जसपाल ने कहा)—और वह यहाँ से छोड़ कर वहीं जा रहेगा और सारे राज्य को लूट कर खायगा, तो आपके हाथ से आपका देश भी चला जायगा और यदि उसको मारोगे तो अपयश मिलेगा । उसे थोड़ी बहुत सान्त्वना दें । उसे पुत्र का हक दें । ४०६ ।

(जैत्रसिह—) अब आप बिना बोले ही बैठे रहें । दुबारा उसकी बात न करें । यह देश चला जावे और वह भी चला जावे, तो वह स्वयं अपने पांवों में कांटे बोयेगा (संकट बुलायेगा) । तुम भी उसे मुँह न लगावो । वह जहाँ उसकी इच्छा हो वहां जावे । और सब के लिये आप निवेदन कर सकते हैं पर हमीर का नाम मेरे सामने न लें । ४०७ ।

यह सब सुन कर साह जसपाल उठ कर अपने घर आया । उसने हमीर को तत्काल बुलाया और कहा कि उसने हमीर की बात राजा से की थी—पर

उसको पसँद नहीं आई। तुम तो अपनी मर्यादा को छोड़ने को तय्यार नहीं नहीं हो। अरे कुमार! बिना भय के प्रीति नहीं होती। आप वहाँ जाकर हमारे कहे अनुसार करें। कल कल क्या करते हो। ४०८।

तब हमीर ने जसपाल से कहा कि हमारी इज्जत तुम्हीं पर आश्रित है। आप की बात से हमें प्रसन्नता हुई। मेरे लिये तो आप ही राजा हो। आपने मुझे बहुत कुछ दिया है। एक आध दिन में मैं देखता हूं। उसके बाद में मैं यहाँ से छोड़ कर चला जाउंगा। जैसी आपने आज्ञा दी है, वैसा ही वहाँ जाकर कराऊंगा। ४०९।

हमीर की ये बातें सुनकर साह जसपाल बहुत खुश हुआ। उसने हमीर को सवारी के लिये घोड़ा ओर अटूट संपत्ति दी। ४१०।

पहले साह हमीर पर बहुत अधिक कृपा करता था। उसे देख कर उस पर बहुत दया आती थी। अब उसने हमीर के साथ एक नया ही मैत्रीपूर्ण प्रेम का संबंध स्थापित किया। उसने रात दिन करना शुरु किया। हिल मिल कर दोनों जब एक हो गये, तो हमीर बहुत खुश हुआ। तब कुमार ने विचार (युक्ति) करके अपने सभी साथियों को अपने पास बुलाया। ४११।

सारी सभा उन्हीं से भर जाती थी। साह समझता था कि ये चाकरी करते हैं। जसपाल के सभी आदमी बेखबर रहते थे। वे दोनों के बीच प्रेम संबंध समझ कर शिथिल ही रहते थे। दोनों एकांत में पास पास जाकर बैठते थे। तीसरा कोई उनके पास नहीं जा पाता था। जिसका भाग्य लेख पूरा हो जाता है, वह सभी चतुराइयों को भूल जाता है। ४१२।

हमीर ने जो निर्णय (निश्चय) किया था—वह अपने साथियों को समझा कर कहा। मैं हमीर को विचार विमर्श के बहाने से जाकर जसपाल को मारता हूं। ४१३।

हमीर ने ऐसा प्रवंध किया। जसपाल से अलग जाकर उसने अपने साथियों को जाकर कहा कि मैं जाकर जसपाल का वध करता हूं। जो भी हथियार लेकर सामने आवे, उसे तुम लोग मार डालो और जो भाग जावे, उसे जाने दो। ४१४।

हमीर और जसपाल ने परामर्श किया। वे दोनों अकेले में जाकर बैठे। जब उसका अंतिम समय आ गया तो कटार मार कर हमीर ने उसको मार गिराया। जब जिस पर काल आकर छा जाता है तो उसको कोई उपाय नहीं सूझता। काल आकर ही उसे उलटे मार्ग पर चलाता है और वहीं विपरीत अवस्था मनुष्य को काल बन कर खा जाती है। ४१५।

जब वीर नेता मारा गया तो गोष्ठ (संगठन) नष्ट हो गया और जो लोग थे वे पीठ दिखा कर भाग छूटे। पांच सात आदमी सामना करने आये, उन्होंने मिलकर बहुत हथियार चलाये। अधिसंख्यों के आगे वे थोड़े से आदमी क्या करते। उन्हें तो क्षण भर में ही मार डाला और हवेली को घेर लिया। बाद में आदमी रास्ते बना बना कर भाग गये। ४१६।

राजा ने जब ये समाचार सुने, तो उसने द्वारपाल को भेज कर पता लगवाया। उसने भी कई शूरवीरों को सारा रहस्य समझा कर भेजा। साह जसपाल के घर को जाकर घेर लिया और दृढ़ता के साथ वहाँ का प्रवंध कराया। उन्हें कहा कि राजकुमार का रक्षण करके उसे शीघ्र ही यहां भिजवादें। ४१७।

बहुत से (उमराव) आदमी वहाँ भेजे गये। उन सबने जाकर चौकी बैठा दीं। उन्हें कहा गया कि वे सावधान होकर चौकी दें और जैसा राजकुमार कहे वैसा ही करना। सभी उमरावों (सामंतों) ने वहाँ जाकर कुमार से कहा कि उसे राजाजी ने बुलाया है। सुनते ही राजकुमार राजा के पास आया। राजा ने उसे छाती से लगा लिया। ४१८।

जसपाल को मारकर कुमार ने राजा के पास जाकर अभिवादन किया। राव अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसके मन में उत्साह (उमंग) जागृत हो गया। ४१९।

राजा फूला नहीं समा रहा था। अत्यन्त आनंदित होकर उसने बधाई दी। वह दिन धन्य है, जब तुमने जन्म लिया। तुम्हारी माता को भी धन्य है, जिसके गर्भ में तू अवतरित हुआ। मैं भी धन्य हूं कि मैंने तुम्हारे जैसा पुत्र प्राप्त किया। तू भी धन्य है—हम तुम पर न्यौछावर हैं। तुमने इन दोनों कष्टों से अच्छी मुक्ति दिलाई। बाकी के ये सभी पुत्र व्यर्थ ही उत्पन्न किये हैं। ४२०।

तुम्हें जितना भी सोना, चांदी, हाथी, घोड़े, देश और परगने दिये जावें सभी कम हैं। मेरा सारा घर तुम्हारे लिये समर्पित है। इसका उपभोग यहीं बैठ कर करो। साह जसपाल की सारी संपत्ति, उसके घर, द्वार और परिवार के सभी सदस्य अब तुम्हारे हैं। साह को जो अधिकार प्राप्त थे, उसी प्रकार तुम अपना सारा प्रवंध करो। ४२१।

तब हमीर ने प्रणाम करके राजा द्वारा दी गई आज्ञा को स्वीकार किया और कहा—"मेरे पिता धन्य है जिन्होंने मुझे धन्यवाद दिया है। मैंने यह कौनसा बड़ा काम किया है। हे स्वामी ! आप जो भी आज्ञा देंगे मैं उसे

पूरी करूंगा। जहां आपका पसीना गिरेगा, वहां मेरा रक्त बहेगा। मुझे पुरस्कृत करके आपने उच्च पद दिया है। भगवान आपको लंबी उम्र दे।४२२।

जसपाल को पकड़ कर दीवार में चुनवा दिया। सर्वत्र मार डालो, मार डालो का शोर सुनाई दे रहा था। गरीब अमीर सभी प्रसन्न हुए। राजकुमार और परिग्रह, सभासद सभी अत्यन्त सुखी हुए। सभी राजकुमारों और पंडितों ने राजकुमार को बधाई दी। भगवान ने जो कुछ माया रची वह संपन्न हुई। विधाता के लेख को कोई नहीं मिटा सकता।४२३।

जसपाल साह के दो पुत्र थे। एक पन्द्रह वर्ष का और दूसरा बारह वर्ष का था। उसकी एक अनुपम पुत्री भी थी। वह पद्मिनी जाति की अप्सरा के रूप में दिव्य स्वरूप वाली थी। बारह वर्ष की शुभ लक्षणों से युक्त यह लड़की अभी तक कुंवारी थी, उसका विवाह नहीं हुआ था। हमीर ने उसे अपने ही पास रख कर अत्यन्त स्नेह के साथ अपनी रानी बना लिया।४२४।

हमीरदेव को कामदार बनाकर राजा ने सारा प्रभार उसको सौंप दिया। वह अपना काम सुचारू रूप से चलाने लगा। देखने और सुनने वाले बहुत प्रसन्न होते थे। उसने अपनी प्रजा को और अपने सभी सहयोगियों को भी खुश रखा। अपने भाईयों के साथ भी सद्व्यवहार कर उसने बहुत यश प्राप्त किया। राजा की आयु भी सौ वर्ष की हो गई। उसको भी वह खुश रखता था।४२५।

अन्य सभी राजकुमार दुर्ग (नगर) से बाहर रहते थे। उनके घर अपने अपने परगनों में थे। उनको किसी प्रकार की कोई चिंता नहीं थी। वे अपने घरों में रहते हुए सभी सुखों का उपभोग करते थे। वे अपना अपना राज काज स्वयं चला रहे थे। राजा के पास आकर कभी भी अभिवादन नहीं करते थे। राजा उनसे प्रसन्न नहीं था। उसका मन हमीर में लगा हुआ था।४२६।

वह राजा की बहुत सेवा सुश्रुषा करता था और जैसी आज्ञा राजा देता, उसी के अनुसार चलता था। उससे समस्त राज लोक खुश था और दुर्ग में सभी उसकी प्रशंसा करते थे। वह दूसरे आदमियों को भी खुश रखता था। अमीर गरीब सभी उसके लिये धन्य धन्य कहते थे। इस प्रकार दो बरस बीत गये और राजा चौथे आश्रम (सन्यास की अवस्था) में पहुंच गया।४२७।

पूर्व में साह जसपाल की सारी संपत्ति उसको मिली ही थी। तदुपरान्त राव जैत्रसिंह का भी सारा खजाना मिल गया। यह संपत्ति अनंत थी। इससे

उसको बहुत अभिमान हो गया। (उसका सिर आसमान तक जा लगा) जब कभी भी कोई शत्रु विद्रोह करता, वह वहां जाकर उनको विजय प्राप्त करता था। राजा ने प्रसन्न होकर जब उसका राजतिलक किया और पारस पत्थर सौंपा।४२८।

तब राजा उससे मिलने के लिये आने वालों से कहता था कि मेरे लिये ये दो ही अत्यन्त दु:खदायी समस्यायें थीं। उनकी बात मैं आपसे कहता हूं। एक तो यादव और दूसरा बनिया, इन दोनों से मैं बहुत व्याकुल था। मैंने अपने राजकुमारों और सभी उमरावों से कहा, पर कोई उसका समाधान नहीं कर सके।४२६।

सभी लोगों ने यादवों पर आक्रमण किये, उसके लिये खर्च भी तो कितना हुआ, अगणित लोग मारे गये, फिर भी वे कभी अधीन नहीं किये जा सके। मेरी आज्ञा का निर्वाह नहीं हो सका, तभी से मेरी नजर लगी हुई थी। मैंने थोड़ी सी हमीर से बात की, उससे मेरी कितनी प्रतिष्ठा वढ गई है।४३०।

और बनिये को भी बहुत अभिमान हो गया था। उसने मेरी किसी भी आज्ञा का पालन नहीं किया। वह भी अपनी मनमानी करता था। उसने मेरी प्रतिष्ठा को कभी स्वीकार नहीं किया। तब मुझे बहुत क्रोध आया। यह सारी बातें मैंने कुमार से कही। उमरावों को भी मैंने ये सभी बातें कही थी। उस पर कोई भी ध्यान नहीं देता था।४३१।

मेरे ये सभी पुत्र मेरी बराबरी के हैं। इनको भी मैं बहुत उत्साहित करता रहा। पर इनमें से किसी में भी स्वाभिमान नहीं है। ये घरों में बैठकर सुख-विलास करते हैं। और भी अनेक राजपूत उमराव हैं—जो एक से वढकर एक हैं, पर किसी में उतनी हिम्मत नहीं थी, जितनी हमीर ने बनिये के प्रति दिखाई है।४३२।

मैंने जान लिया है कि मेरे सभी पुत्र कुपुत्र (निकम्मे) हैं। इनसे तो कइ एक बनिये ही अच्छे हैं जिसकी मैं कोई गिनती नहीं करता था, कोई महत्व नहीं देता था, उसने जो कुछ किया है, वह आपने देखा है। इस लड़के ने अच्छी तरह भार संभाल लिया है। यही दुर्ग की रक्षा करेगा। मेरे अंतिम समय में इसने मुझे सुख दिया है, इसी से इसको राजी करके मैंने इसका राजतिलक किया है। जैत्रसिंह ने अठारह वर्ष और सात महीने तक राज किया।४३३।

(चतुर्थ अध्याय)

उसका आयुर्बल (आयु) पूरी हो गई। संवत् तेरह सौ इक्कीस (इकतीस) के वर्ष में फाल्गुन वदि २ गुरुवार को उसने हमीर का राजतिलक कर दिया। उसने नगर के द्वारों पर राजपूत (सैनिक) नियुक्त कर दिये, जिससे अन्य राजकुमार अंदर प्रवेश न कर सकें। वे लोग द्वार पर आकर संदेश भेज भेज कर लौट गये। अंत में सिर पीट कर रह गये।४३४।

हमीरदेव राजसिंहासन पर बैठ गया। ठाकुर लोग उससे आ आकर मिले, जिन्हें उसने सिरोपाव और घोड़े देकर और अधिक गांवों के पट्टे दिये।४३५।

उसने अपने सभी साथियों को प्रसन्न किया और भाईयों को भी मना लिया। हमीरदेव राज (शासन) करता था, और घर बैठे राज्य का उपभोग करता था। ४३६।

रणथम्भोर दुर्ग का राज्य हमीरदेव ने प्राप्त कर लिया और उसने बस्ती को दुगुणा करके वसाया। उसने जैत्रसिंह से भी अधिक बाग बगीचों, कुओं और बावड़ियों का निर्माण करवाया। चारों ही मुखों की घाटियों को बंधवा दिया। दुर्ग के अन्दर उसने तालाब रखवाये। उसने समस्त पहाड़ को घेरकर परकोटा बंधवा दिया। प्रत्येक घाटी को वन्दकर उनमें परकोटे चुनवा कर उन्हें बन्द कर दिया। यह परकोटा सोलह कोस लम्बा और आठ कोस चौड़ा था। ४३७।

पूर्व दिशा में विस्तृत डांगक्षेत्र धंघेड़ा तक फैला हुआ था। पश्चिम में बौळी और बणहटा और डंगर से भी आगे तक। उसने दुर्ग के चारों ओर देवालय,मण्डप और महालय (बड़े-बड़े मकान) बनवाये। दुर्ग के पास दो तालाब बनवाये, और उसको गंगा के जल (पवित्र पानी) से भरवा दिया। ४३८।

चौहानों की सांभर शाखा का राजा ज्ञानी और शूरवीर था। उसने रणथम्भोर दुर्ग को बसाकर अपना नाम अमर कर दिया। ४३९।

रणथम्भोर के पास (तलहटी में) मानसरोवर की समता करने वाले दो तालाब अत्यधिक शोभा देने वाले हैं। दुर्ग के बीच में बने बाग का वर्णन करता हूं, जहां कमल खिले हुए हैं। ४४०।

मैं हमीर के बाग का वर्णन करता हूं, जिसमें अनेक प्रकार के वृक्ष हैं। जहां भंवरे गुंजार करते रहते हैं। उन्हें देखकर भूख दूर भाग जाती है, अर्थात् मन को शांति मिलती है। ४४१।

जहां आम, इमली, खिरणी के घने वृक्ष हैं। जामुन, नींबू और बडबेर की बनी हैं। कटहल, बड़हल, गूलर, बरगद, पीपल की शाखायें भूम रही है। ४४२।

तोड़, वकायण (निंबुभेद), नीम और उनके बीच में अंजीर के वृक्ष सुशोभित हैं। सिरू, केल, खजूर, सफेदा के साथ सुगंधित आंवला की डालें झुकी हुई थी। अगस्ति, शहतूत, सहजणा, दाख, छुहारा, बादाम के पेड़-पौधे, पिंड खजूर, नारियल, किसमिश दाख और बिजौरे के पेड़ थे। उनके मध्य में चन्दन के वृक्षों, पिस्ता फल, लवँग और इलायची के पौधों की सुगन्ध व्याप्त थी। मौलसिरी, शीशम, पाटल, पीपल (पिप्पली) की लतायें, लिसोड़ा, गूंदिया, सैंभल, वरणा, करणा, कदंब, सिरस, केतकी, केवड़ा के वृक्ष और पौधे खिल रहे थे। चम्पा, चमेली, सेव, भरवा, मोगरी, जूही, जायफल के बीच में गुलाब के कुंज, व्याप्त थे। अनेक जाति के पुष्पों से आच्छादित पौधे, यथा किलंगा, हजारे की किस्में, गुलबांस, बहरू, सूरजमुखी, मखमली अबरू, हमाडं, गुड़हल, सोसन, नर्गिस, ना-फरमान, दाउदी, कनेर, लालबेरू, केसर की क्यारियां, क्रमोद, नागरबेल के पौधे और लताएँ सुशोभित हो रही हैं। अब मैं महलों की शोभा का वर्णन करता हूं। महलों में झरोखों के एक खण्ड पर दूसरा और इस प्रकार अनेक खण्डों के झरोखे बनाये गये। इन झरोखों में अनेक भांत की जालियां लगी हुई हैं। इनकी खिड़कियां विभिन्न रंगों से रंगी गई हैं। महलों में छतें और भितियों में चित्र बनाये गये। इन महलों में अनेक औवरियां (उपवरक), शाल और हम्माम निर्मित हैं। जिनमें छोड़े गये फँवारों की जलधाराएँ ऐसे सुशोभित होती थी, मानो भाद्रव मास में वर्षा की झड़ी लग रही हो। परकोटे और उसमें बनी बुर्जों में सफेद कंगूरे बने है। कवि इनके रूपसौन्दर्य का कहां तक वर्णन करे। खेम कवि ने जो कुछ सुना, उसको सार रूप में यहां बता दिया है। ४४३।

बाग का वर्णन कहां तक करूं और उसमें लगे पेड़ पौधों और पुष्पों की जातियों के विषय में कैसे बताऊँ। कवितारूप में वर्णन करने से काव्य सरस बन जाता है। ४४४।

नौलखा बाग में अनेक प्रकार के पक्षी निवास करते हैं, भंवरे गुंजार करते रहते हैं और साथ में भृंगियाँ भिन्ना रह रही है। ४४५।

वहां कोयलें अनेक प्रकार के रूप धारण करके कूकती रहती हैं, मैनाँ, सारिका और तूती पक्षी बोलते रहते हैं। उनमें से कई एक हजारों रुपयों के मोल बिकते हैं और अनेक बिना मूल्य के ही चले जाते हैं। वहां जल फोदया (जल पोदना), बया, पीलक, चातक क्रीड़ा करते रहते हैं। मोर, चकोर और

अनेक जातियों के कबूतर यथा छपकने (छपके वाले), लालमण्या (रक्ताभ कंठी वाले), खंजन (आंखों में काजल सारे हुए), अनेक रंगों वाली स्याह, सफेद और पीले रंग की बुलबुलें, हुदहुद, पंडुक, खुमरी, कोचर, लाल और सब्ज रंगों वाली चिड़ियां चहकती रहती हैं। इनके अतिरिक्त गुरगुल, हरियल, हरे और स्याह रंग के चिड़े, सौनचिड़ी (शकुन बताने वाली चिड़िया), क्रौंच (कुरञ्च), लखेरी, सारस, टुकल्या, बगुला, टींटोड़ी, कुही, सिकरा (शकरा), बाज, बहरी, लंग (लंकी ?) गिद्ध आदि अनेक प्रकार के पक्षी शब्द कर रहे थे। और भी अनेक भांति के पक्षी उन बागों में है। कवि कब तक उनके नाम कह सकता है।

वहां अनेक जाति के पक्षी निवास करते हैं, सभी इनका वर्णन करते हैं, ज्ञानी पण्डित भी उनके विषय में कहते हैं, पर अपनी आंखों से किसी ने नहीं देखा। ४४६ ।

रणथम्भोर का दुर्ग इतना बड़ा है। ऊपर यह दो कोस में और नीचे तलहटी में चारो ओर परिभ्रमण में यह साढे तीन कोस के घेरे में है। ४४७ ।

जो रणथम्भोर में निवास करते हुए सुशोभित हैं, वे अपार लक्ष्मी का उपभोग करते हैं। वहां निवास करने वाली सभी जातियों के लोग सुखी हैं। वहां कोटिध्वज प्रमुख है, जिनकी एक हजार दुकानें हैं जो अनन्त शोभा को प्राप्त हैं। दुर्ग के मध्य में बनी कचहरी, अनुपम शोभा से युक्त है। लोगों के धवल आवास (बंगले) सात खंडों (मंजिलों) वाले हैं। उनमें झरोखे, खम्भे, जालियां हैं, लाल किवाड़ों वाली खिड़कियां हैं। उन पर स्वर्ण कलश सुशोभित है। उनमें बने चित्रामों में अनुपम प्राकृतिक दृश्यों वाली ऊँची और सुन्दर भांकियां हैं। यहां रहने वाले आदमी राजा के समान दिखाई देते हैं। दुकानों में बैठे साह (सेठ) शोभा दे रहे हैं। ये दुकानें हीरों, मोती से भरी हैं। कहीं सोने के तारों से कढे रेशमी वस्त्रों के ढगोर लगे हैं। अष्टधातु से निर्मित सामग्री, पच्चीकारी किये हुए या अथवा नगीने जड़े साज समान उपकरण आभूषण आदि महंगे मूल्य के वस्त्र तोलकर दिये जाने वाले जरी (स्वर्ण तार खचित) वस्त्र, सकेला इस्पात (लोह) से निर्मित अनेक प्रकार के हथियार भरे पड़े थे। तंबोली पान बेचते थे, फूल और फुलवाद (फूलों के पौधे) उपभोग हेतु सदा तैयार मिलते हैं। मनुष्य की जो भी इच्छा हो खरीद सकते हैं। स्थान-स्थान पर चहल-पहल हर्षोल्लास व्याप्त है। सबके मन में तरह-तरह के भाव व्याप्त हैं।

कहीं गीत और संगीत का निनाद हो रहा है, तो कहीं नर्तक (नट) नृत्य कर रहे हैं। भाट विरुदावलियां पढ़ रहे हैं, देवताओं और विद्वान् पंडितों के

समूह दिखाई दे रहे हैं। कहीं कथा हो रही है, कहीं संगीत, कहीं छंद पाठ और कहीं ज्योतिष के कार्य हो रहे हैं। कहीं कंदुक क्रीड़ा हो रही है तो कहीं कवचधारी योद्धा फूले फूले घूम रहे हैं। कहीं अखाड़ों में पहलवान अपने तेज और बल को तोल रहे हैं। रणथंभोर नगर इन्द्रपुरी के समान दिखाई दे रहा है।४४८।

रणथंभोर दुर्ग में जो भी आकर बस जाता हैं, वह सभी प्रकार के ऐश्वर्य का उपभोग करता है। इस दुर्ग में राजा हमीरदेव निम्नलिखित परगनों का उपभोग करता हुआ राज कर रहा था।४४९।

भदलाव, पहाड़ी, मलारणा, जीरोता, सलेमपुर, उदेहीं, उजींरपुर, लालसोट, बौंळी, निवाई, चाटसू, खिरणी, सारसोप, लिवाळी, वणहटो, टोडा, टोंक का प्रदेश, अैवानगर (नगर ?), नैणवा, उणियारा, मालपुरा, मौजाबाद, झिलाय और झिलाणी—(झिलाय के अन्तर्गत क्षेत्र), लोहरवाड़ा, बिचपड़ी, बरवाड़ा, बाणी, खाटचाणा, छायण, ढीपरी, बलूपो, पाणी (अथवा बालू और पोपाणी), पाटण, बारांई, सलेमपुर, सांगोद, सुहाणी (?), फुसौद, गुराई, जैतपुर, धनवाड़ा, घाणीं, बूंदी, कोटा, पलायथा, बडोंदि (छींपा बडौद ?), जराणी, सीसवाळी, इटावा, लुहावद, मांगरोल, महाणी, कुंभराज, खटकड़, गोरड़ी, जल्हवाड़ो (भालावाड़ ?), कहद, कुजोड़, गोगोर, आंटोणी, अटाणी, बीथोर, पिड़ाई, कोटड़ी, भटमेर, बौंळी (?) बालाखेड़ी, दुबलाण्यो, बंभोर, बिहाणी, खाताखेड़ी, चाचरणी, धंधेड़ खंड, सोपुर, खंडार, खिलजीं पुरा, अहलादपुर-इतने परगने हमीर ने अपने राज्य के अधीन किये।४५०।

हमीर उपर्युक्त परगनों की आय का उपभोग करते हुए राज्य कर रहा था। उसका मांडूगढ के मन्मथ (कोका या गोग ?) से सदा संघर्ष चलता रहता था। ४११।

मालवा राज्य में स्थित मांडूगढ में मन्मथ नाम का शासक राज्य करता था। हमीर के साथ उसकी शत्रुता थी। उसको लाखों आदमियों का सहयोग मिला हुआ था। ४५२।

हमीर के बांकड़ा ( ) नाम के काका के अति समीप उसका राज्य था, अतः बाँकड़ा उससे सदा युद्धरत रहता था। ४५३।

बांकड़ामउ मैदाना के खाताखेड़ी नगर में स्थापित थाने में रहता था। वह महाराज बांकड़ा के नाम से विख्यात था। ४५४।

उसके शरीर में कोढ का दाग (चिह्न) था। सभी उससे सूग (नफरत) करते थे और उससे दूर रहते थे। वह जब-जब भी हमीर के दरबार में उप-

स्थित होता था, एक आध घड़ी के लिए बैठकर वापिस लौट जाता था। उसके लौट जाने के बाद उसकी बैठक को धोकर साफ किया जाता था। काका के साथ इस प्रकार की सूग की जाती थी। महाराज बांकड़ा ने जब यह बात सुनी तो वह किसी से कुछ भी नहीं कह सकता था। मन ही मन में पछताता था। ४५५।

वह जब वहां से उठकर अपने थाने पर गया तो प्रतिदिन उठते ही मांडू गढ के सैनिकों से युद्ध करता था। मनमथ की सेना उमड़ कर आक्रमण करती थी और बाँकड़ा उसे मार भगाता था।

कई वर्षों तक यह संघर्ष चलता रहा। तब मनमथ के मन में अहंकार (अभिमान) जाग्रत हो उठा। उसने महाराज बांकड़ा को पत्र लिख कर संदेश भिजवाया कि हम युद्धार्थ स्वयं आ रहे हैं, आप वहीं रहें। ४५६।

महाराज बांकड़ा ने उसके पत्र का अविलंब उत्तर दिया और उसे शीघ्र ही आने हेतु आमंत्रित किया। उसने लिखा कि आप कल आने वाले हो तो आज ही आ जावें। और किसी नियत स्थान पर युद्ध करें। मैंने तो आपको खरी खरी बात प्रकट कर दी है। आपको प्रत्यक्ष में सब कुछ पता चल जायगा। जो कुछ बात आपने लिखी है, उसे पूरा करो। दिये गये वचन टूट न जावे। आप अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करें। ४५७।

तब राजा मनमथ ने आक्रमण किया। उसने अनेक देशों (प्रदेशों) से सेनायें बुलाई। महाराज बांकड़ा ने हमीर को पत्र लिखकर सारी सेना भेज देने का निवेदन किया। उसने लिखा कि कुलीन राजपूतों (सैनिकों) के अधीन सेना भेजें और स्वयं इस युद्ध में भाग लेने न आवें। मनमथ ने और मैंने एक ही स्थान पर युद्ध करने का का निश्चय किया है। इस बार मनमथ स्वयं चढ कर आया है। ४५८।

रणथम्भोर से बहुत बड़ी सेना भेजी गई। मऊ मैदाना के आदमी भी इकट्ठे हो गये। पूर्व में भी वह वहाँ बहुत अधिक रहता रहा था, और उन्हीं के बल पर विजय प्राप्त करता था। सभी ने मिल कर प्रयाण किया और शत्रु की सीमा में जाकर कर जम गये। उस स्थान पर जाकर मनमथ को बुला कर युद्ध किया। ४५९।

राजा मनमथ सेना लेकर आया। उसके साथ भी सारे मालवा के लोग एकत्र होकर दौड़े। देवगिरि व ग्रासेर की सेनाएँ बुलाई गई। सूरत, खंभात और गुजरात से भी लोग आये। मांडू प्रदेश के हर घर से आदमी साथ होकर चले और सगे संबंधी भी सहायता के लिये इकट्ठे होकर चल पड़े। मनमथ

ने विक्रमादित्य के समान आक्रमण किया। सेना के प्रयाण से इतनी धूल उड़ी की आकाश ढंक गया। ४६०।

जब दोनों सैन्य दल आमने सामने हुए, तो दोनों पक्षों के शूरवीरों को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। कायरों के मुख मुरझा गये और शूरवीरों की शक्ति और तेज में वृद्धि हो गई। जब सैन्य दलों को विरोधी पक्ष के सैन्य दल दिखाई दिये तो गाड़ी वालों (रथ वालों ?) ने आगे बढ कर दर्शन दिये। पहले तीरों और तुपकों (छोटी तोपों या बंदूकों ?) की लड़ाई हुई—दोनों ही सेनायें अपनी लगाम उठा कर एक दूसरे पर टूट पड़ी। ४६१।

घुड़सवारों के जयघोष के साथ ही असंख्य तलवारें म्यानों से बाहर निकल आई। लगातार तलवारों के प्रहार होने लगे। एक दूसरे से गुंथ कर युद्ध होने लगा। कड़ कड़ की ध्वनि के साथ हड्डियाँ कड़कड़ा कर टूट रही थी। (सड़ासड़ चाबुक चल रहे थे अथवा) योद्धाओं की चर्बी बह रही थी। योद्धाओं में एक दूसरे से बढ कर होड मची हुई थीं। रणक्षेत्र में गिरकर पड़े शव एक दूसरे से सट कर पड़ रहे थे। तलवारों के परस्पर टकराने की तड़ातड़ ध्वनि व्याप्त हो रही थीं। लड़ते हुए योद्धा परस्पर एक दूसरे से टकरा रहे थे। दोनों सेनाओं में मारो मारो का घोष हो रहा था। योद्धा उमड़ उमड़ कर झुंड के झुंड आगे आ रहे थे। अपने शरीर त्यागने के लिये वे खड्गों में विश्वास कर रहे थे। ये योद्धा अपने स्वामी के कार्य के लिये ही जन्म लेते हैं। (मन लगाते हैं)। वे जोर से आवाज़ दे देकर योद्धाओं को आह्वान कर रहे थे और वीर घोष (हुंकार) के साथ उत्तर देते थे। युद्ध में भयंकर प्रहार हो रहे थे। दोनों सेनाओं के संघर्ष में तलवारें टकरा टकरा कर टूट रही थी। अप्सरायें आश्चर्य के साथ आनन्दमग्न होकर हँस रही थी। योद्धाओं के मुखों पर तेज झलक रहा था। घावों से तृप्त होकर रणक्षेत्र में वीरगति प्राप्त योद्धाओं का वरण करने के लिये अप्सरायें खड़ी थीं। घुड़सवार घुड़सवारों पर और पैदल सैनिक पैदल सैनिकों पर शस्त्र प्रहार कर रहे थे। मांडू का राजा मनमथ घोड़े से नीचे उतर कर लड़ा, गुत्थम गुत्था होकर वे भूमि पर गिर गये। हाथी, घोड़े और वीर योद्धा जो रण क्षेत्र में घायल होकर पड़े थे, उन्हें उछाल उछाल कर हाथी परस्पर भिड़ रहे थे। पूर्ण शक्ति के साथ समान पक्षों में युद्ध हुआ। गिद्धों ने तृप्त होकर मांस भक्षण किया। चौसठ योगनियाँ भी तृप्त होकर लौट गई। सूर्य को धूल ने ढंक दिया और रात का दृश्य उत्पन्न हो गया। महाराज बांकड़ा ने मनमथ को पकड़ लिया और गर्जना करते हुए उस पर तलवार का प्रहार किया। अपने हाथों से एक दूसरे को खींचते हुए वे पृथ्वी पर आ गिरे और मल्लयुद्ध के समान एक दूसरे के समान एक दूसरे को बाहों में भर रहे थे। दोनों ही योद्धा परस्पर उलझते

हुए दोनों योद्धा उलट पुलट होने लगे। एक दूसरे से झूझते हुए एक दूसरे को बाहों में समाते भूमि पर गिर गिर और पुनः उठ उठ कर लड़ रहे थे। महाराज बांकड़ा ने गर्जना करते हुए मनमथ को नीचे गिरा कर अश्चार्य जनक रूप में उसको मार डाला। मनमथ के मारे जाते ही उसके सभी सैनिक वहाँ से खिसक गये। एक एक करके सभी छोड़ कर भाग गये। महाराज बांकड़ा ने भी रणक्षेत्र के साथ प्रीति संबंध स्थापित कर लिया। घावों से लथ पथ वह रणक्षेत्र में पड़ा रहा और चार दिन तक जिया। ४६२।

अपनी सेना (सहयोगियों) को आगे भेज कर हमीर ने बाद ने प्रयाण किया। सारा युद्ध समाप्त हो गया। तब हमीर शीघ्रता से वहाँ पहुंचा। ४६३।

मनमथ मारा गया और महाराज (बांकड़ा) घावों से भिदे पड़े थे। जब उसने हमीर के आगमन की बात सुनी तो वह उच्च स्वर से बोला। ४६४।

हमीर से जाकर कहना कि—काम पूरा हो चुका है। तुम आकर मुझे ले चलोगे, तभी मैं रणक्षेत्र छोड़ूंगा। ४६५।

तब हमीर घोड़े से उतर कर पैदल ही चल पड़ा और जाकर अपने काका महाराज बांकड़ा को प्रणाम किया। उसकी अनेक मनुहार करते हुये हमीर ने कहा कि आपने लोक में यश प्राप्त कर लिया है। ४६६।

या तो वह बांकड़ा की बैठक को धुलवाता था और उसे अनेक नाम देकर तिरस्कृत करता था। वही आज उसको कंधे पर उठा कर ले चला। काम (स्वार्थ) ऐसा ही प्रिय होता है। ४६७।

प्रिय पावस (वर्षा ऋतु) की वासना (अभिलाषा, संगमेच्छा, सुगंध) से समस्त वस्त्र, पात्रादिक प्रसन्न हो जाते हैं। शत्रु, मोर, दादर पक्षी, पर्वतों की शिखरों पर निवास करने लगते हैं। और पीउ पीउ बोलते हैं। पपीहा काम के वशीभूत होकर स्नेहरूपी रस को द्रवित करता है। महाराज बांकड़ा सीमान्त के थाने पर आकर वीर रसपूर्ण भाषा बोलता है। उसके तन के स्राव से अनंग (मनमथ) भीज गया। उसने तलवार ग्रहण करके मनमथ को मार डाला। महाराज बांकड़ा की तलवार से शत्रुओं के राजा के रक्त स्राव से शय्या अत्यन्त भीज गई है। ४६८।

मनमथ को मार डाला। उसके सभी सहयोगी सैनिक भाग गये और राव हमीर ने मांडू पर आक्रमण कर दिया। स्वामी के अभाव में धवलगृह (राजमहल) किस काम के—हमीर ने मांडू दुर्ग में प्रवेश किया। अपनी आज्ञा

प्रसारित करके अपने अधिकार को दृढ किया। मनमथ के वंश का सर्वनाश कर दिया। अपना प्रतिनिधि प्रबंधक नियुक्त करके वहां थाना स्थापित किया और स्वयं रणथम्भोर लौट आया। ४६९।

रणथम्भोर का दुर्ग सुन्दर ढंग से बसा हुआ है। वहाँ दुर्गम पर्वत हैं। वहाँ राजा हमीर देव राज करता था। कोई एक झाड़ी तक उसके राज्य में नहीं काट सकता था। ४७०।

उस दुर्ग में हमीर ने सभी घाटियों और दरों को बांध कर एक मार्ग रख छोड़ा था। उन पर्वतों में सदा वर्षा ऋतु के समान झरने झरते रहते थे। उसकी संधियों में पानी भरा हुआ था। ४७१।

अहलादपुर का मार्ग खुला हुआ था, जहाँ कामदार रहता था। वहाँ राव हमीर की कचहरी (दरबार) लगता था, जिसमें परगनों के हाकिम आकर राजस्व जमा करते थे। ४७२।

वह निश्चित होकर दुर्ग से राज्य संचालन करता था। उसकी सीमा पर पर कोई भी शत्रु अधिकार नहीं कर सकता था। वह पूरी जवानी में सीमा से बाहर जाकर आचरण करता था। उसकी क्रूर दृष्टि सदा दीप्त रहती थी। वह पहाड़ों में जाकर शिकार खेलता था। वहाँ पहाड़ में एक योगि रहता था। राजा उसके दर्शन करने के लिये गया। राजा को आते देख कर योगी ने पीठ फेर ली। ४७३।

वह भूखा होने पर वृक्षों के बकल (वल्कल-छाल) खाता था, अतः वाकलीपाव के नाम से प्रसिद्ध था। उसने दर्शन नहीं दिया तो राजा बहुत दुखी हुआ। क्रुद्ध होकर उसने एक विचार (यत्न) किया। उसने मेदा और शक्कर में घी डालकर तैयार की गई मिठाई से वृक्षों पर लेप करवा दिया। योगी को इसका पता नहीं लगने दिया। योगी को जब भी भूख लगती तब वह आकर प्रसन्नता पूर्वक उस बकल को खाता था। तिहाड़ा कर करके उनको सिकाता था और ऐसी वस्तु नित्य खाता था। योगी कहता था कि मैंने तपस्या की है, भगवान ने मुझे यह परिणाम दिया है। तपस्या का ऐसा प्रभाव हुआ है कि यह बकल (वल्कल) मिष्टान्न में परिवर्तित हो गया है। जब उसको ये तत्काल खाते हुए बहुत दिन हो गये तो वह योगी बहुत पुष्ट हो गया। ४७५।

राजा ने उपाय (विचार) करके एक दासी को बुलवा लिया और उसको पहाड़ पर रहने वाले तपस्वी योगी का तप भंग करने का आदेश दिया। ४७६।

तब राजा ने एक दासी को बुलाया और उस दासी को योगी के पास भेजा। उसके पुराने वस्त्र उतरवा कर नये वस्त्र पहनाये। उसको रत्न जटित स्वर्णाभूषण पहिनाया। सोने का एक थाल मंगवा कर उसमें छत्तीस ही प्रकार के पकवान परोस कर दासी के हाथ में सौंपे । ४७७।

राजा ने दासी को समझा कर कहा कि तुम जाकर उस योगी को यह भोजन करावो। यदि वह पूछे कि तुम कहां से आई हो तो कहना कि तुम्हें इन्द्रदेव ने भेजा है। अपने साथ दस व्यक्तियों को और ले जावो। उसने उन लोगों से कहा कि तुम योगी की नजर में मत आना। दस बीस कदम इधर ही रह कर तुम लोग इस दासी को जाने देना। ४७८।

दासी सोने का थाल लेकर आयस (नाथ योगी) के पास गई। वह इन्द्र की अप्सरा बन गई। जो देखने में ही उन्मत्त थी। ४७९।

जब आधी रात में चांदनी हुई, तब दासी आयस के पास गई। थाल को नीचे रखकर उसने दोनों हाथ जोड़े। तब आयस ने पूछा, "तुम कौन हो? दासी ने कहा कि मैं इन्द्र की अप्सरा हूं, मुझे आपके लिये भोजन देने के लिये भेजा है। आपने भयंकर तप किया है, इसी से इन्द्र देव ने आपके लिये भोजन का यह थाल भेजा। ४८०।

तब आयस ने मन में सोचा कि, ऐसा कुछ हुआ है तो यह संभव है। आस पास में दो कोस तक भयंकर निर्जन वन है। ऐसे समय में कौन स्त्री यहाँ आ सकती है। और इतने सारे आभूषण कहाँ से प्राप्त कर सकती है। यह सोने का थाल भी कहाँ से लायगी। पहले जिस प्रकार बल्कल मिष्टान्न में बदल गया था, उसी के फलस्वरुप यह भी हुआ है। ४८१।

तब दासी ने कहा कि इन्द्रदेव आपकी प्रशंसा करते हैं। जब भी तेंतीस कोटि देवी देवता आते हैं, तब आपकी ही चर्चा चलती है। तब सभी देवताओं ने निश्चय किया कि आपको ताजा भोजन भेजा जावें। इन्द्रदेव ने तब स्वयं मुझे भेजा है और मैं विमान में बैठ कर यह भोजन लेकर आई हूं। ४८२।

तब आयस ने भोजन किया और भोजन करके पानी पिया। वह अपने मुख से कुछ भी नहीं बोला और हाथ धो लिये। थाल को धोकर सरका दिया। दासी स्वर्ण का थाल लेकर लौट आई और अपने साथ आये लोगों से आकर मिली। अपने साथियों के साथ मिल कर वह दासी दुर्ग में आ गई और राजा को अभिवादन किया। ४८३।

इस प्रकार भोजन करते जब बहुत दिन हो गये, तब राजा हमीर ने दासी से पूछा—वह कभी तुमसे बात भी करता है, या मौन ही साधे रहता

है। तब हाथ जोड़ कर दासी ने निवेदन किया—वह न तो कुछ भी बोलता है और न द्रवित ही होता है, बोले क्या ? भोजन करके हाथ धो लेता है और थाल को धो कर सरका (खिसका) देता है। ४८४।

तब राजा ने दासी को समझाया कि अब तुम वहीं जाकर रहो। अब तू लौट कर यहाँ मत आ, वहीं जाकर बैठी रह। तुम उसके तप को भंग कर दो। उससे दो बालकों को जन्म दो। तुम वहाँ जाकर ऐसा अभिनय (लीला) करो। उसके बाद उसे इस दुर्ग में लेकर आवो। ४८५।

सारा गहना उसको पुरस्कार स्वरूप दे दिया और साथ में प्रभूत धन (मुद्राएँ) भी दीं। इसका तुम उपभोग करो और वहीं बैठी रहो। यहां की कोई बात मत करना। जिस दिन तुम यहां आवो, उसकी सूचना दे देना। आते समय बालक को उसके माथे पर रखना। यदि तुम मेरा यह काम कर दोगी तो तुमको बड़ारण (बड़ी रानी का पद देकर मैं तेरा आज्ञा पालक बन जाऊंगा।४८६।

(बड़ारण का वास्तविक अर्थ रनिवास की प्रमुख दासी होता है, पर यहां यहाँ राजा का आज्ञा पालक बन जाने के कथन से बड़ी रानी का भाव संभव है)!

दासी ने जब वहीं जाकर रहने का निर्णय लिया तो उसने अपने सभी साथियों को लौटा दिया। उसने जाकर आयस को भोजन कराया और अपने मन में अभिनय की योजना बनाई। वह दासी आयस के पास जाकर बैठ गई, और बहुत देर तक वहीं बैठी रही। आयस ने उससे पूछा कि वह आज यहां क्यों बैठी हुई है तो दासो ने कहा कि आपके दर्शनों के लिये बैठी हूं। ४८७।

तदुपरान्त वह उठ कर खड़ी हुई और प्रणाम करके दस बीस कदम तक गई। वहां से वह रोती हुई वापिस लौट गई और "डर लग रहा है, डर लग रहा है" कहते हुए विलाप करने लगी। आयस ने उससे पूछा कि वह लौट क्यों आई है ? स्त्री ने उत्तर दिया कि उसका विमान वहां पर नहीं है। अब अपनी तपस्या से कोई उपाय करके मुझे इन्द्रपुरी में पहुंचा दें। ४८८।

आयस ने कहा, "मैं ऐसा तपस्वी कहा हूं कि तुम्हें इन्द्रपुरी तक पहुंचा सकूं। अब तुम्हारा विमान कब तक आयगा जिसमें बैठ कर स्वर्ग लोक को जा सको ? दासी ने उत्तर दिया, "वह तो इन्द्र देवता ही भेजेंगे, इस बार आवे या न आवे। तब तक मुझे बहुत भय लग रहा है। अब मैं कहां बैठूँ क्या करूं। ४८९।

आयस ने कहा, यहाँ डर किस बात का है, तुम अग्निकुण्ड (धूणी) के पास जाकर बैठो। यहां न तो कोई जीव जन्तु ही आते हैं और न कोई भूत प्रेतों का ही प्रभाव है। यह देखने में ही ऐसी उझाड़ (बियाबान) जगह हैं। यहां सभी सिंहों और बाघों को मार डाला गया है। ४६०।

तब वह स्त्री मन ही मन में मुस्करा उठो और सोचा इस बेचारे को बातों में तो लगा लिया है। अब यह मेरे सामने से कहां जायगा। जती सती और शूरवीर भी बस में आ जाते हैं। यहां की जाति का कौन राजा है? यहां किसकी तूती बोलती है (किसके बाजे बजते हैं)। राजा का नाम क्या है? उसके स्थान का नाम क्या है। ४६१।

आयस ने कहां हे अप्सरा! सुनो। जब तुमने पूछा है तो सब कुछ बताऊंगा। यहां के राजा की जाति चौहान (राजपूत) है। उसका नाम हमीरदेव है। उसकी राजधानी रणथम्भोर है। वह स्थान यहां से दो कोस दूर हैं। वह दुर्ग और वह जगह बहुत बड़ी है। वह उस स्थान पर राज करता है और दिन में वह पहाड़ों में घूमता रहता है। ४६२।

वह खिसकती हुई आगे बढती जाती थी, और कहती थी कि महाराज डर लगता है। आयस ने कहा कि वहाँ कोई जोखिम (खतरा) नहीं है। हे नारी! तू यहां डर मत। ज्यों ज्यों खिसकती हुई वह आगे आती थी, त्यों त्यों ही वह आयस उसे वापिस सरकाता था। वह तो उसके पीछे ही पड़ गई और उसके अंगों से अंग लगा कर जा बैठी। ४६३।

तब आयस ने सोचा कि यह बिचारी डर रही है, इसे पड़ी रहने दो। स्त्री ने आयस से कहा कि आप मेरे स्वामी हैं। आप आज्ञा दें तो मैं आपके पांव दबाऊं। आयस ने कहा कि हे अप्सरा स्त्री सुनो! मेरे और तुम्हारे बीच संबंध का विचार कैसे किया। तू अप्सरा है और मैं योगी कहाता हूं। तुमसे मैं अपने पांव कैसे दबवा सकता हूं। ४६४।

जब अब भी वह स्त्री स्पर्श करती थी, योगी खीज कर उसे दूर कर देता था। वह नारी कटाक्ष कर करके आयस में मन में मोह उत्पन्न कर रही थी। अनेक चरित करके प्रेम बढा रही थी। उसने अपनी काया को मोड़ते हुए, अलसाते हुए हाथ लगाये और बलात् पांव दबाने लगी। आयस ने सोचा कि अब मैं कहां जाऊं और कहां जाऊं? इसके सामने मैं कैसे जा जाऊंगा। ४६५।

दासी ने उसके हाथ, पांव और पीठ को दबाया और आयस के अंग अंग में काम को जाग्रत किया। स्त्री का हाथ जब पुरुष को छूता है, तब कामदेव पूरी शक्ति के साथ जाग्रत हो जाता है। रुई का जब अग्नि से संपर्क होता है, तो वह सुलग सुलग कर ही जलती है। ४६६।

उसने और भी दो महीनों तक आयस को पक्वान्न खिलाये । वह पचाने पर कैसे पच सकते थे । उसका शरीर पुष्ट होकर मोटा हो गया । वह उस दासी के साथ कामक्रीड़ा में अनुरक्त हो गया । उसका दासी के साथ संगम हो गया और उसने अपनी सारी तपस्या को नष्ट कर दिया । योगी ने नारी के साथ सुख प्राप्त किया और जप,तप ज्ञान ध्यान सब कुछ भुला दिया । ४९७ ।

सभी रसों में स्त्री-रस सबसे भिन्न है । जो इस रस का आस्वादन कर लेता है, वह उससे दूर नहीं होता । नारी का रस इतना अच्छा लगता है कि पुरुष को रात दिन वही रस अच्छा लगता है । यदि स्त्री पुरुष के साथ अपने प्रेम का निर्वाह करती है और दिन रात उसी को चाहती है । जो पुरुष त्रिया रस में डूब जाता है, यह वही जानता है, जिसने इसे भोगा है । ४९८ ।

यदि पुरुष पर नारी के रस (प्रेम) में जा पड़ता है तो वह अपने कुटुम्ब की कोई परवाह नहीं करता । वह न तो हिंसक पशुओं से भय खाता है और न अधिकारियों से ही डरता है । वह न तो अपने प्राणों की परवाह करता है और अपने धन के अपव्यय की ही । वह परकोटा, नदियों या खाइयों के अव-रोध की भी परवाह नहीं करत्ता । थानों और पहरों को भी वह लांघ जाता है । अन्धा होकर वह स्त्री रस में डूबा रहता है और अच्छी और बुरी सभी स्थितियों को स्वीकार कर लेता है । ४९९ ।

जब काम का प्रभाव समाप्त हो गया और आयस को नींद आ गई तो वह स्त्री भी आयस के साथ ही सो गई । रात बीत गई और चिड़ियों की चह-चहाट होने लगी, तब जोगी ने उठ कर स्नान किया । स्नान करके उसने जप तप का प्रबंध किया और उस स्त्री को गुफा में डाल दिया । वह दिन भर भूखा ही रहा । सूर्य अस्त हो गया और रात हो गई । ५०० ।

तब योगी ने स्त्री से पूछा । अब तुम्हारा विमान कब तक आयगा । स्त्री ने कहा कि समय होने पर ही आयगा । आधी रात को ही वह आता है, तभी आयगा । पर मेरे मन में एक चिंता है । मुझे तुमने छू लिया है, ऐसी स्थिति में आवे या न भी आवे । विमान न आया तो में कहां जाऊंगी, मैं बैठी बैठी वही मार्ग देख रही हूं । ५०१ ।

योगी ने कहा, तुमने यह और चिंता पैदा कर दी है कि तुम्हारा विमान आयगा या नहीं । तुम्हें छोड़ना मुझे अच्छा नहीं लगता । जब तक तुम्हारा विमान आवे, तब तक मुझे और भी सुख दो । कल रात की गई क्रीड़ा के समान आज भी क्रीड़ा करो । वह स्त्री जैसा चाहती थी, वैसी ही बात योगी नें कह दी । ५०२ ।

दोनों मुड़कर पुनः एक हो गये और आधी रात तक रतिक्रीड़ा करते रहे। ५०२।

तब योगी ने सुरत क्रीड़ा की और कहा कि अब तुम जाकर देखो कि विमान आया या नहीं। योगी के इस प्रकार कहने पर वहाँ से दसेक कदम दूर जाकर खड़ी रही। दो घड़ी तक वह नहीं रही और लौट कर बताया कि विमान नहीं आया है। मुझे अब विमान किस प्रकार ग्रहण करेगा। मैंने तो ये दो दिन इसी प्रकार भोगे हैं। ५०३।

अब तुम कह रही हो कि विमान नहीं आया है। इसने तो चिन्ता को और भी बढा दिया है। तुम यहाँ रहोगी तो क्या खाकर रहोगी। मैं तो वापिस बकल (वृक्षों की छाल) खाना प्रारंभ कर दूंगा। स्त्री ने कहा, "मैं आप से एक निवेदन और करती हूं। आप आज की रात और देखो। यदि विमान आ गया तो चली जाऊंगी, अन्यथा यहाँ तो रह ही रही हूं"। ५०४।

तब दोनों साथ सो गये। प्रातः काल होते ही आयस ने कहा कि तुम तो भूखी हो, अब क्या किया जाय। स्त्री बोली, यह रुपया लो और कहीं से आटा दाल ले आवो, खाना बनाओ और खूब खावो। तब योगी रुपया लेकर उठा और पास के गांव में गया। ५०५।

इस प्रकार दस दिन तो उन्होंने विलास में व्यतीत किये और उसके बाद गृहस्थी में फंस गये। दोनों कुटिया छा कर उसमें रहने लगे और जोगी जोगिन कहे जाने लगे। उन्होंने दस बारह बकरियाँ और पांच सात गायें खरीद ली। इस प्रकार रहते हुए उन्हें एक वर्ष बीत गया। उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया। ५०६।

वे अब मठधारी सिद्ध (नाथ) कहाते थे। आने जाने वालों को सब खिलाते थे। वे गूढा (छोटे गांव) और दुर्ग के बीच में प्रसन्नतापूर्वक निवास कर रहे थे। दासी उसको खूब माल खिलाती थी और दोनों पुत्रों को वह गोद में लेकर खिलाता रहता था। ५०७।

भोग विलास करते हुए वह बहुत मोटा हो गया। गायों और बकरियों का वैभव भी बहुत अधिक बढ गया। वह अपना ज्ञान, ध्यान, जप, तप व्रत आदि सब भूल गया। उस दासी के साथ वह बहुत अनुरक्त हो गया। उसने एक वर्ष और भी सुखोपभोग किया। तब दासी ने अपने वादे का स्मरण किया। ५०८।

(उसने जोगी से कहा)—हे स्वामी ! मैं आप से एक निवेदन करती हूं। आप मुझे यह गढ (दुर्ग) दिखावें। तब आयस ने बताया कि वहां राजपूत

और रावत रहने हैं। तुम्हें देख कर वे हंसी उडायेंगे और उससे हमारे ऊपर आफत आ जायगी। यह विचार तुम्हारे मन में कैसे आया। वहाँ गढ में तुम क्या देखोगी। ५०९।

उस दिन तो वह चुप हो गई, पर दूसरे तीसरे दिन उसने फिर वह बात कही। मुझ पर यह तुम्हारा कैसा प्यार है कि मेरा कोई कहना नहीं मानते। (आयस ने कहा—) मैंने तुम्हारी कौनसी बात नहीं मानी है। मैं तो तुम्हारे कहने के अनुसार ही चलता रहा हूं। (दासी ने कहा—) यदि आप मेरे कहे तो नहीं टालते हैं, तो एक बार दुर्ग पर चलो। ५१०।

चेरी ने जिद की और आयस मन में सोचने लगा। जिस नारी ने देवों, गंधर्वों और मनुष्यों को ठग लिया—उसका कैसा विश्वास। ५११।

आयस ने कहा—हे स्त्री तुम भूल गई हो। अवश्य ही तुम्हारे मन में दुर्बुद्धि पूर्ण विचार उत्पन्न हुआ है। हम जोगी हैं, किसी के आश्रित नहीं। हमें सारा संसार प्रणाम करता है। वहां राजा और उसकी प्रजा रहती है। तुम्हें साथ में देख कर सब बुराई करेंगे। मैं वहां तुम को लेकर जाऊंगा तो उससे मुझे शोभा नहीं मिलेगी। ५१२।

अब मुझे आप अपने साथ क्यों नहीं चलते। अब तो मेरी शरम आयेगी ही। मैं इन्द्रलोक को भूल गई और अप्सरा होते हुए भी तुम्हारे घर में तुम्हारी पत्नी बन कर रह रही हूं। कोई करोड़ों तीर्थों में जाकर स्नान करले तो भी मेरी जैसी अप्सरा को प्राप्त नहीं कर सकता। चाहे कोई हिमालय में जाकर गल जाय या काशी में जाकर करोत लेकर मर जावें। ५१३।

कोई जौहर की ज्वाला में कूद पड़ते हैं, या भैरवझांप ले लेते हैं, कितने ही आग के धुएँ में (धूणी) में घुट घुट कर मर जाते हैं, कोई पंचाग्नि तप करके अपने शरीर को जलाते हैं। इस मृत्युलोक में जितनी भी स्त्रियाँ हैं, उनमें मेरी समानता कितनी कर सकती हैं। जो मनुष्य राज की या अन्य किसी की परवाह करता है, वह मनुष्य मुझे कैसे प्राप्त कर सकता है। ५१४।

मैं तो तुम्हारे पास सहज ही में आ गई थी, इसीसे मैं तुम्हें अच्छी नहीं लग रही हूं। में तुम्हारी जात पांत को नहीं जानती, फिर भी मैंने ऐसे व्यक्ति का घर बसाया है। मैं इतनी कुरूप और हीन तो नहीं दिखाई देती। इन आभूषणों से भी मेरी सुन्दरता कम तो नहीं है। ५१५।

(आयस बोला)—मैंने यहां तपस्या की है। मेरे पास राजा और राज-नेता आते हैं। तुमने बहुत बुरी हठ की है, तुम्हें मेरी कोई भी बात पसंद नहीं आती है। ५१६।

हे नारी! मैंने तो और ही कारण से यह बात कहीं थी और तुमने उसे और ही रूप में समझा है। में तुम्हारे कारण शरम से नहीं मरता हूं, मैं तो अपने प्राणों की चिन्ता करता हूं। मैं निर्गुण निर्मोही योगी हूं। मेरे साथ कोई नहीं दिखाई देना चाहिए। अब सभी मेरी चर्चा करेंगे कि इसके साथ यह नारी कहां से आई है। ५१७।

उस स्त्री ने अपने पति से कहा—तुम्हारे सामने किसका जोर चल सकता है। राजा से अगर कोई डरता है तो वह कोई चोर डाकू ही होगा। ५१८।

(आयस—) मैं किस किससे क्या कुछ कहता रहूंगा, इसीसे तुमको समझा रहा हूं। नारी ने कहा कि मैं तुम्हें समझाती हूं। तुम उन्हें कहना कि, मुझे यह स्त्री इन्द्रदेव ने दी है। नहीं तो, तुम कुछ भी मत बोलना, सबको उत्तर मैं ही दे दूंगी। तुम ऐसी बात से क्यों भयभीत हो रहे हो, जैसे किसी की स्त्री को तुमने छीन लिया हो। ५१६।

तब योगी ने उस स्त्री से कहा कि यहां का राजा बड़ा दुष्ट है। तुम्हें देख कर वह छीन लेगा और वहीं मेरी मृत्यु हो जायगी। नारी ने कहा यह क्या लीला है—राजा मुझे छीन लेगा। इस बात से आप निश्चित रहें—दुबारा ऐसी बात मत करना। ५२०।

उसके वादे की अवधि तो पूरी होने आई, अब उससे कैसे रहा जा सकना था। जोगी उसका कहना नहीं मान रहा था—वह राजा से भयभीत होकर मर रहा है। तब स्त्री ने बहुत अधिक जिद की। उसने खाना बनाना और खाना सब छोड़ दिया। अपने पुत्रों को दूर हटा दिया और आप उल्टा मुख करके सो गई। ५२१।

उसके दोनों पुत्र भूख के मारे बिलख रहे थे। योगी उनको संतुष्ट करने के लिये अनुनय करता था। वह न तो आंख खोलती थी और न मुँह से ही कुछ बोलती थी। बालक बिना स्तनपान के बिलबिलाते थे। वह उनको गोद में लेकर बह लाता था। अन्त में स्त्री के पांवो में आकर गिर पड़ा। और स्त्री से बालक को स्तनपान कराने के लिये निवेदन कर कहने लगा कि अब तुम्हारे किसी काम के लिये मना नहीं करूंगा। ५२२।

तब वह शीघ्रता से बोली, मैं दुर्ग पर जाकर ही स्तनपान कराऊंगी। दोनों बालक भूख के मारे चिल्ला रहे थे। और योगी बहुत दुखी हो रहा था। मोहग्रस्त आयस का हृदय भर आया। जब उसने स्त्री के कठोर हठ को देखा तो अकुला कर बोला—उठ कर तैयार हो जा, हम कल ही दुर्ग पर चलेंगे। ५२३।

दासी ने एक गुप्तचर को बुलाया जिसे साक्षी रूप में उसे पहले ही बैठा रखा था। वह बैठे बैठे सारे नाटक को देख रहा था। आयस से कहा कि यह कोई पथिक है। उसके सामने वचन देकर सौगंध खाई कि कल ही दुर्ग में चलेंगें। जब पूरा आश्वासन देकर वादा कर लिया, तब उस स्त्री ने बालक को हाथ में उठाया। ५२४।

उसने जोगी को किसी काम से बाहर भेज कर उस गुप्तचर को बुलाया और उसको राजा के पास जाकर सारी घटना सुनाने के लिये कहा। उनसे कहना कि दासी कल आयगी—दोपहर तक प्रतीक्षा करें। उन्हें कहना कि ये अवश्य आयेंगे। आप नगर द्वार पर बैठे रहना। ५२५।

गुप्तचर सारी बात सुनकर चला गया और राजा के पास जाकर खड़ा हो गया। उसने राजा को प्रणाम करके कहा कि वह आयस जोगी कल यहाँ आयगा। महाराज दरवाजे पर बैठे रहें। वह भोजन करके वहां से निकलेगा और दुपहर तक यहां आयगा। ५२६।

जोगी बार बार समझाता था, पर स्त्री उसकी कोई बात नहीं मानती थी। बच्चे का पालना सिर पर रख कर वह दुर्ग की ओर चला।५२७।

राजा जोगी को देखने के लिये उत्सुक था अतः वह दरबाजे पर पहले ही आकर बैठ गया। इतने में जोगी ओर जोगिनी आये। राजा ने उन्हें देख लिया। वह राजा के सामने होकर निकला—दोनों की नजरें मिली। आगे आगे योगी चल रहा था और उसके सिर पर पालना देकर दासी चल रही थी। ५२८।

दरवाजे पर राजा दिखाई दिया, तो योगी ने नजरें फेर ली। राजा ने आयस से पूछा कि यह स्त्री कहाँ से लाये हो। ५२९।

जोगी ने राजा को उत्तर दिया कि इन्द्रदेव ने इसे भेजा है। उसके लिये मैंने नित्य नियमपूर्वक बैठ कर तपस्या करता हूं। ५३०।

तब जोगी ने राजा को आशीर्वाद दिया और दासीने लंबा घूंघट निकाल लिया। आयस एकदम आगे बढ गया। राजा ने आवाज देकर उसे वापिस

बुलाया । राजा ने उससे पूछा कि यह स्त्री तुम्हारे पास कहां से आई । तुम तो सिद्ध गुसाई (नाथ योगी) थे । तुम्हारे लिये यह स्त्री किसने दी । ५३१ ।

तब जोगी इस प्रकार बोला—आप हमारी बात कैसे करते हो । आप राजा हैं और मैं गरीब भिखारी हूं । आप मेरे विषय में क्या पूछते हैं । भाग्य के लेख के अनुसार यह जहां से भी आई हो—विधाता के लेख कोई मिटा नहीं सकता । इतना कह कर उसने अपना कदम आगे बढ़ाया । आयस को राजा ने पुनः वापिस बुलाया । ५३२ ।

आप जा कहां रहे है ? यहीं खड़े रहें और मुझसे सच्ची सच्ची बात बतादें । अगर आपने झूंठ बोला तो नाथजी की सौगंध है । यह स्त्री आपके पास कहां से आई ? आप इसकी सारी बात बतावें, फिर आप आगे जा सकते हैं । यदि झूंठ बोले तो आपको कारागार में डलवा दूंगा और कठोर दंड दूंगा । ५३३ ।

तब जोगी ने सोचा कि राजा के यहां तो सत्य ही प्यारा होता है । तब उसने राजा को कहा कि मुझे यह स्त्री इन्द्रदेव ने दी है । मैंने भयंकर तपस्या की थी—वृक्षों की छाल खाकर रहा, तब इन्द्रदेव ने इस अप्सरा को भेजा—जो भोजन लेकर मेरे पास आती थी । ५३४ ।

तब राजा ने कहा कि आप सत्य बोल रहे हैं । मैंने इस बात को सत्यरूप में स्वीकार कर लिया है । यह जोगिन तो मेरी ही दासी है-अरे आयस ! तुमने इसे कहां से चुराया है । तुमने अच्छा किया जो इसे यहां ले आये और मैंने घर बैठे ही चोर को पकड़ लिंया । मुझसे कह रहे हो कि तुमने कठोर तपस्या की थी, उसी के फलस्वरुप इन्द्रदेव ने तुम्हें दी है । ५३५ ।

तब जोगी व्याकुल होकर बोला-हे राजन् ! आप ऐसी बात क्यों कर रहे हैं । हमारा कुछ तो सम्मान करो । यह जोगिन है, इसे दासी क्यों बना रहे है ? जोगी ने इतनी ही बात कहीं कि राजा हंस कर बोला और उस दासी का नाम लेकर पुकारा । ५३६ ।

सुनते ही हीरली दासी पास में आ गई और अपना घूंघट उघाड़ लिया । उसने धरती तक झुक कर प्रणाम किया । राजा ने जोगी को यह सब दिखाया और बोला—क्यों जोगी ! तुम तो कहते थे कि यह अप्सरा है । जोगी यह सब देख कर अचंभित हो गया । जोगी ने पुनः कहा—यह दासी नहीं है आपकी तपस्या के डर से इसने माना है । ५३७ ।

जोगी से राजा ने समझा कर कहा कि वृक्षों में मिष्टान्न लगा कर बाद में भोजन मैं ही भेजता था । ५३८ ।

हे मूर्ख जोगी ! सुन, जब मैं तुम्हारे आसन पर आता था, तो हम तो तुम्हारे दर्शन करना चाहते थे और तू मुँह फेर कर बैठ जाता था। मैंने उसी कारण से यह सब हठ किया है और तुम्हारे तप का प्रमाण लिया है। मैंने पहले वृक्षों में मिष्टान्न का लेप करवाया और उसके बाद सोने के थाल में भोजन भिजवाया। ५३६।

तब योगी अत्यधिक क्रुद्ध हो उठा और बालक को शिला पर गिरा दिया। उसने राजा से कहा कि मैं तो पुनः सावधान हो रहा हूं, पर तू तो सर्वनाश को प्राप्त हो गया है। तू अपने मन में जो भी योजना प्रारंभ करेगा-वो कभी पूरी नहीं होगी। राजा को इस प्रकार शाप देकर, जोगी, चला गया और पुनः तपस्या की। ५४०।

आयस अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और राजा से कहा कि तुमने मेरी तपस्या में बाधा पहुंचाई है, उसीका तुमको शाप है। ५४१।

जोगी ने वापिस जाकर कठोर तप किया। उसने खाना पीना सब छोड़ दिया। पहाड़ों में जाकर वह अमर हो गया। किसी ने भी पुनः उसे अपनी आंखों से नहीं देखा। राजा अत्यन्त उमंग के साथ राजमहल में लौट गया और दासी को मुंह मांगा पुरस्कार दिया। राजा आयस के शाप से भयभीत नहीं हुआ। उसने अपने हठ को पूरा कर लिया। ५४२।

हमीर को प्रथम नशा (अभिमान) तो राजा के पद का था, दूसरा नशा जवानी का था, तीसरा नशा उस पारस पत्थर का था, और उसके आस पास उसका कोई शत्रु नहीं रह गया था। और वह निश्चित होकर धरती का उपभोग करता था। उसको घूमने फिरने का शौक लगा हुआ था। वह सूर्योदय होते ही उठ कर शिकार खेलने के लिये पहाड़ों में घूमता रहता था और मनोविनोद रत रहता था। ५४३।

उसने दुर्ग के समीप असंख्य देवालय बनवाये और पत्थर की मूर्तियाँ घड़ा घड़ा कर उनमें स्थापित की। उनकी सेवा पूजा के लिये सेवकों को रखा, जो धूप दीप करते और नैवेद्य अर्पित करते थे। वह प्रतिदिस प्रातः उठकर उनके दर्शन के लिये जाता और भाव-भक्ति के साथ पूजा संपन्न करवाता था।

राजा के पुत्रियाँ थीं, पर पुत्र नहीं था। वह पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा करता था। ५४४।

दुर्ग के परित पानी बहता रहता था, जिनमें नावें पड़ी रहती थीं। राजा उनमें बैठकर क्रीड़ा करता था। जिधर भी इच्छा होती, उधर ही उनको ले

जाता था। वहाँ से दो कोस दूर एक शिवजी का मंदिर था—जिसका नाम सोलेश्वर महादेव था। राजा उनके दर्शनों के लिये गया। मार्ग में उसको मंदिर का पुजारी आता हुआ मिल गया। ५४५।

पंडे के पास शिवजी के पत्र पुष्प नहीं थे। राजा को देख कर वह घबरा गया। जिस पुजारी के पास पाती नहीं मिलती थी, राजा उसको बहुत कष्ट देता था। तब पंडे ने अपने सिर के पुष्प लेकर राजा के हाथ में दे दिये। उनके साथ सिर का बाल भी आ गया और वह राजा को दिखाई दे गया।५४६।

राजा ने सोचा कि देखो पंडे ने कैसा काम किया है कि मुझे अपने सिर में रखे फूल दे दिये। पंडे ने कहा कि महाराज ! मेरी ऐसी औकात कहां है जो मैं आपको अपने सिर के बाल दूंगा। राजा ने पूछा कि फिर इन फूलों में बाल कहां से आया। जहां से भी यह प्रसाद (पाती) लाये हो वह सच सच बता दो। पंडे ने बताया कि महाराज ! शिवजी जटाधारी हैं, हर बार उन्हीं के बाल झड़ते रहते हैं।५४७।

राजा ने कहा तुम हमको शिवजी की जटा बतावो। वापस चलो। पंडे ने उत्तर दिया कि अब जटा कहां होगी। किसी समय होती है तभी होती है। उस समय हमको शीघ्र ही दिखाना—अगर नहीं दिखाया तो तुम्हें जान से मार डालूंगा। पंडे ने कहा अच्छा है—पंद्रह दिन बाद आप आकर जटा देख लें।५४८।

पंडे ने राजा से वादा कराया। राजा दर्शन करके लौट गया। उसके बाद तेरह दिन बीत गये। पंडे ने शिवजी के आगे धरणा (भूख हड़ताल, सत्याग्रह) दे दिया। उसने प्रार्थना की हे महादेव ! मेरे वचनों की रक्षा कर लो, नहीं तो मेरी हत्या का उत्तरदायित्व स्वीकार करो। मुझे राजा भी आकर मारेगा। आप मुझे मार डालो या फिर मेरी सहायता (रक्षा) करो।५४९।

पंडे ने धरणा दे दिया। भूखे प्यासे रहते तीन दिन बिता दिये। जिस दिन का वादा किया था, वह दिन आ पहुंचा। त्यों त्यों पंडा बहुत अधिक घबराने लगा। उसने कहा कि चार घड़ी बाद राजा आयगा—और आते ही निश्चित रूप से वह मुझे मरवा डालेगा। पंडे ने मरने का निश्चय कर लिया, तब शिवजी आकाशवाणी से बोले।५५०।

तुमने राजा के सामने झूंठ क्यों बोला। अब तूं मुझ पर हत्या का आरोप लगा रहा है। अब तूं निश्चित होकर सो जा। तेरी चिंता का निरा-

करण हो जायगा । तूं डर मत, लज्जित मत हो और महादेव की पिंडी से तीन जटायें निकल आई । इतने में ही राजा आ गया और जटा को देखकर अत्यन्त आनंदित हुआ । ५५१ ।

महादेवजी ने जब चमत्कार दिखाया तो राजा ने पंडे को बुलाकर पुरस्कृत किया । राजा ने एक गांव चढाकर उसको ताम्रपत्र दिया । विधाता का लेख मिटाये नहीँ मिटता । किसी प्रपंची ने शिकायत करके कहा —बताओ पत्थर में जटा कहां से होगी । इस पंडे ने ही कोई षड्यन्त्र करके इसको चिपकायी होगी । ५५२ ।

राजा के मन में दुविधा उत्पन्न हो गई, उसने ध्यान पूर्वक देखा । उसके मन में कुबुद्धि उत्पन्न हो गई और सोचा कि अब मैं इसे उखाड़ कर देखूं । ५५३ ।

उसके सभी विचार मनमानी से भरे हुये थे । राजा के मन में दुविधा उत्पन्न हो गई । यह बात उसने मुंह से प्रकट की । तीनों जटाओं को हाथ से पकड़ कर मरोडी देते हुए उसने खींच लिया । जटा उखड़ गई और वहां से दूध छलक पड़ा । उस समय शिवजी की वाणी निकली कि तेरे कोई वंशज इस दुर्ग में नहीं रहेंगे । ५५४ ।

शिवजी की इस वाणी को राजा हमीर ने स्वयं सुना कि यह दुर्ग आपके अधिकार में नहीं रहेगा । यहां तुर्क राज्य करेंगे । ५५५ ।

दूसरा शाप राजा को दिया गया । उसके सभी साथी घबरा गये । यह तो भवितव्य ऐसा ही होगा । विधाता ने जो रचना की है, उसे कोई नहीं मिटा सकता । राजा ने यह बहुत ही अनुचित कार्य किया है । दुर्बुद्धि पूर्ण काम करके शाप लिया है । अब कलियुग अपना प्रसार करना चाह रहा है । विधाता के लेख को कैसे मिटाया जा सकता है । ५५६ ।

राजा लौट कर दुर्ग में आया और पुनः अपना मनमाना शासन करने लगा । वह और किसी का भी कहना नहीं मानता था । अनाचार, अत्याचार पूर्ण खेल रच कर खेलना ही वह जानता था । उसकी एक बडगूजर रानी थी, वह पटरानी थी, उसका नाम हीरांदे था । उसकी पुत्री का नाम देवलदे था । दूसरी सोलंकी की रानी थी, जिसकी पुत्री का नाम केवलदे था । ५५७ ।

(राजा के दो पुत्रियाँ हुई—उनकी नई कथा सुनो । ५५७ ।

(पंचम अध्याय)

राजा हमीर की राजकुमारी देवलदे रंभा अप्सरा की अवतार थी। उस कन्या की कथा सुनो। वह इन्द्र की पटराणी रंभा थी। इन्द्र उस पर बहुत कृपा रखता था। वह उसको कभी दूर नहीं रखता था। इन्द्र की इच्छा के अनुसार इन्द्रलोक में ब्रह्माजी कथा सुनाते थे।५५८।

कवि श्रेष्ठ ने भली प्रकार विचार करके कहा—कि अन्य जन्म (पूर्व जन्म) की बात है, जब देवलदे इन्द्रदेव की पटरानी रंभा के रूप में थी। उस समय की कथा है।५५९।

उस समय इन्द्र और रंभा, दोनों ने ब्रह्माजी से निवेदन किया कि मृत्यु लोक की पुस्तक खोल कर उसमें से जंबूद्वीप की कथा प्रारंभ से अंत तक गा कर सुनावें। ब्रह्माजी ने कथा करते हुए बताया कि जंबूद्वीप के मनुष्य कभी यहां आते रहे हैं। वे विमानों में चढ कर देव पद को प्राप्त करते रहे हैं। वहां परब्रह्म परमात्मा की उत्पन्न कला अवतरित होकर अनेक लीलाएं करती रहीं हैं।५६०।

कथा सुनने को वहां तेंतीस ही देवता, अठचासी ऋषि आकर बैठे। सभी गंधर्व और सिद्ध मुनि भी आये। लोमश ऋषि और वसुदेव को भी बुलाया गया। नवग्रहों और सताईस नक्षत्रों का भी वरण करके उन्हें बैठाया गया। चित्र विचित्र और धर्मराज को भी निमंत्रण भेजा गया। इन्द्राणी रंभा ने आद्या भवानी को भी आमंत्रित किया और समस्त इन्द्रपुरी वहां सम्मिलित हुई।५६१।

तब ब्रह्माजी ने कथा कहना प्रारंभ किया। सर्व प्रथम सातों ही द्वीपों का विचारपूर्ण वर्णन किया। तब जंबूद्वीप की महिमा का कथन प्रारंभ किया। उसके सभी नौ खंडों का वर्णन करते हुए बताया कि जंबूद्वीप में सभी मनुष्य जप, तप और व्रत करते हैं। संसार में धर्म युक्त नियमों का प्रसार करते हैं। जंबूद्वीप धर्म क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है। जो वहां धर्म कर्म करते हैं, वे यहां इन्द्र लोक में प्राप्त करते हैं।५६२।

वहां के मनुष्य शील और संतोष धारण करते हैं। उनमें मन में सदा जीव दया और करुणा का निवास रहता है। वे दूसरों के दुःख को अपना दुःख मानते हैं। रंच मात्र भी पाप कर्म या झूठ का आश्रय नहीं लेते। यह निश्चय करके, राजन्! जो साधना करते हैं वे यहां आते हैं और पुनः वहीं

जाकर जन्म लेते हैं। योगी लोग भी यह साधना करते हैं। वे लोभ, मोह और क्रोध से दूर रहते हैं।५६३।

वहां के मनुष्य मल मूत्र से युक्त देहधारी हैं, परन्तु वे अगणित कष्ट पूर्ण श्रम करते हैं। जिनकी वृत्ति योग विद्या में रहती हैं, वे सब कुछ प्राप्त कर लेते हैं। धर्म क्षेत्र जंबूद्वीप में जैसी करणी करते हैं और वांछा करते हैं, वह नहीं टलती। वे अच्छा कार्य करते हैं तो अच्छा फल मिलता है, बुरा कर्म करते हैं तो कष्ट पाते हैं।५६४।

सतयुग, त्रेतायुग और द्वापर युग बीत गये, जब वहां सत्य की प्राप्ति के लिये सत्य मार्ग पर चलते थे। अपन सभी देवगण उन युगों में वहां जाते थे। यहां और वहां में कोई अंतर नहीं था। अब कलियुग में वहां नहीं जाया जाता। वह भूमि अब हमारे लिये पराई हो गई है। जिसने जैसी कमाई की तदनुसार ही यह सभी सभा, जो यहां एकत्र हैं, वहीं से आई है।५६५।

वहां अनेक राव राजा हैं, जिनके ठाठ बाठ इन्द्रपुरी के समान हैं। वे छप्पन प्रकार के भोग विलास और छहों रसों के आस्वाद को जानते हैं। अनेक प्रकार के वस्त्र पहनते हैं और आनंदोपभोग करते हैं। वहां जरी (स्वर्णादिकतार खचित वस्त्र), पटंबर (रेशमी वस्त्र) और नीलक, पारचा वस्त्र और सभी प्रकार के रंगों का ज्ञान है। श्वेत, लाल, कृष्ण, पीत, सुवा (गहरा हरा), सोसनी, हरा, नीला आदि की चर्चा होती है।५६६।

श्रीसाप, सुखांवर, खाशा, महमूंदी, मलमल, तासा (तास), बाफता, कचिया, आसावरी, स्वर्णताखचित वस्त्र, टूक, अधोत्तर, काय-मखानी तथा गजी आदि अनेक प्रकार के वस्त्र, जो अनेक नामों से प्रसिद्ध हैं, जिनकी गिनती करना संभव नहीं है।५६७।

वहां मनुष्य ऐसे वस्त्र पहनते हैं और अपने अपने भाग्य का आनंद भोगते हैं और वहां की स्त्री जाति अत्यन्त सुन्दर और मदमस्त हैं। जिस प्रकार आपके यहां सौन्दर्य की अवतार रंभा है, उसी प्रकार वहां की स्त्रियों के सौन्दर्य को देख कर अचंभित हो जावोगे। वे सभी प्रकार के उत्तम वस्त्र और सोलह प्रकार के आभूषण धारण करती हैं, जिन्हें देख कर देवताओं और ऋषि मुनियों तक के मन डोलने लगते हैं।५६८।

वे लहंगा और सारी पहनती हैं। उनकी कंचुकी चित्रों से सजी-संवरी शोभा देती है। वे पाटंबर और तन सुख के चीर धारण करती हैं, जिनमें जरी (स्वर्ण) के तारों की लाल रंग में अनेक अनेक प्रकार की लहरें पड़ी

रहती हैं । जो जिस प्रकार की चाहे उसी प्रकार की । सालू, चोळ, जामसाही, लुंगी, बासताव्रोळ और मूंगी (मूंगा पट्टनी छींट) आदि ।५६९।

कुसुमल रंग में या लाल आदि कई रंगों में बांधणूं (वंधेज के) के या सादा लहरिये, जिसके बीच में धूप छांह की आभा सुशोभित होती है तथा हरे, पीले आदि रंग रंग की बाला चूदड़ें, लाल चूंदड़ जिसके बीच बीच में अनेक भांत की बिंदियां (टपकियां) होती हैं । अनेक रंगों के बांधणू (वंधेज) में काली चूंदड़ और अन्य अनेक भांतों वाली चूंदड़े ।५७०।

कुसुंभी रंग में रक्ताभ युक्त अनेक प्रकार के वंधेज (वांधनू) के और सादा लहरिये, जिनके मध्य के चौक में हरे-पीले रंग की धूप छांही आभा शोभा देती है, वाला चूंदड़े और लाल चूंदड़े, जिनमें अनेक प्रकार की बिंदियां (टिपकियां) लगी होती हैं, अनेक रंगों वाली बांधनू की चूंदड़े, श्वेत और लाल छापों से युक्त नीली साड़ियां, अनेक प्रकार के पोमचे जिनकी धरा (आंगन) काली है, अनेक प्रकार के पट्टों वाली रग बिरंगी साड़ियां, चित्रों से अधिक सुन्दर दिखाई देने वाले स्त्रियों के द्वारा कसीदा कढे वस्त्र और अन्य कई प्रकार के वस्त्र वहां की स्त्रियां पहनती हैं । उनका कहां तक वर्णन किया जावे ।५७१।

जब जंबूद्वीप की इतनी अनंत महिमा का वर्णन किया गया तब रंभा ने कहा कि वहां अवतार लिया जाय ।५७२।

जहां छह चक्रवर्ती सम्राट्, बारह मंडलीक और करोड़ों राजाओं ने राज किया और शुभ कर्मों को करते हुए इन्द्र की पदवी प्राप्त की । जहां श्रीरामचंद्र ने अठारह पद्म को एकत्र कर उनका मेल किया तो श्रीकृष्ण ने सोलह हजार रानियां के साथ रमण किया । जंबूद्वीप ऐसी भूमि है ।५७३।

ब्रह्माजी ने यह सब कथा कही, जिसे सारी सभा ने ध्यान देकर सुना । वहां तीन अप्सराओं ने परस्पर बात की कि वहां जाकर अवतार (जन्म) लिया जावें । ब्रह्माजी ने जो कुछ वर्णन किया है, उन सभी सुखों का उपभोग किया जाय । इस टगटगापुरी (निर्जीव नगरी) में रह कर क्या करना है । उनकी इस प्रकार की इच्छा को इन्द्रदेव ने जान लिया ।५७४।

तब उन्होंने उन अप्सराओं को बुलवा लिया और पूछा कि तुम तीनों क्या बातें कर रहीं थी, वह बताओ । तुम्हें भगवान की सौगन्ध है, तुम्हारे मन में जो भी इच्छा हो वह सच सच बता दो । अप्सराओं ने कहा— 'महाराज हमने जो कथा सुनी थी, उसीके विषय में परस्पर विचार किया

था। हमने तो हंसी में ही इस बात को सोचा था, वह आपने पहले ही जान लिया है ।५७५।

इन्द्र उनसे रुष्ट हो गया और पटरानी रंभा (अप्सरा) से खीज कर कहा—तुम्हारी यह हंसी किस प्रकार की है, जिससे स्वतः विनाश हो जाता है। इन्द्र ने खीज कर उन्हें शाप दिया कि मैं तुम्हारी इच्छा पूरी करता हूं। तुम मृत्युलोक में जाकर अवतार लो ।५७६।

रुष्ट होकर इन्द्र ने रंभा (अप्सराओं) को बुला कर कहा कि जैसा तुमने मन में सोचा है, वैसा ही अब जाकर भोगो ।५७७।

तब पटरानी अप्सरा ने प्रार्थना की कि महाराज मैंने तो वैसे ही विचार किया था। इन्द्र ने उत्तर दिया—वहां अवतार लेकर अन्न धन वस्त्रों का खूब उपभोग करो, और नियमों का पालन करते हुए, धर्म, जप, तप, व्रत, करती रहना। अप्सरा ने कहा कि हमने पुरुष की इंछा मन में नहीं रखी। यह सच सच बता दिया है। तब इन्द्र ने कहा कि तुम कि सभी प्रकार के सुखों को उपभोग करोगी और कोई पुरुष तुमसे विवाह नहीं करेगा। ५७८।

इन्द्र ने कहा कि कलियुग तुमको कष्ट देगा और म्लेच्छ का दुःख रहेगा। इन्द्र से शापग्रस्त होकर पटरानी रंभा ने रणथंभोर में अवतार लिया और देवलदे के नाम से प्रसिद्ध हुई। दूसरी अप्सरा ने देवगिरि में अवतार लिया। उस शीलवती का नाम चिताई (छिताई) था। तीसरी ने सिंहलगढ़ में जन्म लिया जो चित्तौड़ में पद्मावती नाम की रानी बनी। ५७९।

उनसे तीस वर्ष का वचन लिया और तीनों ही ने जंबूद्वीप में अवतार लिया। देवलदे राजकुमारी जन्म लेकर रात दिन वृद्धि को प्राप्त होने लगी। वह जब एक वर्ष की आयु की हुई, तो दो वर्ष की दिखाई देती थी। जब वह चार वर्ष की हुई तो आठ वर्ष की दिखाई देती थी। जब आठ वर्ष की हो गई तो ऐसा लगता था मानों बारह वर्ष की हो गई हो। ५८०।

उसने अनुपम सौंदर्य और बुद्धि चातुर्य प्राप्त किया। उसे देख कर कोई तृप्त नहीं होता था। राजा के कोई पुत्र नहीं था। पहले ये दो पुत्रियां ही हुई। उनको पुत्र की भांति ही प्रेम देकर रखा जाता था और सारा राजलोक हर्षित होता था। जब उसने नवें वर्ष में प्रवेश किया तब इन्द्रदेव ने उसके विषय में जानकारी मंगवाई ।५८१।

इन्द्र ने एक देवता को बुला कर उसे अपना सारा विचार समझाया और कहा कि मृत्युलोक में जाकर पटरानी रंभा (अप्सरा) के समाचार लावो। वह हमारी बहुत ही प्रिय अप्सरा है। उसे मैंने अपने पास से कभी

दूर नहीं किया था। आप जाकर उसे सुख दिलावें और हमारे मन की अभिलाषा (चिंता) को दूर करें।५८२।

वह देवता जंबूद्वीप में आया और उसने ब्राह्मण का रूप धारण कर लिया। उसने रेशमी वस्त्र, खडाऊ और धोती धारण की। पुस्तक को बांध कर हाथ में लिया। सिर पर रुद्राक्ष की माला बांधी। उसके स्कंध पर श्वेत जनेऊ सुशोभित थी। एक कोस दूर से ही दिव्य ब्राह्मण का रूप धारण करके अहलादपुर में आकर प्रतिष्ठित हुआ।५८३।

सारे नगर में उसकी ख्याति फैल गई। गरीब और अमीर सब उसके पास आने लगे। कोई भी उससे अपने मन की अभिलाषा से संबंधित प्रश्न पूछता, उसका वह समाधान करता। सब उसके उत्तर से संतुष्ट थे। जब अधिकारियों को उसके समाचार मिले तो छोटे बड़े सभी उसके पास गये। उससे जो भी प्रश्न पूछा गया, उसका संतोषपूर्ण उत्तर दिया। तब वे उसको दुर्ग में ले गये। ५८४।

वहां वह भीमसेन के घर पर जाकर ठहरा। दुर्ग में भी उसका प्रभाव व्याप्त हो गया। प्रधान अमात्यों ने राजा के पास जाकर बताया कि एक पण्डित आया हुवा है, वह सर्वथा सत्य भविष्य बताता है। यदि महाराजा की इच्छा हो तो उससे मिलें। वह सब कुछ सही-सही बतायेगा। राजा ने उसे बुला लिया। उस देव ने आकर राजा को दर्शन दिये।५८५।

राजा के मन में जितनी भी इच्छाएँ थी, उन सबके विषय में पूछा। पण्डित ने जब सबका उत्तर दिया, तो वह बहुत प्रसन्न हुआ। तब राजा ने बिना छिपाये पूछा—"हे देवता! मेरी एक अभिलाषा है। मेरे यहां दो कन्याओं ने तो जन्म लिया है, पर मुझे पुत्र प्राप्ति की बहुत इच्छा है" ।५८६।

पण्डित ने कहा—'उन कन्याओं को बुलावो। मुझे उनके दर्शन दिलावो। मैं उनके हाथ की रेखायें देखूंगा, उसके उपरान्त मैं आपको सारी विधि बताऊँगा। तब राजा ने दोनों कन्याओं को बुलावा भेजा। देवलदे और केवलदे दोनों ही वहां आ गई। उन्हें देखकर वह बहुत सन्तुष्ट हुआ और राजा से इस प्रकार गणना करके बताया।५८७।

उन दोनों के हाथ अलग-अलग देखें और राजा से उनके लक्षणों का वर्णन किया। यह देवलदे देवी का अवतार है, आप इसकी पूरी सार सम्भाल कर रखें। यह आपके घर में लक्ष्मी-रूप होकर आई है। इसके कारण आपकी बहुत अधिक उन्नति होगी। यह जो भी मांगे इसको देवें। इसकी सभी इच्छाओं को पूरा करते रहें।५८८।

यह जो भी जिस प्रकार की क्रीड़ा, मनोविनोद करना चाहें, उसे करने दें। आप इससे भयभीत नहीं होवें। आप इसको पुत्र के समान ही शिक्षा दिलावें आर इसके लिये कोई वर नहीं ढूंढ़े। यह शील और सदाचरण का पालन करेगी और ३० वर्ष की आयु के उपरान्त अपने वर का वरण करेगी। इसको बराबरी करने वाला और कोई नहीं होगा। तब कहोंगे कि ज्योतिषी सत्य बात कह गया था।५८६।

यह कन्या जब अठाइस वर्ष की होगी तब आपको एक पुत्र की प्राप्ति होगी। वह अपने भाई को गोद में लेकर खिलायेगी और उसके बाद ही यह अपने पति के घर जायगी (अर्थात् इसका विवाह होगा।) आपका जब अंतिम समय आयगा तब एक रानी के एक और पुत्र उत्पन्न होगा। उससे आपका नाम (वंश) अक्षत रहेगा और उसने नया विरुद प्राप्त होगा।५९०।

पंडित ने जब ये बातें कही तो सुनकर राजा ने कहा—कि जिस दिन देवलदे का जन्म हुआ, उसी दिन हमने मांडू दुर्ग पर अधिकार किया था। उसी दिन मैंने अपने आपको भाग्यशाली समझ लिया था। आपने दुबारा इस तथ्य को प्रकाशित कर दिया है। यह हमारे लिये पुत्र के समान ही है, इसके किसी भी कथन को हम नहीं लोपेंगे। मांडू के सारे राजस्व का यह कन्या उपभोग करती रहें, उसे यह किसी भी शुभ कार्य में इच्छानुसार व्यय करें।५९१।

राजा ने पण्डित का अनेक प्रकार से स्वागत सम्मान करते हुए उसे विदा किया। तब पण्डित लौटकर भीमसेन के घर गया। भीमसेन ने उसकी बहुत अधिक सेवा शुश्रूषा की थी, अतः उस देवपुरुष ने उसको आशीर्वाद दिया। इतना कहकर वह अदृश्य ही गया और इन्द्रपुरी में जा पहुंचा।५९२।

भीमसेन पण्डित बन गया। वह अपने समय का प्रसिद्ध ज्योतिषी हुआ। उसकी रणथंभोर दुर्ग में प्रसिद्धि हो गई। राजा उसका बहुत आदर करता था। राजा ने उसको देवलदे को पढ़ाने की सेवा सौंपी। भीमसेन जोशी उसको जो कुछ पढ़ाता था, उसका तो उस देवलदे को पहले ही ज्ञान होता था।५९२।

सर्वप्रथम उसे प्राकृत ग्रन्थों का ज्ञान कराया गया। उसको पत्र लिखना और पढ़ना आ गया। उसको लीलावती पाटी गणित और लेखा विधि पढाई गई। व्याकरण के ग्रन्थ पढकर वह अमरकोश के रस में सरावोर हो गई। उसने सामुद्रिक शास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया। सारस्वत व्याकरण पढा। कोक-शास्त्र (कामशास्त्र) के मर्म को समझा।५९३।

वह पशु पक्षियों की भाषा को पहचानती थी। संगीत शास्त्र, काव्यशास्त्र और छंदशास्त्र पर व्याख्यान देती थी।५९४।

समस्त विद्याएँ उसे कंठस्थ थी। वह उसका पाठ कर सुनाती। व्यावहारिक ज्योतिष के अर्थ करती थी। जहां नर्तक वैश्याओं को नृत्यकला सिखाते, वहां जाकर बैठती थी और उनके गुणों को हृदय में धारण करके गाने बजाने की संगीत विद्या सीखी। सभी प्रकार की विद्याओं (निर्माण-कलाओं) का उसने ज्ञान प्राप्त कर लिया और अपने माता-पिता को आनन्द प्रदान किया।५९५।

रसोई घर में रहकर उसने सभी प्रकार की पाक-विद्या का ज्ञान प्राप्त किया। वह कसीदाकारी (चिकिन) करने लगी, चित्रकला सीखी और अनेक प्रकार की पुत्तलियां और बूंटों (फूलपत्तियों) की चित्रकारी करती थी। चार वर्ष की अवस्था में ही उसने सभी गुण प्राप्त कर लिये। उसके उपरान्त शील सन्तोष और धर्म के मर्म को समझा। दूसरी पुत्री केवलदे थी, जिसका विवाह बड़गूजर जाजा के साथ किया गया।५९६।

कौमार्यावस्था को धारण किये हुए देवलदे जब बारह वर्ष की हुई तब वह सोलह वर्ष की दिखाई देती थी। जैसे पूण यौवनावस्था में हो, और उसके अंगों में सौन्दर्य नहीं समा रहा था—अर्थात् वह अत्यन्त रूपवती हो गई है। वह सदैव वस्त्र पहने रहती थी, तो भी उसका रूप सौन्दर्य अपार था—उसका वर्णन करने की किसमें सामर्थ्य है। वह पुत्र के समान खेलती कूदती थी, आमोद-प्रमोद में रत रहती थी। उसके पिता उसकी किसी बात को टालते नहीं थे।५९७।

तब प्रसन्न होकर राजा ने उससे पूछवाया कि—'हे पुत्री! जो भी तेरी इच्छा हो वह मांग।' तब देवलदे ने कहा कि अन्न-धन सब कुछ मेरा है, मुझे तो पहाड़ों के मध्य में झूला डलवा दो। दूर तांतणा नाम के बड़े तालाब पर या (प्रेतों के बड़े ताल पर?) मुझे तीज का पर्व रमाने दो। वहां जाकर हम खेलेंगी कूदेंगे, आमोद-प्रमोद करेंगी। उसी वक्त सुथार को बुलाकर राजा के द्वारा बताये गये स्थान पर लोहे के कुंदे जड़ाये गये और चांदी की सांकल लगाकर झूला डाला गया, जहां देवलदे झूलती थी। रानी के साथ सब स्त्रियां वहां जाकर देवलदे को झुलाती थी, नाव में बैठकर उसको सैर कराती थी।५९८।

रणथंभोर दुर्ग की सभी स्थियां वहां आती थी। अहलादपुर की महिलायें भी वहां आती थी। वे वहां खेलती थी, झूलती थी और क्रीड़ा करती थी। सावण मास में की जाने वाली सभी लीलाएँ वहां की जाती थी। स्थान-स्थान पर रसोई बनाई जाती और जो भी वहां आते थे, वे भोजन करते थे। सारा खर्चा देवलदे वहन करती थी, रात-दिन वह धर्म के कार्यों में रत रहती थी।६००

उससे आगे अहलादपुर ऐसा नगर था, जो अयोध्या, उज्जैन और बनारस से समता रखता था, दुर्ग की महिमा का वर्णन कर पाना सम्भव नहीं है। रणथंभोर दुर्ग और अहलादपुर के मध्य स्त्रियों की अपार भीड़ रहती थी। कुलीन घरों की सभी महिलाएं और अन्य जातियों की भी कितनी ही स्त्रियां वहां आती थी। देबल देवी सबका पता लगवाती थी और मन लगाकर उनके साथ हंसती-खेलती खिलाती थी।६०१

अनेक जातियों की स्थियों वहां आकर टिड्डी दल के समान छा गई। स्थान-स्थान पर बने मन्दिरों में रात-दिन स्त्रियाँ निवास करती थी। इतने में श्रावणी तीज का पर्व आ गया। देवलदे ने रुचिपूर्वक श्रम करके तीज की मूर्ति और चित्र बनाये। उन्हें रत्न जटिक आभूषण और जरी के वस्त्र, कौशेय वस्त्र का चीर पहनाया।६०२

सभी स्त्रियां ने शृंगार कर रखा था, रंग-बिरंगे महीन वस्त्र पहन रखे थे। विशेष रूप से कुसुमल रंग के वस्त्र थे। उन्होंने मांगलिक दक्षिणी चीर (साड़ी) धारण की जिनके सामने ज्योति (प्रकाश) भी लज्जित हो जाता है। वन्दर की छींट, रेशमी वस्त्र, जरी के वस्त्र, नीलक के वस्त्र पहन रखे थे। उधर आकाश में काली घटाएं गहरा रही थी और धरती पर बीरबहोंटियां इधर-उधर घूम फिर रही थी। ६०३।

जहां नौवत और नगाड़े वजाये जा रहे थे। स्थान-स्थान पर सादियाणा (मांगलिक वाद्य, शहनाई ?) बज रहे थे। ताल (करताल), परवाज और ढोलक बजायी जा रही थी। उधर आकाश में काली घटाएं गर्जन कर रही थी। वहां असंख्य स्त्रियों के समूह एकत्र थे। पर देवलदे वहां साधारण वस्त्रालंकरणों में ही देखी गई। स्त्रियों ने मिलकर उससे बात की और पूछा कि बाईजी आप शृंगार क्यों नहीं कर रही हैं।६०४

उनसे देवलदे ने कहा कि उसको पिताजी की शरम आती है। मैं आप लोगों के बीच इन साधारण वस्त्रों में ही रहूंगी। उन स्त्रियों ने उससे पुनः निवेदन किया कि ये अल्पवयस वालिकाएं और बूढी स्त्रियां तक बन ठनकर संजी-संवरी आई हैं, कुमारी हो या विवाहिता, शृंगार तो सभी करती हैं, वे तीज के त्यौहार का नाम नहीं लेती।६०५

उनकी बात मानकर देवलदे ने अपने अंगों पर उबटन किया और स्नान करके, सिर में सुगन्धित तेल लगाया और कंघी की। हाथ में दर्पण लेकर मन लगाकर अपनी चोटी गुंथवा कर बनवाई। उनमें बीच-बीच में फूल टांगे। मांग में भरे गये मोती ऐसे दमक रहे थे, मानो काली घटाओं के बीच बगुलों की कतारें उड़ रही हो।५०६

कस्तूरी घिस कर केसों में लगायी। उसकी बालों की लटें ऐसे सुशोभित थी, मानो शेषनाग (सर्प) के बच्चे लटक रहे हों। उसके काले भँवर बाल वासुकी नाग के बच्चों के समान सुशोभित थे जिनके छूटने (बिखरने) पर अंधकार व्याप्त हो जाता है। चंदन लेप किये बाल और भी काले हो गये, जिनसे भुजंग भयभीत होकर अपनी लहर को भुला देते हैं। उसकी घुंघराली अलकें ऐसे सुशोभित थी मानो चँदन के वृक्षों में लिपटे नाग हो। ६०७

मांग का वर्णन करता हूं। मांग ऐसी दिखाई देती है, जैसे चन्द्रमा को राहु ग्रस रहा हो, जिस पर अभी तक सौभाग्य का सिंदूर नहीं चढा है। सिंदूर रहित मांग ऐसे चमकती है जैसे दीपक जिसने अंधियारे घर में उजाला कर दिया है। उसमें स्वर्ण रेखा ऐसे चमक रही है, मानो बादलों में बिजली दमक रही हो। अथवा कि आकाश में रश्मि दिखाई दे रही हो अथवा जमुना के बीच में सरस्वती प्रवाहित हो रही हो। ६०८

मानो खड्ग के ऊपर रक्तरंजित रेखा उभर आई हो, अथवा चोटी पर करोत रख दी गई हो। उसमें पूर्णरूप से गजमोती ऐसे सुशोभित हैं, मानो जमुना नदी में गंगा की धारा मिलकर बह रही हो। ललाट चंद्रमा की ज्योति (चन्द्रिका) के समान प्रदीप्त हो रहा है, मानो पूर्णिमा की पूर्ण कला हो। चंद्रमा में प्रभूत कलंक है, पर यह निष्कलंक है, मानो सूर्य ही प्रकाशित हो रहा है। ६०९

हजारों किरणों के साथ चमकने वाला सूर्य भी ललाट की दीप्ति को देख कर छिप जाता है। चंद्रमा को राहु आकर ग्रस लेता है, पर यह तो राहु के प्रभाव से हीन प्रकाशित सूर्य है। उसने अपने ललाट पर इस प्रकार तिलक बनाया है, मानों तारों से आच्छादित यह स्थिर हो गया है। तनी हुई भौंहे ऐसी बनी है मानों धनुष तान रखा हो। रेखा का वर्णन करता है, वह इसको इसी प्रकार देखता है। ६१०

भौंहों में और धनुष में कोई समानता नहीं। ये जो दिखाई पड़ जाय तो देखने वाला मुरझा जाता है। इसीसे कोई भी अपनी नजर से इन्हें नहीं देखता, जो देखते हैं, वे लोग ही इनको समझते हैं। ये ऐसी लगती हैं, मानो रक्त वर्ण के कमल पुष्प की पंखुड़ियों को उलट कर रख दिया हो। ६११

इनमें जब तरंगें उठती हैं, तो उनको लगाम नहीं लगाई जा सकती, रोका नहीं जा सकता। ये उलट कर आकाश में लग जाना चाहती हैं। जिस प्रकार हवा से जल हिल्लोरे लेता है और उसकी लहरें इधर उधर झकोरे खाकर डोलती हैं। काम रस से पूरित हो जाने पर छलकना चाहती है और क्षण भर

में उलट कर भकभोर रुक जाती है। ये आँखें खंजन पक्षी की आंखों के समान परस्पर लड़ती हैं, मछली के समान अस्थिर रहती हैं, इनको देख कर हिरण भी अपनी चाल को भूल जाते हैं। ६१२

उसकी नासिका को देखकर शुक विभ्रमित हो जाता है। उसका आकार चंपा की कली के समान सुन्दर है। ऐसी नाक में बेसर शोभा देता है, जिसमें सोने में जड़े मोतियों के नग अपना प्रकाश छिटकाते हैं। उसके रक्ताभ अधर अमृत-युक्त रस से भरे हुए हैं। तांबूल रस से भरी उसकी चमक अत्यन्त सुरंगी है। दोनों ही विद्रुम (प्रवाल) के समान ढाले गये हैं। जब हँसती है तो इनका प्रकाश प्रसारित होता है। ६१३

मानो ये मजीठ के रंग में रंगे गये हों। कुसुंभे का रंग इनके सामने फीका लगता है। दांतों की चमक हीरों की चमक के समान दिखाई देती हैं। पूरी बत्तीसी प्रकाश के महद रंग में रंगी दिखाई देती है। जब वह बोलती है तो ऐसा दिखाई देता है, मानों बिजली चमक उठी हो। वे सूर्य की मंजिष्ठा रंग वाली किरणों के समान प्रकाश बिखेरती है। दर्पण में देखने पर जब हँसी आती है, तब ऐसा प्रतीत होता है जैसे अनार (दाड़िम) का हृदय (अंतर भाग) फट पड़ा हो। ६१४

जिह्वा से निकलते बोल ऐसे प्रतीत होते हैं, मानो कोयल बात कर रही हो। उसकी अमृत वाणी सुन कर मन प्रसन्न हो उठता है। उसका कोयल के समान कंठ स्वर तूंबी का है या बीन अथवा सारंगी है— बांसुरी सा प्रतीत होता है। अब उसके सुरंगी आभा बिखेरते कपोलों का वर्णन करता हूं। ये दोनों कपोल नारंगी के रंग से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। ये पुष्प के रंग के अथवा केसर के रंग से रंजित हैं या सोने के रंग को लेप कर फूले हुए हैं। ६१५

पियाबांस या चंपा के रंग की या पलाश-पुष्प की ज्योति भी इसके सम्मुख भद्दी लगती है। ६१५

दोनों कान सीप के समान संवारे लगते हैं। ये पूर्णत-शुद्ध स्वर्ण की कांति से युक्त हैं। दोनों कानों में लटकते रत्नों से जड़े हुए चमकते तुरकले ऐसे प्रतिभासित होते हैं मानों सूर्य ही दीप्त हो रहा हो। ६१७

उसकी गर्दन (कंठ) का कहां तक वर्णन किया जाय। यह ऐसा दिखाई देता है मानो कबूतर ने अपना कलेजा निकाल कर रख दिया है अथवा चाक (चक्र) पर चढा कर या सांचे में ढाल कर इन्हें निर्मित किया गया है। कंठ में उतरती तांबूल की पीक (रस) एक रेखा के समान दिखाई देती है। उसने कंठ

में मुक्ता फल की माला पहन रखी है। तिमणियें में चंपाकली के नग डाले हुए हैं। उसने रत्न जटित हार धारण किया है। मोहन माला पहनी और अन्य अनेक शृंगार किये। ६१७

उसकी स्वर्णाभ दोनों भुजाओं से कलाइयों की ओर का उतार हाथी की सूंड के उतार के समान था। उसकी महंदी मंडित हथेली ऐसी थी मानो रुधिर से प्लावित सूर्य की ज्योति हो। उसकी मूंगफली के समान अंगुलियों में रत्न जटित अंगूठियां पहनी स्वर्ण के पहुंचिये पहनने पर उसकी कलाइयां और भी सुंदर लगने लगी। ६१८

स्वर्णनिर्मित हृदय रूपी थाल में कुच विभक्त रूप में रखे हैं, जो अमृत से भरे हुए ऊपर उठ कर स्थिर हो गये हैं। कंचुकी में बंधे हुए ये मानो स्वर्ण की लता में लगे ये मोगरे के पुष्प हैं, अथवा कमल की कलियां। केतकी के पुष्प में बंद होकर कांटों से ये विंध रहे हैं या कि दोनों ही अग्नि बाण से दोनों विभक्त हुए है। ये नींबू, नारंगी जंभीरी की शक्ल में काम रस से भर कर दोनों भारी हो गये हैं। ६१९

उसका उदर पत्र के समान पतला और चंद्रमा के समान शीतल है। यह कुंकुम और केसर का व्रत अच्छा लगता है। उसके आहार में खीर (दूध) और अन्न का ग्रास नहीं होता। वह पान फूलों के आधार पर ही रहती है। वह सुनहरी रंग की निर्मल कन्या है। उसकी गहरी नाभि की शोभा बहुत अच्छी है। उसके पीठ ऐसी बनी हुई है मानो वह अप्सरा रही हो। ६२०

चंदन लेप से उसकी पीठ को सजाया गया है। उस पर लटकती चोटी मानो काली नागिन हो अथवा पीठ पर चंदन की बेल आ गई हो, जिस पर नाग लिपटे हुए हैं। उसकी जैसी कटि कहीं अन्यत्र नहीं देखी होगी। सिंह और चीते की कटि भी उस तरह की नहीं है। उसकी कमर की गति ततैय जाति की भंवरे के समान शोभित है। ६२१

उसकी नाभि वात्याचक्र की भांति गहरी बनी है अथवा समुद्र में पड़ी गहरी भँवर पड़ कर घूम रही हो। उसके शरीर में कमल की सुगंध व्याप्त है। उसकी साड़ी समुद्र की लहर के समान शोभित है। अब मैं उसके नितंबो की शोभा का वर्णन करता हूं। उसकी दोनों जांघे केले के गर्भ-स्तंभ के समान है। उसके चरण कमल भी विशेष रूप से बनाये गये हैं, उनकी गति में हाथी के गमन की गति दिखाई देती है। ६२२

उसके रत्न जटित सोने के तेहड़ झंकृत हो रहे हैं। अनवट और बिछुवे भी बहुत ध्वनि कर रहे हैं। उसने जो अन्य आभूषण धारण कर रखे हैं, उनके

विस्तार से नाम सुनो । सर्व प्रथम उसने स्नान किया और फिर चंदन के रंग से रंगी साड़ी पहनी । अपनी मांग में लाल रंग का सिन्दूर लगाया और उसके उपरान्त ललाट में तिलक (बिंदी) लगाई । ६२३

उसने दोनों आंखों में अंजन (सुरमा) लगाया । दोनों कानों में तुरकन (लटकन) पहने । उसकी नाक में नथ बड़ो अमोलक बनी हुई थी । उसने तांबूल चबा कर मुख को लाल किया । अपने कंठ में विभिन्न प्रकार के आभूषण पहने । उसने कलाई में सोने का चूड़ा धारण किया । उसकी कमर में करधनी (मेखला) सजा कर बांधी गई हैं । अपने पांवों में भी सभी गहनें पहने । ६२४

कलाओं में बारह प्रकार के आभूषणों का वर्णन किया गया है । वे सब उसने अंगों में बारह स्थानों पर पहने । उसने और भी सोलह शृंगार किये— उनके नाम कहां तक गिनाये जावें । स्नान करके उसमें साड़ी पहनी, जो जरी की, रेशम की अनेक रंगों में रंगी हुई थी जिसने अपने बालों में एक एक बाल में मोती पिरोये । उनके अतिरिक्त माणिक, मोती हीरे आदि रत्न अलग से सजाये । ६२५

उसका हीरों से जड़े शीशफूल, में शुद्ध स्वर्ण पत्र में रत्न कण शोभित हैं । यह सिर में केश रूपी घटा के बीच में उदित हुए सूर्य के समान शोभायमान था । ६२६

स्वर्णभरणों से सुसज्जित होकर उसने मोतियों का हार पहना । उसके शरीर की ज्योति (आभा) इतनी अधिक थी कि उसके सामने इन की आभा ढक गई । ६२७

सोलह आभूषणों से सज्जित उसकी शोभा का वर्णन कौन कर सकता हैं । वह नवलांगी मानों केसर की लता हो या कदलीस्तंभ का गर्भ भाग । ६२८

सभी स्त्रियाँ सजधज कर गीत गाती हुई आनंदपूर्वक चलीं । उनके बीच में देवलदे ऐसे प्रदीप्त थी, जैसे तारों के बीच में चन्द्रमा प्रदीप्त होता है । ६२९

उसकी समता चंद्रमा से मत करो । उसको क्यों गालियाँ देते हो । चंद्रमा में तो कलंक है, जबकि यह नारी निष्कलंक है । ६३०

देवलदे के अंगों को वैसी ही उपमा दें। देवलदे इन्द्र की अप्सरा है, जिसका लोग वर्णन करें। ६३१

सभी महिलाएँ एक साथ मिल कर चलीं और तीज की क्रीड़ाएँ करने लगीं। वे सभी एक से एक बढ कर सजी धजी थी, जो काम रस से आर्द्र हो रही थी। ६३२

वहां एक बिणजारा नौ मन काजल लेकर आया। वह भैरु ताल पर आकर उतरा। उसके समाचार तीज मानने वाली स्त्रियों तक पहुंचे। सभी स्त्रियां बादलों की भांति उमड़ घुमड़ कर वहां पहुंची। उन सबने एक एक अंगुली भर कर अपने आंखों में काजल आंजा। सारा काजल तो स्त्रियों को नमूने के रूप में देने में ही खर्च हो गया। जो पहले पहुंची, उनको को काजल मिल गया, पर जो बाद में आई वे खाली हाथ लौट गई। बिणजारे ने कितनी स्त्रियों को खुश किया,❀ जब कि एक एक टंक में नौ नौ स्त्रियों ने अंजन (काजल) आंजा। बिणजारे ने जब हिसाब लगाया, तो उसने उन स्त्रियों को नौ मण काजल दिया। वे चार लाख छयासी हजार हुई। यह तीस के तौल से विचार करो◪। ६३४

वह जो चंदेरी का साह (सेठ) आया, उस व्यापारी (बिणजारे) के पास अपार संपत्ति थी। वह वहां से अपना सामान उठा कर चला गया। इस बात के समाचार हमीर को मिले कि उसका नौ मण काजल बांटने में ही चला गया और उसने इसका कोई मूल्य नहीं लिया। तब हमीर ने उसका हिसाब लगा कर सारा मूल्य चुकाया।६३५

रणथंभोर में इस प्रकार तीज का मेला जुड़ा, जिसके समाचार सारे देश में फैल गये। वह बिणजारा (व्यापारी) दिल्ली गया, तब बादशाह से उसका मिलाप हुआ। वहां उसने रणथंभोर के तीजपर्व की चर्चा की। उसने देवलदे की महिमा का भी बखान किया। अल्लाउद्दीन ने इस बात को मन में बैठा लिया। ६३६

❀ १ टक=४५ पैसे भर। ४५ × ३०=१३५०=सेर १३५० × ४० सेर= ५४००० एकमन × ९=४८६००० स्त्रियां ने काजल आंजा।

◪ इस प्रसंग को—'हमीरवार्ता'—ग्रथांक १४ (रा. प्रा वि. प्र., उदयपुर) में भी उल्लेख है।

देवल देवी आठों याम (रात दिन) आनंदोपभोग करती है। जो कुछ भी वह कहना चाहती है, वह करके रहती है। वह रात दिन जो धन व्यय करती है, वह उसके खाने, पीने, खिलाने और साज सज्जा में खर्च होता है। उसे शील और सतीत्व धर्म की बातें अच्छी लगती है। उसके मन में यम, नियम और धर्म की ही इच्छा होती है। वह सब पर दया करती है और परोपकार की बातें ही जानती है। कुबुद्धि की बातें कभी उसके मत में नहीं आती। ६३७

अलाउद्दीन बादशाह ने उसे पुनः पूछा कि रणथंभोर किस दिशा में है उसका उपभोग कौनसा भोमिया (राजा) कर रहा है। ६३८

(विणजारे ने बताया—) कि रणथंभोर दक्षिण दिशा में और आडावला (अरावली पर्वत शृंखला) उसकी कर्मभूमि है। वहां हमीरदेव राज्य करता है, जो चौहान जाति का राजपूत है। ६३९

बादशाह नें इन सुनी हुई बातों को मन में धारण कर लिया और निश्चय किया कि कोई उचित अवसर प्राप्त करके देवलदे को देखा जावे। ६४०

और हमीर का वर्णन कौन करने में समर्थ है। वह चक्रवर्ती सम्राटों के अनुकरण पर युद्धादि क्रीड़ाओं के करने में रुचि रखता है। रात दिन उसको तो एक ही शौक अच्छा लगता है। वह प्रसन्न नहीं होता अपितु प्रसन्नता को पचा लेता है। वह स्वयं पंडित है, चतुर है, ज्ञानी और काव्य शास्त्र का ज्ञाता है। गाने बजाने में दक्ष बुद्धिमान् है। वह रात दिन चतुराई से पूर्ण क्रीड़ा कल्लोल रत रहता है। पूर्ण रूप से मद मस्त रहता है।

जब कोई विद्वान् उसको स्मरण करके उसके पास आता है तो वह पुरस्कार स्वरूप उचित धन देकर उनका आदर सत्कार करता है, मान सम्मान देता है। उसने दुर्ग की ख्याति को बहुत बढाया है। चारों दिशाओं में उसकी कीर्ति (यश) गाया जा रहा है। दूर दूर के प्रदेशों से सौदागर (व्यापारी) वहां आकर व्यापार करते हैं और बहुत धन लाभ प्राप्त करते हैं। वे राजा के चाल चलन को सुना कर, उस पर चर्चा करके बहुत प्रसन्न होते हैं।६४२।

जहां तक हमीर की आज्ञा स्फुरित होती हैं, अर्थात् उसका राज्य है, वहां तक राजा और प्रजा बहुत अधिक संतुष्ट हैं। यश और अपयश छिपा नहीं रहता है। वहां की बात राहगीर कह देते हैं। (अथवा वर्षा का मार्ग पथिक कहते हैं ?) हमीर की प्रसारित कीर्त्ति की गाथा जब बादशाह को

सुनाई गई तो उसके हृदय में वह समाती नहीं थी। पहले उसने राजकुमारी देवलदे की कीर्ति कथा सुनी थी और अब हमीर के विषय में ये बातें सुनी।६४३।

अलाउद्दीन एक बहादुर बादशाह है, पर वह हमीर की मान सम्मान की कोटि में नहीं था। हमीर सदा नीति युक्त कार्य करता था, अनीति के कार्य करना नहीं जानता था। वह सदा उपकार के कार्य करके यश लेता था और बुराइयों से दूर रहता था। वह अपने आयुधों के उपयोग और दान आदि त्याग के शुभ कर्मों में सदा सावधान रहता था। उसके बराबर और कोई राजा नहीं है। वह शुभ लक्षणों के साथ राज्य करता है। उसे दूसरों की निंदा और चुगली अच्छी नहीं लगती।६४४।

उसमें दो छोटे लक्षण (गुण) इनके अतिरिक्त थे। उसके अंग प्रत्यंग में तामसिक तेज उफना पड़ता था। यदि कोई अपराध करता, छलकपट या षड्यंत्रों में लिप्त पाया जाता उसे मार डालने में वह विलंब नहीं करता था। इस प्रकार राज करते समय निकलता जा रहा था। इतने में दूसरा तीज का पर्व आ गया।६४५।

पुनः वैसा ही वातावरण बना। तीज का मेला जुड़ा और जिस प्रकार की साज सज्जा हुई वह अतिरिक्त था। बीस बीस कोस दूर तक की जनता वहां आकर एकत्र हुई। तीज की क्रीड़ाएं पहले से अधिक आयोजित की गई। वहां स्त्रियां ही बहुत अधिक संख्या में आई थीं, पुरुष एक भी नहीं था। पुरुष दूर पहाड़ों में ही खड़े रहते थे। वे निश्चित होकर खड़े थे, राव हमीर का उन पर इतना भय था।६४६।

स्त्रियां गाजे बाजे के साथ रवाना हुई और भैरू ताल पर जाकर तीज को उतारा। थानसिंह खीची वहां आया और तीज की मूर्त्ति को उठा कर घोड़ी पर चढ कर भाग गया।* ऐसी बहुत बड़ी अनुचित बात (घटना) हो गई। उसे कोई वापिस नहीं लौटा सका। सभी महिलाएं और देवलदे विलाप करने लगीं। राजा हमीर ने यह सुना।६४७।

---

* गणगौर को लूटने की प्रथा राजपूत राज्यों में चिरकाल से प्रचलित रही है। नरपाल हाड़ा (राज्यकाल १३४६ ई. से १३८८ ई.) के समय कोषवर्धन (शेरगढ़) के हरपाल डोड ने बूंदी की गणगोर लूटी थी। प्रतिशोध लेने के लिए नरपाल के पुत्र हमीर (१३८८ ई. से १४०३ ई.) ने कोषवर्धन पर अनेक बार आक्रमण किए पर सफलता नहीं मिली। (रणबांकुरा-वर्ष ८, अंक ७ जुलाई १९९३ पृष्ठ २-६)

उसको बताया गया कि गागरोन के खींची ने यह चोरी की है, जिसके पास पानीपंथी घोड़ी है। राजा ने उस पर अपनी सैन्य टुकड़ी भेजी, पर वह हाथ नहीं आया और भाग गया। जो भी मिला वह मारा गया, सारे प्रदेश को लूटा गया और लोगों के घरबार नष्ट कर दिये गये। फौज हाथ मलती वापिस लौट आई और राजा को बहुत दुःख हुआ।६४८।

तीज की मूर्ति के सभी आभूषण, खीची ले गया। वह पानीपंथी घोड़ी पर चढ कर इतनी दूर तक दौड़ा करता था।६४९।

सारी फ़ौज लौट आई और आकर राजा को अभिवादन किया और बताया कि खींची कूद कर भाग गया और अपने देश को लुटवा लिया।६५०।

राव ने उनसे कहा कि हे ठाकुरों ! उसको घेर कर मार डालो। वह तो तीज की चोरी का आदी चोर (गीध्या-गृध) है, वह दुबारा आयगा।६५१।

(षष्ठम अध्याय)

अब जो उपद्रव हुआ, वह सुनो। दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन, जिसकी आंखे जंबूद्वीप में राज करने के लिये लगी हुई थीं, अपने तेज और प्रताप में सूर्य के समान प्रतप्त हो रहा था। उस बादशाह को आठों दिशाओं के राजा महाराजा दंड (कर) देते थे। उसने समस्त पृथ्वी को जीत कर अपने वश में (अधीन) कर लिया—और एक रूप देकर अपनी आज्ञा प्रसारित की।६५२।

दिल्ली का बादशाह अलाउद्दीन जब शिकार के लिये जाता तो उसके साथ पांच सौ शाही दासियां (जो मरदाने वेश में रहती थीं) उसके साथ सदा जाती थीं।६५३।

जब जब भी बादशाह शिकार के लिये जाता था, वह उड़दाबेग दासियों को अपने साथ घोड़ों पर चढा कर ले जाता था। वे हथियार बांध कर अपने हाथ में लाठियां या मोटे डंडे रखती थीं और श्वेत बुर्के पहन कर घोड़ों पर सवार होती थीं। वे सभी घोड़ों पर सवार होकर बादशाह के चारों ओर नियुक्त रहती थीं और बहुत बड़े समूह में एक साथ चलती थीं। वह शिकार के लिये गया पर उसे जानवर नहीं मिला। बादशाह खाली हाथ लौट आया।६५४।

एक बेगम बिछुड़ कर वहीं रह गई, उसका किसी को ध्यान नहीं रहा। वह मार्ग भूल कर जंगल में फिर रही थी कि उसे महिमाशाह मिल गया।६५५।

अपनी साथिनों से बिछुड़ कर एक बेगम जंगल में छूट कर अकेली रह गई। जहां और कोई मनुष्य नहीं दिखाई दे रहा था—उसको महिमाशाह मिल गया। उसकी शक्ल को देख कर बेगम उस पर मोहित हो गई। घोड़ी को दौड़ा कर वह उसके पास जाकर बोली—हे जवान! मैं तुमसे एक बात पूछती हूं। मुझे रतिदान (संभोग) की इच्छा हो रही है।६५६।

(महिमाशाह ने उत्तर दिया)—हम बादशाह के नौकर हैं, किसी भी स्त्री का दामन (पल्ला) नहीं पकड़ते। बादशाह जब यह बात सुनेगा तो हमारे टुकड़े टुकड़े करा देगा।६५७।

महिमाशाह ने उसको समझाया कि मैं तो एक नौकर हूं और तुम हमारी स्वामिनी। हम बादशाह का नमक खाते हैं, फिर तुम्हारा दामन (पल्ला) कैसे पकड़ सकते हैं। स्त्री ने कहा कि एक ही मर्द की भूख मिटा कर हम सभी सुखी रहती हैं। यदि तुम मेरा कहना नहीं मानोगे तो तुम्हारे ऊपर लांछन लगवा कर तुमको मरवा दूंगी।६५८।

महिमाशाह ने मन में सोचा कि पता नहीं खुदा क्या करना चाहता है। यदि यह कोई इधर उधर की बात जा कहेगी तो मेरे ऊपर झूठा आरोप लग जायगा।६५९।

तब महिमाशाह ने अपने मन को समझाया कि कही यह दुश्चरित्रा जाकर बादशाह के सामने झूठा दोष लगा देगी तो मैं व्यर्थ ही में मारा जाऊंगा—अतः इसकी अभिलाषा को पूरी कर दूं। महिमाशाह ने कहा कि मैंने तुम्हारे सामने मना किया है। मेरे द्वारा किये जा रहे पाप का दंड (खुदा के यहां) तुम्हें लगे। दोनों ने अश्वों से नीचे उतर कर जीणपोश (घोड़े की काठी पर बिछाया जाने वाला वस्त्र) बिछाया। उस पर महिमाशान ने बेगम के साथ संभोग किया।६६०।

मीर महिमाशाह सदा तीन बातों का पालन करता था। एक क्षण के लिये भी वह ऊकडू (उत्कतोरु) नहीं बैठता था। गर्म भोजन नहीं खाता था और गरलियां (मुंह में पात्र लगाये बिना ऊपर से पानी पीना) पानी नहीं पीता था। वह पांचों समय की नमाज पढता था। वह इतना बलशाली था कि अपने बाण से बड़े बड़े गजराजों को भी बींध देता था।६६२।

कहीं से एक भूखा सिंह वहां आ निकला । वह बेगम को सामने दिखाई दे गया । बेगम ने कहा कि यह माया (वासना) को छोड़कर उठ खड़े होवो । तुम्हारे पीछे सिंह आ गया हैं ।

महिमाशाह ने आसन जमाये हुए ही पीछे मुड़ कर देखा । (और धनुष पर बाण चढाकर प्रत्यंचा खींची) । उसने प्रत्यंचा खींच कर मुंह के सामने एक बाण मारा, वह उसको बींधता हुआ मलद्वार से बाहर निकल गया ।६६३

सिंह अकड़ कर वहीं बैठ गया और थोड़ी देर में ही उसका प्राणान्त हो गया । महिमाशाह ने बेगम की इच्छा पूरी की और खड़ा होकर बेगम को हाथ पकड़ कर उठाया । बेगम ने पूछा—"यह बतावो कि तुम्हारे शरीर में इतनी शक्ति कैसे आई । क्या तुम कोई दवा खाते हो या कोई और साधन (उपाय) करते हो । यह सब तुम सच-सच कहो । ६६४

तब महिमाशाह ने बेगम को कहा कि हमको हमारे शरीर का जोश रहता है । हम किसी औषधि का सेवन नहीं करते, अपितु तीन बातों का ध्यान रखते हैं । खड़े खड़े ऊपर से गरलियां पानी नहीं पीते, बहुत अधिक गर्म खाना नहीं खाते और एक क्षण के लिये भी उकडू नही बैठते । इतना कह कर वह घोड़ा दौड़ाते हुए चला गया । ६६५ ।

उसने सिंह के मुख पर खींच कर बाण मारा । उसको देख कर बेगम को आश्चर्य हुआ । उसने सिंह के बीसों नाखून उखाड़ कर ले लिये । ६६६ ।

बेगम ने मन में एक विचार किया । उसने सिंह के बीसूं नाखून निकाल कर ले लिये । और घोड़े पर चढ़कर वह भी चली गई और अपनी साथियों के साथ शामिल हो गई । उस स्थात पर जब करावुल (शिकारी दल, या आगे चलकर शत्रु सैन्य की खबर रखने वाली फौज या उसका सिपाही) आया, तब वहां बैठा हुआ सिंह दिखाई दिया । उसने सिंह को गोली मारी, पर वह तो मरा हुआ था, बोलता क्या । ६६७

करावुल ने मन में सोचा कि यह सिंह दहाड़ा क्यों नहीं । उसने पास में जाकर जांच करके देखा तो उसके शरीर में कहीं कोई घाव नहीं दिखाई दिया । ६६८

तब उसने जांच करके देखा कि वह जैसे बिना घाव के ही मरा है । उसने तलवार और भालों से घाव किये और साथ ही अपने शरीर पर भी खरोंच बनाये । सिंह को लेकर वह बादशाह से मिला और उसको बढाचढा कर बात बताई । बादशाह सिंह को प्राप्त कर बहुत प्रसन्न हुआ और करावुल का मनसब बढा दिया । ६६९

बादशाह ने सिंह को चौक में डलवा दिया और महलों में जाकर बेगम को बुलवाकर अपना कमरबंधा खुलवाया और बेगम ने पूछा कि शेर किसने मारा है, उससे सिंह के सारे नाखून मंगवायें। बादशाह ने पूछा ये किस काम आते हैं, तो बेगम बोली कि उन्हें ताबीज में मंढवायेंगे। ६७०

सिंह तो उस मीर (महिमाशाह) ने मारा था, पर मनसब और को ही मिला। अब उस सिंह के नख मंगवा कर आगे की बात कहेंगे। ६७१

जब बादशाह ने द्वारपाल (छड़ीदार को बुलाकर कहां कि आज जो सिंह मारा गया है, उसके नाखून लावो। इसमें शिथिलता न करके, जल्दी से जावो। दरवान भाग कर सिंह के निकट गया और पंजों को देखकर उल्टा लौट आया। उसने जाकर बादशाह को सलाम किया और कहा कि शेर के पंजे में नाखून नहीं मिले। ६७९

तब बादशाह ने पुनः आज्ञा दी कि सिंह को लाने वाले को जाकर पूछो। जिसने मारा है उसके पास जावो और जहां भी हो उसका पता लगावो। अनेक दरबान वहां गये, जहां करावुल चला गया था। उसको जाकर सारी हकीकत कही कि बादशाह उस सिंह के नख मांग रहे हैं। ६७३

करावुल ने कहा कि तुम लोग सिंह के पास जावो और अपने सामने नख निकलवा लो। दरबान सिपाहियों ने बताया कि वे लोग देखकर आये हैं। उसके पंजों में एक भी नाखून नहीं है। तब सभी हवालगीरों (दरबारी अधिकारियों) को बुलाकर कहा गया आप लोग जाकर नख लावें। इस प्रकार सबको पुछवाया गया। जब नखों का कहीं भी पता नहीं लगा तो करावुल भयभीत हो गया। उसका भेद खुल गया कि वह मरा हुआ सिंह लाया ला। ६७४

करावुल मन में डर गया। यह बात किसी ने कही कि इसके नख उसी के पास होंगे जिसने सिंह को मारा है। ६७५

उन्होंने बादशाह के पास जाकर बताया कि उस सिंह के एक भी नाखून नहीं था। इस पर बादशाह ने आपत्ति की और कहा कि बदमाश मरा हुआ सिंह लेकर आये थे। इस बात को बहुत समय बीत गया। एक दिन उसी बेगम से बादशाह विषयभोग में लगा हुआ था। जिस समय बादशाह उससे संगम कर रहा था, आले में से एक प्याला नीचे गिर गया। ६७६

जिसको देखकर उसकी ध्वनि से चिंतातुर हो उठा। बादशाह एकंदम आसन त्याग कर अलग हो गया। आतंकित होकर वह बहुत डरने लगा। उसकी छाती धड़कने लगी। उसको डरते देखकर बेगम को हँसी आ गई।

बादशाह इससे क्रुद्ध होकर खीज उठा। और बोला-"अरी बेगम ! मैं तो कांप रहा हूं और तू हँस रही है। मैं अभी चाबुक मार-मार कर तुम्हारी चमड़ी उधेड़ दूंगा। ६७७

बेगम इससे और अधिक हंसने लगी। बादशाह ने हाथ में चाबुक उठा लिया और कहा—सच सच बता तू क्यों हँसी। वह सब तुम सच सच बता दो। यदि मुझे अपने प्राणों की रक्षा (भीख) मिले तो मैं हजरत से सत्य बात बताऊँ। एक जवान ऐसा शक्तिशाली है कि वह संभोग के समय आसन की अवस्था में ही सिंह को मार सकता है। ६७८

ये महल बहुत ऊँचे हैं, और विकट भी। यहां किसी का रंचमात्र भी डर नहीं है। आले से यह कटोरा नीचे गिर गया, और आप डर गये। ६७९

और ये महल बहुत ऊँचे हैं, जहां चौकी और पहरे लगे हुए है, ताले लग रहे हैं। इस स्थान पर किसका डर हो सकता है, जिससे आप डर गये। मुझ को हंसी इसीलिये आई है। यहां तो खुदावंद आलम ! कोई भय नहीं है। तब बादशाह ने कहा कि अब चुप हो जावो और सिंह के मारने की बात बताओ। ६८०

किसने मारा, तुमने कहां देखा। जहां भी तुमने यह बात सुनी है, वहीं बता दो। बेगम ने कहा कि मैंने देखा नहीं। पुरानी कही गई बात सुनी है। तब बादशाह बोला—बात को घुमाओ मत। बादशाह ने खीज कर दो लात लगाई। तू उस बात का निपटारा करो अन्यथा तुझे अभी मारता हूं। ६८१

जब बादशाह ने बेगम को डराया तो उसने विचार कर कठोर निर्णय लिया—जो होना है होकर रहेगा। उसने अब बादशाह से कहा—"हजरत ! उस दिन आप शिकार खेलकर खाली हाथ लौटे थे और एक भी जानवर मार कर नहीं लाये थे। उस दिन मैं भी जंगल में बिछड़ कर अकेली रह गई थी। उस समय वहां एक जवान आ गया।"

मैं वन में बिछुड़कर अकेली रह गई, तब वहां कोई मीर आ मिला। उसने मेरे साथ संगम करते हुए उस सिंह को सीधे मुंह तीर मारा। ५८३

मैं उस पर आसक्त हो गई और जवान मेरे साथ रतिक्रीड़ा करने लगा। इतने में ही एक सिंह आ गया, जो मुझे उसकी पीठ पीछे दिखाई दिया। मैंने उससे कहा कि संगम करना छोड़ दे—तुम्हें सिंह खाने के लिये आ रहा है। उसने पीछे की ओर झांक कर उसे देखा। वह बिल्कुल नहीं डरा, हाथ में धनुष बाण उठाया और आसन लगाये हुए ही सिंह के मुख में बाण का संधान कर दिया। ६८४

वह सीधा नाहर के मुंह में जा लगा और उसकी पूंछ के नीचे होकर निकल गया। सिंह तत्काल मर गया, ये देखो ये उसी सिंह के नख है। बादशाह ने पूछा कि तुम उसका नाम भी जानती ? या उसकी शक्ल पहचानती हो। बेगम ने कहा कि मैं उसका नाम तो नहीं जानती पर उसे दुबारा देखूं तो शक्ल पहचान सकती हूं। ६८५

बादशाह ने कहा—"तुमने उससे कुछ पूछा था क्या ? उसने तुमको क्या कुछ बताया। उसका कोई चिह्न तुमने प्राप्त किया है।" बेगम ने उत्तर दिया कि मैंने उससे बहुत कुछ पूछा—जाते-जाते वह एक थोथी सी बात कह गया कि वह न तो उकड़ू बैठता है और न गर्म खाना खाता है, और खड़ा-खड़ा गरलियां पानी पीता है। इतनी सी बात कहकर वह चला गया। उसके बाद उसने कोई बात नहीं कहीं। ६८६

बेगम ने ये सब बातें बादशाह को बता दी। बादशाह कचहरी (राज्यांगन में कीचड़ करके, गरम भोजन बनवाया)। ६८७

तब बादशाह ने एक उपाय सोचा। उसने सभी उमरावों और तुर्क सैनिकों को निमन्त्रण देकर बुलाया। उनसे कहलवाया कि आप लोग जल्दी ही आवें और हमारे दरबार में ही खावा खावें। वहां बादशाह ने कीचड़ करवा दिया और वहीं भोजन की डेग चढवा दी। खुद झरोखे में आ बैठे और चिक (परदा) लगाकर बेगम को अपने पास में बैठा लिया। ६८८

जो भी आता वह कीचड़ में बैठकर गरमा गरम भोजन करता। वे एक दो ही ग्रास खाकर बादशाह को आशीष देते। सभी उमराव पछता रहे कि नीचे कीचड़ है और बैठने के लिये पांतिये भी नहीं है। सभी के मन में संशय ने घर कर लिया कि बादशाह ने यह खेल क्यों किया है। ६८९

महिमाशाह ने भी दरबार के लिये प्रस्थान किया। उसने रास्ते में ही यह बात सुन ली। वह पछताता हुआ गया कि बादशाह ने ऐसा उपाय क्यों किया है ? ६९०

इतने में मीर महिमाशाह आया और अपने साथ तीन दूसरे युवाओं को लाया। उसने देखा कि जमीन गीली है तो उसने कुर्बान (गले में पहनने की पेटी जिसमें धनुष लटकाया जाता है) को काट कर कीचड़ पर बिछा दी और चारों व्यक्ति उस पर पलथी मांड कर बैठे। खाने के लिये आये गरम भोजन को उन्होंने रूमाल से हवा करके ठंडा किया और आराम से अपना खाना खाया।६९१।

बादशाह ने बेगम से कहा कि तुम ध्यान लगाकर देखो। तब बेगम ने मीर महिमाशाह को पहचान कर उसी वक्त बता दिया।६६२।

तीनों ही बातों को प्रत्यक्ष देख कर तब बादशाह ने मान लिया। उसके मन में यह निश्चय हो गया कि इन लोगों के बिना ऐसा काम कौन कर सकता है।६९३

उन्हें देख कर बादशाह ने (बेगम से) कहा कि इन्हें देखो, ये कौन हैं? तब बेगम ने मन लगा कर देखा और उसने महिमाशाह को पहचान कर बता दिया। आपने पूछा है सो बीच में बैठा हुआ वही व्यक्ति है। बादशाह ने उसको पहचान लिया। अपना मतलब पूरा करके बादशाह वहां से उठकर अंदर चला गया और अपने वजीर जैनाबदीन को बुला लिया।६९४।

और भी जितने दरबारी थे, उन सबको बुलाया और बादशाह ने उनसे सारी घटना सुना दी। सुन कर सभी आश्चर्य करने लगे और कहने लगे कि उसने वहुत अनुचित कर्म किया है। बादशाह ने पूछा कि उसका क्या किया जावे? एक दरबारी ने कहा कि उसे कैद करके बेड़ी हथकड़ी पहना दी जावे। एक अन्य ने कहा कि उसको जहर पिला दो। कोई कहता था उसका तत्काल वध करवा दिया जावे।६९५।

एक ने कहा कि उसे कहीं चक्र में पिलवा दिया जाय, किसी भी प्रकार उसे मरवा दिया जावे। बादशाह ने कहा कि उसको अभी मरवाता हूं, तभी मेरे जी को शान्ति मिलेगी। वजीर ने कहा कि यह आपके अधिकार में है—यदि आप आज्ञा दे तो उसे अभी जाकर मार डालें। तब अलुखान ने बादशाह से कहा कि आप उसे आधी रात में जाकर मारें।६९६।

बेगम को समाचार मिला कि बादशाह ने महिमाशाह को मारने का विचार किया है। इस काम के लिये अलुखान को कहा गया है—कि वह उसे आधी रात को जाकर मार डाले।६९७।

बेगम ने बादशाह के द्वारा कही गई बातों को गुप्त रूप से सुन लिया कि बादशाह ने महिमाशाह को मरवाने का अंतिम निर्णय लेकर दरबारियों को विदा कर दिया है। बेगम ने एक पत्र लिख कर महिमाशाह के डेरे (निवास) पर देने के लिये भेजा। उसमें लिखा कि यदि तुम निकल कर जा सको तो निकल कर चले जाना अन्यथा युद्ध का प्रबंध कर लेना।६९८।

तुम पर घात करने के लिये अलुखान को भेजा गया है। वह तय्यारी करने के लिये अपने निवास पर गया हुआ है। वह आधी रात को तुम पर हमला करने आयगा। यह मत समझना कि वह विलंब करेगा। तुम तो अभी

निकल कर चले जावो । जो सामान आवश्यक हो वह साथ ले लो—फालतू सामान को छोड़ दो ।६९९।

बेगम ने महिमाशाह को पत्र लिख कर यह खबर पहुंचाई कि बादशाह तुम पर क्रुद्ध है, ऐसी अफ़वाह है ।७००।

महिमाशाह के पास इस प्रकार का पत्र आया । उसे पढ़ कर वह चिंतित हो उठा कि बादशाह की आज्ञा समस्त देश में चलती है, वह किस दिशा में निकल कर जावे । तब उसने दक्षिण दिशा में जाने का विचार किया यह सोच कर कि उधर इसके राज्य से बाहर दूसरे राज्यों की भूमि है ।७०१।

महिमाशाह मंगोल ने समस्त सामान संभाल कर गाड़ी में भरा। उडाणसी शराब पीने के लिये गया हुआ था, अतः वह नहीं आया ।७०२।

महिमाशाह दिल्ली से निकल गया । उसे किसी ने नहीं देखा, न सुना और न किसी को पता ही लगा । आधी रात को जब अलुखान आया तो उसने सारी हवेली ढूंढ मारी पर महिमाशाह नहीं मिला तो वह बहुत पछताया । उसने चारों दिशाओं में सेना भेजी और चारों ओर के घाटों का रुकवा लिया । महिमाशाह चल कर अहलादपुर पहुंचा और वहां दरे (घाटी) में रोक लिया गया ।७०३।

अलुखान ने सारे दिल्ली शहर को भी ढूंढवा लिया, पर महिमाशाह का पता नहीं लगा सका । महिमाशाह का एक बहादुर भानजा, जिसका नाम मीर उडानसी था, वह नशे की मस्ती में कलाल के ठेके पर मिला । वह पकड़ा जाकर अलुखान के पास लाया गया । उसने बादशाह के पास सूचना दी और उडानसी को बंदीगृह में डाल दिया ।७०४।

बादशाह अलाउदीन ने अलुखान को सुबह होते ही बुलवा लिया और कहा कि महिमाशाह कौनसी दिशा में भाग कर गया है, उसको पकड़ने के लिये फौजें पीछे लगा दो ।७०५।

महिमाशाह ने दरवान (द्वारपाल) से कहा कि—हे मित्र ! मुझे क्यों रोक रहे हो । किस उद्देश्य से तुम रोक रहे हो, वह मुझे बताओ ।७०६।

महिमाशाह ने कहा कि हे भाई ! हमें क्यों रोक रहे हो, यह हमें समझा कर कहो । दरवान ने कहा कि यहां हमारे राजा रहते हैं, उन्हीं की आज्ञा से आगे जा सकते हो । महिमाशाह राजा के पास कोई कब जायगा ?—(दरवान)—जब तक हम हैं, किसी प्रकार की कोई शिथिलता नहीं हो सकती । इतने में राजा भी आ गया वह शिकार खेलने के लिये निकला ।७०७।

राव के कूच का नगाड़ा सुन कर महिमाशाह ने दरवान को बुलाकर कहा कि वह अब जाकर राजा से निवेदन कर हमारे लिये आज्ञा लाकर दे। ७०८

दरवान भाग कर राजा के पास गया और हाथ जोड़ कर खड़ा रहा। उसने निवेदन किया कि दिल्ली से कोई मीर आया है—उसने आपको अभिवादन भिजवाया है। उसमें साथ अच्छे घोड़ों पर एक हजार सवार है। वे स्त्रियों के साथ संकटावस्था में अपना घर बार छोड़ कर आये हैं। ७०९।

वे द्वार पर खड़े निवेदन करवा रहे हैं। आपकी आज्ञा हो तो वे यहां से आगे जावें। राजा ने सारी बात सुनकर कहलवाया कि उन्हें वापिस जाकर पूछो कि वे कहां रहते हैं और कहां जा रहे हैं और अब वे कहां जाकर रहेंगे ? दरबान वापिस महिमाशाह के पास आया और जो कुछ राजा ने कहा वह उसको आकर कह दिया। महिमा ने बताया कि हम लोग दिल्ली छोड़ कर आये हैं और रूठ कर दक्षिण की ओर जा रहे हैं। ७१०।

हमने बादशाह से झगड़ा कर लिया है और वहां से छोड़ कर आये है। अब हम दक्षिण दिशा को जा रहे हैं। हमारा निवास ये घोड़े हैं। ७११।

दरबान पुनः राजा के पास आया। जो कुछ महिगाशाह ने कहा वह राजा को जाकर सुना दिया। राजा ने पुनः दरवान से कहा कि उनसे जाकर पूछो कि क्या वे यहां रहना चाहते हैं ? वहां जो कुछ मनसब पाते थे, उससे सवाया मनसब यहां पर हम ही दे देंगे। दरबान ने लौट कर महिमा से कहा कि राजाजी आपको यहां रखना चाहते हैं, यदि आप रहना चाहें। ७१२।

महिमा ने दरवान से कहा कि इस बात पर हमें प्रसन्नता हुई। पर आप तुरकों से भेद रखते हो और बीच में कनात आड़ी लगाये रखते हो। ७१३।

महिमाशाह ने दरवान से कहा कि वह फिर जाकर निवेदन करे। .... । ७१४।

मैंने भयंकर अपराध किया था, इसी से दिल्ली छोड़ कर आए है। मैंने उनके नौ लाख छीन लिये' इसी से बादशाह ने मेरा वध कर देने की आज्ञा दी। उसके राज्य में तुर्क निश्चित होकर रहते हैं। हिन्दुओं को दण्ड (कर) देना पड़ता है। वहां ऐसा कोई समर्थ शासक नहीं है, जो मुझे शरण दे सके। हे रावजी ! सूर्योदय से सूर्यास्त तक हमें संशय बना रहता है। मीर महिमाशाह मुगल कहता है कि मैं आपकी शरण में आया हूं। १

हमीर ने उत्तर दिया—कि जब तक रणथंभोर दुर्ग, जब तक जाजा बड़ गूजर है और वीरम जैसे मेरे भाई जीवित हैं, और जब तक हमारे हाथ में

तलवार है, हे महिमाशाह मुगल ! मेरी शरण में आकर रहो । बादशाह अपनी सेनाएँ भेजेगा तो दुर्गस्थ दुर्ग रणथंभोर को पहले देखेगा । बादशाह धन मांगे, हमारे सिर मांगे, जो कुछ भी मांगेगा, वह हम देंगे पर हे मीर मुगल ! सुनो, तब तक हम तुमको निकाल कर उसको नहीं सौंपेंगे । २

······ । यहां मैंने अपनी आंखों से देखा है । इनके माता पिता को धन्य है । ये प्रिय वाणी बोलते हैं । वहां म्लेच्छ बादशाह है । उससे कहीं बचाव नहीं है । महिमाशाह मंगोल कहता है कि हे हमीर ! सुनो जो तुमने पूछा है, वह सब हमने बता दिया । ७३७ ।

मीर महिमाशाह घोड़ों पर चढ कर दिये गये निवास स्थान पर आया । पानी पंथ घोड़े के खुरों से वह जमीन खूंदाता चला । ७३८ ।

महिमाशाह को निवास दिया—

उनके पास दो पानी पंथी घोड़े थे । उनके सिर ऊँचे उठे हुए थे और हिरणों के समान चंचल थे । वे पानी में ऐसी गति से चलते हैं कि उनके सुमों पर पानी की एक बूंद तक नहीं ठहरती । आठ इराकी घोड़े ऐसे थे, जिनके सिर, कबूतर की तरह और कमर गर्दन (?) की तरह है । पांच घोड़े बंदरों की तरह हृष्ट पुष्ट, मस्त, और मतवाले थे, जो पवन की गति थी और पक्षी के समान लहराते थे । पश्चिम के मदमस्त (या जामनगर के), ताजी (ताजिकी स्थान के), काछी (कच्छ के) घोड़े अपनी गति में जब छलांगे लगाते थे तो उड़ते हुए प्रतीत होते थे । इस प्रकार कंधारी, (कंधार के),बुखारी (बुखार के), बलखीय (बलख के), इरानी (ईरान के) पीरांनी घोड़े थे । इसी प्रकार अरब के आरबी, खारंबी (ख्वारिज्म के ?), रूम और साम के घोड़े थे जो घर पर ही घोड़ी से जन्मे थे । गुंटागिरि के घोड़े, दक्षिण के हल्के पीलेपन के साथ लाल रंग के सरवती घोड़े, ऐसे अच्छे से अच्छे एक हजार घोड़े, जो अनेक रंगों में सुशोभित थे । उनमें लाल रंग के, हल्के लाल (पतंगी) रंग के, कुसुंभ (कुसुम के समान) रंग के, जावक (महावर) रंग के, हिंगुल और मखमल के समान रंग वाले, हल्दी के समान पीले रंग के, केसरिया रंग के, हरताल के रंग के, टेसू रंग के, कपास के पौधे के समान हरे, तोते के पंख के समान हरे, अनेक लीले, हरे और लीलांबर के समान हरे, मोती, कुंभी के फूल के समान श्वेत, और पचरंगी छींट के समान रंग वाले अबलख घोड़े । अनेक भ्रमर के या काजल के रंग के समान काले रंग के, संध्या के समय के रंग के समान या भादवे के बादल के समान खाखी रंग के घोड़े, इस प्रकार अनेक रंग वाले घोड़े थे, उनको कहां तक गिनाया जावें । उनका वर्णन करने से काव्य का बढकर विस्तार हो जायगा । उनके साथ इनके अतिरिक्त पांच बड़े दांत वाले पहाड़ के समान ऊँचे पटाझर हाथी, और तीन सौ ऐसी गाड़ियाँ

थी जो बारूद, छोटी तोपों आदि की युद्ध सामग्री और अपने परिवार के लोगों से भरी थीं। ७३९।

राजा ने उन्हें अपने पास रख कर उनको डेढे मनसब के पट्टे दिये। उनको सागर ताल पर रहने को जगह दी, जहाँ उन्होंने अपनी हवेली (प्रासाद) बनवायी। उन्हें जागीरें देकर परगनों का शासन सौंपा। उनका बहुत अधिक सम्मान बढाया। ७४०।

महिमाशाह के पास सतरह सौ सवार थे। उन सबके अलग अलग निवास बसाये गये। वे दोनों वीर महाबलशाली थे। उनकी शक्ति का कोई अंत नहीं था। वे एक ही बाण से हाथी को बींध सकते थे। उनकी बराबरी के और कोई नहीं थे। इस प्रकार के पठानों को वहां बसाया गया, जिनके भोजन का वर्णन सुनो। ७४१।

वे दोनों भाई आधा मन अन्न खाते थे जिसमें सात सेर घी होता था। पच्चीस सेर बकरे (बकरों का मांस) और अनेक अन्य वस्तुएँ आती थी, जिनकी गिनती कौन कर सकता है। वे दिन में एक बार भोजन करते थे। रात के भोजन में आधा मन दूध पीते थे। उन दोनों भाइयों के पास इसी प्रकार के पांच सौ जवान थे। ७४२।

उन दोनों के पास लोहसार (इस्पात) बने धनुष थे, जिनमें बत्तीस टंक की प्रत्यंचा चढाई जाती थी। उस पर सवासेर का बाण टिकाया जाता था। वे पैंतीस सेर की सांग (भाला) चलाते थे, और अष्ट धातु से बना सोटा (दंड) हाथ में रखते थे, जिनसे सिर में प्रहार करते समय पौंचे झुक जाते हैं। उनकी कमर में जमघर (कटार की आकृति का एक शस्त्र) और खांडा सदा कमर में बंधा रहता है। उस पर वे उड़ती हुई खबरें उनको मिलती रहती थी। ७४३।

उनको वहां रहते हुए बहुत दिन बीत गये। एक दिन राव हमीर उससे बातें करने लगे। राजा ने पूछा कि वहां पर (दिल्ली) में कोई महत्त्वपूर्ण वस्तु तो नहीं रह गई है, या आप सब कुछ यहां ले आये हैं। महिमाशाह ने तब निवेदन किया—कि मेरा जैसा ही मेरा एक हितकर भाई वहां रह गया है। वह हमसे बिछुड़ कर कलाल के यहां रह गया— उस मतवाले को बादशाह ने पकड़ लिया है। ७४४।

वह हमारा हितकर भानजा है और मेरे कारण से कष्ट पा रहा है। उसको मात्र चणों का रातिब (जानवरों का खाना) दिया जाता है। जंजीरों में बंधा हुआ वह बहुत बहुत अकुला रहा है। वह मेरे लिये धर्म का द्वार

और मेरा सहयोगी मित्र है। उसका दु:ख मुझको बहुत अधिक कष्ट दे रहा है। हमने वहां हमारी और कोई प्रिय वस्तु नहीं छोड़ी। छुटकर फालतू वस्तुओं का क्या महत्त्व है। ७४५।

तब राव ने कहा कि अब गलती क्यों करते हो, उसकी किसी भी तरह रक्षा करो। यहां से किसी गुप्तचर को भेजो और चोरी से या ताकत से, जैसे भी संभव हो, उसको निकाल कर लावो। महिमाशाह ने कहा कि यदि आपकी आज्ञा हो गई है तो अब वह आयगा। देखते हैं, कोई उपाय हो जाय। या तो वह आ ही जाना है, या फिर कुछ उपाय करेंगे। ७४६।

दिल्ली के लिये गुप्तचर यह समझा कर भेजे गये कि बे उडाणसी का पता लगाकर उसको ले आवे। ०४७।

ये दुर्ग में बैंठे आनंद कर रहे थे। उन्हें और कोई चिन्ता नहीं थी। इतने में सावणी तीज का पर्व आ गया। देवलदे ने श्रृंगारित करके तीज का निर्माण किया। राव हमीर को इसका पता लगा। और उन्होंने सभी पर्वतों पर चौकियां स्थापित करवा दी। घाटे में भी उसने सावधानी के साथ वीर सैनिकों को रखा और आज्ञा दी कि वह चोर मिल जावे तो उसे पकड़ कर ले आवें। ७४८।

अच्छे अच्छे बहादुर राजपूतों को बुला कर उनको सारी बात समझाई। महिमाशाह ने उनको देखा और उसने अवसर देख कर राजा से बात की। आपने इन ठाकुरों (राजपूतों) को कहां भेजा है। राजा ने उनको सारी घटना का विवरण सुनाया। तब महिमाशाह ने विदाई की आज्ञा मांगी और कहा कि यदि मुझे आज्ञा दें तो मैं भी जाऊं। ७४९।

राजा ने महिमा से कहा कि अपनी चौकी कहीं दूर स्थापित कर लें। और वह आपके हाथ आ जावें तो उसको बांध कर दरबार में प्रस्तुत करें। ७५०।

महिमाशाह से राजा (हमीर) ने कहा कि आप अवश्य जावें और एक ओर दूर जाकर बैंठें। तब महिमाशाह घोड़े पर सवार होकर गया और एक घाट में जाकर चौकी स्थापित की।

वहां सभी महिलाएँ एकत्र होकर गाते बजाते तीज खेलने के लिये गई। वे सब भैरव ताल पर इकट्ठी हुई। अहलादपुर से भी स्त्रियां वहां आई। ७५१

सभी स्त्रियां भयभीत होकर इधर उधर घूमती हुई देखती थी और गीत गा रही थी। जब उन्होंने पहाड़ों में स्थापित चौकियों को देखा तो उनके मन

का भय दूर हो गया । अनेक स्त्रियां झूले झूल रहीं थी, कोई खेल रही थी, कोई भ्रमण कर रहीं थी या मौज मस्ती में मग्न थीं । सभी स्त्रियां गीत गा रही थी या खेल रही थीं, कि उस चोर ने किलकिला (मछली मार समुद्री पक्षी) पक्षी की तरह झपट कर आक्रमण किया । ७५२ ।

महिमाशाह ने दूर से देखा कि यह तो वही चोर हैं । समस्त सैनिक उसके पीछे दौड़ पड़े । सर्वत्र कोलाहल होने लगा । ७५३ ।

खीची तीज की प्रतिमा को घोड़ी पर लेकर भाग रहा था । महिमाशाह ने अपना घोड़ा उसके पीछे लगा दिया और उसका पीछा करते हुए दौड़ पडा । ७५४ ।

वह प्रतिमा को घोड़ी पर लेकर भागा जा रहा था । ऐसा प्रतीत होता था मानो घोड़ी के पंख लग रहे हो । सभी चौकियों के सरदार उसके पीछे पड़े हुए थे । उन सबने उसके पीछे अपने घोड़े लगा दिये । महिमाशाह ने भी उसको जाते हुए देखा । उसके पास भी वैसा ही शक्तिशाली घोड़ा था । चारों ओर से सैनिक उसके पीछे दौड़ पड़े और चंबल नदी तक उन्होंने अपने घोड़े दौड़ाये । ७५५ ।

खीची (थानसिंह) ने चंबल पार करली और पीछा करने वाले सैनिक वहीं खड़े रह गये । महिमाशाह ने भी चंबल में घोड़ा डाल दिया और उसके पास जा लगा । ७५६ ।

वह घोड़ा पानी पर उसी प्रकार चला जा रहा था, जिस प्रकार पृथ्वी पर पांव टिकाते हुए चलता है । जहां सभी सैनिक उसके पीछे पड़े हुए थे, महिमाशाह भी पीछे पड़ा और आगे जा निकला । उसने भी पानी में अपना घोड़ा डाल दिया, और क्षण भर में दूसरी ओर पहुंच गया । वह भोमिया (थानसिंह खीची) दूसरी ओर के तट पर चढ कर आगे चला गया, पर महिमा इधर उधर मार्ग भूल गया ।७५७।

तब तक उनमें बहुत दूरी हो गई । महिमाशाह ने लौट कर उस मार्ग को पकड़ लिया । खीची ने तब पीछे मुड़कर देखा कि एक सवार उसके पीछे चला आ रहा है । खेजड़े के वृक्ष (शमी वृक्ष) के नीचे एक ग्वाल खड़ा था । वहां खीची ने खेजड़े के वृक्ष में अपनी बरछी का प्रहार किया और ग्वाल को कहा कि वह आने वाले सवार को वता दे कि वह इस बरछी को देख कर आगे वढ़ें ।७५८।

उसने भागते भागते खेजड़े को बींध दिया और एक ही बात कह गया कि इसको देख कर विचार करके ही आगे बढें ।७५९।

महिमाशाह ने बाण चलाया और वह खेजड़े के आर पार निकल गया। ग्वाल इसको देख कर भयभीत हो गया और बोला कि आप निश्चित उसके पीछे जावें ।७६०।

महिमाशाह जिधर निकल कर जा रहा था, वहां ग्वाले ने उसको बरछा बता दिया। उस आगे जाने वाले ने यह शक्ति बताई, उसको देखकर ही आप आगे बढें। क्रुद्ध होकर महिमा ने बाण चलाया और खेजड़े को बींध कर दूसरी ओर निकल गया। तब ग्वाल ने कहा कि निश्चित होकर आगे जावें। आप भी उसके वश में नहीं आ पावोगे ।७६१।

तब क्रुद्ध होकर महिमाशाह ने घोड़ा दौड़ाया और खीची के पास पहुंच कर खीची को पुकारा। खीची भी सामने आकर खड़ा हो गया। तब महिमाशाह ने अपना खड्ग निकाल लिया। तब खीची ने भी अपनी तलवार निकाल ली। महिमाशाह ने उसको पहले प्रहार करने के लिये कहा और उधर खीची उसे पहले प्रहार करने के लिये कहता था। महिमा ने खीची को ही प्रहार करने के लिये कहा ।७६२।

खीची ने प्रहार किया, वह घोड़े के सिर पर लगा। घोड़े का सिर कट कर पृथ्वी पर जा गिरा और घोड़ा पिछली टांगों पर खड़ा हो गया। घोड़ा तड़फड़ा कर तेजी से चला और खीची को अपनी छाती के नीचे दबा लिया। घोड़ी जमीन पर जा गिरी और चारों पांव पसार दिये। महिमाशाह कूद कर अलग जा खड़ा हुआ और खीची अपनी कला भूल गया। तब महिमाशाह ने उसको घोड़े के नीचे से निकाल कर बेढंगेपन से उसकी मुश्कें बांध ली ।७६३।

इस बीच भाग्य ने ऐसा पलटा खाया कि घोड़ी उठकर खड़ी हो गई। महिमाशाह ने खीची को उस पर डाल दिया और महिमाशाह भी उस पर सवार हो गया। खीची को लेकर महिमाशाह आ रहा था। मार्ग में एक गांव में खीची की बहिन रहती थी। उसने विष घोल कर भिजवाया, वह खीची थानसिंह को पिला दिया ।७६४।

जब खीची पर विष का प्रभाव पड़ा, तो वह झुकझुक कर गिरने लगा और मुरझाने लगा। तब महिमाशाह ने हाथ में जहर मोहरा लिया और उसमें डोरा पिरोया। उसने वह मोहरा खीची के मुंह में रखा और गर्दन के पृष्ठ भाग पर वस्त्र लपेटा, उससे उस पर विष का प्रभाव उतरने लगा। महिमाशाह चंबल को पार करके इधर आ गया ।७६५।

उसने वहां सभी सैनिकों, सरदारों को खड़ा देखा, तो वह उस स्थान से तिरछा मुड़ गया। वह वहां से निकल कर आगे आया, जहां और कोई

मनुष्य नहीं था। उसने बंधे हुए खीची को वहां डाल दिया और आप आगे चल कर दुर्ग में आ पहुंचा। खीची जिस स्थान पर पड़ा हुआ था, वहां सारे सैनिक आये।७६६।

उन्होंने उसको वहां बंधा हुआ पड़ा देखा। वे सभी वहां आकर एकत्र हो गये। वे उसको पूछते थे कि वह कौन है? पर वह न तो बोलता था और न चलता था, उत्तर क्या देता। एक ठाकुर ने उसको पहचान लिया और उसने कहा कि यही खीची थानसिंह है, मैंने इसको पहचान लिया है। उसने उसको उठा कर घोड़े पर डाला और खुश होता हुआ दुर्ग में ले चला।७६७।

उन सबने मिलकर एक षडयंत्र किया कि यह कहना कि ठाकुर वीरसिंह इसको लेकर आया है। अपने सभी साथ वालों को उसने सौगंध दिलाई कि तुम सब इस ठाकुर की तारीफ करोगे। सब मिल कर एक ही बात कहना और कोई दूसरी बात मत करना। वे खीची को लेकर राजा के पास आयें। राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और सुख का अनुभव किया।७६८।

वीरसिंह को सिरोपाव देकर उसका पट्टा दुगुना कर दिया गया। खीची को हथकड़ी-बेड़ियां पहना दी गई। प्रातःकाल सूर्योदय होने पर राव हमीर ने उन्हें बुलवाया। पूरी राजसभा लगी हुई थी। खीची को वहां खड़ा किया गया। राव ने उसके सब हावभाव देखे और आज्ञा दी कि उसको तुरंग (तप्त धातु निर्मित अश्व) पर चढा दिया जावे।७६९।

अष्टधातु से निर्मित घोड़ा कोयले डाल कर तपाया जा रहा था। महिमाशाह दरबार में जाते समय उस घोड़े के समीप से निकल रहा था। उसने पूछा कि यह क्या है? तब घोड़े के पास खड़े व्यक्तियों ने बताया कि कल खीची (थानसिंह) पकड़ कर लाया गया था, उसी के लिये यह घोड़ा गरम करवाया जा रहा है।७७०।

महिमाशाह दरबार में पहुंचा और राजा को अभिवादन किया। उसने मुश्कबंधे खीची को देखा, तब राजा से जाकर पूछा कि यह अपराधी जो बांध कर रखा गया है, कहां से आया है। राजा ने बताया कि वीरसिंह इसको पकड़ कर लाये हैं। आप भी तो कल वहां गये थे। यह इनके हाथ कैसे आ गया? ।७७१।

यह सुनकर खीची ने अपना माथा पीट लिया और क्रुद्ध होकर विकराल रूप में बोला—मुझे तुम्हारा कोई चाकर पकड़ कर नहीं लाया है, मैं तो इस मियां (तुर्क) के वश में आ गया था। तब राजा महिमाशाह की ओर देखने

लगा और पूछा यह खीची क्या बात कह रहा है ? खीची ने पुनः कहा कि आप इनसे क्या पूछ रहे हो, मेरा भाग्य ही मुझे यहां खींच लाया है ।७७२।

खीची ने यह बातें कही और राव मुख देख कर भाव पढ रहा था। वीरसिंह जो फूल कर बैठा हुआ था (प्रफुल्लित था) एक दम मुरझा गया ।७७३।

वीरसिंह जो खुश होकर बैठा था, यह बात सुन कर लज्जित हो गया (धरती में गड़ गया) । राजा ने यह सब देखा कि वह गर्दन नीची करके बैठा है । तब राजा ने महिमाशाह से पूछा कि आप सत्य सत्य बतावें कि क्या कुछ हुआ । महिमाशाह ने कहा कि यह खींची ही बतायगा । जो उसको लेकर आया है वह छिपा नहीं रहेगा ।७७४।

खीची ने कहा कि हे महिमाशाह ! सुनो, मैंने तुम पर खड्ग से प्रहार किया था और तुम्हारे घोड़े को मार दिया था । तुम मुझे रास्ते में ही रखकर आ गये ।७७५।

तब खीची ने कहा कि तुम बात को फिरावो मत । मैंने तुम्हारे घोड़े को मार डाला । तुम मेरी घोड़ी पर बैठ कर आये थे और मुझको बांध कर तुमने मार्ग में ही डाल दिया था । यह मुझे रास्ते में से ही उठा कर लाया है और उसका पुरस्कार भी इसने प्राप्त कर लिया है । जो मुझे लेकर आया वह तो बोलता नहीं है और यह ठाकुर मन ही मन में फूल रहा है ।७६६।

खीची ने यह कह कर अपनी बात को पुनः कहा । इससे राजा सशंकित हो उठा । तब महिमाशाह ने कहा कि यह जवान भला आदमी है । इसने किसी के बहकावे में आकर यह बुरा काम किया है । तब राजा ने हंस कर कहा कि उस घोड़ी को देखें तो सही और वह घोड़ी मंगवाई गई । महिमा-शाह ने घोड़ी मंगवा कर राजा को दिखाई । देख कर राजा ने महिमाशाह को ही पुरस्कार रूप में वह घोड़ी दे दी । राजा ने एक खाशा घोड़ा (राजा के अस्तबल का घोड़ा) और मंगवा कर महिमाशाह को पुरस्कार रूप में दिया ।७७६।

राव ने वीरसिंह की ओर टेढी नजर से देखा, जिसका दरबार में अपमान हो गया था । तब राजा ने खीज कर खीची पर क्रोध किया और पूछा कि तुम्हें किसने बहकाया था और आदेश दिया कि इसको घसीट कर दूर ले जावो और अष्ट धातु के तप्त तुरंग पर चढा दो । अब महिमाशाह की बताई सुनो । उसने हाथ जोड़ कर राजा से निवेदन किया ।७७८।

आप ऐसे जवान को मरवायें नहीं । इसे कहीं विकट स्थान पर भेज दे और इसके करतब देखें । यह और किसी के वश में आने वाला नहीं है । राजा ने कहा कि यह ठहरेगा नहीं और ही कोई अपराध करेगा । यह तो वहुत बड़ा अपराधी है । इसने बहुत बुरा काम किया है ।७७९।

महिमाशाह ने निवेदन करके खीची को मुक्त करा लिया और उसको राजा की नौकरी में नियुक्ति देकर अपने पास रख लिया ।७८०।

महिमाशाह ने निवेदन किया कि इसको मेरे लिये क्षमा कर दें । तब राव ने कहा कि आप धोखा खावोगे । इसको अपने पास रख कर सुखी नहीं रहोगे ।

महिमाशाह ने कहा कि इसको चाकरी में रख लें और पर्याप्त जागीर दें । तब राजा ने उसको मुक्त करा दिया और महिमाशाह के अधीन उसको नियुक्त कर दिया । ७८१ ।

महिमाशाह ने खीची को अपने पास रख लिया । राजा ने पुनः उससे (महिमाशाह से कहा कि) आपके और इसके बीच में मधुर संबंध किस तरह रह सकेंगे । तुम दोनों के बीच की होड कैसे निभेगी । तब खीची ने राव को सारी बात सुनाई और महिमाशाह को बहुत प्रशंसा की । राव ने उसकी उन्नति करके उसे सिरोपाव दिया । ७८२ ।

महिमाशाह ने तीज के सभी आभूषण मंगवा लिये । राजा इससे बहुत खुश हुशा । वह फूला नहीं समा रहा था । ७८३ ।

तीज के जितने भी आभूषण थे, वे सब महिमाशाह ने मंगवा लिये । और राजा के पास भिजवा दिया । राजा ने उन्हें देवलदे के पास भिजवा दिया । तब देवलदे ने महिमाशाह को बुलवाया । राजा ने तत्काल उसे ड्योढी (रावळे) में भिजवा दिया । देवलदे ने उसको कहाकि तुम मेरे भाई हो, तुमने मेरे कार्य को सिद्ध किया है । ७८४ ।

देवलदे प्रसन्न हुई और महिमाशाह को एक गांव का पट्टा दिया । हे महिमाशाह ! जैसा तेरे विषय में कहा जाता है, वैसा ही तुम्हारा नाम है । ७८५ ।

महिमाशाह ने देवलदे को अपनी बहिन के रूप में माना । देवलदे ने उस पर न्योछावर करके (वार कर) अपनी ओर से एक गांव दिलवाया और सिरोपाव देकर घर के लिये विदा किया ।

उसको दुर्ग में रहते हुए जब बहुत दिन हो गये तब उसे अपने भानजे की याद हो आई। दिल्ली भेजा गया जासूस लौट कर आया और उसने सारी कहानी कही।७८६।

उसने महिमाशाह से समस्त अवस्था का संक्षेप में विवरण दिया कि वहां किसी का भी वश नहीं चलता है। मैंने चौकी के स्थान पर पूरी चौकसी की। कहीं पर भी कोई दाव नहीं लगता है और न ताकत ही काम देती है। मैंने देखा कि बादशाह के घोड़े आये हैं, मैं भी उनके साथ लग गया। उन्हें हिंडौन में लाकर बांधा गया है। वे खीर खाते हैं और दुसराहें के लिये जाते हैं।७८७।

जासूस ने महिमा को आकर खबर दी कि बादशाह के इन सब घोड़ों को जाकर ले आवें।७८८।

तब महिमा ने मन में सोचा कि बादशाह के इन गहों (?) को मारा जाय। उसने एक ब्याही घोड़ी का प्रबंध कर उसे अपने साथ लिया। राव के पास जाकर उसने प्रस्थान के लिये आज्ञा मंगाई कि हमें आज शिकार पर जाने की स्वीकृति दें। वह एक हजार घुड़सवारों के साथ इतनी क्षिप्र गति से गया कि हिंडौण समीप ही प्रतीत हुआ।७८९।

उस दिन तो उन्होंने विश्राम किया और तृप्त होकर स्वयं ने खाना खाया और घोड़ों को दाना दिया। वे आधी रात को वहां जा पहुंचे और सारे अस्तबल के चारों ओर आग लगा दी। घोड़ी को द्वार के पास खड़ा रखा। स्वयं चौक में सावधान होकर रहें। अस्तबल में आग लगाते ही जाग हो गई।७९०।

तब सभी लोग घबराकर उठ खड़े हुए। जिधर भी नजर दौड़ाते थे उधर आग ही आग दिखाई दे रही थी। उन्होंने घोड़ों के आगे और पीछे के पांवों के बंधन काट डाले और द्वार खुलवा दिये। सभी घोड़ों को बाहर निकाल दिया और उन्हें घोड़ी के पीछे लगा दिया। एक हजार घोड़े वह दुर्ग में ले आया और घोषणा कर आया कि—।७९१।

महिमा ऐसे कहकर दौड़ लगा गया कि या तो मेरे भानजे को छोड़ दिया जाय अन्यथा मैं दिल्ली तक आकर आक्रमण करूंगा।७९२।

वह राजा से आकर मिला और उनको सारी घटना का विवरण सुनाया। अपने साथ लाये सब घोड़े भेंट किये। राजा ने वे सब वापिस महिमाशाह को दिये। हिंडोण का अधिकारी दिल्ली गया और बादशाह को

फरियाद की कि कृतघ्न महिमाशाह पुनः प्रगट हो गया और सारे घोड़े ले गया।७९३।

सुनते ही बादशाह क्रुद्ध हो गया। उसने दरबार में बुला कर सब समाचार पूछे। यह बतावो कि वे कहां से आये थे और कहां गये और घोड़े किस प्रकार ले गये। हवालगीर ने बताया कि वे आधी रात में वे अचानक आकर टूट पड़े और सारे अस्तबल में आग लगा दी। वे रणथंभोर से चढ कर आये थे और सभी घोड़ों का अपहरण करके वहीं ले गये हैं।७९४।

बादशाह ने सारी बात सुनी और अलुखां को बुलवा लिया और उसको आज्ञा दी कि महिमाशाह घोड़ों का अपहरण करके ले गया है, उसका कोई उपाय करो।७९५।

बादशाह ने तब अलुखान को बुलवा लिया। वजीर मोल्हणसी भी वहां आ गया। सभी दरबारियों को आमंत्रित कर दरबार लगाया और सबको घटना की जानकारी दी। उनको कहा कि महिमाशाह ने पुनः नमकहरामी की है और हमारे खाशा घोड़े उड़ा कर ले गया है। वह रणथंभोर दुर्ग में रह रहा है। उसकी जानकारी किसी ने नहीं दी।७९६।

वह अपने आप ही प्रकट हुआ और कह गया कि उसके भानजे को छोड़ दिया जावे। अब आप लोग उस पर आक्रमण करें और उसको शरण देने वाले हिंदू राजा सहित दोनों को दंड दे। तब वजीर ने कहा कि आप पहले ही उस पर सेना कैसे भेज रहे हैं। पहले उसके पास अपना दूत भेजो और मध्यस्थता कराके उसका उद्देश्य और विचार का पता लगावें।७९७।

तब वजीर की बात सुन कर बादशाह ने कहा कि मेरा किसी पर भी विश्वास नहीं है। मोल्हण! यदि तूं स्वयं जा रहा है तो मुझे संतोष है। तुम्हारे बिना और कौन जाकर बात कर सकता है। मुझे और किसी को भेजने की बात अच्छी नहीं लगती। तुम मेरी सारी बात सुन कर जावो और सारी जानकारी लेकर जल्दी ही वापिस आवो।७९८।

उससे कहना कि हमारे अपराधी को पकड़ कर भेजे और अपराध के दंड स्वरूप देवलदे को लेकर आना। सुना है कि वहां दो विलक्षण नर्तकियां हैं, वे भी हमारे दरबार में आनी चाहिए। वहां चौकी स्थापित करके एक लाख घुड़सवार रखावो और उस पर कुछ पेशकशी (नजराने) के रूप में भी कुछ राशि निश्चित करना। तुम इतनी वस्तुएं तो वहां जाकर मांगना ही और हो सके तो और भी अधिक मांगना।७९९।

मोल्हण को विदा करते समय इतनी बातें समझा कर कही। इतनी वस्तुएं मांगना और कहना कि महिमाशाह को हमारे सुपुर्द कर दें।८००।

मोल्हणसी को विदा किया। वह प्रस्थान कर चलता हुआ अहलादपुर पहुंचा। वहां डेरा डाल कर उसने विश्राम किया। दूसरे या तीसरे दिन उसने दुर्ग में प्रवेश किया। वह प्रतिदिन कचहरी में बैठ जाता था और चुपचाप उठ कर चला जाता था। किसी से भी कोई बात नहीं करता था। इस प्रकार आते जाते उसको दस महीने हो गये, तब कर्मचारियों ने उससे पूछा।८०१।

उन्होंने मोल्हण से प्रश्न किये—'आप नौकरी करने के लिये आये हैं या और किसी उद्देश्य से। मोल्हण ने उनसे कहा कि दिल्ली से वहां के बादशाह ने उसे भेजा है। उसे राजा से काम है। मेरा नाम मोल्हणसी है। तब वह कर्मचारी राव (राजा) के पास गया।८०२

उसने (कर्मचारी) राजा से निवेदन किया कि एक दूत प्रतिदिन आकर कचहरी में बैठ जाता है। अब तक उसको किसी ने नहीं पूछा। आज मैंने पूछा कि कहा से आये हो तो उसने बताया है कि बादशाह ने उसे भेजा है और मेरा नाम मोल्हणसी है और मैं राव के पास एक काम लेकर आया हूं।८०३।

तब राव ने पता लगवाया और पूरा पता लगा लेने पर उसे आने की आज्ञा दी। राजा ने जब उसको अपनी आज्ञा भेजी तो वह रथ में बैठ कर दुर्ग में आया। राजा झरोखे में आकर बैठा और उसके नीचे मोल्हणसी को बुलवा लिया। राजा ने उससे पूछा कि वह कहां से आया है और बादशाह ने उसको किस काम से भेजा है।८०४।

दिल्ली के बादशाह ने ऐसी आज्ञा दी है कि राव हमीर को दुर्ग में जाकर समझावो।८०५।

मोल्हण ने अभिवादन किया। सात सौ घोड़ों के लिये—उधर से हिन्दू और मुसलमान (तुर्क) चढेंगे और इधर सभी सांभरिया चौहान। हमीर ने पूछा कि मोल्हणसी तुम कहां से आये हो। मोल्हणसी ने कहा कि मुझे दिल्ली के बादशाह ने आपके पास भेजा है। उसने समुद्र को उलट दिया है। अनेक राव राजा उसके क्रोध से दर दर भटक रहे हैं। राव आप दुर्ग की रक्षा करना चाहोगे तो भी रक्षा कर नहीं सकोगे। मैंने रणथंभोर दुर्ग को डूबते हुए सुना है।८०६।

हमीर ने उत्तर दिया। दुर्ग उस कुपुत्र (निकम्मे, कायर) का डूबता है, जो अपने प्राणों का भय खाता है। अब हम दिल्ली की मांग करते हैं, हमारी सीमा को छोड़ कर चले जावो ।८०७।

अरे मूर्ख दूत ! मेरे सामने क्या बकवास कर रहा है। यदि मैं तुम्हें मार डालूं तो तुम्हें शरण में कौन रखेगा। उधर वह दिल्ली का बादशाह है और इधर मैं सांभरिया चौहान राजा हूं। पुनः मैं जाकर चक्रवर्ती बादशाह के सभी वाद्ययंत्र जीत लूंगा (अर्थात् बादशाह को पराजित कर दूंगा। मैं उसको सवारों सहित पकड़ लूंगा, युद्ध करूंगा) और स्वयं युद्ध करने के लिये सम्मुख जाऊंगा। या तो सुल्तान की ही कब्र खुदेगी या मैं ही युद्ध क्षेत्र में खेत रहूंगा ।८०८।

मोल्हण ने कहा—हे राव हमीर ! बादशाह ने नजराना मांगा है, साथ ही उसने देवलदे तथा धारू आदि नर्तकियों की, पारस मणि और मीर महिमाशाह की मांग की है ।८०९।

देवलदे को दिल्ली के सुल्तान के लिये दें और धारू और बारू नर्तकियों तथा महिमाशाह के लिये भी कहा है। यदि आप जीवित रहना चाहते हैं तो एक लाख टके, एक लाख घोड़े, अष्ट प्रधान क्यों नहीं दे देते, अपने मन की व्यथा को दूर बहा कर—

मोल्हण ने कहा कि हे हमीर ! सुनो, पतंग बनकर मत गिरो ।८१०।

हमीर ने कहा—कि मुंह पर मूंछ रखने वाला, शूरवीर पुरुष (मर्द) ही धारू को ले सकता है। यदि कोई बादशाह से भयभीत हो, वही महिमाशाह (शरणागत) को दे सकता है। हम गजनी दुर्ग (हस्तिनापुर, दिल्ली), अलुखान और निसरत खां की मांग करते हैं—साथ ही ठठा, तैलंगाना और मड़हटिया (महाराष्ट्री) बेगम भी हमारे पास भेज दो ।८१२।

राजा ने कहा—मुझे गजनी दुर्ग (हस्तिनापुर) दो, बादशाह स्वयं मेरी सेवा में उपस्थित होवें। अलुखान मुझको दो, जिससे मैं घास कटवाऊं। निसरतखां को भी मुझे सौंप दो जिसे पकड़ कर मैं उसके पांवों में बेड़ियां पहनवा सकूं। मुझे ठठा और तिलंगाना प्रदेश दो। मैं मड़हटी बेगम की भी मांग करता हूं। हे मोल्हण ! ध्यान देकर सुनो और बादशाह से जाकर कहना कि मैं रामायण और महाभारत में वर्णित युद्धों के समान भयंकर संग्राम करूंगा। या तो सुल्तान की कब्र खुद जायगी या मैं ही युद्ध में प्राण दे दूंगा ।८१३।

मोल्हण ने कहा—दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन के पास नौ लाख घुड़सवार सेना है और तुम्हारे पास एक लाख भी नहीं है। दुर्ग भी तुम्हारे पास एक ही है।८१४।

उसके पास अस्सी हजार पैदल सैनिक हैं, तुम्हारे पास एक लाख भी नहीं है। उसका चारों ही दिशाओं में चक्रवर्ती राज्य हैं, उसकी समता करने वाला कौन दिखाई देता है ? उसके पास चौदह हजार मद झरते (मदमस्त) हाथी हैं, जबकि तुम्हारे पास आठ सौ ही हाथी हैं। हे हमीर सुनो! वह बादलों के समान कड़कता है, गर्जना करता है। मोल्हण ने पूछा—सहयोग करो, सागर की गहराई में मत डूबो। सुल्तान तो बाज के समान है और आप एक चिड़िया के समान। उड़ कर भी उसके पंजे से कैसे छूटोगे।८१५।

राव ने कहा कि हे मोल्हण सुनो! मेरे पास एक लाख सैनिक है, पर वन में विचरण करने वाले बड़े बड़े हाथी सिंहों के भक्ष्य बन जाते हैं।८१६।

हाथी स्थूलकाय होते हैं, उनके सम्मुख सिंह छोटा सा लगता है। जब सिंह दहाड़ता है तो करोड़ों हाथी उठ कर भाग जाते हैं। सांप में बहुत विष होना है, पर उसको गरुड़ मार डालता है। हिरण कितना ही बड़ा क्यों न हो, सिंहगोश (सेही) उसको पछाड़ देता है। उस छोटे से बालक कृष्ण ने कालिया नाग को पकड़ लिया था और वीरघोष करते हुए कंस को मार डाला था। यदि सुरताण युद्ध करने आयगा तो वह तो सारस के समान होगा और मैं उसके लिये बाज सिद्ध होऊंगा।

मोल्हण ने कहा—कृष्ण कन्हैया ने कालिया नाग को पकड़ लिया था और कंस को भी मार डाला, यह सत्य है। पर यह बताओ कि हाथी के सामने पलाश की बाड़ कैसे सुरक्षित रहेगी।८१८।

समुद्र की गहराई किसने नापी है, पर्वतों को अपने हाथ से कौन धकेल सकता है, समुद्र को तैर कर कौन पार कर सकता है, गिरते हुए आसमान को किसने हाथों पर थामा है, बतावो! सूरज तक कौन पहुंच सका है, मेरु पर्वत को कौन लांघ सका है। जब आयुर्बल (उमर) क्षीण होने लगता है तो आयु में वृद्धि कोई नहीं कर सकता। घड़े में ऊंट नहीं समा सकता—ये सब बातें नहीं हो सकतीं। मोल्हण हमीर से कहता है कि हे हमीर सुनो! कूंडे में चांद दबाया नहीं जा सकता।८१९।

हमीर को मोल्हण ने कहा कि सुमेरु पर्वत को कैसे हाथों से ढांका जा सकता है। जब सातों ही समुद्र उमड़ कर आ जावें तब पोखर स्थिर कैसे रह सकता है।८२०।

राव ने कहा कि अब व्यर्थ की वातें क्यों कही जावें। जो कुछ भाग्य में लिखा है, वह होगा, उससे कैसे बचा जा सकता है। यदि पलायन करते हैं, तो मान विगलित होता है, अन्यत्र कहीं स्थान (शरण) नहीं मिलेगा। भागने पर सांभर की शक्ति लज्जित होती है और हमारे पूर्वज पृथ्वीराज को भी लजायेंगे। हम सामना करके लड़ेंगे, यही प्रतीक्षा (आशा) कर रहे हैं कि वह बादशाह कब आवे। हम रणथंभोर से नहीं हटेंगे—यह तुमसे वादा करते हैं।८२१।

मोल्हण ने कहा कि हे राजन् ! सुनो ! उससे लड़ कर कोई विजय प्राप्त नहीं कर सका है। उसने कई दुर्ग छीन लिये हैं। वह अलाउद्दीन बहुत जिद्दी है।८२२।

उसने पूर्व दिशा तक अपने राज्य की सीमा बढाली है। अग्निकोण के राज्य स्वयं आकर अधीन हो गये हैं। दक्षिण दिशा के देश पेशकशी (नजराना) देते हैं। नैऋत्य में बादशाह का नाम प्रसारित है या नाम सुनकर ही लोग घबराते हैं। पश्चिम दिशा के सभी देश उसको धन संपत्ति भेंट करते हैं। वायव्य कोण से भी नित्यप्रति धन आ रहा है। उत्तरापथ के लोग कर देते हैं और ईशान कोण तक से अभिलषित धन आता है। आठों दिशाओं में जितन धन पैदा होता है, वह सब बादशाह के चरणों में समर्पित होता है। मोल्हण ने कहा कि इस प्रकार समस्त जंबूद्वीप तक उसकी आंण (आज्ञा) स्फुरित होती है। ८२३।

राजा ने कहा—उसकी आज्ञा समस्त जंबूद्वीप में चलती हैं, तो उससे हमें कोई भय नहीं। अलाउद्दीन जब आक्रमण करने के लिये आयगा तब बरावरी का युद्ध होगा।८२४।

अरे उसके अधिकार में पूरा जंबूद्वीप है और मेरे पास थोड़ी सी जगह है। उसके पास वहुत बड़ा राज्य है और मेरे पास थोड़ीसी रणथंभोर से लगी हुई भूमि। उसके पास अनंत लक्ष्मी है, मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। वह तो घमंड करता है कि आज उसकी समता करने वाला कौन है। कहते हो कि तुम अपनी ताकत का प्रदर्शन करोगे, तो एक बार यहां आवो तो सही। हे मोल्हण ! तब तुम्हें खबर पड़ जायगी।८२५।

मोल्हन ने कहा कि—वह आ गया तो सुख प्राप्त नहीं कर पाओगे। सारा प्रदेश उजड़ जायगा। तुम इतनी जिद मत करो, उसका मार्ग तो सारा संसार है।८२६।

उसके (दरबार में) नौ लाख नर्तकियां हैं और दो हजार मदमस्त हाथी गर्जना करते हैं। एक हजार नगाड़े और सकल धरा पर नौवतें वजती हैं। उसके अधीन कई हजार सामंत हैं और तोपें बंदूके भी हजारों देखो। पदाति सैनिकों का कोई अन्त नहीं है और लाखों की संख्या में धनुर्धारी हैं। दूसरी भीड़ की तो कोई गिनती ही नहीं है। उससे समुद्र पार के देश भी भयभीत रहते हैं। मोल्हन ने कहा कि हे हमीर ! उससे देवता, मनुष्य, ऋषि मुनि और शेषनाग सभी भय खाते हैं। ८२७

हमीर ने मोल्हण से कहा—गर्व करने वाले के गर्व का हरण भगवान् करते हैं। शूरवीर कभी किसी से भयभीत नहीं होते। हमारे वंश में तो यही काम (मर्यादा) रहा है। ८२८

जिसके सिर पर समस्त भू-मण्डल टिका हुआ है वह शेषनाग कैसे भय-भीत होगा ? इस पृथ्वी पर अनेक चक्रवर्ती और अगणित मण्डलीक हो गये हैं। जव देवता और मनुष्य भी नहीं डरते हैं, तो शूरवीर भी क्यों डरेंगे। जिसको अपने प्राणों से मोह है, वही बादशाह से डरेगा। हमें तो युद्ध करने का शोक है। हे मोल्हण ! हम तो युद्ध में या तो शत्रु का संहार करते हैं, या स्वयं मरते हैं। जब मृत्यु निश्चित ही है, तो फिर भविष्य से क्यों भय खावें। ८२९

मोल्हण ने कहा —'हे हमीर सुनो ! व्यर्थ ही समुद्र में जहर मत घोळो। महिमाशाह और धारू को हमें सौंप दो, जिससे बादशाह और तुम्हारे मध्य प्रेम वना रहे। ८३०

वैसे भी रावण ने हठ किया तो उसे अपना लंका का विशाल साम्राज्य खोना पड़ा। दुर्योधन ने जिद्द की तो उसने कुरुक्षेत्र के युद्ध में सब कुछ नष्ट करा दिया। पृथ्वीराज ने हठ किया तो बादशाह ने पकड़-पकड़ कर उसे छोड़ा। मैं तुम्हारे हित की ही बात कहता हूं, तू उनकी बराबरी (स्पर्धा) मत कर। अलाउद्दीन बादशाह के सामने इतना घमण्ड करना उचित नही हैं। हे हमीर सुनो ! सुमेरू पर्वत क्या कहीं हाथ से ढका जा सकता है (अथवा सुमेरू पर्वत क्यों कर ढका जा सकता है)। ८३१

हमीर ने मोल्हण से कहा—"उसके पास सत्ताईस लाख घोड़े हैं। वह दूसरों से लड़कर विजयी रहा है, पर इस बार उसकी मेरे साथ लड़ाई है।" ८३२

तब हमीर अत्यधिक क्रुद्ध हुआ और क्रोध के साथ वचन कहे कि—"जब मैं रणथंभोर की गद्दी पर बैठा था तभी से मैंने अपना सिर काश्यप (सूर्यदेव)

के सम्मुख झुकाया था । अरे धृष्ट मनुष्य ! इस प्रकार की बातें करते हुए कुछ तो भय खावो । तुम शीघ्र ही मेरी बात मानकर दुर्ग से शीघ्र निकलकर चले क्यों नहीं जाते हो । चौहान राजा हमीर ने कहा कि, अरे दूत ! तुम इस प्रकार की ओछी बातें कैसे कर रहे हो । उस क्षत्रिय के जीवित रहने को धिक्कार है जो युद्ध क्षेत्र से पीठ दिखाकर भाग जावे । ८३३

तब हमीरदेव ने क्रुद्ध होकर खड्ग उठा लिया और मोल्हण से शीघ्रातिशीघ्र वहां से चले जाने को कहा । ८३४

मोल्हण ने अपनी बात को अनेक रूपों में बदल बदल कर हमीर के सम्मुख कही । पर हमीर को उसकी कोई बात अच्छी नहीं लगी तो मोल्हणसी ने वहाँ से निकल कर दिल्ली के लिये प्रस्थान कर दिया । वह क्रुद्ध होकर दुर्ग से उतर गया और कूच दरकूच (पडाव डालते हुए) दिल्ली जा पहुंचा । ८३६

सप्तम अध्याय

तब मोल्हणसी दिल्ली लौट गया और बादशाह से जाकर मिला । उसने बादशाह से अभिवादन करके उसके पांव छुए । बादशाह ने उससे पूछा कि तुमने बहुत समय लगा दिया है । प्रसन्न होकर बादशाह ने उससे पूछा कि हमीर के साथ क्या तय हुआ है । इतने दिनों तक वहां रहकर तुमने क्या कुछ किया ? तब मोल्हणसी ने उत्तर दिया । ८३७

उचित अवसर देखकर मोल्हणसी ने बादशाह को निवेदन किया । हिन्दू राजा हमीर कुछ भी मानने को तैयार नहीं है, अब आप जैसा चाहें वैसा ही करें । ८३८

वह किसी डर को स्वीकार नहीं करता है, और न दण्ड देने को ही तैयार है । उल्टा दिल्ली पर अधिकार करने के लिये नित्य दौड़ें करता है । अपनी मूंछों पर बंट देता है और वह युद्धार्थ (?) आता है । वह अलुखान की, मड़हट्टी (महाराष्ट्री) बेगम की और गढ गजनौ (हस्तिनापुर-दिल्ली) की मांग करता है । हमीर चौहान बहुत जिद्दी है । वह युद्ध क्षेत्र में सक्षम होकर प्रवेश करने और अच्छी तरह युद्ध करेगा । दुर्ग के ऊपर दिन अस्त होते ही उसके चँवर ढुलते हैं और खूब प्रमुदित रहता है । ८३९

हमीर चौहान के विषय में सुनकर बादशाह का मुख मुरझा गया और उसने मोल्हण से दुर्ग का विवरण बताने के लिये कहा । ८४०

तब बादशाह बहुत अधिक क्रुद्ध हुआ और मोल्हणसी से कहा कि वह उसको दुर्ग की स्थिति आदि बतावें। उसके पास मैदान है, घाटिया या गुफायें हैं या पहाड़ हैं या विकट जंगल है। पहाड़ हैं तो कितना ऊँचा है और कितने क्षेत्र में फैला है। उसके चारों ओर कितना लम्बा चौड़ा वन है ? और हम किस प्रकार आक्रमण करें कि यहां से शिघ्रता के साथ प्रयाण करके वहां पहुंच जावें। ८४१

तब मोल्हणसी ने बादशाह से कहा कि दुर्ग के चारों ओर पहाड़ों की सात पंक्तियां (घेरे) हैं। जिस पहाड़ पर दुर्ग बना है, वह पहाड़ आठ नौ कोस चौड़ा है और लंबाई में समुद्र (संभवतः बनास नदी या कोई बड़ा ताल) से जा लगा है। उनमें दुर्ग बना हुआ है। वह अत्यन्त विकट है और बहुत ऊंचा बनाया गया है। उसके इधर पंद्रह कोस पर्यन्त और दूसरी ओर धंधेड़ा से भी आगे तक वन क्षेत्र है।८४२।

उसमें इतने पहाड़ों को बंध (परकोटों) बना कर बांधा गया है और उनको जंजीर (शृंखला) के समान बना कर दुर्ग को मध्य में ले लिया है। यह चार योजन (दो से चार कोस का नाप) की लंबाई में और दो योजन की चौड़ाई में बांधा गया है। सभी गुफाओं और घाटियों का पता लगा कर उन्हें बंधवा दिया गया है और उनमें चार गुप्त मार्ग बनाये हैं। तीन मार्ग अत्यन्त विकट हैं और एक मार्ग व्यापार के लिये खुला है।८४३।

उसके आगे एक बुलंद शहर बसा है, उसको देख कर मनुष्य सुखी होते हैं। वहां तीन सौ साठ कुएं और बावड़ियां हैं और इसके अतिरिक्त तीन सौ देवालय बने हुए हैं जो एक योजन के क्षेत्र में होंगे, उनमें छप्पन भोग (सभी प्रकार की सेवा पूजा) होती है। दुर्ग की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता। ऐसा प्रतीत होता है कि वहां इन्द्रदेव ही राज कर रहे हों, (अर्थात् वहां स्वर्ग का राज्य है)।८४४।

पुनः बादशाह ने मोल्हण से पूछा कि तुम वहां एक ही जगह बैठे रहे या दुर्ग में घूमते फिरते भी रहे ? वहां तुमने कोई विशेष बात देखी या सुनी है ? उस लड़की की बहुत ख्याति है और दो नर्तकियां भी बहुत सुन्दर हैं। यह भी कहा जाता है कि देवलदे की अलग कोई मंडली है। इन सबका पूर्ण विवरण विस्तार से सुनावो।७४५।

मोल्हन ने बताया—कि वह है तो एक लड़की, पर हीरे की कणी के समान है। वयस् (आयु में तो वह किशोरी और गौरी (आठ वर्ष की अथवा ग्यारह से पंद्रह वर्ष की लड़की, या कृशोदरी गोरी कन्या) है, पर भोली भाली बातें करती है, उसका शरीर अति नाजुक (कोमल और शरीर सोने का बना हुआ

है। उसके नेत्र चकोर, मछली या मृग के समान चंचल हैं, उसके अणियाले नयन भाले की अणी (नोंक) के समान चलते (प्रहार करते) हैं। वह अपने स्वाभिमान और ओज में वादलों में कौंधती हुई बिजली के समान है। है तो वह एक वालिका, पर हीरे की कणी के समान कांति और विष युक्त हैं। ।८४६।

उसका शरीर केशर की क्यारी (केदारिका) के समान और दीप के प्रकाश के समान प्रकाशित है। वह लीलक (नीलक वस्त्र की बनी) साड़ी पहन कर ऐसी सुशोभित होती है, मानो राजमहल में कोई सुन्दरी स्त्री खड़ी है। उसके नयन मृग के नयनों जैसे, वदन चन्द्रमा जैसा, बोली कोयल के समान है और शरीर का तेज ऐसा है, जैसा धूप में रखे सोने का होता है। उसकी पूरी बत्तीसी (दंत पंक्ति) बहुत उज्ज्वल है। उसका अनुहार (शक्ल सूरत) अप्सरा जैसी है और गति गजराज (हाथी) जैसी है। उसकी कमर सिंह की कमर के समान पतली है। मैंने रणथंभोर दुर्ग में केवल देवलदे के स्वरूप को देखा है—वह सोलह वर्ष के अंदर आयु की, सांध्यकालीन लालिमा के रुप वाली अत्यन्त सुंदरी लड़की है। ८ ७।

स्त्रियों के मध्य में वही गौरवर्ण है और उसको श्वेत वस्त्र ही अच्छे लगते हैं। उसका आहार और तृषा बहुत कम है और दोनों आंखों में नींद नहीं आती है। उसका शृंगार श्वेत फूलों का है और आभूषण भी श्वेत ही धारण करती है। उसे धवल (पवित्र) स्थानों से बहुत प्रेम है। वह धवल वृक्षों के निकट ही क्रीड़ा विनोद करती है। उसकी सभी सखी सहेलियां भी धवल (गौरवर्ण) हैं और विमल राग में गीत (संगीत) का गान करती हैं। उसके समान चतुराई में और किसी को नहीं पाया, न किसी के विषय में सुना है। वह देवताओं के मध्य छिपी हुई अप्सरा रंभा के समान सुन्दर है ।८४८।

पद्मिनी स्त्रियों का जैसा रूप कहा जाता है, वैसा मैंने दोनों नर्तकियों को देखा है। वे नृत्यकला में दक्ष और सर्वगुण सम्पन्न हैं। दोनों ही कामकंदला के समान दिखाई देती हैं। भरी जवानी में इन नर्तकियों को देखकर तपस्वी का भी तप भंग हो जाता है। जब भी वे मस्त होकर संगीत की स्वर लहरी का प्रसार करती है तो देवता, मनुष्य और ऋषि मुनि मोहित हो उठते हैं। पांच सात नर्तकियां और हैं, जो बहुत अच्छी हैं और नर्तक भी उनके पीछे छिप जाते हैं (लज्जित हो जाते है)। वह स्वर्णाभूषणों से भूषित लक्ष्मी है, जिसको देखकर मन ललचा जाता है। ८४९

उसकी राजसभा का वर्णन सुनो ! यह राजसभा उसके यश में और भी वृद्धि करती है। सभा भवन की दीवारों पर स्वर्णपत्र जड़ रखे हैं, और स्तम्भ

भी स्वर्ण निर्मित हैं, जिन्हें कोरणी करके गढ़ा गया है। उसके सारे स्थान स्वर्णमय हैं। अन्त तक स्वर्ण की (?) पड़ती है। उस सतखंडे प्रासाद पर अनेक घाट में घड़े गये रत्न जडित कलश लगे हैं। वहां दरवार में एकत्र होने वाले सभी सामंत समान स्तर के राजा हैं। सभी रेशमी वस्त्रों में सजे धजे हैं प्रभूत संपत्ति के स्वामी हैं। उसकी राजसभा का ऐसा दृश्य है। ८५०

उसके और निवास में ऐसी स्वस्थ सुन्दर धाय और वड़ारणे (प्रमुख सेविकाएँ) देखी हैं, जो अप्सराओं या पद्मिनी जाति की स्त्रियों के लक्षणों से युक्त हैं। स्वर्णाभूषणों से सुसज्जित वे स्त्रियां गजगामिनी हैं। उनके शरीर पर अनेक प्रकार की अम्बर और रेशम की बीरवहूरी के रंग के समान गहरे लाल रंग में रंगी साड़ियां सुशोभित रहती हैं। वे अदव (शिष्टाचार या अनुशासन) के साथ लज्जा प्रदर्शित करती समूह की समूह में एकत्र होकर आंखें तरेरती हुई घूमती है। ८५१

तालाब के किनारे पानी भरने के लिये आने वाली सभी स्त्रियां अत्यन्त रूपमती हैं। वे अपने शरीर पर रत्नजडित आभूषण, रेशमी साड़ियां पहने, सिर पर सोने के घड़े लेकर पानी भरने जाती हैं। वे छत्तीस ही जातियों की एक से एक सुन्दर स्त्रियां सभी सुखी हैं। वे हँसती गाती परस्पर विनोद करती भुंड की भुंड अपनी अपनी गलियों में जाती हैं। ८५२

दिन के समय जन समुदाय हर मोहल्ले से आते हैं (उत्सव में सम्मिलित होते हैं) ? रात हो जाने पर जगमग प्रकाश से शोभा और भी दुगुनी हो जाती है। स्थान स्थान पर कीर्तन, रासलीलाएं और कथाएं होती रहती है। देवी की मूर्तियों के सामने उनके भोपे नाचते कूदते रहते हैं। देवालयों और वाजार में चकाचौंध छाई रहती है और वहां लक्ष्मी (धन-सम्पत्ति) के प्रसार को देख कर अत्यन्त सन्तोष मिलता है। सभी अट्टालिकाओं की खिड़कियों में स्त्रियां गीत गाती हुई दिखाई देती हैं। इस प्रकार रणथंभोर में ऐश्वर्य और विलास जागृत है। ८५३

यह दुर्ग इतना ऊँचा है जितनी ऊँचे चीलें, कांवळियां और गिद्ध आकाश में उड़ान भरते हैं। इसका परकोट प्रकृति के द्वारा ही निर्मित है और स्थान स्थान पर शृंखलावद्ध बांधा गया है। दुर्ग में पानी खूब है। वर्षा ऋतु के समान सीरे (सारणियां) वहती रहती है। आस पास में भी प्रभूत पानी है, जिससे पर्वत हरे भरे रहते हैं। चारों ही दरों (नालों) में विकट मोड़ हैं और चौरासी घाटियों से युक्त उसके चारों ओर विकट पहाड़ हैं। उनसे आगे भयंकर जंगल है। रणथंभोर का दुर्ग लंका के समान बना है। उसके सामने दूसरे गढ गढियों के समान दिखाई देते हैं। ८५४

रणथंभोर की शोभा का वर्णन करने में मैं असमर्थ हूं। वह दुर्ग लंका के समान है, जिसके चारों ओर पहाड़ हैं। ८५५

बादशाह अलाउद्दीन क्रुद्ध हुआ और उसने दरबार लगाया और सभी दरबारियों से कहा कि दुर्ग को घेरने पर विचार करो। ८५६

मोल्हणसी ने अलाउद्दीन के सम्मुख इतनी चतुराई से बात करके उत्कंठा जगाई कि उसने अलुखान को तत्काल बुला लिया और क्रुद्ध होकर कहा कि रणथंभोर पर चढ़ाई करो। पत्र लिखकर सभी उमरावों के पास आज्ञा भेजो कि शीघ्रातिशीघ्र आकर सेवा में उपस्थित होवें। हर दिशा में अपने अहदी (शाही अनुचर) भेजे गये। बादशाह ने उन्हें परवाने दिये। ८५७

अलुखान और अन्य सभी वजीर एकत्र हुये और मिलकर बादशाह से कहा कि आप हमें सिरदारी (अधिकार) देकर विदा करें और अब आप आज्ञा दें। ८५८

तब बादशाह ने उनसे कहा कि मैं स्वय उस स्थान पर जाऊंगा। मुझको और किसी का विश्वास नहीं है। मेरे बिना काम नहीं चलेगा। ८५९

अलुखान ने निवेदन किया कि आप पहले ही न चलें। आप प्रतीक्षा करके देखो, शायद फौज भेजने मात्र से ही सफलता मिल जावें (पता चल जायेगा)। ८६०

जब अन्त में कार्य सिद्ध होना ही है तो फिर आप क्यों कष्ट करें। जब वहां किसी तरह की कोई कमी दिखाई दें तो उस समय आप अवश्य पधार जावें। ८६१

बादशाह ने अलुखान से कहा कि उस स्थान पर जावो तो सारा उद्देश्य सिद्ध हो पायेगा। वहां और किसी का काम नहीं है। ८६२

अलुखान ने पत्र लिखकर हर प्रदेश में भेजे कि आप लोगों से काम है, आप लोग तत्काल उपस्थित होवें। ८६३

अलुखान को समस्त अधिकार देकर विदा किया। उसके साथ सभी उमरावों को भेजा और साथ में प्रभूत धन दिया। ८६४

सर्वप्रथम अलुखान ने प्रस्थान किया और उसके उपरान्त अलाउद्दीन के अन्य राजा महाराजा और उमरा उमरावों ने प्रस्थान किया। उनमें पूर्व दिशा के पठान, खोखर और खुराशानी थे। सय्यद जवान भी सम्मलित हुए, जिन्हें हरावल की फौज (अग्रिम सैन्य दल) में रखा गया। शेख और मुगल आदि भी

लाखों की संख्या में आकर मिल गये। कन्नौज, वैराट, ठठा से गौरी मुसलमान आये। उड़ीसा ओर कंधार, बलख के पार्वती प्रदेशों तक के निवासी दौडे चले आये। ८६५

संवत् १३४० के माघ शुक्ला पंचमी (बसंत पंचमी) को अलुखान ने प्रस्थान किया। उसके साथ सभी पठान थे। ८६६

अलुखान प्रस्थान करके पड़ाव डालते हुए मलारणा पहुंचा। उस स्थान से उसने अपना एक गुप्तचर भेजा, जो दुर्ग में आया। उसने कहीं कोई हलचल नहीं देखी। किले में उसने सर्वत्र शान्ति व्याप्त देखी। वह गुप्तचर लौट कर मलारणा पहुंचा, और अलुखान को समस्त सूचना दी। ८६७

जब राजा हमीर को इसकी सूचना मिली तो वह स्वयं आक्रमण की तैयारी करने लगा। तब महिमाशाह ने उसको रोक दिया और निवेदन किया कि बादशाह स्वयं आक्रमण करने आवें तभी आप सामना करना। तब राव हमीर ने पूछा कि फिर किसको भेजा जावे ? महिमाशाह ने उत्तर दिया कि जिसको भी आप आज्ञा देंगे, वहीं जायेगा। तब राव ने महिमाशाह को ही प्रस्थान का आदेश दिया और युद्ध में विजय प्राप्त कर तुरन्त वापिस आने हेतु कहा। ८६८

तब महिमाशाह ने अपने साथी मंगोल से कहा कि अब क्या योजना बनाई जावे। मंगोल ने सम्मति दी कि रात के समय दुर्ग से उतर कर आक्रमण किया जाए जिससे रावजी की ख्याति हो। ८६९

महिमाशाह ने दस हजार घुड़सवार सैनिको को साथ लेकर प्रस्थान किया और चारों ओर से घेर कर अलुखान पर आक्रमण किया। ८७०

उधर दुर्ग से महिमाशाह को रवाना किया, जिसने तीसरे प्रहर (अपराह्न में) दुर्ग से उतर कर युद्धार्थ प्रस्थान किया। उसने अपने साथ दस हजार घुड़सवार सैनिक लिये और उनको चार भागों में बांटा। अलुखान की सेना निश्चित सोई हुई थी। जासूस के द्वारा दी गई सूचना के अनुसार वे असावधान (बेखबर) थे। महिमाशाह के सैनिकों ने चारो ओर से घेरा डाल दिया और उस स्थान पर पहुंच कर मारकाट प्रारम्भ कर दी। ८७२

वे तो मारधाड़ (आक्रमण) करके अलग निकल आये और अलुखान के सैनिकों में आपस में ही मारकाट प्रारम्भ हो गई। अंधेरी रात में उन्हें कुछ भी पता नहीं चला और वे आपस में ही लड-लड़कर मर रहे थे। वे लोग अलग अलग प्रदेशों से आये थे, कोई किसी को पहचानता तक नहीं था।

शस्त्रों के सतत प्रहार हो रहे थे । वे लोग चारों ओर भाग खड़े हुए । अलुखान उनमें सबसे आगे था । ८७२

जिनको मरना था वे मर गये, शेष बचे सैनिकों ने अपने अपने मार्ग पकड़ लिये । समस्त युद्ध सामग्री, वाहन (रथादिक), घोड़े, हाथी, शामियाने, बन्दूकें और अन्य हथियार बारूद, तोपें सब वहीं पड़े रह गये । बाकी माल मत्ता भी वहीं पड़ा रह गया, जिन्हें महिमाशाह ने आकर अपने अधिकार में ले लिया । युद्ध में मारे गये तुर्कों को कब्रें खुदवा कर गड़वा दिया और हिन्दू सैनिकों का दाह संस्कार कर दिया । ८७३

उसने समस्त सामग्री अवेर ली और उसे दुर्ग में भिजवा दिया । वहां जाकर वे सभी वस्तुएं राजा को नजर की गई । तब राजा ने भाट को बुलवाया और उससे कहा—कि बताओ महिमाशाह कितना बहादुर रजपूत (योद्धा) है । जिसने ऐसा अद्भुत पराक्रम दिखाया है—उसकी प्रशस्ति कहो । राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ । वहां खेम भाट ने सिंधु राग में प्रशस्ति गान किया । ८७४

अलुखान को भगा कर राव को जाकर अभिवादन किया । राजा हमीर उससे बहुत प्रसन्न हुआ और घोड़ा और सिरोपाव देकर सम्मानित किया ।८७५

खेम कवि (भाट) ने कवित्त पढा—मीर महिमाशाह और मंगोल जब टूटकर प: (आक्रमण किया) तब अलाउद्दीन के हिन्दू और तुर्क सैनिक ऐसे गिर गिर कर पड़े जैसे बसंतागमन से पूर्व शिशिर ऋतु में वृक्षों से पत्ते झड़ झड़ कर गिरते हैं । खड्ग (तलवार) के खरे (धनी) क्षत्रियों के समान उन्होंने शूरवीरों को मारा है । प्रचुर मात्रा में तम्बू, शामियाने और खेत में काटकर ली गई फसल के समान सोने की फसल लाद कर लाया है । महिमाशाह और मंगोल के बाण (अस्त्र या आज्ञा) के अधीन अलुखान की सेना को नष्ट करके, अलाउद्दीन से अवश्यमेव शत्रुता कर ली है । ८७६

हमीर ने सारा माल महिमाशाह को दे दिया, जिसे उसने प्रणाम करके स्वीकार कर लिया । उसने कुछ सम्पत्ति तो ब्राह्मण और भाटों में बांट दी और कुछ सैनिकों में वितरित कर दी । तब शहर के सभी लोगों ने निवेदन किया कि रयोंपाल और ख्योंपाल को प्रधान का पद दिया जावे । राजा ने स्वीकार करके आज्ञा प्रसारित करा दी और उसी दिन दोनों भाईयों को प्रधान के पद पर नियुक्त कर दिया गया । ८७७

उन्हें समस्त राज्य का काम सौंप दिया और भंडार की देखरेख भी उन्हें सौंप दी । राजा ने दरबान (द्वारपाल) को बुलाकर उसे समझाया कि नगर

में एक हजार असवार तक यदि कोई प्रवेश करना चाहता है, तो करने दें, इससे अधिक संख्या में आने वालों को मत आने दो। एक हजार से ऊपर कोई आते हैं, तो उनको ऊपर न चढने दें। ८७८

अलुखान भाग गया, इसके समाचार बादशाह को मिले। उसके शरीर में आग लग गई (क्रुद्ध हो उठा और हाथ मल मल कर सिर धुनने लगा (पछताने लगा)। ८७९

इतना सुनते ही वह जलभुन गया, मानों अग्नि में घी डाला गया हो। उसने वजीरों को बुलवा लिया और एक मत होकर विचार करने हेतु कहा। वेद, पुराण, कुरान आदि सब लेकर आवो और शुभ मुहूर्त (समय) का शोधन करो। हम रणथंभोर पर आक्रमण करना चाहते हैं, हम यह थोड़ा सा हठ कर रहे हैं, हमें रोको मत। चारों ही दिशाओं में स्थान स्थान पर पत्र भेजे गये। दिल्ली के बादशाह के आक्रमणार्थ प्रस्थान करते समय उसके तेज के प्रभाव से मृत्यु लोक सशंकित (भयभीत) हो गया।८८०।

बादशाह ने ज्योतिष के जानकार जोशियों को और काजी मुल्लाओं को बुलाकर आज्ञा दी कि सब एक स्थान पर बैठ कर अपने अपने ग्रंथ, किताबें देखो।८८१।

उन्होंने सर्व प्रथम योगिनी चक्र पर विचार किया और तदुपरान्त काल चक्र पर विचार किया। दशाशूल को टाल कर राहु का विचार करके, उसे पृष्ठ भाग में स्थित किया। उन्होंने भद्रा का पता लगा कर (जानकारी लेकर), सूर्य के बल को ढूंढा। शुभ नक्षत्र में तिथि देख कर, वार का निश्चय किया। नौ ही ग्रहों और बारहों राशियों को देख कर बैशाख के पवित्र मास का निर्णय लिया और प्रहर, घटी, पल आदि का लग्न शोधन करके सिद्ध योग में सिद्धि प्राप्ति के लिये प्रस्थान कराया।८८२।

सातवें घर में कर्क और मेष राशि, आठवें में कन्या और मिथुन को देखें, नौवें घर में यदि मकर और कुंभ राशि मिल जावें, दशम घर में सिंह राशि हो तो वह सबको निगल जाती है, (संहार कर देती है), ग्यारहवें घर में धन और मीन राशियां काल (अकाल) की द्योतक हैं, बारहवें घर में तुला और वृश्चिक को देखें। इस प्रकार काल गमन के विषय में बारह राशियों और छह तिथियों का भेद सहदेव बताता है।८८३।

संवत् १३५१ में अक्षय तृतीया गुरुवार के दिन बादशाह अलाउद्दीन इतनी सेना अपने साथ लेकर चढा।

पंडितों ने शुभ मुहूर्त बताया और उसी के अनुसार बादशाह ने प्रस्थान किया। उसके साथ एकत्र हुए सैन्य दलों का अब कविता में वर्णन किया जा रहा है।८८५।

इतने बड़े बड़े राजा लोगों ने सैन्य दल में सम्मिलित होकर प्रस्थान किया। उनका स्वरूप मैं युद्ध के साथ करता हूं। दोनों धर्मों (हिन्दू और मुसलमान) के राजा और खान आदि जो इसमें सम्मिलित हुए उनके नाम सुनो सभी स्थानों के नाम गिना रहा हूं। गज देश (गजनी), काबुल, उच्चा, ठठ्ठा, मध्यदेश या मधदेश, पेशावर के जितने भी खान और जाट थे, वे सब कच्छ, सौराष्ट्र और मारवाड़ के राव, राजा, झाडखंड, मेवात और बारू के, सूरत, गुजरात, पश्चिम के प्रदेश, चित्रकोट (चित्तौड़), अजमेर के सूबे के सभी राव, व्रजभूमि और ढूंढाड़ के, कामां, बहातर (भरतपुर या आगरा के पास का राजस्थान का सीमांत प्रदेश), यादवों का प्रदेश (करौली, धौलपुर), जांगल (राजस्थान का उत्तरी भाग, जो हरियाणा और पंजाब से मिला हुआ है), बांधूगढ, कन्नौज, पूरब में बंगाल, कामरूप (आसाम), ढाका, नौनेज पहाड़ी, बलख, ईडर, उज्जैन (मालवा), आसेर (नर्मदा के दक्षिण में स्थित), कीं भूमि के रोहितासगढ, गवालियर और गौंडा (गोंडवाना), उड़ीसा में जगन्नाथपुरी (पुरी), तक की भूमि के, देवगिरि, तैलंगाना, करणाटक, सूरत, खंभात, तक के भूमिपति, लाहोर, खंधार और रोम (रूम) के शाह आदि चारों ही दिशाओं के राजा रान, खान आदि चढ कर आयें। इनका कहा तक वर्णन किया जाय। बहुत समय लग जायगा। वे रात दिन चलते रहे और भक्ष्य लाते थे, वर्षा ऋतु की घटाओं के समान छा गये। वे अपने आप में अंदर ही अंदर फूल रहे थे (प्रसन्न हो रहे थे), दोनों धर्मों के जितने भी वीर थे उतने ही नमक खाते थे। बादशाह की जिननी शक्ति थी, उतनी ही सेनायें इकठ्ठी हो गई। बादशाह इतने तप तेज के बल पर दिल्ली से चला।८८६।

बादशाह ने सभी वजीरों के साथ वजीर अलुखान को भी बुलवा लिया और सभी सैन्य दलों के एकत्र हो जाने पर आज्ञा दी कि वे अब प्रस्थान करें। ८८७

सुल्तान ने जब बाक्शी (फौजबक्शी ?) से पूछा कि सभी उमराव आ गये हैं क्या ? तो बक्षी ने बताया कि हिन्दुओं के सैनिकों की संख्या तेरह लाख है और तुर्कों की चौदह लाख।

अलुखान ने कहा—बादशाह सलामत ! अब आप प्रस्थान करें। सभी उमराव आ गये हैं। हरोळ अग्रिम सैन्य दल को आज्ञा दें कि वे अपने पड़ाव (विश्राम स्थल) देखते चलें। ८८९.

निसरतखां हरावल में और फतेहखान चंडौल (पृष्ठ भाग) में रहे। हुसेनखां बाई ओर और ततारखां करावल में रहे। ८९०

बादशाह के आह्वान पर इतनी सेनाएँ इकट्ठी हुई, मानो भाद्रव मास की घटाएँ उमड़-घुमड़ कर उलट आई हो। घोड़ों की टापों से उड़ती धूल ने आकाश को ढंक लिया। उस धूल में ध्वजाएँ ऐसे फहरा रही थी मानो बिजलियां चमक रही हो। तांबे की कुंडियों वाले नगाड़ों (त्रंबक नगाड़े) के भयंकर निनाद घनघोर घटाओं की गर्जना से प्रतीत हो रहे थे। उमराव लोग अपने चंचल घोड़ों को नचा रहे थे। पानी पंथी घोड़े ऐसी छलांगें लगा रहे थे मानो उड़ रहे हो। ताजी, तुरकी और कई अन्य जातियों के घोड़े क्षिप्रगति से चलते हुए खुरों से धूल उड़ाते थे। कच्छी घोड़े और गुंडगिरि (मुल्तानी) घोड़े अत्यन्त तेज गति से चल रहे थे। अनेक सैन्य टुकड़ियां जो छूटकर अलग रह गई थी, वे हाथों में भाले लिये इधर-उधर भटक रही थी। कई उमराव मदमस्त, मदगलित हाथियों के दलों को ललकार रहे थे। गाड़ियों का कहीं कोई पार नहीं था, जिनमें तोपें चढी थीं। उनमें श्वेत बैल जोते हुए थे, या हाथी धक्का दे रहे थे (खेंच रहे थे)। ऊँटों का भी कोई पार नहीं था, जिन पर रखकर शुतरनाल छोटी तोपें चलाई जाती हैं। सब कुछ ध्वस्त कर देने वाली बड़ी तोपों, देगो (खाना पकाने की बड़े बर्तन) और जम्बूरों (जम्बूरक-ऊँटों) पर रखकर चलाई जाने वाली छोटी तोपों तथा बाण (तीर कमान या तोपों) की अपार अगणित संख्या थी जिनके मुँह के पास आदमी बैठे रहते हैं और जिनमें कई मन गोला बारूद भरा जाता था। पैदल सैनिकों का कोई पार नहीं था। वे ऊबड़-खाबड़ मार्गों में ही दौड़ रहे थे। जिनके हाथों में बन्दूकें और धनुष बाण थे, उनका कोई पार नहीं था। सेनाओं के साथ जांगड़ जाति के व्यक्ति या ढोली, दमामी उच्च स्वर में युद्ध के गीत और नटवे सिंधुराग गा रहे थे। वे शहनाई, सिंधुवा और रणतूर तथा करनाळ वाद्य बजा रहे थे। सेनाओं के चलते चलते जो ऊबड़ खाबड़ भूमि थी, वह मार्ग (सड़क) बन गई और जो दुर्गम स्थल थे वे सीधे चलने योग्य मार्ग बन गये। सारे देश के लोग वहां आकर इकट्ठे हो गये, जो वहां समा नहीं रहे थे। वे रात दिन चलते हुए कह रहे थे कि हम रणथंभोर जा रहे हैं। ८९१

वे गौर और गजनी से, चलकर दिल्ली में एकत्र हुए। खंभात, के खोखर और खुराशान के, बंगाल और तेलंगाना के, पूंगळ के, कच्छ और कामरूप के तथा ईडर प्रदेश के सैनिक दल अलाउद्दीन की सेना के साथ मिलकर रणथंभोर दुर्ग के समीप आकर इस प्रकार इकट्ठे हो गये मानो मच्छर उमड़ कर आये हो। हमीर उन्हें देखकर हंस रहा था, जैसे कोई बिणजारों का टांडा (बनजारों के बैलों का समूह) आकर ठहरा हो। ८९२

इतने सैन्य दलों के साथ बादशाह ने प्रस्थान किया। स्थान स्थान पर पड़ाव डालते हुए वे टोडा में आये और वहां निवास किया। उन्होने वहाँ के भोमियों को बुला कर रणथंभोर का मार्ग पूछा जिससे सारी सेना जा सके। तोपगाड़ियों को निकलने में कहीं कोई बाधा न आवें। ८९३।

वहां से भोमिये को साथ लेकर वह सीधा लाखेरी आया। लाखेरी के दरे में उतर कर उसको पार करता हुआ छांयण में आकर उसने पड़ाव डाला। वहां बादशाह ने पूछा कि अब दुर्ग कितना दूर है? तो वजीर ने बताया कि यह अब पांच छः कोस की दूरी पर है। तब बादशाह ने कहा कि फिर तो कल ही आक्रमण करके मैं अलुखान की पराजय का बदला लूंगा। ८९४।

छांयण के लोगों से पूछ कर बक्शी ने बादशाह को बताया—कि दस पांच (१०×५=५०) ऐसे पटाभर हाथी गुंजार करते रहते हैं जिनके कपोलों पर भंवरे गुंजार करते रहते हैं। सताईस लाख घोड़े (घुड़सवार सैनिक) और असंख्य राजा; पांच लाख पदाति सैनिक, और सुसज्जित तेरह (लाख) पत्थर फेंकने वाले; सात लाख रक्षक, (मफरंद) तेरह लाख निम्न कोटि के चाकर अलाउद्दीन की सेना में देखकर देवा और मनुष्य ने सिर धुन लिया (आश्चर्य किया)। एक राव की सेवा में रहते हैं—सवा लाख चोहान धनुर्धारी। ८९५।

गुप्तचर ने पता लगाकर राजा से कहा कि—बादशाह की सेना आई है—उसका विवरण कहा नहीं जा रहा है। ८९६ तब राजा ने अपनी सेना का अभिवादन (?) लिया। ८९६।

उसकी सेना में सवा लाख श्रेष्ठ जाति के घोड़े; दस लाख पैदल सैनिक, पचास हजार बरकमदाज (सदैव सन्नद्ध रहने वाले बंदूकची), दस हजार धनुर्धर, एक हजार मदभरते हाथी; एक हजार आग उगलने वाली तोपें; पांच सौ नगाड़े जो रातदिन लगातार बजते रहते हैं। (सहर) (११) ग्यारह हजार धनुर्धर, इतनी सेना रणथंभोर में रहती थी। ये सभी रात दिन चारों दरों और घाटियों में सावधान रहते थे। ८९७।

दोनों ओर से होने वाले कोलाहल से सारे पर्वत गर्जना कर रहे थे। चारों ओर बजने वाले नगाड़े ऐसे प्रतीत होते थे मानों बादलों की कड़कड़ाहट ही रही हो। सभी उत्साहित होकर कह रहे थे कि हमें आज्ञा दें। चौसठ ही योगिनियां एकत्र होकर मंगल गान गा रही थी। ८९८।

हमीर के जितने भी सैनिक पहाड़ों में नियुक्त थे वे रात के समय पहाड़ों से नीचे उतर कर अलाउद्दीन की सेना पर टूट पड़े। ८९९।

प्रातःकाल होने पर जब सूरज उगा तब बादशाह ने अपने प्रधान को बुलाकर कहा कि यहां पड़े पड़े क्या विचार कर रहे हो, दुर्ग पर आक्रमण करके विजय प्राप्त करो। तब वजीर ने बादशाह से कहा कि दुर्ग पर एक बार और किसी को भेज कर बात करना चाहिए। वे या तो हमसे आकर मिलेंगे या हमारी कोई बात मान लेंगे, अन्यथा जो कुछ आपने करने का निश्चय कर रखा है, वहीं करेंगे। ९०० ।

तब एक खत्री ने कहा कि यदि मुझे आज्ञा दें तो मैं वहां जाऊं। या तो मैं उनको अधीनता स्वीकार करा दूंगा या वे मांगी गई वस्तुएं देना स्वीकार कर लेंगे। मैं उसको अपने अधीन कर लूंगा—वह अपनी समस्त गति भूल जायगा। बादशाह ने उसको आज्ञा दी और उसको सभी बातें समझा दी। वह बादशाह से विदा होकर अह्लादपुर पहुंचा और राजा से आकर मिला। ९०१ ।

हे हमीर ! आप मन में विचार करो, यह दिल्ली का सुल्तान है। इसने चारों दिशाओं को वश में कर लिया है, और खुराशान देश को अपने अधीन कर लिया है। ९०२ ।

प्रतिज्ञा करके चंद्रवंशी खत्री दुर्ग में आया और राव से कहा कि हे राव हमीर ! मुझे बादशाह ने तुम्हारे पास भेजा है। वह बादशाह अलाउद्दीन इस्लाम को नहीं मानने वालों का (हिन्दुओं) को नष्ट करने वाला है। इसके पास चारों दिशाओं से दंड (कर) मिल रहा है, और लंका से सोना आया है। हे हमीर ! अपने मन का मंथन कर तूं, समझ और इसको हाथ जोड़ कर दंड दे दे। अलाउद्दीन ने जिद करके आक्रमण किया है, अतः सुनते ही दुर्ग से निकल कर उसके पांवों में जा पड़ा। ९०३ ।

राव हमीर ने उत्तर दिया कि अलाउद्दीन आया तो बहुत अच्छा किया, हमें इसकी ही इच्छा थी। मेरा इसके साथ सदा से झगड़ा था अतः मैं उसकी बाट देखता रहा हूं। ९०४ ।

इसे देवगिरि मत समझो और न यादव नरपति (राजा) ही। इसको गुजरात मत समझो, न कर्ण चालुक्य ही जो भाग जाता है। इसको मंडोर मत समझो, वह तो हेलों (महत्तरों) के साथ रहा है। इसको चित्तौड़ मत समझो जिसको धोखे से जीत लिया। अरे तूं अलाउद्दीन है, तो मैं भी हमीर हूं। मैं मजबूत कपाट की भांति विरुद्ध खड़ा हूं। रणथंभोर दुर्ग में युद्ध

करने पर अब तुम्हें इनके साथ रणथंभोर की शक्ति में अंतर का पता चल जायगा। ६०५।

तब खत्री ने कहा—हे हमीर ! अलाउद्दीन कहता है कि वह खानों को तो पांच दिन में ही कुचल देगा। वह पहले रणथंभोर को अधीन करके, दूसरे दुर्गों को बाद में जीतेगा। वह अहंकार में ग्रस्त है. इसी कारण से उसने समस्त उमरावों को बुला लिया है। वह भयंकर विद्रोह करा देता है, अत: सभी बाद शाह को मना रहे हैं। सत्ताईस लाख की फौज को सजा कर वह दुर्ग रणथंभोर में अडा हुआ है) युद्ध करना चाहता है। हे हमीर ! तूं उत्तर नहीं दे रहा है और कहता है जैसे कोई टांडा (पशुओं का समूह आकर) पड़ा है। ६०६।

हमीर ने उत्तर दिया कि मैं भयंकर युद्ध करूंगा। यदि अलाउद्दीन ने देवगिरि पर विजय प्राप्त करली है, तो वे योद्धा कायर थे। ६०७।

हे पुहमिराय सुन ! राम और रावण के मध्य, बाली और सुग्रीव के मध्य युद्ध, कर्ण और अर्जुन के बीच, और दुशासन और भीम के मध्य युद्ध के समान ही यह कल ही चहुवानों का युद्ध हुआ है। धीर (पुंडीर) के समान सुरतान का छत्र कट जायगा। तूं पवित्र आत्मा है, विचार कर, पुंडीर द्वारा-यवन शत्रुओं के समान कट जायगा। यह राजा हमीर और उसके शत्रु के बीच पुराना बैर पुन: उद्घटित हुआ है। ६०८।

धीर पुंडीर—(पृथ्वीराजरासो) धीरपुंडीर चंदसेन पुंडीर (जो कन्नौज की लडाई में मारा गया था का पुत्र था। वह सौ सामंतों में से एक था। जालंधरी देवी के प्रसाद से अष्ट धातु मिश्रित तीस मन वजनी कठोर जेतखंभ (विजय स्तंभ) पर उसकी सांग का प्रहार करने पर एक ही बार में पार हो गया। पृथ्वीराज ने प्रसन्न होकर उसको हिसार सहित पांच हजार गांव, एक झंडा तथा बहुत से हाथी, घोड़े आदि धीरपुंडीर को पुरस्कार स्वरुप देकर सामंतों का सरदार नियुक्त किया।

उसने शहाबुद्दीन को जीवित पकड़ने की प्रतिज्ञा की थी, जिसे उसने पूरा कर दिखायी (१२ वा खंड)

धीर का पुत्र पावस पुंडीर हिसार का राजा था। उसने लाहेग पर आक्रमण कर लूट लिया।

खत्री ने कहा कि—मक्का में स्वर्ग की ज्योति के रूप में बादशाह का नाम हर घर में प्रसिद्ध है। इस बादशाह के भय से रूम, शाम आदि देश भयभीत होकर सिर झुकाते हैं। उनके हृदय इसके भय से कांपते रहते हैं। इसके राज्य की सीमा आसाम के उस पार तक है। तैलंगाना और कर्णाटक

इसको कर देते हैं। इसने द्वारिका और जगन्नाथपुरी (उडीसा) तक समस्त जंबूद्वीप को जीत लिया है। उसने काश्मीर के पंडितों का संहार किया जिनके जनेऊ (यज्ञोपवीतों) का वजन नौ मन के बराबर था। उसने वहां के सभी देवालय ढहा दिये। जब यह तुमसे निमट जायगा तब सेतुबंध (रामेश्वर) की ओर प्रस्थान करेगा। ९०९।

राजा ने उत्तर दिया—हे पुहुमीराय ! मैं तुमसे कहता हूं कि तू वापिस लौट जा। तुम्हारा हजरत (बादशाह) यहां से जो मांगता है, वह तुम कभी प्राप्त नहीं कर पावोगे। ९१०।

तुम यहां रहो या लौट जावो, यहां तुम्हारा कोई काम नहीं बनेगा। बादशाह जो कुछ करना चाहता है करें, यहां से उसको कुछ भी नहीं मिलने है। यहां तो तलवारों के प्रहार होंगे अथवा पत्थर लो (पत्थरों की मार पड़ेगी)। यहां तो ये धोकड़े और खैर के वृक्ष हैं, जिनका भार (बोझा) गांठ में बांध कर ले जावो। मैं तुम्हारे डराने से डर नहीं जाऊंगा। जो तुमने करना सोचा है, वही करो। राव हमीर ने कहा कि हे पहुंमीराय सुनो ! तुम व्यर्थ ही में बीच बचाव के लिये आ जा कर क्यों मर रहे हो।९११।

पहुमीराय खत्री ने जितनी बातें कही, उनमें से राव ने कोई बात नहीं मानी। जब उसको मारने के लिये अपनी नजर डाली तो वह वापिस लौट गया।९१२।

चारों ही दरों के घाटों में सैनिक बैठे रहते थे। सारे दरवाजे खुले रहते थे। वे किसी प्रकार का कोई भय नहीं मान रहे थे।९१३।

खत्री ने बादशाह को जाकर कहा—

खत्री बादशाह के पास लौट गया और जाकर अभिवादन किया और कहा—कि हिंदू राव हमीर कोई बात नहीं मानता है अतः कोई काम सिद्ध नहीं हो सका।९१४।

हे बादशाह सलामत ! मेरा निवेदन सुनें ! हिंदू राव कोई भी बात मानने को तय्यार नहीं है। मैंने सभी बातें सोच समझ और समेट कर कही, पर वह अपने मन में कुछ भी भयभीत नहीं है। उसके मन में बहुत अधिक गर्व है। उसके उत्साह (अभिमान) में पहाड़ या आग भी नहीं समाते हैं। वह आजकल में ही लड़ाई करेगा। वह लड़ने के लिये स्वयं दौड़ कर सामने आयगा। आपने जो कुछ करने को विचार किया है, वह करे। इसके अतिरिक्त प्रपंचादि अनेक उपाय हैं। दीपक लेकर देखें कि यह वह अग्नि तो नहीं है।९१५।

सुल्तान यह सुनकर भभक उठा और खड़ा होकर उसने अपनी कमर बंधवाई (तय्यार हुआ) और आदेश दिया कि वह (अलु) खान से कहे कि अविलंब आक्रमण कर दें। वह क्रुद्ध होकर सेना लेकर दिन भर दरे पर डटा रहा। वहां भयंकर युद्ध हुआ, जिसमें निसरतखां मारा गया। चार प्रहर भयंकर युद्ध करते बीते, तब सूर्यास्त हो गया। तब बादशाह लौट कर अपने डेरे पर गया और निसरतखां को कब्र में दाखिल किया।९१६।

बादशाह के दांत खट्टे हो गये, बादशाह का भतीजा युद्ध में मारा गया। वह हाथ मल मलकर सिर पीट कर रो रहा था और कहता था कि मेरे सिर पर कलंक (नीला टीका) लग गया है।९१७।

वह प्रपंच (छल कपट युक्त उद्योग) तो बहुत अधिक कर रहा था, पर उसका कोई बस नहीं चलता था। तब उसने दुर्ग के चारों ओर घेरा डालने की आज्ञा दी।९१८।

उसने मुसलमान सेना को अपने पास और हिन्दुओं को पश्चिम की ओर रहने की आज्ञा दी और कहा कि पहाड़ों में सर्वत्र व्यवस्था करो, कोई स्थान खाली नहीं रहना चाहिए।९१९।

एक ओर वे बनास तक फैले हुए थे और दूसरी ओर हिंदवाड़ तक। बलौंडणी से लगा कर खंडार के बीच में जिसका आखरी छोर खंडार में था।९२०।

अब वह क्या खायगा, सभी पहाड़ों पर अधिकार कर लिया है। दुर्ग में इतना अन्न कहां होगा। मैं तो यहां वर्षों तक बैठा रह सकता हूं।९२१।

पहाड़ों से सैनिक उतर कर प्रतिदिन रात में आक्रमण करते थे। वे मारो मारो करते हुए पहाड़ों में चढ जाते और राजा उनकी प्रशंसा करता था।९२२।

दुर्ग में जितनी खेती योग्य भूमि थी, उसमें किसान धान्य बोते थे। वहां सभी प्रकार की फसलें (अ-जिराअति) उत्पन्न होती थी। जहां पानी होता है, वहां शक्ति होती है या सिंचाई होती है।९२३।

तब बादशाह ने सभी उमरावों को बुला कर विचार विमर्श किया। जब सभी योद्धा आकर बैठ गये तब उसने कहा—इसके पूर्वजों और हमारे पूर्वजों के बीच सदा से शत्रुता चली आई है। जिन्होंने इन पर आक्रमण करके बहुतों को मार डाला और इन्होंने भी हमारे अनेक बड़े बडेरों का संहार

किया है। हमने इनको दिल्ली से और फिर अजमेर से भी निकाल बाहर किया था—तो भी इनका छत्ता अभी तक नहीं टूटा है (शक्ति कमजोर नहीं हुई है।) ये पुनः बाड़ (गन्ने के खेत) की भांति बढ गये हैं, बहुत हो गये हैं।९२४।

और पुनः मेरी बात सुनो ये दोनों ही मेरे अलग अलग भागीदार हैं। पहला हमीरदेव और दूसरा रामदेव (देवगिरि)। इन्होंने मुझे बहुत कष्ट दिये हैं। पूर्व जन्म में मैं नाग (कालिया नाग) था और इनमें से एक कृष्ण (कन्हैया) और दूसरा कलील था। जब मैं हिमालय में जाकर गल गया तो इन दोनों ने भी मेरे साथ कष्ट पाया। उस समय तो कर देकर ये मुक्त नहीं हुए पर अब तो मेरे करोड़ों कर इन पर हैं। मैं इन्हें पकड़कर चिमटे से मसल न दूं, तो मेरा नाम अलाउद्दीन नहीं। ९२५।

अब अल्लाताला की कृपा हो जाय (विश्वास दें) तो मैं फिर इनका छाता (रक्षा स्थल, दुर्ग) ध्वस्त कर दूंगा। इन सबको घेर कर मार डालूंगा। पृथ्वी पर इनका नामोनिशान तक मिटा दूंगा। मैं इसको अपनी आंखों से देख लूं तो बहुत कुछ काम पूरे कर लूंगा। ९२७।

उसने सारे पहाड़ पर घेरा डाल दिया और अपने डेरे (पड़ाव, चौकियां) स्थापित कर दिये। राव हमीर के सैनिक पहाड़ (किले में) रह कर तोप के गोले और बदूकों से गोलियां वर्षा रहे थे। वे (बादशाही सैनिक) कोस दो कोस दूर ही रहते थे। पहाड़ (दुर्ग) की तलहटी में कोई नहीं आता था। इस प्रकार लड़ते हुए दो वर्ष बीत गये, तब बादशाह ने और ही उपाय किया। ९२८।

अलाउद्दीन ने छायण में डेरे डाल रखे थे और राव हमीर शिकार खेला करता था। चौरासी ही घाटियों के मार्ग से उसके पास अपार राशन सामग्री आदि आ रही थी। ९२९।

बादशाह के कारखानों में सभी प्रकार की विद्याओं को पढाने के लिये शालाएं थी। अनेक स्त्रियों को वहां कुट्टिनीविद्या (दूतरस) सिखाई गई थी, उनका पाताल तक में प्रवेश था (आना जाना था)। ९३०।

बादशाह ने दो दूतियों (कुट्टिनी स्त्रियों) को बुलाया। वे भी सोलह वर्ष की आयु वाली थीं। उन्हें कुट्टिनियों के हुनर का इतना ज्ञान था कि वे आकाश के तारे तक तोड़ कर ला सकती थी (असंभव को संभव कर सकती थीं। रोते हुए आदमी को हंसा सकती थी और रूठे हुए को क्षणभर में मना

सकती थीं। वे अत्यन्त रूपवती और अनेक विद्याओं में दक्ष थीं, बहुत अधिक चतुर थीं और संगीत कला निपुण भी। ९३१।

उनको ज्योतिष का भी ज्ञान था, उनकी बराबरी करने वाला और कोई पंडित नहीं था। उनकी समता योगी, जती, सन्यासी, भगत कोई भी नहीं कर सकते थे और न कोई तर्कविद्या, काव्य सृजन में ही कोई विद्वान् उनके बराबर था। वे टामण-टोणे (तांत्रिक विद्या), मारण मोहनादि मंत्र, वैद्यक और यंत्रादिक में भी शास्त्रार्थ करना जानती थी। वे अनेक रूप (स्वांग) बना कर पाखंड करती थी और उन्मत्त होकर अनेक चतुराईपूर्ण कार्य करती थी। ९३२।

बादशाह ने उनको समझाया कि तुम रणथंभोर जाकर देवलदे को लेकर आवो। यदि तुम उनको ले आवोगी तो तुम्हें मुंह मांगा पुरस्कार दिया जायगा। आज तुमसे काम आ पड़ा है, जो भी तुम्हारे ऊपर खर्चा हुआ है और तुम्हें खिलाया पिलाया गया, आज ही के दिन के लिये तुम्हारा पोषण किया गया। तुमने जो हमारा नमक खाया है, उसका ऋण उतारो। ९३३।

बादशाह ने अमूल्य महमूदी वस्त्र मंगवाया और उससे वस्त्र सिलवा दिये। उन वस्त्रों को पहन कर उन कुट्टनियों ने साध्वियों सा रूप श्रृंगार बना लिया। हाथ में चंवरी और पात्र लिया, कंधे पर पुस्तकें और कागज आदि टांग लिये और हाथ में आसा (तपस्या के लिये आवश्यक काष्ठ-उपकरण) लेकर दोनों ने अत्यन्त आकर्षक रूप बना लिया। ९३४।

उन्होंने कंठ में मोतियों की माला पहनी और हाथ में अलग से हीरों की माला (स्मरणी) लेली। इनके अतिरिक्त और भी पदार्थ लेकर गुप्त रूप से गठड़ी में बांध लिया और मार्गादि के खर्च के लिये प्रभूत मोहरें (स्वर्ण मुद्रायें) भी बांध ली। मुहूर्त साध कर वे दुर्ग के लिये रवाना हुई। जो भी मार्ग में उनसे प्रश्न पूछता, उनको वे जवाब देती कि उन्हें देवलदे बाई ने बुलवाया है। ९३५।

बाई देवलदे का नाम लेने पर उन्हें किसी ने नहीं रोका और वे दोनों किले में जा पहुंची। वे आकर किले में उचित स्थान ग्रहण कर रहने लगीं। वहाँ उन्हें जिस किसी ने भी देखा, वे उसकी प्रशंसा करते थे। एक तो उनका मायाजाल, दूसरा उनकी जवानी के साथ सौंदर्य, मूल्यवान वस्त्र और उनका ज्ञानी होना इसके प्रमुख कारण थे। देवलदे को जब इनकी जानकारी मिली तो उसने उनको अपने पास बुला लिया। ९३६।

उन्होंने देवलदे को आशीर्वाद दिया, दोनों हाथ जोड़ कर, चरण स्पर्श किया। आज्ञा मिलने पर स्थान ग्रहण किया और देवलदे ने उनसे ज्ञान चर्चा की। देवलदे इससे अत्यन्त खुश हुई। उसकी सहेलियां भी हर्षित हुई। देवलदे ने उनका बहुत स्वागत सत्कार किया और उनको प्रतिदिन आने के लिये कहा।९३७।

देवलदे ने पुन: उनसे पूछा कि वे कहां रहती हैं और अब कहां जायेगी? इतनी विद्याएं आपने कहां से प्राप्त की और इस आयु में यह सन्यासिनों का भेष क्यों धारण कर लिया है। आप किस जाति की और किनकी पुत्रियां हैं। अपने परिवार को छोड़कर इतनी नीचे कैसे आ गई। आप भूखी या निर्धन भी नहीं दिखाई देती, आपके पास प्रभूत धन है।९३८।

सुनकर कुट्टिनियों ने हंसते हुए उत्तर दिया कि जो बात हम कहती हैं, वे मानो। पूर्व दिशा में उड़ीसा नाम से एक प्रदेश है—वहां हमारे पिता रहते हैं। उस देश के वे ही राजा हैं। हमें सारी बात बताते हुए लज्जा आती है। आप पूछ रही हैं, इसलिये उत्तर देना पड़ रहा है। अब उस बात की शर्म कैसे, क्यों करें।९३९।

हमारे पिता दोनों भाई भाई हैं। उन दोनों के कोई पुत्र नहीं हुआ, हम दोनों कन्याएं ही हुई। हमारी बारह वर्ष की आयु तक उन्होंने हमें लाड प्यार से पाला पोषा और उसके बाद विवाह कर दिया। दैवगति या संयोग ऐसा हुआ कि हम दोनों के पति देश छोड़कर कहीं चले गये।९४०।

उन दोनों भूमिपतियों ने अपना राजपाट छोड़ दिया और योग (मुनिव्रत) धारण करके तीर्थों में रमण कर रहे हैं। हमने पांच वर्ष तक तो उनकी प्रतीक्षा की, पर उनके कोई समाचार नहीं मिले। उनके बिना हमारी भूष बुझ गई, हमें सब कुछ निरर्थक लगने लगा है। हमें हमारे वस्त्र भी शरीर पर नहीं सुहाते। अपने प्रियतमों के बिना हमें न पानी अच्छा लगता है और अन्नाहार। हमारी आंखों में नींद तक नहीं आती है।९४१।

प्रियतम के बिना हमारे महल हमें सांप की तरह लगते हैं (काटने को दौड़ते हैं।) हमें हमारे घर का आंगन या स्थान सब कुछ बुरे से लगते हैं। प्रिय के अभाव में खेलना, कूदना, आमोद प्रमोद सब कुछ बुरे लगते हैं। इसीलिये हम दोनों प्रियतमों के अभाव में घर छोड़ कर दूर चली आई हैं। पर प्रियतमों के बिना कहीं भी हमको सुख शान्ति नहीं मिलती। न हमें तांबूल सेवन अच्छा लगता है और न आंखों में काजल और भाल पर बिन्दी ही। जहां भी हम खड़ी होती हैं, हमें नहीं सुहाता, मन में उन्हीं का नाम रटती रहती हैं।९४२।

प्रियतम के न होने से हम अकेली ही अपनी शय्या में जाती हैं, जहां इस भरी जवानी में हमको कामदेव सताते रहते हैं। अनेक उपाय कर लिये, पर वे हमें अच्छे नहीं लगे। रात दिन हमको कहीं शान्ति नहीं मिल पा रही है। हमें सभी बनाव श्रृंगार आग की भांति जलाते रहते हैं। इसी पीड़ा के कारण हम घर से भाग कर निकल आई हैं। इस अवस्था में बिना प्रियतम के आपको कैसे सुहाता है, आप धन्य हैं।९४३।

अब हम सभी तीर्थों की यात्रा पर जायेंगी। यदि हमारे पति मिल गये तो हम वापिस घर लौट जायेंगी—अन्यथा सभी तीर्थों में स्नान करेंगी। एक उद्देश्य लेकर निकली हैं, जिससे दो की सिद्धि हो, अन्यथा सभी तीर्थों में यात्रा तो कर आयेंगी। हमारा मन तो हमारे प्रीतम में बसा है या तो वे मिल ही जाते हैं अन्यथा भटकना तो है ही।९४४।

उड़ीसा में हमारा जन्म हुआ और इन्द्रवन में हमने अनेक बार आकर स्नान किया है। जगन्नाथ की यात्रा करते हुए भी हम आई हैं। हमने गयाजी में जाकर पिंडदान भी किया है। नेमिषारण्य और मीसर (कुरुक्षेत्र में स्थित एक तीर्थ)❀ भी हमने देख लिया है। अयोध्या और प्रयाग को भी अच्छी तरह देखा है। बनारस में हम कई दिनों तक रहीं और वहां रहते हुए ज्योतिष का बहुत ज्ञान प्राप्त किया।९४५।

हमने गंगाजी के गंगोदक का पान किया। केदारेश्वर के कंगन लिये। हरिद्वार को भी भली भांति देखा, बद्रीनाथजी हम गई हुई हैं। उसके बाद हमने पुष्करजी में स्नान किया और वहां वराहजी के दर्शन किये। आपकी महिमा सुनी है तो आकर आपके दर्शन कर लिये हैं।९४६।

तब बाई देवलदे ने उन्हें पूछा कि अब आपकी कौनसी कामना बाकी रह गई है। कुछ दिनों के लिये यहीं रह जावो और प्रतिदिन हमको अपने दर्शन दो। (कुट्टिनियों ने कहा कि) अब हम गोमती नदी में स्नान करेंगी और उसके बाद गिरनार जाकर दर्शन करेंगी।९४७।

जहां हमारे तीर्थंकर, हमारे प्रिय नेमिनाथजी विराजमान हैं। जहां अनेक प्रकार के देवालय हैं। हमारी इच्छा वहां जाने की हो रही है। हम

❀ मिश्रक = कुरुक्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत स्थित एक तीर्थ, जिसमें किया हुआ स्नान सभी तीर्थों में किये गये स्नान के समान फल देता है। महाभारत वन पर्व—४३/२९।

आबू शिखर देखेंगी, वहीं जंबूमार्ग※ में स्नान करेंगी। वहां से गोदावरी नदी और सेतुवध जायेंगी और सभी अड़सठ तीर्थों के स्नान करेंगी।९४८।

हम दोनों इसी विश्वास पर घर से निकली हैं कि दोनों में से किसी एक फल की प्राप्ति तो हो जायगी। हमने हमारे मन में इतनी बातों के लिये संकल्प लिया है—तो भगवान् कहीं तो हमारी सहायता करेगा। तब देवलदे बोली—तुम दोनों दुविधा में कैसे पडी हो। तुम्हारा जी तो अपने प्रियतमों । है, फिर तीर्थ यात्रा का फल कैसे प्राप्त कर सकती हो।९४९।

(कुट्टिनियों ने उत्तर दिया)—हे बाई ! आप कैसी बातें कर रही हैं। बिना प्रियतम के स्त्री कैसे रह सकती है। कोई देवांगना हो या राजकन्या, राजा हो या रंक, पशु हो या पक्षी या सन्यासिन, इस सुख को छोड़ कर दूसरा कौनसा सुख अच्छा हो सकता है। आप हमें उस तरह का और कोई सुख बतावें। तुम इस जन्म को खोकर अगला जन्म भी नष्ट कर दोगी। हम देखती हैं कि आप कैसे रहोगी।९५०।

देवलदे ने कहा कि—मुझे इस तरह के सुख का कोई ध्यान नहीं है। तुमने ऐसी बात क्यों कही। तुम्हारी बातों को सुन कर मुझे आश्चर्य हो रहा है।

हमारी प्रतिज्ञा (संकल्प) तो हमारे प्राणों के साथ ही समाप्त होगी। पर तुमने इसको अपने मन में हंसी के योग्य समझा है। साध्वियों कहा कि यह कोई अधिक नहीं निभाया जा सकता और यह गोपिका (राधा) के यौवन की भांति समाप्त हो जायगा। ९५१।

आपने ही अपनी इच्छा से विवाह नहीं किया है, या आपके पिता ने विवाह नहीं किया। हमें बतावें कि इसका क्या कारण है। तब देवलदे ने उनसे कहा कि मेरे लिये ऐसा कोई योग नहीं बन सका है। मेरे पिता के समान और कोई नहीं है। उनका विचार वे ही करते हैं और मुझे भी यह बात अच्छी नहीं लगती। मेरे संपर्क में कोई मनुष्य नहीं आता है। (या मेरे भाग्य में ऐसा कोई पुरुष नहीं आयगा। ९५२।

※ जम्बूमार्ग—आबू के पास स्थित एक तीर्थ जो देवताओं, पितरों और ऋषियों से सिंचित है, जहां जाने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है। (२) बूंदी जिले में केशोरायपाटन भी जंबूमार्ग के नाम से प्रसिद्ध है। महाभारत वन पर्व—८२/४०-४१, अनु. २५/५१

तब दूती ने पुन: कहा—जिस के घर में कुमारी कन्या बारह वर्ष की आयु से अधिक की हो जाय, उसके कुल को दोष लगता है। यह बात राव राजा सभी जानते हैं। क्या तुम्हें इसमें आश्चर्य नहीं होता है। कोई अपने वंश का, वर्ण का, जाति का उपयुक्त लड़का और उसकी घर बार देखकर विवाह बंधन में बंध जावो। ६५३।

तब देवलदे ने उनसे कहा कि तुम मेरी बात को समझ नहीं रही हो। एक पंडित मेरे पिता के सम्मुख इस प्रकार बात कह कर उनके मन में दृढ़तर रूप से बैठा गया है कि तुम इस लड़की का विवाह तीस वर्ष की आयु के बाद करना, उससे पूर्व मत करना। उन्होंने अपने मन में प्रण ले लिया है और मेरी भी इससे पूर्व कोई इच्छा नही है। ६५४।

(दूतियों ने कहा)—कोई ब्राह्मण बहका गया—पर ऐसी बात कहीं भी नहीं होती है। ऐसे माता पिता के हृदय (मस्तिष्क) को धन्य है, जो ऐसी बात मानकर उन पर व्यवहार कर रहे हैं। आप उन्हें क्यों नहीं कहती है—कि वे इस काम (विवाह) को संपन्न करावें। उन्हें आपकी शर्म नहीं आती है। और दूसरा भी उनको कोई नहीं समझाता है क्या।९५५।

देवलदे ने उनसे फिर कहा—तुमने ऐसी बात क्यों छेड़ दी है। यदि मेरे पिता के मन में ऐसी बात आयगी भी तो वह मुझे अच्छी नहीं लगेगी। यदि वे मेरे लिये वर ढूंढने के लिये इधर उधर फिरें या मैं अपनी अच्छानुसार (विवाह) करूं तो मुझसे नहीं बोलेंगे। तीस वर्ष से ऊपर आयु होगी तब तक तो भगवान मुझे जीवित रखेंगे।९५६।

उस समय मैं वर प्राप्ति की इच्छा करूंगी और खुद ही देख कर वर का वरण करूंगी। तब तक मैं कहीं किसी ओर अपना मन नहीं चलाऊंगी और इस दुर्ग को छोड़ कर कहीं नहीं जाऊंगी। इस आयु से पूर्व मैं अपनी प्रतिज्ञा (संकल्प) का त्याग नहीं करूंगी। यदि मेरे पिता मेरा विवाह करने का सोचेंगे तो मैं मर जाने की ठान लूंगी। तीस वर्ष की आयु के उपरान्त ही विवाह होगा। यही बात ज्योतिषी ने कही है।९५७।

तब तक तो आप वृद्धा हो जायेंगी। उस समय विवाह करने पर तुम्हें क्या सुख मिलेगा। स्त्रियों का यौवन तो बीस वर्ष की आयु तक ही होता है, उसके बाद विवाह से क्या लाभ। ये ही दिन तो तुम्हारे खाने पीने के (मौज मस्ती के) हैं। जो आनंद इस समय है, वह बाद में नहीं मिलेगा। हे बाई! आपके हृदय को धन्य है, जिसे तुमने पत्थर के समान बहुत कठोर बना लिया है।९५८।

(देवलदे ने कहा)—अरी जो क्षत्रिय हैं, उन्ही का तो ऐसा कठोर हृदय होता है, जो वर्णसंकर हैं वे ऐसा नहीं कर सकते। जो मुख से बोला है, उसका निर्वाह करना चाहिए, यदि उसके लिये प्राण भी देना पड़े तो दें। (प्राण जाय पर वचन न जाही)। क्षत्रियों के वंश में जिस पुरुष और स्त्री ने जन्म लिया है वह सदा बुरी बातों को छोड़ कर अच्छे आचरण को ग्रहण करेगा। मैं वहीं विवाह करूंगी, जहां मेरे पिता के मन में होगा।९५९।

(कुट्टिनी ने कहा)—हमने तुम्हारे पिता से द्विगुणित शक्ति और धन सम्पन्न कनौज के महाराजा को देखा है। उसका राजकुमार ऐसा सुंदर है, मानो किसी देवता ने अवतार लिया हो। उसकी आयु लगभग बीस वर्ष है, वह देखने में भगवान् राम या लक्ष्मण जैसा लगता है। हमने उसके जैसे अनुहार (सूरत शक्ल) वाला और किसी को नहीं देखा है, जबकि हमने सारी पृथ्वी पर भ्रमण करके देखा है।९६०।

वह अपने गुणों में और सुंदरता में अत्यन्त विचित्र है। उस वंश से आपके वंश का आदिकाल से संबंध है। उसकी बहिन हमारी शिष्या है। वह भी देखने में पद्मिनी जैसी है। उसने हमें यह भेंट दी है। ऐसा कहकर दूती ने लाल और पन्नों के नग खोल कर बताये।९६१।

देवलदे ने उन लाल और पन्नों को हाथ में लेकर देखा और परखा और कहा—उसने तुमको इतने रत्न दे दिये हैं, तो उनके पास और कितने होंगे। दूती ने कहा—कि उनके पास बहुत हैं। डेरों डेरों में अनेक नौकर चाकर, दास दासियां हैं। इन्हीं लाल पन्नों के नगों से उनका जीन (घोड़े की काठी) जड़ा हुआ है और महलों में भी ढेर लग रहे हैं।९६२।

यदि आपको वैसा घरबार मिल जावे तो आप सदा भगवान् का आभार मानती रहोगी। यदि आपको ही अपने वर का चयन करना है तो हे बाई! ऐसा अवसर मत चूको। जो काम करना है, उसे समय पर कर डालो। अवसर चुका कर मत करो।९६३।

तब देवलदे ने कहा कि तुम लोग बहक (भ्रमित होकर) कर फिर रही हो और हर बार वे ही बातें करती हो। जो मेरे भाग्य में होगा, वह होकर रहेगा। मैं नहीं जानती कि भगवान्, जिसने मुझे यह जन्म दिया है, वह क्या करेगा। मैंने तो तुमको बता दिया है, तुम बदल बदल कर वही बात क्यों कर रही हो।९६४।

हे बाई! तुमने तो बुरा मान लिया। हम तो अतीत और परदेशी हैं। यहां आकर दस दिन आपके साथ रह गई, इसीलिये इतनी बातें कह दी हैं

और हमें तो हमारे कष्ट का ज्ञान है। इसी से आपसे भी बात पूछ ली है। हमारा आपके साथ इतना स्नेह संबंध हो गया, इसी से हमने इस प्रकार विचार किया है।९६५।

हमारे मन में आपके प्रति दया उत्पन्न हूई, इसी कारण से इतने तर्क वितर्क किये हैं। आपके विषय में सारी बातें सुनी, तभी तो हमने यह चर्चा की है। यदि हमसे आपका कोई उपकार न हो सका तो फिर हमारी संगति का आपको क्या फल मिला। यदि आपको इनसे सुख मिले तो आप हमको सदा याद करोगी, अन्यथा हमेशा उठते ही हमको गालियां देना।९६६।

देवलदे ने कहा—तुमने वही कन्नौज बताया है न, वह हमारी बराबरी का कैसे हुआ। हमारे पूर्वज को जयचंद ने आमंत्रित किया था। वे (हमारे पूर्वज) जयचंद की बेटी का अपहरण करके ले आये थे। हे माता (सन्यासिन) तुमको उन बातों की जानकारी नहीं है। उनके साथ हमारा संबंध कैसे हो सकता है। जो लेख लिखा गया है, वह अलग ही है। मैं अपने प्रण से विचलित नहीं हो सकती।९६७।

यदि आपके मन में इतना धैर्य है तो तब तक हमारी एक बात मानो। तुम हमारे साथ तीर्थों में स्नान करने चलो। हम तुम्हें पृथ्वी के रूप के दर्शन करा देंगी। यहां बैठी बैठी क्या करोगी। वैसे भी घर का आपके लिये कोई सुख नहीं लिखा है। उस समय तक आपके प्रण की अवधि भी पूरी हो जायगी और वापिस लौटकर विवाह कर लेना।९६८।

(देवलदे ने कहा)—तुम्हें तुम्हारी ढिठाई (धृष्टता) के लिये शाबाशी है। ऐसी बात कहते हुये तुम्हें शर्म नहीं आई। तुमने तो घर से भाग कर अपने आपको डूबो दिया है, अब दूसरों को नष्ट करना चाहती हो। मैं राजा की कुमारी पुत्री हूं। उनको कीर्त्ति दिला कर अब मैं उनका सर्वनाश करूं। तुम्हारे साथ वही जायगी, जो स्वयं बिगड़ैल (भ्रष्ट) होगी और जिसके आगे पीछे कोई नहीं होगा।९६९।

दूतियों ने कहा—हमने तो दूसरे ही कारण से कहा था और आपने उसे और रूप में समझा। (आपके मन में कोई और ही बात घर कर गई)। आपने हमारे कथन को इस प्रकार समझा है, इसे सुन सुनकर हमारा हृदय फटा जा रहा है। बादशाह ने आपके दुर्ग को घेर लिया है और वह आपकी मांग कर रहा है। यदि आपके पिता के मन में यह बात आ गई और वे आपको उसके समर्पित कर दें ! ।९७०।

तब तुम क्या ताकत लगा सकोगी। तुम्हारी सारी प्रतिज्ञाये धरी रह जायेंगी। इसीलिये हम कह रही हैं कि आप हमारे साथ चली चलो और

यहां से प्रस्थान कर लो। वह तुर्क तुम्हें प्राप्त करने के लिये हठ कर रहा है। तुम्हारे ऊपर इतने नगाड़े बजाये जा रहे हैं। अतः इस स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर चली जावो। वो तुम्हें देख कर कुत्ते के समान भोंक रहा है। जब उसे पता चलेगा कि आप यहां नहीं हैं, तो सिर धुन कर वह यहां से घेरा उठा कर चला जायगा।९७१।

(देवलदे)—जिस व्यक्ति में दृढतर धैर्य हो, उसका काम कभी नहीं बिगड़ता। जिसका धैर्य कच्चा होता है, उसका जी डोलने लगता है, मन विचलित हो जाता है और वह उसकी सजा आश्चर्यजनक रूप में पाता है। मुझे मेरी इतनी खबर है कि भगवान मेरी इच्छा पूर्ण करेगा और मेरे पिता के विषय में तुम्हें भय है। वे अपना प्राण त्याग देंगे पर वैसा नहीं करेंगे (जैसा तुम कहती हो)।९७९।

(दूतियां)—ये प्राण किससे तजे जा सकते हैं। इसी जीवन के लिये ही तो आदमी गढ, कोट आदि बनवाना है। इसी जीव के लिये वह सेनाएं रखता है, इसी की रक्षा के लिये मनुष्य दया की भीख मांगता है, जीवित रहने के लिये ही मनुष्य अभक्ष्य पदार्थों का भक्षण कर लेता है। इसीके लिये वह दुष्ट आदमियों के सामने झुक जाता है। हे बाई! यह मनुष्य जन्म दुर्लभ है। जीवित रहने के बराबर और कुछ भी नहीं है।९७३।

(देवलदे)—जीव कायरों को प्रिय होता है। जो शूरवीर हैं, सत्यवादी हैं, उन्होंने इसको तृणवत् समझ कर त्यागा है। क्षत्रिय अपने प्राण एक क्षण में त्याग देता है। बुरा विचार करने पर उसको कलंक लग जाता है। तुमने मेरे पिता को क्या समझा है, जिन्होने स्वयं युद्ध करने का निश्चय किया है। वे या तो शत्रु को मार देंगे या स्वयं मर जायेंगे। जैसा तुम समझ रही हो वैसा वे कभी नहीं करेंगे।९७४।

हे बाई! (देवलदे) तुम बात को नहीं समझ रही हो। जब विषम स्थिति आ खड़ी होती है तब अपने बेटे बेटियों की ओट लेकर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। हे बाई! यह तुर्क बहुत बुरा व्यक्ति है। यह कई एक राजाओं की बेटियों का अपहरण कर लाया है। पहले उन राजाओं ने इससे युद्ध किया और बाद में अपनी बेटियों को लेकर इसके पांवों में आ पड़े।९७५।

इसने मरहठे (मड़हटचा) की पुत्री का अपहरण किया और उससे निकाह करके अपनी पटरानी बना लिया। देवगिरि से चिताई (छिताई) को लेकर आया—उसने अपना सत नहीं छोड़ा, इसने चित्तौड़ पर आक्रमण करके पद्मिनी को ढूंढा—वहां अनेक राजपूतों की बेटियों को घेर कर ले आया। यह जहां भी जाता है, खाली हाथ नहीं लौटता। इससे किसी राजा ने विजय नहीं पाई है।९७६।

तुम उन राजाओं को वैसा ही जानों जैसा कह रही है। उनकी बराबरी में हमको रख रही हो ? हमारे पूर्वजों ने बादशाहों को पकड़ कर उन्हें हथकड़ियां बेडियां पहना कर रखा है और उनको जीवित छोड़ कर घर भिजवाया है। हम तो उन्हीं की सन्तान हैं। हमें, तुम वैसा ही समझो, ऐसे तुर्क की हमारे यहां कोई गिनती नहीं है। ९७० ।

हे बाई ! तुम उसको किसी गिनती में नहीं रखती हो, पर वह तो तुम्हें ही प्राप्त करने के लिये हठ कर रहा है। रात दिन ये जौहर होते रहते हैं— वह कभी न कभी तो तुम्हें ले ही लेगा। वह जब यहां से दूर चला जायगा तभी इस दुर्ग के निवासी सुख प्राप्त करेंगे। हम तुम अब दूर हो रही है, इसी का हम अफसोस कर रही हैं। ९७८ ।

मेरे पिता भले ही दुर्ग की बस्ती और दुर्ग का विनाश करवा दें, पर मुझे समर्पित नहीं करेंगे। वे अपने मन में कायरता लावें तभी मुझे देने के लिये हां कर सकते हैं। यदि ऐसा हुआ तो मैं यहां आत्माहत्या करके मर जाऊंगी। तुम यह मत समझो कि मैं वहां (अलाउद्दीन के पास) चली जाउंगी। ९७९ ।

हे बाई ! यदि मेरे पिता कायर हो गये, तो मैं तो कायर नहीं हूं। जब मैं ऐसी बात सुन लूंगी, तभी जहर खाकर मर जाऊंगी। वे आवें तो मैं उनका आभार मानूंगी। उनके आते ही हथियार निकाल कर उन्हें मार कर स्वयं मर जाऊंगी। जिस क्षण मुझे ऐसी बात का पता लग जायगा, तब देखना कि देवलदे ने कैसे अपनी लज्जा रखी है। ९८० ।

हे बाई ! आप ऐसी बात क्यों सोचती हो, ऐसा विचार क्यों कर रही हो। ऐसा उपाय करो जिससे तुम्हारे घर की रक्षा हो जावें और यहां की प्रजा भी सुख पावें। पिता की रक्षा हो जावे और साथ ही राज्य भी बना रहे और आप स्वयं भी परम सुख की प्राप्ति करें। और यदि तुम्हें दुःख प्राप्त हुआ तो भी क्या हुआ, लाखों लोगों की रक्षा तो हो जायगी। ९८१ ।

हमें बतावो, हम किस प्रकार का श्रेष्ठ कार्य करें। यदि आप कहें तो हम भी जाकर युद्ध करें। हमारे भी कई बड़े बड़े रिश्तेदार और मददगार ठाकुर हैं, वे भी बहुत विचार करने वाले हैं। वे क्षत्रिय हैं अतः लड़ना ही उनका धर्म हैं। अब तो लड़ाई करना क्षत्रियों की ही पांती में आया है। हमारे साथी प्रतिदिन युद्ध करते रहते हैं और मरने से वे क्या भय खायेंगे। ९८२ ।

पर एक बात हमारे मन में आई है, यदि आप बुरा न मानो तो कहें। युद्ध होने पर इतने आदमी मर जायेंगे। तुम से इन सबकी प्राण रक्षा हो

जायगी । और यह मढे हुए ढील ढक्के चुप हो जायेंगे, अर्थात् युद्ध नहीं होगा और आपके राज्य की भी रक्षा हो जायगी । तुम इन पर दया करके भलाई लो तो तुम्हारा यह राज्य अमर बना रहेगा । ९८३ ।

(देवलदे ने पूछा)—हमारा राज्य अक्षर कैसे रह जायगा, वह बात भी समझा कर कह दो । तब दूती ने कहा कि अपने पिता के पास जावो और उनसे जाकर कहो कि पिताजी ! आप अपने प्राण क्यों गवां रहे हो और क्यों अपने राज्य को नष्ट करा रहे हो । मैं जानती हूं कि मेरा जन्म तुर्कों के लिये ही हुआ है । आप यह समझ लो कि आपकी ओर से मैं मर गई हूं । ९८४ ।

यदि आप स्वयं जाती हैं, तो जावो और स्वयं जाकर कहने में लज्जा आती हो तो किसी और के माध्यम से कहलवावें । यह बात आप अवश्य दृढ रूप में कहें । तब आपके पिता आपको बादशाह के पास भेज देंगे और आपको देख कर बादशाह बहुत प्रसन्न होगा । यह झगड़ा सब दूर हो जायगा और इस प्रकार यह राज्य बना रह जायगा । ९८५ ।

और क्या आप स्वयं जाते हुए डरती हैं । हे बाई! बादशाह आपको बहुत चाहता है । वह ठाठ बाठ के साथ अच्छी तरह से आपके साथ विवाह करेगा और सभी बेगमों में आपको सर्वोच्च पद पटरानी का देगा । तुम्हारी सूरत ही ऐसी बनी है कि तुम्हारे रूप की समता और कोई नहीं कर सकती । वह आपके साथ ऐसी ही माया मांडेगा (कृपा करेगा) कि आप को एक घड़ी के लिये भी नहीं छोडेगा । ९८६ ।

उनकी बातें सुन सुन कर देवलदे क्रुद्ध हो उठी । उसके तन मन में आग लग गई और पूछा कि बतावो तुमको किसने मध्यस्थ बना कर भेजा हैं, जिससे तुमने मेरे साथ इतनी बातें की हैं । तुमने अपने माता पिता, मामा, भाई, काका बाबा सबको ठुकरा दिया । मेरे सामने आने का कोई साहस नहीं करता और तुमने मुझे बातों में इस प्रकार उलझा दिया है । ९८७ ।

मैं तो समझती थी कि मैंने संन्यासिनियों को रखा है और अब मैंने तुम्हारी जिह्वा का स्वाद चख लिया है । मैं तो माता माता कह कर संबोधन कर रही हूं, और इन स्त्रियों की बातें (छल छंद) देखो । मैं तुर्क से अपने शरीर को भ्रष्ट कराऊं और बड़े कुल में जन्म लेकर इसे व्यर्थ जाने दूं । मेरे भाग्य में जो लिखा है वह होगा । होनहार को कोई मिटा नहीं सकता ।९८८।

इस वैश्य को मुंह लगाया (आदर दिया) तो यह तो ऐसी बातें करने लगी । पहले तो कन्नौज का प्रलोभन दिया और उसके बाद अपने साथ तीर्थ जाने की बात कही । अब मुझे यह तुर्क से विवाह की बात कहती है । ऐसी

बातें पुंश्चली स्त्रियों को ही आती हैं। मैंने तो अपने हृदय को दृढ कर रखा है, पर यदि कोई पोची स्त्रियां हो तो वे तो डिग ही जावे। ९८९।

हे बाई ! आप हमारे कारण दुःखी न होवें। आप बपनी भौंहे चढाकर (क्रुद्ध होकर) क्यों कलपती हो। हम चार मास तक आपके साथ रहीं, इसीसे इतनी बाते कह दी हैं। हमने आप का बुरा होता देखा, इसी से हमने ये विशेष बातें कह दी हैं। आपने तो हमको उलटा समझ लिया हैं। हमने कोई और बात नहीं समझी थी। ९९०।

ऐसी बातें उनको जा कर कहना, जो हीरे पन्ने लेने वाली हों। जो ऐसी बातों से प्रसन्न होने वाली हो, उनसे ऐसी बाते जाकर करना। मैं तो पत्थर हूं—उसे पानी क्या भिजोयेगा। अगर तुमने दुबारी ऐसी बातें कहीं तो मैं तुम्हारी इज्जत को शीघ्र ही मिटा दूंगी। मैं तो समझती थी कि तुम्हारे में कोई गुण हैं, पर मैंने तो सभी अवगुण पाये हैं। ९९१।

हे बाई। आप जब हमारी बातों का विपरीत अर्थ लगा रही है तो हम यहां क्यों रहेंगी। हम अब अपने रस्ते लगेंगी। जोगी को राज्य से क्या लेना देना। हे बाई! ऐसा भाग्य ही तुम्हारा कहां है कि बादशाह तुमसे विवाह करें। या तो तुम मर जावोगी या फिर वहीं जावोगी। हितकर बात को छोड़ कर तुम्हारे मन में बुरी बातें ही घर कर गई हैं। ९९२।

देवलदे ने कहा। इन औरतों ने यह क्या समझ रखा हैं। मैं ज्यों ज्यों इन्हें मना करती हूं, त्यों त्यों ये वही एक बात कह रही है। ये कुमारी कन्या को इस प्रकार बहका कर मेरी जैसी सत्यवती पर दोषों का आरोपण कर रही हैं। बादशाह को विवाह करना है तो अपनी लड़की (पुत्री) से करें। अब यदि दुबारा बोली तो मैं प्राण हरण कर लूंगी। मैं देवलदेवी देवी की अवतार हूं। मुझे पति की चाहना नहीं है। ९९३।

उसको क्रोध हो आया और तन मन में ऐसे आग लग गई, मानो आग में (वैश्वानर में) घी डाला गया हो। वह इतनी अधिक उत्तेजित हो गई, जैसे बंधे हुए सिंह को छोड़ दिया गया हो, अथवा काले नाग की पूंछ मरोड़ दी गई हो या सुअर को घाव लगा हो या रुई में आग लग गई हो। जब बाई देवलदे को ऐसी झुंझलाहट हुई कि उसने अगणित सहेलियों और दासियों को बुलवा लिया। ९९४।

चंपाकली, चमेली, राय बेल, भागली, कुंजकली, जशोदा, रामरखी, हीरली, रामदासी, हरदासी, श्यामा, किसनदासी, सांवली, दामा, वीरांदे, हीरांदे, किसनकली, नाथी और ग्यासी सभी दौड़ कर आ गई। ९९५।

बीस तीस तक सभी सखी सहेलियां और दासियां इकट्ठी हो गई। उन्हें अलग ले जाकर कहा कि इन दोनों के मुंह में दाठी (बंध) लगा कर इतना पीटो कि इनके मुख से कोई आवाज तक न निकलें। ऐसा उपाय करना जिससे कोलाहल न हो। इनके सिर के केशों को लुंचन करके उखाड़ लो। उन्होंने उनको बांधकर भयंकर पिटाई की। देवलदे खड़ी खड़ी तमाशा देखती रही। ६९६।

उन्हें चारों खाने चित्त करके गिरा दिया और जूतों से पिटाई करके उनसे सच उगलवाया। उनकी छाती पर जमधर (कटार जैसा शस्त्र) अड़ाकर उनसे पूछा गया कि उन्हें किसने भेजा है। भयभीत होकर दूतियों ने अपने आप सच बता दिया कि उनको बादशाह ने भेजा है। तब मूंड मुंडाई दूतियों को बुरा भला कहकर, रूप बिगाड़ कर तत्काल दुर्ग से उतार दिया। ६९७।

देवलदे ने सभी दासियों को समझा दिया कि वे कहीं भी इस घटना की चर्चा न करें। मैं जानती हूं या आप लोग जानती हैं अन्यत्र कहीं इस बात को न कहें। मैं पछता रही हूं कि मैं उनसे बड़ी बड़ी मूर्खतापूर्ण बातें करती रही। मैंने अनजान स्त्रियों को अपने पास रख लिया। अब हम सावधान रहेंगी। यदि रावजी (पिताजी) सुनेंगे तो उन्हें बहुत दुःख होगा।६९८।

देवलदे धैर्यवान् स्त्री थी, उसने और कहीं चर्चा नहीं की। वह इतनी अधिक शील और शौर्य वाली महिला थी, जिसने ऐसा मानमर्दन (चक्रचूर्ण) का काम किया। वह सीताजी, मैनादेवी, पद्मावती और चिताई (छिताई) से भी अधिक गुणवाली हुई। उन अन्य महिलाओं का तो मनुष्यों से स्पर्श हुआ था, पर इसने तो पुरुषों को देखने की सौगंध ले ली थी।९९९।

दुर्ग से उतर कर दूतियां बादशाह के पास गई। देवलदे ने उनको मुंडित करके, उनके पास जो कुछ था, सब छीन लिया।१०००।

दूतियां रात को ही भागकर बादशाह से जाकर मिली और कहा कि हम तो जीव से ही मारी जाती, हमको तो खुदा ही बचा कर यहां तक लाया है।१००१।

दूतियां बादशाह के पास जाकर हाथ जोड़ कर खड़ी हो गई और कहा कि, हमने तो अनेक उपाय किये हैं, पर उस स्त्री का हृदय तो वज्र के समान कठोर है। हमने करोड़ों प्रकार के उपचारों पर विचार किया और उनका प्रयोग किया, पर उसके ध्यान में एक भी नहीं बैठा। हमने चार मास तक हठ की, पर कभी भी उस ओर मन नहीं लगाया।१००२।

हमारी जीभ अनेक उपाय करके थक गई। देखो उसने हमको कितना मारा पीटा है। हमारा रूप रंग बिगाड़ दिया, हमारी खोपड़ी घुटवा दी। और क्या क्या किया—ये सब कैसे बतावें। उन्होंने इससे आगे और कुछ नहीं कहा। बादशाह सब कुछ सुन कर चुप हो गया। क्रुद्ध होकर वह डूंगरी तक जा पहुंचा। वहां भयंकर मारकाट हुई। वह भाग कर लौट आया ।१००३।

अष्टम अध्याय

बारह वर्ष तो युद्ध करते हो गये हैं, सेना की भी बहुत हानि हुई, मैं अपनी आंखों से दुर्ग को नहीं देख पाया और इस आक्रमण से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सका ।१००४।

इस प्रकार युद्ध करते हुए सारे डेरे, डांडे, तंबू, शामियाने और उनको बांधने वाले रस्से तक गल सड़ कर गिर गये। कनातें, सराइचे (छोटे तंबू), रस्से, जेवड़े कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। ऊंटों और घोड़ों की अगाड़ी पछाड़ी (पांवों में बांधने की रस्सियां, दांवणे) और बारकश टूट गये, घोड़े और ऊंट निर्बंध होकर फिरने लगे। फौज को ऐसी परेशानियां झेलनी पड़ीं, ऊपर से धूप और शीत का भी उन्हें सामना करना पड़ रहा था ।१००५।

बादशाह ने मोल्हण से कहा कि यह दुर्ग तो हम तोड़ नहीं पा रहे हैं और सेना की भी बहुत हानि हो रही है, ऐसे में अब क्या विचार किया जावे ।१००६।

तब बादशाह ने विचार करके सभी उमरावों को अपने पास बुलाया। अलुखांन और जैनखांन को पास में बैठाया और मोल्हण से बात करते हुए पूछा कि वह कोई मार्ग सुझावे। तुमने सभी स्थानों को घूम फिर कर देखा है, अब देरी क्यों करते हो। मैं क्या कहूं, मेरा कोई बस नहीं चल पा रहा है। मुझे बहुत अधिक क्रोध आ रहा है। इस दुर्ग में पक्षियों तक का प्रवेश संभव नहीं है। यह दुर्ग किस प्रकार टूटेगा। १००७।

मोल्हण ने कहा कि हे बादशाह सलामत! सुनो। यह पूरा पहाड़ कदम कदम पर बंधा हुआ है। इसके अंतर भाग में पानी के सरोवर लबालब भरे हैं, चूने और सीसे से जिनके जोड़ (संधियों) को जोड़े गये हैं। इसके अंदर असभ्य जंगली आदमी भरे पड़े हैं। देखो वे कितने भयंकर रूप से प्रहार कर रहे हैं। किले के अंदर रंघड़ (लड़ाके) सिपाही, जो थोरी और भील वर्ग के हैं,

कैसी भयंकर चोट मार रहे हैं। बाकी सभी ओर भयंकर पर्वत हैं। मात्र यह दर्रा है, जो किसी प्रकार नष्ट किया जा सकता है। मुझे इस दुर्ग की तलहटी में किसी प्रकार भेज दिया जाय तो ही दुर्ग टूट सकता है। १००८।

फौज में परेशानी छा गई। जो बात हुई, वह वजीर से जाकर कही गई। वजीर ने बादशाह से निवेदन किया, और समस्त जानकारी दी। तब बादशाह ने आज्ञा दी कि सभी अहदियों (शाही अनुचर विशेष) को भेज कर जहां कहीं भी बस्ती मिले, वहां से सूत मंगवावो। १००९।

तब अहदियों की कतारें लग गई और चारों दिशाओं में पत्र (फरमान) भेजे गये। सेना के आस पास कोई गांव नहीं थे। बीस बीस कोस तक मनुष्यों का निवास तक नहीं था। एक फरमान बुंदी जाने वाले अहदियों ने बुनकरों को जाकर दिया। उन्होंने पत्र को आदर सहित स्वीकार कर लिया और अहदियों को ठहरने के लिये स्थान बता दिया। १०१०।

बुनकरों ने उनसे भोजन कर लेने हेतु निवेदन किया और कहा कि हमारा परिवार का मुखिया दिल्ली गया हुआ है, वह आकर सुबह आपको सूत दे देगा। आप उनसे प्राप्त करलें। जितनी मात्रा लिखी है, वह सब पहुंचा देंगे। अहदियों ने कहा कि, वह तो बाहर परदेश गया हुआ है, पता नहीं कब आयगा, तब तक हमको बहुत देर हो जायगी। १०११।

वह आदमी दिल्ली कब गया था। तुम लोगों ने उसका बहाना बना लिया है। बुनकरों ने कहा कि वह आज ही गया है और आज ही आ जायगा और प्रातः काल होते ही आप लोगों के चरणों में हाजिर हो जायगा। अहदियों ने कहा कि—ऐसी मजाक हमसे और मत करना—हमको क्यों बहका रहे हो। उसके शरीर में क्या पंख लगे हैं, जो वह प्रतिदिन वहां जाता आता है।१०१२।

उसका नाम मोमिन आरिफ (जुलाहा) है। इस गांव में वह बहुत माना हुआ औलिया है। वह सूर्योदय होते ही उठ कर यहां से प्रस्थान कर जाता है और कपड़े बेच कर रात में घर लौट आता है। उसी पूंजी से वह अपना घर का खर्च चलाता हैं और उसी से धंधा करके कमाता भी है। अधिक आय होने पर दान दे आता है। तब अहदियों ने उनसे और कहा कि अच्छा है, हम यह तमाशा भी देख लेते हैं।१०१३।

सभी जुलाहे इकट्ठे होकर मोमिन अरिफ के घर पर गये और उसको सारी बात बता दी। उधर अलाउद्दीन का अहदी भी आ पहुंचा। आरिफ ने ऐसा चमत्कार किया कि उसने एक कोरा (नया) करवा मंगवाया और उसमें तीन नलिया रख दी।१०१४।

उन नलियों के सूत के तार करवे से बाहर निकाल लिये और करवे के मुंह को ढक्कन लगा कर ढंक दिया। ढक्कन पर चपड़ी (लाख) लगा कर मुद्रित कर दिया और उसको लेकर अहदी के पास गया। अहदी ने उसको देखकर पूछा कि यह क्या लेकर आये हो ? क्या इसमें सांप, बिच्छु भर कर लाये हो। तब आरिफ ने अहदी से कहा कि वह उसकी बात सुनें।१०१५।

तुम लोगों से सारी जनता बरबाद हो गई है, सारा देश उभड़ गया है। उनके घर बार सब छूट गये हैं, वे कोई काम नहीं कर पा रहे हैं। सारी प्रजा भूखों मर रही हैं। ऐसी स्थिति में अब किसी को दुःख मत दो। इस करवे से ही आप लोग सब काम सम्पन्न करें। इसका मुख नहीं खुलना चाहिए, और हमारी यह अमानत वापिस हमारे पास पहुंच जानी चाहिए।१०१६

यह सुनकर कई एक अहदियों ने पूछा कि तुम्हारे आदेश पत्र में कितने मन सूत देने के लिये लिखा गया है। इस करवे में तो एक सेर या दो सेर सूत ही होगा, जबकि तुम कहते हो कि यह पूरी फौज के लिये काफी है। इसमें कोई जादू-टौना भी हुआ तो भी मन दो मन होगा। तुम जितना सूत लिखा है, उतना मंगवा कर दो, तभी यहां से उठकर घर जा सकते हो। १०१७

तब आरिफ ने उनसे कहा कि भाई ! इसको ले जाकर इसका तमाशा (चमत्कार) तो देखो। यदि इससे तुम्हारा काम पूरा न हो पाये तो आपमें से कोई दुबारा आ जावें। हम ऐसा एक अनुबन्ध पत्र लिख देते हैं, कि इससे काम न चले तो हम से लिखे हुए सूत से दुगुणा भर देंदे। तुम लोग इससे अधिक लोभ लालच मत करना। जितना चाहिये उतना सारी सेना के लिये ले लेना। १०१८

तब अहदियों ने आपस में ही बात की कि इसका खेल भी देख लिया जाये। यह भी कोई ओलिया है, यहां से रोजाना दिल्ली जाता और आता है। इससे यह वादा अवश्य करवा लें कि इस करवे से यदि कोई काम सिद्ध नहीं हुआ तो हम इससे दुगुणा सूत लेंगे और इसके सिवाय अपराध का दण्ड और प्रतिदिन के हिसाब से खाने का खर्चा भी वसूल करेंगे। १०१९

आरिफ ने कहा कि यह ठीक है, हमने स्वीकार किया। अब आप जा सकते हैं। अहदी करवा लेकर फौज के डेरे पर आये, और सबसे पहले उन्होंने करवे के सूत से अपने रस्सों का निर्माण किया। जब उसमें से आधा मन सूत निकल आया तो उन्होंने आरिफ की बात को सच मान लिया। उसके बाद वे करवा लेकर बादशाह की सेवा में गये और हाथ जोड़कर निवेदन किया।१०२०।

उन्होंने बादशाह के सामने सारी घटना कह सुनाई कि हम लोग सूत और शण लेने के लिये बून्दी गये थे। वहां एक ओलिया ने हमको यह करवा दिया है कि इस करवे से अपना सारा काम सिद्ध करें और प्रजा को दुःख न दें। उसने कहा है कि इस करवे का ढक्कन नहीं खुलना चाहिए और काम निकल जाने पर उनकी यह अमानत उनको पहुंचा दी जाये। १०२१

तब बादशाह ने आज्ञा दी कि तुम लोग ओलिया के कहे अनुसार काम करो। सबसे पहले शाही सामान तैयार कराओ और उसके बाद इस करवे को फौज में घुमाओ। बादशाह ने दो विश्वस्त व्यक्तियों को निरीक्षण के लिये नियुक्त करके उन्हें निर्देश दिया कि इस बात का पूरा ध्यान रखें कि इसका मुख न खुलने पावें और प्रतिदिन शाम को हमारे पास सारी सूचना पहुंचाई जावें। १०२२

बादशाह स्वयं बून्दी गया और दूरदर्शी ओलिया आरिफ के स्थान पर गया। मोमिन आरिफ अपने घर से निकल कर स्वागतार्थ सामने आया और बादशाह के दर्शन किये। बादशाह को सलाम (अभिवादन) करके उसने पूछा कि आप स्वयं यहां कैसे पधारे हैं। मैं तो आपका एक गरीब कार्मोण (शिल्पी) हूं। किस काम के लिये आपका यहां पधारना हुआ। १०२४

तब बादशाह बोला कि हम आपके दर्शनों के लिये यहां आये हैं। उसने आरिफ से पुनः कहा कि आपके घर पर चलो और हमारा नाम प्रकट न करें। यहां हमारे साथ कोई जमीयत (रक्षा टुकड़ी) नहीं है और यह शत्रुओं की भूमि है। हमने आपके दर्शनों का लाभ ले लिया है। आप घर पर चलें, बाकी बातें वहीं होंगी। १०२५

तब आरिफ बादशाह को अपने घर ले गया और बादशाह को बैठने के लिये गुदड़ी का आसन (बिछौना) दिया। वह तो निर्गुण (सूफी) फकीर था, उसके घर में था ही क्या। वह मन में विचार करता हुआ बहुत पछता रहा था। वह बार बार बादशाह की मिन्नतें करता हुआ कह रहा था कि मेरे अहोभाग्य है कि आपने पधारकर मेरे घर को पवित्र किया है। बादशाह की मान मनुहार करके उसने बादशाह से कहा कि आप जिस उद्देश्य को लेकर आये है, मुझे बतायें। १०२६

अलाउद्दीन बून्दी गया, वहां आरिफ उससे मिल गया। बादशाह ने उससे पूछा कि वे यह उपाय बताने की कृपा करं, जिससे रणथंभोर का दुर्ग ध्वस्त कर जीता जा सके। १०२७

बादशाह ने ओलिया से कहा कि आपके समान ओलिया इस स्थान पर रह रहा है। हमको यहां रहते हुए बारह वर्ष हो गये हैं फिर भी यह हिन्दू राजा हमारे हाथ में (अधिकार में)नहीं आ पा रहा है। वह दुर्ग भी मेरी दृष्टि में नहीं आया है। यहां इन पहाड़ों में लड़-लड़कर मैंने अपने आदमियों को मरवा दिया है। अब आप कोई ऐसा उपाय बतावें, जिससे यह दुर्ग हमारे अधिकार में आ जावे। १०२८

तब मोमिन आरिफ ने उसकी समस्या का समाधान बताते हुए कहा कि आपकी फौज में दो ओलियें हैं। वे ही आकर विजय प्राप्त करेंगे। १०२९

तब आरिफ ने बादशाह को कहा कि आपकी सेना में दो ओलिया हैं। मुझको ऐसा लगता है कि वे आपका दुर्ग पर अधिकार करा देंगे। बादशाह ने ओलिया से पूछा कि वे नाम बता दें तो सताईस लाख में से मैं उनका पता लगा लूंगा। आरिफ ने कहा कि मुझे उनका नाम मालूम नहीं है, पर उनको पहिचानने के लक्षण बता देता हूं। १०३०

आज से पन्द्रहवें दिन भयंकर आंधी आयेगी, जिसमें दिन में भी सूर्यास्त के समान प्रतीत होगा। आपके डेरे, तम्बू आदि सब उखड़-उखड़ कर नीचे गिर जायेंगे, आंधी के साथ-साथ वृक्ष तक उखड़ कर धरती पर आ गिरेंगे। जब आंधी का जोर कम हो जायेगा तब थोड़ी वर्षा भी होगी। सबके डेरे शामियाने गिर जायेंगे पर उनके डेरे सुरक्षित रहेंगे। १०३१

औरों के डेरों में कहीं चिराग जलते हुये नहीं दिखाई देंगे, पर अकेले उन्हीं के डेरों में चिरागें जलती रहेंगी। आप स्वयं उनके डेरों में जाना, वे कुरान पढते हुए मिलेंगे। आप उन्हें बहुत बड़े बुजुर्ग मानकर पूरा सम्मान दें, वे खुद जाकर दुर्ग पर विजय प्राप्त करेंगे। आरिफ ने उसको यह सब बात बतायी, और बादशाह अपने डेरे पर आ गया। १०३२

बादशाह इस बात के लिये बहुत अधिक आतुर हो रहा था कि ओलिया आरिफ के द्वारा बताया गया दिन कब आयेगा। एक पखवाड़ा बीत गया और वह दिन भी आ गया। उस दिन शाम को उसने चौकीदार को बुला कर हजारों पदाति सैनिकों को तत्काल बुलाकर इस जगह खड़ा रखो। इतने में आंधी आई और उसके जोर से सारे डेरे, तम्बू, पेड़ आदि गिर गये। १०३३

जब हवा (आंधी) शान्त हो गई और वर्षा हुई, तब बादशाह ने सभी प्यादों (पैदल सैनिकों) को बुलाकर कहा कि वे फौज की छावनी में चारों ओर फैल जावें और जहां भी जलती हुई मचाल दिखाई दे, उसकी सूचना मुझे आकर दे, अविलम्ब जावें। पैदल सैनिकों ने चारों ओर जाकर पता लगाया। उन्होंने एक के डेरे में जलती हुई मचाल देखी। १०३४

उसे देखकर प्यादे लौट आये और बादशाह को इसकी सूचना दी। उन्होंने बताया कि मादिकिलीच और मियां निजामदी के डेरे में दीपक जल रहा है। वे बैठे हुए कुरान पढ रहे हैं। अन्य किसी के भी डेरे में दीपक नहीं जल रहे हैं।

बादशाह एक दम खड़ा हो गया और पैदल ही उन सैनिकों के डेरे पर गया। १०३५

वे लोग कुरान पढ़ने में दत्तचित्त थे, यह बादशाह ने जाकर देखा। बादशाह ने डेरे में प्रवेश करके अभिवादन (सलाम) किया। उन दोनों सिपाहियों ने मुड़कर कनखियों से देखा और बादशाह को पहचान कर खड़े हो गये। उन्होंने झुककर बादशाह को सलाम किया। बादशाह ने उनको बैठ जाने के लिये कहा, पर वे बादशाह को बैठने के लिये निवेदन कर रहे थे। १०३६

बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ कि उसे दोनों ओलिया मिल गये। आरिफ के द्वारा बताये लक्षण मिल गये हैं। अतः अब काम सिद्ध हो जायेगा। १०३७

बादशाह ने पहले दोनों ओलियों को बैठाया और उसके बाद स्वयं बैठे। वह एक एक क्षण में उनकी प्रशंसा करता जाता था और वे सिकुड़ते सकुचाते जा रहे थे। दोनों ही मन में सोच रहे थे कि आज बादशाह के मन में यह विचार कैसे उटा। हम लोग जब अभिवादन करने जाते थे, तब कभी भी हमें अच्छी तरह नहीं देखा। १०३८

आज यह हमारे डेरे पर क्यों आये हैं और पहले हमको बैठाकर फिर आप बैठे हैं। तब बादशाह ने कहना प्रारम्भ किया कि मैंने आज तक आप लोगों को नहीं पहचाना था। आप मेरे अपराध के लिये क्षमा करेंगे। बादशाह यह सब बहुत मनुहार के साथ कह रहा था। तब दोनों जवान उकता कर बोले कि उनको इतना मान क्यों दिया जा रहा है? १०३९

हम तो आपके गुलाम (दास, नौकर) हैं। आप इतनी दूर चलकर क्यों पधारे, हमसे अगर कोई काम था तो चोबदार को भेज कर ही हमको बुलवा लेते। उनसे क्यों नहीं कहलवा दिया। आप बार बार हमारी प्रशंसा कर रहे हैं। ऐसा हमसे कौनसा काम आ पड़ा है। आप हमसे बहुत अधिक मनुहारे कर करके बात कर रहे हैं। आप जिस काम से यहां पधारे हैं, वह हमें जरूर बतावें। १०४०

बादशाह ने कहा कि हम लोग यहां आकर पड़े हैं, और हमारा काम पूरा नहीं हो पा रहा है। हम बहुत अधिक परेशान हो गये हैं, हिन्दू (राव हमीर) को हम पकड़ नहीं पा रहे हैं। १०४१

तब बादशाह ने कहा कि मैं यहां पर इस दुर्ग पर अधिकार करने के उद्देश्य से आया था। आप जैसे ओलिया मेरी फौज में मौजूद हैं, आपके रहते हुए हमें यहां बारह वर्ष कैसे लग गये। आप जैसे कृपालु सहायक का हाथ हमारे माथे पर है, फिर यह हिन्दू दुर्ग पर अधिकार किये कैसे बैठा हुआ है। अब आप ऐसा कोई उपाय करें कि जिससे इस दुर्ग पर हमारा अधिकार हो जावें। १०४२

मादिकिलच (मादिखिलच) ने कहा कि इनको दुर्ग को जीतने की लालसा है। खदा ने ऐसी ही रचना की है अत: ऐसी ही स्थिति बन रही है। १०४३

तब उन्होंने बादशाह को कहा कि वे अपने डेरे पर जावें। आपने जैसी आज्ञा दी है, वैसा ही हम कल सुबह करेंगे। तब बादशाह उठकर अपने डेरे पर आ गया। उसके मन की इच्छा पूरी होने वाली है, यह जानकर वह खुश हो रहा था। दोनों जवान प्रात: काल होते ही उठे, स्नानादि से निवृत्त होकर माला फेरी और कुरान का पाठ करते करते जब सूर्योदय का प्रकाश देखा तो दोनों ही जवानों ने हर्षध्वनि की। १०४६

वे खड़े हुये, कुरान की पुस्तकें सिमेटी। उनके पास जो कुछ था वह लोगों को दान कर दिया और बादशाह के पास जाकर उन्हें विदा करने हेतु निवेदन किया। बादशाह ने अनेक जवान उनके साथ भेजें। वे घोड़ों पर जीन कसकर उन पर सवार हुए। सभी सैनिकों ने शरीर पर कवच और हथियार सजायें। १०४७

बादशाह ने उनको सैनिक दल के सभी अधिकार दिये और उनका वेतन खर्च दे दिया। पीर (ओलिया) ने युद्ध का नगाड़ा बजवाया और वे दौड़कर दुर्ग की ओर बढ़ गये। १७४८

अप्सरायें (हुरमाऐं) वरमाला लेकर आ खड़ी हुई। सभी वीर अत्यन्त हर्ष का अनुभव कर रहे थे। ओलियों ने भी कवच धारण कर हथियार बांध कर युद्धार्थ प्रस्थान किया। १०४९

विदाई लेकर दोनों ही जवान दरा के पास तक आ गये। दुर्ग से उतर कर जाजा बड़गूजर ने गुप्त स्थान से उनके आक्रमण का सामना किया।१०५०

जाजा दौड़ कर आया और भयंकर मारकाट होने लगी। कायरों के मन मुरझा गये और वीर तलवारों के प्रहार करने लगे। १०५१

दोनों वीरों ने अपनी सैनिक शक्ति के साथ प्रस्थान किया। वे हृदय में सत्यव्रत को धारण किये हुए शक्तिशाली जवान थे। उन्होंने उचित समय

(मुहूर्त) में भगवान् (अल्लाह) को स्मरण किया। उनके चेहरे पर विशेष कांति प्रतिभासित हो रही थी। वे दरे पर जाकर डट गये और युद्ध में संलग्न हो गये। उनकी म्यानों से तलवारें निकलकर रक्तरंजित हो गई। इधर वीर जाजा बड़गूजर युद्ध में आ उतरा। विधर्मी (मुसलमान) सैनिक वीर और मीर भी युद्ध सज्जा से सज्जित हो सन्नद्ध थे। शहनाई, नफीरी जैसे अनेक प्रकार के वाद्य बजाये जा रहे थे। सैंदाना (शादियान-मांगलिक वाद्य) सिंधवा और करनाल से तीव्र स्वर व्याप्त हो रहे थे। तोपों और बन्दूकों से गोले गोलियां इस प्रकार प्रवाहित हो रहे थे, मानो आकाश में बादलों से वर्षा की अपार धाराएँ टूटकर गिर रही हो। ऊँटों पर रखी छोटी तोपों और बन्दूकों के छोड़े जाने से भड़ाभड़ की ध्वनि हो रही थी। उधर लघुकाय तोपों से लोह गोलक धड़ाधड़ उड़ रहे थे। तलवारों के सतत प्रहार हो रहे थे। धनुषों से फेंके जा रहे बाण अत्यन्त तीव्र गति शब्द करते बह रहे थे और सैनिकों के शरीरों को विंधते हुए दूसरी ओर निकल जाते थे। तलवारों के भयंकर युद्ध में रणक्षेत्र लोथों से पट गया। सैनिकों की अस्थियां कड़कड़ की ध्वनि के साथ टूट रही थी, सिर कट कट कर लुढ़क रहे थे। वर्षा ऋतु में बहने वाले नालों के समान रक्त के परनाले और खाळ बह चले। दोनों धर्मों के वीर सैनिक परस्पर युद्धरत थे। भयंकर शस्त्र प्रहार से कोई नहीं बच पा रहा था। युद्ध क्षेत्र में धमाधम घमाघम गर्जना हो रही थी। औलियों ने अपना सिर काट कर उतार लिया और खचाखच मार (प्रहार) करने लगे। दोनों पीरों के मृत शरीर (कबंध) गेंद घाटी में प्रवेश करके रण की डूंगरी पर चढ कर हंसने लगे। वे रणथंभ में अटक गये, डट गये। दोनों पीर आगे बढे और दरा की रक्षा पंक्ति टूट गई, हिन्दुओं का वहां से अधिकार छूट गया और वे पीछे हट गये। दोनों औलिये रण की पहाड़ी पर चढ गये और राव के सैनिकों को दुर्ग के अंदर चला जाना पड़ा। रण की पहाड़ी पर तांत्रिक प्रयोग के आधार पर घोड़ों को डकाते हुए उद्दाम हँसी के साथ हँस पड़े। दुर्ग की स्त्रियों ने उन्हें देख लिया और उनकी वहीं मृत्यु हो गयी और पहाड़ी पर गिर पड़े। वे दोनों शहीद होकर वहीं लेट गये। बादशाह ने वहां पहुंच कर अपने डेरे डाल दिये। दुर्ग के चारों ओर तव लडाई शुरु हो गई और दोनों दलों में बराबर की मारकाट प्रारंभ हो गई। १०५३।

राव हमीर का दरे पर से अधिकार समाप्त हो गया और बादशाह ने रण की पहाड़ी पर चढ कर अपने डेरे डाल दिये, जहां दोनों पीर (ओलिये) लेटे हुए थे। १०५३।

इधर कठोर कुचमंडल को स्पर्श करके कामी पुरुष थक गये हैं और दूसरी ओर वीर योद्धा अपनी भुजाओं की शक्ति से हाथियों के दांत उखाड़ते

हैं। इधर कोयल के समान मधुर वाणी वाली कामिनी स्त्रियां अपने पतियों के मन को प्रसन्न करती हैं, उधर दारुण शत्रु दल एक दूसरे के दल का भजन करते हैं। इधर कामिनियां अपने बालों का पुष्पों से शृंगार करती हैं, उधर शूरवीर योद्धा परस्पर युद्ध कर रहे हैं। इस ओर कंठ से कल्लोल करती रमणियां क्रीड़ा करती हुई, उल्लसित उमंगित होती हैं, उधर शूरवीर सामंत रण क्षेत्र को जगा रहे हैं। इधर अनेक प्रकार के मांगलिक पद पढे जा रहे हैं, उधर रात दिन वीर पुरुष स्त्रियों के साथ संभोग रत रहते हैं। इधर क्रोध युक्त मुद्रा में कंगन के स्पर्श से रति रस संबंधी भाव जन्म ले रहा हैं, उधर तलवारों के परस्पर टकराने की ध्वनि हो रही है। इधर दंत पंक्ति बिजली के समान चमक रही है, उधर तलवारों की टकराहट से उड़ते अग्निकण वर्णित करने योग्य हैं। इधर बाला (स्त्रियां) तांबूल की पीक से मुख सजा रही है, उधर योद्धाओं के मुखों से खून की धारा बह रही है। इधर बालाएं पंचरंगी लाल वस्त्र पहने हैं, उधर युद्ध करते हुए पृथ्वी लाल हो गई है। इधर संगीत के नाद, निनाद और गीतों से अनेक प्रकार के मनोरंजन होते हैं, उधर युद्ध के बल पर अनेक राज्यों पर विजय प्राप्त की जाती है। इधर कुंकुम शृंगार किया जाता है और सुगंधित द्रव्य छिड़का जाता है। उधर तलवारों से छिटक कर अग्निकण आकाश में उड़ते हैं। इधर माणिक, मोती आदि रत्नों से जड़े आभूषणों से शृंगार किया जाता है, उधर सभी धातुओं से निर्मित वाद्य वजाये जाते हैं। इधर मालकोश (राग रागनियां) से महलों में हिल्लोरें उठ रही हैं, उधर ऊंट और घोड़ों का संचरण हो रहा है। इधर राज सभा में चौसर (शतरंज) के खेल में हाथी, घोड़े, पैदल आदि मारे जाते हैं, उधर चंचल शीघ्रगामी ऊँट लड़ रहे हैं। इधर अबला बाला स्त्रियां (तरुणी स्त्रियां) गर्व के साथ रहती हैं, उधर युद्ध करते हुए वीर पठान गिर पड़ रहे हैं। इधर सुन्दरी स्त्रियां अपने सिर के बाल गूंथ रही है, उधर टोप टूट रहे है और कपाल (खोपड़ियां) फूट रही हैं। इधर चौसठ ही छंदों में राव हमीर की विजय के गीत गाये जा रहे हैं। अथवा चौसठ योगिनियां नाचती गाती हैं, और उधर राव हमीर ने सुल्तान को जीत लिया। १०५४

चौसठ योगिनियां मंगल गीत गा रही हैं, प्रसन्न हो रही है और बावन ही भैरव प्रशंसा कर रहे हैं। रणथंभोर दुर्ग में हमीर पर इस प्रकार अलाउद्दीन ने आक्रमण किया है। १०५५

इधर कंठ में नक्षत्रमाला चमक रही है, उधर वे क्षत्रिय योद्धा अपने भालों की परीक्षा ले रहे हैं, प्रयोग कर रहे हैं। इधर कोयल के समान मधुर बोली बोलने वाली रमणियां गीत गाती हैं, उधर शृगाल अपनी आवाज में गा रहे थे। इधर गुंथा हुआ हार हाथ में लेकर खड़ी हैं, उधर युसुफ (एक पैगम्बर जो अति सुन्दर था) सिर काट कर हाथ में लिये खड़ा है, उधर माता

(काली) शराब के प्यालें पीकर मुस्करा रही है, उधर योगिनियां खून पीकर, उन्मत हो किल्कारियां कर रही है। इधर बाला बैठी हुई भय से अपने पांव पलौट रही हैं। उधर सुन्दर ऊँट झुक-झुक लौट रहे थे। इधर मान (रुठना) किया जा रहा है और गर्व भंग किया जा रहा है और उधर शूरवीर पठानों से युद्ध करके उनको पछाड़ रहे हैं, मार रहे हैं। इधर चौसठ योगिनियां छंद और गीत गा रही हैं कि राव हमीर ने सुल्तान पर विजय प्राप्त करली है। १०५६।

चार पहर तक युद्ध हुआ, जिसमें असंख्य पीरों ने युद्ध किया। उस दिन दर्रा में मार काट हुई और शवों के ढेर लग गये। १०५७।

दोनों पीर मारे गये और बादशाह ने दुर्ग का घेरा डाल दिया। तब उसी दिन दुर्ग के दरवाजे बन्द कर दिये गये और अन्दर से ही उन योद्धाओं ने प्रहार करना शुरु किया। राव हमीर के सैनिक दुर्ग में थे और सुल्तान की सेना पहाड़ों में। दोनों ओर से बराबर के प्रहार हो रहे थे। दुर्ग तक न तो तीर की पहुंच हो जाती थी, और न बन्दूक या तोप के गोलियों या गोलों की ही। तोपों और बन्दूक से लड़ाई हो रही थी। १०५८

तो भी किसी को सफलता नहीं मिली। बादशाह पहाड़ पर चढ गया और राव हमीर के राजप्रासाद के सामने जाकर बैठ गया, जिनमें राव हमीर का दरबार लगा हुआ था। वहां से सभी लोग दिखाई दे रहे थे। उन्हें देख देखकर सुल्तान क्रुद्ध होकर दांत पीस रहा था। वहां संगीत का अखाड़ा जुड़ा हुआ था, मनोविनोद हो रहा था। बादशाह भी वह सब कुछ देख रहा था। १०५९

बादशाह जहां बैठा था, वहां से सारी राजसभा दिखाई दे रही थी। राव हमीर रणथम्भोर दुर्ग में बैठा हुआ था, जिसकी कोई सीमा नहीं थी।१०६०

चौगान में कनातें (ओट) लगी थी जिसमें लगातार दरबार लगाया जा रहा था। उसमें विभिन्न शाखाओं के राजपूत, जिनमें परस्पर कोई भेद नहीं था। ऐसा लग रहा था, मानो कमल के फूल खिल रहे हो अथवा फूला हुआ झाग (फैन) फैला हुआ है। वहां अनेक प्रकार के वस्त्रों में सुशोभित शूरवीर सामंत बैठे हुए सुशोभित थे। ऐसा लगता था मानो तारागण जगमगा रहे हैं अथवा कि इन्द्रसभा में सुशोभित हो रहा हो। सांभरिया चौहान अधिपति राव हमीर ऐसा सुशोभित था, मानो दूसरा ही चंद्रमा सुशोभित हो रहा हो।१०६१

अलाउद्दीन पहाड़ पर बैठा था और हमीर दुर्ग में बैठा था। बादशाह अनेक दावपेच (षड़यन्त्र) कर रहा था, पर उसका एक भी दाव सफल नहीं हो पा रहा था। १०६२

इस प्रकार बादशाह ने पहाड़ों पर अधिकार करके वहां एक बुर्ज चुनवा कर तय्यार करली। उन पर सुरक्षा हेतु मोरचे लगा कर तोप स्थापित करवादी। उनके चलने पर धुएं से सूरज छिप गया और दिन भी रात की तरह लगने लगा। इनके छोड़े जाने पर इतना भयंकर शब्द होता था, मानो भादों के महीने में बादल गरज रहे हों। गोले छोड़ते समय होने वाली चमक ऐसी लगती है, मानों बिजलियां चमक रही हैं। उनके भड़कने पर होने वाली भयंकर ध्वनि से पहाड़ कांपने लगे। ये गोले रणथंभ दुर्ग से जा टकराते थे। कभी कभी कोई गोला दुर्ग को लांघता हुआ दूसरी ओर जा गिरता था। धनुष, बाण और बंदूकों से प्रहार की तो कोई गिनती ही नहीं थी, पर ये दुर्ग पर नहीं पहुंच पा रहे थे। युद्ध के ढोल और नौबत के नगाड़ों पर चोट पड़ने पर उनकी ध्वनि से पहाड़ प्रतिध्वनित होकर गर्ज उठते थे। उधर दुर्ग से तोप बंदूकों के चलने पर अगणित मत वाले यवन सैनिक मर रहे थे। ऊपर से लाखों शिलाओं और पत्थरों को लुढकाए जाने पर भयंकर सर्वनाश होता था, मानो नदी तट टूट पर पड रहे हो। अगणित बाण चलाये जा रहे थे, जंबूरों (छोटी तोप) से आक्रमण किया जा रहा था। अत: दुर्ग की तलहटी में कोई आने का साहस नहीं कर पाते थे। भयंकर मारकाट के साथ नगाड़ों की भयंकर आवाज हो रही थी। ऐसा प्रतीत होता था, मानो राम और रावण के बीच युद्ध हो रहा हो। भयंकर गर्जन के बीच कोई किसी की बात तक नहीं सुन पाता था। डरपोक सैनिक शंका से ही गिर पड़ रहे थे, उनकी छाती फटी जा रही थी। धूल और धुएं के उड़ने से सूर्य ढंक गया और अंधकार छा गया। दोनों ही दलों की ओर से आग की वर्षा हो रही थी—मानो परशुराम और भीष्म के बीच युद्ध हो रहा हो। अथवा कृष्ण और बाणासुर के बीच संग्राम छिड़ा हुआ हो। गोलों और गोलियों की ऐसी वर्षा हो रही थी, मानो बादलों ने जल धाराएं छोड़ रखी हो। बादशाह ने ऐसी खुशामद की कि कवि ने जैसा देखा है, वैसा ही वर्णन किया है। आठों घड़ी ऐसा भयंकर युद्ध होता रहता था, फिर भी कोई सफलता नहीं मिल पाती थी। १०६३।

वे एक दो ही गोली दागते थे, इतने में तो दस बीस पत्थरों की मार कर देते थे। लोग परेशान होते जा रहे थे। दूर से प्रत्यंचा चढा कर बाणवर्षा करने हेतु कहते थे। १०६४।

पहाड़ के मूल में इतना पानी था कि वहां सुरंगे भी नहीं लगा सकते थे। अत: पर्वत से पत्थर लेकर सर्वत्र परकोटा बनाने का सोचा था। १०६५।

तब बादशाह ने कहा कि सैनिकों का सर्वनाश मत करो। तलहटी से एक तीर क्षेपण के स्थान से दूर रहो और चारों और अपनी नजर दौड़ाते रहो। यह देखो कि शत्रु निकल कर न चला जावें! चारों ओर से घेर कर

पड़ाव डाल दो। तोपों से युद्ध करते रहो, दुर्ग के नीचे जाकर मत करो। वह कहीं मेरे हाथ आ जावे तो मैं उसके साथ इच्छानुसार व्यवहार करूं वह किले में कब तक छिप कर रहेगा। मैं भी वर्षों तक यहीं डेरा डाल कर यहीं बस जाऊंगा। १०६६।

महिमाशाह ने राव हमीर से कहा कि अब क्या विचार कर रहे हो। यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं सूर्योदय होते ही युद्ध करके मारकाट कर दूं। १०६७।

राव ने उत्तर दिया कि ऐसा शक्ति प्रदर्शन न करें। बादशाह के पास तो विणजारों के पशु (बल) एकत्र हैं, वह क्या कर लेगा। १०६८।

हम्मीर के पराक्रम (शक्ति) के विषय में सुना कि वह समस्त दुर्ग और दुर्ग के मैदान की निगरानी करता है। वह रात दिन परकोटे पर लगाये मोरचों को संभालता है। वह रात दिन अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित रहता है, अपनी कमर (परिधान) तक नहीं खुलवाता। वह रात में एक घड़ी भर के लिये नींद निकालता है, तभी पीर (ओलिये) आकर उसको परेशान करते हैं। वह तनिक भी भय नहीं खाता और घूमता रहता है। प्रसन्न होकर वह कहता रहता है कि अनेक रंगों के इन डेरों (तंबुओं) से यह पर्वत कितनी शोभा पा रहा है। १०६९।

पर्वत अलाउद्दीन की फौजों से ढंका हुआ है, और राव हमीर उसे देख देख कर प्रसन्न हो रहा है। दुर्ग में युद्ध के नगाड़े इस प्रकार बज रहे हैं, मानो विशाल सेना का पड़ाव हो। १०७०।

अगर पहाड़ पर अधिकार कर लिया है तो क्या हुआ। इस दुर्ग पर अधिकार किस प्रकार करोगे। जिन लोगों को अन्यत्र कहीं आकर्षण नहीं हैं, उनमें से अनेक इसी दुर्ग में समा जायेंगे। यह बारह वर्षों से यहां छावनी डाल कर बैठा है, उतने ही वर्षों पर्यन्त और यहां रह जायगा। इस टिड्डी दल के दुर्ग के पास आकर पड़े रहने से मेरा दुर्ग ही शोभा को प्राप्त करेगा। यह रणथंभोर का दुर्ग विंध्याचल में (अथवा पहाड़ों के मध्य में) स्थित है। इसकी बराबरी करने वाला और कोई दुर्ग नहीं है। उसके अंदर उसका रक्षक राव हम्मीर प्रतिष्ठित है और उसके चारों और सताईस लाख की शत्रु सेना घेरा डाले पड़ी है। १०७१।

अलाउद्दीन भ्रमवश भ्रमित होकर यहां छावनी (डेरे) डाल कर पड़ा हुआ है। वह बारह वर्ष से यहां रह रहा, इतने वर्षों तक और डेरा डाले पड़ा रहे।

नवम अध्याय

धारू ने शृंगार किया। वह वारांगना अच्छी तरह बन ठन करके आई। उसने सोलह ही शृंगार किये। स्वर्णाभूषणों में रत्नों के नग जड़े हुए, वह अत्यन्त सुन्दर अप्सराओं जैसी लग रही थी। अनेक प्रकार के वस्त्र पहिने। फूलों से बने सघन हार पहन कर उसका शरीर अत्यन्त सुगन्धित हो गया। समस्त शृंगार करके वे आ खड़ी हुई और राग रागनियों में संगीत आलापने लगी। उनके कंठ से कोयल के समान मधुर ध्वनि हो रही थी। सभी सखियां उसके साथ-साथ गा रही थी। १०७३

सर्वप्रथम उसने भैरव राग में आलाप लिया, और उसकी पांच पत्नियों का स्थापन किया। तदुपरान्त भैरवी, नट राग, मालवश्री (मालव श्री की पत्नी) पटमंजरी, ललित रागों का गायन किया। १०७४

तदुपरान्त मालकोश और उसकी पांच पत्नियों का भी गायन किया। गौड़ी, खंभायची, मालव राग और उसकी रागनियों, मानवती, गुणकली का भी गान किया। १०७५

तीसरी बार हिंडोल राग और उसकी पांच भार्याओं, राग विलावल, टोडी, देशाखी (रागिनी) देवगंधार, मधु-माधवी, गाकर सभा को सुशोभित किया। १०७६

चौथी दीपक राग में संगीत छेड़ा। उसकी पांच पत्नियां हैं। धन्याश्री, वसन्त, कान्हड़ौ, बैराडी, देशाख रागें सुनाई। १०७७

पांचवी मेघमल्हार गाई, जिसकी भी पांच पत्नियां हैं। गूजरी, गोंडकली कुंकुम, मेघमलार बंगलो (बंगालौ या बंगलिया) रागों में गायन किया।१०७८

छठी श्रीराग में गायकी प्रस्तुत की, जिसकी पांच सहेलियां है। पंचम, कामोद, श्वेत मल्हार, आसावरी और केदारा को साथ गाया। १०७९

ये छत्तीस राग-रागनियों का बखाण किया, उनकी शाखा प्रशाखाओं का विहागड़ौ, भारू, सोरठ, जैजैवंती, काफी एवम् श्री राग पर विचार किया। १०८०

वे नाच रही थी, गा रही थी, जब भी वाद्य की गति में विराम आता, तभी बादशाह की ओर अपना पांव ऊपर उठाती थी। बादशाह यह देखकर बहुत पश्चात्ताप करता और वह कहता था कि इस रण्डी की गति देखो।

हमारी सेना में ऐसा कोई जवान है, जो इस वैश्या के पांव में तीर की चोट कर सके। बादशाह के द्वारा कही गई यह बात सेना में फैल गई और उडांण-सीह तक पहुंच गई। १०८१

वह बादशाह के कैदखाने में वन्दी बना पड़ा था। उसके गले में लोहे की हंसली और पांवों में बेड़ियाँ पड़ी हुई थी। जब उसने यह बात सुनी तो वह बोला कि यदि मुझे खोल दिया जावे तो मैं उसको मार सकता हूं। यह बात बादशाह से जाकर कही गई—तब प्रसन्न होकर उसने उडाणसीह को अपने पास बुलाया। उडाणसीह ने वहां जाकर बादशाह को प्रणाम किया। बादशाह ने उसको कहा। १०८२

बादशाह ने कहा कि इस पातर (वेश्या) को तीर से मार दो तो हे उडा-णसीह ! मैं तुमको ऊँचा पद देकर सवाया मनसब दूंगा। १०८३

यदि तुम मेरा यह काम कर दोगे तो मैं तुम्हारे अभिवादन को बहुत अधिक महत्व देकर स्वीकार करूंगा। यह रण्डी जब भी पांव उठावे, तब उसी पांव में तुम्हें बाण का प्रहार करना है। यदि ऐसा आयुध तेरे पास आवे, तो मैं तुम्हें उच्च पद देकर मुँहमांगा पुरस्कार दूंगा। उडाणसीह ने कहा कि जैसा आप कहे वैसा ही मैं करूंगा—यदि मुझे एक माह का समय मिल जावे। १०८४

तुम यह काम अभी ही क्यों नहीं करते ? एक महिने का समय कब पूरा होगा और कब वह दिन आयेगा। उडाणसी ने पुनः निवेदन किया कि मैंने पन्द्रह वर्षों से अन्न नहीं खाया है, रात दिन हथकड़ियों बेड़ियों से जकड़ा रखा गया हूं। मैंने भूख और प्यास सब कुछ सहन किया है। मुझमें वह शक्ति कहां हो सकती है, इसी कारण मैं एक महिने का अवकाश चाहता हूं। १०८५

बादशाह ने उसको उसी समय बन्दीगृह से मुक्त कर दिया और आदेश दिया कि यह जो भी वस्तु खाना चाहे, इसे खिलाई जावे और इसकी खूब सेवा की जावे। जब इस प्रकार का प्रबन्ध किये एक मास हो गया तो वह पौष्टिक पदार्थ खा-खाकर बहुत स्वस्थ हो गया। बादशाह को तो वही लगन लगी हुई थी। बादशाह ने उसकी और खोज खबर ली। १०८६

उडाणसी को बुलाकर बादशाह ने कहा कि इस पातर को देखो। इस कुलटा को मार कर अपना मुजरा लो। उडाणसीह ने कहा कि मेरी शक्ति की कबाण (धनुष) ढूंढकर मंगवाओ। तब बादशाह ने शाही कबाण लाने की आज्ञा दी और कहा कि आज इसका कौतुक देखा जाये। बड़े-बड़े दस बारह धनुष ढूंढवा कर मंगवाये गये और उसके सामने डाल दिये। १०८७

अच्छा सा धनुष ढूंढकर उसने उठा लिया और उडाणसी ने उसकी प्रत्यंचा चढाई। प्रत्यंचा खींचते ही धनुष टूट गया। तब बादशाह ने उसको दूसरा ले लेने को कहा। जब दूसरा भी टूट गया तो उसने तीसरा उठा लिया। वह भी टुकड़े-टुकड़े हो गया तो उसने सभी दस बारह धनुषों को भी तोड़कर फेंक दिया। १०८८

तब बादशाह क्रुद्ध हो उठा और बोला कि क्या वह अपने मामा के पक्ष में हो गया है। तुमको ऐसा क्या सूझा है? उडाणसी ने उत्तर दिया कि मुझे तो एक ही धनुष चाहिये। मैं आपके विरुद्ध कुछ नहीं कर रहा हूं। मुझे तो मेरी शक्ति का धनुष चाहिए। तब बादशाह ने पूछा कि तुम्हारा धनुष कहां है। उडाणसी ने बताया कि वह दिल्ली में ही रह गया है। १०८९

मैंने एक कलाल के यहां शराब पिया था। उसका मुझ पर एक लाख टके से ऊपर कर्जा हो गया। बादशाह ने उसको लेने के लिए आदमी भेजे। उन्होंने जाकर देखा कि उस धनुष को कलाल ने अपनी छान का बळीड़ा बना रखा हैं। तब कलाल के घर को उखड़वा (गिराकर) कर अठारह कहार उसको उठा कर लाये। पन्द्रह दिन तो लाने में ही लग गये। तब तक वह और अधिक पुष्ट हो गया। १०९०

तब उसने धनुष पकड़कर, प्रत्यंचा चढायी, उसने पूरी शक्ति लगाई, पर वह चढ नहीं पा रही थी। तब उडाणसी ने मन में सोचा कि पन्द्रह दिन तक यदि और प्रतीक्षा की जाए तो तब तक थोड़ी शक्ति और मिल जायेगी। इसके लिये कोई उपाय किया जावे। उसने बादशाह से निवेदन किया कि मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करें। १०९१

इस धनुष को सेना में फिराया जाए और मेरी समता का कोई और युवा यदि मिल जावे तो वह इस प्रत्यंचा को चढा दे। मैं उसको अपने सहयोगी के रूप में रखना चाहूंगा। बादशाह को देखने का शौक था। उसने उडाणसी को आज्ञा दी कि तुम इसको लेकर फिरावो। कहारों ने धनुष को लेकर सारी सेना में फिराया और इस काम में पन्द्रह दिन और भी लग गये। १०९२

उसको कौन चढा सकता था, किसमें इतनी शक्ति थी? तब तक उसने शरीर में और भी शक्ति प्राप्त कर ली। तब उसने जोर लगाकर प्रत्यंचा को ताकत के साथ खींच कर धनुष पर चढ़ा दिया। पर वह पूर्व की भांति खींची नहीं जा रही थी। बहुत प्रयत्न किया, पर प्रत्यंचा कान तक कर्षित नहीं हो पाई। तब उसने कहा कि यदि पन्द्रह दिन और मिल जाय तो मुझमें पहले वाली ताकत पुनः लौट आयगी। १०९३

तब उसने बादशाह की सेवा में उपस्थित होकर कहा कि आज्ञा हो तो मैं लश्कर में इस धनुष को फिराकर देखता हूं, यदि कोई मेरे बराबर शक्ति वाला कोई जवान मिल जाय और इसको खींच सके। बादशाह को तमाशा देखने का शौक था, अत: उडाणसी को आज्ञा लेकर जाने को कहा। धनुष को लेकर फिराते हुए कई दिन बीत गये, पर उसको कौन खींच सकता था। उडाणसी उसे पुन: बादशाह के पास ले आया। १०९४

किसी प्रकार उसने तीन मास बिता दिये, तब तक उसमें पहले जैसी शक्ति आ गई थी। उसने अपने ही शिविर में प्रत्यंचा को खींचकर चढ़ाया। तदुपरान्त खींचने पर वह कान तक खींच सका। इधर राव हमीर की सभा में जब पातुरे नाच गा रहीं थीं, तब बादशाह ने उडाणसी को बुला लिया। उडाणसी ने बादशाह के पास पहुंच कर अभिवादन किया और मन ही मन में अपने उस्ताद (गुरु) का स्मरण किया। १०९५

बादशाह ने उडाणसी से पूछा कि वह अपनी शक्ति की जानकारी दे। प्रतिदिन ये पातुरें अपने पाँव मेरी ओर उठाती है, यह कहाँ तक उचित है। १०९६

राव रणथंभोर में बैठा रहता है और उसके सामने धारू नाच गान करती है। बादशाह अलाउद्दीन उसे देख रहा है और उडाणसी पास ही में खड़ा है। १०९७

उडाणसी ने निवेदन किया बादशाह सलामत उसको देखें। मैं अभी पातुर (धारू) के पाँव में बाण संधान करता हूं, और वह आकाश की ओर उड़ कर जाती है, अर्थात् काल-कवलित होती है। १०९८

राव हमीर ने संगीत सभा प्रारंभ की। राज्यांगन में तरुणी (धारू बारू) नृत्य कर रहीं थीं। अलाउद्दीन क्षण-क्षण में अपना सिर धुन रहा था और जल भुन रहा था। नर्तकियों के पाँवों में जेवरों की रुनझुन ध्वनि हो रही थी और कानों में सोने का कर्णाभरण तरंगायित हो रहा था। पाखरों से सुसज्जित हाथी घोड़े, राजा और सैनिक चारों ओर घेरा डाले हुए थे। उडाणसी ने गम्भीर घोष के साथ हाथ में धनुष उठाया और छत्र के सामने तानकर संधान किया और पातुर ताल देती हुई हड़बड़ा कर गिर पड़ी और मर गई। १०९९

धारू मार डाली गई और बादशाह इससे प्रसन्न हुआ। बादशाह ने उडाणसी को चार गुना मनसब और तलवार (घोड़ा या धनुष ?) से सम्मानित किया। ११००

पातुर (धारू) ऐसे उड़ी, जैसे कोई पत्ता उड़ रहा हो और दूर किले के

नीचे अलाउद्दीन की सैन्य टुकड़ी में गिर गई। बादशाह ने सैनिकों से कहा कि दौड़कर जावें और उसे उठाकर अधर से यहाँ ले आवें। आदेश पाते ही अनेक सैनिक दौड़ पड़े। उन्हें दुर्ग से ही मार गिराया गया। इस प्रकार अलाउद्दीन के सेना के तीन सौ लोग मारे गये। वे दुर्ग के पास अपार संख्या में शहीद हो गये। ११०१

धारू के मारे जाने से राजा का मुख कुम्हला गया। उसके हृदय में चिंता ने जन्म ले लिया। तब महिमाशाह ने खड़े होकर निवेदन किया कि हे राजन्! आप उदास कैसे हो गये? राव हमीर ने कहा के उनकी सेना में ऐसा दक्ष धनुर्धर आया है, जिसने मनोविनोद के इस साधन को नष्ट कर दिया है। उस धनुर्धर का बाण यहाँ तक मार कर गया है, ऐसा न हो कि किसी ओर पर भी यह आघात कर दे। ११०२

तब महिमाशाह ने निवेदन किया कि हे रावजी! आप मेरी बात सुनें। वह मेरा ही शिष्य उडाणसी है, जिसने यह बाण चलाया है। ११०३

महिमाशाह ने बताया कि यह बाण हमारा है, जिसे मेरे भानजे उडाणसी ने चलाया है। यह लड़का मेरा चेला है, मैंने थपेड़े मार-मार कर उसको बहुत प्रशिक्षित किया है। यदि आप आज्ञा दें तो मैं बादशाह को मार डालूं और तत्काल धारू को मारने का बदला चुका दूं। राव ने कहा कि बादशाह को मत मारो। इसको मारने से तो हमारा सारा खेल ही समाप्त हो जायगा। ११०४

राव हमीर ने महिमा को कहा कि बादशाह को मारने से हमारा सारा खेल ही बिगड़ जायगा। अब यदि बराबरी का खेल हो तभी हमें प्रसन्नता होगी। ११०५

महिमाशाह ने तब कहा कि यदि आज्ञा हो तो मैं अलुखान के सिर में बाण का संधान कर उसका वध कर दूं, जो बादशाह का रक्षक और दाहिनी भुजा कहलाता है और उसके हाथियों को प्रशिक्षित करता है। इन दोनों में से किसी को भी मार डालने पर वह सब दुश्चिता जो आपको हो रही है, समाप्त हो जायगी। राव ने उत्तर दिया कि ऐसा कोई काम न करें जिससे यह घेरा उठा कर लौट जावे और मुझको कोई अपयश लग जावे।११०६।

महिमाशाह बोला कि आपकी आज्ञा हो तो मैं बादशाह के सिर पर सुशोभित छत्र पर बाण संधान कर उसको दूर गिरा दूं।

तब राव ने कहा कि यह बात उचित है। अब आपने मेरे मन की बात समझली है। छत्र को मार गिराने का अर्थ है वह (बादशाह) भी मारा

गया। अब आप धारू के वध का बदला लें। इससे बदला भी पूरा हो जायगा और खेल भी यथावत् रह जायगा। धारू के वध का प्रतिशोध बादशाह को मार कर मत लो।११०७।

एक पत्र इस प्रकार लिखा गया कि "हम धारू के वध का प्रतिशोध लेने के लिये हम तुम्हारे छत्र पर बाण मार कर उसे ही गिरा रहे हैं। यह मत पूछना कि यह बाण किसने चलाया है। एक स्त्री को मारने का बदला तुम्हें मार कर नहीं लिया जा रहा है। इस बार तुम्हारे प्राणों की रक्षा कर ली है।" इस प्रकार का पत्र लिख कर तीर के साथ बांधा गया और बादशाह के छत्र के दंड पर वार किया।११०८।

महिमा ने बादशाह को लिखा कि आप यह स्थान छोड़ कर दूर चले जावें। इस बार तो राव हमीर ने आपकी रक्षा कर ली है। भविष्य में सूर्योदय होते ही मैं आपको मार डालूंगा।११०९।

छत्र पृथ्वी पर जा गिरा, बादशाह के सिर पर लोहे के (बाण के फल और दंड के) टकराने की आवाज सुनाई दी। वह भयभीत होकर छत्रदंड को हाथ से पकड़ कर ऐसे बैठ गया, मानो गोरखनाथ ध्यान मग्न हो रहे हों। राव राजा, सभी योद्धा और सुल्तान बैठा हुआ था। तीर क्षिप्र गति से आया। उसके साथ महिमाशाह के द्वारा लिखे गये पत्र को देखा।............ धारू के मारे जाने का हमीर के मन में उत्पन्न क्रोध दूर हो गया और छत्रभंग होते ही हमीर ने भोजन कर लिया।१११०।

छत्रदंड को बींधता हुआ बाण वृक्ष में जाकर गड़ गया और छत्र आवाज करता हुआ तत्काल दूर जा गिरा। सभी दरबारी आश्चर्य करने लगे कि यह छत्र दूर जाकर कैसे गिर गया है। जब उन्होंने बाण को देखा—तो सर्वत्र हाहाकार मच गया। बादशाह भी भयभीत हो गया। बादशाह वहां से उठ कर दूर भाग गया और वृक्ष में गड़े हुए बाण को मंगवा लिया।११११।

सभी योद्धा और वजीर एकत्र हुए और पत्र पढ कर सुनाया गया। उसमें मीर महिमाशाह ने लिखा था कि अब यहां से डेरे उठा कर और कहीं लगा लें।१११२।

बादशाह ने कहा कि महिमाशाह को छोड़ कर ऐसा और कौन कर सकता है। यदि महिमाशाह एक बार मेरे हाथ में आ जावे तो मेरा काम (स्वार्थ) पूरा हो जावे।१११३।

बादशाह ने कहा कि आज तो हम बच गये। उसने अब दूसरी बात सोची और लौट कर रण की पहाड़ी पर आया और वहां आकर उसने एक

उपाय पर विचार किया उसने कहा कि किसी प्रकार इस घाटी को मिट्टी पत्थरों से भर दिया जावे । तदनुसार चारों ओर समाचार पहुंचाये गये और तोबरे भर भर कर घाटी में मिट्टी डलवाई गई ।१११४।

रण के पर्वत पर आकर बादशाह ने घाटी को भरवाना प्रारम्भ किया । वहां अनेक कारीगरों को नियुक्त किया गया । मिट्टी डालने वालों को एक तोबरे का एक रुपया दिया गया ।१११५।

रात पड़ जाने पर वह मिट्टी डलवाता था क्योंकि दिन के समय कोई मिट्टी डाल नहीं पाता था । दिन में गोलियों की बौछार होती रहती थी, अतः भयभीत होकर कोई मिट्टी नहीं डालता था । तब बादशाह ने दैनिकी में बढोत्तरी (वृद्धि) कर दी । उसने एक तोबरे पर एक मोहर देकर मिट्टी डलवाई । जिस व्यक्ति की जिन्दगी समाप्त होने वाली थी, जिसका आयुर्बल पूरा हो गया हो, वह मिट्टी डाल कर मोहर लाता ।१११६।

राव हमीर ने अपने सभासदों से कहा कि अब इसका क्या उपाय किया जावे । बादशाह अब जिद करके रात में मिट्टी डलवा रहा है ।१११७।

महिमाशाह ने कहा कि बादशाह को मिट्टी डलवाने दो । अब आप मुझको आज्ञा दो, जिससे मैं इसको मार डालूं ।१११८।

राव हमीर ने कहा कि आपको यही करना चाहिए, आप मुझे विश्वास दिलावें । पहले ही झगड़ा मत करो—पता नहीं क्या होगा ।१११९।

तब राव हमीर ने अपने आदमियों से कहा कि बादशाह ने ऐसी हठ कर ली है । यदि इसने कहीं पुल का काम पूरा कर लिया और मूर्खता के साथ यह दुर्ग में चढ आवे तो आप इस पुल पर इससे युद्ध कैसे जीतोगे । अतः आप लोग भी सावधान रहें । इसको तो अपने प्राणों की चिन्ता नहीं है । देखते हैं भगवान क्या करते हैं ।११२०।

आधी रात के बाद राव हमीर जब महलों में सोया हुआ था, तब पद्म ऋषि उसके स्वप्न में आये और उसको सभी विचार कह दिये ।११२१।

रात में सपने में आकर पद्म ऋषि ने राव हमीर को दर्शन दिये और कहा आप अंदर रहते हुए भी इतने भयभीत क्यों हैं । आप पद्मताल की मोरी (नहर) खोल दें और बांधे गये सेतु को इस प्रकार तोड़ कर बहा दें ।

एक बूढे तेली को बुलवा लेना, वह आपको मोरी का स्थान बता देगा ।११२२।❀

रात बीत गई और जब सूर्योदय हुआ तब राव हमीर राजसभा में आया । वे मन में विचार करता था कि दरबारियों से स्वप्न की बात बता दूं, पर बताते हुए उसे शर्म आ रही थी कि कहीं ये लोग मेरी हंसी न उड़ावें । ये कहेंगे कि राजा तांतल्या (?) (संभवत = तंदुल = तृणवत् जंगली चावल) बीनना चाहता है । तालाब में इतनी शक्ति (चमत्कार ?) कहां है ? फिर भी अपने मन को दृढ करके उसने कहा कि आप लोग मानें तो मैं आपसे एक बात कहूं ।११२३।

राव ने दरबार में स्वप्न की सारी बात कह दी और सभी ने उसे मान लिया, पर कतिपय दुर्बुद्धि लोग कह रहे थे कि स्वप्न को सत्य नहीं मानना चाहिए ।११२४।

सभी सामंतों ने कहा कि महाराज आप जो भी आज्ञा दें हम करने को तय्यार हैं । तब राजा ने स्वप्न की बात को अच्छी तरह समझा कर कहा । उसे सारी राज सभा ने सुना । दुर्बुद्धि वाले व्यक्तियों की समझ में यह बात समझ में नहीं आई । उन्होंने कहा कि सपने की बातें सच्ची कैसे हो सकती हैं । जो समझदार व्यक्ति थे, उन्होंने इस बात को सत्य मान लिया और वे खड़े होकर बोले ।११२५।

इसमें हमारा क्या जाता है ? उस तेली को बुलवा कर उस स्थान को देख लिया जाय । तब वृद्ध तेली को आदमी भेज कर बुलवाया गया । उससे पूछा गया तब उसने वहां जाकर वह स्थान बताया । उस स्थान को खुदवा कर देखा गया । तब वहां मोरी (नाली) निकल आई, जिसे सबने देखा । उस मोरी के मुख पर चालीस हजार मन वजन का एक मोटा तवा (चद्दर) आडा लगा हुआ था ।११२६।

तेली ने कहा कि इस स्थान पर शराब की धारा प्रवाहित करके बकरे की बलि दें और उसके उपरान्त मोरी (नाला) छोड़ा जाय तो वह पुल को बहा देगा ।११२७।

बकरा, बाकळे (उबाले हुए उड़द आदि) और शराब मंगवाई गई । बकरे की बलि देकर दारू (शराब) की धारा प्रवाहित की गई । सबने मिल

❀ पद्य सं० ११२२ के बाद क्रमांक रहित दोहा—(?)

मुझमें सातों समुद्रों और नौ से नदियों की सीर (धाराएं) हैं । हे हमीर ! तूं हठ मत कर मैं बादशाह के द्वारा निर्मित पुलिया को तोड़ कर बहा दूंगा ।

कर तवे को हटाया और वहां से पानी छोड़ा। पानी बहुत गहरा था। वह बहते हुए ऐसे उमड़ पड़ा, मानो भादवे के महीने में सरिता नदी बादलों के समान उमड़ कर बह चली हो। पुल टूट गया। सारी मिट्टी और सामने आने वाली हर वस्तु को बहा कर पानी दूर ले गया।११२८।

पानी का वेग इतना भयंकर था कि बादशाह के द्वारा बनवाया गया पुल एक क्षण में ही बह गया। तब राव के मन में धीरज आ गया और वह बहुत प्रसन्न हुआ। जब बादशाह ने पुल के स्थान को देखा तो अपने सभासद् सैनिकों के साथ उसने बहुत आश्चर्य किया कि दुर्ग में इतना पानी भरा है, तब यह हमारे हाथ में (अधिकार में) कैसे आ सकता है।११३०।

तब बादशाह ने दांतों तले अंगुली दबा ली और बोला इस दुर्ग में यह नदी कहां से आ गई, जिसमें मेरे द्वारा बांधे गये समस्त पुल को बहा दिया। इस दुर्ग पर इतना पानी है, तो मैं भी अपनी इच्छानुसार काम करूंगा। मैं अब कोई ऐसा प्रबंध करूंगा, कि जिससे और किसी को उसको विफल करने में सफलता नहीं मिल सकेगी।११३१।

जंगल से वृक्ष, झाड़-झंखाड़ और घास-फूस काटकर मंगवाया जाय। उनके मध्य में स्थान-स्थान पर पत्थरों की चुणाई की जावे। उसके बीच में मोरी (नाले) की संधि रखें जिससे बीच में पड़ा हुआ सारा पानी बहकर निकल जाय। सबसे पहले बादशाह ने एक पत्थर उठाया और उसे अपने सिर पर रखकर वहाँ डाला। पास में जितने भी आदमी खड़े थे—वे सभी सत्ताइस लाख एकदम इस काम में लग गये। ११३२

शत्रु ने दुवारा पाल (दीवार) बंधवा दी। उसकी सूचना जब राव हमीर को मिली तो उसने लोगों से कहा कि पहले तो पद्मताल ने हमारी प्रतिष्ठा रखली थी। इस बार जब वह उधर से प्रवेश करे तब इधर से आपकी ओर से प्रहार होना चाहिए। आप लोग कटि-बद्ध होकर जावो और तलवारों से मार-मारकर उन्हें दूर भगा दो। ११३३

एक भाट ने कहा कि मैं जाता हूं और यदि सम्भव हुआ तो मैं उसे यहाँ से दूर हटा दूंगा। ११३३

राव ने कहा कि तुम क्यों जाते हो? वहाँ जाकर तुम क्या कह करके अर्जन कर लोगे। उससे जाकर तुम क्या कहोगे? वह मुझे विधिपूर्वक समझा कर कहो। भाट ने कहा कि मैं कवित्त पढ़कर जोश दिलाऊंगा और उसको यहाँ से दूर भगा दूंगा। मैं एक ऐसी टक्कर लगाऊंगा जो उसके मर्म पर जाकर चोट करें। ११३४

भाट बुर्ज पर जाकर खड़ा हो गया और वहाँ से उद्घोष करते हुए कहा —"हे अलाउद्दीन! तूं छत्रपति बादशाह होकर मिट्टी क्यों ढो रहा है। ११३५

जिसके सिर पर मणि-माणिक्यादि रत्नों से जटित सोने का मुकुट सुशोभित है। जिसके सिर में पुष्पों की सुगन्ध का निवास है, और जो क्षण के लिए भी दूर नहीं होती है। जिसका सिर किसी के सामने नहीं झुका, वही सिर आज यहाँ बैठा हुआ है। जिस सिर के सामने जन-प्रतिनिधि और राजा सिर झुकाते हैं और उदय होते सूर्य के समान देखा गया है—यह हमीर राव अत्यधिक कृपण है, यह देवगिरी के राजा राम के समान तुम्हें रणथंभोर का दुर्ग नहीं देगा। इन कठोर पत्थरों को ढोते हुए सुल्तान के सिर के बाल उड़कर चाँद पड़ गई है। ११३६

खेम भाट के शब्द सुनकर बादशाह ललकार कर बोला—राव से जाकर कहो कि हम तो कल ही उठकर चले जायेंगे। ११३७

आप जैसी आज्ञा दें वैसा ही मैं कह दूंगा, उसे राव मान जावेगा। आप समस्त देश के बादशाह हैं, इनके लिये क्या आदेश है? ११३८

जब बादशाह ने कवित्त सुना तो वह मन में बहुत अधिक खिन्नचित (उदास) हुआ। उसने कहा कि यदि राव थोड़ी बहुत पेशकशी दे दे, तो अभी एक क्षण में यहाँ से उठकर चला जाऊंगा। मुझे बहुत अधिक नहीं चाहिए। एक घोड़ा और एक चाबुक लादो। अरे डरपोक! बादशाह के रूप को देखकर अंदर घुसकर क्या बैठ गया है। मेरा नाम अलाउद्दीन है, मैं यहाँ से बिना कुछ लिये नहीं जाऊँगा। मैं तुम्हारे सभी अपराध क्षमा करता हूं, और यह दुर्ग भी तुम्हारे निवास के लिये देता हूं। ११३९

राव हमीर ने दुर्ग में यह सब बातें सुनी और कहा कि बादशाह विक्षिप्त होकर प्रलाप कर है। याचना करने से दान नहीं मिलता है। ११४०

राव ने सुल्तान के प्रति कहा कि यह दुर्ग हमें भगवान ने दिया है। तुम्हारे जैसे व्यक्ति तो यहाँ चिनाई का काम करते हैं। यह स्थान तो हमारे जैसों से ही सुशोभित होता है। ११४१

भाट ने राव हमीर को जाकर कहा कि बादशाह को एक घोड़ा दे दो। इस प्रकार के नम्रता प्रदर्शन को ही वह लाखों में गिन लेगा और घोड़ा लेकर चला जायगा। ११४२

हमीर ने उत्तर दिया कि नाक नमन (अधीनता स्वीकारना) करने को तो दासियाँ ही बहुत हैं और लाख भी पीपल में बहुत पैदा होती है। भविष्य

में ऐसी बात दुबारा मत कहना। ११४३

खेमसी भाट ने निवेदन किया कि राव हमीर अपनी टेक (मर्यादा, जिद) को नहीं त्यागेगा। बादशाह भले ही यहाँ वर्षों तक जमा रहे, उसको राव से एक कौड़ी तक नहीं मिलेगी। ११४४

हे राव हमीर ! अपनी जिद को छोड़ दो और बादशाह को एक घोड़ा दे दो। आप यही समझ लेना कि दान आपने किसी भाट को दिया है। आप इन सबका यश क्यों नहीं प्राप्त करते हैं। ११४५

राव कहता है कि, सुमेर पर्वत चलायमान हो जावे, ध्रुव अपना स्थान छोड़ दें, सातों समुद्रों का पानी सूख जावे, भगवान राम अपनी मर्यादा तज दें, रावण भी अपनी टेक छोड़ देवे, महाभारत युद्ध में भीम जैसा योद्धा मारा जाये, गंगा नदी का प्रवाह पश्चिम की ओर हो जावे, विक्रमादित्य अपना साहस छोड़ दे और राजा भोज भी अपनी विद्या भूल जावे, राजा बलि अपने दिये गये वचनों से मुकर जाय, राजा हरिश्चन्द्र अपने सत से विमुख हो जावे, पृथ्वी और आकाश मिलकर एकमेक हो जावे तो भी हमीर अपने हठ को नहीं छोड़ेगा। ११४६

भाट ने राव हमीर को बार-बार समझाया, पर हमीर को उसकी एक भी सम्मति पसन्द नहीं आई। भाट ने समझाया कि हे राजाजी ! इतना हठ नहीं करना चाहिए। इससे आपका ही काम बिगड़ता है। घोड़े का ऐसा कौनसा महत्त्व है ? यह तो चारण भाटों को भी दान में दे देते हो। वही एक घोड़ा इसको देकर झगड़ा समाप्त करो और उसके बाद देश में अधिकार करके राज करो। ११४७

राव ने कहा कि मैं भाट और चारणों को तो भले ही लाखों की सम्पत्ति दे दूं, पर इसको कुछ भी नहीं दूंगा। यह पहाड़ों पर भले ही जमकर बैठा रहे। इसके किये क्या कुछ होता है। ११४८

राव ने कहा कि हे भाट ! तूं जानते हुए भी अज्ञानी कैसे बन रहा है ? क्या तूं मेरे द्वारा किये गये इतने समय के हठ को व्यर्थ ही गँवाना चाहता है ? मैंने अपने मुख से जो कुछ कह दिया है, उसके विरुद्ध नहीं जाऊँगा। जो होना है वह तो होकर रहेगा, मैं अब क्यों विलाप करूँ। मैंने अपने प्राण होमने का संकल्प लिया है, उसी के लिये अब मैं दांव लगाऊँगा। तुम इस प्रकार की निर्बलता की बात मत करो। ऐसा महान् अवसर मुझे फिर कब मिलेगा। ११४९

हमीर का उत्तर लेकर भाट पुनः बुर्ज पर गया और बादशाह को सम्बो-

धित करके बोला—हे बादशाह अलाउद्दीन ! मैंने राव हमीर के मन को अच्छी तरह टटोला है। उसके घर में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो वह बादशाह को भेंट करे। वह कहता है कि मैं तो बादशाह से कुछ मांग कर लेने की आशा करता हूं। उसके पास अपने घर में ऐसी कोई प्रिय वस्तु नहीं है जो बादशाह को दी जा सके। अपने प्राणों से बढ़कर और कोई प्रिय वस्तु उसके पास नहीं है, इन प्राणों को बादशाह की जब भी इच्छा हो ले सकता है। (अर्थात् वह बादशाह को कुछ भी देने को तैयार नहीं है, उल्टा बादशाह से ही उसने जिन वस्तुओं की मांग की है वह राव को दे। राव युद्ध करके अपने प्राणों की बलि देने को तैयार है।) ११५०

भाट की बात सुनकर बादशाह ने मन में विचार किया कि मुझे जो कुछ प्राप्त करने की इच्छा थी, वह सारा राज्य तो मैंने अधिकार में कर ही लिया है। इसके चारों ओर थाने स्थापित करके शेष प्रदेश पर भी अपना शासन स्थापित करलूं। मेरा उद्देश्य तो सब कुछ पूरा हो ही गया है, अब व्यर्थ ही बिना काम के क्यों अपना समय नष्ट किया जावे। यह भले ही दुर्ग में रहता रहे, अन्दर रहकर खायगा क्या ? मैंने इसके पंख काटकर इसको छोड़ दिया है, अब यह किस तरह से लड़ने के लिये आयगा ? ११५१

अलाउद्दीन उतावला होकर दिल्ली की ओर दौड़ चला। चारों ओर थाने स्थापित करके उसने हार थककर प्रस्थान कर दिया। ११५२

भाट के द्वारा कहे गये वचन को हृदय में रखकर बादशाह वापिस लौट गया। उसने सूरवाल गाँव से आगे डूंगरी के पास जाकर डेरे डाल दिये। सभी लोग कह रहे थे कि बादशाह अब लौट गया है, पर राव हमीर को विश्वास नहीं हुआ। राव ने कहा कि इसको चले जाने दो उसके बाद अपने प्रदेश को इनसे छीन लिया जावे। ११५३

दशम अध्याय

राजा के रौंपाल और ख्योंपाल दो प्रधान थे, उनसे राव हमीर बहुत अधिक स्नेह रखता था। राज्य के प्रशासन का सारा काम वे ही चलाते थे। राजा ने ही उन्हीं पर सारा भार डाल रखा था। ११५४

दुर्ग में एक गंगेलवाल जाति(शाखा) का बनिया प्रधान था। उसने अन्यों से मिलकर और ही षड्यन्त्र करने का निश्चय किया। उसने कहा कि इस मौके पर हमने अपने बैर का प्रतिशोध न लिया तो हमारा जीवित रहना ही व्यर्थ है। अब कोई ऐसा षड्यन्त्र रचा जावे कि बादशाह लौटकर वापिस आ जावे।

अपने में से एक व्यक्ति बादशाह से जाकर मिले और दूसरा अन्न-भण्डारों में चमड़ा बिछा दें। ११५५

ख्यींपाल ने उसको समझाया कि आप बहुत बुरा विचार कर रहे हैं। यदि राजा यह बात सुन लेगा तो सबको मार डालेगा। ११५६

वह हमें मार डाले या और कुछ भी हमारे साथ घट जावे, ख्यौंपाल ने रौंपाल से कहा कि मुझे और कोई अवसर नहीं मिलेगा। ११५७

रचौंपाल दुर्ग से निकलकर बाहर चला गया, इसका किसी को पता तक नहीं लगा। वह बादशाही डेरे में जाकर बादशाह से मिला। ११५८

रौंपाल शाही डेरे में जाकर सर्वप्रथम दीवान से मिला। बादशाह ने अपने दीवान अलुखान से पूछा कि वह किसका दीवान है। ११५९

अलुखान ने बादशाह को बताया कि यह राव हमीर का दीवान है और आपकी सेवा में आया है। यह आपसे कुछ निवेदन करना चाहता है—आप अब अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त करें। ११६०

राव हमीर ने निवेदन करवाया है कि यह दुर्ग बादशाह को ही मुबारिक हो, आपको ही मंगलकारी हो। मुझे तो अपने चरणों में स्थान देकर अपना चाकर बनालो। ११६१

बादशाह ने रौंपाल से बात की और पूछा कि वह क्यों आया है? रौंपाल ने बताया कि उसे राव हमीर ने आपके पास भेजा है। राव दुर्ग से उतरकर तलहटी में आया हुआ है। वे कहते हैं कि इस दुर्ग में बादशाह ही सुशोभित होवें। रावजी ने कहा है कि बादशाह लौटकर वापिस यहां आवें और एक दो दिन और यहां रहने की कृपा करें। ११६२

बादशाह ने रौंपाल की बात सुनकर कहा—"हम तो वहां तेरह वर्ष तक रहे हैं। अब पांच दस दिन और भी रह लेंगे। हमारी भी इच्छा राव हमीर से मिलने की है।" बादशाह ने रौंपाल से कहा कि जब भी मैं दुर्ग में प्रवेश कर पाऊंगा, तुमको सबके ऊपर स्थान दूंगा। हमारा वापिस जाने में क्या लगता है हम भी वह (किला) देख तो लें। ११६३

बादशाह ने पूछा कि इसमें तुम्हारा क्या स्वार्थ है, इसका रहस्य बताओ। वह इतने वर्षों तक हमसे क्यों नहीं मिला और अब उसके मन में यह बात कैसे आई? रौंपाल ने बताया कि वह इसलिये नहीं मिला कि युद्ध करते समय आपसे मिलता (संधि की बात चलाता) तो वह हारा हुआ कहा जाता। अब आपने घेरा उठा लिया है और वापिस दिल्ली की ओर लौट रहे हैं, तो

राव हमीर की हठ (प्रतिज्ञा) समाप्त हो गई है। ११६४

बादशाह—राव हमीर की ऐसी क्या जिद है कि मर जावे पर अपने मिथ्या गर्व को छोड़ने को तैयार नहीं होता है। जब तक आप राव से लड़ाई करते थे, वह भी आपसे लड़ता रहता था। अब आप वापिस अपने घर को लौट रहे हूं, तो राव दुर्ग से निकलकर आपसे मिलने के लिये उतर आये हैं। वे कहते हैं कि अब आप इस दुर्ग पर अधिकार कर लें और हमें कहीं दूसरा ठिकाना दे दें। ११६५

बादशाह ने कहा कि इस देश (दुर्ग) से भी चार गुणा बड़ाकर विहीन प्रदेश दे दूंगा जहां वह राज करता हुआ खूब ऐशो आराम करें। ११६६

बादशाह वापिस लौट आया और उसके कर्मचारी (लेखाकादि) को वापिस लाकर स्थापित कर दिया। तब ख्यौंपाल ने राव हमीर के पास जाकर अभिवादन किया और बताया कि बादशाह पुनः लौट आया है और इधर हमारे धान्य भण्डार भी खाली हो गये हैं। उसके लिये कोई उपाय किया जाये। आसपास में तो कहीं अनाज उपलब्ध नहीं है। अब कहीं से मंगवा लेना चाहिये। ११६७

तब राव ने कहा कि बहुत अच्छा किया कि तुमने मेरे पास आकर बधाई दी है। राव ने कहा कि चलो इतना तो हुआ कि कुछ दिनों के लिये तो हम युद्ध कर सकेंगे। ख्यौंपाल ने उत्तर दिया कि वास्तव में अन्न बिल्कुल समाप्त हो गया हैं। ओंरा और भौंरा नाम के अन्न भण्डार दोनों ही खाली हो गये है। तब राव हमीर ने अन्न भण्डारों को देखने के लिये और दूसरे आदमियों को भेजा। ख्यौंपाल को भी उनके साथ जाने को कहा। ख्यौंपाल ने ऊपर से कोठे में पत्थर गिरवाया, जो सूखी खालों पर गिरकर आवाज करता सुना गया। ११६८

राव ने इस बात को नहीं माना, उसे विश्वास नहीं हो रहा था। उसने सामंतों से कहा कि अनाज समाप्त हो गया है, अब क्या किया जावें। ११६९

ख्यौंपाल ने उन लोगों से बात बनाकर कहा कि भण्डारों का यह पेंदा बोल रहा हैं। राजाजी ने मेरी बात पर विश्वास नहीं किया, पर अब आपने तो प्रत्यक्ष देख लिया हैं। उन्होंने राव से जाकर बताया कि अन्न भण्डार समाप्त हो गया हैं, यह बात सही हैं। हमने भण्डार में पत्थर डाल कर देखा हैं। पत्थर डालने से भण्डार के तल से रिक्त होने की आवाज आई है। ११७०

तब राव हमीर मन ही मन में पश्चाताप (दुःख) व्यक्त किया कि इस दुर्ग ने हमको जवाब दे दिया है अर्थात् यह दुर्ग अब हमारे हाथ से जाने वाला हैं। राव ने सभी सामंतों को बुलाकर उन्हें समझाते हुए कहा कि, भाईयों !

अब अनाज के भण्डार खाली हो गये हैं, अब दुर्ग से बाहर निकल कर युद्ध किया जावें। अब हम भूखें मर कर क्यों मारे जावें, इससे अच्छा है कि हम तलवारों से संघर्ष करते हुए तृप्त होवें, अपनी भूख बुझावें। ११७१

तब सभी उमरावों ने एक स्वर में कहा कि इन अंबारों (धान के कोठों) क मुख किसने खोले हैं? जिस लोगों ने जाकर देखा था, उन्होंने कहा कि हमने भण्डारों को ऊपर से जाकर देखा है। तब उमरावों ने कहा कि किन्हीं विश्वस्त व्यक्तियों को भेजकर एक बार और सबके मुख (द्वार) खुलवाया जावें। दुबारा जाकर द्वार खुलवा दिये गये और देखा तो अनाज पर खाल (चमड़ा) बिछवा रखी थी। ११७२

उन्होंने देखा कि नीचे अनाज भरा पड़ा था और उसके ऊपर सूखा चमड़ा बिछा रखा था। जहां भी जाकर देखा वहीं प्रभूत मात्रा में अनाज भरा पड़ा था। तब भण्डारों का निरीक्षण करके वे लोग राव के पास लौट आये और जो कुछ प्रपंच (षड्यंत्र) उन्होंने देखा था, उसकी जानकारी राव हमीर को दी। राव ने ख्यौंपाल को बुलवाया, पर बड़ी मुश्किल से दरबार में उपस्थित हुआ। राव ने उससे पूछा कि यह सब क्या है रे! यह षड्यन्त्र तूने क्यों किया, इसका उत्तर दे। ११७३

उसने मौन धारण कर लिया, तो उत्तर क्या मिलता। राव ने उसको बार बार पूछा। फिर भी उत्तर नही मिला तो हमीर ने कोड़ा (चाबुक) मंगवा लिया और कोड़े से पीट पीट कर उसकी चमड़ी उधेड़ दी। मार के आगे भूत भाग जाता है। (इस कहावत को चरितार्थ करता हुआ) अन्त में वह राव के सामने बोल ही पड़ा। उसने बताया कि रौंपाल (रचोंपाल) बादशाह से जाकर मिल गया है और वही मुझे यह उपाय बताकर गया है। ११७४

तब राव ने सामंतों से कहा कि हमारे राज्य का प्रधान शत्रु से जाकर मिल गया है और यहां का सारा भेद उसके सामने बता दिया है, अतः हमारा अन्त निकट आ गया है। ११७५

जैसा भाग्य में लिखा हुआ था, बाज (श्येन पक्षी) इस प्रकार आकर खा गया। राजा के मस्तिष्क में और ही विचार आया। उसने सभी उमरावों को बुलवाकर उनसे कहा कि दुर्ग से नीचे उतरकर युद्ध का सामना करो। तब किसी उमराव ने निवेदन किया कि आपने मन में यह क्या सोच लिया है। हमारे पास इतना अनाज भरा पड़ा है, आप चिंता क्यों करते हैं? वैसे भी इसका उपभोग नहीं करने पर भी हम पांच वर्ष और गुजार देंगे। ११७६

आप मन में इतना विचार क्यों करते हैं। दुर्ग में बैठे बैठे ही हम लड़ाई

करते रहेंगे। जब यह अनाज समाप्त हो जायेगा, तब ही दुर्ग से उतर कर हम युद्ध करेंगे। राव हमीर ने कहा कि आप लोग रहस्य को नहीं जानते। पता नहीं शत्रु से और कौन-कौन मिल गया है। मेरे राज्य का प्रधान खुद उनसे मिल आया है। उसने यहाँ का सारा भेद शत्रु को बता दिया होगा। ११७७

अब हमीर के लोगों (सामन्तों) में अलगाव (परायापन) उत्पन्न हो गया है। अतः अब जीवित रहने का कुछ भी धर्म बाकी नहीं रह गया है। मैं नहीं जानता, अब कौन कब विष पान कराकर हमारी हत्या करदे, या बैठे समय या सोते समय असावधानी की अवस्था में हम पर शस्त्राघात करदें। हमने इतना हठ किया (स्वाभिमान रखा) वह सब निरर्थक हो जायगा और हमारा सारा जन्म ही बिगड़ जायगा। इस दुर्ग में दौड़ते हुए तुर्क प्रविष्ट हो जायेंगे और सारी जनता को पकड़ कर ले जायेंगे। ११७८

तब वीरमदेव ने राजा से कहा कि आपके मन में तो सदा युद्ध करने की ही बात समाय रहती है। आप कुछेक दिनों के लिये तो ढील दो, विश्राम करो और धैर्य के साथ काम करो। आप इतनी शीघ्रता क्यों कर रहे हो (अधीर हो रहे हो) और मन ही मन में क्यों पछता रहे हो। जिस दिन यह दुर्ग टूटेगा, आप धैर्य रखें, वैसा ही होगा। ११७९

राव हमीर ने कहा—हे वीर वीरम सुनो ! मुझसे ये लोग दूर हो गये हैं। आप यह न समझें कि साह रोंपाल अकेला ही गया है, उनमें और लोग भी सम्मिलित हो गये हैं। आप मेरी जिन्दगी को क्यों बिगाड़ रहे हैं। जो लोग शत्रु से मिल गये हैं, उनका पता लगावें। मेरे मन में तो युद्ध करने का निश्चय हुआ है—इससे आगे आपने कुछ कहा तो आपको भगवान की सौगंध है। ११८०

सब लोगों ने निवेदन कर-करके थक गये, उसका यही परिणाम निकला। लाखों वर्षों में नित नये रूप में आकर शत्रु न खुद शान्ति में रहता है और न हमको रहने देता है। ११८१

तब राव हमीर ने आज्ञा दी कि जिसको यहाँ से जाना हो, वह चला जावे। कोई भी व्यक्ति जो जाना चाहे किसी प्रकार की लज्जा का अनुभव करके (कि कोई उन्हें कायर समझेगा) यहाँ न रहे, ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा। ११८२

दुर्ग में घोषणा करवाई गई कि सबको जाकर कह दिया जाय कि जिसको अपना प्राण प्रिय है, वे तुर्क के साथ जाकर मिल जावें। ११८३

यदि कोई दुर्ग से उतर कर जाना चाहे तो उन्हें न रोका जावे। मेरे साथ वे ही लोग रहें जिन्हें मरने का भय न हो।११८४

सारी राजसभा के सामने राजा ने सबको सुना कर कहा—कि रौंपाल (रचौंपाल) बादशाह से मिल गया है और लोग भी जो बादशाह से मिल जाना चाहते हैं, वे भी जाकर मिल जावें। ११८५

राजा ने सबसे कहा—चाहे राण रौंपाल मिल जावे, चाहे बाहड़ भी खुशी-खुशी (प्रसन्न होता हुआ) जाकर मिल जावे, भोजदेव और भोजराज भी शीघ्र ही जाकर मिल जावें और वीरमदेव और बड़रावत जाजा भी उससे मिल जावे, चन्द्र और सूर्य भी उसके पक्ष में होकर विपरीत हो जावें तो भी मैं दीन वचन अपने मुख से नहीं बोलूंगा। तैंतीस करोड़ देवी-देवता भी उसके पक्ष में हो जावें और मेरा मेरे इष्टदेव (?) अथवा सभी महीपति (राजा लोग (?) भी जाकर मिल जावें हमीर राव कहता है कि यह उससे कभी भी नहीं मिलेगा, जिसके हाथ में कुन्त चलता रहे और श्रेष्ठ घोड़ा यहाँ है। ११८६

जाजन यहाँ पाहुणा बनकर आया था और अब मेरे ही पास घर बसाकर रह गया है। जाजन से भी उसने कहा कि आप भी बादशाह से जाकर मिल जावें। ११८७

हे जाजा! तुम परदेशी (दूसरे राज्य के) पाहुणे (अतिथि) हो, अतः तुम यहाँ से चले जाओ। इस दुर्ग में हम रहेंगे और अपने जीते जी दुर्ग पर शत्रु का अधिकार नहीं होने देंगे। ११८८

जाजा ने कहा, "हे राव हमीर सुनो! बादशाह से और लोग मिल सकते हैं, पर मैं तो तुम्हारी ही छाया में (साथ में रहूंगा)। युद्ध के स्थान को नहीं छोड़ सकता। ११८९

जाजा कहीं नहीं जायगा। ऐसे मनुष्य, उन लोगों के ही पैदा किये हुए हैं, जो दूसरों का (भात) अन्न खाकर संकट के समय उन्हें छोड़ दें। (अर्थात् मैंने आपका अन्न खाया है, मैं आपको नहीं छोड़ सकता)। ११९०

हे जाजा! तुम जगन्नाथ हो और सारे संसार में व्याप्त हो। तुमने हमीर का साथ प्राप्त करके अपनी भागीदारी का अच्छी प्रकार निर्वाह किया है। ११९१

जाजा ने हमीर से कहा कि हे रावजी! अब आप देखें कि मैं अपनी तलवारों से बादशाह के साथ युद्ध कर उसको कैसे आहत करता हूं। ११९२

जाजा ने कहा कि हे वीरम सुनो! मैं राव हमीर से आगे (पूर्व ही) रह

कर युद्ध करूंगा। मैं बादशाह से नहीं मिलूंगा। दुर्ग में रह रहे राव हमीर का साथ मैं नहीं छोड़ूंगा। राव ने अपने मूंछ के बल पर शत्रु को रोके रखा है। मैंने अब तक युद्ध को छोड़कर भागना नहीं सीखा है। मैं शत्रु दल में घुस कर (या संकट के समय) शत्रु का सिर काटता हूं। मैं अपनी माँ पर कोई दोष नहीं लगने दूंगा और न अपने कुल (वंश) पर किसी प्रकार का कोई कलंक लगने दूंगा। मैं सबके सिर पर तपते सूर्य के समान रहूंगा। जो वचन मैंने दिया है, उसी के अनुसार युद्ध करूंगा। जाजन ने कहा कि हे वीरम ! सुनो मैं राव हमीर के आगे (पूर्व) सामने मारा जाऊँगा। ११९३

जाजन ने कहा—हे वीरम सुनो ! मैं अपने स्वामी के लिये इतना काम करूंगा। मैं ही सबसे पहले घोड़े पर चढ़ूंगा और युद्ध-भूमि में जाकर अपनी शक्ति दिखाऊँगा। मैं मुगलों के सैन्य दल को पछाड़ूंगा। जब भाला टूट जायगा तब मैं हाथ में धनुष धारण करूंगा। जब धनुष टूट जायगा तो खड्ग (तलवार) सम्भाल लूंगा। युद्ध करते समय जब खड्ग भी टूट जायगी तो मैं अपनी कटार पकड़कर युद्ध करूंगा। जाजन ने कहा कि—हे वीरम ! सुनो, मैं अपने स्वामी के लिये यह सब करूंगा। ११९४

जब महिमाशाह ने राव हमीर की यह दशा देखी तो उसने अपने बंधुओं को बताया कि राजा अब युद्ध करना चाहता है। यदि खुदा ने कहीं ऐसा कर दिया कि हम लोगों से पहले राव मारा गया, तो उसके मन में ऐसा रह जायगा कि हमारे कारण उसका घर नष्ट हो घया। ११९५

राव हमीर ने सामन्तों से कहा कि—हे ठाकुरों ! सुनो, अब क्या उपाय किया जावे ? ११९६

सभी उमरावों ने कहा कि—हे रावजी ! ध्यान देकर सुनो। बादशाह भले ही यहाँ घेरा डालकर बैठा रहे, भगवान् हमारी सहायता करेगा। ११९७

राव हमीर राज सभा में आकर बैठा और सभी सामन्तों को बुला लिया और कहा—"आप लोगों को एक बात कहता हूं, यदि आपको पसन्द आ जावे तो अपन चलकर बादशाह का वध कर दें। आधी रात को आक्रमण करके तलवारों का प्रहार करके उसको यहाँ से भगा दो। या तो वह घेरा हटाकर भाग खड़े होंगे, अन्यथा मारे जावेंगे। ११९८

जाजा ने कहा कि—हे रावजी ! यहाँ ऊँचे पहाड़ हैं और उन पर झाड़-झंखाड़ भी बहुत हैं, ऐसी स्थिति में इनमें घोड़े किस प्रकार दौड़ सकेंगे। ११९९

राव हमीर ने जाजा को सम्बोधित करके कहा कि—रचौंपाल बादशाह

से जाकर मिल गया है । आप कोई तो ऐसा उपाय करो जिससे बादशाह यहाँ से चला जावे । १२००

तब सबने एकमत हो निवेदन किया कि आप एक बात हमारी माने, कोटा से परली ओर बरड़ी प्रदेश में डाकनहेड़ा नाम का गाँव है । वहाँ एक सिकोतरी (रणचंडी देवी, या प्रेतनी) रहती है । उसकी आँखों में भयंकर तेज प्रवाहित रहता है । वह जो करना चाहे कर लेती है । आपके वचनों का वह आदर कर रक्षा करेगी । १२०१

राव ने कहा कि आप लोग उसे मेरे पास लेकर आवें । वह यहाँ से कितनी दूरी पर है ? उसको मुँहमांगी भेंट दो । १२०२

आप लोग अब विलम्ब न करके शीघ्रताशीघ्र जावें और सीकोतरी को को यहाँ लेकर आवें । उसको मुँहमांगी भेंट देकर जो भी आप चाहते हो, वह काम करावो । अनेक सामन्तों को सीकोतरी के पास जाने के लिये विदा किया । वे चलते-चलते कोटा आये और एक भेद जानने वाले आदमी को उससे पूछा । १२०३

भेदी (गुप्त जानकार) ने जानकारी दी कि वह बारह भैंसों की बलि लेती है । आपके मन में जो भी कामना हो, वह उसको क्षणभर में पूरा कर देती है १२०४

वहाँ से भेदी को अपने साथ ले लिया, जिसने डाकणहेडी स्थान बताया था । वे सभी वहाँ पहुंच गये । सिकोतरी ने उन लोगों से पूछा कि वे लोग कहाँ से आये हैं ? उन्होंने बताया कि वे लोग रणथम्भोर से आये हैं और राव हमीर ने हमें आप लोगों के पास भेजा है । वहाँ सबने मिलकर आपको प्रणाम कहलाया है । आप वहाँ पधारें, आपसे वहां एक काम है । १२०५

राव का ऐसा कौनसा काम है, उसका रहस्य हमसे कहो । ऐसा कौनसा संकट आ पड़ा है, जिससे यहाँ तक कष्ट किया है । १२०६

सामन्त ठाकुरों ने बताया—बादशाह ने दुर्ग को घेर लिया है । वह प्रतिदिन उठते ही हमसे युद्ध करता है । इस प्रकार लड़ते हुए हमें बारह वर्ष हो गये हैं, फिर भी किसी को सफलता नहीं मिली है । अब हमारे राज्य का प्रधान भी उससे जाकर मिल गया है, और उसको हमारे दुर्ग का सारा भेद उसको दे दिया है । इसी कारण से राव हमीर ने आपको आमन्त्रित किया है और बारह भैंसों की यह भेंट भेजी है । १२०७

सारी बातें पूछकर सिकोतरी वहाँ से दौड़कर चली और दुर्ग में जाकर

हमीर से मिली । १२०८

सिकोतरी रणथम्भोर दुर्ग में आकर राव हमीर से मिली । वहाँ आये सभी प्रतिष्ठित सामन्तों ने सिकोतरी के दर्शन किये । हमीर और सामन्तों ने सिकोतरी से कहा, आपने यहाँ पधारकर हम पर बड़ी कृपा की है । हम तो आपकी स्तुति का जाप करते रहते हैं । आपके दर्शन करके हमको बहुत प्रसन्नता हुई । अब अवश्य ही हमारी विजय होगी । १२०९

सिकोतरी ने आदेश दिया कि एक वज्रकेलि का निर्माण करवाया जाय । मैं उसके आधार पर आपको बादशाह के पास लेजाकर मिला दूंगी । १२१०

राव हमीर ने कारीगरों को बुलवा लिया और उनको अच्छी प्रकार समझाकर एक वज्रकेलि बनाकर तत्काल प्रस्तुत करने की आज्ञा दी । कारीगरों ने वज्रकेलि का निर्माण किया और राजसभा में आकर बैठे राव हमीर को प्रणाम किया । जाजन भी उस समय राजसभा में उपस्थित हुआ । १२११

वज्रकेलि के आ जाने पर राव हमीर ने उसको भली-प्रकार देखा-परखा और सिकोतरी को बुलाने की आज्ञा दी । १२१२

सिकोतरी ने राव हमीर से कहा कि अपने सभी सामन्तों को साथ में ले लो और मन में धैर्य धारण करो । मैं आप लोगों को अभी सुल्तान अलाउद्दीन के शिविर के द्वार पर पहूंचा दूंगी । १२१३

जाजा को तत्काल बुलाया गया, वीरम और अन्य सामन्त भी सजधज कर आ गये । महिमाशाह और मंगोल को भी बुलाने का आदेश हुआ, जिन्हें बादशाह से मिलवाया जावे । तब राव हमीर भी हथियार बांधकर तय्यार हुआ और सभी सामन्तों को आज्ञा दी कि हम आज शिकार पर जा रहे हैं, आप सब लोग भी हमारे साथ चलें । १२१४

सिकोतरी को साथ लेकर हमीर ने प्रस्थान किया । जाजा, वीरम, महिमाशाह, मंगोल आदि सभी उसके साथ थे । १२१५

राव हमीर ने प्रस्थान किया । ऊपर मेघाडम्बर (छत्र) लगाया गया, पृथ्वी ही घोड़ा था, पर्वत जिसके पलाण (साज) थे और आकाश जिसका सिर था । सातों समुद्रों और नौ सौ नियासी नदियों से युक्त स्वर्णपेटिका कमर में जड़ी थी । इस शोभा का वर्णने क्या तो चारण करेगा और क्या भाट, ढाढियों ने भी संसार भर के सभी सरस्वती के भण्डारों को ढूंढ लिया पर इसके वर्णन हेतु भाव और भाषा प्राप्त नहीं कर सके । १२१६

राव हमीर ने इस प्रकार अपनी कमर पर बन्धन करवाया और स्वयं

कदलि (केल) पर आकर बैठा। जाजन श्रौर वीरम को अपने पास बैठाया। महिमाशाह और मंगोल को भी बुलवा लिया और सिकोतरी को आज्ञा दी कि अब वह अधिक विलम्ब न करे। तक सिकोतरी ने वज्रकेलि को उड़ाया और बादशाह के शिविर द्वार तक जा पहुंची। १२१७

मेरी शक्ति यहाँ तक ही पहुंचाने की है, आगे द्वार के अन्दर मेरी ताकत नहीं है। जो कुछ तुम्हें करना हो वह शीघ्र ही करलो, अब प्रातःकाल होने वाला है। १२१८

राव हमीर ने ढाल तलवार हाथ में ली और वज्रकेलि से उतरकर अंदर जाने के लिये प्रस्थान किया। उसने जाजा और महिमाशाह को साथ में लिया। उनसे पुनः सलाह की। वीरमदेव और मंगोल को अपने पीछे रखा। उनसे कहा गया कि यदि कोई उनका पीछा करे या लड़ने आवे तो उन्हें मार दिया जावे। वे शिविर में दौड़कर घुसे। वहाँ महिमाशाह ने राव हमीर को बादशाह को दिखाया। १२१९

राव हमीर ने अपनी आँखों से देखा कि बादशाह के अंग-प्रत्यंग कटे पड़े हैं। तब उसने कहा कि शायद बादशाह को कोई मार गया है। १२२०

राव हमीर लौटकर सिकोतरी के पास आया और जो कुछ उसने अपनी आँखों से देखा था, वह सब सिकोतरी को बताया। सिकोतरी ने उससे कहा कि वह एक बार और जाकर खुद देखे। वह सुल्तान तो ओलिया के रूप में प्रसिद्ध है। उसकी रक्षा के लिये देवगण उपस्थित होते हैं। पीर-पैगम्बर सब सहायता करते हैं। ऐसी स्थिति में वह कैसे मारा जा सकता है। १२२१

हाथ में खड्ग लेकर, राव इस प्रकार दौड़कर गया। वहां उपस्थित सभी देवता उसके सामने अवरोधक बनकर आ खड़े हुए। १२२२

राव हमीर से उन्होंने बात की। आप कौन हैं और कहाँ से आये हैं? हमीर ने उत्तर दिया कि मैं हमीर चौहान हूं और सुल्तान अलाउद्दीन को देखने आया हूं। देवताओं ने कहा कि आप यहाँ से वापिस लौट जावें। आप सुल्तान पर तलवार से आघात क्यों कर रहे हैं। यह आपके हाथ से नहीं मारा जायगा। देवता इसकी रक्षा पर नियुक्त हैं। १२२३

तब सिकोतरी ने कदली को उठाया (उड़ाया) और राव सहित सभी सामन्तों को दुर्ग में लाकर उतार दिया। राव हमीर महलों में आकर बैठा और सभी सामन्तों को वहीं बुलाकर उनसे कहा कि बादशाह को सिद्धि मिली हुई है। अब आप लोग कोई सबल काम करें और युद्ध करने से कोई भी भयभीत न होवें। १२२५

कायर लोगों को अपने प्राणों का भय होता है। सामन्तगण उत्साहित हो हो रहे थे। वे कहते थे कि उनके वंश की यही मर्यादा रही है कि या तो हम शत्रु का संहार कर देंगे या स्वयं ही युद्ध क्षेत्र में मारे जायेंगे। १२२६*

महिमाशाह ने जब राव हमीर की यह अवस्था देखी तो उसने मन में विचार किया और अपने भाईयों से कहा कि राजा के मन में अब युद्ध करने की इच्छा प्रबल है। खुदा कहीं ऐसा न करे कि वह हमसे पहले मारा जावे और इसके हृदय (मन) में यह बात स्थायी हो जावे कि उसने अपन के कारण अपने घर परिवार का सर्वनाश करवा दिया है। १२२७

और उसके मन में ऐसीं भावना रहेगी के ये लोग तुर्क (मुसलमान) हैं, अतः मुसलमान से जाकर मिल जायेंगे। अतः ऐसा कोई तरीका निकालो कि इससे पहले हम अपना खेल इनको बता दें। इससे इसके मन की खिन्नता दूर हो जायगी। यदि हम भी इसके आगे रहकर अपने दांव (खेल) चलायें। इसके मन में यदि कोई भ्रम हो तो वह दूर हो जायगा और हम भी हमें दी गई शरण का प्रतिदान देकर अपने धर्म का पालन कर लेंगे। १२२८

महिमाशाह ने मंगोल से कहा कि राव हमीर के मन में हमारे प्रति भ्रम उत्पन्न हो गया है। अतः पहले ही कोई खेल-खेलकर (युद्ध कर) कोई दांव लगाया जाय। १२२९

मंगोल ने महिमाशाह को उत्तर दिया कि यदि आपके मन में यह बात आई है, तो जो कुछ करने का सोचा हो, उसे तत्काल पूरा करें, इसमें किसी प्रकार की शिथिलता न आने दें। १२३०

इतना विचार करके वे उठकर अपने घरों पर आये और सभी स्त्रियों (और बच्चों) को मारकर उनको जौहर कराया। सभी के शवों को इकट्ठा करके उनकी दीवार सी बनादी और बहते हुए सारे रक्त को रोक दिया। शवों पर सफेद चादरें ओढाई और स्वयं चलकर राजा के पास गया और राजा से निवेदन किया कि आप थोड़ी देर के लिये हमारे डेरों तक पधारें। मेरी बूढ़ी माता और मेरे परिवार की महिलाएँ आपके दर्शनों की आशा लगाये हुए हैं। १२३१

महिमाशाह को जोश में देखकर राजा कुछ समझ सा गया और तत्काल उठकर महिमाशाह के डेरे की ओर दौड़कर गया। १२३२

---

*पद्य संख्या ११९५ को यथावत् संख्या १२२६ में देकर कथा आगे चली गई है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि पद्य संख्या ११९६ से संख्या १२२६ तक का सिकोतरी का प्रसंग बाद में किसी ने जोड़ा है।

महिमाशाह पूरा रक्त से सना हुआ था और आँखें भी लाल हो रही थी। उसे देखकर राजा तेजी से दौड़ पड़ा। राजा ने मन में जान लिया कि इसके घर में किसी न किसी प्रकार की अशान्ति है, कुशलता नहीं है। राजा के मन में दया का भाव उदित हुआ और वह महिमा के साथ उसके घर की ओर यह कर चल पड़ा कि तुम्हारे परिवार के सदस्य मेरे ही घर के हैं, मैं भी उनके दर्शन करना चाहूंगा। १२३३

जब राजा हमीर उनके द्वार पर पहुंचा तो महिमाशाह ने बन्द किये हुए नाले को खोल दिया। रक्त एक दम उफनता हुआ बाहर आ गया और राजा के पास से बहता हुआ निकल पड़ा। राव ने पूछा कि तुमने यह क्या कर दिया है। महिमाशाह ने राव हमीर को अन्दर बुलाकर शवों से कपड़ा हटाकर कहा कि राव हमारे परिवार को देखो। १२३४

राव ने कहा—हे महिमाशाह! यह तुमने क्या कर दिया है? अपने परिवार के सदस्यों को मारकर तुमने इनसे दीवार क्यों चुन दी है? तब महि-माशाह ने कहा कि यह हमारे ही कारण इतना सब कुछ हुआ हो। आप युद्ध करना चाहते हैं और यदि मैं कहूं कि आपका दुश्मन मारा जावे (अर्थात् कहीं आप न मारे जावें) तो आपके मन में यह बात समायी रहती कि हम तुर्क अपने सजातीय तुर्कों से जाकर तो नहीं मिल जायेंगे। १२३५

राजा उससे बहुत नाराज हुआ और कहा कि तुमने बहुत बुरा किया। पता नहीं युद्ध कब होता, पर तुमने तो उससे पहले ही मूर्खतापूर्ण काम कर लिया है। तब महिमाशाह ने कहा कि हमने तो सारा संशय ही समाप्त कर दिया है। आप अब हमारा खेल देखें। आपने हमारे लिये इतना कुछ किया है। यदि हम आपके लिये कुछ भी नहीं कर सके तो हमारे जीवन को धिक्कार है। १२३६

तब दरबार में लौटकर राव हमीर ने ख्यौंपाल को मरवा डाला और उसकी समस्त सम्पत्ति को लुटवा दिया। वहाँ उपस्थित सभी लोग इसको देख रहे थे। १२३७

तब राव हमीर ने आज्ञा दी और साह ख्यौंपाल को तत्काल मरवा डाला। उसने उस बनिये की सभी स्त्रियों और बच्चों को मरवाकर परकोटे से नीचे फिकवा दिया। उसकी समस्त सम्पत्ति लुटवा दी और बहु-बेटियों को थोरियों (आरण्यक जातियों) में बांट दिया। जो दूसरों के लिये खड्डा खोदता है, वह खुद उसमें गिरकर मरता ही है। १२३८

राव ने कहा कि भवितव्य ऐसा ही बन गया है, इसे कोई मिटा नहीं सकता हे रावजी! भगवान् का ही यह किया हुआ है, जो वह करना चाहता है, वही

होता है। १२३९

महिमाशाह की राजा ने जो अवस्था देखी, उसके मन में वैसा ही विचार उत्पन्न हो गया। राजसभा से उठकर वह अपने महल में गया और हाथ में तेज धार वाली तलवार थाम ली और अपने परिवार की सभी स्त्रियों को मार डाला। अपने हाथ से सबको मारकर जौहर कर लिया। जब वह देवलदे का वध करने के लिये गया तो वह तालाब में कूद पड़ी। १२४०

राजा ने इस प्रकार जौहर करके अपने घर का सब कुछ माल मत्ता लुटवा दिया। पारस पत्थर, जो उसके पास था, उसे पद्मताल में फेंक दिया, और स्वयं राजमहल से उतरकर नगर द्वार की ओर चला। उसने यज्ञ की सारी सामग्री मंगवाली और वेदपाठी ब्राह्मणों को बुलवाया और देवालय पर जाकर यज्ञ (हवन) कराया। अनेक प्रकार से देवाधिदेव महादेव का स्तुतिगान किया गया। १२४१

राजा पाण्डु (पाण्डवों ?) की तरह वेदानुसार सारा प्रबन्ध करा कर हवन किया गया। यज्ञ कुण्ड से एक पुरुष प्रकट हुआ। उसके हाथ में खड्ग था। वह हनुमानजी के समान ज्ञानी पुरुष था। उसका नाम गोरळ* था और (भयंकर) विद्रूप स्त्री जैसा स्वरूप था। वह राव हमीर की सुरक्षा के विषय में पूछता हुआ निकला। उसने राव हमीर को कहा कि वह जाकर उसके शत्रु को मार डालेगा। ऐसा कहकर वह सत्वर गति से प्रस्थान कर गया। १२४२

गोरळ ने हमीर से कहा कि मैं सुल्तान अलाउद्दीन को मारूंगा। उसके मारे जाने पर उसके सैन्यदल बिखर जायेंगे और उसकी सारी शक्ति नष्ट हो जायगी। १२४३

गोरळ ने प्रस्थान किया और सुल्तान के समीप पहुंच गया पर महादेव रुद्र ने उसको रोककर पूछा कि कहाँ जा रहा है ? १२४४

महादेव ने कहा कि राव हमीर के तप का प्रभाव अब पूरा हो चुका है, अब क्यों प्रयत्न कर रहे हो। बादशाह की रक्षा हेतु देवता नियुक्त हैं, वहाँ तुम्हारा दाव काम नहीं देगा। १२४५

गोरळ बादशाह को मारने के लिये गया, पर महादेव रुद्र उसके सामने आ गये। गोरळ को शिवजी ने कहा कि बादशाह की तपस्या का अंश (आयु) अभी शेष है। वह तुम्हारे हाथ से नहीं मारा जायगा। उसकी रक्षा स्वयं खुदा

---

*गोरल से तात्पर्य यहाँ पार्वती के अर्द्धनारीश्वर रूप से है, जिसमें पार्वती को प्रधानता दी गई है। यह राजस्थान में गोरां नाम से प्रसिद्ध है।

(भगवान्) कर रहे हैं। उसके अतिरिक्त चौबीस ही पीर भी उसकी रक्षा हेतु नियुक्त हैं। ब्रह्मा, विष्णु और अन्य देवगण भी उसके सहायक हैं। १२४६

महादेव ने और कहा कि इस क्षत्रिय राजा का अन्त निकट आ गया है। अब इसका तप पूरा हो गया है। अब तुरकों का साम्राज्य होने जा रहा है। हिन्दू तो स्थान-स्थान पर ही रह पायेंगे। आप यहाँ से लौट जाओ। तुम्हारा वश तुर्कों पर नहीं चलेगा। महादेव की ही जब ऐसी आज्ञा हो गई तो गोरळ राजा के समीप आई। १२४७

गोरळ ने महादेवजी की उक्त वाणी सुनी और राजा से आकर कहा कि अब आपका तप (पुण्य का फल) पूरा हो गया है, जबकि सुल्तान की भगवान् सहायता कर रहे हैं। १२४८

राव ने तब अपने सभी सामन्तों को बुलाकर विदाई दी। उसने कहा कि मेरा तप अब पूरा हो गया है, आप लोग अपने-अपने घर जावें। १२४९

सारे सभासद् कह रहे थे कि हे महाराज! हम युद्ध करेंगे। आपने इतने दिनों तक तो हठ किया था, अब यह बुरा काम क्यों कर रहे हैं। १२५०

राव ने कहा कि मैंने तो अपने हठ का पूरा पालन किया है, और अपने वचनों का पूरा निर्वाह किया है। मैंने महादेवजी से अपना सिर भेंट करने का वादा किया था। १२५१

जब राव हमीर का यज्ञ पूरा हो गया, तो उसने खड्ग उठाकर अपने हाथ में ले लिया। उसने कहा कि मैं अब तुर्कों से युद्ध क्यों किस लिये करूं? मैं अपना सिर शिवजी के समर्पित करता हूं। तब महादेव (रुद्र) ने आकाश-वाणी से बोलकर कहा कि हे राव! तुम मुझ पर क्यों हत्या का आरोप लगा रहे हो। जो भी तुम्हारी इच्छा हो वैसा मुझसे वर मांगले। तूं इतना कष्ट किसलिये कर रहा है। १२५२

राव हम्मीर ने कहा कि मैंने अपने घर की स्त्रियों को तो मार डाला है। अब मैं अपने लिये क्या मांग सकता हूं? महादेव ने पुनः कहा कि मुझसे कोई वस्तु दूर नहीं है, जो भी तूं मांगना चाहे मैं दूंगा। तब राव ने यही कहा मुझे ऐसा वर दो कि युगों-युगों तक मेरा नाम अमर रहे। इस दुर्ग में मेरे समान हठ करने वाला और राजा न होवे, तो मेरा नाम कभी नहीं मिट सकेगा। १२५३

महादेव ने कहा कि हे हमीर! जब तक इस पृथ्वी पर ये पर्वत रहेंगे और सूर्य और चन्दमा विद्यमान रहेंगे तब तक तुम्हारा नाम (यश) पूर्णत= रहेगा। १२५४

सिंहों का समागम, सत्पुरुषों का वचन और कदली का पादप एक बार ही फलीभूत होते हैं। उसी तरह स्त्री के शरीर पर तैलपांण और हमीर के मन में हठ दूसरी बार नहीं चढ़ता। १२५५

हे राव हमीर ! यह रणथम्भोर दुर्ग एक जलहरी के समान है, जिसमें आप शंकर (महादेव) के रूप में प्रतिष्ठित हैं। आपकी पूजा करने वाला यह बलवीर जाजा आपका भक्त है। हे सांभरिया चौहान वीर ! आप दस्युओं के लिये सिंहरूप हैं। १२५६

रणथम्भोर दुर्गरूपी जलहरी में हमीर महादेव के रूप में प्रतिष्ठित हैं। वे वीर सैनिक कमल के फूल बन गये, उनसे पूजा करते दिखाई देते हैं। असी (नामक) तालाब की पाळ पर एक शक्तिशाली भाला सुशोभित है। सपूत पुरुष गूगळ की धूप देकर आरती करते हुए आज भी पूजा करते हैं। खेम कवि कहता है कि राव हमीर की समता में भगवान शिव के भाव को और कौन धारण कर सकता है। हमीर राव की प्रतिष्ठा में जाजा (बड़गूजर) उसके कमल (सिर) की पूजा करता है। १२५७

संवत् सोलह सौ बावन (१६५२) के श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की नागपंचमी मंगलवार के दिन सांभरिया चौहान हमीर ने युद्ध किया। (अर्थात् युद्ध करता हुआ मारा गया)। १२५८

तब सभी उमरावों (सामन्तों) ने विचार किया कि राव हमीर ने तो अपना सिर भगवान् शिव को समर्पित कर दिया है। अब आप लोग बतावें कि हम लोग अब क्या करेंगे ? स्वामी (नेता) के बिना अपन लोग किस प्रकार लड़ेंगे ? वीरमदेव और जाजा ने कहा कि यदि राजा नहीं रहे तो क्या हुआ ? आप सब लोग एक-एक करके दुर्ग से उतरें और अपना-अपना शौर्य दिखावें। १२५९

आप लोग इस प्रकार युद्ध करें और अपने मन में किसी प्रकार की निर्बलता न आने दें। सारी राजसभा ने विचार करके राव हमीर के स्थान पर जाजा को अपना नेता माना। जाजा ने सबको आज्ञा दी कि वे अपने घर की महिलाओं (और अन्य व्यक्तियों) को दुर्ग से बाहर निकाल दें और अकेले रहकर युद्ध करें। जब सभी (स्त्रियों और बाल-बच्चों) को दुर्ग से बाहर सुरक्षित निकाल दिया, तब सब ने युद्ध करने की प्रतिज्ञा ली। १२६०

तब महिमाशाह ने जाजा को कहा कि तुम्हारा दाव बहुत अच्छा रहा। सभी लोगों के परिवारों के सदस्य किले से निकलकर सकुशल पहुंच गये। उनके साथ सब मालमत्ता भी भेज दिया गया, जो पीढ़ियों तक उपभोग करने पर भी समाप्त न हो। हर घर से एक-एक व्यक्ति रह गया। राव हमीर के

परिवार के तो सभी व्यक्ति समाप्त हो गये। १२६१

वाहशाह पश्चात्ताप करता हुआ यहाँ बैठा हुआ है। अब पछताने से क्या होता है ? जिसके राज में आप लोगों ने इतना सुख भोगा है और स्वतन्त्र रूप से प्रान्त और परगनों का उपभोग किया है उसकी मृत्यु के बाद की स्थिति को आप ठीक करें। इसके अतिरिक्त मन में और कोई विचार न करें। आप सब उसके उपकार का बदला उपकार करके चुकाओ। अब देखना यह है कि आप लोग शस्त्र किस प्रकार उठाते हैं ? १२६२

राव हमीर ने इस प्रकार का भयंकर हठ (प्रतिज्ञा) किया था, उसको पानी तक नहीं मिला, उसने अपना सिर अपनी मातृ-भूमि के लिये कटा दिया। आप लोग भी ऐसी ही दृढ़ प्रतिज्ञा करें और रणथम्भोर के यश में वृद्धि करें। अभी तक तो हमारी धन सम्पत्ति और सारी स्थिति वैसी की वैसी सुरक्षित है, हमारी कोई हानि नहीं हुई है। वह एक प्राणी राजा (राव हमीर) ही तो हमारे बीच नहीं है, उसके अधूरे काम को हमें पूरा करना है। १२६३

वे (राव हमीर तो सबके सिरों के ताज (हमारे प्रमुख) थे ही, पर युद्ध करने वाले तो हम ही हैं। उनके जीवित रहते समय तो हम लोग असावधानी (भूल-चूक) करते थे और अच्छा और बुरा सब उनके माथे मंढ देते थे, पर अब तो सारा खेल आप ही लोगों पर निर्भर है, असावधान रहने से अब कैसे काम चलेगा। आप लोगों की लज्जा की रक्षा अब आप ही के हाथों में है। इस दुर्ग के ऊपर आप ही से आशा है। अथवा यह दुर्ग अब आप ही की ओर देख रहा है।) १२६४

तब उमरावों ने महिमाशाह से कहा कि आपकी बात हमें भी अच्छी लगी है। हम लोगों में अब कोई अब मरने से नहीं डरेगा और आपके कथन को नहीं टालेंगे। हमने भी अपने प्राणों की आश छोड़ दी है। आप अब हमारा खेल (करतब) देखें। हम शत्रु को ललकार कर युद्ध करेंगे और दुर्ग से नीचे उतरकर निश्चित होकर लड़ाई करेंगे। १२६५

तब बादशाह त्वरित गति से दुर्ग के पास (तलहटी में) आया और दुर्ग में अपने दूत को भेजा। उसने कहलाया कि नगर का दरवाजा खोलकर आप हमसे मिलें। आप लोग जो भी मनसब (जागीरादि) चाहेंगे, वे सब आपको मिलेगी। बादशाह ने ऐसा कहलाया है कि किले में छिपकर क्यों बैठे हैं। १२६६

तब सभी सामन्तों ने बादशाह को उत्तर भिजवाया कि हे बादशाह ! सुनलो। जब राव हमीर ही तुमसे आकर नहीं मिला, तो फिर हम तुमसे कैसे मिल सकते हैं। हम भी जाकर (स्वर्ग में) राव हमीर के साथ हो जायेंगे। अब

हम आपसे तलवारों के साथ आकर भेंट करेंगे । आपने हमें इतना निर्बल कैसे समझ रखा है । तब सबने जाकर जाजा को पूछा कि हम दुर्ग से उतरकर युद्ध करना चाहते हैं । महिमाशाह ने कहा कि आपकी आज्ञा हो जावे तो सबसे पहले मैं ही दुर्ग से उतरकर लड़ने जाऊँ । १२६७

तब उसको कहा गया कि पहले या बाद में जाने से क्या अन्तर पड़ता है, अन्त में मरना तो हम सभी को है और जाजा ने महिमाशाह से कहा कि आपके पीछे मैं भी आ रहा हूं । आप यह न समझें कि मैं आने में विलम्ब करूंगा । अपने-अपने क्रम (अवसर) से सभी युद्ध करने के लिये आयेंगे और अपने उद्देश्य के लिये सब रणक्षेत्र में उतरकर युद्ध करेंगे । तब महिमाशाह विदाई लेकर दौड़ता हुए खिड़की (लघुद्वार) खुलवाकर दुर्ग से नीचे उतर आया । १२६८

महिमाशाह ने कहा—हे वीर जाजा ! महिमाशाह आपको प्रणाम (अभिवादन, सलाम) करके जा रहा है । राव हमीर कोटिश धन्य है जिसने हमारे (मुझ शरणागत) के लिये अपने घर, राज्य का सर्वनाश करा दिया । १२६९

महिमाशाह ने अल्लाह का नाम स्मरण कर प्रस्थान किया और दुर्ग से नीचे उतरकर श्रेष्ठ कार्य किया । वह लगाम ढीली करके घोड़ा दौड़ाता हुआ शत्रु सेना पर टूट पड़ा और विलक्षण रूप में बादशाह के सामने प्रकट होकर शत्रुदल में मारकाट मचा दी । वह मारो-मारो की आवाज करता हुआ शत्रुओं के टुकड़े-टुकड़े कर रहा था । जोश से उमंगित होकर वह इधर-उधर दौड़ लगाता हुआ लड़ रहा था । इस प्रकार दोनों दलों के सरदार (सामन्त) युद्ध करते हुए शोभित थे । दोनों दलों में आमने-सामने तलवारों और भालों के प्रहार इस प्रकार हो रहे थे, मानो राधा और कृष्ण शृंगार-रस पूर्ण फाग खेल रहे हैं । तीर और गोलियाँ ऐसे चल रही थीं, मानो बादलों से जलधारा प्रवाहित हो रही हो । अच्छे-अच्छे हृष्ट-पुष्ट युवा सैनिकों का संहार कर दिया गया । जब शरीरों में जमदाढ भचाक की ध्वनि करती प्रविष्ट होती थी, तो लोथें (शव) और आंतें थचक-थचक कर गिरती थीं । हृदय और फेंफड़े रणक्षेत्र में पड़े हुए मछली के समान तड़फड़ा रहे थे । दोनों ही दलों के सैनिकों (योद्धाओं) के रुण्ड-मुण्ड लोटपोट होकर लुढ़क रहे थे । युद्ध-क्षेत्र में वीर घोष के साथ मारकाट मच रही थी, वीरों के हाथ-पाँवों के टुकड़े शरीरों से झड़-झड़कर गिर रहे थे । जिस किसी पर भी कड़कड़ाकर (क्रुद्ध होकर) प्रहार करते थे उसके समान भाग में दो टुकड़े हो जाते थे । कोई तड़पड़ाता हुआ लोट रहा था, कोई मतवालों के समान झोंके खा-खाकर गिर रहा था । उसमें एक ही मर्द व्यक्ति था, जो लाखों वीर-सैनिकों के बीच युद्ध कर रहा था ।

सारी बादशाही सेना में उसने आग लगा दी । बादशाही सैनिकों ने अपने पाँव पीछे हटाना प्रारंभ कर दिया । महिमाशाह ने घमासान युद्ध करके शत्रु-संहार किया । यह सब देखकर बादशाह ने खीज़कर अपने सैनिकों से कहा कि तुमको धिक्कार है । भागकर कहाँ जा रहे हो । बादशाह के उत्साहपूर्ण वचन सुनकर वे जयघोष करते हुए टूट पड़े । एक बार और बादशाही सेना एक जगह एकत्र हो गई । दोनों ओर से भयंकर वीर ध्वनि हुई और समस्त सेना ने भयंकर प्रहार करना शुरू किया । दोनों ओर के सैनिक एकमेक होकर भिड़ गये । शस्त्र प्रहार होने लगे । हड्डियाँ कड़-कड़ाकर टूट रहीं थीं । बादशाह दूर खड़ा देख-देख कर पछता रहा था और अपने शत्रु के शस्त्र प्रहार की सराहना (प्रशंसा) कर रहा था । वह कहता था, इस वीर पुरुष के साहस को देखो जिसने अकेले ही लाखों सैनिकों के साथ युद्ध किया है । मीर गाभरू और महिमाशाह दोनों युद्ध कर रहे थे । उनके सिर धड़ से अलग होकर गिर गये । दोनों सेनाओं के रुण्ड-मुण्ड कर्र कर्र पड़ रहे थे । वे अपनी भुजाओं में पकड़-पकड़कर पछाड़ते हुए दिखाई दे रहे थे । धड़ से अलग हुआ सिर उछल-उछल कर इधर-उधर फिर रहा था । वह शत्रु सैनिकों के कण्ठों को पकड़कर तोड़ रहा था । उसने अठारह प्रतिष्ठित (अहंकारी) शत्रुओं के कण्ठ तोड़ खाये । वे टुकड़े-टुकड़े होकर गिर पड़े पर उनसे कोई जीत न सका । ऐसे जोश के साथ लड़ता हुआ महिमाशाह मारा गया । उसने चहुवान हमीर के उपकार का बदला चुका दिया । मीर गाभरू और बिजली खान भी लड़ते हुए मारे गये । तीनों ही वीर पुरुषों ने साथ-साथ युद्ध किया । १२७०

महिमाशाह और मीर गाभरू युद्ध करने के लिये दुर्ग की तलहटी में आये । उन्होंने बादशाह के सेना को मारकाट कर पीछे हटा दिया । बादशाह खड़ा-खड़ा यह सब देख रहा था । १२७१

महिमाशाह औंर गाभरू मर कर धरती पर जा गिरे । तब जाजा ने दुर्ग से उतरकर तलहटी में युद्ध किया । १२७२

चौहार वीर हमीर की प्रतिज्ञा की प्रशंसा करता हुआ वीर जाजा बड़-गूजर लम्बी छलांगें लगाता हुआ आया ।

बड़गूजर राणा जाजा युद्ध करने आया । हाथ में धनुष बाण लिये हुए वह शोभित था । चारों दिशाओं में धनुष तानना हुआ वह बाणों की मेघो के समान वर्षा करता हुआ पठानों और मदमस्त हाथियों के समूहों का वध कर रहा था । युद्ध करता हुआ वह अपने बाणों से संहार कर रहा था । उसके ताने हुए बाण निरन्तर बह रहे थे । राणा जाजा हमीर चौहान की प्रतिज्ञा (हठ) का वर्णन करता हुआ, लंबी छलांगे लगाता (दौड़ता हुआ) गया ।१२७३

वह वीर पुरुष अपनी अंगुलियों की मुद्रा बनाकर उसमें बाण को पकड़ता था जो सीधे मार्ग पर बहकर शत्रुओं पर मार करते थे। इस प्रकार सभी बाण ध्वनि करते हुए प्रकट होते थे और देखते ही देखते वेग से मार करते थे। उसने नरसंहार करते हुए शाही सेना को पीछे धकेल दिया। जब उसका धनुष टूट गया तो उसने खड्ग (तलवार) थाम ली और शत्रुओं के सिरों पर प्रहार करते हुए उनके (शरीर सहित) फुर्ती से दो फाड़ कर दिये। वीर हमीर चहुवान के हठ (प्रतिज्ञा) का बखान करता हुआ वीर जाजा बड़गूजर लम्बी छलांगे लगता हुआ (घोड़ा कुदाता हुआ) आया। १२७४

सांचे में ढाली गई हो ऐसी तलवार को पुनः संभालकर जब प्रहार किया तो लाल रंग का फँवारा फूट पड़ा (अथवा हाथी घोड़ों पर प्रहार कर लाल रंग का रक्त बहा दिया ?) वह तलवार के तिरछे प्रहार करता हुआ युद्ध करके वीर योद्धाओं को मार मार कर उछाल रहा था। सूंड रहित हाथियों के झुण्ड व बिना सिर के घोड़े, ऐसा अद्भुत दृश्य था। पृथ्वी पर अंगभंग हुए मनुष्यों के समूह पड़े हुए थे, कई एक के पांव कटे थे, कोई भी अखण्डित नहीं थे। १२७६

हाथ में कटार उठाई और शत्रु की छाती में वार किया, जो हृदय को बिंधती हुई दूसरी ओर भचक्क की ध्वनि करती निकल जाती थी। तुर्कों की सेना संतप्त होकर भाग छूटी और पहाड़ के पार लड़खड़ाती चली गई। (अथवा उनकी आंते थचक थचक की आवाज के साथ गिर गई ?) ज्यों-ज्यों सैनिकों में जोश की वृद्धि हुई, पृथ्वी शवों से आच्छादित हो गई। रक्त का नाला बह चला। सैवाल (काई) भी प्रवाह में बह रही थी। चौहान राव हमीर की प्रतिज्ञा का स्मरण करता वीर राणा जाजा भयंकर रूप में वेग से कूद रहा था। १२७७

युद्ध से तृप्त (संतुष्ट) होकर योगिनियां दौड़कर आई और मुंड शंकर भगवान के चढ़ा दिये। चामुण्डा (मुंडमाल) चाहना लेकर प्रेतादि हंसते हुए और अप्सराएं (वीरों का वरण करने) वेग के साथ वहां आ पहुंची। सूर्य भगवान ने अपना रथ रोक लिया। शूरवीर रणक्षेत्र में सुशोभित हो रहे थे। ऋषिगण हर्षित होकर नाच रहे थे। यवन (मुसलमान) संतप्त हो रहे थे। । १२७८

खपुवा (छोटी तलवार) से संहार करते समय शरीरों में प्रवेश कराते हुए वह सुशोभित हो रहा था। वह मस्ती के साथ प्रलयंकर आघात कर रहा था। हाथ से हाथ और बाहु से बाहु को युक्त कर (गुत्यमगुत्था होकर) वह सामना करता हुआ शस्त्र प्रहार कर रहा था। १२७९

जाजा युद्ध करने गया, और शत्रु का संहार करते हुए सुशोभित हो रहा

था। रणक्षेत्र में युद्ध करता हुआ वह मारा गया। दौड़ता भागता चारों ओर दिशाओं में (शत्रुओं को) जाजा ही दिखाई देता था। राजा लोग अपना बचाव करते हुए एक ओर खिसक गये। अपनी असफलता पर खीज कर बादशाह (अलाउद्दीन) लज्जित होकर हाय हाय कह रहा था (पछता रहा था)। १२८०

वह कह रहा था कि सेना में जिधर देखो उधर ही जाजा ही जाजा दिखाई, सुनाई देता है। इसके अतिरिक्त और कितने जाजा हैं। यदि राव हमीर जीवित होता तो ये उस समय क्या कुछ कर देते। १२८१

अब वीरमदेव ने बादशाह की सेना पर आक्रमण के लिये प्रस्थान किया, जिसे सभी उमराव देख रहे थे। वे कह रहे थे कि क्या करें, राजा हमीर जीवित नहीं रहा, अन्यथा वे उत्कंठापूर्वक यह उत्सव देखते। १२८२

वज्र के समान सुदृढ़ अंगों वाला जाजा युद्ध करता हुआ खेत रहा। उसके उपरान्त युद्ध में पीठ न दिखाने वाला बलवान् योद्धा वीर वीरमदेव रणक्षेत्र में उतरा। वह सांग (भाखा)पकड़कर शत्रुओं का संहार करता (खदेड़ता हुआ) युद्ध क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ और तुर्कों के झुंड पर टूट पड़ा।१२८३

शत्रुओं की टुकड़ी को अपनी ओर बढ़ते देखकर उसने तिरछा होकर अलुखान पर बरछी (सांग) का प्रहार (आघात) किया। बरछी वेग के साथ छाती में लगी और हृदय के पार इस प्रकार निकल गई मानो जैसे जाल में फंसी मछली ने जाल से अपना मुख बाहर निकाला हो। १२८४

उसने बरछी को हिलाकर एक क्षण में बाहर निकाल लिया और उसने अत्यन्त जोश में भर कर अपूर्व बल प्राप्त किया और उसी प्रकार अन्य लोगों पर भी प्रहार किया, जिनके शरीर से वह आर पार निकल गई। १२८५

रण की पहाड़ी पर खड़ा बादशाह हाथ मल रहा था। (पछता रहा था) युद्ध सतपोल के नीचे हो रहा था। सुल्तान अपने सैनिकों को संबोधित करके कह रहा था—अरे! मेरी सेना में कोई ऐसा वीर हैं, जो अलुखान की मौत का बदला ले सके। १२८६

तब बादशाही फौज के सभी व्यक्ति होहल्ला करते एक साथ वीरम देव पर टूट पड़े। उनमें तातारखां भी आकर मिल गया। उसने वीरम पर प्रहार किया, जिसे वीरम ने झेल लिया (रोक लिया) और तब वीरम ने प्रहार किया जिससे तातारखां का कवच टूट गया। १२८७

उसके कवच की कड़ियां टूटकर भाले की अणी शरीर को भेद गई। उससे वह विकृत रूप वाला हो गया और पृथ्वी पर लुढक गया। उसके बाद

खान हुसैनखां ने वार किया, पर उसका हाथ कांप रहा था अतः ठीक से प्रहार नहीं कर सका। १२८८

उसके सिर पर तब तलवार का प्रहार किया। वह प्रहार ऐसा पड़ा मानो चोट खाकर दड़ी (कपड़े का कंदुक) उछल कर दूर जा गिरी हो। उसके बाद जैन अलावदी ने आकर प्रहार किया। उसकी तलवार को वीरम ने ढाल पर रोक लिया। १२८९

वीरम ने क्रुद्ध होकर तलवार का इतना भयंकर प्रहार किया कि खड्ग टूटकर दो टुकड़े हो गया। तब तक एक पठान और बीच में (सामने) आ गया। वीरम अपनी खपुआ (छोटी तलवार) निकालकर उस पर आक्रमण करने को दौड़ा। १२९०

और उसकी छाती में जमदाढ का ऐसा आघात किया कि वह पहुंचें सहित अन्दर जा घुसी। उसने अपनी कटार से पाँच-सात और भी व्यक्तियों को मार गिराया और कई एक को उसने तीरों और तलवारों के हमलों से मार गिराया। १२९१

बादशाह ने कहा कि ये कितने बहादुर जवान (योद्धा) हैं, जो अपने स्वामी के न होते हुए भी आ-आकर इस प्रकार मर रहे हैं। दुर्ग के परकोटे पर खड़े होकर लोग तमाशा देख रहे थे। वहाँ वीरमदेव युद्ध में मारा गया। १२९२

उसने अलुखान और ततार खान को पहले मार गिराया था, अब हुसैन खाँ और जैन अलावदी के साथ युद्ध किया। १२९३

भोजदेव ने भोजराज से कहा कि आप तो अग्रिम पंक्ति (हरावल) में हैं। अब आप युद्ध के लिये प्रस्थान करें, हम भी आते हैं। आपके और हमारे मध्य में यही वादा था। १२९४

भोजराज दुर्ग से उतरा और उसने शत्रु को ललकारा। उसने युद्ध क्षेत्र में बहुत ही श्रेष्ठ (उत्कृष्ट) काम किया। उसने हिन्दुओं और पठानों के सामने जाकर तलवारों का प्रहार कर अनेक लोगों को मार डाला। १२९५

शस्त्रों के लगातार प्रहार होने लगे। दोनों पक्षों में बराबर की टक्कर हुई। तलवारों के अगणित प्रहार हुए, योगिनियाँ नाच उठी। भूख से उत्कंठित उन बुभुक्षित योगनियों ने द्विगुणित पूजा की (?)। १२९६

संगम के लिए जोश खाती अप्सरायें वहाँ मंडरा रही थी। वे शूरवीर पुरुषों का आज वर के रूप में वरण करेंगी। रणक्षेत्र में प्रेत भी भयंकर

अट्टहास करने लगे। ऋषिगण भी अपना ध्यान छोड़कर किलकारियाँ करते दिखाई दिये। १२९७

महादेवजी ने अभिलाषा के साथ आशा लगाई कि आज तो अवश्य ही रुण्डमुण्डों की माला पूरी हो जायगी और गृद्धों की भी संख्या बहुत अधिक हो गई। रणथम्भोर में आज इस प्रकार आश्चर्यजनक स्थिति हो गई। १२९८

तब हनुमानजी का बिमान आ पहुंचा। राजा के स्वरूप को देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। हमीर चौहान की कीर्ति (मान) में बहुत अधिक वृद्धि हो गई और राजा के सम्मान योग्य विमान स्वर्ग की ओर चढ़ गया। १२९९

सुल्तान अलाउद्दीन का सम्मान समाप्त हो गया। बादशाह ने भोजराज की प्रशंसा करते हुए कहा। इस प्रकार के वीर योद्धा और कितने हैं? जो भी युद्ध करना चाहें उन्हें आवाज दे-देकर बुलावो। १३००

ये लोग लड़ते हुए मौत से भय नहीं खाते। यदि ये राव हमीर के साथ के साथ होते तो कितना संहार करते। आप लोग धर्म द्वार खोलकर किले से बाहर आ जावें। मैंने आप सब अपराधियों के अपराध को क्षमा कर दिया है। १३०१

यदि आप लोगों में से कोई इधर-उधर सुरक्षित निकलकर जाना चाहते हैं तो शीघ्र ही चले जावें। यदि आप सभी मेरे पास आना चाहें तो सबको मनसब दूंगा। नहीं तो आप लोगों को मैं हथियारों से मार डालूंगा। अब मैं सत्य कहता हूं। १३०२

भोजराज युद्ध क्षेत्र में खेत रहा और उसको वीरांगना (अप्सरा) वरण करने से लिये उठाकर ले गई। तब भोजदेव यह कहकर दुर्ग से उतरा कि मैं अब बादशाह से मिलूंगा। १३०३

भोजदेव ने सुल्तान से कहा कि मनसब अब हमें दो। तुम शीघ्रता से लड़ने आ जावो और हमारा अभिवादन स्वीकार करो। १३०४

महान् शक्तिशाली वीर भोजदेव ने युद्धक्षेत्र में प्रवेश किया। अपने मन में धैर्य धारण करके वह सन्नद्ध हुआ। उसने तलवार निकालकर हाथ में ले ली और शत्रुओं को ललकारते हुए वह सैन्य समूह पर टूट पड़ा। १३०५

जिस किसी पर वह आक्रमण करता था, उसका सिर कटकर दड़ी (कंदुक) के समान दूर जा गिरता। भयभीत होकर बादशाह कहता था—अरे देखो तो यह अपने स्वामी के न होते हुए भी वह युद्ध में जूझ रहा है। १३०६

भोजदेव ने कहा कि अरे ! तुम तो दूर ही खड़े हो। स्वयं युद्ध क्षेत्र में उतरकर युद्ध करो तो तुम्हें पता लग जाये। तब बादशाह ने कहा कि तुम मेरे पास आवो। सभी आकर मुझसे मिल जावो। तुम्हारा कोई अपहित नहीं होगा। १३०७

तुम लोग दुर्ग खाली करके यह स्थान छोड़ दो, तो जो भी मनसब तुम लोग मांगोगे वह मैं दे दूंगा। भोजराज ने कहा कि मनसब तो हमारे राव (हमीर) के साथ ही चला गया। अब तुर्कों के आश्रित हो जाने से क्या होगा। १३०८

तुम यह समझ रहे हो कि यह दुर्ग तुम्हें मिल जायेगा तो समझ लो कि बहुत अधिक नरसंहार होने पर ही इस दुर्ग पर तुम्हारा अधिकार हो सकेगा। इतना कहकर वह पुनः युद्धरत हो गया और सुल्तान के भानजे को जा मारा। १३०९

तलवार का प्रहार करके उसको भूमि पर गिरा दिया और जोर से उद्घोष करके बादशाह को कहा कि मैंने मनसब ले लिया है। बादशाह ने अपने आदमियों को गाली दी, बुरा-भला कहा, तब उसके उमरावों में उत्साह (जोश) चढ़ा। १३१०

जब जसपाल तुंवर (तोमर) उसके सामने लड़ने को आया और भोजदेव चौहान पर शस्त्र प्रहार किया। भोजदेव को तलवार का घाव लगा। भोजदेव ने तलवार का वार कर उसको गिरा (मार) दिया। १३११

जब तेजपाल तँवर ने ललकार कर कहा कि मेरे भाई को मारकर तूं जीवित रह रहा है। निर्भीक होकर दोनों ने घमासान युद्ध किया और लड़ते हुए दोनों मारे गये। १३१२

वहाँ हिन्दू और मुसलमान झुण्ड बनाकर खड़े थे और बादशाह वहाँ खडा था, जहाँ दोनों ओलिया (पीर) (मादिकिलीच और मियाँ निजामदीं) मारे गये थे। १३१२ (२)

जब भोजदेव युद्ध करता हुआ मारा गया, तो बाहड़देव रणक्षेत्र में उतरा। रणथम्भोर में यह युद्ध हुआ और दोनों ओर के लोग उनके अन्तर (भेद) को देख रहे थे। १३१३

अब बाहड़देव ऐसे टूटकर शत्रुदल पर पड़ा, मानो पिंजरे से सिंह मुक्त हो गया हो। वह युद्ध में संलग्न होकर प्रहार करने लगा। वह वीर दौड़कर शत्रुदल पर टूट पड़ा। वह रणक्षेत्र में प्रविष्ट होकर ऐसा भयंकर शस्त्र प्रहार कर रहा था कि कई शव धरती पर गिर पड़े। १३१४

युद्ध का उस पर इतना नशा चढ़ा कि वह मदमस्त हो गया और वेग के साथ प्रहार करते हुए शत्रुओं को मार गिराया। दांत पीसता हुआ वह जूझ रहा था और अपनी भयंकर तलवार से उसने शत्रुओं की हड्डियों को बड़का बड़का कर काट डाला। १३१५

मारो, मारो की जयनाद के साथ उसकी सक्षम तलवार प्रहार कर रही थी। उसके पाँव पीछे नहीं हटकर दृढ़ रूप से रणक्षेत्र में ऐसे जम गये, मानो अंगद के पांव हो। जितने भी हिन्दू थे, वे सब युद्ध में सम्मिलित हो गये।१३१६

एक वलशाली योद्धा युद्ध कर रहा था। उसने बराबर की टक्कर दी। जिसका नाम ही अजव का था और बड़ा मनसबदार था, ने क्षिप्रगति से तलवार के वार किये। १३१७

भयंकर युद्ध हुआ। खूब शस्त्रों की वर्षा हुई। चिल्ला चिल्ला कर वे प्रहार कर रहे थे। बाहड़राय ने गुरू गम्भीर गर्जन करते हुए शस्त्र प्रहार किया। पंवार (?) के टुकड़े टुकड़े करके उसे गिरा दिया (मार डाला)। । १३१८

तव फतेखाँ गौरी जो बड़ा ही जवां मर्द था बाहड़राय के सामने आकर लड़ने लगा। दोनों ही ने निर्भीक होकर युद्ध किया। दोनों में से कोई विमुख नहीं हुआ। कोई किसी पर विजय प्राप्त न कर सका और न कोई आहत होकर गिरा ही। १३१९

तव महावलशाली खुर्रमखाँ गौरी मरदान ने प्रहार किया। वे दोनों ही बरावर के अटल योद्धा थे। वे पहलवानों के समान जूझ रहे थे। सारी सेना जो लाखों की संख्या में थी, उनके युद्ध को देख रही थी। १३२०

वे अव मरे, अव मरे हो रहे थे। उनमें कोई जीवित नहीं रहा। वह (बाहड़राय) हजारों शत्रुओं के मध्य अकेला था, जो मार डाला गया। बादशाह हाथ मल रहा था (पछता रहा था), कि उसके सभी प्रमुख साथी मारे गये। ऐसा अनर्थ इससे पूर्व कभी नहीं हुआ था। १३२१

बाहड़राय युद्ध में मारा गया, यह सब दुर्ग के परकोटे से देख रहे थे। तव नरसिंह ने युद्ध से प्रेम किया और अपने साथियों के साथ युद्ध सज्जित होकर आ खड़ा हुआ। १३२२

बाहड़राव का अप्सराओं ने वरण कर लिया और उसे वरमाला पहना कर चली गई। वर्षा ऋतु में जैसे वर्षा लोगों को तृप्त करती है वैसे ही बाहड़राय ने चौसठ योगिनियों को तृप्त किया। १३२३

नरसिंह के साथ अच्छे वहादुर सैनिक थे, जिनके हाथों में भाले थे। वह रणक्षेत्र में आकर युद्ध करने लगा। वह भालों से भयंकर प्रहार कर रहा था। उसका सामना करने के लिये युद्ध-कुशल पठान आये। भयंकर युद्ध होने लगा, दोनों ओर से प्रहार होने लगे। नरसिंह ने वरछी का तिरछा वार किया, वह शरीर के पार इस प्रकार निकला मानो मछली गडी हुई हो। सभी सैनिक एक साथ हाथों में खड्ग (खांडे) लेकर युद्ध करने लगे। वे एक दूसरे पर बढ़-बढ़कर प्रहार करते थे। तलवारों की टकराने की सटासट की ध्वनि हो रही थी। तलवारों के भयंकर प्रहारों से मार काट हो रही थी। परस्पर होड़ करते बरावर के प्रहार हो रहे थे। नरसिंह मस्त होकर चक्र की भांति चारों ओर घूम घूमकर झूझ रहा था। वह बढ़ बढ़कर तलवार का वार करता हुआ मार कर रहा था। सतत आघात हो रहे थे। योद्धाओं के सिर कट कट कर दड़ी (कंदुक) के समान उड़कर (कटकर) दूर जाकर लुढकते थे। योद्धा भाग भाग कर पृथ्वी पर गिरते थे। एक दूसरे से गुत्थम गुत्था होकर लड़ते हुए मर रहे थे। दोनों ही धर्मों के मानने वाले लड़ रहे थे। मुरखाँन मारा गया। नरसिंह ने युद्ध करते हुए तीन हजारी मनसबदार मुरखाँन पर जवरदस्त वार करके उसे मार डाला। उन दो अद्‌भुत हाथियों ने ऐसा भयंकर युद्ध किया। नूर-खाँन शूकर के समान और नरसिंह पर आक्रमण करने दौड़ा। दोनों ने युद्ध किया, तभी वह घावों से बिंध गया। उसने नूरखाँन को कवच सहित रणक्षेत्र में मार डाला। नूरखान गौरी पर नरसिह ने प्रहार किया। दोनों ही खून से लथपथ होकर एक साथ मारे गये। दूसरे राजपूत योद्धा भी दौड़-दौड़कर लड़ रहे थे। उन्होंने भी अन्य अनेक लोगों को मार डाला। वे हटाने पर भी अपने स्थान से नहीं हट रहे थे। एक बहादुर कछवाहा ने आकर युद्ध किया। अनेक खाँन भी लड़ने के लिये आये, उन्हें राजपूत वीरों ने मार गिराया। सुशोभित होते हुए कछवाहा ने ऐसा युद्ध किया। उसने अपने साथ पांच पठानों को लिया और उसने स्वामि धर्म को समझ कर ऐसे जोश के साथ युद्ध किया। १३२४

नरसिंह देव मारा गया, यह दोनों ही पक्ष के सैंनिकों ने अच्छी प्रकार देखा। तब बच्छराज ने अपने सभी साथी राजपूतों के साथ आकर युद्ध किया। १३२५

नरसिंह दौड़कर शत्रु दल पर टूट पड़ा और चार प्रहर तक युद्ध किया। इस प्रकार सुल्तान के सैन्य दल में हाय तोबा मची हुई थी। १३२६

सभी योद्धा सुन्दर जिरहवख्तर और हथियारों से सुसज्जित होकर चले। उसके बाद हमीर की बारात में बच्छराज ने युद्धार्थ प्रस्थान किया। । १३२७

अब बच्छराज ने युद्ध क्षेत्र में प्रवेश किया। उसे देखकर यमराज हँस पड़ा। उसके साथ हाथों में तलवार लिये कुलीन राजपूत थे। वह लड़ता हुआ दौड़कर रण के पहाड़ पर चढ़ गया जहां सुल्तान अलाउद्दीन खड़ा था। बादशाह के समीप बादशाह की ही भांति सुशोभित होते उमराव खड़े थे। बच्छराज ने वहां पहुंच कर युद्ध किया। उसको देखकर बादशाह भयग्रस्त हो गया। सभी योद्धा क्रुद्ध होकर भयंकर वार करते थे। सैनिक लगातार तलवारों के प्रहार द्रुतगति के साथ शत्रुओं की कटि और हाथियों के समूह (व्यूहरचना) कर रहे थे। मूसेखांन वहां मारा गया। तब बादशाह ने उसको धिक्कारा। तब शेरखाँन सामने आया। शक्तिशाली चहुवान से उसने युद्ध किया जिसकी बच्छराज ने रक्षा की। शेरखाँन मारा जाता हुआ देखा गया। तब पीरखाँन आया, वह भी मार डाला गया। उसके बाद ताजखाँन युद्धार्थ सामने आया। उसके साथ लड़ाई में बच्छराज मारा गया। बाकी बचे हुए राजपूतों के भी रूडमुंड युद्ध कर रहे थे। उन्होंने एक गौरी के प्राण हरण कर लिये। एक जादव सामने आया, उसके साथ भयंकर युद्ध हुआ। पृथ्वी शवों से पट गई। सभी एकमेक होकर मारे गये। जादव भी अपनी टेक रख कर गिर गया। तब और भी जादव टूट पड़े। वे घमासान युद्ध में खेत रहे। बच्छराज के सभी संगी साथी मारे गये और मरकर उनके ढेर लग गये। १३२८

एक ओर सुल्तान के सवा लाख सैनिक थे और बच्छराज के साथ एक हजार। हमीर के सभी सामंत स्वामिधर्म की रक्षा के लिये युद्ध कर मारे गये। १३२९

बच्छराज युद्धस्थल में मारा गया, यह दुर्ग के परकोटे से सबने देखा। तब हरिराज, वीरसिंहदेव और भींवजी (भीम) युद्ध क्षेत्र में उतरे। १३३०

भींव (भीम) के युद्धार्थ प्रस्थान का नगाड़ा बज उठा। बादशाह उससे भयभीत हो गया। कमजोर व्यक्ति ही उस नकीब (चोबदार) से डरता है, जो फौज में आवाज करता है। १३३१

वह ऐसा स्फूर्तिवाला वीर योद्धा था, वह अपने सहयोगियों को साथ लेकर आ गया और रणक्षेत्र में खड़ा हो गया। बादशाह ने उनसे कहा कि वे लोग अब और अधिक प्राण न्योछावर न करें। आप लोग अपनी जन्मभूमि छोड़कर अन्यत्र चले जावें और वहां जाकर मौज करें। अब आप लोग चले जावो, और वहां जाकर रहो, आप लोग व्यर्थ ही क्यों मर रहे हो। भींव और उसके साथियों ने कहा कि—हम लोग तो आपके ही पास आ रहे थे। आप में से कोई हमारे पास आवे तो उससे विचार विमर्श किया जावें। बादशाह ने कहा कि आप अपने हथियार दूर फेंक दें और इस प्रकार शस्त्र त्याग

कर बात करें । राजपूतों ने उत्तर दिया कि हथियार तो हमें भगवान् राम ने दिये हैं, हम अब त्याग नहीं कर सकते । चौहान वीर (भीम) ने कहा कि हे मियां ! सुनो हथियार त्याग देने पर क्षत्रिय का धर्म समाप्त हो जाता हैं । बादशाह ने कहा—"तुम लोग अब मारे जावोगे अतः हथियार छोड़कर फिर हमारे पास आवो ।" उसने इतना ही कहा था कि वे पवन पुत्र हनुमान की तरह उड़कर शत्रुओं पर टूट पड़े । उन्होंने हमला करके अनेक लोगों को मार गिराया । उनमें बड़े बड़े उमरावों को निशाना बनाकर उन्होंने मारा । पेरोज़खान (फिरोज खाँ) उसके सामने आकर लड़ने लगा । उस राजपूत वीर को उसने एक ही वार में मार गिराया । तब उसके सामने एक राठौड़ आकर युद्ध करने लगा, वह भी गिर पड़ा पर उस सिंह हरराज ने पीठ नहीं दिखाई । वहाँ ऐसा भयंकर संग्राम हुआ, मानो गीदड़ की महाक्रीड़ा हो रही हो । उसके सामने एक कछवाहा राव आकर लड़ने लगा । वह साहस के साथ मदमस्त होकर दौड़ता आया । उसने चौहान (भीम) को आकर ललकारा—वे दोनों इस प्रकार संग्राम कर रहे थे मानो जरासंध और भीम लड़ रहे हो । वे दोनो हो बराबर के अटल योद्धा थे । अतः दोनों शक्तिशाली महावीरों में से पीछे कौन हटता । यह युद्ध इतना भयंकर हुआ कि उसके तेज का वर्णन कौन कर सकता है । उन्होंने अद्भुत संग्राम रचा और चार घड़ी तक बिना रूके लड़ते रहे । कछवाहा राव युद्ध में मारा गया और चौहान वीर भीम नहीं मारा जा सका । तब तक सूर्य भगवान् ने अपना रथ हांक दिया (अर्थात् रात हो गई) । इस प्रकार जब पठानों ने घमासान युद्ध किया, एक लाख से अधिक तलवारों से वे टूट पड़े । इस प्रकार हरराज अपने साथियों के साथ मारा गया । रण-स्थल में ही मारे गये, अलग जाकर नहीं । १३३२

हरराज युद्ध क्षेत्र में लड़कर मारा गया । तब बील्हणदेव अपने भाई भतीजों और अतिसंख्य राजपूतों को साथ लेकर रणक्षेत्र में उतरा । १३३३

भीम के पश्चात् बील्हण ने अपने भाई-भतीजों को साथ में लेकर युद्ध किया । बादशाह यह देखकर आश्चर्य करने लगा (भयभीत हो गया) कि इन्होंने तो मेरी सेना का संहार कर दिया है ।१३३४

वह (बील्हणदेव केसरिया) बागा पहिन कर सज-संवर कर रणक्षेत्र में प्रविष्ट हुआ । उसने अपने शरीर पर स्वर्ण के भांत भांत के आभूषण धारण कर रखे थे । शरीर में कपूर की सुगन्ध लगाये, गले में फूलों का हार पहने सभी योद्धा दुल्हे का वेश बनाये हँसते हुए चले । जिरहबख्तर और आयुधों से सुसज्जित थे । कंधों पर सांग (भाले) रखे हुए थे । सिंधु राग गायी जाने लगी । ढोली वीररस पूर्ण युद्ध की राग अलापने लगे । उन्होंने षड़यन्त्र रचकर अपना एक दूत आगे भेजा, जिसने बादशाह के पास आकर उसके चरण छुए ।

बादशाह प्रसन्न हुआ। उसने कहा कि आप लोग जल्दी से आवो। मेरे सैनिक निश्चित होकर सारा तमाशा देखेंगे। तब चौहान वीर अफीम का सेवन कर उसके नशे में मस्त होकर सुशोभित परिधान पहिन कर चले कि इतनी तेजी से दौड़कर गये कि बादशाह के समीप पहुंच गये। बादशाह ने कहा कि हथियार छोड़ दो। पर चहुवानों ने कहा कि हमतो इसी रूप में बादशाह से मिलेंगे अन्यथा पृथ्वी माता भी हमारे मन को धारण नहीं करेगी। जैनखाँन ने कहा कि ये लोग असभ्य गंवार है, अपनी जिद नहीं छोड़ेंगे। सुनते ही वील्हण ने उसके सिर में अपने खड्ग का प्रहार किया। उसने सात हजारी मनसबदार का सिर एक क्षण में ही काटकर गिरा दिया। जब बादशाह के सैनिक उसको मारने के लिये दौड़े तो उसने अपने हाथ दिखाये। चौहान ऐसे दाव पेच (युद्ध कला) से लड़ा कि पंच हजारी, सात हजारी उमरावों को मार गिराया। सदी वाले (पंच सदी सेसदी जैसे) मनसबदार तो इतने मारे गये कि उनकी कोई गिनती ही नहीं थी। बादशाह यह सुन सुनकर बहुत पछताया। शत्रु की ऐसी भयंकर दशा हुई कि मानो संसार में महाप्रलय की स्थिति हो गई हो। वह नृसिंह और हनुमान की भाँति महानाद करता हुआ आया कि उसको देखने की इच्छा लेकर सभी गंधर्वगण और देवता दौड़े चले आये। ऋषिगण और नारद मुनि नाचने लगे। भगवान् शिव का ध्यान भंग हो गया और वे भी रूंड माल के लिये हँसते हुए चले आये। अप्सराओं और योगिनियों ने मिल कर मंगलगान किया। प्रेत, मांसभक्षी गृद्धादि और व्यंतर भी वहां आकर इकठ्टे हुए। इस प्रकार चामुण्डा की इच्छा भी पूरी हो गई। कंकाली देवी संतुष्ट हो गई और उन्होंने आकर विरुदावली (प्रशस्ति) के बोल बोलते हुए गर्ज कर कहा—पृथ्वीराज (चौहान) के पश्चात् आज हम तृप्त हो पाई। चौहानों के अतिरिक्त हमें कौन पूछता है। इस वंश (चौहान वंश) की समता कोई नहीं करता। क्षत्रियों में और कोई वंश ऐसा नहीं है जो मृत्यु का वरण करने के लिये जन्म लेता हो। तँवर और पँवार ऐसे अवश्य थे, पर वे नष्ट हो गये। राठौड़ रावों ने तुर्कों का आश्रय ग्रहण कर लिया है। अनेक बड़गूजर और सोलंकी भी थे, पर वे सभी पस्त हो गये। ऐसे युद्ध के लिये अब कोई विचार नहीं करता। कछवाहा राव अब उत्कर्ष पर हैं, उनके राजघराने में बुद्धिमान लोग विचार करने वाले हैं। सिसोदिया वंश के राणा और पश्चिम के स्वामी ऐसा कृत्य अब नहीं कर सकते। ऐसा युद्ध अब भविष्य में, जब तक कलियुग का साम्राज्य है, कहीं भी नहीं होगा। चौहान वीर ने जब कंकाली के ये ब्रह्म वाक्य सुने तो घावों से भरा हुआ देखकर सिर धुन लिया। उस दिन सुबह से शामपर्यन्त युद्ध होता रहा। सभी ताल तलैया और पहाड़ी नाले रक्त से भर गये। इतने अधिक शव वहां पड़े थे कि उनको खोह (घाटी) में भरकर उन पर पुल बंधवा दिया। वहां असंख्य रूंड मुंड रक्त में तैर रहे

थे । ज्योंही सूर्य अस्त हुआ, वीर बील्हणदेव युद्ध करते हुए खेत रहा । उसके चारों ओर लड़ कर मारे गये सामन्तों के शव पड़े हुए थे । १३३५

राव हमीर के सामन्त एक से एक बढकर थे । हमीर की मृत्यु के बाद उन्होंने डेढ़ वर्ष तक युद्ध करके अपनी कीर्ति को प्रकाशित किया । १३३६

वे सभी इकठ्टे होकर युद्ध करते तो (शायद) बादशाह को भगा देते । फिर भी बिना दुल्हे के ही वरातियों ने भयंकर युद्ध किया । १३३७

इतने सामन्तों ने युद्ध कर लिया, अब सब कुछ सुना कर कहता हूं । अपनी अपनी सैन्य टुकड़ी लेकर वे सूर्योदय होते ही दौड़ कर युद्ध करने जाते थे । १३३८

जितने भी उमरावों ने युद्ध किया वे सभी राव से समता करने वाले थे । वे एक ही थाल में भोजन करते थे और हंसी मजाक करते जाते थे । १३३९

अन्य सभी उमराव जो उसके सहायक थे, सभी सरदार (क्षत्रिय) थे । उन्होंने ही एक साथ लड़कर उसके बाद की स्थिति को सुधारा । १३४०

उन सभी ने एक मत होकर युद्ध किया । अपने मूल (जड़) से कोई दूर नहीं हुआ । वे सभी दुर्ग से नीचे उतर उतरकर युद्ध करते करते राव हमीर के समान हो गये । १३४१

अपने अपने साथियों को साथ लेकर जो उमराव दुर्ग से बाहर निकलकर लड़े, उनके इतने नाम तो प्रकाशित कर दिये हैं, बाकी की गिनती नहीं की जा सकती । १३४२

दुर्ग से उतर कर सभी सामन्तों ने युद्ध किया और राव हमीर के रनवास की स्त्रियों ने जौहर कर लिया । वे सभी एक से एक आगे जाकर लड़े । बादशाह ने भी ऐसी हठ की । १३४३

युद्ध क्षेत्र में चौहान वीर बछा (वत्सराज), केसरिया वस्त्र पहन कर उसका साथी कछा भी उतरे । दीवान हंसा चौहान, अखैराज, देवराज (द्योराज) और जसा (जसराज) भी उतरे । चंद्रसेन, बुंदेल सांगा, कन्हीराम, डालू, गांगा, जगरूप, अनोप भाटी, जगदेव और जयदेव योद्धा भी रणक्षेत्र में उतरे, हरिराम, स्योराम (शिवराम), रामा, महादेव और भट सेवा (शिवा) चारण अभै और रासा चारण, महराज, गंगेव और आशा, खेम भाट का पुत्र पूरा, भाट तेजसी, राघौ (राघव), सूरा (शूरसिंह), जोगी ब्रह्मनाथ भी लड़ा, सन्यासी पुरी खेम भी मारा गया । हरिवंश, अहीर रूपा, किसना, बिसना और कूंपा जाट, महासिंह, देवा और दासा, बनवारी, महेश और आशा,

चौहान कल्याणमल, चौहान बैरसल (बैंरिशाल), चौहान, वीर भारत (सिंह), और सभी चौहान योद्धा जाकर लड़े। वड़गूजर, राजसिंह और उसका साथी हरिराज, हेमराज सोलंकी, जगराज, विराज, गर्जसिंह राठौड़, हरिसिंह कछवाहा, रामचन्द तंवर सभी अपने अपने साथियों को लेकर रणक्षेत्र में लड़ते उतरे। अभैराम पंवार, सरू और नरू और उनका भाई हरु, हररूप सिसोद (सिसोदिया), जगरूप, राव सूरा, हरिभानु, भाऊ गौड, वृषभान, नरेश राव, वीरभान, भारमल, ब्रजभान बड़ी फौज के साथ लड़े। सूरसेन, भीम, हरि, जादव, विजयसिंह झालाणी, जीवराज, वेणीदास, हरिदास, ख्योराज, खींवा, हरिराम, जैराम के साथ जगराम और स्योराम ने भी युद्ध में प्रवेश किया। मंनदास, चंदेल चंदा, विहारी और नन्दा निरवाण, खीची थाना (थानसिंह और सुजाणसिंह, सूजा, जगनाथ, हमीर (द्वितीय), जगदेव, जयदेव, मल्ला, फतेहसिंह, जयसिंह कला (कल्याण), हरिनाथ, मदन, हरदत्त, कर्ण, धरणीधर, वीरवर दलपति, उदयसिंह, बालचन्द, चत्रसेन, महानन्द, धर्मपाल, अनु, जसपाल, निहाल, कर्मसेन, सुजाण, देवा, मनीराम, पंवार सेवा, जगमाल, पूरण मल, अणीराय, खांडेराय, सोनिगरा, हरिचन्द, विक्रम, जगजीवन दास अभा, (अभयदास ?) बलिराम, श्याम, सभा, अमरेश, नरेश, नरा, चक्रपाणि, किल्याण, धर्मदास, तेज (सिंह), दूदौ, धनजी, राव उदा, सुखदेव, नाथ राजा, जसवन्त पंवार, जाजा, महासिंह, राठौड़ खेमा, उदयसिंह कूरम (कछवाहा) पेमा, हठीसिंह, तँवर लाला, थानसिंह, गवड़ (गौड़) वाला, ब्रह्मदास, नवल, सादा, गंगदास, वासु, बादा, मधुसूदन पांडे, घनश्याम जोशी, हरिदत्त, स्योदत्त हेमा, रूघनाथ, ब्रंभपेमा, खत्री सबळसिंह, आठ जैन बन्धु, भइया आणंदचंद, भइया साहिबराय, चतरू, जसु साह, धरमू, करमू, केसराज, सहरसिया, खींवसी, डूंगरसी, हरिया, बिसना, किशना, जगल्या, मदन्या, जगन्या, दमल्या दुरग्या, देवीदास, कलौ विरम्यो, जगसी, सांगो, रणमल, ताजी मीणा, हठीमल, डालू, जीणा, अभैराज, मोहन, दामा, धनराज, कल्याण, कामा, खेमदास, गूजर ईसा (पांच सात शूरवीरों के साथ) इस प्रकार सभी जातियों के लोग दुर्ग से उतर-उतर कर लड़े और अपने अपने कर्त्तव्य को पूरा किया। वहाँ रक्त के खाळ और परनाळे (पहाड़ी नाले) बह चले। वर्षा ऋतु के समान कीचड़ हो गया। सारे ताल तलैया और खाल रक्त से भर गये। चारों ओर शवों की सीढ़ियां और पाल बना दी गई। हाथों और पांवों के खण्ड इस प्रकार पड़े थे मानो मछलियां पड़ी हो। वीर सैनिकों के धड़ ऐसे पड़े मानो मगर तैर रहे हो। घायल पड़े व्यक्ति ऐसे कराह रहे थे मानो मेंढक टर्र-टर्र कर रहे हो। वीरों के कवच को बाँधने की डोरिया ? केकड़ों (कर्कोटक) के समान लग रही थी। उनके केश सेवाळ घास के समाल खुलकर फैल रहे थे। वीरों के मुख कमल पुष्प के समान खिले हुए थे। उनकी आंखें ऐसी लग रही थी मानो काले भँवरें बैठे हो। शत्रु जो आवाज कर रहे थे, वह मानो मोर

वोल रहे हो। चौसठ ही योगिनियां पनिहारिन के रूप में अपने घड़े रक्त से भर रही थी। दुर्ग की तलहटी ने मानसागर का रूप ले लिया था। १३८४

राव हमीर के बाद सभी लोग इस प्रकार युद्ध करते रहे। अठारह मास (डेढ़ वर्ष) तक रणथम्भोर दुर्ग में शोक छाया रहा)। १३४५

जब दुर्ग खाली हो गया और जब उसमें कोई व्यक्ति नहीं रहा तब बादशाह ने वहां के समाचार मंगवाये और फिर दुर्ग में चढा। १३४६

जव सब लोग लड़कर मर गये और सारा भय दूर हो गया तब दुर्ग को खाली हुआ देखकर बादशाह गर्व के साथ हुंकार करता हुआ ऊपर चढा।१३४७

सेना को आगे भेज कर उसने सभी द्वार खुलवा दिये। साह रचौंपाल को आगे किया गया, जो सभी स्थानों का परिचय देता जा रहा था। १३४८

संवत् तेरह सौ तिरेपन की माघ शुक्ला एकादशी मंगलवार के दिन अलाउद्दीन बादशाह ने युद्ध (नरसंहार) करके रणथंभोर पर अधिकार किया। अपने इष्ट का आदेश सुनकर उसने अपना चित्त भगवान् के चरणों में लगा दिया और सतपोल दरवाजे पर जाकर भगवान् शिव के समक्ष अपना सिर समर्पित कर दिया। जैत्रसिंह का पुत्र राव हमीर युगों-युगों तक अमर रहे। खेम (भाट) ने उसके निर्मल यश का गान किया। बनिये के द्वारा दुर्ग का भेद वता दिये जाने पर बादशाह दुर्ग में प्रविष्ट हो गया। १३४९

प्रथम द्वार पारकर बादशाह द्वितीय द्वार तक पहुंचा। वहाँ एक राजपूत कोने में अटका खड़ा था। वह शीशविहीन कबन्ध था, जिसके प्राण उसके सीने में ही डोल रहे थे। उसकी कटार उसकी कटि में ही रह गई थी, जिसका उसने किसी पर प्रयोग नहीं किया था। जलेबदार ने उसको देखा और उसको हाथ से धक्का लगाया। कबन्ध ने उसका हाथ पकड़ लिया और उसकी छाती में कटार के दो वार किये, जिससे वह जलेबदार मारा जाकर वहीं ढेर हो गया। १३५०

बादशाह ने कहा कि अन्य सभी स्थानों में ढूंढकर पता लगावो, कहीं और छिपे हुए न हो। यह तो मरा हुआ था, फिर भी मार डाला। चारों ओर अच्छी प्रकार देखो। १३५१

उसको देखकर बादशाह आश्चर्य चकित हो गया और उसके हाथ के जोश की तारीफ करने लगा। इस हिन्दू के क्रोध को देखो। यह मरा हुआ है, फिर भी इसने मेरे आदमी को मार डाला। १३५२

तब उच्च स्वर में बोलता हुआ वह आगे बढ़ा, जहाँ मार्ग में शव ही शव पड़े हुए थे। कदम-कदम पर मरे हुए आदमी पड़े हुए थे। वे एक-दूसरे से लिपटे हुए रक्त से सने थे।

तब वह वहाँ से चलकर उस स्थान पर गया जहाँ राव हमीर का सिर शिवजी के पास पड़ा था। रचौंपाल ने अपने पाँव को उठाकर उसके संकेत से बादशाह को वह सिर बताया। बादशाह उसको देखकर खड़ा रहा। उसको लग रहा था जैसे हमीर का सिर अभी हँस उठेगा। धड़ को अप्सराएँ ले गई और स्वर्ग में जाकर उसके साथ (वरण) परिणय कर लिया। १२५२

जब तक बादशाह देखता रहा वह सिर वहीं पर था, उसके बाद वह विलुप्त हो गया। शिवजी ने उसको अपनी रुण्ड-माला में पिरोकर अपनी शरण में रख लिया। १३५४

बादशाह ने रचौंपाल से पूछा कि वह राव हमीर के पास कब नौकर हुआ? तुमने क्या सेवा की, वह मुँह खोलकर सच-सच बता। तब रचौंपाल ने बताया कि हम लोग सात पीढ़ी से सेवा कर रहे हैं। हम पूरे राज-परिवार के प्रधान हैं और यहाँ की हाँडी में हम ही नमक डालते रहे हैं अर्थात् इस परिवार का हमारे परिवार के लोगों में पूरा विश्वास रहा है। बादशाह ने यह सुनकर सोचा कि यह व्यक्ति और भी अपयश के काम करेगा। जब राव हमीर जैसे स्वामी के प्रति ही इसने ऐसा व्यवहार किया है, तो यह मेरा वफादार कैसे हो सकेगा। १३५५

तब बादशाह ने निश्चय किया कि ऐसे व्यक्ति को अपने पास नहीं रखना चाहिए। मैंने इसको वचन दिया था कि तुमको सबके ऊपर रखूंगा। मेरे वचन की रक्षा भी हो जावे और इसका वध भी करा दिया जावे। ऐसा सोचकर बादशाह ने आज्ञा दी और तदनुसार अनेक शव मंगवाकर उनका एक स्थान पर ढेर लगवाया गया। रचौंपाल को उनके ऊपर चढ़ाकर उसे मारा गया। १३५६

बादशाह ने अपने सैनिकों से कहा कि—हम तो वापिस दिल्ली लौट रहे थे, पर यह बनिया हमें वापिस ले आया। इस दुर्ग के लिये इतने लोगों की मृत्यु का निमित्त भाग्य में लिखा था, अतः यहाँ का पानी हमको लौटा लाया है। १३५७

जब दुर्ग में चढ़कर बादशाह राव हमीर के महलों में गया और देखा कि राव हमीर का सारा आवास शवों से पटा पड़ा है। अनन्त अगणित संख्या में वहाँ स्त्रियाँ मरी पड़ी थीं। उन्हें देखकर वह आश्चर्य चकित रह गया। समस्त दुर्ग मृतकों से बसा हुआ था। यह सब देखकर वह वापिस लौट आया

और सारे दुर्ग को चारों ओर घूम फिरकर देखा । सारा दुर्ग लोथों (शवों) से भरा हुआ था, पाँव रखने तक की कहीं कोई जगह नहीं थी । १३५८

सारा किला दुर्गन्ध से सड़ रहा था । बादशाह के साथ के सभी मनुष्य नाक बन्द करके घूम रहे थे । यह अवस्था देखकर बादशाह ने कहा कि यहाँ पर बैठने तक की जगह नहीं है । इस थाने में कौन रहेगा । कतिपय परकोटों को गिरवा कर यहां से चले चलो, यही हमारे अच्छा है । वह चार घड़ी तक वहां ठहर कर नीचे उतर आया और अपने मन में अत्यधिक पश्चात्ताप किया कि यहां लाखों लोगों का संहार करा कर हमने हठ करके इस दुर्ग को जीता है । १३५९

बादशाह ने मन में बहुत अधिक पश्चात्ताप किया और वजीर को बुलवा लिया, उसको आज्ञा दी कि युद्ध में कितने लोग मारे गये हैं, उनकी गणना करो । १३६०

वजीर ने बादशाह को बताया कि आठ लाख उमराव, ग्यारह लाख पैदल और राव के एक लाख आदमी मारे गये हैं । १३६१

यदि हमीर नहीं मारा जाता तो वह किसके काम करता । हमारी सारी बादशाही समाप्त हो गई, तब कहीं जाकर बड़ी कठिनाई से हमने इस स्थान पर अधिकार किया है । १३६२

बादशाह सोच-सोचकर अफसोस कर रहा था कि इस छोटी-सी पहाड़ी को अधिकृत करने के लिये मैंने ऐसा अपराध किया है । अब मेरा कितना जीवन रह गया है । मैं व्यर्थ ही ऐसे अहंकार से ग्रस्त हो गया हूं । मैंने कई बार हिन्दू राजा (हमीर) को समझाने की कोशिश की, पर उसकी बातें मुझे पसन्द नहीं आईं । मैंने अनेक प्रदेशों को जीता है, पर जैसा जौहर इस दुर्ग में हुआ है, वैसा अन्यत्र कहीं नहीं हुआ । हम अपने हाथ झड़काकर खाली हाथ यहां से जा रहे हैं, और यह दुर्ग जहां था, वहीं रह गया है । १३६३

बीस लाख व्यक्ति तो यहां मर गये और दस लाख व्यक्ति गली कूंचों और मौहल्लों में मर गये । इतने लोग मारे गये, उन सबका पाप मुझको ही लगेगा । छोटे जीव जन्तुओं की गिनती कौन करता—पशु और पक्षी भी साथ ही मारे गये । एक मात्र मेरे ही कारण जो मजदूर या वेतन भोगी मारे गये, वे तो अलग ही हैं । अब मेरा जीवन बहुत कम रह गया है, अतः मैं और अधिक बादशाही (शासन) नहीं करना चाहता । मेरे कोई उत्तराधिकारी संतति भी नहीं है, जिसके लिये मैं कष्ट भोगूं । १३६४

मुझको धिक्कार है, कि मैंने अब तक इतने प्राणियों का सर्वनाश (संहार) करवाया है। खुदा का हुक्म है कि यह शरीर आदमी का है, इसे मारा नहीं जावे। मेरी क्या दशा होगी, मैंने इतने परिवारों को सर्वनाश करवाया है। वे गिनती में करोड़ों हो गये होंगे, उनका कष्ट मेरे हृदय को दुःख दे रहा है। इस एक पेट को भरने लिये अब मैं बादशाही के इस पद से कोई मोह (ममत्व) नहीं करता। मैं यह बादशाही का पद किसी और को सौंप दूंगा और खुद समुद्र में जाकर कूद जाऊँगा। १४६५

बादशाह को घृणा हो गई और उसने वजीरों से कहा कि यह स्थान छोड़ कर कहीं अन्यत्र जाकर डेरा डालो। यहां से प्रस्थान कर मंजिल दर मंजिल पार करते तत्काल दिल्ली पहुंचा जाये। उसने अपने अनुज (छोटे भाई) को बुलाकर राजछत्र उसके सिर पर रख दिया। हाथी, घोड़े, राजमहल, समस्त भण्डार और सारा राज्य (देश) उसको सौंप दिया और स्वयं वेगपूर्वक वहां से निकल कर सेतुबन्ध रामेश्वर पहुंच गया। १४६१

वहां अपनी आज्ञा (प्रतिज्ञा) प्रसारित कर उसने बहुत अधिक दान पुण्य किया। तुर्क जाति की आदिम पारंपरिक प्रथा की जानकारी लेकर सारे रीति रिवाज विधिविधान पूर्वक सम्पन्न किये। स्वयं समुद्र के किनारे पर गया और वहाँ जो भी उपस्थित थे, उनको आदर सम्मान दिया। उनको कहा कि बादशाही सिंहासन की लज्जा रखना आपका धर्म है और दूसरा कर्त्तव्य जनता का उपकार करना है। इतना कहकर अपने घोड़े को उत्साहित करके समुद्र में प्रविष्ट करा दिया। घोड़ा पानी के ऊपर इस प्रकार दौड़ता गया, मानो वह पृथ्वी पर ही दौड़ रहा हो। १३६७

वह दूर कहीं निकल कर चला गया-कौन जानता है, किधर चला गया। वह पानी में डूब गया अथवा वह वीर सिद्ध (औलिया पीर) बन गया। उसका अनुकरण करते हुए पाँच सात और भी लोगों ने अपने घोड़े दौड़ायें। उनमें से अनेक समुद्र के पानी में डूब गये, बहुत से वापिस लौट आये। समुद्र के किनारे पर अलाउद्दीन की कब्र का निर्माण करके सभी आदमी अपने घरों को लौट आये। समस्त जम्बूद्वीप में अपनी आज्ञा स्फुरित करके (अधिकार) अलाउद्दीन समुद्रों के परले पार चला गया (मर गया)। १३६८

यह ग्रन्थ 'हमीरायण' राजा-महाराजाओं और धनिकों, निर्धनों सबको प्रिय लगता है। इसका अध्ययन करने से पढ़ने वाले के मन में धैर्य और शरीर में शौर्य की वृद्धि होती है। इस काव्य में शील, सतीत्व, क्षात्रधर्म, शृंगार रस और युद्ध (वीर रस) सबका वर्णन किया गया है। इसके श्रवण और पठन से अत्यन्त लगाव (आनन्द) उत्पन्न होता है और बार-बार यह प्रिय लगता है

अर्थात् बार-बार पढ़ने की इच्छा होती है। यह आडावळ (अरावली ?) पहाड़ों में बसा रणथम्भोर दुर्ग अत्यन्त अजेय (अजेय) स्थान है। यह दुर्ग महादेव की जलहरी के समान पवित्र है और अभेद्य है तथा प्रसिद्ध चौरासी दुर्गों में सर्वश्रेष्ठ, सबका प्रिय है। १३६९

राव हमीर ने सूर्य के रथचक्र के नीचे जिस प्रकार का काम किया है, वैसा और कोई नहीं करे। बादशाह की बुद्धि के अभाव में बादशाही बाईस ही सूबों से आई शाही वीर सेना को महादेव (हमीर) ने भक्षण कर लिया। आज भी करोड़ों की संख्या में वीर सैनिक दक्षिण दिशा में युद्ध कर रहे हैं (या रुलते फिर रहे हैं)। मदल कच्छ में मिलते हैं और सिंह गुजरात के आँगन (भूमी) में। जयचन्द गंगा में डूबकर मर गया। वह युद्ध में शत्रु से नहीं लड़ा। तुम्हारे ही अनुकरण पर तुम्हारे ही समान हमीर ने युद्ध के मिस रणथम्भोर दुर्ग में किया है। ऐसा कोई न करे जो राव हमीर ने सूर्य के रथ-चक्र के नीचे रणथम्भोर में किया। १३७०

हे माता ! मुझको आशीर्वाद दो—सौ वर्षों तक क्या जीना। हे माता यौवन धन्य हो जाय—यही मुझे आशीश दें। क्षत्रिय का बीस बारह (बत्तीस वर्ष की आयु तक जीवित रहता है। बत्तीस वर्ष की आयु तक यह वीर जाजा कहता है। वह उस समय तक ही जीवित रहता है, जब तक उसका हृदय सांग (भाला) से बिन्ध नहीं जाता और अपनी शक्ति से महादेव को तृप्त नहीं कर देता। यदि स्वामी के हित के लिये युद्ध में मृत्यु ही हो जाय तो स्वर्ग में निवास मिलता है। हे माँ ! मुझे आशीर्वाद दे—सौ वर्ष की आयु तक जीने से क्या लाभ ? १३७१

हमीर का नाम अमर है और दिल्ली का सुल्तान भी अमर है। युगों-युगों तक अमर (अटल) रहेंगे। मैं कहाँ-कहाँ तब वर्णन करूं ? १३७२

मैंने प्राचीन पांडुलिपि में जैसा लिखा हुआ देखा है, वैसा ही लिखा है (प्रतिलिपि की है),विद्वान् लोग इसको देख लें। यदि कोई भूल-चूक हो गई हो या लिप्यंतरण में आगे-पीछे लिख दिया गया हो तो मुझे क्षमा करें।१३७३

इतिश्री हंमीर राव अलावदीन पातिसाही चहुवांण राव हंमीर की हंमीरायण संपूर्ण। मिति ज्येष्ठ सुदी १४ सोमवासरे लिपिकृतां ऋषि सबला। संवत् १७८४ वर्षे मिति जेष्ट शुदि १४ सोमवासरे।श्रीरस्तु ।। कल्याणमस्तु ।। सुभं भवतु ।।

परिशिष्ट–१

शब्दार्थ

दोहा सं. १

सौरूं=स्मरण करता हूं, अच्छर=अक्षर (भाषा)
(४) खलक (खल्क्=अ.पु.)=जनता, विश्व); कौधवंत=क्रोधयुक्त, रुष्ट,
सिमटाय=समेट लेता है
(५) उपमा=प्रशस्ति काव्य, गुण; जेता=जैत्रसिंह चौहान, सुतन=पुत्र
(६) सावंत=राजा, सामंत; सूरापण=शौर्य, वीरता;
सूरां=योद्धाओं को,
सोरठा सं. ७
सुमरि=स्मरण करके, हमीराण=हमीरायण, हमीर की कथा,
दोहा सं. ८
साको (सं. शाकः)=युद्ध, शक्ति, सामर्थ्य; (९) सालवाहन=राजा शालि-
वाहन उजीण=उज्जैन; सिंघारे=संहार किया;
(१०) हठ=दुराग्रह, प्रचंड शक्ति प्रदर्शन, टेक=प्रतिज्ञा;
अरजन=अर्जुन, कुंतिपुत्र पांडव
(११) कवित्त—
फरस=परशु, कुठार, मैमंत=मदमस्त
सुंडिम=शुण्ड को; उंदर=मूषक, चूहा, काबि=काव्य,
(१२) सुरसत=सरस्वती, वाणी और ज्ञान की अधिष्ठात्री देवी,
करि=हाथ से, हरिसिध=हरसिद्धि मातृका; घड़ी=घटित किया,
निर्मित किया; रासो=काव्य भेद, प्रशस्तिकाव्य,
चवूं=कहूं; देहि=दीजिये, गुण=काव्य;
(१३) सांई=स्वामी, (१४) अलख पुरुष=अदृष्ट, निराकार ब्रह्म;
हद्दु=हद, सीमा; चत्रजुग=सत, त्रेता, द्वापर और कलि नाम के चार युग।
(१५) ग्रेह धणी=घर के स्वामी; आसापुरी=चौहान राजपूतों की
कुलदेवी; मधि=में,
(१६) वंछत=वांछित;
(१७) तुष्टमान=सन्तुष्ट, प्रसन्न, चहुवान हैं=चहुवान को
रिध सिध=ऋद्धि सिद्धि, सम्पन्नता; बकसी=प्रदान की;
हेमकलस=सोने का कलस, बोह=बहुत;

निकसी = निकली; थापि = स्थापित करके,
वधती = वृद्धि, उन्नति, विकास; स्योरातरी = शिवरात्रि;
(१८) दुरंग = दुर्ग, किला । अंछति = इच्छा, वंछति = इच्छा
(१९) अखै = अक्षत, सम्पूर्ण; मनसा = मनोकामना
(२०) जुरालवध = ज्वर की संप्राप्ति,
(२१) वड़दीसा = बड़े दिन, पवित्र दिन; भ्रीतियो = मृत्यु को प्राप्त हुआ।
(२२) भड़ सत्तर = श्रेष्ठ योद्धा, वाज्यौ = कहा गया;
राज्यो = सुशोभित हुआ। (२३) मीच = मृत्यु,
(२४) उपरांति = उपरान्त, पश्चाद्, वयठौ = वैठा
भणीजै = कहा जाता है। इमस = इसी प्रकार, इससे
(२५) टीको = तिलक, राजतिलक;
(२८) नींको = श्रेष्ठ, सुन्दर, अच्छा; इतणौ = इतना;
धाय = धात्री; बड़ारण = रनिवास की संरक्षिका
पेम = प्रेम; जुगनीपुर = योगिनीपुर, दिल्ली; ग्रेहे = घर में,
(३०) हेक = एक; मारग वादि = मार्ग शीर्ष कृष्णा;
माता = मस्त; बिड़द = विरुद;
घावां भीनौ = घावों से आहत होकर; मिरत = मृत्यु;
(३१) वयांनो बयाना नगर (महाभारत कालीन विराट् नगर),
खंडारि = खंडार; तुरी = अश्व, घोड़े;
सुरताँन-गहन = सुल्तानों को पकड़ने वाला,
(३२) सहसर साठि = एक हजार साठ; पहुंचीस = पहुंच कर;
(३३) रळी = आनन्द; तिहि = उसको;
गुंटका देवी = इस नाम की मातृका (देवी); विग्रह = युद्ध, लड़ाई,
ग्रह्या = वन्दी बनाया, सौह = सभी
(३४) जुझारा = युद्ध; सिंघराम = संग्राम, युद्ध । खेतर = क्षेत्र; धड़क = भय
सत्रांघरि = शत्रुओं के घरों में, बाजियो = प्रसिद्ध हुआ
(३५) भल = भद्र, भला, अच्छा; दीसा = दिवस, मुहूर्त
हुलासा = उल्लास के साथ; (३६) करण गुजारो = गुजरात का कर्ण सोलंकी
(४०) जंगा = मोटे, बड़े; भ्रस्त्री लंपट = व्यभिचारी;
सरापियो = शाप दिया;
(४१) घावां भिळि = घावों से विद्ध होकर; डील = शरीर;
चिगदा = घाव, सुमार = अगणित
(४२) हसती माता = मदमस्त हाथी, दीर्घकाय हाथी,
(४३) साखति = घोड़ों पर; गइंद = गजेन्द्र, हाथी;
साजह = किया, सजाया
(४५) भड़ = भट्ट, योद्धा; खेतर = क्षेत्र, युद्ध क्षेत्र

(४६) जुगणीपुर=योगिनीपुर, दिल्ली
(४७) बड़भागी=बड़े भाग्य वाला; भाली=देखी;
बाग=उपवन; उपाड़ि=उखाड़ कर,
(४८) तुरंगम=घोड़े
(५०) पडिवा=प्रतिपदा; जौंहर=अग्नि स्नान
अंतेवरि=अन्त:पुर की स्त्रियाँ; हथियार झारि करि=युद्ध करके
(५१) द्रुंग पौळी=पौळी नाम दुर्ग में
(५२) उंही=उसी, सिंग्राम=युद्ध
(५३) वळै=आडावळा में, या पहाड़ में,
गूढौ=छोटा गाँव, पहाड़ों में स्थित लघु बस्ती
(५४) तास=तस्य, उसका; जिहकौ=जिसका, थपायो=स्थापित किया
(५५) ऊकस्यो=उठा, उत्कर्ष को प्राप्त हुआ।
(५६) बळा=आडावळा, पहाड़; आगल=सामने, आगे।
पाट राणी=पटरानी, वरिष्ठ रानी।
पद्मावती=पद्मिनी जाति की स्त्री, दौल्यौं=परित, चारों ओर
(५७) पौंण=जातियां, चौग्रिद=चारों ओर
गचकोट चूने से निर्मित पक्का परकोटा।
चीड़ोतरे=उत्तर (बाद में) में चार। निहचिंत=निश्चित।
(५८) बळो=पहाड़, बनी=छोटा वन, अरण्य। अनड़=अनम्र, ऊँचा।
डाँग=पठारी भूमि, डाँग नाम का प्रदेश। झाड़=वनस्पति, पेड़, पौधे
(५९) घरि=घर में। गुजारे=चलाता था। सारै=सहारे, आश्रित।
इँतवत=इधर-उधर से। होड=बराबरी, समता।
सरीक=समान। लीक=मर्यादा
(६१) सहर=सहरिया जाति के लोग। ज्यां=जिनको।
लाड=प्रेम। माड=
(६२) चिहुं=चारो। आण=अन्य, दूसरे। ओरां नै=दूसरों को।
पीत्यो=विश्वास। कुमाई=कमाई। द्योवां=देते हैं। मौहडो=मुंह, मुख।
(६३) मतो=सम्मति, मत। आप=हम। आपहैं=स्वयं।
(६४) पोलै=प्रतोली, द्वार।
(६५) हुंता=थे। बोल लियो=वचन लिया।
(६६) हंकालि=कड़ककर, डाँटकर। कांइ=क्या, किस प्रकार की
थां की=तुम्हारी। वांह=भुजा। डील=शरीर। विरचस्यो=
(६७) टोळी=समूह, दल।
(७०) हाल्या चले। सहंसर=सहस्र, हजार। नख=पास।
गाढा गह्या=दृढता से पकड़ा। हठि लावै=छीनकर लाते थे, हर कर
लाते थे। अमानती=धरोहर।

(७१) गम = आवागमन, पहुंच ।

(७२) वरहौ = वराह, सूअर । रूंतो = रमता, घूमता फिरता ।

चोट = घाव, प्रहार । तिहकै = उसके । मौरां बिच = पीठ के मध्य ।
जिहकै = उसके । घांटी = घाटी । तहंठै = वहाँ ।
पुहंतो = पहुंचा । मांटी = मर्द, वीर

(७३) लार = साथ, अनुगामी । ईख = गन्ना, सांठा, इक्षुदंड ।

उंहठै = वहां, उस स्थान पर । वास = सुगन्ध ।

(७४) चकमक = आग चमकाने का एक देशी उपकरण जिसमें फौलादी अंकुड़े को आग्नेयाश्म पर रगड़कर सूत पर आग पाड़ी जाती है ।
वेसान्दर = आग, वैश्वानर । करद = छुरी । खाल = चमड़ी ।
छीनी = छीली, उतारी । बुगदो = मांस का ढेर ।
पाहण = पाषाण, पत्थर । जाठै = जिस जगह । हेम = स्वर्ण ।

(७५) चत्र = चतुर । पारस = स्पर्श पत्थर । ह्रिदा = हृदय ।
चीन्हौ = पहिचाना । गोठि = प्रीतिभोज । सौंज = सामग्री

(७६) निकस्या = निकले

(७७) चौंकि = चौंक कर । जोयो = देखा । गढवासै = विश्राम स्थल
राम = भगवान् रामचन्द्र ।

(७८) बोधी = कमजोर ।

(७९) माणस्यां = विलास करेंगे ।
भीर = एकत्र समूह ।

(८०) बावलो = पागल । असंक्ष = प्रभूत, संख्यातीत
दुड़ै = छिपाया जा सकता है । हैं = को (आप हैं = खुद को)

(८१) स्यांणप = समझदार । माम = प्रतिष्ठा, इज्जत ।

(८२) बासस्याँ = बसायेंगे । रूडी = सुन्दर, रुचिकर ।

(८३) दाव = उपाय ।

(८४) कौल = समझौता, शर्त, वचन ।
बाचा बध = वचनबद्ध । खराखरी = पक्की, विशुद्ध ।
सौंपाला = सर्मपित करेंगे ।

(८५) रस = आनन्द, मजा ।

(८६) रंज्यो = मिल गया है ।

(८७) इतबार = ऐतबार, भरोसा ।

(८९) रामति = रमण, पर्यटन, आनंद विलास

(९०) दाय बैठी=पसंद आई

(९१) मछ=मत्स्य । सुकन=शकुन । अषै=अक्षत

(९२) जोग=योग । स्यौ=शिव ।

(९३) रजनीजागर=रात्रि जागरण, रातीजगा ।

(९४) परकरमा=परिक्रमा ।

(९५) सिराह=सराहना ।

(९६) पिसुण=शत्रु । गंजै=नष्ट करेग ।

(९७) सिध जोग=सिद्धि योग

(९८) विषासर=संकट की स्थिति में । दे राख्या बांह=सहायत देकर रखा। खांह=खाते हैं ।

(९९) वडभागी=भाग्यशाली । अंछ्या=इच्छा । पूरवै=पूरी करे ।

(१०२) दाय=पसंद, इच्छा ।

(१०४) लहो=लेना चाहते हो ।

(१०६) अजहूँ=आज भी ।

(१०७) आसंगो=विश्वास,

(१०८) दुबध्या=दुविधा । कुंभी नरक=कुंभीपाक नामक नर्क ।

(१११) आउठाण=अधिष्ठान ।
नींका=अच्छा ।

(११६) गात=शरीर ।

(११७) नगारो दीन्हो=प्रयाण किया ।

(११८) तूठो=तुष्ट हुग्रा, प्रसन्न हुआ ।

(११९) दिढाय करि=द्ढ करके, मजबूत करके ।

(१२०) लाह=लाभ ।

(१२१) बंदरवार=वंदन माल ।

(१२२) छोह=उत्साह, क्षोभ
सेती=से ।

(१२६) सुरतां=ज्योतिषी, पंडित । षट् दरसण=ब्राह्मण, सन्यासी आदि ।

(१२७) रोक=रोकड़ी, नकद, स्वर्ण मुद्रा ।

(१२८) खीच=नया नगर, ग्राम आदि बसाते समय राजा या ठाकुर की ओर से बसने वालों को दी जाने वाली सुविधा, भोज कागल=पत्र । देसंत्र=देशान्तर । कोकै=बुलाकर । जग=यज्ञ ।

(१२९) अपूरब=जो पूर्व में कभी नहीं हुआ ।
आडोवलो=अरावली पहाड़ ।

(१३०) ठकुराला=ठाकुर, राजपूत, दांम=धन, द्रव्य ।

(१३१) पुरातन=पुरातत्त्वज्ञ, भूत का इतिहास जानने वाले
आघा=आगे, अग्रिम पंक्ति में । खेड़ो=खेटक, नगर ।
वागै=कहा जाता है ।

(१३२) रखीसर=ऋषि गण । उधारचा=उद्धार किया ।
पाई=पांव । पणि=भी । कुसि=कुश । ल्योकुसि=लव और कुश

(१३४) हडी=हरी गई, अपहृत की गयी । त्रिवेणी तटि=चंबल, बनास और मोरल (?) नदियों का संगम स्थल, जहां रामेश्वर महादेव का मंदिर स्थित हैं ।

(१३५) बाग नोलखा=अशोक वाटिका ।

(१३६) विरतंत=वृत्तान्त । मंत=विचार, मनन ।

(१३७) खस=शैली, पद्धति । रढियो=बोले

(१३९) वहोडी=लौटा, व्यावृत हुआ । षसट=षष्ट, छः । सेन्या=सेना
अपर बल=भयंकर । सिंघारचो=संहार किया । कुष्ठी=दुष्ट ।

(१४१) पेलो=लोपते हो, उलंघन करते हो । गहरि लीनो=मतौ=विचार ।
कूडौ=बुरा ।

(१४३) ओहठै=होठों से । कुबुधि=बुद्धिहीनता ।

(१४४) ठेलि=धक्का । जिन=मत, नहीं
नवण=नमन, प्रणाम ।

(१४५) खीजि=खीज कर, क्रुद्ध होकर । हठवाद=हठधर्मिता, जिद ।

(१४७) असराल=दूर दूर तक

(१४९) अहेड़ै=आखेट, शिकार । बलबंड=बलवंत, शक्तिशाली
मंड=रचना ।

(१५०) जोधा=योद्धा, वीर । भै भीत=भयभीत, रौद्र रूप ।

द्वितीय अध्याय

(१५१) चाहन = इच्छा । ब्याह = विवाह, उद्घाटन समारोह । ठठ = शोभा, ठाठ ।

(१५२) बुहतें = अत्यधिक । ब्यालू = प्रातराश, नाश्ता । बूझा = पूछताछ ।

(१५३) आवां अरजाई = आना और जाना । इसडौ = ऐसा, ईदृश ।

(१५४) बरणावती = वरुण पुत्री, बनास, पर्णाशा । कवला = कँवालजी नामक तीर्थ स्थान । आरोध = अनुरोध ।

(१५५) सलिता = सरिता, नदी । बहसाई = हँसकर । सौंरी = स्मरण किया है, याद किया है । भेवा = भेद, रहस्य ।

(१५६) जग्य = यज्ञ । बघीर = ठांवां ठांवां = स्थान स्थान पर ।

(१५७) पखालो = प्रक्षालन करो, स्नान करो ।

(१५८) बौह = बहुत । अग्यारी = यज्ञाहार । बासना = सुगंध

(१५९) अग्या = आज्ञा, आदेश । भाखो = कहा, बोला ।

(१६०) मया = दया ।

(१६१) दीपई = प्रदीप्त होता है ।

(१६२) साज = साधन । बडै बखत = भाग्यशाली,

(१६३) दयौस = दिवस, दिन । बरण = वर्णन करना । धकै = शक्ति से उजीर = वजीर, आमात्य । च्यारि सै = चार सौ या चार हैं । चेटी = दासो

(१६५) संमारै = स्मरण करता है । तकै = ताकता है, बुरी नजर से देखता है । बिरानी = दूसरों की, पराई । बिगोयो = नष्ट किया ।

(१६६) मंको = मक्का । गौविध्वंसण = गौहत्या । मतो = मत, सम्प्रदाय । मंकेश्वर = मक्केश्वरी, मक्का तीर्थ की अधिष्ठात्री देवी ।

(१६७) पीर = पैगम्बर, ठिठोली = हंसी मजाक,

(१६८) जोगणी = योगिनी, रोस = क्रोध । खोऊं = नष्ट करूं, क्षय करूं । करद = कटार ।

(१७०) गाजि = गर्जना करके, कड़क कर । बाद = वाद, शास्त्रार्थ । मंडेलो = होगा ।

(१७१) चोगणी = चार गुणी । दाय = दाह, जलन,

(१७२) भिष्ट = भ्रष्ट । ऊपर करै = रक्षा करे, सहायता करे । कांनै = दूर, एक ओर । सहणो = साहनी, घोड़ों का अध्यक्ष । मरदक = मालिश करने वाला गुलाम । नांउ = नाम ।

(१७३) वहकुं = उसको । कुणी की = किसके । कीन्ही = किये ।

(१७५) सलेमान = सुलेमान, हज़रत दाऊद का बेटा जो पैगंबर माना जाता है । तुरंग = घोड़ा । पलाणी = सजाकर

(१७६) किसौ = किस्सा, वृत्तान्त

(१७७) भाज = भाग कर ।

(१७८) अजमाति = (अ. अज़मत), प्रतिष्ठा, इज्जत, महत्ता, बरतरी ।

(१७९) जिन सांको = शंका मत करो, डरो मत ।

(१८०) गरद = गर्द (का.) खा़क, परास्त ।

(१८१) दौर = प्रभुत्व

(१८२) मनी = अहंकार, अभिमान ।

(१८३) होतिब = भवितव्यता

(१८४) पोल्यां = द्वारपाल । जुहार = प्रणाम, अभिवादन ।
अंदेसा = शंका, भय, सन्देह । बेग = शीघ्र, तत्काल, निकारा = निष्कासन ।

(१८५) नवण = प्रणाम, थांपै = आपके पास, ऊभो छै = खडा है, देह पठाई = भिजवा दो ।

(१८६) जिन = मत, भेर = देरी, विलंब, कितौ = कितना किसौ = कैसा, आप छै = स्वयं है ।

(१८७) तषत = सिंहासन

(१८८) उंह सूं = उससे, राजि = राजा,

(१८९) ताकि = देख कर, म्हां पै = हमसे, हमारे द्वारा
ठांई = स्थान, ठा ढौ भयो = खडा हुआ ।

(१९०) वहसाय = हंसकर

(१९१ धाय = दौड़ कर

(१९२) रिसाई = क्रुद्ध होकर मांडो आखारा = युद्ध करो, छिनाय = छीनकर

(१९३) बसीठ = दूत, संदेशवाहक, रोस = क्रोध, जोम = घमंड

(१९४) कोकि लिया = बुला लिया, सौह = सब, सेती = से

(१९५) प्रजल्यो = क्रुद्ध हुआ, द्योह उठाय = उठा दो, भगा दो ।

(१९६) नीकां नीकां = अच्छी तरह

(१९७) सुणत प्रमाण =सुनते ही, सूधी=सीधी, नैक=कुछ भी,
खिजकै=खीज कर, हंकारे, ललकारा

(१९८) ऊबरचो=बच सका,

(१९९) राळी=मारी, पटकी
म्हां वंह=हमारे और उसके बीच, लोह बाग्यो=शस्त्र चली,
वंहिकै=उसके, डील=शरीर, टांचो=घाव।

(२००) नकीव=दरबार के समय बादशाह से भेंट करने वाले का नाम पुकार ने वाला, राजा की सवारी के आगे आवाज लगाकर चलने वाला।
ढील=शैथिल्य

(२०१) सावंत=सामंत; सिल्है=बख्तर, अघाय=तृप्त होकर

(२०२) हाल्या=चले; अपर बल=भयंकर; टारै=हटाया सार=शस्त्र, तलवार;

(२०३) पुरातन=पुराना इतिहास,

(२०४) झटका=प्रहार; बटका=टुकडे अघेरा=आगे आगे, कल=युद्ध,
रहचक=युद्ध, मातो=मस्त, रणोही=युद्ध,

(२०५) बुटै=वहाँ;

(२०६) उहैठै=वहाँ

(२०७) मांडि कह्यो=अच्छी तरह; विरतंत=वृत्तान्त, भंत=विचार;

(२०८) सेती=से; एती=इतना; खोजना=परिचय, बूझो=पूछो;
चिगदौ=घाव,

(२०९) मंके=मक्का शरीफ,

(२१०) सकल=कळाधारी, चमत्कारी, एकलधारी=अकेला ही युद्ध करने का प्रण धारण करने वाला योद्धा।

(२११) मसलति=युक्ति, सम्मति

(२१२) राई=राजन, उहैं=उसको, आघी=आगे, दूर;

(२१३) सकळाई=शक्ति, सिद्धि, चमत्कार, ओर गाई=रोक कर, अलगाकर

(२१४) अक्यारथ=निष्फल, व्यर्थ, सूकै=सूख जाता है।
अहुंटो=दूर, ध्रिग=धिक्कार है,
जीतब=जीवित रहना, पूठ=पीठ

(२१५) बैदाई=पसंद आई, अैंठा स्यूं=यहां से,

(२१६) रैंणि=रजनी रात, जाग्यां=जगह, अजगैबी=चमत्कारी;
आसमानी, खुदाई,

(२२०) रणतूर=युद्ध की तुर ही, करणाल=एक प्रकार का ढोल, तुर ही जैसा लंबा धातु वाद्य, सहारे=सह सकता है, चौग्रिद्द=चारों ओर;

(२२१) अलेखे=अगणित; फिरादि=फरियाद

(२२२) हांकौ=जयघोष, एकौ=एकमत,

(२२३) मांज्यो सोर=होहल्ला मच गया; बंब ठौर=चोट, आसि=आशा,

(२२४) विलाय=लुप्त हो गये; सिंधु=युद्ध की राग, माती घमसाण=घमासान युद्ध हुआ। ठंगार=ढेर,

(२२५) अजमती=बुजुर्ग, सम्मानित; अकाज=बुरा

(२२६) खपावै=मरवाते हैं। अकाज=विना कारण, व्यर्थ ही। माणस=मनुष्य

(२२७) होतिब=होनहार, निमत=निमित राड़ि=झगड़ा, लड़ाई; पंथ=धार्मिक संप्रदाय,

(२२८) अरज=निवेदन,

(२२९) पिसुण=शत्र,

(२३०) परिपंच=प्रपंच, षड्यंत्र गाफल=ग़ाफिल, अचेत

(२३१) छताँ=होते हुए, उपस्थिति,

(२३४) थांन=स्थान

(२३५) अर्ध निस=आधी रात बलाय=आफत, दैवी संकट, मथवाय=सिर का दर्द नांकी=नासिका, रुद्र=रुधिर, रक्त

(२३६) वाले वलि=बार बार, बूझि=बुझ जाती है, शान्त हो जाती है असराल=(अस्सराळ) भयंकर

(२६७) डीठं=दृष्टि का जादू, नजर, मूंठ= टौंण=टोना, जादू, काला जादू, अपूठा=उलटा

(२३८) सेती=से, भई=हुई, फिरादि=फरियाद दादि=सहायत; बंध=रोक, विध=उपाय,

(२३९) झौड़=विवाद,

(२४१) पौळि=द्वार, नगरद्वार, रौळि=तमाशा, भगदड़, विघ्न

(२४३) दावौ=झगड़ा, कहुंठे=कहां, किस जगह

(२४४) दुड़ावौ =दुराते हो, छिपाते हो, सवद=सरहद, सीमा
(२४५) करण मतेंस=जो करने का विचार किया है ।
(२४६) सौगंदं=सौगंध; राजि=श्रीमान्
(२४७) लोह=भराऊं=लोहे में चिमाना=की वं=करो; अजाई—
(२४९) गुर=गुरु, पीर=देवता, पौहे=पहुंचे
कादि कुंडाळौ=गोल घेरा, बाच=वचन
(२५०) तावो=संतप्त करो; गनरुद्र=भगवान् राम और महादेव,
(२५१) ऊपरि=रक्षा, अरगाय=उलझा कर
बहरंम=(बहरम) खराव, कलपत रहै=दु:ख पाते रहे ।
(२५३) कलपोगे=दु:ख पावोगे,
(२५४) अहटौ=वापिस, उल्टा । मांडिकै=व्यवस्थित कर
सौह=सारी, संपूर्ण
(२५५) थंभै=रुके, सुरक्षित रहे; अकाज=निरर्थक
(२५६) थांभो=कुल परम्परा; विभ्भिण कै गयो=नष्ट हो गया ।
विजन=जनशून्य हो गया
अहंठै=इस स्थान पर;
(२५७) मांडी=मंडित की, बसाई ।
(२५७) बासी=बसाई; परगासी=प्रकाशित करके
स्पष्ट करके
(२५८) आगैं=पूर्वकाल में; आही=थी;
कांणि=मर्यादा; चूरी=नष्ट की, तोड़ी, उलंघन किया
(२५९) बोह भांति=अनेक प्रकार के;
(२६०) सुरता=ज्ञानी, बुद्धिमान् । कोकि बुलावा=निमंत्रित
किया, पुरातम पुरखा=पुराने पुरुष, वृद्ध पुरुष
षट् दर्शणि=न्याय, वैशेषिक, सांख्य, मीमांसा, वेदान्त और योग
के ज्ञाता अथवा ब्राह्मण, जोगी, जंगम, भाट, सन्यासी और
साधु । नांगळ=नव मंगल, नव निर्माण के अवसर पर उत्सव;
निछत्र=नक्षत्र; सोधो=शोधन करो, ढूंढो; परमोधो=जागृत करो ।
(२६१) पार ब्रंभ=परब्रह्म, परमात्मा; सौरचो=स्मरण किया ।
पतड़ो=पंचाग; खड़ी=खड़िया; पाटो=काष्ठ पट्ट, पाटी
(२६२) अज्या चक्र=अजाचक्र; हयचक्र=अश्वचक्र (ज्योतिष के चक्र),
पेरख्यो=देखा । निबेरचा=निर्वतित किया
रिव=रवि, सूर्य

(२६४) सिधजोग=सिद्धियोग;
(२६५) सीधा=भोजन सामग्री, आटा-दाल
(२६६) द्यौस=दिवस; जीता=जितने
(२६७) चीठी=निमंत्रण पत्र, सामां=सामग्री, व्यवस्था; जग=यज्ञ, हवन; मांणस=मनुष्य; जोई=देखी; मुकता=मुक्त हस्त, प्रभूत, चून=आटा
(२६८) कागळ=भोजन; सांभरि=नमक;
(२६९) पहुंता आय=आ पहुंचे; धाय=उस अवसर पर
(२७०) वळ=बलि; बोक=बकरे; जाचिग=याचक,
भुवकारै=सस्वर पाठ सहित; आहूंत=आहुति
बिड़दावली=बिरुदावली, भणई=पढते थे।
चोग्रिद=चारों ओर, जाचै=याचना करते थे, मांगते थे।
गहगड़=हलचल, माती=जबरदस्त, माची=हुई
(२७१) रसोई=रसवती, भोजन, जीमि=जीम कर, भोजन करके,
बूझै=पूछता है, आगलो=पूर्वकाल का।
(२७२) गळगच=प्रभूत घृत युक्त भोजन (२७३) रूड़ा=सुन्दर
(२७४) खीचड़ी=कर मुक्त जागीर या कृषि-भूमि।

तृतीय अध्याय

(२७५) चुणवा कै ताई=चिनाई के लिये, सिलावट=संगतराश, कारीगर
खोह=घाटी, ताल=तालाब, सरोवर, गचगीरी=चूना भरना,
बिपर=विप्र, ब्राह्मण, पोळी=द्वार
(२७६) घांटी=घाटी, , स्योघांटी=शिव घाटी, वाट=मार्ग,
डोळ=दीवार, परकोटा
(२७७) कढाई=निकलवाई, बनवाई, ढौरि=ढलवा कर।
(२७८) पाथरि=पत्थर, मेष=मेख, कीले, हाट=दुकान, बाजार
दुहरा=देवालय, मण्डप=छतरियां, पौंणि=जातियां
(२७९) जोतगी=ज्योतिषी, (२८०) गिरंद=ध्वस्त
(२८१) ऊँडी=गहरी, गच=चूना, चेजो=चिनाई, निर्माण

(२८२) आउठाण=अधिष्ठान, निर्माण (२८३) भेव=भेद
(२८५) दाय=पसन्द, (२८७) अगंम=अगम्य, स्वप्नदृष्टि, भविष्यकथन
(२९१) पुनि=पुण्य, अघाय=संतुष्ट होकर,
(२९२) सवाय=सवाया, अधिक, (२९३) पठाय=भेज दिया
(२९४) हवाले=सिपुर्द, ठकुराळा=ठाकुर, राजपूत,
खांप खांप=विभिन्न शाखाओं के,
(२९७) कोळी=वस्त्र बुनने वाली एक जाति, भरावा=सुनारों की एक शाखा जो पीतल के आभूषण ढालती है, पिंनारा=पिंजारे,
काहर=कहार, कीर=नदियों में नावें चलाने वाली जाति, केवट,
बारी=पत्तल-दोने बनाने वाली जाति, बाबर=नाइयों का भेद,
लखेरा=लाख का काम करने वाली जाति, कलाल=शराब बनाने व बेचने वाली जाति, सहर=सहरिया, आरण्यक जाति,
(२९८) जड़िया=आभूषणों में रत्न जड़ाई करने वाले, घड़िया=सुनार
डबगर=ढोल-नगाड़े आदि पर चमड़ा मढने वाली जाति,
(३०४) खाळ=नाले, (३०६) डार=हिरणों का समूह,
(३०७) अखताय=उकता गये, परेशान हो गये, रय्यत=प्रजा,
हकीकति=वास्तविकता, अँढै=यहाँ, इस जगह,
(३०८) अमोगी=आवगी, समस्त, चूसि=चाव, शौक,
(३०९) जहँढै=जिस जगह, जहाँ, कुतरा=कुत्ते, डूंगरी=पहाड़ी,
(३१०) वोळी=बहुत अधिक, टोळी=समूह, झुंड, डार,
(३११) तिसींगा=तीन सींगों वाला हिरण, लार=पीछे, साथ,
सारौ=वश, फिरादि=फरियाद, खेदि=खदेड़कर, पीछा करके,
(३१२) थोक=समूह, रीता=रिक्त, खाली,
(३१३) ववेक=विवेक, ज्ञान, विचार,
(३१४) तुचा=त्वचा, खाल, आही=है, मोख=मोक्ष, अषै=अक्षय,
(३१५) जैठो=ज्येष्ठ, बड़ा, अण=और, खावंद=स्वामी, अधिकारी।
(३१६) माहिर=अनुभवी, ताता=तेज, भाल=खोज,
(३१७) हेरि काढूयो=ढूंढकर, निकाला, निजरां=आंखों से,
वाग राळि कै=लगाम ढीली करके, छूटो=दौड़ लगाई, घोड़ा दौड़ाया
न्याँई=समान, (३१८) डाण=छलाँग, पूंछी=पीछा, वाहस=प्रवेश,

प्यादौ =पैदल, काछनी =काछा मांडकर, धोती ऊपर टांग कर,
(३१९) ढोक =प्रणाम,
(३२०) पलकै =आँख की पलक, हूं =मैं, थां पै =आपके पास,
(३२१) अंछया =इच्छा,
(३२२) सूनो =स्वर्ण, अपजस =अपयश, ऊपरि कीजै =रक्षा करें।
(३२४) अनाहक =नाहक, व्यर्थ,
(३२५) अगम =भविष्य, आघा =आगे, पास में,
(३२६) रूंण =अरण्य, जंगल, लोई =लोगों में,
(३२७) वेगारी =अवैतनिक श्रमिक,
(३२८) करता =सृष्टिकर्ता, परमात्मा।
(३३०) गेला =मार्ग, रौंण =अरण्य।
(३३३) बीड़ौ =तांबूल-बीटिका।
(३३६) भाणजो =भगिनी-पुत्र,
(३३७) आसिरें =आश्रय में,
(३३८) दिलासा =ढाढस, नींकी =अच्छी,
गुदरान =गुजारा, बैठां =वहां का।
(३४०) जींजै =जीमें, भोजन करें,
(३४१) जींबाकी =जीमने कीं, राई =महाराज,
(३४२) मांजी =माता, बसीले =प्रजा को लेकर
(३४३) किंधाड़े =किस दिन, कब,
डील डील =प्रत्येक व्यक्ति को, दुहाई =सौगन्ध
(३४७) ठठ =प्रबन्ध, सीधा =भोजन सामग्री,
पीसणां =पीसने के लिये, बेसण =चने का आटा,
मसीणों =दालें, छांटि =पछांट कर
पखाळि =भिजोकर,
(३४८) सुसा =खरगोश, निराही =अगणित,
बारहा =वराह, सुअर, न्याळो न्याळो =अलग अलग,
विसवार =वेसवार, हल्दी (मसाला),
बंटिवां =पीसा हुआ, भोन्हों =भूंजा, पकाया,
(३४९) सूळा =लोहे के तार पर सिका मांस,

डोरा=डोहरे (दर्वी),
झारचा=घृत की धारा से प्लावित किया,
चक्र=टिकडिया, को=कोई,
कोरा=मूल अवस्था में, बिना दही के,
धोळी=श्वेत, पीळी=पीले रंग की।
(३५०) तेवण=तेमनम् मिठाइयां,
पहत=प्रभूत, मीठी गब
मांडा रोटी=मंडिका, दूध मलाई डालकर बनाई गई रोटी विशेष,
खड़ी=कढी,
(३५१) डीरा=चणे के पौधों के ऊपरी कोमल पत्र जिन्हें सुखाकर सब्जी बनाते हैं।
सोवा=सूवा, धनिये के समान सुगन्धित पत्र,
सिरस्यों=सरसों, डांडी=चौलाई का भेद
राई=चौलाई भेद, बंगा=बैंगन ,
चंचीड़ा=एक प्रकार की सब्जी, कदु=कद्दू, कोहळा,
कमुरेला=करेला ? ,
किंदूरी= , पलवल=परमल,
पतोड़ा=पतोड़, बेसन की पतली टिकिया,
अरइ=अखी, सूरण=जमींकंद,
(३५२) भड़ीतो=बैंगन का भुर्ता,
भटा=गोल बैंगन, वृंतांक,
अगीथा=अगस्त्य नामक पौधा,
बाल्होळ=सेम की फली,
कचनार की कळी=कांचनार के पुष्पांकुर,
अथाणो=अचार, आदौ=अदरख,
थांणो=अथाणो, अचार, आंबलवाण्यो=इमली का पानी,
मठो=मठ्ठा, छाछ, धुंगारयो=धूम्रायित।
(३५३) सीरो=हलुवा, पंचधारी=पांच बार घी पिलाया हुआ अथवा घी और मावे के मिश्रण से बना हलुआ।
लुचई=लुचा पूरी, रोटी,

गूंझा=एक प्रकार की मिठाई,
डोवठा=मिष्ठान्न भेद जो फीका होता है
खीच=बाजरी या गेहूं को ओंखळी में कूटकर पकाया खाद्य,
खीचड़ी=कृशरी, चावल और दाल मिश्रित खाद्य ।]
(३५४) फूलदारू=सुराभेद,
भाटी=भट्टी, पटंतर=अन्दर, समान
चुवाई=वाष्पायित कर बनाई हुई,
गुल महुवा=मधूक पुष्प, महुवे के फूल,
तिजारो=अफीम के दाने, आफू=अफीम,
सींगी मुहरो=संगे, मुँह, विषाक्त पत्थर, सर्पमणि,
(३५५) ढांहरा=कांटेदार झाड़, सड़हो=बाड़,
आंवली=मरोड़ी, वेष्टन,
पैसार=प्रवेश, झार=झाड़,
दोराय=दूर तक, सचौड़=चौड़े में, खुले में,
फलसा=सीमा, मुहकम=दृढ, मजबूत,
हितु डीलो=स्नेही व्यक्ति,
(३५६) सिकल=चमकदार, वाढ=धार,
(३५७) जादू=यादव,
जीं चुकै=जीम चुके, भोजन करलें ।
(३६०) उमटी=उमड़ पड़ी,
भादूं=भादव मास की, हीडा=आज्ञापालन, सेवा
(३६१) पंगति=पंक्ति, पांत
(३६२) आडा लोग=अन्य जातियों के, न्याळा=अलग,
पातळि=पत्तल, कचोला=कांस्य प्याले,
(३६३) फूल-कटायण=फूलों का उत्कीर्णन,
बतक=सुराही, सुरापात्र,
डोके लागा=ढूकने लगे, अपर बल=अधिक शक्तिवाला ।
(३६४) एक समचै=एक साथ, अचानक,
आडा लोग=अन्य जातियों के लोग
(३६५) वाजी=खेल,

झिलिया = मस्त थे, स्नान कर रहे थे,
(३६७) बरयां = बारी,
(३६८) प्रोसत = परोसते हुए, गास = ग्रास, कौर,
चोघे = देखता था, लाई = बेचारा,
रागीं = राग में गाना।
(३६९) रीठ = शस्त्रप्रहारों की झड़ी।
(३७०) रामति = खेल, रीठी = प्रहारक्रम,
जराजर = अनवरत, लगातार
दाग दिवायो = अग्निसंस्कार कराया,
अप लोग = स्वजन, अपने आदमी।
(३७२) खटावै = निभावै।
(३७३) कड़कडाय करि = कटकटाकर, क्रुद्ध होकर,
उवारि = बचा लिया, आश्रित कर लिया।
(३७४) हीणति = हीन वचन।
(३७५) जादूवाटी = यादवों का प्रदेश, करोली के आसपास का प्रदेश,
पंजाई = ध्वस्त की।
गेलो न्हाळै = मार्ग देखता है, प्रतीक्षा करता है।
(३७६) अनड़ = अनम्र, जेरि = नष्ट,
कमेती = कामदार, दाम = द्रव्य।
(३७८) जुवो = अलग से, टीको = राजतिलक।
(३७९) सेती = से।
(३८०) ताल = अवसर।
(३८१) तोरो = व्यवहार, आचरण।
(३८२) खरो = विशुद्ध रूप से, सयाणो = सज्जन,
मरम = हृदय, रहावणो = राजसभा।
(३८३) बटाऊ = भाई बन्धु, ग्रासिया।
(३८४) तरणा तरणी = युवक-युवतियां, मसकरी = व्यंङ्ग्य।
(३८५) विभौ = वैभव, मनीं = अभिमान,
बांपेता = पारम्परिक, साखेतां = कुलीन श्रेष्ठ वंश के।
(३८६) मोसर = महोत्सव, बसी = जागीर।

(३८८) उरसाल=हृदय के लिये शल्यरूप ।
(३९०) पीर=पीड़ा, कष्ट ।
(३९२) दुतकारचा=धिक्कारा, दूर हटा दिया, बुराभला कहा ।
क्रम=कर्म, भाग्य ।
(३९३) कुदाव=पेच, घात ।
(३९५) फीटो=निर्लज्ज होकर,
डोलै= घूमता है, मतिभिसट=मतिभ्रष्ट ।
(३९७) खपाया=मरा दिया ।
झाड़=पेड़ पौधे, अमल=अधिकार ।
(४०१) खालसै=केन्द्राधीन ।
(४०४) धोंकळ=युद्ध ।
दमड़ा=द्रव्य, सांथरो=ढेर ।
(४१०) खुस्याल=प्रसन्न ।
(४११) इकलास=इखलास, निष्कपट प्रेम,
मतौ उपायौ=विचार किया,
(४१२) गाफिल=असावधान जोळा=साथ,
निमत=भाग्यलेख, सयाणप=होश्यारी,
मसलि=सलाह, सम्मति, मिस=बहाने ।
(४१५) दियो ढुलाई=मार गिराया ।
(४१६) मांझी=नेता, सरदार,
गोठि=गोष्ठ, दल, विणठी=नष्ट हो गई ।
सेरी=मार्ग,
(४१७) पोल्या=प्रहरी, प्रतिहारी, तहकीक=जांच,
खिदायो भेजा, ग्वाडी=घर,
महोकम=मजबूत, बंधबस्त=प्रबन्ध;
मोकळणो=भेजना,
(४१८) चौकी=पहरा ।
(४१९) मावई=समाता था ।
(४२०) आणंदयो=प्रसन्न हुआ ।
(४२२) तसलीम=प्रणाम, दादि=शाबाशी,

पसेव=पसीना, रूहीयर=रुधिर, रक्त,
ढरई=बहेगा, निवाज करि=कृपा करके।
(४२३) राहणों=दरबारी, परिग्रह,
विदुष्यां=पंडित, विद्वानों ने
बिह=विधि,
(४२६) चित्त चुभ्यो=मन लग गया।
(४२७) रावलो=राजलोक, अन्तःपुर।
(४२८) आभि=आकाश, सरद=अधीन, विजित,
(४२९) मिलापी=मिलने वाला,
बाण्यो=बनिया, अकुलाण्यो=दुःख पाया,
उभारा=उत्साहित।

चतुर्थ अध्याय

(४३४)=आयुर्बल; पोल्यां=दरवाजा।
(४३७) दूणा=द्विगुणित।
(४३८) उगोंणी=पूर्व, आथौंणी=पश्चिम,
डांग=उन्नत पठारी भूमि जो डांग के नाम से प्रसिद्ध है।
माळा=महालय, करि राल्या=कर डाला।
(४४०) हवद=हृद, झील, तूल=समान, तुल्य।
(४४१) रूख=वृक्ष।
(४४२) आंबली=इमली, खीर=खिरणी,
कडहल=कटहल, झूमरियं=झूम रहे हैं,
बकायण=निंबभेद, तरतूंत=शहतूत,
सुहजणियं=सहजणा, बोलसिरी=मोलसरी,
सोसौं=शीशम, पाडलीय=पाटल,
ल्हसव=लिसोड़ा, सिंभल=सेमल,
गुल जातिन=फूलों की जातियाँ
बहरूं=एक पुष्प जाति, खण=खण्ड, मंजिल,
चितराम=चित्र, वोवरी=ओवरी, उपगृह,

कारंज=फँवारे (?) भरनाट=गुञ्जार,
भ्रंगना=भँवरियाँ,
(४४५) जलफोदया=जलपक्षी, जलकाकली,
बबीही=पपीहा,
पंडक=पंडुक, कबूतर जाति का पक्षी,
कोचरिया=उलूक जाति का एक छोटा पक्षी,
कुरचि=क्रौंच, टुकल्या=एक छोटी जाति की चिड़िया, तुक,
बुगला=बक, कुही=एक शिकारी पक्षी,
(४४७) उपराय=ऊपर, अधिक।
(४४८) कोटिधज=कोटिध्वज, करोड़पति,
बारीयाँ=खिड़कियाँ, बादी=तार्किक, तर्कशास्त्री,
बाद=शास्त्रार्थ, परवरैत=कवचधारी वीर, घोड़े,
(४५१) मनमंथ=मुसलमान, मांडू का राजा, कोका (?)
राडि=युद्ध।
(४५२) द्रोहता=बैर, शत्रुता।
(४५५) सूग=नफरत, घृणा, वच=वाचा,
अहौंठो=उठकर लौट जाना, छांटा=छिड़काव।
(४५७) चोख=स्फूर्ति, तेजी
खेत झडाणो=संग्राम करना।
(४४८) खेड़=सेना, खिदाज्यो=भेजना
हद=सीमान्त।
(४६०) खंभायच=खंभात।
(४६१) सूरवां=सूरवीर, हेंदळ=हयदल, घुड़सवार सेना।
(४६२) हंकार=हुंकार, जयघोष, झटकां=प्रहारों से,
कुटका=टुकड़े-टुकड़े, लोथि=शव,
सार=तलवार, रहचक=लड़ाई, युद्ध,
भचक=टक्कर, संघर्ष, भाती=भयंकर,
समोह=युद्ध, रम्भ=अप्सरायें,
नूर=तेज, घाय=घाव,
तुरी=घोड़े, महा=वीर योद्धा, भसुंड=हाथी,

ग्रिझनि = गिद्ध, डिग्यो = हट गया, भाग गया ।

(४६३) तीर = पास में ।

(४६४) गलगाज = उच्च स्वर में ।

(४६६) धोक = प्रणाम ।

(४६८) पीव = प्रिय ।

(४६९) धौलहर = धवल, गृह, महल ।

(४७३) सींव = सीमा, उपटां = सीमा से बाहर ।

(४७४) बकल = वल्कल, वृक्षों की छाल ।

(४७७) चेड़ी = चेटी, दासी, झोंकी = भेजी ।

(४७९) आयस = नाथ योगी, छंछाल = मस्त ।

(४८०) कांसो = भोजन युक्त थाल, हींखै = नीचे ।

(४८२) बिवाणि = विमान, हुंके = बोलता है ।

(४८४) पावसैं = द्रवित होता है ।

(४८५) सत = ब्रह्मचर्य ।

(३८६) वड़ारणि = रनिवास की प्रमुख दासी ।

(४८७) चिरत = नाटक, षड्यंत्र ।

(४८८) पैंड = कदम, गरळायर = विलाप करती ।

(४८९) वरिया = समय ।

(४९३) जोख्यों = जोखिम, भय, रिगसती = खिसकती हुई ।

(४९४) पलोटूं = दबाऊं ।

(४९५) मुरड़ाटा सूं = अलसाते हुए, शरीर को ऐंठते हुए ।

(४९७) चीज = माल, रंगरातौ = प्रेम विह्वल ।

(५००) खिस्यो = खिसक गया, चला गया,

भणसारो = चहचहाट, प्रातः काल,

सांपडि कै लयो = स्नान कर लिया ।

(५०१) भींटी = स्पर्श की हुई, छुई हुई ।

(५०२) क्रीला = काम क्रीड़ा ।

(५०३) झालैं = ग्रहण करे ।

(५०५) गूढा = गांव ।

(५०६) यारी = प्रेम संबंध, मढी = झोंपड़ी, छाळी = बकरियां,

राव=छाछ में ज्वार, बाजरा या मक्का का दलिया डालकर बनाया खाद्य।
(५०८) छयाली=बकरियां।
(५११) गंद्रप=गंधर्व।
(५१३) श्रम=शरम, लज्जा,
हिंवाळा=हिमालय, गरै=गलै।
(५१४) झांप=भैरव झांप, छलांग,
जौहर=आग में जल मरना, देही=शरीर।
(५१५) घरबारी=गृहस्थी, हीणी=दुर्बल,
कुमलाई=सूखी हुई।
(५२२) बिललावै=रोवे।
(५२३) उकलाई=व्याकुल होकर।
(५२५) गुदरावो=निवेदन करो, काल्ह=कल।
(५२८) चाऊ=इच्छा, केरी=की।
(५२९) दुड़ाय=दुराय, बचा कर।
(५४०) खुणसायो=कसमसाया।
(५४३) छक=मद, नशा।
(५४४) नेवज=नैवेद्य, देवता को अर्पित मधुरान्न।
(५४५) नावड़ा=नावें, पेलै=चलावे।
(५४६) पाती=देव पुष्प।
(५४७) पंडा=मंदिर का पुजारी, हद=शक्ति।
(५४८) स्यो=शिव।
(५४९) कौल=वचन।
(५५१) झिन=मत, नहीं।
(५५३) दुबध्या=दुविधा, उपाडि=उखाड़ कर,
आंवली=लपेट, जांम=पुत्र, वंशज।
(५५६) होतिब=होनहार, अजुगती=अनुपयुक्त कार्य।

पंचम अध्याय

(५५८) बारी=बाला, पुत्री, छी=थी।
(५६०) अलख=परमात्मा, अदृश्य,
लोमचि रिखि=लोमश ऋषि।
(५६१) कुकायो=बुलाया।
(५६४) मलमंत्र=मल से पूर्ण।
(५६६) नीलक=वस्त्र भेद,
पटंबर=पाटंबर, रेशमी वस्त्र का भेद, परचा=पारचा।
(५६७) श्री साप=एक प्रकार के बहुमूल्य वस्त्र का भेद,
सुखंबर=एक बहुमूल्य वस्त्र भेद, खासा=एक वस्त्र भेद,
महमूंदी=एक प्रकार की महीन मलमल
तासा=स्वर्णतार खचित वस्त्र, बाफ्ता=बुना हुआ कपड़ा,
कचिया=एक प्रकार का कपड़ा, आसानरी=कपड़े का भेद,
तचियां=खचित, टूक=देशी वस्त्र, रेजी,
अधोतर=अधोवस्त्र, धोती, मोटा कपड़ा,
कायमखानी=कामखानी,
अम्बर गजी=कपड़े का एक भेद।
(५६९) कांचू=कंचुकी
तन सुख=एक वस्त्र भेद जिसमें सोने चांदी के तारों की लहरें पड़ी हों,
सालू=मांगलिक लाल वस्त्र, साड़ी,
चोळ=मजीठ से रंगा, वासतो=वस्त्र भेद,
छींट अमूंगी=मुंगी पट्टन की छींट।
(५७०) तबकी छाया=सोने चांदी की छाया, आभा,
बाला चूनड़=चूनड़ भेद।
(५७१) पोमचा=वस्त्र भेद, बिंदली=टपकिया, बिंदिया,
घर=आंगन, पटियाळी=पट्टेवाली, नवेरा=निवेरा।
(५७४) टगटगापुरी=भोग विलास की नगरी, शून्य नगर।
(५७९) दहसी=जलायगा।
(५८२) नख्या सूं=पास से, अभिलेखा=इच्छा।

(५८५) निसां=(फा.) विश्वास,
प्रभता=प्रभुता, सति=सत्य,
बायां=पुत्रियां, बालाएं; व्यौंत=विवरण।
(५८६) परमोधो=प्रमोदन, प्रसन्न रखो,
रजायस=राज्य, आज्ञा।
(५९१) जींधाड़े=जिस दिन।
(५९२) विलाई=विलुप्त हो गया, ओझल हो गया।
(५९४) लेखो=हिसाब-किताब।
(५९५) सारसुत=सारस्वत व्याकरण,
कोकिलसास्त्र=कोक शास्त्र, काम शास्त्र,
नठुवा=नर्तक, नर्तकी; पातुर=वैश्या।
(५९६) पूतली=पुत्तलिकाएँ, मानवाकृतियाँ,
बूंटा=पुष्पलतादि का चित्रण।
(५८८) हिंडोरो=हिंदोला, झूला।
(५९९) हींदै=झूलती थी,
आगल=पूर्वकाल में; ठावा=प्रतिष्ठित, प्रसिद्ध।
(६०२) बाब=(फा-ब्राफ) बुने वस्त्र।
(६०३) बंदर छींट=छींट का भेद।
(६०४) ढूलरा=समूह, झुंड।
(६०६) फूलेल=इत्रादिक द्रव्य,
कांकही=कंघी; वेणी=चोटी।
(६०७) छ्योना=बच्चा; मिलागरी=मलियागिरी चंदन।
(६१३) ललीलप=सुन्दर।
(६१७) तिमना=एक प्रकार का कंठाभूषण, तिमण्या।
(६१८) जावक - लाख।
(६१९) मयन=मदन।
(६२१) टांट्या=ततैया; भवंग=भुजंग, सर्प।
(६२३) तेहड़=करधनी (?)
अनवट=गोळ पांव के अंगूठे का आभूषण जिसमें घूघरियां लगी होती है
तुरकला=कर्णाभूषण,

बिछवा = पांव की अंगुलियों की अंगूठियां।
(६२९) बनिठनि = सजीधजी।
(६३०) भीड़ = पक्ष।
(६३४) तौलतीस = तीस तोले के एक सेर का भाव।
(६३५) लयो कलाय = हिसाब लगाकर,
भौमियो = भूमिपति, सामंत, कमठाण = भवन निर्माण।
(६४१) छक्यो = तृप्त हुआ, चाळौ = शौक, अभिरूचि।
(६४३) बूठा = बरसा।
(६४४) सौहड़ायत = सुभट, योद्धा,
चाड़ी = चुगली, शिकायत।
(६४५) गुन्हो = अपराध, खता।
(६४६) ठव = शोभा।
(६४७) अजुकवि = अजीब घटना।
(६४८) घोरी = घोड़ी।
(६५०) ठेका दे गयो = चकमा दे गया, भाग गया।
(६५१) गीध्यो चोर, लोभी।

षष्ठम अध्याय

(६५३) उड़दाबेगी = मर्दाने वेश में रहने वाली शाही दासी,
शैतान स्त्री, लार = साथ।
(६५४) सोटो = लट्ठ; मकनो = बारीक वस्त्र,
श्वेत बुर्का दोल्यो = चारों ओर पीछे,
जालम = जालिम; हुड़म = बेगम।
(६५६) विछट = बिछुड़कर; दावण = दामन,
उजाडि = निर्जन स्थान; मधि = में।
(६५८) ख्वावंद = (खाविंद) स्वामी,
तोहमति = (अ. तुहमत) आरोप, इल्जाम।
(६६०) आस्या = आशा,
अजाब = यमराज के द्वारा दिये जाने वाला पाप कर्म का दण्ड,

सौहवत=(तु. सुहबत) मैथुन, संभोग,
जीणपोश=घोड़े की काठी या जीन पर बिछाया जाने वाला वस्त्र,
उकडू=फाबों के वल बैठना ।
(६६२) गरल्यां नीर पीबो=पात्र को मुँह में लगाये बिना ऊपर से मुँह में पानी डालकर पीना ।
(६६३) मूलद्वार=गुदा द्वार; करड़ाय=अकड़कर ।
(६६४) कूवति=शक्ति ताकत ।
(६६५),ऊषदि=औषधि,
गरळी=पात्र में मुँह लगाये बिना पानी पीना ।
(६६६) कसीस=(तु. कशिश) खिचाव, तीर ।
(६६७) करवळ=(तु. करावुल) शिकारी दल का सिपाही, शत्रु सेना की खबर रखने वाली फौज जो आगे चलती है ।
(६६८) निरत=जांच ।
(६६९) पेख्यो=देखा; सेल=भाला,
खरसटा=खरोंच ।
(६७०) डराई=डलवा दिया ।
(६७२) हंकारा=बुलाया; नाहर=सिंह
दरवान=द्वारपाल, छड़ीदार ।
(६७४) हवालगीर=राजदरबार के विशिष्ट पदाधिकारी, हवलदार,
भेंद=रहस्य, भेद ।
(६७६) पाजी=बदमाश; रूळवति=विषयोपभोग,
ताष=अलमारी ।
(६७७) औलग=देखकर (ओलख),
दहसत=डर; चाबकौ=चाबुक,
अधौड़ी=चमड़ी उधेड़ना; आमां=रक्षा, क्षमा ।
(६७९) सांक=शंका ।
(६८०) असराळा=(सं. आसराल) भयंकर ।
(६८१) नम्बेड़ा=निवेड़ा, निर्णय ।
(६८६) छूछी=थोथी ।
(६८८) कीच=कीचड़; देगचा=डेग, भोजन पकाने के पात्र,
चिग=चिक, परदा ।

(६८६) सांस्सो = संशय ।
(६९१) कुरबाण = तरकस का तस्मा,
आली = आर्द्र, गीली; पालथी = पलथी ।
(६६८) उरको = बर्का, चिट्ठी ।
(७०१) दुहाई = आज्ञा ।
(७०२) अराब = (फा. अराबा) गाड़ी ।
(७०५) फजर = प्रातः काल ।
(७०६) मांणस = मनुष्य, परिवार के सदस्य ।
(७११) बिरस = विरस, झगड़ा ।
(७१३) किनात = तु-कनात, पडदा ।
(७३७) उबारा = रक्षा ।
(७३८) महूला = महोला, डेरा पड़ाव, सलाम, अभिवादन,
खुरी = खुर; रत्नावत = डलवाता हुआ ।
(७३९) हेंवर = घोड़े; पाणीपंधा = दरियाई, पानी पर चलने वाले,
प्रसेन = (प्रसत) पानी की बून्द नहीं,
अराकी = ईराक देश के घोड़े; ऊंचल = उन्नत,
तोय = पानी; लंक = कबूतर की एक जाति,
नाड़ि = गर्दन; तुरी = घोड़े; कीसेय = (कीस) बंदर के समान चंचल,
गौंन = गमन, गति; जांमीय (जामीह) मदमस्त, जामनगर के,
काछी = कच्छ प्रान्त के घोड़े; डांण = छलांग,
उडांण = उड़ने वाली; स्यामी = स्याम देश के घोड़े,
खंधारी = कंदहार के घोड़े; बुखारी = बुखारा के घोड़े,
बलखीय = बल्ख के घोड़े; असीय = अश्व,
मुखमलीय = चिकना; जरदा = पीला, जर्द रंग का,
टेसरिया = पलाश के फूल जैसे रंग का घोड़ा,
अबलख = (अ. अब्लक) काला और सफेद मिश्रित वर्ण का घोड़ा, चितकबरा,
पटाभर = हाथी; भसूंड = हाथी,
अराबा = छोटी तोपगाड़ी ।
(७४०) नखै = पास; कुरब = सम्मान ।
(७४२) रोगान = (अ. रोगन) घी या तेल ।

(७४३) चिल्लो (फा. चिल्ला)=धनुष की डोरी, प्रत्यंचा के कमान की तांत में लगा हुआ लकड़ी या चमड़े का छल्ला (हल्का); भलको=माला, तीर का फलक; सांग=लोहनिर्मित भाला; जमधर खांडा—कटारनुमा खड्ग;

(७४५) रातब=(अ. रातिब) घोड़े का दाना;

(७५२) किलकिला=एक पक्षी जो तीव्र गति से उड़ता हुआ जल जीवों को पकड़ता है।

(७५७) झुकलावबो=पीछे पड़ने लगना। ढाहे=तट पर; अंड-बंड भयो=भ्रमित हो गया।

(७५८) खेजड़ा=शमी वृक्ष,

(७५९) निरत=निर्णय,

(७६०) कैंवर (कैंमर)=धनुष।

(७६१) दुसार=आरपार।

(७६३) पचारचो=पुकारा; चिरागी=पिछली टांगो पर खडा हुआ घोडा; आफळि=टकरा कर; आंठूहु=रांगे, जांघे, अगली टांगों और छाती के बीच का स्थान; मुसक बांधबो=पीठ की ओर बांहे बांधना;

(७६४) दइगति=दैवगति; रालि लियो=डाल दिया;

(७६५) मोहरो (फा-मुह्र)=पत्थर की एक जाति जो विषपान करती है।

(७६९) पटायत=पट्टेदार, जागीरदार।

(७७०) निखलाँ=पास के

(७७२) ठोल्यो=ठोका; कंपाया; अकराळ थकि=क्रोध के साथ।

(७७७) साक्रत=शंकित, लज्जित; खासा घोड़ो=शाही घोड़ा। अजायां=(जाया)=मारना, नष्ट करना। पैलिकै दीजे=भेजदें, धक्का दे दें। बांकी ठौड़=दुर्गम स्थान पर;

(७८१) ताबीन=अधीन, मातहत,

(७८२) अभिलषाया=ऊपर उठा लिया; बधारो=पदोन्नति

(७८७) दावो=वश, जोर।

(७८९) गहा=(फा॰ गाह)=खेमा, तंबू।

(७९०) धापरि=धापकर, तृप्त होकर; पायगै=अस्तबल; लाया=आग;

(७९३) उजीर=मंत्री, वजीर; मजलसी=मजलिस, दरबार, सभा।

(७९७) एलची=दूत;

(७९८) निसां = विश्वास,
(७९९) तकसीरी = (अ. तक्सीर) = अपराध, कुसूर, दंड; पेसकसी = नजराना; नवसंदा; (फा. नवीसिंद =) लेखक; कर्मचारी
(८०४) साकवि = घोडे पर;
(८०६) हिंडबत = इधर उधर डोलते फिरना; विगहै = विग्रह में, युद्ध में, घोरि (फा. गौर) = कब्र
(८१३) गढ गजनो = गजनी दुर्ग;
(८१५) उभि = उसके, सरभर = बरावर
(८१६) सिचाना = बाज, एक शिकारी पक्षी;
(८१७) विसहर = सर्प; गरड़ = गरूड़; सिह गौस = से ही, एक जानवर जिसके शरीर पर कांटे होते हैं। नैंन्हड़ै = बालक; कान्हड़ = कन्हैया; कुलिंग = एक जल पक्षी;
(८१८) पलासी बाड़ = पलाश या खाखरे या ढाक की बाड़,
(८१९) फांदै = लांघ सकता है। आरबल = आयुर्बल
(८२३) नइरति = नैऋत्य दिशा; वायव = वायुकोण;
(८२७) मैमंत = मदमस्त; नालि = बंदूकें; सिंगणी (फा. सिंगर) = छोटा नेजा; फुनिंद = फणीन्द्र, शेषनाग;
(८३१) होड़ां = समता, दराबरी;
(८३३) कासिब = सूर्य भगवान्; घेठ देह = संकोच रहित होकर घृष्टता पूर्वक

सप्तम ग्रध्याय

(८३७) छिवाये = स्पर्श किये, छुए;
(८३८) करवर = मरोड़; किरमर तलवार सावगण = युद्धार्थ (?) ससंम = सक्षम;
(८४०) दौराय = चारों ओर के क्षेत्र या घेरे में,
(८४३) जंजीरा (अ. जंजीर:) = शृंखला, कपाट, टापू, द्वीप;
(८४६) डींभूलंक = ततैया या भौंरी जैसी कमर;
(८४७) उनिहारी = शक्ल;
(८४९) मटवा = नर्तक

(८५०) दुवाल=दीवार;
(८५४) कौरी कांवली (चीलभेद), ग्रिद=गिद्ध;
कांई (काही)=सांकल, रस्सी
(८५७) चौंपि लगाई=शीघ्रता की। महोला=हाजरी;
(८६१) गम पड़बो=पता लगना, तसदीह=(अ. तस्दीज)=कष्ट, तकलीफ;
(८६७) हड़बड़=हलबल, सोफती=सन्त्राण, शान्ति,
(८६९) वेगा=शीघ्र,
(८७०) रोळा=तमाशा; तूंगा=भाग, सैन्य टुकड़ी
(८७२) उकटालो=पलायन; जरांजरी=मार;
(८७३) बांहण=वाहन;
(८७३) वाली=जलाया।
(८७४) अवेरिकै=संभाल कर; पचारचो=विरुदाया;
(८७६) पतिझडंग=पतझड़; फरास=डेरे
शामियाने, खेमा, ल्हस=कटी फसल,
(८७८) हवाले कीन्हो=सिपुर्द किया।
(८८०) सांयत=मुहूर्त; समय
(८८६) गजदेस=उडीसा या गजनी
(८८९) हरोळ=अग्रिम सैन्य टुकड़ी;
(८९०) चंडोल=चंद्रावल; सेना का पिछला भाग; करोल=करावुल, सेना की वह टुकड़ी जो फौज के आगे चलती है और शत्रु सेना की खबर देती है।
(८९१) गूंट पर्वत=मूल स्थान का पर्वत, या गुंडगिरि, सिंध (पाकिस्तान) में एक जैन-तीर्थ, सुत्र-नाल=ऊंट पर रख कर चलाई जाने वाली छोटी तोप; जंबूर=छोटी तोप; सींगणी=एक प्रकार के सींग से बनी कमान (धनुष) जांगडै हूकलै=वीर गीत जो या ढोली युद्ध क्षेत्र में
गाकर योद्धाओं को प्रोत्साहित करते थे।
(८९२) खंड्यो=प्रयाण किया; टांडो=बणजारों का डेरा
(८९५) मफरंद=रक्षक; दगड़ दह=पत्थर फेंकने वाले,
या युद्ध में ढोल वजाने वाले;
(८९७) बरकमदाज=सदा तैयार रहने वाले सैनिक;
तोड़ेदार बंदूक रखने वाले;

(८९८) नीसांण = नगाड़े;
(९०३) मयंक = चन्द्रमा;
(९०६) अरस (अ. अर्श) = आसमान;
(९०८) धीर = धीर, पुंडीर, पंडर = यवन,
(९११) अजाथर = भार, बोझ,
(९२२) रतियाब = विश्राम; सिहाव = सहयोग ?
(९२३) जरायती (अ. जिराअती) = खेती की उपज;
(९२४) मसलति = सलाह, बाढि = बढकर;
(९२५) आंन जनम = अन्य जनम, पूर्व जन्म; अवधरे = धारण किये;
(९२६) रसति = रसद,
(९३०) कारखाने = विभाग, शिल्प शालाएं;
(९३२) छंछाल = मदमस्त,
(९३४) चौंरी = चंबर; पातर = पात्र, आसौ = तपसियों का एक काष्ठ उपकरण, सोने चांदी से मंढा दंड;
(९३५) अतीतणी = संन्यासिन,
(९३६) सिपत (अ. सिफत) = प्रशंसा, प्रभाव;
(९३७) हरषी = हर्षित हुई, मनुहारि = आवभगति,
(९४१) गेली = मार्ग;
(९४४) लाधा = प्राप्त करेंगे; कै = अथवा,
(९४५) बरियां = बार, दफा, कांकण = कंगन
(९४७) सुरति = स्मृति,
(९४९) आसंगि = साहस से, आसक्ति से, दुबध्या = दुविधा,
(९५०) सिन्या = सन्यासी ?
(९५१) आरज्या = आर्या, जैन-साध्वी,
गूजरीवालो जोवन = गोगियों का यौवन,
(९५२) अंढि = भाग्यलेख, कमाई
(९५४) ढिढाई = दृढ,
(९५८) पाथर = पत्थर, निष्ठुर,
(९५९) सनमंध = संबंध, रिश्ता,
(९६१) बहणि = बहिन,

(९६२) जींन=जीण, घोड़े की काठी; औसरि=अवसर,

(९६४) बांणिक=स्वरूप; जितावौ=बता दिया है,

(९६७) खोसि'र=छीन कर;

(९६८) ग्रिह=गृहस्थी,

(९६९) डिठाई=दिखाया, मार्गदर्शन किया, विगोवो=बिगाड़; रव्वारी (फा. रव्वारी)=अनादर, दुर्दशा, बिगड़ायल=भ्रष्ट, चरित्रहीन, बिगड़ी हुई।

(९७१) पंणि=प्रण;

(९७२) अजगैब=पीछे,

(९७४) काळो=बुरा, पागल,

(९७५) बायो=बाई;

(९७६) मड़हटचा=मरहण,

(९८३) मढचो=चर्म मंढा, मादल=एक चर्मनिबद्ध वादय (मार्दल)

(९८६) पटंतरि=बदले स्थान पर,

(९८८) दारचां=स्त्रियां, बाबि (फा. बाब)=योग्य संबंध,

(९८९) रांडा=छिनाल स्त्रियां, वजर=वज्र,

(९९१) पाहण=पाषाण,

(९९३) धीया=पुत्री,

(९९४) बैसांदर=आग; काळा=काल, यमराज, चिख=क्रोध,

(९९६) धाठी=मुखबंध, लोंच=लुंचन, बाल उखाड़ना, धौंकाई=पिटवाई, रामति=तमाशा, खेल; ठाढी=खड़ी हुई;

(९९७) चौमेखी करि=चारों ओर से खूंटियों से बांधकर, देई ढुलाई=गिरा दिया, जरबा=जूते, जमधड़ि=गदा, भांडि कीन्हीं=बुराई, निंदा अपमान किया,

(१०००) गोढि=पास,

(१००३) रसनां=तारीफ; उसना=वसन, वस्त्र

अष्टम अध्याय

(१००५) तणाव = डेरे तानने की रस्सियां, सराइचा (फा. सराच) = बड़ा खेमा, जेवड़ा (संज्या) = रस्सियां, भारकस
(फा. बारकश) = लद्दू जानवर, पैसार = प्रवेश,
(१००८) कुलि = कुल, सब, पर्वत शिखर, गच = चूना, चूने की टीप,
गंवार = अज्जड़, रंघड़ = योद्धा, थोरी = भील = हिन्दुओं की अरण्यक जातियां
कुलि (अ. कुल्लः) = पहाड़ी की चोटीं,
(१००९) अहदी = सिपाही, जिन्हें विशेष अवसर पर काम सौंपा जाना था, बाकी समय वे निठल्ले पड़े रहते थे।
(१०१०) रेजी (फा. रेज) = हलचल,
(१०१३) सकस (अ. शख्स) = व्यक्ति, खैरि = बख्शिश, दान, मोमिन = मुसलमान जुलाहा, धर्मनिष्ठ, ईमान रखने वाला, विश्वासी,
उलि (अ. औलिया) = पहुंचा हुआ संत,
गुदरि जावै = यात्रा पर निकल जाता है।
(१०१४) करामति = चमत्कार,
(१०१५) ढांकणा = ढक्कन,
(१०१६) अमानति (अ. अमानत) = धरोहर
(१०१८) मुचलका (तु. मुचल्का) = प्रतिज्ञा-पत्र,
(१०१९) तकसींरा (फा. तक्सीर) = दोष, बढ़ोतरीं,
(१०२०) कबूली = स्वीकार की, अधौण = आधामन,
(१०२१) वदना = डोरा, सिंण = शण,
(१०२२) निमां = नियम पूर्वक, स्याम = शाम,
(१०२४) कमीण = कामीण,
(१०२५) जमीत = जमियत, गनीम = शत्रु,
(१०२६) मीनति = मिन्नत, खुशामद,
(१०२८) खपाया = मरवाये,
(१०३१) बिरख = वृक्ष,
(१०३२) चिराग = मशाल, दीपक-प्रकाश,
(१०३३) चोबदार = नकीब, द्वारपाल, पाले = पैदल, प्यादे,

अलेकी भरी=दृष्टिपात किया,
(१०३५) किलीच=मुसलमान=उकताये,
(१०३६) अखताई (अ. अकद)=हंकलाते हुए,
(१०४२) मुरबी (अ. मुरब्बी)=सहायक,
(१०४४) किलीका=हर्ष-ध्वनि
(१०४६) तसबी=माला,
(१०५०) झेली=सहन की, ग्रहण की
(१०५२) किरपान=कृपाण, तलवार, सहनाइ (फा. शहनाय)=एक फूंक वाद्य, सुषिर वाद्य नफीरी=(अ. नफीरी)=अलगोजा या तुरही भेद, सहदान (फा. शादियाना)=मांगलिक वाद्य, करनाळ=एक वाद्य विशेष, एक छोटी तोप, देग (फा. तेग)=तलवार, अथवा लोहा
जंबूर=छोटी तोप, सईद=शहीद, मरना, बेढि=युद्ध करके,
(१०५४) कूकूं चंड=मांगलिक गीत, छरकै=छिड़के, कमल=सिर,
(१०५६) नखधार=नक्षत्र हार, अजमावा=आजमाते थे, परीक्षा करते थे।
सफ (अ. सैफ)=तलवार, पचारि=पुकार कर,
(१०६१) नाल्यां=बंदूकें,
(१८६१) छोह=आनंद, खांप=शाखा,
अक=या कि, अथवा कि, राजियो=सुशोभित हुआ।
(१०६३) बुरजि=बुर्ज, घाई=आघात, चोट
(१०६६) कड़ाचूंरि=सन्नद्ध,
(१०७१) मभयाचल=पर्वतों के मध्य में, रछिक=रक्षक;
(१०७२) छावौ=चाह, इच्छा;

नवम अध्याय

(१०८५) तौक (अ. तौक)=कैदियों के गले में पहिनाया जाने वाला लोहे का कड़ा; वेड़ी=कैदियों के पाँवो में डाले जाने वाले लोह लंगरवा (कड़े);
(१०८४)=आवध= आवध, आयुध, शस्त्र; दासति (फा०दाश्त—)=देख रेख; कसीस=कर्षण, खिंचाव;
(१०९०) बळींडो=बल्ली,

(१०९९) आवठं=मन मसोसता था; तरन=तरुणी; तरकर=झूमरें;
गलगच करि=बुर्ज से, कृत्रिम टीले से; हिनंग=मार डाला;
(११०१) अलंग=ऊंचाई से नीचे गिरना,
(११०२) बाणावली=धनुर्विद्या में पारंगत धनुर्धर;
(११०३) सागिरद=शागिर्द, चेला, शिष्य;
(११०६) अपस=अपयश; रिछपाल=रक्षक,
(११०८) कैरी=किसको; बाई=बाही, चलाई; सांधी=बांध कर;
(११०९) धरनेह=पृथ्वीपर,
(१११२) औठै=अन्य स्थान पर;
(१११४) गुदारी=गुजारी, बिताई;
(१११४) तोबरा=चमड़े का थैला; घोड़ों को दाना खिलाने का थैला;
(१११५) चेजागर=कारीगर;
(१११८) पड़ां=भले ही;
(११२२) मोरी=नहर; नाला;
(११२३) तांतल्यों=तंतु;
(११२८) खिणायर=खुदवाकर; पेखी=देखीं;
तवौ=लोहे की मोटी चादर;
(११२८) बाकुला (अ. बाकिल्ल)=मटर, उबले हुए उडद, धकाया=दूर,
किया, धक्का दिया, सिलता (सरिता)=नदी,
(११३२) इकसमचैं=एक साथ, अचानक, धकावो=हटावो, भगावो,
(११३७) काल्हि=कल ही, दिलगीर=दुःखी रंजीदा,
चेजा=चिनाई का काम,
(११३९) कावक=कबूतरों का दड़बा,
(११४६) घुव=ध्रुवतारा, मुचैं=छोड़दे, भारत्थ=महाभारत का युद्ध,
(११४७) अड़=हठ, जिद, बुन्यादि (फा. बुन्याद)=महत्त्व,
(११४७) आळझंखाळूं=मायाजाल में फँसू, विचार करूं,
(११५२) आखतो=उतावला, व्यग्र,
(११५३) खोसि करि=छीनकर ।

दशम अध्याय

(११५५) धिग पड़ौ = धिक्कार हैं; चाम = चर्म, चमड़ा,
(११६१) मुमारख = मुबारक हो,
(११६७) नवसइंद (फा. नवीसिंद:) = कर्मचारी, लेखक,
(११६८) अधौडी = पशु का सूखा चमड़ा, आधा भाग,
(११७०) पठो = आंगन, पेटा; आंयणे = आंगन में
(११७२) अंबारा = भंडार,
(११७४) कोरड़ा = कोड़ा, चाबुक,
(११७५) छेह = अंत,
(११७८) मांहिला = मन में; दुजायगी = मनभेद; मनैं = इन्कार,
(११७९) थांब-धैर्य,
(११८६) बाहड़ = (वाग्भट) = व्यक्तिनाम, हमीर का एक सामंत, भोजराज = हमीर का एक सामंत; वीरमदे = हमीर का एक सामंत, जाजा = महासामंत; हम्मीर का जामाता, देवलदे का पति जो बड़गूजर जाति का था।
(११९०) बिराणो = दूसरों का,
(११९३) कुलखंपन = कुल का सर्वनाश करने वाला; बाहुडूं = युद्ध करूं,
(११९४) सिंगन (फा. सिंगर) = छोटा नेज़ा, भाला; कटारो = कटार,
(११९८) दाय = पसंद; किधौ = कर्मफल, किये काम का नतीजा,
(१२०१) सकोतरी = दुर्गा का एक नाम, पिशाचिनी, चुड़ैल,
(१२०३) भेदी = भेद देने वाला, गुप्तचर
(१२०५) कोठां = किस जगह,
(१२०६) सांकड़ौ = संकट,
(१२१०) वज्जर केलि = फौलादी घोड़ा, विशेष,
(१२१३) डोड्यों = राजद्वार, द्वार पर,
(१२१६) मेघाडंबर = छत्र विशेष; टंटर = धड़, लटका हुआ; जर = सोना, कंमर = कटि, (?)
(१२२८) भाय = भाव; गलायण = ग्लानि,
(१२३१) माणस = परिवार की महिलाएँ,

(१२३४) नारदौ=प्रणाल, नाली; श्रोवण=शोणित, रक्त,

(१२३६) नांनत=लानत,

(१२३८) खाड्=खड्डा, गर्त; खिणै=खोदे।

(१२४१) जौहर=युद्ध में पराजय की स्थिति देककर राजपूत राजाओं की महिलाओं द्वारा सामूहिक अग्निस्नान या मृत्यु का आलिंगन।

अग्यारी=यज्ञागार, यज्ञ भूमि,

(१२४२) बवेको=विवेकी, ज्ञानी, विड़रूप=विद्रूप, विकटरूप,

बेरा'रा=स्त्रीका; सारा=शाला; घर गोरळ=गोरा भैरव, गौरी पार्वती का पुरुषरूप

(१२५५) विसन=व्यसन,

(१२५६) जळहरी=शिवलिंग के परित=बनाया गया जलप्रवाह का मार्ग,

(१२५७) छ्लि=युद्ध; गरहवै=अभिनंदन,

(१२५८) संभरिवार=सांभरिया चौहान; दरेग=अफसोस, पश्चात्ताप,

जलफूल=कमल,

(१२६०) कचाई=निर्बलता, कमजोरी; पंणि=प्रण, प्रतिज्ञा,

(१२६१) मता=मालमत्ता, धनसम्पत्ति,

(१२६४) गफलाई=गफलत, अदुल (अ-अदूले हुक्म)=अवज्ञा,

(१२६६) बिसटाला=दूत; बोसरे=ओसरा, बारी,

(१२६७) फेफर=फेफड़ा, फांके=फेंके, क्षेपण किया, टुकड़े; सिंभु=महादेव, खिल्हाण=खलिहान, घाव=प्रहार, सिराह=प्रशंसा,

(१२७४) मंटी=मांटी, मर्द, बहादुर; खेद=खदेड़ कर,

खूंद डारया=कुचल डाला।

(१२७५) डुंड=धड़,

(१२७७) थचका थचकं=एक दूसरे पर गिरने की ध्वनि,

(१२७९) खपुवो=बघनखा; मुगलकाल की एक छोटी तलवार,

(१२८३) बजरंगी=वज्रांगी, दृढ अंगोवाला, रोळति=चलाता हुआ,

सांग=भाला; बाह करी=प्रहार किया;

(१२८९) डोट=दड़ो,

(१२९०) पौंचा=पहुंचा, हाथ का अग्र भाग, सवाणीय=सहित;

(१२९१) ढाया=गिराया, मारा; सार बजावो=तलवार से लड़ा;

(१२९५) धमचक=युद्ध,
(१२९७) रहती बहसी=हंसती खेलती,
(१३०१) ध्रमद्वार=धर्मद्वार,
(१३०६) दड़ी=कंदुक, गेंद,
(१३१७) बालिसुता=बालीपुत्र अंगद,
(१३१८) कुटका=टुकड़े,
(१३२४) मेख=खूंटी; कुछावो=कछवाहा,
(१३२५) खड़ियो=चला,
(१३२७) सांतरा=तीव्र गति से, सत्वर,
(१३३५) घनसार=सघन, शस्त्र प्रहार; युद्ध बकारि=दहाड़ता हुआ,
(१३४९) बकाल=बनिया,
(१३४६) कंदल=युद्ध
(१३५०) जलेबदार=रक्षक, सैनिक,
राजा का निकटवर्ती सेवक; ठोसो=धक्का
(१३५१) लोथां=शव; लोथक पोथ्यां=गुत्थम गुत्था; परस्पर लिपटे हुए,
(१३५६) ख्यास=कयास, अनुमान, निमंत=निमित्त, कारण
(१३६३) दरेग (फा. दिरेग)=अफसोस,
(१३६४) मिहनती=मजदूर, श्रमिक; अजाब=पाप,
(१३६५) घाले=नष्ट किये,
(१३६९) ह्यांव=उमाव, उमंग, उत्सुकता;
(१३७०) भवंगिम=युद्ध (?) संसार चक्र; भडाला=योद्धा; रोले=मोर;
(१३७३) सोय=शोध,

परिशिष्ट—२

खेमकृत हमीरायण और फारसी अनुवाद

'तारीख-ए-किला रणथम्भोर' में अन्तर—

पूर्व में सूचित किया गया है कि खेम भाट द्वारा विरचित हमीरायण का हीरानन्द पुत्र हरजसराय कायस्थ ने विक्रमी सं. १८१५ के अन्त में अथवा इसके कुछ काल बाद ही फारसी भाषा में अनुवाद किया था। इसकी राजस्थान ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीटयूट, अरेबिक परशियन सेन्टर, टोंक में ग्रथांक १६ पर प्राप्त प्रति के आधार पर डॉ आर. के. सक्सेना, अध्यक्ष इतिहास विभाग, उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर ने हिन्दी भाषा में अनुवाद कर सन् १९८२ में संघी प्रकाशन, उदयपुर से प्रकाशन करवाया था। यह खेम की रचना का शब्दश: अनुवाद है। फारसी अनुवादक ने ही काव्य में से कतिपय प्रसंगों को आवश्यक न समझकर उनका अनुवाद शायद इसलिये छोड़ दिया कि, उनके अभाव में भी ऐतिहासिक रूप में कहीं कहीं कोई अन्तर नहीं पड़ता था। अनुवाद अच्छा होते हुए भी फारसी लिपि में राजस्थानी उच्चारण के अनुरूप आवश्यक चिह्न न होने के कारण बहुत सी अशुद्धियाँ रह गयी हैं। डॉ. सक्सेना के हिन्दी अनुवाद में भी वे सभी अशुद्धियाँ आ गयी हैं। तारीखे किला रणथम्भोर का हाल ही में उर्दू अनुवाद और प्रकाशित हुआ है। अनुवादक हैं अमजद अलीखान ट्रान्सलेटर फारसी), अरेबिक परसियन इन्सीट्यूट, टोंक।

अनुवाद में कई पात्रों के नाम बदल गये हैं और यही स्थिति नगरों और गाँवों के नामों की भी है। सन् संवतों में भी अशुद्धियाँ आ गई हैं या परिवर्तन कर लिया गया है। कई ऐसे स्थल भी हैं जिनके सन्दर्भ समझ में नहीं आने से भी अर्थ में परिवर्तन हुआ है। —

मूल हमीरायण के प्रथम अध्याय के प्रारम्भ में दोहा सं. १-७, १३, १४ और कवित्त सं. ११-१२ में कवि ने काव्य की सफल रचना के लिये सरस्वती, चतुर्भुज, विष्णु, गौरी-पार्वती के पुत्र गणेश, हरसिद्धि माता, ब्रह्मा की शक्ति माया की स्तुति की है।

अनुवादक नें मनुष्य को बुद्धि और विवेक प्रदान कर सृष्टि का सर्वोच्च प्राणधारी जीव बनाने वाले ईश्वर की अनुकम्पा प्राप्त करने के लिये उनके स्मरण से ग्रन्थलेखन का प्रारम्भ किया है। ऐसा उसने फारसी भाषा में विरचित मुस्लिम लेखकों की परम्परा के अनुसार किया है।

मूल काव्य में हमीर के पूर्व पुरुषों की परम्परा में चौहान मान सर्वप्रथम पुरुष या आदि पुरुष मान कर, उसके पुत्र नन्दु, नन्द के पुत्र अनन्द, अनन्द के पुत्र बच्छ और बच्छ के पुत्र श्रीवच्छ का क्रम दिया है।

अनुवाद में भाषा की अस्पष्टता से वंशपरम्परा का क्रम भंग हो गया है। अनुवादक ने हमीर के पूर्वजों में एक चौहान मानसिंह को आदि पुरुष की मान्यता देकर उसके पुत्रों में नन्दु का नाम दिया है। उसके नन्द नाम के कारण उसी का पर्याय नाम आनन्द पड़ना माना है। उसके आगे के वाक्य में भी यही गड़बड है। वह लिखता है। "ओर आनन्द से बछ और बछ से श्रीबछ और श्री बछ से राजा बछदेव का नाम पड़ा।" प्रतीत होता है, यहाँ अनुवादक का आशय मूल काव्य की वंश परम्परा के अनुसार ही होगा, पर अनुवादक करते समय वाक्य विन्यास ठीक नहीं बन पाने के कारण पाठक को नन्द और आनन्द में तथा बच्छ और श्रीबच्छ में एकता का भ्रम हो जाता है। अनुवाद ने तो वासुदेव को भी बच्छ बना दिया है।

मूल काव्य में वासुदेव को आशापुरा देवी की कृपा से अपार धन की प्राप्ति हुई और उसके द्वारा श्रीथल राज्य की स्थापना का उल्लेख है। देवी की कृपा से उसने सर्वप्रथम सांभर में नमक बनाया।

अनुवाद में सांभर का स्थान क्षीरसागर ने ले लिया है। क्षीरसागर के स्थान पर क्षार सागर पाठ फिर भी उपयुक्त होगा इसमें वासुदेव द्वारा नमक बनाने का प्रसग छोड़ दिया गया है। इसी प्रकार ६०६ वि. में राज्यारोहण का उल्लेख तो कर दिया है, पर मूल काव्य में दी गई तिथि फाल्गुन वदी १४ और राजा की रानी मालदे का भी नाम छोड़ दिया हे। रानियों के नाम उसने प्रायः सर्वत्र छोड़ दिया है। मूल काव्य में राजाओं के राज्यारोहण के वर्ष के सात मास और तिथियां दी गई हैं, पर अनुवादक ने सर्वत्र उसकी उपेक्षा की है। वासुदेव ने सं. ६३१ तक पच्चीस वर्ष राज्य किया।

सावरतसिंह ने पाँच वर्ष राज्य किया था—अनुवाद में चार वर्ष दिया गया है। अजैदेव सं. ६६९ में सिंहासनारूढ हुआ। अनुवाद में उसे ६६७ वि. बताया गया है। अजैदेव ने अठाइस वर्ष नौ मास तक किया था, तदनुसार उसका पुत्र विहगदेव वि. सं. ६९८ की सावण विद पंचमी को सिंहासनारूढ

हुआ। अनुवाद में विहगदेव के स्थान पर बोधराज नाम देकर उसका राज्याकाल सं ६७८ वि. दिया गया है। यह मुद्रण की अशुद्धि हो सकती है।

मूल काव्य के अनुसार विहगदेव का पुत्र विजयदेव सं. ७१६ की कार्तिक सुदी अष्टमी को गद्दी पर बैठा। अनुवाद में यह वर्ष ७१८ लिख दिया है। उसके अधीन दुर्गों में श्रीथल, नरहर, अजमेर, गायण और भरडौज थे। अनुवादक ने श्रीथल और अजमेर को यथावत् रखते हुए नरहर, गायण और भरडौज के स्थान पर थर, कामां और बहार नाम दिये हैं जिनका मूल में कहीं कोई उल्लेख तक नहीं है। ये परिवर्तन भी फारसी लिपि के पठन में कठिनाई के कारण हुआ है।

विजयदेव के पौत्र गोविन्दराज की मृत्यु धायबड़ारण के साथ उसके प्रेमप्रसंग के कारण हुई, पर अनुवाद में उसकी प्रियतमा के हाथों ही उसके वध की सूचना दी गई है। धाय बडारण का उल्लेख नहीं किया।

गोविन्दराज के पुत्र दुर्लभराज का राज्यकाल मूल काव्य में ३१ वर्ष सात मास के स्थान पर अनुवाद में इक्कीस वर्ष सात मास लिखा गया है।

इसी क्रम में दुर्लभदेव के पौत्र और बच्छराज के पुत्र हरसहदेव के हाथियों की संख्या १० को बदलकर ८ किया गया है।

हरसहदेव के पुत्र दुजनधन (दुर्योधनदेव) का भी नाम बदलकर अनुवादक ने दूजखदेव लिखा है। उसके दुर्गों में अनुवाद में बौंली को बलि, कोटसंडार को कोटखंदार, ऊटगर को ओतकजरायत और भटनेर को तीर्थंकर बना डाला है। उसके द्वारा पराज़ित शाहनुरुद्दीन के नाम को भी बदलकर नसिरूद्दीन लिखा गया है। दुजनधनदेव के विरूद्ध सुरतान गहन का कोई उल्लेख तक नहीं किया गया है। उसका राज्यकाल मूल में ही पाँच वर्ष सात मास लिखा गया है। यह विजयपालदेव के राज्यारोहण काल सं. ८७८ को देखते हुए पचास वर्ष होना चाहिए।

विजयपालदेव की राज्यावधि सतरह वर्ष ७ मास दी गई है जबकि उसके पुत्र बापलदेव का राज्यारम्भ सं. ८२५ आसाढ बदी अमावस्या दिया गया है। यह संभव नहीं है। वापलदेव का राज्यकाल २६ वर्ष ग्यारह मास देते हुए उसके पुत्र दुलंभदेव का राज्यारोहण सं. ९११ वि. बताया गया है। ऐसी स्थिति में वापलदेव (अनुवाद में चापलदेव) का राज्यारोहण काल २६ वर्ष पूर्व सं. ८८५ स्थिर होता है और विजयपालदेव का राज्य काल सं. ८७७ से सं ८८५ अर्थात् सात वर्ष निश्चित होता है। ऐसी स्थिति में विजयपालदेव के राज्यकाल में 'स राह वर्ष' के स्थान पर 'सातह वर्ष पाठ होना चाहिए।

अनुवादक ने सराह को सत्रह मानकर १७ वर्ष ९ महीने राज्यकाल माना है। अनुवादक ने भी इन अशुद्धियों को मूल के अनुसार यथावत् रखा है। उसने सं. ८२५ को शुद्ध कर सं. ८८५ अवश्य लिखा है। अनुवादक ने देवनागरी के वर्ण 'व' और 'च' में समानता के कारण वापलदेव को चापलदेव पढा है।

वापलदेव को गुंटकादेवी की कृपा से ६४ मायावी घोड़ों की प्राप्ति का उल्लेख है। अनुवाद में गुंटकादेवी का नाम न देकर देवी ईश्वरीय शक्ति के द्वारा इन अश्वों की प्राप्ति का उल्लेख किया है। मूल काव्य में वापलदेव के द्वारा घाट पर आक्रमण कर ६४ प्रधानों को बंदी बनाने का उल्लेख है—अनुवाद में यह सं. ८४ बताई गई है। उसने सांभर को बांध कर कोट बनाने के उल्लेख के स्थान पर दुर्ग बनाना कहा हैं। कोट का अर्थ दुर्ग से लिया है।

वापलदेव के पुत्र दुर्लभदेव ने चित्तौड़ पार करके बरडि में कुडीछराव को परास्त करने के उल्लेख के स्थान पर चित्तौड़ पर आक्रमण करके उसका वहीं पर जल कर युद्ध क्षेत्र में घायल होकर मर जाना बताया है।

उसके पुत्र गदलेव को अनुवादक ने कोदल लिखा है। यह अशुद्धि काफ और गाफ के लिये एक ही काफ का चिह्न होने और 'दाल' को 'वाव' पढ लेने के कारण हुई हैं। इसीप्रकार गदलेव के पुत्र भुवपाल को भी बदल कर बुधपाल कर दिया है। अनुवाद में सोलंकीर ाजा से घायल होकर मरने उल्लेख है पर राजा के राजदेव नाम का उल्लेख नहीं किया है।

बुधपाल के पुत्र विजहड़ देव को तेजहरदेव लिखा गया है। मूल काव्य में उसका सिंहासनारोहण सं. ९६९ में होना बताया गया है—अनुवाद में इसे ९६७ वि. लिखा गया है।

विजहड़देव के पुत्र के पास ९१००० घोड़े थे और ६० हाथी—अनुवादक ने मात्र ७००० घोड़े और छः हाथी तक इस संख्या को सीमित कर दिया है। राजदेव का राज्यारोहण काल मूल काव्य में फागुण वदि ९८४ बताया गया है। अनुवाद में यह अंश छोड़ दिया गया है। इसी प्रकार उसके अधीन दुर्गों की संख्या की भी उपेक्षा कर दी गई है।

राजदेव के पुत्र वीसलदेव द्वारा गुजरात के शासक करणगुजारा (गूर्जर) को बंदी बनाया गया था। अनुवादक ने गुजारा के स्थान पर 'कूजरह' नाम दिया गया है। फारसी में गॉफ के स्थान पर 'काफ' का प्रयोग ही इस गड़बड़ का भी कारण है। काव्य में वीसलदेव के पुत्र सोमदेव का राजस्थान (राजधानी) खण्डार बताया गया है। अनुवादक ने उसके द्वारा खण्डार प्रदेश बसाना कहा है। तारीख में उसके दुर्गों की संख्या नहीं दी हैं। मूल में उसकी सेना के इक्कीस लाख एक हजार घोड़ों की संख्या में भी परिवर्तन कर उसे

एक लाख कर दिया गया है। उसके राज्यारोहणकाल का भी उल्लेख नहीं किया गया है।

उसके पुत्र राजदेव के दुर्गों का अनुवादक ने उल्लेख नहीं किया है। उसने मूल काव्य में आये घग्घर नदी के नाम को घाघरती पढ़ा है। हिन्दी अनुवादक ने पादटिपण्ण में घाघरती की पहचान तरावती गांव के प्राचीर के निकट बहने वाली नई नाम की नदी से की है। वास्तव में घग्घर, पंजाब और राजस्थान की एक प्रसिद्ध नदी है। राजदेव की मृत्यु युद्ध में घायल होकर घर लौट आने और चिकित्सा के बाद हुई थी। अनुवादक उसका युद्ध में मर जाना लिखता है।

राजदेव के पुत्र अनलदेव को अनुवादक अनिलदेव लिखता है।

राजदेव के पुत्र मालंगदेव को तारीख में मालंकदेव लिखा है। इसका कारण भी फारसी लिपि का गाफ के लिये प्रयुक्त कॉफ चिह्न ही है।

राजदेव के पौत्र और जगदेव के पुत्र वीसलदेव ने गोपाल नदी पारकर तुर्कों से युद्ध करते हुए मृत्यु प्राप्त की। तारीख में नदी के नाम को गूयपाल बना दिया गया है। इसी प्रकार उसके उन्नीस वर्ष पांच मास के राज्यकाल को भी तारीख में १७ वर्ष ५ मास कर दिया गया है। यह मुद्रण की अशुद्धि प्रतीत होती है। हमीरायण में आये जगदेव के पौत्र और वीसलदेव के पुत्र अमरगांगेय को तारीख ने कनकदेव कर दिया है। यह गांगेय (देव) का फारसी लिपि में गाफ के स्थान पर काफ के प्रयोग के कारण हुआ है। मूल काव्य में उसका साहावदीन से युद्ध हुआ कहा गया है। तारीख में शिहाबुद्दीन कर दिया गया है। अमरगाँगेय का राज्य काल ३६ वर्ष ६ मास रहा—तारीख में तीन वर्ष ६ मास छपा है।

अमरगाँगेय के पुत्र गजदेव को जगदेव लिखा गया है। उसके सिंहासन रोहण काल सं. ११९३ को भी सं. ११७३ लिख दिया गया। मूल काव्य में आये पाठ 'ज साव पति हेक' के स्थान पर शुद्ध पाठ 'गज साठ पति हेक' पाठ होना चाहिये जिसका अर्थ ४० हाथी किया है। यहां भी घग्घर नदी को घाघरती पढा गया है। और बादशाह शम्सदीन को शिहाबुद्दीन लिखा गया है।

गजदेव के पौत्र देवराज के पुत्र हरसहदेव सं. १२३९ में सिंहासनरूढ हुआ। अनुवाद में १२४० वि. दिया गया है। उसने अपनी रानियों को मार कर युद्ध किया और युद्ध में मारा गया। तारीख में उसके द्वारा आत्मघात कर मरना कहा है।

गजदेव के पास पैंतीस हजार घोड़े और सात हाथी थे—तारीख में घोड़ों की संख्या ७७००० अश्वारोही कहे हैं। उसके अधिकार में अड़तीस दुर्ग थे जिनका तारीख में उल्लेख नहीं है।

गजदेव के पुत्र बाल्हंदेव को तारीख में मालहनदेव लिखा गया है। उसके घोड़ों की २५००० की संख्या भी ५००० कर दी गई है।

वीरनारायण ने वला में (आडावला) सिंहासन संभाला। तारीख में इसको आदिवल लिखा है। उसके ३०,००० घोड़ों की संख्या भी ३६ हजार बना दी गई है।

वीरनारायण के उपरान्त बाहड़देव सिंहासनारूढ हुआ, जो वीरनारायण के भाई राजदेव का पुत्र था। तारीख में बाहड़देव को बाहरदेव लिखा है और उसके पिता का नाम नहीं दिया है। उसके दुर्गों में अनुवादक ने एक नाम 'सरथरू' भी दिया है, जो मूलपाठ को समझ नहीं पाने के कारण हुआ है। मूलपाठ है 'सारीधर कहि गागरोणि' जिसका अर्थ है 'गागरोन की सारो धरती या राज्य। इसके अतिरिक्त उसने चाचरणि को भी नये रूप में जीता। तारीख में सातों दुर्गों को छोड़ कर आदिवल में निवास की बात कही गई है। जब कि मूल काव्य में पौलि को छोड़ कर आडेवलै में वसना बसाया गया है। उसने दिल्ली की फौजों को हराकर सांभर तक की भूमि पर अधिकार कर लिया। तारीख में सांभर तक को जीतना लिखा है। पर दिल्ली की फौजों को जीतने का अंश निकाल दिया। (मूल काव्य के अनुसार उसका राज्यकाल २१ वर्ष एक माह बताया गया है, पर वास्तव में यह इकतीस वर्ष एक माह होना चाहिये।)

हमीरायण में सं. १३१३ वि. में जैतसिंह को राज्यप्राप्ति और सं. १३१४ में जैतपुर बसाकर राज्यप्राप्ति का उल्लेख है। जबकि तारीख (प्रथम अध्याय, द्वितीय खंड) में उसके द्वारा सं. १३०४ में आदिवल में राज्य स्थापित करना लिखा है। यह अंतर बाहड़देव के राज्यकाल की अवधि इक्कीस वर्ष एक माह की ही अवधि मूल काव्य में लिखी होने के कारण हो सकती है, पर मूल काव्य में जैतसिंह की राज्यप्राप्ति की दी गई तिथि सं. १३१३ की ओर शायद ध्यान नहीं दिया गया है। हमीरायण में उसके पास १५००० घोड़ों की संख्या बताई गई है, अनुवाद में वह मात्र १५०० ही रह गयी है।

काव्य में जैतसिंह के सहयोगी दस सहरिया नायकों का उल्लेख है। तारीख में दस सहरियों को दस सहस्र समझ लिया गया है और साथही सहरियों को महर समझ कर साथी अर्थ किया गया है। सर्वत्र यही स्थिति है।

शायद हिन्दी अनुवादक का इस प्रदेश में आज भी रह रहे आदिवासी सहरियों की ओर ध्यान नहीं गया।

जैतसिंह द्वारा बसाये गये जैतपुर (अनु. जीतपुर) की स्थिति अनुवादक ने झायन के समीप बताई है, जबकि मूल काव्य में झायन का उल्लेख नहीं है। मूलकाव्य में सं. १३१४ में जैतपुर में राज्यस्थापन की तिथि को अनुवादक ने १४ जातियों के लोग समझ लिया है।

अनुवादक ने मूलकाव्य में आये रौंणा और भौंणा को ईवन और भवन लिखा है। इसमें इन महरियों के द्वारा दुर्ग पर आक्रमण हेतु प्रस्थान करना लिखा है, जिसका मूल काव्य में संकेत तक नहीं है। ईवन के द्वारा १५०० अनुचरों के सहित पद्मगढ दुर्ग की ओर अग्रसर होना भी मूल हमीरायण में नहीं है।

मूलकाव्य में रौंणा और भौंणा का घूमते हुए जाना और सोते हुए हिरण को देखना लिखा है। तारीख में सोते हुए को रोते हुए हिरण छापा गया है—यह शायद मुद्रण की अशुद्धि है। इसीप्रकार रुद्र की घाटी को ओदर की घाटी लिखा गया है। सतपोल का मूल काव्य में कोई उल्लेख नहीं है।

रौंणा, भौंणा को पारसपत्थर की प्राप्ति के बाद उनमें हुए संवाद को भी संक्षिप्त कर दिया गया है। राजा को पद्मताल और दुर्ग की सूचना देते समय रौंणा और भौंणा का ईवन और भवन न लिख कर रौंन और सोन लिखा गया है।

मूल काव्य में पद्मगढ में रखीश्वर (ऋषीश्वर) का निवास लिखा है। तारीख में उसमें सहरक्खा के नेता वाल्मीकि का रहना लिखा है। मूलकाव्य के 'राम उधारया पाइ' में पांव छूकर राम के द्वारा अहल्या के उद्धार' की ओर संकेत दिया गया है। तारीख में यह प्रसंग नहीं है। इसीप्रकार राम के द्वारा सीता को वनखंड में छोड़ आने के आदेश और लक्ष्मण के प्रतिरोध तथा राम के संवाद को भी स्थान नहीं दिया गया है। सीता को जिस वनखंड में छोड़ा, गया उसके एक ओर धंधेड़ा और दूसरी ओर नागरचाल का उभड़ा हुआ प्रदेश बताया गया है। तारीख में धंधेड़ा को घनघोर में और नागरचाल को नाकरचाव में बदल दिया गया है।

मूल काव्य में ल्यो (लव) के द्वारा बसाये गये गांव बली और कुश के द्वारा बसाये गांव कुशतला को तारीख में क्रमशः निबली और कोसतल्ला लिखा गया है।

हमीरायण काव्य मूल के द्वितीय अध्याय और तारीख के प्रथम अध्याय के चतुर्थ खंड में पद्मऋषि के द्वारा पद्मताल बंधाने और उसके विवाह समरोह का प्रसंग है। इस समारोह में आने वाले ऋषियों को प्रतिदिन उस तालाब के बंधे पानी में स्नान करना पडता था—अतः उन्होंने बनास की एक धारा को कँवला ऋषि के आश्रम तक लाने का विचार किया। बनास नदी ने वहां तक पांच धाराएँ प्रवाहित की और उस स्थान का नाम पंचतीर्थी प्रसिद्ध हुआ। तारीख-ए-क़िला रणथंभोर में उस समारोह में सम्मिलित होने वाले ऋषियों में एक नाम कनूला ऋषि दिया है, जिसका नियम था कि वह धतूरे के बिना स्नान नहीं करता था। वह प्रतिदिन पांच कोस दूर उस स्थान पर स्नान करने जाता था जहां बनास नदी धतूरे के आकार में बहती थी।[1] कनूला ऋषि के स्वास्थ्य से चिन्तित क्षत्रियों ने ऋषियों से बनास नदी को वहीं बुला लेने की प्रार्थना की जिससे कमलधर पहाड़ में, जहां कमलधर नाम का ऋषि रहता था, वहां पांच स्थानों पर बनास नदी का बहना प्रारम्भ हो गया और ऋषि का वहां जाने का संकट समाप्त हो गया।

हमीरायण में न तो कनूला ऋषि का नाम है और न कमलधर पहाड़ का और न कमलधर ऋषि का। ऐसा प्रतीत होता है अनुवादक ने कँवला ऋषि को ही कमलधर बना दिया है। कनूला ऋषि भी कँवला ही का फारसी बिगड़ा रूप है।

मूल काव्य में धतूरे से नहाने का या बनास नदी के धतूरे के रूप में बहने वाले स्थान का कोई उल्लेख नहीं है। पर मूल काव्य में छंद सं. १५३ (चौपई) में दूसरा चरण अप्राप्त है, उसमें ऐसा कोई उल्लेख रहा हो। मूल में वनसागर की जड़ों के प्रक्षालन के उल्लेख को कमलधर पहाड़ नाम दे दिया गया है।

मूल काव्य के द्वितीय अध्याय के छंद सं. १६१ से छंद सं. २५५ में वर्णित कथा तारीख में प्रथम अध्याय के पंचम खण्ड में दी है। इसमें मूल काव्य में भैरव सेन की ७०० राणियां कही गई है। तारीख में ये ६०० हैं। तारीख में कथा को बहुत ही संक्षेप में भावार्थरूप में दिया है।

मूल काव्य में मंका (मक्का) में नये मत (इस्लाम) के प्रादुर्भाव, पैगम्बरों के प्रभाव, गौ हत्या, ऋषियों के पलायन, मंका में मंकेश्वरी (मक्केश्वरी) देवी की पूजा और उसके देवालय की प्रधानता, पैगम्बरों के द्वारा उससे छेड़छाड़

---

१. हम्मीर की वार्त्ता--ग्रंथांक ४४ (रा.प्रा.वि. प्र. उदयपुर) में बनास नदी और चंबल को कटेजी के फूल या कमल के फूल के समान कहा है।

करने, जोगिन कह कह कर हँसी उडाने, देवताओं के प्रभाव में कमी, मकेश्वरी द्वारा विरोध, पीरों के सर्वनाश की अहंकारपूर्वक प्रतिज्ञा, पैगम्बर के कोप, तलवार लेकर मारने के लिये दौडना, देवी की ओर से शास्त्रार्थ का प्रस्ताव और हारने वाले को देश से निष्कासन की शर्त और शास्त्रार्थ में पैगम्बर की विजय के वर्णन के साथ साथ नीतिवचन दिये गये हैं। देवी के विमान में बैठ कर भाग जाने और सुलेमान पैगम्बर के द्वार घो:. पर उसका पीछा करने का वर्णन है। देवी ने भाग कर भैरवसेन के राज्य में शरण ली।

तारीख की कथा में मंकेश्वरी को कमेश्वरी लिखा है। उपर्युक्त सारा वर्णन छोड़ दिया गया। मूल काव्य में देवी के पद्मगढ में आकर राजा भैरव सेन से मिलकर समस्त घटना सुनाने, अपना राज्य पैगम्बर द्वारा छीन लिये जाने, और आश्रय मांगने तथा राजा द्वारा अभय देकर वहाँ निवास की अनुमति और गर्वोक्तिपूर्ण वचनों का वर्णन भी तारोख में नहीं है। अपितु देवी का पीछा करते हुए पद्मगढ की तलहटी में पहुंचने, और भैरूंसेन को युद्ध के लिये ललकारने भैरूंसेन के हठ ओर पैगम्बर के सैनिकों से युद्ध में पराजय, राजा की देवी से अन्यत्र चले जाने की सम्मति, पैगम्बर को देवी के गन्तव्य स्थल के विषय में अनभिज्ञता का संदेश भिजवाने, तथा पैगम्बर सुलेमान द्वारा राजा को मिथ्याभाषण के लिये वंशनाश के शाप का हमीरायण में विस्तृत वर्णन है। युद्ध का वर्णन भी अति विस्तृत है। तारीख में बहुत संक्षेप में यह वर्णन है। इसमें अपने अष्ट प्रधानों के द्वारा राजा के पैगम्बर को भेजे गये संदेश और पैगम्बर के शाप के साथ साथ अष्ट प्रधानों के नाम भी दिये गये हैं–वे हैं हंस, सोभाग, मदन, फैन (फेल), कोकिदेव कामसेन, पद्मसेन, चन्द्रसेन और कामसमूह।

(कोकिदेव का उल्लेख राजस्थानी को शास्त्र के प्रकांड पंडित और रणथंभोर में भैरवसेन के सभासद् के रूप में अन्यत्र भी मिलता है।)

तारीख में भी नीतिविषयक बातों को स्थान दिया गया है, पर संक्षेप में जैत्रसिह के द्वारा दुर्गनिर्माण हेतु मुहूर्त निकलवाने, शिलास्थापन, नांगल के महोत्सव और दुर्ग के नामकरण का वर्णन भी संक्षिप्त कर दिया गया है।

हमीरायण के मूल पाठ 'तिह पर ताल बंधाया दोय' का अर्थ पता नहीं अनुवादक ने कैसे 'दो पत्थरों के दो द्वार तैयार किये अर्थ किये हैं। मूल काव्य में आये प्रसंग राजा को जैतपोल बनवाने हेतु सम्मति, निर्माण में आई बाधाओं, रौंणा, भौंणा के स्वप्न में पद्मगढ के आने, रौंणा भौंणा द्वारा शीशदान और राजा द्वारा उनके पुत्रों को प्रदत्त सम्मान के वर्णन को तारीख में स्थान नहीं दिया गया है। तारीख में जसपाल गंगेलवाल को कंकोल जाति का

बताया गया है और उसे बक्काल कहा गया है, जो वणिक् जाति का सूचक है। गंगेलवाल से कंकोल में परिवर्तन भी प्राचीन फारसी लिपि में गाफ के स्थान पर कॉफ के चिह्न के प्रयोग के कारण हुआ है। क्षत्रिय के लिये खत्री, लोधा को लोढा, कुलबी को कलाल, कोली को कोल्ही, भरावा को फिरादा (वा), कहार को थागेर, बारी को वाबी, थोरी को तोड़ी, कापसी के कापसी, तेरवा को तीरगर, उवगर को देगर लिख कर ऐसे ही परिवर्तन किये गये है, जो फारसीलिपि की अपूर्णता को तो सूचित करते ही हैं, पर हिन्दी अनुवादक की जानकारी की कमी को भी प्रकट करते हैं। अनुवादक ने सेठ, कीर, डूम, सहर, खूम, खिजमति, कारीगर, सौदागर, जौहरी, थूंणा, जड़िया, घड़िया, भोपा, भरड़ा, दरसण जैसे मूल काव्य के अन्य अनेक शब्दां को अनुवाद में स्थान नहीं दिया है। तारीख में राव जैतसिंह के बेटों और उनके द्वारा बसाये गये गांवों के नाम भी अशुद्ध लिखे हैं। यथा भरतसिंह को थरतसिंह, भदळाव को थदोला और हबदोला भींवजी को भौतिम, भीरहरी को हिरन, बाबई को पासी, वलिण को रहुजा, वलौडणी को बलनंदन, वखाड़ा को वखाजा, ब्रिचाड़ी को छेरी, कुंभलमेर को कुम्हलमीर, वील्हण को मिल्हन, बौंलीगढ को लोन्पी, भूरीपहाड़ी को थोरली, भूरीथा लिखा गया है।

मूलकाव्य के छंद संख्या ३०६ से तारीख के द्वितीय अध्याय का द्वितीय खण्ड प्रारम्भ होता है। मूलकाव्य में तिसिंगे हिरण की डार में 'मृग सैंच्यार' पाठ का अर्थ है, चार सौ हिरण थे। अनुवादक ने इसका अर्थ किया है चार पांच हिरण। हिरणों के आखेट के प्रसंग में अनेक अंश भी अनुवादक ने छोड़ दिये हैं।

छंद सं. ३३१ में जादू राजपूतों का उल्लेख है। अनुवादक ने इसे जादूगर मान लिया है। व्यंजनों के वर्णन और निर्माण की विधियों को भी संक्षिप्त करके कुछेक नाम गिनाये गये हैं।

पंचम खण्ड में जसपाल के वध के उपरान्त राज्य प्राप्ति का वर्णन मूल और अनुवाद दोनों में लगभग समान है। हम्मीर को राज्यप्राप्ति की तिथि मूल में वर्ष मास और दिन सहित सं. १३२१ फागुण वदि २ गुरुवार दी है (जो १३३१ होना चाहिए) पर तारीख में वर्ष के अतिरिक्त मास, तिथि, वार का कोई उल्लेख नहीं है। कोस के लिये तारीख में करवर शब्द का प्रयोग किया गया है।

मूलकाव्य में हमीर के राज्य की सीमा रणथंभोर से धंधेरा (धंधेड़ा) तक बताते हुए इसके क्षेत्र को डाँग की संज्ञा दी गई है। तारीख में धन्देरा को घन्देर१ (लखा है। पश्चिम में उसके राज्य की सीमा बौंली बणहटो डूंगर से

भी आगे तक बताई गयी है । तारीख में इस प्रदेश को आजू-ए-तूदहाँ लिखा गया है, जिसका अर्थ संभवत: 'राज्य की सीमा' से है । इससे अर्थ स्पष्ट नहीं होता ।

नौलखा बाग में लगे पेड़ पौधों के भी अनेक नाम गलत लिखे गये हैं और अनेक नाम छोड़ दिये गये हैं ।

हमीरायण में रणथंभगढ का क्षेत्रफल दो कोस से ऊपर कहा गया है और तलहटी की चारों ओर की परिक्रमा साढे तीन कोस । तारीख में किला रण रणथंभोर की लम्बाई पांच कोस और चौड़ाई चार कोस लिख कर, उसके भव्य भवनों, दूकानों, नोहरों आदि के पत्थर और चूने से निर्माण का उल्लेख किया गया है ।

मूलकाव्य में उल्लिखित, दुर्ग में निवसित जातियों, श्रेष्ठि वर्ग, आरायश जड़ी कोटड़ियों, सतखंडे धवल बंगलों, झरोखों, खम्भों जालियों, लाल रंग की खिड़कियों, हीरे-मोती, जवाहरात, सोना, चांदी, बहुमूल्य वस्त्रों, हथियारों, संगीतसभाओं, पंडितों के मध्य शास्त्रार्थ, वेद पाठ की ध्वनि, नट नृत्य, भाटों द्वारा विरुद गान, कथावाचन, संगीत, छंदशास्त्र, ज्योतिष में निष्णात व्यक्तियों, गेंद खेलते पखरेते (पोलो), अखाडों में अभ्यास करते मल्लों का वर्णन भी विस्तार से किया गया है, पर तारीख में यह वर्णन बहुत संक्षिप्त कर दिया गया है । फारसी लिपि की असमर्थता, अपूर्णता के दर्शन यहां भी होते हैं । मूलकाव्य में हमीर के राज्यविस्तार में आये गाँवों के नाम भी द्वितीय अध्याय में ऐसे भ्रष्ट कर दिये गये हैं कि उनको पहिचान पाना संभव नहीं है । अनेक गांवों के नाम छोड़ दिये गये हैं । यह संभव है कि फारसी अनुवादक को प्राप्त हुई काव्य की प्रति में ये नाम रहे ही न हो । अनुवादक द्वितीय अध्याय के छठे खण्ड का शीर्षक देना भी भूल गये हैं ।

मूलकाव्य में छंद सं. ४५१ से ४६६ तक हमीर के काका बांकड़ा के मांडू के शासक मन्मथ के साथ युद्ध में दोनों की मृत्यु, और मांडू पर हमीर के अधिकार का वर्णन है । तारीख में यह वर्णन द्वितीय अध्याय के सप्तम खण्ड में दिया गया हैं । फारसी अनुवाद में काका के स्थान पर चाचा शब्द होना चाहिए पर हिन्दी अनुवाद में चाचा के स्थान पर चम्पा मुद्रित हो गया है । पर उसे व्यक्ति की उपाधि के स्थान पर थाने का गांव बताया गया है । यह मुद्रण की अशुद्धि का ही परिणाम है । तारीख में खाताखेड़ी का खेताखेड़ी, मऊ को माऊ, महाराज को महाराजा लिखा गया है । तारीख में बांकड़ा और मन्मथ के मध्य युद्ध की समता रुस्तम औ‹ अफराशियाथ के युद्ध से की है । मूल काव्य में ऐसा कुछ नहीं है । यह अनुवादक की उक्ति है ।

मूल काव्य में छंद सं. ४७० से ५४२ तक वेकलीपाव योगी के हमीर के द्वारा तपभंग का प्रसंग तारीख के द्वितीय अध्याय के अष्टम खण्ड में दिया गया है। वेकलीपाव तारीख में बेकलीपत्त बन गया है। सामान्य अंतर के साथ सारी कथा मूल काव्य के अनुसार ही है। कथा को संक्षिप्त अवश्य किया गया है।

तारीख में इसी अध्याय के नवम खण्ड में सोमेश्वर महादेव के पुजारी की परीक्षा और महादेवजी द्वारा हमीर को शाप का वर्णन है। मूल काव्य में यह वर्णन छंद स. ५४३ से ५५७ तक है। इसमें सोमेश्वर के स्थान पर सोलेश्वर हो गया है। हमीर के द्वारा पुजारी को पुरस्कृत करने का उल्लेख निकाल दिया गया है।

मूल काव्य में हमीर की वड़गूजरवंशी रानी से देवलदे के जन्म और सोलंकिनी रानी से केवलदे का जन्म होना बताया है, जबकि तारीख में दोनों पुत्रियों का जन्म पटरानी बड़गूजरनी से होना कहा गया है।

मूल काव्य के पंचम अध्याय के प्रारम्भ में देवलदे के जन्म और जीवन की कथा, तारीख में तीसरे अध्याय के प्रथम खण्ड में कहीं गई है। इसमें इन्द्र की पटरानी रम्भा के स्थान पर वरनहारु नाम दिया है। संभवतः अनुवादक का तात्पर्य वारांगना से है। काव्य में रंभा के देवलदे के रूप में जन्म का उल्लेख है, तारीख में इन्द्र की एक अन्य अप्सरा के केवलदे के रूप में जन्म का भी उल्लेख है। मूल काव्य के अठ्यासी ऋषियों के स्थान पर तारीख में ८८००० संख्या दी है। पद्मावती के जन्म स्थान सिंहल को तारीख में सिंहदी बना दिया गया है। मूल काव्य में देवगिरि में चिताई के जन्म का उल्लेख है, पर अनुवाद में यह उल्लेख नहीं है। शेष कथा मूल काव्य की कतिपय अशुद्धियों को छोड़ कर यथावत् अनुवाद हैं। मूल काव्य में इन्द्रदेव के आदेश से ब्राह्मण बन कर देवलदे की कुशलक्षेम की जानकारी लेने के लिये अहलाद-पुर में प्रधान भीमसेन के घर निवास करने का उल्लेख है। तारीख में अहलाद पुर को आल्हनपुर और भीमसेन को पीयूसेन और अन्यत्र भीमसेन लिखा गया हैं। मूल काव्य में हमीर के सामन्त का नाम जाजा बड़गूजर लिखा है, अनुवाद में छाछा या छावा पाठ है, जिससे केवलदे का विवाह हुआ था।

मूल काव्य में देवलदे के द्वारा पर्वतों में प्रेतों (परेतों) के बड़े तालाब पर झूला डलवाने का वर्णन है। तारीख में इसे तोता घाटी कहा गया है। शायद परेतों का अर्थ पारावर्त करके तोता अनुवाद किया गया है। मूल काव्य में लोहे के कुंदों में रूपा (चांदी) की सांकल से झूला डाला गया। फारसी अनुवाद में भी नुकरा (चांदी) की जंजीर से झूला डालने का उल्लेख है।

फारसी से हिन्दी के अनुवादक ने नुकरा को नक्कारा बना दिया। काव्य में देवलके शृंगार का वर्णन भी बहुत लम्बा है, तारीख में उसे संक्षिप्त कर दिया गया है। इसी प्रकार इस अध्याय में आये हमीर और रणथंभोर के वर्णन को भी तारीख में संक्षिप्त कर दिया गया है।

तारीख में अलाउद्दीन के लिये भी राजा उपाधि का प्रयोग किया गया है। बनजारे के द्वारा अलाउद्दीन के समक्ष देवलदे के रूप सौन्दर्य के वर्णन में, "राजा बगैर देखे ही जुले खां की तरह युसुफ की प्रेमी बन गई" जैस तारीख का वाक्य मूल काव्य में नहीं है। तारीख के इस काव्य में 'लिंग' का ध्यान नहीं रखा गया। तीज की गणगोर का अपहरण करने वाले थानसिंह खीची के नाम को भी बदल कर हमीर खेची कर दिया गया, और उसको गागरोन का जमीदार बताया गया है। यहाँ मूल काव्य का पांचवां अध्याय और तारीख के तीसरे अध्याय का दूसरा खण्ड समाप्त होता है।

हमीरायण के छठे अध्याय और तारीख के तीसरे अध्याय के तृतीय खंड में महिमासाहि को मेहमानसाह लिखा गया है। शिकार के समय अलाउद्दीन से बेगम के बिछुड़ने का कारण तारीख में आंधी को बताया गया है। मूल में आंधी की कोई चर्चा नहीं है।

अलाउद्दीन के द्वारा उमरावों को भोजन के लिये आमंत्रित कर कीचड़ में बैठने के मूल काव्य के प्रसंग से तारीख में कीचड़ में बैठने के प्रसंग को स्थान नहीं दिया है। तारीख में मीरगभरू को भीरकाभरू लिखा है और महिमासाह के भानजे उडानसी का नाम निकाल दिया है। महिमासाह के सैनिकों, हाथी घोड़ों और साजसमान के विस्तृत वर्णन को भी तारीख में संक्षिप्त कर दिया गया है। थानसिह खीची को दण्डव्यवस्था के प्रसंग में उसे अष्टघात के तप्त अश्व पर बैठाने के प्रसंग में तारीख में पीतल के घोड़े को तपा कर बैठाने की सजा की आज्ञा की गई है।

मोल्हणसी को मूलकाव्य में ऐलची (दूत) कहा गया है, पर तारीख में वैश्य कहा गया है।

तारीख के चौथे अध्याय में दुर्ग के वर्णन को छोटा कर दिया गया है। इस प्रसंग में, मूलकाव्य में अहलादपुर का नाम नहीं हैं, पर तारीख में यह वर्णन है। तारीख के इस अध्याय में देवलदे की आयु उस समय सोलह वर्ष और हम्मीर की आयु सैंतीस वर्ष बताई गई है। दुर्ग के कुएं, बावड़ियों, देवालयों का वर्णन, देवलदे के सौन्दर्यविषयक अधिकांश वर्णन तथा पातुरों, राज

सभा, रनवास और नगर की शोभा के वर्णन को या तो छोड़ दिया गया है या संक्षिप्त कर दिया गया है।

तारीख में चौथे अध्याय के द्वितीय खंड में खोखरों को खुरासानी, हरावल (अग्रिम पंक्ति) को लहरावती समझ कर हरावल में नियुक्त सैनिकों को लहरावती निवासी कह दिया गया है। इस प्रसंग में आये उड़ीसा, बेराट, खंधार, बलख के पर्वत आदि नाम भी निकाल दिये गये। मूलकाव्य में अलुखान के आक्रमण की तिथि माह सुदी वसंत पंचमी को भी अनुवाद में स्थान नहीं दिया गया है। महिमासाह की सेना में दस हजार सवारों की संख्या अनुवाद में बारह हजार हो गई है।

रचौंपाल और ख्यौंपाल को हमीर द्वारा प्रधान का पद दिया गया था। मूल में उनके पिता का नाम नहीं है, पर तारीख में उन्हें जसपाल प्रधान प्रधान का पुत्र कहा है।

तारीख (४/३) में वर्णित युद्धप्रयाण की योजना के विस्तृत वर्णन को संक्षिप्त कर बैसाख सुदी में कूच का संजोग (मूहूर्त) निकालना कहा है, जबकि मूल हमीरायण में ज्योतिष विद्या में निष्णात ज्योतिषियों के द्वारा पूरा लग्न निकालने की विधि तथा सं १३४१ की आखातीज (अक्षय तृतीया), गुरुवार के दिन प्रस्थान करने का उल्लेख किया गया है। बादशाह की सेना में सम्मिलित विभिन्न प्रदेशों की सेना के प्रसंग में आये नगरों, प्रान्तों के नाम कहीं बदल दिये गये हैं और कहीं छोड़ दिये गये हैं। कतिपय नाम अपनी ओर से जोड़ भी दिये हैं।

मूल काव्य हमीरायण के छंद सं. ८९० में बादशाह के द्वारा निसरतखाँ की हरौल, फतेखान की चंडोल में, हुसैनखां की बांयी पंक्ति में और तातारखां की करोल (करावल) में नियुक्ति का उल्लेख तारीख में निकाल दिया गया है।

फौजों के प्रयाण का वर्णन भी संक्षिप्त कर दिया गया है। मूलकाव्य में छंद सं. ८९१ (निसाणी छंद) के प्रथम तीन चरणों का अनुवाद यथावत् देकर आगे लिख दिया गया कि अश्वों और अन्य पशुओं के खुरों से उड़ने वाली धूल के कारण ऐसा प्रतीत होता था कि पृथ्वी सात की अपेक्षा छः भागों की ही रह गई है और आकाशों की संख्या सात की अपेक्षा आठ हो गई है। मूलकाव्य में ऐसा कोई उल्लेख नहीं हैं।

मूलकाव्य में छायण से दुर्ग की दूरी पांच कोस बताई गई है। तारीख में छायण को झांयन लिखा गया है और दुर्ग से यह दूरी चौदह कुरवा (कोस) कही गयी है।

मूलकाव्य में (छंद सं. ८९५) में 'दस पंच गयंदा' में हाथियों की संख्या १०×५=५० पचास दी है, तारीख में यह तेरह सौ (१३००) कर दी है। मफरंद और कनवजगों का उल्लेख छोड़ दिया गया है। इसी प्रकार हम्मीर की सेना के वर्णन में निसानों को सहरबाजों में गिन लिया गया है, धनुर्धरों की संख्या दस हजार दी है और बरकमदाजों का उल्लेख नहीं किया गया है।

फारसी अनुवादक ने मूल काव्य से उद्दत खत्री के उत्तर वाले कवित्त का अर्थ गलत किया है। यह अशुद्धि मूल कवित्तों को ऊपर नीचे करके पढ़ लेने के कारण हुई प्रतीत होती है। कवित्तों में से कुछेक के अर्थ भी छोड़ दिये हैं। काव्य में आये अलाउद्दीन स्वयं को कलीला अर्थात् कालिया नाग और हमीर को कान्हा नाग के रूप में प्रस्तुत करता हुआ कान्ह और कलीला का संघर्ष कहा है। अनुवादक ने इसका अर्थ कनखजूरा कर दिया हैं। वह कहता है उस समय तो मेरे हाथ नहीं थे, पर अब तो करोड़ों हाथ हैं। यह भ्रांति सहस्र हाथों के उल्लेख के कारण भी हुई है।

हम्मीरायण में वर्णित अलाउद्दीन के द्वारा देवलदे को फंसाने के लिये भेजी गई दूतीप्रसंग को भी संक्षिप्त कर दिया गया है। कई एक शब्दों के अर्थ ठीक नहीं समझे गये हैं—यथा भुजंग का अर्थ बंदीगृह, नेमनाथ का अर्थ नीम का थाना, आबू शिखर का अर्थ आबू और सीकर इन्द्रवनि का अर्थ इन्द्र-दूत। कई एक छंदों का अर्थ या भावार्थ भी नहीं दिया गया है। नेमिसार और मीसरि के स्थान पर कच्छाविशम और कहारत जैसे अर्थ पता नहीं कैसे ग्रहण किये गये हैं।

हमीरायण के अष्टम अध्याय में दी गई मोमिन आरिफ की कथा तारीख के चतुर्थ अध्याय के छठे खंड में अनूदित की गई है। इसमें मोमिन आरिफ के लिये मोहम्मद आरिफ और सफेद जुलाहा मोहम्मद आरिफ अर्थ दिये हैं। मोमिन और आरिफ अरबी भाषा के शब्द हैं। मोमिन का अर्थ है मुसलमान पुरुष या धर्मात्मा, और मुसलमान जुलाहा अर्थ है, और आरिफ का अर्थ भी धर्मनिष्ठ या ब्रह्मज्ञानी है। अत: मोमिनआरिफ का अर्थ धर्मनिष्ठ या ब्रह्म-ज्ञानी जुलाहा उचित हैं। तारीख में जुलाहे का विशेषण पता नहीं कहां से लिया गया है। ऐसा प्रतीत होता है इसमें मोमिन को मोहम्मद समझ कर पूरा नाम मोहम्मदआरिफ कर दिया गया है। जुलाहे से सूतप्राप्ति के प्रसंग सप्तम खंड में सेना में ओलियों से भेंट के वर्णन में मौतकलीज और और निजामुद्दीन नाम दिये हैं। हमीरायण में इनका नाम मादिकलीच और निजामदी मीयाँ हैं। निजामदी को मादिर्किलच का भानजा कहा गया है। ओलियों द्वारा किये गये संग्राम के वर्णन को भी तारीख में संक्षिप्त कर दिया गया है। इस युद्ध में ओलियों के द्वारा फौदा ग्राम और झायन की घाटी में युद्ध प्रारम्भ

करने का उल्लेख है, पर मूलकाव्य में ऐसा कोई उल्लेख नहीं। इसमें गेंद घाटी दरा और रण के डूंगर पर युद्ध और औलियों की विजय की सूचना है। यहाँ हिन्दी अनुवाद में जाजा या जाजन को चाचन लिखा गया है। यह करामात तत्कालीन फारसी लिपि में नुक्ते नहीं लगाने से हुई है।

ओलियों के मारे जाने के उपरांत दुर्ग को जीतने के लिये हुए युद्ध का वर्णन प्रायः समान है, पर तारीख में वह संक्षिप्त कर दिया गया है।

मूलकाव्य के नवम अध्याय में रणथंभोर दुर्ग की बुर्ज पर षोडश शृंगार कर धारू नाम की वारू (वारांगना) के नृत्य और उडानसी द्वारा वाण मार कर उसके वध का वर्णन है। तारीख के पंचम अध्याय के प्रथम खंड में वारू अर्थ न समझ कर एक अन्य नर्तकी पारू की कल्पना कर ली गई है। अध्याय के प्रारम्भिक लघु चौपई सं. १०७४ से १०८० को यथावत् देने का प्रयास किया गया है, पर सफलता नहीं मिली। बाकी अंश का अनुवाद गद्य में किया गया है। उडानसी को ओदानसी लिखा गया है। मूलकाव्य के छंद सं. १११३ की प्रथम दो पंक्ति तक की कहानी को तारीख के प्रथम खण्ड में स्थान दिया गया है। अनुवाद को संक्षिप्त कर दिया गया है।

छंद सं. १११३ से शाही सेना द्वारा पुल निर्माण और तालाब का तवा निकाल कर राव के द्वारा उसको बहाने का वर्णन तारीख के पंचम अध्याय के द्वितीय अध्याय में किया गया है। इस वर्णन में खंदक का अर्थ कंदरा और तोबरा का अर्थ तारीख में टोकरा किया गया है जो ठीक नहीं। इसमें भी कई अंशों का अनुवाद नहीं किया गया है।

हमीरायण के छंद सं. ११२३ (वी) से ११५१ तक भाट के बादशाह के साथ संवाद के प्रस्ताव, राव हमीर द्वारा अनुमति और संवाद का वर्णन तारीख के अध्याय ५ के तृतीय खंड में दिया गया है। मूलकाव्य के छंद सं. ११३३ (वी) के दो ही चरण काव्य में हैं, और उसमें भी भाट का नाम नहीं है, पर आगे छंद सं. ११४३ में भाट का नाम खेम दिया गया है। तारीख के तृतीय खंड के प्रारम्भ में खेम वादफरोंश का यह निवेदन साहबक्काल (स्याह बक्काल के षड्यन्त्र के अनुसार सूखवाल के दुर्ग से किया गया बताया गया हैं। लगता है यह छंद प्रक्षिप्त है। छंद सं. ११३२ और ११३४ के मध्य की एक पंक्ति और वह भी छंद सं. ११३३ की ही इसका प्रमाण है। क्रम सं. ११३२ में दो छंद चौपई के नहीं हो सकते। दूसरी बात यह है कि भाट ने रणथंभोर दुर्ग की बुर्ज से ही बादशाह से बात की है। सूखवाल के दुर्ग से नहीं। तारीख में छंद सं. ११३६ का अर्थ नहीं दिया है। इसी तरह छंद सं. ११४० से ११४५ के दोहों का सार भी एक पंक्ति में दे दिया है। छंद सं. ११४६ में

'रामचन्द्र टलि जाय, टेक रावण मूकै' का अर्थ 'राम रावण को छोड़ दे' किया है। इस छंद के अन्य अंशों के अर्थों में भी ऐसी ही अशुद्धियाँ हैं। अन्य कई छंदों के अर्थ नहीं दिये हैं या फिर अशुद्ध अर्थ किये हैं।

छंद सं. ११९३, ११९४, में जाजा और वीरम की प्रतिज्ञा, मलिक के द्वारा राव से पहले प्राण न्योछावर का आश्वासन; सं. ११९६ से १२०० का वर्णन नहीं हैं। छंद सं. १२०१ से १२२६ तक डाकणहेड़ा की सिकोतरी की सहायता लेकर बादशाह को मारने के प्रसंग और असफलता के प्रसंग भी तारीख में निकाल दिये गये हैं। ऐसा लगता है—मूल काव्य में भी यह प्रसंग बाद में जोड़ा गया है। इसका पता छंद सं. १२२७ में छंद सं. ११९५ की पुनरावृत्ति कर कथा के प्रवाह में नैरंतर्य लाना है।

छंद सं. १२२७ के उपरान्त का वर्णन तारीख में भी यथावत् मिल रहा है। ख्योंपाल के परिवार को दी गई सजा में बहु-बेटियों को थोरियों को देने के वर्णन में, थोरी शब्द का अर्थ भंगी किया है। थोरी निम्न वर्ग का जाति अवश्य है पर भंगी नहीं।

तारीख में सतपोल दरवाजे पर जाकर हमीर के द्वारा यज्ञ करने का उल्लेख है। मूल काव्य में दरवाजे पर जाकर यज्ञ करना कहा है। सतपोल का उल्लेख नहीं है।

मूल काव्य के छंद सं. १२५६ और १२५७ का कर्थ तारीख में नहीं है। छंद सं. १२५८ में संवत् १३५२ सावण मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी (नाग-पंचमी), मंगलवार के दिन संभखिार (सांभरिवा चौहान हमीर) के द्वारा (जूझने) युद्ध करने का वर्णन है। तारीख में यह तिथि सावण सुदि ५ शनि-वार दी है। संवत् का उल्लेख नहीं है, जबकि तारीख में ठीक उक्त तिथि के नीचे मूल काव्य के छंद सं. १३५८ (चौपई) की अर्धाली (सामान्य अन्तर सहित) ज्यों की त्यों दी है—

संवत् तेरह सौ अठावना - शुक्ल पक्ष और मास सावना। नागपंचमी मंगल वार, ते दिन झांझी संवरवार॥

इसको दोहा कहा है-पर है चौपई। इसमें संवत् तेरहसै'र बावना के स्थान पर संवत् तेरह सौ अठवावना पाठ है। और सावन मास के शुक्ल पक्ष की नागपंचमी मंगलवार को युद्ध का उल्लेख है। यथा संवत् तेरह सौ अठा-वना' शुक्ल पक्ष और मास सावना नागपंचमी मंगलवार, ते दिन झांकी संवर-वार हमीरायण में यही पाठ रहा होगा। उपलब्ध प्रति और उसकी प्रतिलिपि के अतिरिक्त कोई अन्य प्रति ही 'तारीखे-किला-रणथंभोर' के मूल की प्रति

रही होगी, ऐसा इससे प्रतीत होता है। पर अन्तिम युद्ध की तिथि मूल की भांति इसमें भी माघ सुदि एकादशी सोमवार वि. सं. १३५३ दी है, जो अशुद्ध है।

हमीर की मृत्यु के उपरान्त महिमासाह और अन्य सामन्तों के युद्ध का वर्णन मूल काव्य में छंद सं. १२५९ से और तारीख के पंचम अध्याय के पंचम खण्ड में दिया गया हैं। छंद सं. १२६१ का अर्थ तारीख में ठीक नहीं दिया। महिमाशाह के युद्ध को हमीरायण में कान्ह राधा के रस फाग (फाग) खेल से उपमित किया हैं। तारीख में इस पंक्ति का अर्थ छोड़ दिया है। जाजा के युद्ध वर्णन को भी संक्षिप्त कर दिया गया है। भीवजी को तारीख में भूजी लिखा है। विल्हणदेव को तारीख में वीरमदेव लिखा गया है इसी तरह जैनखाँ के स्थान पर मेहसानखाँ नाम दिया गबा है। छंद सं. १३३२ का अर्थ भी ठीक नहीं है।

काव्य के अन्त में युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए हम्मीर की सेना के अनेक लोगों के नामों को भी तारीख में स्थान दिया गया है पर यह सूची अधूरी है और अनेक नामों को भ्रष्टरूप में लिखा गया है और अनेक नाम छोड़ दिये गये हैं। अन्त में अलाउद्दीन में विरक्ति की भावना जाग्रत होने और अपने अनुज को दिल्ली का राज देकर समुद्र में डूबने का उल्लेख है।[1]

तारीखे-किला-रणथंभोर में उक्त वर्णन के उपरांत राव सुरजन से संधि के द्वारा अकबर का किले पर अधिकार की घटना से लेकर महाराजा माधोसिंह द्वितीय के द्वारा मरहठों से दुर्ग विजित करने का वर्णन है।

खेम कृत हमीरायण के छंद संख्या १३६९ की अन्तिम पंक्तियों का अर्थ दे दिया है, जिसमें रणथंभोर दुर्ग को ८४ दुर्गों का लाडिला कहा है।

तारीखे किला रणथम्भोर के हिन्दी अनुवाद में अशुद्धिया पांडुलिपि मे रही हो, अनुवादक ने की हो या प्रेस में छपाई हुई हो, सारा उत्तरदायित्व अनुवाद पर ही जाता है।

---

१ इन्द्रप्रस्थ प्रवन्ध-सप्तम सर्ग, श्लोक सं. १७ पृ. २२ में भी अलाउद्दीन के समुद्र में डूबने की बात कही गई है—यथा
अलाद्दीन अलाउद्दीन, समुद्र साधनार्थं सं.
गत समुद्र मध्ये च, पुनः स. आगतो नहि ॥१७
(प्रकाशक, रा. प्रा. वि. प्र. जोधपुर)

परिशिष्ट–३

हमीरायण में उल्लिखित स्थान

अजमेर—(छंद सं. २३, २४) राजस्थान के मध्य में स्थित प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर। हमीरायण छन्द सं. २३ में नरदेव के पुत्र अजैदेव चौहान के द्वारा सं. ६६९ वि. में स्थापित कहा गया है।

अजोध्या—(१३८, ९४५) रघवंशी राजाओं को प्राचीन राजधानी जो उत्तरप्रदेश के फैजाबाद जिले में हिन्दुओं के प्रसिद्ध तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध है।

अठाणी—(४५०)

अहलादपुर—(९०१) रणथंभोर दुर्ग की तलहटी में जैत्रसिंह के ज्येष्ठ पुत्र अहलादसिंह के द्वारा बसाया गया नगर।

आंटोणी—(४५०) कोटा जिला (राजस्थान) की अटरू तहसील में स्थित गांव।

आडंवला—(५५, १३६९) अरावली पर्वत शृंखला, जो हिंडोन, करोली, सवाईमाधोपुर, खंडार, टोडाभीम, बामनवास और बौळी पंचायत समिति के क्षेत्रों में फैली हुई है। हमीरायण में इससे तात्पर्य सवाईमाधोपुर के परित व्याप्त पहाड़ी प्रदेश से है।

आबू शिखर—(९४८) राजस्थान के दक्षिण में स्थित प्रसिद्ध पर्वत शिखर।

आल्हणपुर—(३०२) रणथम्भोर की तलहटी में बसाया गया इस नाम का गाँव।

आसाम—(९०९) भारत के उत्तर पूर्व में असम नाम का प्रान्त।

आसेर—(४६०, ८८६) महाराट्र के निमाड़ जिले में ताप्ती नदी के तट पर बसा असीरगढ।

इन्टावो—(४५०) कोटा जिले के उत्तरी भाग में स्थित नगर।

इन्दरवनि—(६३६)

ईडर—(८८६, ८९२) गुजरात प्रांत में सावरकांठा जिले में स्थित नगर।

उच्चदेश—(८८६) सिंध प्रांत (पाकिस्तान) का एक नगर।

उजीरपुर—(४५०) सवाईमाधोपुर (राजस्थान) जिले की गंगापुर सिटी तहसील का हिंडोण मार्ग पर स्थित गाँव।

उजैंण—(६०१, ८८६) मध्यप्रदेश का प्रसिद्ध नगर, जहां महाकाल का मन्दिर स्थित है।

उटगर—(३१) रणथम्भोर (राजस्थान) के पूर्व में चम्बल नदी के तट पर स्थित एक पहाड़ी दुर्ग-उतगिर।

उड़ीसा—(८६५, ८८५, ८८६, ९०९, ९३९) भारत के पूर्व में इसी नाम का प्रान्त, जो प्राचीन काल में उत्कल के नाम से प्रसिद्ध था।

उणियारा—(४५०) टोंक जिला (राजस्थान) का एक नगर।

उदैगिर—(५५)

उदेही—(४५०) सवाई माधोपुर जिला (राजस्थान) में गंगापुर सिटी तहसील का गाँव।

कच्छदेश—(८८६, ८९२) गुजरात में कच्छ की खाड़ी का तटवर्ती प्रदेश।

कनवज—(८६५, ८८६, ९६०) उत्तरप्रदेश के फरुखाबाद जिले में स्थित कन्नौज नगर, जो पूर्व में कान्यकुन्ज नाम से प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर था।

करनाट—(८८६, ९०९) बुन्देलखण्ड का एक भाग जहां प्राचीन काल में हैहयवंशी क्षत्रियों का राज्य था।

कँवालजी—(१५४) कपालेश्वर इन्द्रगढ रेल्वे स्टेशन (बून्दी जिला-राज.) से १० कि.मी. उत्तर पूर्व में चातल नदी पर बसा तीर्थ स्थान।

कहद—(४५०)

कांवरू—(८८६, ८९२) असम राज्य के प्राचीन नाम कामरूप का अपभ्रष्ट रूप।

काबिल—(८८६) अफगानिस्तान की राजधानी काबुल।

कामाँ—(८८६) भरतपुर जिला (राजस्थान) का एक नगर जो प्राचीन काल में कामवन के नाम से प्रसिद्ध था।

कास्मीर—(९०९) भारत का शीर्षस्थ उत्तरी राज्य, जो हिमालय पर्वत पर्वत शृंखला में स्थित है।

कुम्भलमेर—(३०३) अलवर जिला (राजस्थान) में स्थित कुम्हेर नगर, (२) मध्यप्रदेश में स्थित कुम्भराज (१)।

कुजोड़—(४५०) कोटा (राजस्थान) में बारां जिले की सात निजामतों में से एक।

कुड़ीछ—(३४) बून्दी (राजस्थान) के बरड़ प्रदेश का एक गांव।

कुरखेत—(८३१) हरियाणा प्रान्त का कुरुक्षेत्र नाम से प्रसिद्ध प्रदेश।

कुसथल—(१४६) सवाईमाधोपुर जिला (राजस्थान) को पश्चिम दिशा में स्थित ग्राम पंचायत का अधिष्ठान।

कुसालीदरा—खंडार के निकट स्थित घाटी

कोट खंडार—(३१) सवाई माधोपुर और रणथंभोर के बीच में सवाई माधोपुर से दक्षिण पश्चिम में स्थित नगर।

केदार—(९४६) उत्तरप्रदेश के गढवाल जिले में उत्तराखंड का प्रसिद्ध तीर्थ स्थल।

कोटड़ी—(४५०) झालावाड़ जिला (राजस्थान) में गरोट गोगरपुर मार्ग पर स्थित गांव

कोटा—(४५०, १२०१, १२०३) राजस्थान के पूर्व में स्थित हाडोती प्रदेश का प्रसिद्ध नगर

खंडार—(४५०, ६२०) सवाईमाधोपुर नगर के उत्तर में स्थित नगर

खंधार—(८६५) अफगानिस्तान का नगर कंदहार

खाटचाणो—

खात.खेड़ी—(४५०, ४५४) मऊ से २० कोस दूर स्थित नगर, जो चन्द्रसैन भोल (सहरिया) की राजधानी थी। इसके अंतर्गत ७०० गांव थे। आज कल यह मनधर थाना (मनोहरथाना) कहा जाता है। दिल्ली के बादशाह ने यह परगना नवाब मनधर खां को दिया गया था। उसने अपने नाम पर यह गांव बसाया। बाद में भीलों ने इस पर अधिकार कर लिया। भीलों से कोटा महाराव ने छीना (राजपूताना गजेटियर)

खातोली—(४५०) सवाईमाधोपुर जिला (राजथान) की बौंली तहसील का भूरवा गांव पंचायत में मलारणा डूंगर के समीप स्थित कस्बा। (२) कोटा जिले में वालूपा के समीप स्थित ग्राम

खिरणी—(४५०) सवाईमाधोपुर दौसा मार्ग पर लालसोट के समीप स्थित ग्राम

खिलजीपुरो—(४५०)

खुरासानो—(८९२) ईरान में स्थित खुराशान नगर

खोखर—(८९२) मध्य एशिया का एक नगर

ख्यांवदो—(४५०) सवाईमाधोपुर जिले की महुवा तहसील में स्थित गांव खावदा

गंगा—(९४६) भारत की प्रसिद्ध पवित्र नदी

गजदेश—(८८६) अफगानिस्तान का गजनी प्रदेश, या (२) हस्तिनापुर या (३) बुंदेलखंड में गजाग्र प्रदेश ।

गढ गजनी—(८१२) संभवत प्राचीन हस्तिनापुर ।

गढ गज्जणो—(८१३, ८३९, ८९२) राज्य या दिल्ली या उत्तर प्रदेश के पीलभीत जिला में विशालपुर से उत्तर पूर्व में गढ गजना नामका प्राचीन नगर, जिस के खंडहर वर्तमान हैं ।

गया—(९४५) बिहार प्रान्त में प्रसिद्ध हिन्दू और बौद्ध तीर्थ ।

गरड की डूंगरी—(३०९) रणथंभोर के समीप स्थित कोई पहाड़ ।

गागरौणी—(५५, ६४८) राजस्थान में झालावाड़ जिले का प्रसिद्ध ऐतिहासिक दुर्ग जो डोड और खीची (चौहानों) के अधिकार में था ।

गायण—(२५)

गिरनार—(९४७) काठियावाड़ (गुजरात) का प्रसिद्ध तीर्थ ।

गुजरात—(३६) भारत के पश्चिम में स्थित प्रसिद्ध राज्य ।

गुराई—(४५०)

गुवालेर—(८८६) ग्वालियर (म. प्र.) ।

गूंट पर्वत—(३३) उदयपुर से ३० मील दूर स्थित घण्टा माता (IHQ-XXXVII PP २१५-२१६ पाकिस्तान के सिंध प्रांत में स्थित जैन तीर्थ गुंड गिरि, (एंशटेन्ट जैन हिम्स-पृ. ५६) ।

गूगोर—मऊ से २५ कोस पूर्व में खीचियों का वतन, इसमें ३६०० गांव लगते थे ।

गोपाल नदी—(४५) डेरा इस्माइल खान (पश्चिमी पाकिस्तान) में गोपाल नदी ?

रोगोर ले—(४५०) तहसील सवाई माधोपुर की ग्राम पंचायत सेल में (२) कोटा जिले में छबड़ा के पास स्थित गांव अथवा (३) छबड़ा तहसील में पार्वती नदी के तट पर खीची शासकों द्वारा निर्मित दुर्ग ।

गोमती—(९४७) गंगा की सहायक नदी ।

गोदावरी—(९४८) गुजरात राज्य में नासिक के पास त्र्यंबक ब्रह्मगिरि पर्वत से निकलकर बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली प्रसिद्ध नदी ।

गौड—(८८६) बंगाल का एक भाग ।

घग्घर नदी—(४१, ४७) पंजाब राज्य में चंडीगढ से राजस्थान के गंगानगर जिले में होती हुई पाकिस्तान में मारोठ तक की सूखी पट्टी में वर्षा ऋतु में बहने वाली नदी । यह नदी हरियाणा राज्य से राजस्थान के हनुमानगढ

जिले में (तलवाड़ा) के पास राजस्थान में प्रविष्ट होती है और हनुमानगढ, पीलीबंगा, सूरतगढ़, जैतसर, श्री विजयनगर और अनूपगढ़ के पास बहती हुई बिजोर गाँव के पास पाकिस्तान के बहावलपुर जिले में प्रवेश कर जाती है।

चन्देरी—(६३५) मध्यप्रदेश में ग्वालियर जिले का एक नगर।

चांबलि—(७४५, ७४६) चंबल नदी, जिसका प्राचीन नाम चर्मणवती है

चाचरणी--(५५-४५०) कोटा जिले में मऊ से लगभग ४८ किलोमीटर दूर स्थित खाताखेड़ी से १६ किलोमीटर पर स्थित नगर। यह ८४ गांवों से युक्त खीचियों के वतन के रूप में प्रसिद्ध रहा है। भोज के पुत्र उदयादित्य के संवत् १११० वि. के शिलालेख में इसका उल्लेख चत्रुरोणी मण्डल के रूप में मिलता है।

चाटसू—(४५०) अयपुर (राजस्थान) जिले में जयपुर-टोंक मार्ग पर स्थित नगर।

चित्तोड़—(३४) राजस्थान में मेवाड़ राज्य की राजधानी के रूप में रहा प्रसिद्ध नगर और दुर्ग।

चित्रकोट—(८८६)

छायण—(४५०,८९४ ९२०,९२६) राज. के सवाई माधोपुर जिले की गंगापुर सिटी तहसील और ग्राम पंचायत जीवली का गांव। (२) कंडार तहसील में स्थित छान नाम का गांव जो पंचायत समिति के अधिष्ठान के रूप में जाना जाता है। (३) वेहरावंडा और सवाई माधोपुर के मध्य स्थित गांव अथवा (४) टोंक-देवली मार्ग पर भी छाण नाम का गांव है। यहां सं. ३ ही छायण प्रतीत होता है। फारसी ग्रन्थों में इसका नाम झायन दिया है।

जम्बूद्वीप—एशिया महाद्वीप का पौराणिक नाम।

जगन्नाथजी—(९४५, ९६५) उड़ीसा प्रांत के पुरी नगर में स्थित हिन्दू धर्म का प्रसिद्ध तीर्थ।

जराणी—(४५०) सम्भवतः लावा (जिला टोंक) के पास स्थित झिराणा गांव।

जल्हवाड़ो—(४५०) कोटा जिले में गुना बारां मार्ग पर स्थित जलवाड़ा नामक ग्राम या झालावाड़।

जांगी—(४५०)

जांगलू—(८८६) जांगल प्रदेश, बीकानेर, नागौर और हरियाणा का भू-भाग।

जादूवाटी—(३७५) करौली या बयाना का क्षेत्र जो कभी यादवों के अधिकार में रहा।

जामू मारग—(९४८) बून्दी (राजस्थान) जिले में केशोराय पाटन (१) आबू के पास हिन्दू तीर्थ ।

जीरोतो—(४५०) राजस्थान राज्य के सवाई माधोपुर जिले में सपोटरा ग्राम पंचायत का गांव ।

जुगनीपुर—(२८, ४६) योगिनीपुर, दिल्ली का एक प्राचीन नाम (मेवाड़ में भी जावर नगर योगिनीपुर के रूप में जाना जाता था ।

जैतपुर—(५७) रणथम्भोर के समीप वसा गाँव जिसे जैत्रसिंह ने बसाया था ।

जैतपोलि—(२७७) रणथम्भोर दुर्ग में जेत्रसिंह के द्वारा उसके नाम से वनवाया गया नगर द्वार ।

झाड़खण्ड—(८८६) उड़ीसा और बिहार का सीमावर्ती भाग ।

झिलाणी—(४५०) जयपुर (राजस्थान) के टोंक जिले में स्थित झिलाय के परित: का प्रदेश ।

झिलाय—(४५०) टोंक जिले में निवाई के पास स्थित कस्बा ।

टोंक—राजस्थान का प्रसिद्ध नगर और जिले का अधिष्ठान ।

टोंक्राणी—(४५०) टोंक के आसपास का प्रदेश (राज.)

टोडो—(४५०, ८९४) सवाई माधोपुर में टोडा-भीम नाम का प्रसिद्ध कस्बा ।

ठठा—(८१२) पाकिस्तान के सिंध प्रांत मे स्थित नगर ।

डाकणहेडा—(१२०१) बून्दी, मेवाड़ और कोटा की सीमा पर वरड़ क्षेत्र का एक गांव डेकन ।

डिल्ली—(८०६, ८०७, ८१०, ८३६, ८३९, ८९२, १०१२) भारत की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध नगर ।

डूंगर—(९२८)

ढाका—(८८६) पूर्वी बंगाल की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध नगर ।

ढाणी—(४५०)

ढीपरी—(४५०) राजस्थान के कोटा जिले में बालूपा, खातोली और इन्द्रगढ के मध्य स्थित गांव ।

ढूंढाहड़—(८८६) आधुनिक जयपुर राज्य ।

तलाव—(४५०)

दिली—(८०७) दिलीपुर (८३६) भारत की राजधानी ।

तिलंग—(८१२, ८८६) आंध्र प्रदेश और मैसूर का तैलगूभाषी प्रदेश जो तैलंगाना के नाम से जाना जाता था।

दरो—(१०५०) कोटा राज्य में मुकन्दरा अथवा वाडोली जिला चित्तौड़ के पास घाटी।

दुबलाण्यो—(४५०)

देलवाड़ो—(४५०)

देवगिर—(४६०, ५७६, ९०५, ६०७, ९७६, ८८७) भदौरिया राजा बदनसिंह के एक स्थानीय शिलालेख के अनुसार चम्बल नदी के तट पर बसे 'अठेर' नामक किले की पहाड़ी देवगिर कहलाती थी। (२) टोंक जिले में ईसरदा के पास स्थित सिवाड़ (शिवालय) को शिवपुराण में देवगिर कहा गया है। (३) दौसा में देवगिरि जिस पर नीलकण्ठ महादेव का मन्दिर बना है। (४) दक्षिण भारत में स्थित देवगिरि राज्य जिसका नाम मुहम्मद तुगलक ने दौलताबाद रख दिया था। यहां इसी से आशय प्रतीत होता है। (५) मध्य प्रदेश में देवल का भी प्राचीन नाम देवगिरि था।

द्वारिका—(९०९) सौराष्ट्र (गुजरात) का प्रसिद्ध तीर्थ।

धंधेडा—(१४७, ४५०, ८४२) रणथम्भोर से पूर्व और दक्षिण पूर्व का पौरी, शिवपुरी (मध्य प्रदेश` शाहाबाद कोटा के मध्य में स्थित क्षेत्र जो कभी धंधेरिया चौहानों के अधीन था।

धनवाड़ो—(४५०)

धाणी—(४५०)

धार—(३२, ३३) मालवा (म. प्र.) में परमार क्षत्रियों की प्रसिद्ध राजधानी।

धूंधलदस—(अणदपुरा-भदळाव) की घाटी।

नगर—(४५०, टोंक जिले में टोंक नैणवा मार्ग पर स्थित कस्बा, जो कभी झकेटिक नागों के अधीन था। कालान्तर में मालवों की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

नरहर—(२५) शेखावाटी। राजस्थान प्रदेश में चिडावा और पिलानी के मध्य बसा एक प्राचीन नगर जो आजकल नरहड़ के नाम से जाना जाता है। सम्भव है नरहड़ की स्थापना नरदेव या नरघोष चौहान ने की हो। नरघोष का समय संवत् वि. ६३५ से ६५७ और नरदेव का समय संवत् ६५७ से ६६९ कहा गया है। हम्मीरायणकाव्य में सर्वप्रथम विजयदेव (सं. ७२९ वि.) के काल में इसको चौहान राज्य के अधीन दुर्ग के रूप में बताया गया है। स्व. डॉ. दशरथ शर्मा इसका अस्तित्व गुप्तोत्तर काल का तो निश्चित ही

मानते थे । (मरु भारती-अक्टूबर १९५८ पृ. २५१) यह प्राचीन उत्तरी बागड़ प्रदेश का चौहानकालीन अति प्रसिद्ध समृद्धिशाली नगर था ।

नागरचाल—(१४७) राजस्थान में जयपुर के पूर्व में स्थित नगर, नैणवा ककोड़ के परित: ७०० ग्रामों वाला टोंक जिले का प्रदेश नागरचाळ कहलाता था (ढोला भाखणी री वार्ता—रा. प्रा. वि. प्र. शाखा, उदयपुर) ।

निवाई—(४५०) राजस्थान में टोंक जिले का नगर जो जयपुर टोंक राजमार्ग पर, जयपुर से ७२ कि.मी. दक्षिण में स्थित है ।

नेमनाथजी—(६४७) सौराष्ट्र (गुजरात) के गिरनार पर्वत में जैन तीर्थ ।

नेमसार—(६४५) नैमिषारण्य, जिला सीतापुर, उत्तर प्रदेश जो गोमती नदी के तट पर स्थित है ।

नेणवा—(४५०) बून्दी जिले में स्थित नगर, जो टोंक जिले के नगर के पास है ।

नौनेज—(८८६) इटावा (जिला कोटा के पास नोनेरा (?)

पंचतीर्थी—(१५८) कँवाळजी (कपालेश्वर तीर्थ) बून्दी जिला इन्द्रगढ रेल्वे से १०-१२ कि.मी. उत्तर पूर्व में चातल नदी के तट पर स्थित ।

पतलाइथो—(४५०) कोटा जिले में कोटा-बारां मार्ग पर अन्ता के पास, बून्दी से ४० कोस, मऊ से १४ कोस पर स्थित नगर ।

पदमगढ़—(५६, १५९) रणथम्भोर दुर्ग का प्राचीन नाम । यह पदम ऋषि के द्वारा बसाया हुआ कहा जाता है ।

पदमोलाव—(११२२) रणथंभोर दुर्ग में पदमऋषि द्वारा निर्मायित ताल

पहाड़ी—(४५०) धौलपुर जिला राजस्थान में राजाखेड़ा मार्ग पर स्थित गांव (२) मलारणा के पास स्थित गांव ।

पाटण—(४५०) केशोराय पाटण, या झालरा पाटण ।

पिंगुल—(८९२) पिंगल प्रदेश संभळ जिला मुरादाबाद (२) पूगळ-बीकानेर जैसलमेर मार्ग पर ।

पिडाई—(४५०) झालावाड़ जिले में गरोट गोगरपुर मार्ग पर बसा गांव

पैसोर—(८८६) पाकिस्तान में पेशावर नाम का नगर ।

पोयांणी—(४५०)

पौली—(२८, ५१) मध्य प्रदेश में नरवर के दक्षिण पूर्व और शिवपुरी के उत्तर-पश्चिम में स्थित नगर । आजकल यह पौरी नाम से जाना जाता है ।

पोहकर—(६४६) अजमेर राजस्थान के पास हिन्दूओं का प्रसिद्ध तीर्थ ।

प्राग—(९४५) प्रयाग जो अब इलाहाबाद के नाम से जाना जाता है ।

फुसौंद—(४५०) सवाई माधोपुर तहसील की छारोदा ग्राम पंचायत का घूसोदा गांव।

बंग—(८९२) बंगाल।

बंगालो—(८८६) बंगाल।

बंभोर—(४५०)

बणहटो—(४३८, ४५०) सवाईमाधोपुर तहसील की ग्राम पंचायत अजनोटी में स्थित गांव।

बदरीनाथ—(९४६) उत्तरप्रदेश में हिंदुओं का प्रसिद्ध तीर्थ।

बनसागर—(९३) रणथम्भोर के समीप स्थित तालाब।

बनास—(९२०) उदयपुर-राजस्थान के पास के पहाड़ों से निकल कर सवाईमाधोपुर जिले में चम्बल में मिलने वाली प्रसिद्ध नदी।

बयाना—(३१) राजस्थान के भरतपुर जिले में कोटा-मथुरा रेल-लाइन पर बसा नगर।

बरडि—(३४, १२०१) पून्दी जिला राजस्थान का भू-भाग जो चित्तौड़ जिले के ऊपरमाळ क्षेत्र तथा कोटा जिले की सीमा पर स्थित है।

बरणावती—(१५४) बनास नदी का प्राचीन नाम परणासा-बरणासा-बरणावती।

बरवाड़ा—(३०२, ४५०) सवाईमाधोपुर तहसील में स्थित कस्बा जो अब चौथ का बरवाड़ा के नाम से जाना जाता है।

बलख—(८६५, ८८६) बल्ख अफगानिस्तान, बह्लीक।

बला—(६६) रणथम्भोर दुर्ग के परितः स्थित पहाड़ी।

बलिण—(३०२) सवाई माधोपुर जिले में महुआ तहसील में हुड़ला ग्राम पंचायत का एक गांव।

बली—(१४९) लव और कुश के द्वारा बसाया गया गांव कहा गया है।

बलौंडणी—(३०२, ९२०)

बांधू—(८८६) बांधवगढ जो रीवां म. प्र. से दक्षिण की ओर कुछ दूरी पर स्थित है। रीवां की प्राचीन राजधानी होने के कारण यह काफी प्रसिद्ध नगर था।

बांराई—(४५०) बारां जिला कोटा राजस्थान।

बावई—(३०३)

बाणारसि—(६०१, ९४५) बनारस, उत्तरप्रदेश जो काशी के नाम से भी प्रसिद्ध तीर्थ रहा है।

बाराह—.९४६) पुष्कर राजस्थान में वराह का मन्दिर बघेरा (राज.)

बारु—(८८६)

बालाखेड़ी—(४५०) सवाईमाधोपुर जिला (राजस्थान) की महवा तहसील का गांव, जो पंचायत समिति का अधिष्ठान है।

बालूपो—(४५०) कोटा जिले के उत्तर में जिला सवाई माधोपुर की मध्य प्रदेश से मिलती सीमा पर चम्बल नदी के तट पर स्थित कस्बा।

बाहतर जादू भोम—(८८६) संभवतः बहवर गांवों से युक्त जादूवाटी।

बिचपड़ी—(३०२, ४५०) सवाईमाधोपुर जिला (राजस्थान) की तहसील टोडा-भीम की ग्राम पंचायत राणोली में स्थित कस्त्रा।

बिहाणी—(४५०)

बीथोर—(४५०)

बूंदी—(४५०, १०१०, १०२४, १०२७) राजस्थान में हाडौती मंडल का प्रसिद्ध नगर।

बैराट—(८६५) अलवर जिला (राजस्थान) में स्थित बैराठ नाम का प्रसिद्ध नगर। यह महाभारत कालीन मत्स्य जनपद की राजधानी विराट नगर ही था।

बौंली—(२१, ३०३, ४५०) सवाईमाधोपुर (राज.) से उत्तर में स्थित एक प्राचीन नगर।

ब्रज—मथुरा, वृन्दावन, भरतपुर और अलीगढ का क्षेत्र।

भटनेर—(४५०) गजस्थान के गंगानगर जिले में हनुमानगढ (टाउन) में स्थित दुर्ग के परितः क्षेत्र।

भदलाव—)३०२, ३०३, ४५०) सवाईमाधोपुर तहसील (राज.) में पंचायत समिति का गाँव।

भरडोज—(२५)

भाडोती—( )

भीरहरी—(३७२) संभवतः अलवर जिला (राज.) में स्थित भर्तृहरि तीर्थ।

भूरी पहाड़ी—(३०३) सवाईमाधोपुर जिला (राज.) की खंडार तहसील का एक गांव।

भैरूं पोल—(२७७ रणथंभोर दुर्ग का एक द्वार।

भैरूंताल—(६४६) रणथंभोर दुर्ग के पच्छिम में स्थित तालाब जो २-३ कोस के घेरे में कहा गया है।

मंको—(१६६-६०५) अरब देश में स्थित मुसलमानों का प्रसिद्ध तीर्थ मक्का।

मंकेश्वरी—(१६६) मक्का में इस्लाम के उदयकाल में स्थित देवी मंदिर।

मंझ्याचल—(१०७१) संभवतः विन्ध्याचल।

मंडोवरि—(६०५) जोधपुर (राज.) का एक उप नगर।

मंध देश—(८८६) मध्यदेश (?)

मऊ—(४५६) मध्य प्रदेश में इन्दोर से लगभग २० कि. मी. दूर स्थित एक नगर।

मलारणो—(४५०, ८६८) राजस्थान में सवाईमाधोपुर जिले की बौंली तहसील का एक गांव।

माडू—(५५) मध्यप्रदेश से धार दुर्ग से लगभग ३० कि. मी. दूर स्थित प्रसिद्ध किला।

मारू—(८८६) राजस्थान का मारवाड प्रदेश।

मालपुरो—(४५०) राजस्थान के टोंके जिले में जयपुर केकड़ी मार्ग पर स्थित नगर।

मालवा—(४५६) मध्य प्रदेश का पश्चिमी भू-भाग।

मीसर—(६४५) नेमिषारण्य का अपरनाम, जो एक प्राचीन तीर्थ के रूप में जाना जाता है।

मेवात—(८८६) अलवर जिला (राजस्थान) का एक भाग जिसमें मेव मुसलमानों की बहुतायत है।

मौजावाद—(४५०)

रणथंभ दुरंग—(२७१, ७१६, ८०६) राजस्थान में सवाईमाधोपुर नगर से छः मील दूर स्थित दुर्ग जो रणथंभोर के नाम से प्रसिद्ध है।

रण का डूंगर—(१११५) रणथंभोर दुर्ग से सटा एक पर्वत।

रूम—(२०६) ६०६, १११५ मध्य एशिया का विजेन्टाइन नाम से प्रसिद्ध नगर।

रोहतास—(८८६) विहार प्रान्त में सहसराम के निकट कैमूर पहाड़ पर सोन नदी के तट पर बसा नगर।

रौंण—(३०२) रणथंभोर दुर्ग की एक पहाड़ी जो रण के नाम से जानी जाती है।

लंका—(६३७) रामायण में वर्णित रावण का राज्य स्थान। (८३१) गढ लंका।

लाखेरी—(८९४) बूंदी जिले में स्थित तहसील नैणवा का प्रसिद्ध औद्योगिक नगर।

लालसोट—(४५०) जयपुर जिला (राजस्थान) में दौसा-मलारणा डूंगर मार्ग पर दक्षिण में स्थित नगर, जो दौसा से ८ कि. मी. दूर स्थित है।

लिवाली—(४५०) सवाईमाधोपुर जिले की गंगापुर सिटी तहसील में वामणवास के पास स्थित ग्राम।

बरणावती—(१५४) बनास नदी का एक गांव।

लुहावद—(४५०)

लोहरवाड़ो—(४५०) सवाईमाधोपुर तहसील में पंचायत समिति का अधिष्ठान।

श्री स्थल—(२४, २५) यह चौहानों का मूल स्थान कहा गया है। इस स्थान पर चौहानों की आद्या कुल देवी **आसापुरी** के पीठ का भी उल्लेख हुआ है। १/१५) उत्तर गुजरात के सिद्धपुर क्षेत्र की भी श्रीस्थल के रूप में प्रसिद्धि रही है। यह महेसाणा जिले में स्थित है। महाभारत वन पर्व (८२/४६) में इस तीर्थ का उल्लेख हुआ है। सोलंकी मूलराज के सं. १०४४ वि. के दान शासन में सरस्वती नदी और रुद्र महालय के सन्दर्भ में भी श्री स्थल का उल्लेख आया है। इसे धर्मारण्य भी कहते हैं। इसी से लगता हुआ **आसापुरा देवी** का मंदिर क्षेत्र बड़ा प्रसिद्ध रहा है।

सांभर नगर की स्थापना से पूर्व भी इस स्थान का नाम श्री स्थल हो सकता है।

समंदतटी—भारत वर्ष के दक्षिणी छोर पर स्थित समुद्र का तटवर्ती भाग।

सांगोद—(४५०) जिला कोटा के दक्षिण भाग में स्थित नगर।

सांभरि—(३३) राजस्थान में सांभर झील के तट पर बसा नगर।

सलेमपुर—(४५०) सवाईमाधोपुर जिला (राजस्थान) में तहसील सपोटरा का नगर (२) तहसील गंगापुर में भी सलेमपुर नाम का गांव है।

सारसोप—(४५०) सवाईमाधोपुर तहसील की पंचायत समिति का अधिष्ठान।

सिहलगढ—(५७९) मेवाड़ का सिंगोली गांव, जो चित्तौड़ जिले में स्थित है। मध्य प्रदेश में स्थित बाह्य सिंगोली को भी श्री गो. ही. ओझा सिंहलगढ मानते हैं। (३) काठियावाड़ में गिरनार के पास १४४४ गांवों वाला प्रदेश,

जिसका उल्लेख कविराजा श्यामलदास उज्ज्वल ने स्वरचित 'दीपंग कुल प्रकाश' काव्य में किया है।

सिरोही—(२८) तहसील सवाईमाधोपुर में ईसरदा के पास ग्राम पंचायत झोंपड़ा का एक गांव।

सिवाड़—(शिवालय) शिवपुराण में इसका उल्लेख देवगिरि के नाम से हुआ है। यह सवाईमाधोपुर में ईसरदा के समीप स्थित द्वादश ज्योतिर्लिंगों में माना गया है।

सीसवाली—(४५०) कोटा जिले में अन्ता-इटावा मार्ग पर।

सुणाणी—(४५०) तहसील सवाईमाधोपुर में ग्राम पंचायत सूरवाल के पास स्थित गांव।

सूरत—(४६०, ८८६, ८९२) गुजरात का व्यापारिक नगर।

सूरवाल—(११५३) तहसील सवाईमाधोपुर में एक गांव।

सूरजघाट—(२७६) रणथंभोर दुर्ग की घाटी जहां सूरजपोल का निर्माण किया गया था।

सेतु बंध—(९४८) मनार की खाड़ी में स्थित सेतुबंध रामेश्वर तीर्थ।

सोपर—(४५०) शिवपुर (श्योपुर म. प्र.)।

सोरठ—(८८६) सौराष्ट्र (गुजरात प्रान्त में)।

सोलेसर—(५४५) रणथंभोर से पांच किलो मीटर दूर स्थित महादेव का मन्दिर।

स्याम—(२०६, ६०६) मध्य एशिया का शाम नामक प्राचीन नगर।

स्योघाटी - (२७३) रणथंभोर की घाटी जहां स्योपोल (शिवपोल) बना हुआ है।

हरसिद्धि – ( ) मध्यप्रदेश में उज्जैन, और देवास में हरसिद्धि माता के प्रसिद्ध मंदिर।

हरिद्वार—(६४६) उत्तरप्रदेश में हिन्दुओं का प्रसिद्ध तीर्थ।

हाड़ोती—( ) सवाई माधोपुर तहसील सपोटरा (राजस्थान) का एक गांव (२) कोटा और बूंदी जिलों का सम्मिलित प्रदेश नाम।

हिंडोण—(७८३, ७८९, ७९३) जिला सवाईमाधोपुर (राजस्थान) में स्थित नगर।

हिंदवाड़—(६२०) सवाईमाधोपुर (राजस्थान) में खंडार तहसील की दूयोदा ग्राम पंचायत का एक कस्बा।

परिशिष्ट-४

हमीरायण में छंद सं. १६० से २५४ तक भैरवसेन राजा की कथा दी गई है जिसे पदम ऋषि ने पारस पत्थर देकर पदमगढ़ (रणथंभोर का पूर्व नाम) का राजा बना दिया था। इस कथा से मिलती जुलती कथा कामशास्त्र विषयक भाषा ग्रंथों में भी मिलती हैजो कोका पंडित द्वारा विरचित कोकशास्त्र के नाम से प्रसिद्ध है। हमीरायण के समान ही कोकशास्त्र का राजा भैरवसेन रणथंभोर का राजा है। वह विलासी प्रवृत्ति का था। उसके चार सौ वजीर थे—उनमें से दस प्रमुख (बड़े) थे। उसके सात सौ रानियां थी। हमीरायण में प्रधानों के नाम हंस, सोभाग, मदन फैन (सेन), कोकदेव, कामसेन, पदमसेन, काम समूह, और चन्द्रसेन दिये हैं। (छंद २४०) कोकशास्त्र ने हंस, सुभट, मदन, कोकदेब, कामराज, पद्मसेन, सूरजनंद, चंद्रकान्त, कमलानंद और आनंदकुमार दिये गये हैं। हमीरायण में मंका (मक्का) से मंकेश्वरी देवी या जोगिनी के पैगंवरों से डर कर रणथंभोर में आकर भैरवसेन का आश्रय ग्रहण करना कहा है जबकि कोकशास्त्र में पंखणी नाम की सोलह वर्षीया जोगिन का राजा के दरबार में नग्न रूप में आकर खड़े होने और राजा सहित सभी दरबारियों के पौरूष को आह्वान करते दिखाया गया है। हमीरायण में भी राजा सहित सभी सामन्तों और सैनिकों के पौरुष की परीक्षा ही ली गई है। कोकशास्त्र में कोका पंडित राज सभा में आई जोगिन के यौवन पर कामशास्त्रीय प्रयोगों द्वारा सफलता प्राप्त करता है—और हमीरायण में योगिनी (मंकेश्वरी) को समझा बुझा कर रणथंभोर से निकालने का वृत्त है।

ऐसा प्रतीत होता है कोकशास्त्र की इस कथा को ही थोड़ा परिवर्तित करके हमीरायण में स्थान दे दिया गया है। यह संभव है कि ग्रन्थ में विस्तृत यह प्रसंग कालान्तर में जोड़ा गया हो अतः प्रक्षिप्त हो सकता है।

(द्दष्टव्य-कोकशास्त्र—ग्रंथांक २५७६ राज. प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शा. का. उदयपुर)—

कोकदेव का वास्तविक नाम सिद्ध पंडित कुक्कोक मिलता है। इनकी रचना का नाम रतिरहस्य था। इस ग्रन्थ में नंदिकेश्वर गोणिका पुत्र का मत और वात्स्यायन के कामसूत्र को आधार बनाया गया है। महाराजा सवाई मानसिंह (द्वि.) संग्रहालय जयपुर के पोथीखाना संग्रह में यह ग्रन्थ तथा इसका भाषानुवाद पं. परमसुख द्वारा किया हुआ उपलब्ध है।

भैरवसेन चौहानवंशी राजा था। वह अवश्य ही अपने काल का एक प्रभावशाली ऐतिहासिक व्यक्ति रहा होगा। खेमकृत हम्मीरायण में छंद सं. २०६ में भैरवसेन का राज्यकाल अरब देश में इस्लाम के उदय काल से लगभग १५० वर्ष बाद का बताया गया है। इस्लाम धर्म का जन्म ५३१ ई. (वि. सं. ५८८) में हुआ माना जाता है। अतः भैरवसेन का काल लगभग सं. ७४० से ७८० वि.) के आसपास निश्चित होता है।

सातवीं शताब्दी ईस्वी (मुहम्मद द्वारा इस्लाम के प्रचार और अरब के मंदिरों को नष्ट कर दिये जाने तक) अरब में तीन मातृका (शक्तिदेवी) मंदिर विद्यमान थे। एक मक्का से साठ मील दूर ताइफ (नगर) में कावा और लात में, दूसरा मक्का में और तीसरा मक्का से ढाई सौ मील दूर मदीने के पास मनात में। इन मंदिरों में प्रतिष्ठित देवी प्रतिमाएँ बहुधा बन्नातुल्लाह अर्थात् अल्लाह की पुत्रियों के रूप में मानी जाती थी।[1]

शक्तिसंगम तन्त्र (रचना काल छठी शताब्दी) में भी मक्का में मक्केश्वरी देवी के नाम से शक्ति पीठ का उल्लेख मिलता है। यह संभव है कि अरब देश में इस्लाम के प्रचार और देवी देवताओं के मंदिरों मूर्त्तियों के ध्वंसन काल में धर्म रक्षा के लिये उनके पुजारियों ने भारत में आकर भी शरण ली हो। भारत पर भी अरबों के आक्रमण ८०० शताब्दी के प्रारंभ में शुरू हो गये थे ७१२ ई. (७६९ वि.) में मुहम्मद बिनकासिम के सिंध पर आक्रमण, तदुपरान्त खलीफा हुस्सेन के सिंध में राज्याध्यक्ष जुनैद द्वारा, भिन्नमाल लाट और दक्षिण भारत पर आक्रमण इस बात के प्रमाण हैं कि अरबों ने देश में प्रवेश कर स्थान स्थान पर अपने निवेश स्थापित कर लिये थे। हमें आठवीं शताब्दी ई. में धौलपुर में राज कर रहे ऐसे चौहान वंश के राजाओं के नाम मिलते हैं, जिन्हें चंबल के तट पर बसे म्लेच्छ (अरब के मुसमान) सरदार पूर्ण समाचार देते थे। इन राजाओं में इसुक, महिषमान और महिषमान के पुत्र चंडमहासेन (चंडसेन) राज्यकाल वि. सं. ९९९ ई. ९४२) प्रमुख है।[2] यह संभव है कि उक्त भैरवसेन इसी वंश का कोई पूर्वज रहा हो।

---

१. इस्लाम का उदय और लक्ष्य–लेखक-इर्तिजा हुस्सैन— अलीगढ मुस्लिम युनिवर्सिटी (प्रथम संस्करण—१९९० ई.)

२. चंड महासेन का सं. ६६६ (ई सन् ६४२) का एक शिलालेख हुल्तिश (Hattigsent) ने ZDMG Voc-VII pp. ३८-४२ पर प्रकाशित किया था।

परिशिष्ट-५

सेरिया (सहरिया) जाति को कर्नल टाड ने भीलों के विशाल परिवार में परिगणित किया है। ये लोग मालवा और हाडौती को विलग करने वाले पहाड़ों और उनकी ऊँची नीची श्रेणियों में बसे हुए हैं, जिनकी कुछ शाखाएँ तो मालवा के पठार के किनारे से चन्देरी और नरवर में होती हुई गोहद में होकर समाप्त हो गई हैं और कुछ बुन्देलखंड की पहाड़ियों में जाकर मिल गयी हैं। इनमें पहले सरजा जाति के लोग बसते थे, जो अब नही मिलते हैं, परन्तु वहुत करके वे मध्य भारत के सेरिया ही थे। राजपूतों की राज करने वाली छत्तीस जातियों में से एक सरी-अस्प को टॉड ने सरवैया राजपूत माना है और इसी का संक्षिप्त रूप सेरिया कहा है। इन लोगों के बहुत पुरानी तिथि के शिलालेख मिले हैं, जो इस बात के द्योतक हैं कि वे भारतवर्ष की बहुत पुरानी जाति में से हैं।

(पं. गोपाल नारायण बहुरा– पश्चिमी भारत की यात्रा– हिन्दी अनुवाद, प्रकरण ३ पृ. ४५)

राजस्थान में हाड़ौती मंडल के बारां जिले की किशनगंज और शाहबाद जिले की में इनके गांव हैं और ग्वालियर संभाग के शिवपुरी, गुना, मुरैना और दतिया जिलों में भी इनकी संख्या बहुत हैं। ये लोग अपने को बेजू भील की संतान मानते हैं।

कतिपय मानव शास्त्रियों का कहना है कि फारसी भाषा में सहर का अर्थ जंगल हैं। ये लोग जंगल में निवास करते हैं और जगलों पर ही इनका निर्वाह होता हैं अतः ये सहरिया कहाते हैं। ये सहरिया अत्यधिक कृतज्ञ कहे जाते हैं।

(ट्राइब पत्रिका, खंड ६ अंक ३-४ पृ. १५०-१५५)

परिशिष्ट-६

संदर्भ ग्रन्थ सूची

१. प्रबंध कोश—श्री राजशेखर सूरि. (सिंघी जैन ग्रन्थमाला ग्रंथाक ६., सन् १९३४ ई. (पृ. १३३-१३८)

२. हम्मीरमहाकाव्यम्—नयचन्द्रसूरि (राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर (प्रथम संस्करण)।

३. कान्हड़देप्रबंध—पद्मनाभ (राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान) जोधपुर

४. सुर्जनचरित्र—चन्द्रशेखर (सं. जे. बी. चौधरी, कलकता।

५. हम्मीरायण-भाण्डउ—(सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीटयूट, बीकानेर

६. पृथ्वीराजरासो की विवेचना—(साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर (सं. २०१५ वि)।

७. तारीख-ए-किला—रणथंभोर हीरानन्द कायस्थ—अनु.—डॉ. आर. के. सक्सेना (संघी प्रकाशन—१९८२।

८. Early Chauhan Dynasties—Dashrath Sharma (Motilal Banarshi Das—Delhi (Second Editior 75.)

९. Journal Asiatic Society of Bengal Vol. LV-pt I, 1886

१०. पृथ्वीराजविजय महाकाव्यम् जौनराज—(राजस्थानी ग्रन्थागार १९९७)।

११. नैणसी री ख्यात—(राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

१२. चौहान कुल कल्द्रुम—लल्लू भाई, भीममाई देसाई—१९२७ वि.।

१९. मारवाड़ का इतिहास—विश्वेश्वरनाथ रेऊ।

२०. मिफ्ताहुल फुतूह—खजाइनुल फुतूह, देवलरानी (खलजी कालीन भारत) अनुवादक—सैयद अतहर अब्बास रिजवी—(अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय, प्रथम संस्करण—१९५६ ई.।

२१. तारीख़-ए-फिरोजशाही—खलजी कालीन भारत में अनुदित अनुवादक—सैयद अतहर अब्बास रिजवी—(अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय प्रथम संस्करण १९५६ ई.।

२२. फुतूहुस्सलातीन—(अनु. सैयद अतहर अब्बास रिजवी) अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय।

२३. राजा भोज—विश्वेश्वरनाथ रेऊ।

२४. मालवा के परमार—

तारीख-ए-फिरिश्ता—अनु. फिदाअली (नवलकिशोर प्रेस, लखनफ)।

मुन्तखाबुत्तवारीख—अब्दुल कादिर बदायुनी—(बाईबिल इंडस्ट्रीज, सिरीज)।

तबकात-ए-नासीरी—अनु. मौलाना खादिम हुस्सैन और।

अब्दुल हई—अनु. रेबर्टी—(बाईब्रिल सीरिज)।

मआसिर-ए-मेहमूदशाही—शिहाबहकीम—अनु. संपादन।

अन्सारी—नई दिल्ली।

राजस्थान थ्रू दी एजेज—(भाग १)—डॉ. दशरथ शर्मा।

बीसलदेव रासो—

प्रभावक चितामणि -मेरूतुंग—SJG.

भविष्य पुराण—

राजस्थान में राजस्थानी साहित्य की खोज—पं. हर प्रसाद शास्त्री अनु. पं. गोपाल नारायण बहुरा (राजस्थानी शोधसंस्थान, जोधपुर) The Gun and its Development in India with notes on Shooting+w. w. greener.

तैत्तरीय संहिता—

शतपथ ब्राह्मण—

महाभारत—

क्यामखां रासो—जान कवि. (राज. प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

विश्वंभरा पत्रिका—बीकानेर (डॉ. दशरथ शर्मा स्मृति विशेषांक, वर्ष ६. अंक ३-४

हर्ष का शिलालेख—

देव चरित्र—(हस्तलिखित प्रति)

पश्चिमी भारत की यात्रा—कर्नल जेम्स टॉड (अनु. गोपाल नारायण।

बहुरा—राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

रणबांकुरा पत्रिका—वर्ष ८ अंक ७ जुलाई १९९२

बलवन का शिलालेख—

हिस्ट्री ऑफ इंडिया—इलियट, तीसरी जिल्द

ऐतिहासिक स्थान नामावली—विजयेन्द्र कुमार माथुर वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार (शिक्षा मंत्रालय) नई दिल्ली।

परिशिष्ट-७

खेम कृत हम्मीरायण की प्रकाशन हेतु प्रतिलिपि करते समय मुझे एक ही प्रति, मार्ग शीर्ष शुक्ला ६ मंगलवार सं. १९८५ की तारीख १८ दिसंबर सन् १९२८ ई. की जयपुर गिवासी गोपीचन्द शर्मा गौड़ द्वारा की गई थी, मिली जिसकी प्रतिलिपि पुरोहितजी हरिनायणजी ने ऋषि सबला के द्वारा सं. १७८४ वि. में की गई प्रतिलिपि के आधार पर करायी गई थी। कालान्तर में यह ऋषि सबला कृत प्रति भी मुझे देखने को मिल गई, पर यह उस समय मिली जबकि प्रति के मेरे द्वारा संशोधित पाठ का प्रकाशन प्रारम्भ हो गया था। यह प्रति पं. गोपालनारायण जी बहुरा, जयपुर के संग्रह में उपलब्ध हैं। पं. गोपीचन्द द्वारा की गई प्रतिलिपि राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान की जयपुर शाखा में पं. हरिनारायण पुरोहित संग्रह में ग्रन्थ सं. १४५ पर उपलब्ध है। इन दोनों प्रतिलिपियों के पाठ में ही यत्रतत्र बहुत परिवर्तन हो गया है। पं. बहुराजी के पास उपलब्ध प्रति में छंदों के सामने दी गई क्रम सं. बहुत अव्यवस्थित हैं। पं. गोपीचन्द ने उसमें संशोधन कर व्यवस्थित करने का प्रयास किया है।

उक्त प्रतियों के काल की लेखन शैलियों और वर्तमान युग की लेख शैलियों में बहुत कुछ अन्तर आ गया है—अतः अवश्यक समझ कर प्रकाशन के समय संशोधित पाठ आधुनिक लेखन शैली में प्रस्तुत किया गया है। यह ध्यान अवश्य रखा गया है कि तत्कालीन लेखन शैली की विशिष्टता भी सुरक्षित रह जाय और आधुनिक लेखन शैली से वे दूर न पड़े, प्रतियों में त्रुटित पद या पदांश के लिये चिन्ह लगाकर रिक्त स्थान छोड़ दिये गये हैं। इसी प्रकार किसी पद में छूटे हुए शब्द अथवा वर्ण की सगति मिलाते हुए कोष्टक में जोड़ दिये गये हैं।

दोनों ही आधाररूप प्रतियों में ह्रस्व और दीर्घ मात्राओं का ध्यान नहीं रखा गया था, अतः इनमें यत्र तत्र ह्रस्व के स्थान पर दीर्घ और दीर्घ के स्थान पर ह्रस्व मात्राएँ दी गई हैं। संशोधित पाठ में उन्हें परिवर्तित कर शुद्ध रूप में लिखा गया है जिससे छंदों को ठीक से पढा जा सके।

(१) राजस्थानी में 'ख' मूर्धन्य 'ष' की तरह से लिखा जाता है। संशोधित पाठ भी वह वर्तमान रूप 'ख' के रूप में लिखा गया है। जहाँ कहीं भी उसका प्रयोग 'मूर्धन्य 'ष' के रूप में हुआ है, वहां उसे उसी रूप में रखा गया है।

(२) राजस्थानी में 'ल' वर्ण का आधिक्य है। यह दो प्रकार से लिखा मिलता है—(१) ल और (२) ळ। प्रस्तुत काव्य में वह कहीं कहीं 'ल' के रूप में भी लिखा गया है। संशोधित पाठ में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके उस 'ळ' के रूप में लिखा गया है।

इसी प्रकार यत्र तत्र 'व' वर्ण को भी उसके नीचे बिन्दु लगाकर 'व' के रूप में लिखा गया है। प्रकाशन के पाठ में वह 'व़' के रूप में ही लिखा गया है।

राजस्थानी में पदान्त 'ण', 'न', 'म' के पूर्व 'आ' की मात्रा होने पर 'आ' स्वर में अनुनासिकता का आगम हो जाता है, अतः अनुस्वार की तरह 'आ' स्वर युक्त वर्ण पर बिन्दु लगा दिया जाता हैं। संशोधित पाठ में इसे हटा दिया गया है।

राजस्थानी में तालव्य 'श' के लिखित 'श' और 'स' दोनों रूप मिलते हैं। संशोधित पाठ में उनको यथावत् रखा गया है।

राजस्थानी में कहीं कहीं अर्थ की पूर्ति के लिये अतिरिक्त 'वर्ण' या शब्द का योग कर दिया जाता है, पर उनकी मात्राएं नहीं गिनी जाती हैं। संशोधित पाठ में ऐसे उदाहरण में अतिरिक्त वर्ण को मूल पाठ के साथ कोष्टक में रखा गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की प्रति में अर्ध बिन्दु कहीं चन्द्रकार लगाकर लिखा गया है, कहीं नहीं। प्रस्तुत प्रकाशन में यह दोनों ही रूपों में लिखा गया है।

कई वर्णों की आकृतियां वर्तमान देवनागरी वर्णों से भिन्न हैं—उन्हें वर्तमान रूप दे दिया गया है।

दीर्घ ईकार की मात्रा के साथ बिन्दु का प्रयोग कहीं कहीं मात्रा के पूर्व (पीछे) लगाया गया है, उसे आजकल के रूप में लिख कर प्रकाशित कराया है।

परिशिष्ट–८

शाकम्भरी के चौहान राजवंश की तुलनात्मक वंशावली

क्र. सं.	हम्मीरायण–खेमभाट प्रणीत	प्रबंधकोष-राजशेखर	हम्मीरमहाकाव्य-नयचन्द्र	बीजोलियां शिलालेख सं. १२२६ वि.	पृथ्वीराजविजय जौनराज
१.	मान चाहुवान	चाहमान	चाहमान	चाहमान	चाहमान
२.	नंदु	—	—	—	—
३.	आनन्द	—	—	—	—
४.	वच्छ (वत्स)	—	—	—	—
५.	श्री वच्छ (श्री वत्स)	—	—	—	—
६.	वासुदेव (वि. सं. ६०६-६[illegible]१)	वासुदेवः (सं.६०८)	दीक्षित वासुदेव	विष्णु (वासुदेव)	वासुदेव
७.	सांवरतसिंह (सामन्तसिंह सं. ६३१-६३५	सामन्तराज	—	सामन्त	सामन्त
८.	नरघोष (सं. ६३५-६५७)	—	—	पूर्णतल्ल	—
९.	नरदेव (सं. ६५१-६६९)	नरदेव	नरदेव	नृप	—
१०.		—	चन्द्रराज	—	—
११.			जयपाल चक्री	—	—
१२.	अजयदेव (सं. ६६९-६९८)	अजयराज	जयराज	जयराज	जयन्तराज(जयराज)
१३.			सामन्तसिंह	—	—

१	२	३	४	५	६
१४.			गूयक	—	—
१५.			नन्दन	—	—
१६.	विहगराज (सं. ६९८-७०९)	विग्रहराज	वप्रराज	विग्रह नृप	विग्रहराज
१७.	विजेदेव (सं. ७०९-७२७	विजयराज	—	—	—
१८.	चण्डराज देव (सं. ७२७-७४७)	चन्द्रराज	—	चन्द्रराज	चन्द्रराज
१९.	गोविन्दराज (सं. ७४७-७७६)	गोविन्दराज	—	गोपेन्द्र	गोपेन्द्रराज
२०.	दुर्लभदेव (सं. ७७६-८०७)	दुर्लभराज	—	दुर्लभराज	दुर्लभराज
२१.	वत्सराजदेव (सं. ८०७-८१२)	वत्सराज	—	—	—
२२.	हरसहदेव (सं. ८१२-८२७)	—	हरिराज	—	—
२३.		सिंहराज	सिंहराज	—	—
२४.		—	भीम	—	—
२५.	दुजनधनदेव (सं. ८२७-८७८)	दुर्योधन	—	—	—
२६.		—	—	गूवंक	गोविन्दराज
२७.		—	—	शशिनृप(चन्द्रराज)	चन्द्रराज
२८.		—	—	गूवाक	गोवाक
२९.		—	—	चन्दन	चन्दन
३०.	विजैपाल (सं. ८७८-८८५)	विजयराज	—	—	राजराज
३१.	वापलदेव (सं. ८८५-९११)	वप्पैराज	—	वप्पयराज	वप्पयराज
३२.		—	—	विध्यनृपति	—
३३.		—	—	सिंहराव	सिंहराज
३४.		—	विग्रहराज	विग्रहराज	विग्रहराज

१	२	३	४	५	६
३५.	दुर्लभदेव (९११-९३२)	दुर्लभराज	—	दुर्लभराज	दुर्लभराज
३६.	गदलेव (९३२-९५०)	गण्डू	श्री गुंददेव	गुन्दू	गोविन्दराज
३७.	भुवपाल (९५०-९६९)	बालपदेव	वल्लभराज	वाक्पतिराज	वाक्पतिराज
३८.	विजहड़देव (सं. ९६९-९८४)	विजयराज	राम	वीर्यराम	वीर्यराम
३९.	राजदेव (सं. ९८४-१००६)	चामुंडराज	चामुंडराज	श्रीचंड(चामुंडराज)	चामुंडराज
४०.		—	दुर्लभराज	—	—
४१.		—	—	श्रीसिहट(राणकधर)	—
४२.		दूसलदेव	दुःशल	दूसल	—
४३.	वीसलदेव (सं. १००६-१०२१)	वीसलदेव	विश्वल	वीसल	विग्रहराज
४४.	सोमदेव (सं. १०२१-१०३६)	—	—	—	—
४५.	श्रीराजदेव (सं. १०३६-१०८६)	वृहत् पृथ्वीराज	पृथ्वीराज	पृथ्वीराज	पृथ्वीराज
४६.	अनलदेव (सं. १०८६-१११५)	आल्हणदेव	आल्हण	जयदेव	सल्हण
४७.	मालगदेव (सं. १११५-११३७)	अनलदेव	आनल्लदेव	अर्णोराज	अर्णोराज
४८.	जगदेव (सं. ११३७-११३८)	जगद्देव	जगद्देव	—	—
४९.	वीसलदेव (सं. ११३८-११५७)	वीसलदेव	विश्वलदेव	विग्रहराज	विग्रहराज
५०.		—	जयपाल	—	—
५१.	अमर गंगेव (सं. ११५७-११६३)	अमरगांगेय	श्री गंगदेव	—	—
५२.	श्रीगजदेव (सं. ११६३-१२०८)	—	—	—	—
५३.	प्रिथीदेव (सं. १२०८-१२२३)	पान्थड़देव	—	पृथ्वीराज	पृथ्वीराज
५४.	(सं. १२२३)	सोमेश्वरदेव	सोमेश्वरदेव	सोमेश्वर (सं. १२२६)	सोमेश्वर

१	२	३	४	५	६
५५.	राजदेव (सं. १२३९)	पृथ्वीराज (सं. १२३६-१२४८)	पृथ्वीराज	—	पृथ्वीराज
५६.	हरिसिंहदेव (सं. १२३९-१२५१)	हरिराजदेव	हरिराज	—	हरिराज
५७.	राजदेव (गोविन्दराज) सं. १२५१-१२६१	राजदेव	गोविन्दराजदेव		
५८.	बाल्हणदेव (सं. १२६१-१२७६)	बाल्हणदेव बाबरिया	बाल्हण		
५९.	वीरनारायण (सं. १२७६-१२८२)	वीरनारायण	प्रहलादन— (२) वाग्भट		....
६०.	बाहड़देव (सं. १२८२-१३१३)	बाहड़देव	वाग्भट		
६१.	जैतसिंह (सं. १३१३-१३३१)	जैत्रसिंह	जैत्रसिंह		
६२.	राव हम्मीरदेव (१३३१-१३५२)	श्री हम्मीरदेव (सं. १३४२-१३५८)	हम्मीरदेव (सं. १३३९-१३५८)		